Generations	GL H 294.59218 ARA 121580 LBSNAA	चाव्यात्रयात्रयात्रयात्रयात्रयात्रयात्रयात्
TOO SOL	MUS.	iसूरी SOORIE ट्रु
Scientes		कालय BRARY 12.1560 हैं
Michigan Conscillation of the Conscillation of the Conscience of the Conscillation of the Conscience of the Conscienc	अवाप्ति संख्या Accession No.	0 1811
Seriot.		294.5921
crocroc	पुस्तक संख्या Book No. ARA	<u> आरण्य</u>

बृहदारगयकोपनिषद्

सटीक

अनुवादक,

रायबहादुर बाबू जालिमसिंह

केसरीदास सेठ द्वारा

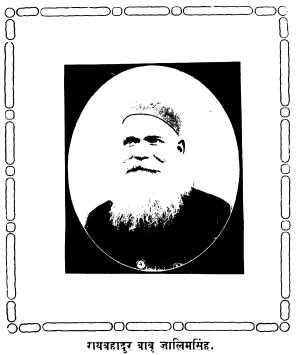
नयलकिशोर पेस में मुद्रित और प्रकाशित

लखनऊ

सन १६२३ 🕏

हितीयबार १०००

[मूल्य ३)



भूमिका।

कंपूर्णमदः पूर्णिमदं पूर्णात्पूर्णमुदुच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥
ब्रह्मानन्दं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्ति
दृन्दातीतं गगनसदशं तत्त्वमस्यादिलक्ष्यम् ।
एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधीसाक्षिभूतं
भावातीतं त्रिगुर्णरहितं सद्गुरुं तत्रमामि ॥
गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः ।
गुरुस्साक्षात्परंब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥
ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः पूजामूलं गुरोः पदम् ।
मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरोः कृपा ॥

जब में हरिद्वारको संवत् १६७१ में गया, तब वहां पर कई एक साधु जान पिहचान के मुक्त से मिले, और कहा कि जैसे आपने ईश, केनादि आठ उपनिषदों पर भाषा टीका किया है यदि उसी श्रेग्णी पर बृहदारयय की टीका भी मध्यदेशी भाषा में कर दें तो लोगों का बड़ा कल्यागा हो, मैंने उनसे कहा कि वाक्यदान का प्रदान तो नहीं करता हूं, पर यदि अन्तः करगा प्रविष्ठ परमात्मा की प्रेरणा होगी और मैं जीता रहूंगा और अवकाश मिलेगा तो प्रयत्न करंगा; जब मैं हरि-ह्यार से वापस आया तब पिछडत गंगाधर शास्त्री और अंग्रेजी में अनुवाद किये हुये ग्रंथों की सहायता करके बृहदारयय की टीका का आरम्भ किया गया, और ईश्वर की कृपा करके आज उसकी निर्विष्ठ समाप्ति हुई।

मेरा भन्यवाद प्रथम पिएडत सूर्यदीन शुक्त नवलिक्शोर प्रेस को है जो इस उपनिपद् के छपाने के लिये मेरे उरताह को बढ़ाते रहे, उन के पुरुषार्थ झौर प्रथल करके यह उपनिषद् दिहानों के अवलोकनार्थ छपकर नैयार है. पिएडत शक्तियर शर्मा शुक्त झौर पिएडत खूब्चन्द शर्मा गौड़ ने इस उपनिषद् का संशोधन किया है. मैं उनके इस अ-नुग्रह पर उन को भी धन्यवाद देता हूं.

हे पाटक ननो ! शंकरा चार्यजी ने उपनिषद् का अर्थ इस प्रकार किया है, उप 十 नि 十 पद् उप=समीप, नि=अत्यन्त, पद्=नाश, अतः संपूर्ण उपनिषद् शब्द का अर्थ यह हुआ कि जो जिज्ञासु अङा और आंक्ष के साथ उपनिषदों के अत्यन्त समीप जाता है, यानी उनका विचार करता है वह आवासमन के केशों से न्विन हो जाता है, और किसी किसी आचार्य ने इसका अर्थ ऐसा भी किया है, उप-अमीप, नि=अत्यन्त, पद्=वैठना, यानी जो जिज्ञासु को अध्यन्य अध्यापन के द्वारा ब्रह्म के अति समीप वैठने के योग्य बना देता वह उपनिषद् कड़ा जाता है।

हे पाठक जाते ! जिसे छान्दोग्य उपनिपद् के दो खगड हैं पूर्वार्छ आरे उत्तरार्छ, वेसेही इस वृहदारगय के भी दो खगड हैं, पूर्वार्छ आरे उत्तरार्छ, पूर्वार्छ में निष्काम कर्म यागादि का निरूपण है, और उत्तरार्छ में आदमज्ञान का निरूपण है, जो मुमुख्न आवागमन से रित होना चाहता है, उसको चाहिये कि वह प्रथम निष्काम कर्म करके अन्त करणा को शुद्ध करे, और फिर ओत्रिय ब्रह्मनिष्ठ आचार्य के समीप शिष्यभाव से जाकर अद्धा और भिक्त के साथ सेवा करके प्रमन्न करे, तत्परचात् अपनी इच्छानुसार प्रश्नों को करे और कहे हुये उपदेश को अवस्त मनन करके अपने आदमा का साक्षात् करे। हे पाठकजनो ! इस टीका में पिईले मुल मन्त्र दिया है, फिर पद-

च्छेर, फिर वामअंग की ओर संस्कृत अन्वय, और दाहिने अंग की ओर पदार्थ, यदि वाम अंग की ओर का जिखा हुआ उत्परसे नीचे तक पढ़ाजावे तो संस्कृत अन्वय मिलेगा, यदि दाहिने अंग का जिखा हुआ उत्पर से नीचे तक पढ़ाजावे तो पूरा अर्थ मन्त्र का भाषा में मिलेगा, और यदि बांये तरफ़ से दहिने तरफ़ को पढ़ाजावे तो हर एक संस्कृतपद का अर्थ अथवा शब्द का अर्थ भाषा में मिलेगा. जहां तक होसका है हर एक संस्कृतपद का अर्थ विभक्ति के अनुमार जिला गया है, इस टीकाके पढ़ने से संस्कृतविद्या की उन्नति उनको होगी जिनको संस्कृत की योग्यता न्यून है, मन्त्रका पूरा पूरा अर्थ उसी के शब्दों से ही सिद्ध किया गया है, अपनी कोई कल्पना नहीं की गई है, हां कहीं कहीं संस्कृतपद मन्त्र के अर्थ स्पष्ट करने के जिये उत्पर से जिखा गया है, और उसके प्रथम यह + चिह्न लगा दिया गया है ताकि पाठक जनों को विदित हो जावे कि यह पद मूल का नहीं है ॥

विद्वान सज्जनों की सेवा में प्रार्थना है कि यदि कहीं आधुद्धि हो अथवा अर्थ स्पष्ट न हो तो कृपा करके उसको ठीक करलें, और मेरे भूल चूक को क्षमा करें, और गुद्ध अन्तः करणा से आशीर्वाद दें कि यह ग्रुम करके रचित टीका ग्रुमुश्चजनों को यथोचित फलदायक हो, और इसकी स्थिति चिरकाल पर्यन्त बनी गहै।

ज्ञालिमसिंह रायबहादुर [श्चात्मन लाला शिवदयालुर्सिह, ग्राम श्चकवरपुर, ज़िला फैज़ाबाद (श्चवध) निवासी ।] पोस्टमास्टर जनरल रियासत ग्वालियर लश्कर (ग्वालियर)

बृहदारगयकापानषद् सटाक का मूचीपत्र ।

पहिला अध्याय।

		., ., .	•	
मन्त्र	वृष्ठ	ब्राह्मगु	मन्त्र	वृष्ठ
१	१	રૂ	१७	ક્ષ્ર
ર	×	3	१८	SX
٤	9	ર	3 &	કદ
	3	3	२०	, Xo
	११	3	२१	χo
8	१३	3	२२	४१
¥		3	२३	४३
દ્	१७	3	રક	አዩ
y	38	3	ર પ્ર	ሂሂ
१	२३	3	२६	<u> </u>
ર	રક	3	२७	ሂ=
3	२६	3	२८	3,%
ષ્ટ	२८	8	१	६३
¥	३०	ક	२	६४
६	३२	용	3	80
G	રુક	8	ષ્ઠ	६६
Ξ.	३६	પ્ર	×	હશ
3	३७	8	६	७२
१०	३⊏	8	૭	৩ ২
११	3 <i>६</i>	४	=	30
	४०	8	٤	⊏ १
	કર	8	१०	= 2
	કર	8	११	ΞX
	કર	8	१२	==
	કર	8	१३	58
	8	**************************************	国 図 の の の の の の の の の の の の の	मन्त्र प्रमास्त्र स्वास्त्र स

ब्राह्मण्	मन्त्र	वृष्ठ	बाह्यगु	सन्त्र	বৃদ্ধ
8	₹४	03	Ł	ં	१२१
8	१४	હ ર	×	१३	१२२
ક	१६	£Ł	×	શ્ પ્ર	१२४
૪	१७	٤=	, L	શ્ર્	१२६
×	१	'१०२	×	१६	१२=
¥	ર	१०४	×	१७	१२६
¥	3	१११	×	१⊏	१३३
¥	ક	११४	×	38	१३४
×	×	११४	X '	२०	१३४
× .	ફ	११६	×	२१	१३७
¥	G	११६	¥	- २२	ર ક ર
×	=	११७	¥	२३	१४३
×	£	११८	Ę	१	१४६
¥	१०	११६	Ę	ર	१४७
×	११	११६	६	3	१४⊏

दूसरा अध्याय।

		•			
ब्राह्मग्	मन्त्र	रु ष	ब्राह्मग्	सन्त्र	वृष्ठ
१	Ł	१५०	٤	१३	१७०
8	ર	१४१	8	१४	१७२
₹,	Ę	१४३	2	٤×	१७३
₹.	8	१४४	2	१६	१७४
8	¥	१४६	१	१७	१७६
₹.	६	१४८	१	१=	१७=
Ł	9	१४६	१	₹&	१७६
8	=	१६१	१	२०	१=१
₹	8	१६३	ર	१	१≐३
₹.	१०	१६५	ર	ર	१८४
3	११	१६६	2	3	१८६
₹	१२	₹\$=	ર	8	7==

		•	•		
	मन्त्र	वृष्ठ	ब्राह्मण्	मन्त्र	বৃত্ত
ब्राह्मण		१६१	Ł	Q	२२४
3	.		ĸ	ર	२२६
3	ર	१६२	ž	3	२२७
3	३	१६३	ž	8	२२८
3	કે	१६४	-	×	२३०
3	ĸ	१६४	X	Ę	२३१
ş	Ę	880	×		રરેરે
8	१	200	×	9	238
8	ર	२०१	×	=	
ષ્ઠ	3	२०३	×	٤	२३६
ีย	8	રં૦રૂ	×	१०	<i>२३७</i>
8	×	२०४	×	११	२३६
	દે	२१०	×	१२	२४०
8	પ ૭	२१२	×	१३	રકર
8		२१३	×	१४	२४३
ક	5		×	१४	રકક
ક	٤	२१४	×	१६	રકદ
ક	१०	२१४) k	१७	રક્ષ્વ
8	११	२१६	, x	१्द	રક્ષદ
૪	१२	૨ १૬	1	१६	રપ્રશ
૪	१३	३१०	×	ેર	રપ્રષ્ઠ
ક	१४	ર ર ર 	&	•	,
		तीसरा	श्रध्याय ।)	
			। ब्राह्मण	मन्त्र	पृष्ठ
ब्राह्मण	मन्त्र	əv/a ब्रह्म	8	5	२७०

१ २ २४७ 2 2 2 2 2 2 2 2 २७३ 3 **૨**૪૬ રહ્ય १० **२६**१ ş ২৩৩ १ २६३ ક २७= ર २६४ x ૩૭૪ Ę २६७ Ę २८० ß २६= 9

ब्राह्मण्	मन्त्र	पृष्ठ	ब्राह्म	ण मन्त्र	g g
૨	×	२⊏१	9	े १७	25 333
ą	Ę	ર⊏१	و	१८	338
. ૨	9	ર⊏ર	و	38	334
२	5	२⊏३	و	20	3 36
૨	£	२⊏३	હ	٠ <u>,</u>	33 5
ર	१०	२८४	9	રરે	3₹9
૨	११	२⊏६	ی	રરૂ	₹₹=
ર	१२	350	5	શે	380
૨	१३	ર==	=	ર	385
3	१	२१२	=	, a	383
3	ર	२६४	=	ક	३४४
8	8	२१७	=	ĸ	રેક્ષ્ય
૪	2	335	=	έ.	રુક્
×	₹	३०३	5	Ġ	રેઇ૭
ξ	१	३०७	=	=	३४⊏
•	ફ	३१२	=	٤	340
9	૨	३१⊏	=	१०	342
v	3	३२०	=	११	રેશ્ક
હ	ક	३२१	=	१२	રેશ્ય
9	×	,३२२	3	8	3.46
૭	ફ	३२३	į į	· 2	3 ६ ०
9	•	३२४	3	3	३६१
G	=	३२४		કે	362
G	3	વે વેપ્ર	3	¥	३६४
હ	१०	३२६	3	Ę	3 <i>६</i> ४
v	११	३२७	3	ဖွဲ	388
•	१२	३२⊏	٠ ع	=	350
9	१३	३२६	Ę	3	388
•	१४	३३०	£	१०	3.90
હ	१४	३३१	E	११	३७ २
v	१६	३३२	Ł	१ २	३७४

ब्राह्मण्	सम्ब	पृष्ठ	ब्राह्मण	सन्त	पृष्ठ
£	१३	३७६		રક	₹4€
3	१४	३७८	8	ર×	३१८
٤	१४	३८०	3	२६	315
٤	१६	३⊏१		२७	४०२
3	१७	३८३		२७-१	૪૦૪
Ł	१८	ラニメ	3	२७–२	८०४
3	१ ६	ર≂૪	3	२७–३	Rox
3	२०	३=७	3	२७-४	४०६
3	२१	३≈६	3	ર:૭–૪	४०६
3	२२	३१२	3	२७–६	Roz
٤	२३	३६४	3	२७-७	영우드

चौथा ऋध्याय।

ब्राह्मण्	मन्त्र	पृष्ठ	ब्राह्मण्	मन्त्र	पृष्ठ
१	१	४१०	3	Ę	८४७
٤	ર	४१ १	3	હ	378
१	3	४१६	3	=	४६ १
2	ક	ક રશ	3	3	४६२
१	×	४२ ६	3	१•	કદક
१	Ę	४३ १	3	११	४६६
१	હ	४३६	3	१२	४६७
2	2	કકર	3	१३	४६⊏
ર	ર	88ई	Ę	१४	ક્રફ્
વ	. 3	୫୫୫	3	१४	४७१
ર	૪	88/0	3	१६	<i>४७३</i>
8	ę	८४०	3	१७	Box
3.	૨	ક પ્રર	3	१⊏	४७४
Ę		ક્રમ્ફ	3	३१	ક્રજફ
3	ક	કપ્રક	3	२०	80=
Ę	×.	SXX	3	૨ ૧	. RZ0

ज्ञाहा रा े	H-1 -	. पृष्ठ	ब्राह्मण	सन्त्र	पृष्ठ
	રર	४ दर	પ્ર	१३	४२६
\$	વર ∀	ક્ર=ક	8	१४	ধরও
ą	. ૨૪	. अद६	8	१४	¥2=
3	રપ્ર	४८७	8	१६	પ્રરદ
3	२६	성도도	8	१७	४३०
3	રહ	કુદ્રદ	8	१=	४३०
3	२⊏	४६०	8	१६	४३१
3	રદ	ક્ષ્ટર	8	२०	X35
રે	₹0	ક્રક	8	२१	४३३
3	38	કદક	8	२२	४३३
3	32	કદપ્ર	8	२३	४३६
3	33	8દ૭	8	રક	४४१
3	રૂક	४०१	8	ર¥	પ્રકર
3	રૂપ	४०२	×	₹	४४३
3	३६	४०३	×	ર	X88
3	· ३ ७	KoR	×	Ę	४४४
3	3=	४०६	×	ક	₹8 <i>€</i>
૪	१	४०७	×	K	४४६
૪	ર	Xoz	×	ફ	X80
૪	3	४१२	×	v	४४२
ક	ષ્ઠ	४१३	×	=	XXX
૪	×	¥१×	×	٤	xxe
૪	Ę	४१⊏	×	१०	ሂሂ ξ
ષ્ઠ	9	४२०	×	११	KK/3
૪	5	४२२	×	१२	አ ሄዩ
ક	3	४२३	, x	१३	४६१
ક	१०	४२४	, a	१४	४६२
ષ્ઠ	११	४२४	, k	१४	४६४
8	१२	¥₹¥	1		

(9)

पाँचवाँ ऋध्याय।

आहाण	मन्त्र	पृष्ठ	ब्राह्मण्	मन्त्र	वृष्ठ
१	१	xe=	११	2	इ३४
ર	Ŷ.	४६६	१२	₹.	४६६
ર	ર	४७१	१३	१	33X
ર	3	४७२	१३	ર	६०१
3	8	XOX	१३	રૂ	६०२
ક	.	४७७	१३	B	६०३
ĸ	શ્	૩ ૭૪	१४	ę	દં૦૪
×	ર	X={	18	ર	Eox
ĸ	3	४=३	१४	3	६०७
×	કે	X=X	१४	ક	303
દ	ę	⊻≖૬	१४	¥	६१२
હ		X=9	१४	Ę	६१४
5	રે	XEE	१४	٩	६१६
- E	રે	250	१४	5	६१=
१०	ş	×68	१४	*	६२०

छुठवाँ अध्याय ।

ब्राह्मय	मन्त्र	দু ষ্ট	ब्राह्मण्	मन्त्र	पृष्ठ
8	શ	६२३	8	११	દરૂપ્ર
Ŗ	ર	६२४	१	१२	६३६
Ř	3	६२४	8	१३	६३८
Ž	છ	६२६	8	१४	६३६
8	¥	६२८	२	ę	દ્દકરૂ
Į.	६	६२८	२	ર	ERK
•	৩	६२६	2	3	ફ્રષ્ટ્રદ
8	=	६३०	ર	8	EXO
Ą	٤	६३२	ર	¥	દ્દપ્રરૂ
१	१०	६३३	ો ર	Ę	६४३

बाह्यग	मन्त्र	पृष्ठ	त्राह्मण	मन्त्र	पृष्ठ
ર	9	६४४	ષ્ઠ	ક	६१६
२	=	६४६	ષ્ટ	¥	६६=
ર	3	६४७	8	Ę	900
२	१०	६४≡	ક	9 .	७०१
૨	११	६४६	8	E .	७०३
ર	१२	६६०	8	3	૭૦૪
૨	१३	६६१	8	१०	७०४
ર	१४	६६३	ષ્ઠ	११	७०६
ર	१४	६६४	ષ્ઠ	१२	७०७
ર	१६	६६६	ષ્ઠ	१३	७११
3	१	६७०	8	१४	७१२
3	२	६७३	ષ્ઠ	१४	७१३
Ę	3	६७४	ક	१६	७१४
3	ક	३ ७३	8	१७	७१४
Ę	×	६⊏१	ક	१८	७१६
. સ	६	६८२	8	१६	७१७
3	৩	् ६ ८६	ષ્ટ	२०	७१६
3	=	६८६	ષ્ઠ	२१	७२०
3	3	६८७	ષ્ઠ	२२	७२२
3	१०	६६८	ક	२३	७२३
3	११	६=६	ક	રક	७२४ .
3	१२	६६०	ષ્ટ	२४ 😘	ુ હરહે
3	१३	६६१	ષ્ટ	२६	ં૭ર⊏
ક	ę	६६२	ષ્ટ	२७	७२६
. 8 .	₹	६३३	ક	२≍	७३०
8 :	₹	६६४			

श्रीगरोशाय नमः ॥

च्रहदारएयकोपनिषद् सटीक ॥

ऋथ प्रथमोऽध्यायः।

श्रथ प्रथमं ब्राह्मग्रम्।

मन्त्रः १ मृतम् ।

उपा वा अश्वस्य मेध्यस्य शिरः सूर्यश्चक्षुर्वातः पाणो व्याचपनिनैर्वेश्वानरः संवत्सरः आत्माश्वस्य मेध्यस्य द्यौः पृष्टमन्तिरक्षपृद्दं
पृथिवीपानस्यं दिशः पाश्वें अवान्तरिदशः पर्शवः ऋतवोङ्गानि मासाश्चार्द्धमासाश्च पर्वाएयहोरात्राणि प्रतिष्ठा नक्षत्राएयस्थीनि नभो
मांसानि उवध्यं सिकताः सिन्थवो गुदा यकुच क्रोमानश्च पर्वता
ओषध्यश्च वनस्पत्यश्च लोमान्युचन्पूर्वार्थो निम्लोचञ्जघनार्थो
यदिनुम्भते तदिचोतते यदिधूनते तत् स्तनयति यन्भेहति तद्वर्षति
वागेवास्य वाक् ॥

पदच्छेदः ।

उवा, वा, घ्रश्वस्य, मेध्यस्य, शिरः, सूर्यः, चक्षुः, वातः, प्रात्मः, व्यात्तम्, घ्रश्विः, वेश्वानरः, संदत्सरः, घ्रात्मा, घ्रश्वस्य, मेध्यस्य, खोः, पृष्ठम्, घ्रन्तरिक्षम्, उद्रम्, पृथिवी, पाजस्यम्, दिशः, पाश्वें, घ्रवान्तर-दिशः, पर्शवः, भृतवः, घ्रङ्गानि, मासाः, च, घ्रर्द्धमासाः, च, पर्वात्मः, श्रहोरात्राण्, प्रतिष्ठा, नक्षत्राण्, घ्रस्थीनि, नभः, मासानि, उवध्यम्, सिकताः, सिन्धवः, गुदाः, यकृत्, च, क्लोमानः, च, पर्वताः, घोषधयः, च, वनस्पतयः, च, क्लोमानि, उद्यन्, पूर्वार्धः, निम्कोचन्, कघनार्धः, यत्, विज्नुम्भते, तत्, दिद्यातते, यत्, विध्नते, तत्, स्तनयति, यत्, मेहित, तत्, वर्षति, वाग्, एव, घ्रस्य, वाक्।।

श्रान्यय:

पदार्थाः

मेध्यस्य=यज्ञिय स्रश्वस्य=प्रश्वका श्रिरः=शिर

वै=निरचय करके उषा=उपाकाल है

चक्षुः=उसका नेत्र सूर्यः=सूर्य है

प्राग्ः≔डसका प्राग् घातः≔बाद्यवायु है

ब्यात्तम्=उसका विवृतमुख

वैश्वानरः=वैश्वानर नामक श्राग्निः=श्राग्न है

+ तस्य≔उसी

मेध्यस्य=पश्चिय स्रश्वस्य=घोडे का

अश्वस्थ=वाद का स्नात्मा=श्रारमा

संवत्सरः=संवत्सर है

पृष्ठम्=उसकी पीठ चौः=स्वर्ग है

उद्रम्=पेट

श्चन्तरिक्षम्=मन्तरिक्ष है

पाजस्यम्=पाद. पृथिवी=पृथ्वी है

> पाश्चें=बगर्ने दिशः=दिशार्थे हैं

पारीचः=वगक्तों की हड़ियां

श्चवान्तरदिशः=उपदिशायें हैं

श्रङ्गानि=धंग ऋतवः=ऋतु हें

पर्वाणि=शंगों के जोड़

मासाः=मास

अन्वयः

पदार्थाः

च=धौर

अर्थमासाः=पक्ष हैं प्रतिष्ठा=पाद

श्रहोरात्राशि=दिन भौर रात हैं

श्चस्थीनि=हद्वियां नक्षत्राणि=नक्षत्र हैं

मांसानि=मांस

नभः=धाकाशस्थ मेघ हैं उद्यक्ष्यम्=उसका भ्राथा पद्या

हमाभव

सिकताः=बाब् है

गुदाः=उसकी घंतरी

सिन्धवः=नदी हैं

च= भौर

यत्≕जो

यकृत्≕िजगर **है** स=धीर

च=भार क्रोमानः=फेफवा है

मानः≕फफदा ह

+ ते≔वे

पर्वताः=पर्वत हैं लोमानि=स्रोम

श्चोषधयः=श्रीषधि

च=भौर

वनस्पतयः=वनस्पति हैं

च=धौर

पूर्वार्धः=उस घोदेका पूर्वार्ध उद्यन्=निकतता हुन्ना सूर्य है

जधनार्थः=उसके पछि का भाग निम्लोचन्=मस्त होनेवाबा सूर्य है

च=भीर

यत्=जो

+ सः=वह
विजुद्भते=जनहाई केता है
तत्=वही
विद्योतते=विद्युत् की तरह
जनकता है
यत्=जो
+ सः=वह
विधूनते=जंगको भारता है
तत्=वही
स्तनयति=बादलकी तरह गरजता है

यस्=जो + सः=वह महित=मृत्र करता है तस्=वही वर्षति=बरसता है झस्य=इसका वाक्=हिनहिनाना वाक्=शन्द

एख= { ही है यानी इसके एख= { शब्द में आरोप किसी का नहीं हैं

भावार्थ।

यज्ञकर्ता यज्ञ करते समय ऐसी रृष्टि रक्खे कि यज्ञिय घोडा प्रजापति है उसका शिर प्रातःकाल है. क्यों कि दिन ख्रीर रातभरमें उपाकाल जो तीन बनेसे पांच बजे तक रहता है. अतिश्रेष्ठ है. यह वेला देवताओं का है. इस काल में जो कार्य किया जाता है वह अवश्य सिद्ध होता है, यज्ञ कर्म में काल की श्रेष्ठता की आवश्यकता कही है, विना पविश्व-काल के यज्ञकी सिद्धि नहीं होती है, इसकारण उपाकाल की ऐकता यक्किय आश्व के शिरसे की है, ऐसे घोड़ेका नेत्र सूर्य है, जैसे सूर्य से सब कार्य सिद्ध होता है. वैसेही नेत्र से सब कार्य की सिद्धि होती है. ध्योर जैसे शिरके निकट नेत्र होते हैं, वैसे ही उपाकाल के पश्चात सूर्य उदय होता है, यानी उषाकाल के पीछे थोड़ी देर में सूर्य निक-क्राता है, इस प्रकार इन दोनों की ऐकता है, घोड़ेका प्राण बाह्य वायु है, जैसे प्राण विना शरीर नहीं रहसकता है, वैसे ही वायु विना कोई जीव नहीं रहसकता है, उसका खुला हुआ मुख वैश्वानरनामक अन्ति है, अर्गिन की उपमा मुखसे देते हैं, और अग्नि मुखका देवता भी है. और जैसे वैश्वानर अनि करके सब जीव जीते हैं वैसे मुखद्वारा भोजन करके सब जीव जीते हैं, उसका आतमा संबत्सर है, जैसे घोड़े के ŧ.,

मुखादि आंग बारह होते हैं, यानी ४ कमेंन्द्रियां ४ ज्ञानेन्द्रियां मन और बुद्धि वैसे ही संवत्सर में बाग्ह महीने होते हैं. इसकारण ऐसा कहा गया है. उस घोड़े की पीठ स्वर्ग है, जैसे सब लोकों में स्वर्ग ऊपर होता है. वैसे ही बोंडे की पीठ भी ऊपर होती है, उस घोड़े का पेट अंतरिक्ष है. जैसे अंतरिक्ष में सब चीजें भरी पड़ी हैं. और जैसे अंतरिक्ष गहरा है बैसेही पेट में सब चीजें भरी हैं, श्रीर वह गहरा भी है. उसका पाद पृथिती है, जैसे पृथिती नीचे है, वैसे ही पाद भी नीचे हैं. उसकी बगर्ले दिशायें हैं, यानी जैसे मुख्य दो दिशायें हैं वैसेही उस घोड़े की दो बगर्ले हैं, उसके बगलों की हड़ियां उपदिशायें हैं, जैसे बंगकों की हड़ियां बगक से मिज़ी होती हैं, वैसेही दिशाओं से उप-दिशायें मिली रहती हैं, उसके शरीर के पृथक् पृथक् भाग ऋतु हैं, क्योंकि दोनों में सादश्यता है. श्रीर उसके श्रंगों के जोड मास झीर पक्ष हैं, क्योंकि दोनों में साहश्यता है, इसके पैर दिन झौर रात हैं, क्यों कि जैसे शरीर के साथ पैर बढ़ता है वैसे ही दिन रात काल के भी बढ़ते हैं, उसकी हिंडूयां नक्षत्र हैं, क्योंकि दोनों में श्वेत रंग के कारण साहरयता है, उसका आधा पचा हुआ अन वाल है, क्यों कि अत्र के दानों में अपार बालू के रेतों में सादृश्यता है, अपीर उसके अँतरी और नख नदी हैं, क्यों कि जैसे नदी में से जल निक-लता है वैसे ही अँतरी और नसमें से रहाादि निकलते हैं, उसका जिगर स्प्रीर फेफड़ा पर्वत हैं, क्यों कि जैसे पहाड़ जंबा स्प्रीर ऊंचा होता है वैसे ही फेफड़ा ख्रीर जिगर फैला होता है, इस कारण दोनों में सादश्यता है, उसके शरीर के रोम खीषधी खीर बनस्पति हैं. क्यें कि इन दोनों में सादृश्यता है, उसका अगला भाग यानी गर्दन निकला हुआ सूर्य है, क्येंकि जैसे घोड़े का गर्दन ऊपर उठा रहताहै, वैसे ही सूर्य भी ऊपर को उठा रहता है, उसके पीछे का भाग अस्त होनेवाला सूर्य है, जैसे पीछे का हिस्सा नीचे की तरफ मुका रहता

है बैसे सूर्य का रथ बाद दोपहर के पश्चिम के तरफ मुका रहता है, यह दोनों में सादश्यता है, उसका जमहाई बिशुत् तुल्य है, क्योंकि बिजुली की सादश्यता मुखके साथ है, जब वह एकाएक खुल उठता है, झौर उसके शरीर का माइना मानो वादल का गर्जना है, दोनों में शब्द की सादश्यता है, उसका मूत्र करना वृष्टिका वर्षना है, क्योंकि दोनों एकही प्रकार के खिड़काव करते हैं, यहीं दोनों की सादश्यता है, उसका हिनहिनाना जो शब्द है इसमें झारोप किसीका नहीं है ऐसा ध्यान करने से यज्ञ की सफलता होती है, क्योंकि झध्यात्म झौर झिंधदेव एकही हैं, जो विश्व है वही विराट्हें, जो व्यष्टि है वही समिट है, भेद केवल छोटे बड़े का है, वास्तव में दोनों एकही हैं। १।

मन्त्रः २

श्रहवी अश्वं पुरस्तान्मिहमान्वजायत तस्य पूर्वे समुद्रे योनी रात्रिरेनं पश्चान्मिहमान्वजायत तस्यापरे समुद्रे योनिरेतौ वा अश्वं मिहमानावभितः संबभूवतुः हयो भृत्वा देवानवहद्दाजी गंधर्बानर्बी सुरानश्वो मनुष्यान्समुद्र एवास्य बन्धुः समुद्रो योनिः॥

इति प्रथमं ब्राह्मणम् ॥ १ ॥ पदच्छेदः।

आहः, वा, आरवम्, पुरस्तात्, महिमा, आन्वजायत, तस्य, पूर्वे, समुद्रे, योनिः, रात्रिः, एतम्, पक्षात्, महिमा, आन्वजायत, तस्य, आपरे, समुद्रे, योनिः, एतौ, वा, आरवम्, महिमानौ, आभितः, संवभूवतुः, हयः, भूत्वा, देवान्, अवहत्, वाजी, गंधवीन्, आर्वा, आसुरान्, आरवः, मनुष्यान्, समुद्रः, एव, आर्य, बन्धुः, समुद्रः, योनिः ॥

श्चन्यः

ज्ञह:=ितनही द्या=ितरचय करके द्यारवम् दुरस्तात् }=धोडे के द्यांगे का

पदार्थाः | ग्रन्थयः पदार्थाः महिमा=महिमा वानी सोने का के कटोरा ग्रन्थजायत=होता भया

रात्रिः=रात्रि प्तम् /=इस घांदेके पीछे के तरफका पश्चात ं**महिमा=**महिमा नामक चांदी का कटोरा श्चन्वजायत=होता भया तस्य=तिस पहिले महिमा के योनिः=उत्पत्ति का स्थान पूर्वे समुद्रे=पुरव का समुद्र है तस्य=तिस दूसरे महिमा के योनिः=उत्पत्ति की जगह अपरे समुद्रे=पश्चिम का समुद्र है वा≔श्रौर पतौ=ये दोनों महिमानी=महिमा नामक कटेारे अश्वम्=घोदे के श्राभितः=श्रागे पाँछे संबभूवतुः=रक्ले गये + सः≔वह घोदा ह्यः=हय होकर देवान्=देवों को अवहत्च चे जाता भवा यानी उन का वाहन हुआ

वाजी=गजी भूत्वा=हे।कर गंधर्वान्=गंधर्वें को

+ अञ्चहत्≔ले जाता भया यानी उन का वाहन हुआ

द्यवी=धर्वा + भूत्वा=होकर श्रसुरान्=धसुरों को + श्रवहत्=के जाता भया यानी

क्षश्वः=करव + भूत्वा=होकर मनुष्यान्=मनुष्यों को + श्रवहत्≕से जाता भया यानी उनका वाहन हुसा

उनका वाहन हमा

श्वस्य=इस वोहे का बन्धुः=रहने का स्थान समुद्रः=समुद्र है + च=शीर योनिः=उत्पत्ति स्थान पव=भी समुद्रः=समुद्र है

भावार्थ ।

यित्रय घोड़े के आगे आर पीछे दो २ कटोरे रक्ले जाते हैं, आगे वाला सोने का होता है, और पीछे वाला चांदी का होता है, इसीको महिमा कहते हैं, सोने वाले कटोरे की साटश्यता आदित्य के साथ है, क्योंकि हिरग्यगर्भ प्रजापति का प्रतिनिधि आदित्य है, जो दिन के नाम करके प्रसिद्ध है, घोड़े के पीछ का हिस्सा जिसके सामने चांदी का कटोरा रक्खा जाता है व्हाकी साटश्यता राश्चि द्यानी चंद्रमा से दी गई है, पहिले महिमा के उत्पत्ति का स्थान पूर्व का समुद्र है, वह जगह जहां सुवर्णा का कटोरा रक्सा है उसी को पूर्व का समुद्र माना है, क्योंकि वह कटोरा पूर्व के तरफ रक्खा जाता है, झीर सूर्य भी पूर्व की तरफ से निकलता है, घोड़े के पीछे का कटोरारूपी महिमा का स्थान पश्चिम का समुद्र माना है, क्योंकि यिक्कय घोड़े का पिछका भाग पश्चिम तरफ होता है जहां कटोरा रक्खा गया है, वह जगह दूसरे कटोरारूपी महिमा की जगह है, जो समुद्र माना गया है क्योंकि चंद्रमा पश्चिम दिशा में निकलता है. कटोरों का नाम महिमा रखने का कारण यह है कि ऐसा गौरव को पाया हुआ घोड़ा और घोड़ों से अति श्रेष्ठ होता है, जिस घोड़े पर देवता सवार होते हैं उसका नाम हय है, जिस घोड़े पर गंधर्व सवार होते हैं उसका नाम वाजी है, जिसपर झसुर सवार होते हैं उसका नाम अपर्वा है, स्रीर जिस पर मनुष्य सवार होते हैं उसका नाम अध्यव है, झीर जो घोड़े के रहने झीर उत्पत्ति की जगह समुद्र कहा है उस से यह प्रकट किया गया है कि सब के उत्पत्ति का कारणा जलही है. यानी जल ही करके सबकी सृष्टि होती है, सो जल हिरगयगर्भ से उत्पन्न हुआ है, इसी कारगा उसकी श्रेष्ठता है ॥ २ ॥

इति प्रथमं ब्राह्मग्राम् ॥ १ ॥

श्रथ द्वितीयं बाह्मणम् । मन्त्रः १

नैवेह किंचनात्र श्रासीन्मृत्युनैवेदमाष्ट्रतमासीत् श्रशनायया-शनायाहि मृत्युस्तन्मनोकुरुतात्मन्वी स्यामिति सोर्चश्रचरत्तस्यार्चत श्रापोजायन्तार्चते वे मे कमभूदिति तदेवार्कस्यार्कत्वं कं इ वा श्रस्मै भवति य एवमेतदर्कस्यार्कत्वं वेद ॥

पदच्छेदः ।

न, एव, इह, किंचन, झप्ने, आसीत्, मृत्युना, एव, इदम्, आवृतम्, आसीत्, अशनायवा, अशनाया, हि, मृत्युः, तत्, मनः, अकुरुत, आत्मन्ती, स्थाम्, इति, सः, अर्चन्, अवस्त्, तस्य, अर्चतः, आपः, अजायन्त, अर्चते, ते, मे,कम्, अभूत्, इति, तत्, एव, अर्कस्य, अर्कत्वम्, कम्, इ, वा, अस्मे, भवति, यः, एवम्, एतत्, अर्कस्य, अर्कत्वम्, वेद ॥ अन्वयः पदार्थाः श्रन्वयः पदार्थाः

श्चाग्रे=सृष्टि के पहिले

इह=वहां

किंचन एव=कुछ भी

न=नहीं

ग्रासीत्=था

इदम्=यह ब्रह्मांड

अशनायया=नुभुक्षारूप मृत्युना=मृत्यु यानी हिरण्यगर्भ

ईरवर करके

एव=ही

श्चावृतम्=ग्राष्टत था हि=क्योंकि

द्यशनाया=दुमुक्षारूपी

मृत्युः मृत्युही यानी हिरणयगर्भ

+ इति=ऐसी

+ पे्डछ्रत=इच्छाकरताभयाकि

+ अहम्≕में

श्चात्मन्वी=मनवाता स्याम्=होऊं

.नाम्-राज तत्≕तिसके पीछे

सः≔वह

मनः≔मनको

श्रकुरुत=उत्पन करता भया सः=फिरं वही हिरययगर्भ श्रक्ति=ध्यान करते हथे

श्चर्त्न्ज्यान करते हुये अचरत्=प्रकृति के परमाणु को

प्≕प्रकात क परमा शुका संचालान करता अथा + तदा=तव

तस्य=तिस स्रर्चतः=ध्यानकरनेवाले हिरण्य-

गर्भ से

श्रापः≕जव

श्चजायन्त=उत्पन्न होता भया

+ तदा=तब

+ सः=बह हिरस्यगर्भ इति=ऐसा

+ श्रमन्यत=मानता भया कि

कम्=जलादि

मे=मुक

श्चर्यते=तपरूप विचार करनेवाले

के वितये ही

अभूत्=उत्पन्न हुआ है यानी मेरे

रहन का स्थान हुआ है

तत् एव=वही श्चर्कस्य=पूजनीय देव हिरयगार्भ

ईश्वर का

पतत्=यह

श्चर्कत्वम् = श्चर्कत्व यानी ईश्वरत्व है

अथवा स्वभाव है

यः=जो

प्वम्=इस प्रकार अर्कस्य=हिरण्यगर्भ ईरवर के अर्कत्वम्=ईरवरत्व को

वा=भार

भ्राध्याय १ नाहासा २

क्रम्=जल को वेद=जानता है ग्रासी=उसके जिने

ह=सवश्य खे⇒सभीष्ट भवति=फल को सिद्धि होती है

भावार्थ ।

हे सौस्य ! इस वक्ष्यमागा सृष्टिकम के पहिले कुछ भी नहीं था, यह विश्व बुसुक्षारूप मृत्यु यानी हिरएयगर्भ ईश्वर करके आवृत था: पहिले क्रेंक्ट नहीं था यह जो कहा गया है इससे मतलव यह है कि जो इस काल में जाम रूप करके जगत् दृश्यमान होरहा है वह ऐसी सुरत में नहीं था, परंतु प्रजय होने पर प्रकृति के कार्य परमाशाुरूप में इसीर जीव अस्ट इरूप में स्थित थे, तिन्हीं को हिरगयगर्भ ईसवर ध्याच्छादित किये था, यानी उनमें व्याप्त था, ऐसे होते संते हिरययमर्भ ईश्वर ने इच्छा की कि मैं मनवाला होऊं, तब उसी क्षरण मनवाला हम्रा. भीर मन को उत्पन्न किया, भीर उसके भाश्रित हुये प्रकृति के परमाण आदि में संवाजन शक्ति उत्पन्न होकाई, तिसके पीछे तिस स्मरमा करनेवाले हिरएयगर्भ ईश्वर में परिश्रम के कारमा उष्णाता होआई जो उस यहिय अवक्षप हिरगयगर्भ की अग्नि के तुल्य हैं. तिस अध्याता से अल उत्पन्न होस्राया, तब हिरग्यगर्भ ईरवर ने समझा कि मक विचार करनेवाले के लिये जल आदि उत्पन्न हुये हैं. जो मेरे रहने की जगह है, यही उस परम पूजनीय ईरवर की ईरवरता है. जो उपासक इस प्रकार हिरग्यगर्स ईरवर की ईरवरता की झीर जल के जलत्व को जानसा है वह अपने असीष्ट फ़ल को प्राप्त होता है।। १।।

मन्त्रः २

अवातो वा अर्कस्तवद्यां शर आसीत्तत्समहत्यत सा पृथिव्य-अवत्तत्तस्यावश्राम्यत्तस्य अन्तस्य तन्नस्य तेजोरसो निरवर्तताग्निः॥

्यइच्छेदः ।

आपः, वा, अर्कः, तत्, यत्, आपाम्, शरः, आसीत्, तत्,

समहन्यत, सा, पृथिवी, स्रभवत्, तत्, तस्याम्, स्रश्नाम्यत्, तस्य, श्रान्तस्य, तप्तस्य, तेजोरसः, निरवर्त्तत, स्रान्तः ॥

अन्वयः सर्कः=सर्वही वै=निश्चय करके श्चापः≃जख है तत्≔वह यत्=जो श्रपाम्=जब का श्रारः≕फेन + दधः≔दही के + मग्डम्=मांदकी + इव=तरह श्रासीत्=उत्पन हुमा तत्≔वही समहन्यत≃तेज करके कठोर होता + पुनः=फिर सा≔वही प्रथिवी=प्रथ्वी

पदार्थाः

श्रम्थयः

पदार्थाः

श्रम्थत्=होतीमई यानी ग्रंडे के

श्रम्भयत्=होतस प्रव्यो के

तस्याम्=तिस प्रव्यो के

+ उत्था
दितायाम्

+हिरग्यगर्भः=हिरग्यगर्भ ईरवर

श्रभाम्यत्=श्रीमत होतामया

भान्तस्य=तिस भग्नित हुवे

तसस्य=केव्युक्त

तस्य=उस हिरग्यगर्भ ईरवर के

+ श्रीरात्=श्रीर से

तेजोरसः=तेजरस

श्राम्यः=श्रीन

(निक्वता भया यानी

| भडक मातर प्रश् निरवर्त्तत= द्रश्रीर रखनेवार |हिरवयगर्भ हो। । भया

भावार्थ ।

हे सौम्य ! आर्कही जल है, आर्क को सूर्य भी कहते हैं, और अभिन भी कहते हैं, सृष्टिकम में जल के बाद अभिन होता भया, चूंकि कारण कार्य में भेद नहीं होता है, इसिलये यहां अभिन और जल की एकता है, जल में चलन होने के कारण फेन या माग उठ आया, वह दही की तरह जम गया, वही फिर अभिन की उच्चाता पाकर कठोर होकर पृथ्वी होगई, वह पृथ्वी अंडे के आकार में दिखलाई पड़ी, इस पृथ्वी के उत्पन्न होने पर हिरएयगर्भ ईस्वर जिसका दूसरा नाम विराट

ड्योर प्रजापति भी है श्रमित होता भया, तिस श्रमित स्वेद्युक हिरगयगर्भ ईश्वर के शरीर से तेजरस अन्ति उत्पन्न होता भया, यानी उस झंडे के भीतर प्रथम शरीर का रखनेवाला हिरवयगर्भ हुझा ॥२॥

मन्त्रः ३

स त्रेघात्मानं व्यक्तुरुतादित्यं तृतीयं वायुं तृतीयं स एष प्रागुलेघा विहितः तस्य प्राची दिक् शिरोऽसौ चासौ चेमौ अयास्य प्रतीची दिक् पुद्रमसी चासी च सक्ष्य्यी दक्षिणा चोदीची च पार्श्वे चौः पृष्ठयन्तरिक्षमुदरिवयमुरः स प्वोऽप्सु प्रतिष्ठितो यत्र क चैति तदेव प्रसितिष्ठत्येथं विद्वान् ॥

पदच्छेदः ।

सः, त्रेषा, आत्मानम्, व्यकुरुत, आदित्यम्, तृतीयम्, वायुम्, तृतीयम्, सः, एषः, प्रागाः, त्रेषा, विहितः, तस्य, प्राची, दिक्, शिर:, इससी, च, इससी, च, ईसीं, इपथ, इसस्य, प्रतीची, दिक्, पुद्धम्, झसौ, च, झसौ, च, सक्ष्यौ, दक्षिगा, च, उदीची, च, पाश्वें, चौः, पृष्ठम्, झन्तरिक्षम्, उदरम्, इयम्, उरः, सः, एषः, झन्सु, प्रतिष्ठितः, यत्र, क, च, एति, तत् , एव, प्रतितिष्ठति, एवम् , विद्वान् ॥

पदार्थाः पदार्थाः अन्वयः श्चरवयः + ब्रक्टरत=करता भवा सः≔त्रह विराट (श्रवादा श्रीन श्रीर कात्मानम्=चपने को ब्रेधा=तीन त्तीयम् । सरा स्वरूप व्यकुरुत=भागों में विश्राम करता + अकुदत=करता भया + कथम्=केसे तीन प्रकार किया + तथा=तैसंही सो कहते हैं (सवावा अन्ति वायु + अन्तिम्) (सवावा वायु और आरम्गानम् >= { के सूर्य को अपना आरमानम् >= { सूर्य के अपन को क्तीयम् । अपनातीसरा स्वरूप

तृतीयम् । तीसरी स्वरूप

सक्ट्यी=जंबा है + अकुरुत=करता भया सः≕सोई च≃घौर य्षः=यह उठीची=शत्तर दिशा प्राग्यः=सर्वभृतांतःस्थ विराट् त्रधा=श्रम्नि वायु सूर्य करके पार्श्वे=उसकी बगर्के हैं तीन प्रकार का द्योः=स्वर्ग विद्वितः=विभाग किया हम्रा है पृंष्ठम्=पीठ है र्घन्तरिक्षम्=प्राकाश तस्य } ≔पेसे तिस घोड़े का उव्रम्=पेट है शिर:=शिर इयम्=यह प्रथ्वी प्राचीदिक्=पूर्वेदिशा है उरः≔हदय है श्रसौ=यह यानी ईशानी दिशा सः=वही च≃शौर एषः=यह प्रजापति रूप श्रसौ=यह यानी आग्नेयी दिशा चरवमेधारिन ईमीं=बाहु हैं श्रप्सु=जन में श्रथ=श्रीर प्रतिष्ठितः=स्थित है श्रस्यं≈उसका यत्र=जहां प्रतीची=पश्चिम कच=कहीं दिक्=दिशा एवम्=ऐसा पुकुंम्=पिछ्जा माग है विद्वान्=शाता श्रसौ=वायु दिशा प्रति≃जाता है च≃श्रोर तदेव=वहां असो=नैर्श्वति दिशा प्रतितिष्ठति=प्रतिष्ठा पाता है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! वह विराट् अपने को तीन भागों में विभाग करता भया, कैसे उसने तीन भागों में विभाग किया सो कहते हैं, तुम सावधान होकर सुनो, अलावा वांयु और अग्नि के उसने सूर्य के अपना तीसरा स्वरूप रचा, इसी प्रकार अलावा अग्नि और सूर्य के वांयु को अपना तीसरा स्वरूप रचा, तैसेही अलावा वांयु और सूर्य के अग्नि को अपना तीसरा स्वरूप रचा, सोई यह सर्वभूतांतःस्व विराट् अग्नि बायु सूर्य करके तीन प्रकार का विभाग किया हुआ। आरवमेश आहिन में आरोपित किया हुआ। घोड़ा है, यानी ऐसी जो आरवमेश आहिन है वही मानो एक घोड़ा है, उसका शिर पूर्व दिशा है, उसके बाहु ईशानी और आग्नेयी दिशा है, उसका पिछला भाग पश्चिम दिशा है, उसके दोनों जांच वायु दिशा और नैर्मृति दिशा है, उसकी बगलें दक्षिण और उत्तर दिशा है, उसकी पीठ स्वर्ग है, उसका पेट आकाश है, उसका हृदय पृथिवी है, सोई यह प्रजापतिरूप अश्वमेध अग्नि जल में स्थित है, ऐसा उपासक जहां कहीं जाता है वहां प्रतिष्ठा को प्राप्त होताहै।। ३।।

मन्त्रः ४

सोऽकामयत द्वितीयो म त्र्यात्मा जायेतेति स मनसा वाचं मिथुनं समभवदशनाया मृत्युस्तचद्रेत त्र्यासीत्स संवत्सरोऽभवत् न इ पुरा ततः संवत्सर त्र्यास तमेतावन्तं कालमविभः यावान्संवत्सरस्तमेतावतः कालस्य परस्तादस्रजत तं जातमभिन्याददात्स भाग्यकरोत्सैव वागभवत् ॥

पवच्छेवः ।

सः, झकामयत, द्वितीयः, मे, झात्मा, जायेत, इति, सः, मनसा, वाचम, मिधुनम, समभवत्, झशनाया, मृत्युः, तत्, यत्, रेतः, झासीत्, सः, संवत्सरः, झभवत्, न, ह, पुरा, ततः, संवत्सरः, झास, तम्, एतावन्तम्, कालम्, झिनिधः, यावान्, संवत्सरः, तम्, एतावतः, कालस्य, परस्तात, झसुजत, तम्, जातम्, झिन्याददात्, सः, भाग्, झकरोत्, सा, एव, वाक्, झभवत्।।

द्याभ्ययः

पदार्थाः स्रन्वयः

पदार्थाः

सः=वह झशनाया=भूकरूप मृत्युः=१त्यु झकामधत=इथ्हा करता भवा कि मे≔मेरा द्वितीयः=दूसरा श्रास्मा=शरीर जायेत=शे

इति=इसक्रिये याचान्=जितने संवत्सर:=संवत्सर सः≔वह प्रजापति सृत्यु ने + प्रसिदः=प्रसिद्ध है मनसा≔मनके पतावतः≔इस + सह=साथ कालस्य=कालके परस्तात्=पीषे करता भया + पुनः≕किर तम्त्रसृजत= तन्न=तिस वाची चौर मनके संबन्ध में यत्≕जो सः=वह रेतः=ज्ञानरूप बीज + मृत्युः=मृत्यु द्यासीत्=था तम्≕उस सः=वही ज्ञातम्=उत्पन हुवे कुमार के संवत्सर:=संवत्सर काबरूप + असुम्=लाने के जिये + प्रजापतिः=प्रजापति श्रभिब्या- र् =मुख खोबता भया द्दात् र अभवत्=होता भया ∙ ततः=तिससे तदा=तब पुरा=पहिन्ने सः=वह कुमार संवत्सरः=का**ब** + भीतः=डरता म≕न + सन्=हुषा ग्रास ह=धा तम्=उस गर्भ विषे चायेहुये भाग्म्=भाग् + इति=ऐसा शब्द प्रजापति को श्चकरोत्≔करता भया पतावन्तम्=इतने सा एव≔वही भाग् कालम्=कालपर्यन्त वाक्=वाक् + मृत्युः= मृत्यु श्रभवत्=होता भया श्रविभः=वारवा करता भया

भावार्थ ।

हे सौम्य ! जब उस भूखरूप मृत्यु ने इच्छा किया कि मेरा दूसरा शरीर उत्पन्न हो तब उसने वासी को मनके साथ संयोजित किया, तिस मन और वागी के मेज से ज्ञानरूपी वीर्य जो शरीर की उत्पत्ति का कारण था सोई संवत्सर काजरूप प्रजापित होता भया, तिसकी उत्पत्ति के पहिले काज नहीं था, हे सौम्य ! उस गर्भ में झाये हुये प्रजा-पति को उतने काजतक मृत्यु धारण करता रहा जितने काल तक करूप होता है, तिस काजके पीछे वह अपने को ही झंडे में से दूसरे स्वरूप में उत्पन्न करता भया, तिस उत्पन्न किये हुये हुमार को वह मृत्यु खाने के जिये दौड़ा, तब वह डरा हुआ छुमार "भाण् " ऐसा शब्द करता भया, फिर वही शब्द भाग् वाणी होती भई, जो आजतक विख्यात है, यानी बोजी जाती है। ।।

मन्त्रः ५

स ऐक्षत यदि वा इममिभमंस्ये कनीयोत्रं करिष्यइति स तया वाचा तेनात्मनेदं सर्वमस्रजत यदिदं किंचर्चो यजूषि सामानि छन्दांसि यज्ञान् प्रजाः पशुन् स यद्यदेवास्रजत तत्तद्रजुमिश्रयत सर्वे वा अत्तीति तद्दितेरदितित्वं सर्वस्येतस्यात्ता भवति सर्वमस्यात्रं भवति य एवमेतददितेरदितित्वं वेद ॥

पदच्छेदः।

सः, ऐक्षत, यदि, वा, इमम्, अभिमंस्ये, कनीयः, अन्नम्, करिन्ये, इति, सः, तया, वाचा, तेन, आत्मना, इदम्, सर्वम्, असुजत, यत्, इदम्, किंच, झृचः, यजूंषि, सामानि, छन्दांसि, यज्ञान्, प्रजाः, पशून्, सः, यत्, यत्, एव, असुजत, तत्, तत्, अजुम्, अधियत, सर्वम्, वा, अति, इति, तत्, अदितेः, अदितित्वम्, सर्वस्य, एतस्य, अचा, भवति, सर्वम्, अस्य, अन्यते, भवति, यः, एवम्, एतत्, अदितेः, अदितित्वम्, वेद् ॥

श्चन्ययः पदार्थाः झन्तयः पदार्थाः सः=वद्द एत्यु + दङ्का=देवकर तम्=डस भवभीत कुमार को ऐक्षत=विचार करता भवा कि

थदि≔श्रगर + बुभुक्षया=साने के स्यास से इमम्=इस कुमार को श्राभिमंस्ये=मारू तो कनीयः=थोड़ा **श्र**क्षम्=माहार करिष्ये=मिलेगा इति⊐इसक्षिये सः=वह मृश्य तया=उस घाचा≔वाखी च=बौर तेन≔उस आरमना=मन करके यत्≕जो किंच=कुछ **इ**द्म्≔यह दश्यमान द्रदम्=नशायक है सर्वम्=उस सबको श्चासृज्ञतः=उत्पन्न करता भया पुनः=किर भ्राुचः≔ऋग्वेद यञ्जूषि=यजुर्वेद सामानि=सामवेद छुन्दांसि=गायण्यादि छुन्दों को यज्ञान्⇒मर्जो को प्रजाः=प्रजासों को पशुन्≔पशुकों को + श्रद्धाजत=डत्पच करता भया **सः ध्वह**ः प्रजापति यम्=त्रिस

यत्=जिसकी द्यस्जत=उध्यत्न करता भया तत्,≕इसी तत्=डसी को श्चन्म्⇒काने के विये श्राभ्रियत⊐इच्छा करता भया + यत्=चृंकि + मृत्युः=मृत्यु षे एव≖श्रवश्य सर्वम्≕सबको श्रात्ति=खाता है तत्≔इसक्षिये श्चितिः=श्रदितिनामक पूर्य का **अदितित्वम्**=ब्रदितित्व + प्रसिद्धम्=प्रसिद्ध है यः=जो पवम्≔इस प्रकार श्रदितेः=घदिति के श्रदितित्वम्=श्रदितित्व को चेद्ञजानता है सः≔वह सर्वस्य≃सब एतस्य=इस जगत् का **श्रन्ता**=श्रता यानी भक्ष**ण** करनेवासा होता है + च≕भीर सब ब्रह्मांड उसका भोग

+ दि≔नवाँकि + तस्य | उसका एक बास्मा + सर्वेत्रारमा≔सर्व का प्रथक् प्रवक् + झारमा | डोवा है कारमा + भवति |

भावार्थ ।

हे सौम्य ! तत्पश्चात् उस भयभीत कुमार को देखकर मृत्य यानी प्रजापति ने विचार किया कि इप्रगर मैं खाने के ख्याल से इस क़मार को मार डालूं तो बहुत थोड़ा सा आहार पाऊंगा, इसलिये वह मृत्यु-रूप प्रजापति वासाी भीर मन करके जो कुछ दृश्यमान यह जगत् है उसको उत्पन्न करता भया, और फिर भृग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, गायत्री छंदादिकों को, यहाँ को, प्रजाओं को, पशुओं को उत्पन्न करता भया, भीर जिस जिसको उत्पन्न करता भया, उस उसको वह प्रजापति खाने की इच्छा करता भया, कारणा इसका यह है कि मृत्य सबको अवश्य खा जाता है, और इसीलिये इस मृत्यु का नाम श्रदिति है, क्योंकि श्रात्ति घातु से निकला है, जिसका श्रर्थ स्त्राना है, इस प्रकार जो मृत्य नामक अपदिति के अपदितित्व की जानता है यानी यह समम्तता है कि नाम रूपवाकी चीजें भीग हैं श्रीर नाशवान् हैं श्रीर भीगनेवाला चेतन आत्मा है वह सब जगत् का अत्ता यानी भक्षग्रकर्ता होता है, क्यों कि हर एक व्यष्टिरूप पृथक पृथक् आत्मा उसका समष्टिरूप एक आत्मा होता है. इसिलये जिस जिसको हर एक जीव खाते हैं वह सब इस मृत्युक्ष प्रजापति का भोग होता है।। १ ।।

मन्त्रः ६

सोऽकामयत भूयसा यहेन भूयो यजेयेति सोऽश्राम्यत्स तपोऽ-तप्यत तस्य शान्तस्य तप्तस्य यशोनीर्यमुदकामत् । भागा वै यशोनीर्यम् तत्प्राग्रेषुत्कान्तेषु शरीरं श्वियतुमिश्रयत तस्य शरीर एव मन श्रासीत् ॥ परुष्कारः ।

सः, झकामयत्, भूगसा, बहेन, भूयः, यजेय, इति, सः, अश्रा-

म्यत्, सः, तपः, आतप्यत, तस्य, आन्तस्य, तप्तस्य, यशः, बीर्धम्, खद्कामत्, प्रात्ताः, वै, यशः, बीर्यम्, तत्, प्रात्तेषु, खत्कान्तेषु, शरीरम्, श्वयितुम्, अधियत, तस्य, शरीरे, एव, मनः, आसीत् ॥

पदार्थाः पदार्थाः श्चन्वयः ं **अ**न्वयः + च=श्रीर भूयसा≔त्रड़े प्रयत वीर्यम्=वत यझेन=यज्ञ विधि करके उद्क्रामत्=उसके शरीरसे निकलता भूयः≕िकर यजेय=यज्ञ करूं भया इति=ऐसी प्राणाः=प्राग्रही सः=वह प्रजापति वै=निस्संदेष्ठ शकामयत=रच्छा करता भया + शरीरे=इस शरीर में तद्ा≔तव यशः=यश + लोकवत्=साधारण मनुष्य की + च=श्रौर वीर्यम्=वल है सः≔वह प्रजापति + तेषु=तिस श्रश्लाम्यत्=थक गया प्रारोषु=प्राय के '+ च=श्रीर उत्कान्तेषु=निकल जाने पर तत्=प्रजापति का वह शरीर ∙सः≔वह श्वयितुम् } श्रिधियत }=फूलगया तपः इत्रतप्यत }=दुःखित होता भया + ततः=तत्पश्चात् + परन्तु=परन्तु **धा**न्तस्य=थके हुवे तस्य=तिस प्रजापति का तप्तस्य≕क्रेशित मनः≔मन तस्य=उस प्रजापति का श्रारीरे एच=उसी सृतक शरीर में . यशः≔यश यानी प्राण आसीत्=बगा था

भावार्थ।

हे सौम्य ! जब बड़े भारी यज्ञ करने की प्रजापित ने इच्छा किया तो उसके सामग्री के एकत्र करने में झौर विधान के सोचने में बहुत अमित हुआ, यानी उसको परिश्रम करना पड़ा, झौर दुःखित भी हुआ, सत्पश्चात् उस थके हुये क्रोशित खेद को प्राप्त हुये प्रजापित के शरीर से जश और बल दोनों निकल गये, जशही निःसन्देह प्राया है, और बल इन्द्रिय है, इन्द्रियबल से मतलब कर्म इन्द्रिय, और ज्ञान इन्द्रिय हैं, शरीर में यही दो यानी प्राया और इन्द्रिय मुख्य हैं, जब ये दोनों निकल गये प्रजापित का मृतक शरीर फूल आया, परन्तु उसका चित्त अथवा मन उसी मृतक शरीर में लगारहा ॥ ६ ॥

मन्त्रः ७

सोकामयत मेध्यं म इदं स्यादात्मन्त्र्यनेन स्यामिति ततोऽश्वः समभवद्यदश्वत्तन्मेध्यमभूदिति तदेवाश्वमेधस्याश्वमेधत्वम् एष इवा अश्वमेधं वेद् य एनमेवं वेद तमनतुरुध्येवामन्यत तं संवत्सरस्य परस्तादात्मन आलभत पशून देवताभ्यः भत्यौद्दत् तस्मात्सर्वदेवत्यं मोक्षितं माजापत्यमालभन्त एष इवा अश्वमेधौ य एष तपित तस्य संवत्सर आत्मायमग्निरर्कस्तस्येमेलोका आत्मानस्तावेतावकाश्वमेधौ सो पुनरेकैव देवता भवति मृत्युरेवाप पुनर्भत्युं जयति नैनं मृत्यु-रामोति मृत्युरस्याऽऽत्मा भवत्येतासां देवतानामेको भवति ॥ इति द्वितीयं बाह्मणम् ॥ २ ॥

पदच्छेदः ।

सः, अकामयत, मेध्यम्, मे, इदम्, स्यात्, आत्मन्वी, अनेन, स्याम्, इति, ततः, अश्वः, समभवत्, यत्, अश्वत्, तत्, मेध्यम्, अभूत्, इति, तत्, एवः, अश्वमेधस्य, अश्वमेधस्य, एवः, इ, षा, अश्वमेधस्य, बेद, यः, एनम्, एवम्, वेद, तम्, अननुरुध्य, एव, अमन्यत, तम्, सं- वत्सरस्य, परस्तात्, आत्मने, आक्षमत, पश्न्, देवताभ्यः, प्रत्योहत्, तस्मात्, सर्वदेवत्यम्, प्रोक्षितम्, प्राजापत्यम्, आक्षमन्ते, एषः, इ, वा, अश्वमेधः, यः, एषः, तपति, तस्य, संवत्सरः, आत्मा, अयम्, अग्निः, अर्कः, बस्य, इमे, लोकाः, आस्मानः, तौ, एतौ, अक्शिवमेधौ, सा, उ,

पुनः, एका, एव, देवता, अवति, मृत्युः, एव, आप, पुवः, सृत्युम्, जवति, न, एनम्, मृत्युः, आप्रोति, सृत्युः, अस्य, आत्मा, सवति, एवासाम्, देवतानाम्, एकः, भवति ॥

स्रम्बयः पदार्थाः ग्रम्बयः पदार्थाः सः=वह प्रजापति (भारतमेशस्य है यानी + इति=ऐसी जो पहिसे शरीरफूला श्रकामयत=इच्छा करता भवा कि और अपवित्र था वहीं मे=भेरा अश्वमेधत्वम्=४ पीडे से प्रजापति के इदम्=यह शरीर प्रवेश करने से पवित्र मेध्यम्=यज्ञ के योग्य हुचा इसबिये उसका स्तात्=हो ⁽ नाम प्रस्तमेष पदा +च=धौर थः≕जो उपासक स्रनेन=इसी शरीर करके प्वम्≔कहे हुवे प्रकार **ग्रात्मन्वी**≔रूसरा शरीर वाला में मश्वमेधम्≔प्रकोष को स्य।म्=होऊं वेव्≕जानता है इति=इस सोचने पर य्षः≔वह यस्=जो वा ह=मवरय + ज्ञाता=सरवमेध का ज्ञाता तत्=वह अश्वत्=शरीर प्रजापति का कृता + भवति≔होता है + च=भौर ± तत्प्रवेशात्=उसी में प्रजापति के यः=जो प्रवेश करने से पवम्=इसमकार तत्≔वह शरीर प्रनम्=इस प्रजापतिकृष मेध्यम्=पवित्र अरव को अभूत् इति=होगवा वेद=जानता है ततः≔तिसके पीछे एषः≔यही सः≔वह प्रजापति स्त्रयंही + झश्यमेश्वम्,=मस्यमेश्व को श्री अश्वः=वोदा वेद=जानता है श्रभवत्=होगया + पुनः≕किर + तत् यय=वही + सः≔वह प्रजापति अश्वभेधस्य=अश्वमेध का अगन्यत≔रूषा करता भवा **कि**

तम्≕उस क्टे हुवे घोदे को **धन**नुरुष्य एव≔विता किसी कावट के +संबत्सरम्) अपक वर्ष तक फिराता **भामयामास**्रे निया

+ ख=भीर

संबरसरस्य 🕻 ंबर्ष के पीछे परस्तात 🕽

> आत्मने=अपने विये तम्=उसी घोड़े को आलभत=अग्निमें समर्पण करता

> > यशून्=भौर बहुतेरे पशुक्षों को

देवताभ्यः=देवताचां के क्रिये प्रत्यीहत्=संप्रदान करता भवा

+ तस्मात्=इसविये

सर्वदेवत्यम्= { सब देवतार्थो को सर्वदेवत्यम्= { मावाहन किया गया है जिसमें ऐसे

प्रोक्षितम्=पवित्र किये हुये आजापत्यम् । पति देवता वासे घोड़े की

+ याक्किकाः≔हदानींकाः कर्ता

आसभन्ते=यह विषे संप्रदान

करते हैं ्द्रः≔को सूर्य ं तपति=अकाशित होता है

एषः≕वही

ह वा=निरचय करके

अश्वमेघ:=अरवमेथ है :

तस्य=बसी सूर्व का एकः=मह आत्मा≔गरीर संवत्सरः⇒संबत्सर है

श्रयम्≔गह श्चारिनः=मरवसेषाणि ही

श्रर्कः⇒पूर्व है

तस्य=इसी के श्चात्मानः≔शंग

इमे≕ये

स्रोकाः=तिनोंस्रोक हैं तौ=ग्रीम श्रीर सूर्य एती=वे दोनों अन्नि और

सूर्य हैं

अक्शित्रमे घी⇒यानी सरव सूर्व भीर सूर्य भरवमेश्र है ज=भोर

पुनः≕फिर + ती=वे दोनों देवता याणी भागन भीर सूर्य

एका=मिकाकर सा=बह

एव≔री

देवता } + सृत्युः = सोई सन्दु है भवति

+ यः≃जो उपासक

+-एवस्=इसप्रकार

+ वेद=जानता है

+ सः=वह पुनः=धानेवासी

मृत्युभ्=छत्यु को

अपजयित=जीत बेता है

एतम्=ऐसे जाता को

मृत्युः=मीत

न=नहीं
आप्नोति=प्राप्त होती है

+ हि=क्योंकि

मृत्युः=मत्युही

अस्य=डस जाता का
आत्मा=आत्मा

भवति=होजाता है

+ किंच=मीर

+ सः=वह ज्ञाता

एतासाम्=इन
देवतानाम्=देवताओं का

एकः=एकस्वरूप

भवति=होताहे यानी तदाकार

होजाता है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! प्रजापित ने ऐसी इच्छा की कि यह मेरा मृतक शरीर यज्ञ के योग्य फिर होजाय, इसी करके मैं दूसरा शरीरवाला हो ऊं, उसके इस प्रकार सोचने पर वह जो मृतक शरीर प्रजापति का फूला था, उसमें वह प्रवेश कर गया, उसके प्रवेश करने से शरीर अनेत से सुचेत होगया, उसी शरीर विषे गया हुआ प्रजापित घोड़ा होगया, यही आरवमेध का आरवमेधत्व है, यानी जो पहिले शरीर फूला हुआ। और अपवित्र था, वही पीछे को प्रजापति के प्रवेश करने से पवित्र होगया. इसिकाये उसका नाम अध्वमेश पड़ा, क्योंकि प्रजापति आति श्रेष्ठ श्रीर श्रतिपवित्र है, जो उपासक इस प्रकार श्रश्वमेथरूपी प्रजा-पति को जानता है, वही अवश्य अश्वमेधयज्ञ का ज्ञाता होता है. जो इस प्रकार उस प्रजापतिरूप ध्यश्व को जानता है, वही श्रारवमेश यज्ञ को जानता है, यहां द्वितीय बार कहने से गुरु शिष्य को निरचय कराता है कि वही अश्वमेशयज्ञ का ज्ञाता होता है जो भारती प्रकार ब्यारवमेधरूप प्रजापति को जानता है, ब्यौर दूसरा कोई नहीं होसकता है, पुन: वह प्रजापति ऐसी इच्छा करता भया कि जो छुटा हुआ घोड़ा है वह विना किसी रुकावट के एक वर्ष पर्यन्त चारो दिशाओं में घूमता रहे, ऐसा ही किया भी गया, जब घोड़ा वापिस जाया गया तब उसने अग्नि में अपने जिये समर्पण किया, और उसके साथ बहुतेरे पशुओं को भी अन्य देवताओं के जिये यानी इन्द्रियादि देवताओं के जिये संप्रदान किया, इसजिये सब देवताओं का आवाहन किया गया है जिसमें ऐसे पवित्र किये हुये प्रजापति-रूप घोड़े को इदानींकाज के यहाकर्ता पुरुष भी यहा विषे संप्रदान करते हैं, हे शिष्य! जो प्रकाशमान सूर्य दिखाई देता है, वही निश्चय करके अश्वमेध है, इस सूर्य का शरीर संवत्सर है, यह अश्वमेध अग्नि निश्चय करके सूर्य है, इसके अंग भूर, सुवः, स्वः, ये तीन जोक हैं, और अग्नि सूर्य है, सूर्य अश्वमेध है, और वे दोनों देवता यानी अग्नि और सूर्य दोनों मिला कर एक प्रजापति देवता है, जो उपासक इस प्रकार जानता है, वह आनेवाले सृत्यु को जीत लेता है, क्योंकि ऐसे ज्ञाता के पास मृत्यु नहीं आता है, क्योंकि वह सृत्यु उस ज्ञाता का आत्मा होता है, आरे वह इस प्रकार का जानने वाला पुरुष देवतारूप होजाता है यानी प्रजापति होजाता है।। ७।।

इति द्वितीयं ब्राह्मग्राम् ॥ २ ॥

श्रथ तृतीयं बाह्मग्म्।

मन्त्रः १

द्वया ह प्राजापत्या देवारचासुराश्च ततः कानीयसा एव देवा ज्यायसा ध्यसुरास्त एषु लोकेष्वस्पर्धन्त तेह देवा ऊचुईन्तासुरान्यज्ञ जदुर्गीयेनात्ययामेति ॥

पदच्छेदः ।

द्वयाः, ह, प्राजापत्याः, देवाः, च, श्रासुराः, च, ततः, कानीयसाः, एव, देवाः, ज्यायसाः, श्रासुराः, ते, एषु, लोकेषु, श्रास्पर्धन्त, ते, ह, देवाः, ऊचुः, हन्त, श्रासुरान्, यक्षे, उद्गीधेन, श्रात्ययाम, इति ॥ श्रान्वयः पदार्थाः श्रान्वयः पदार्थाः

ह=यह कहा गया है कि द्वायाः =दो प्रकार के थे प्राज्ञापत्याः=अञ्जापति के सन्तान देवाः=पुक देवता श्र=दूसरे
श्रद्धाराः च=धसुर
ततः=दनमें से
देवाः=देवता
कानीय- } = धसुरों की धपेक्षा कम
साः एव } थे
+ च=धीर
श्रद्धाराः=धसुर
ज्यायसाः=देवताओं से ज्यादा थे
ते=चे दोनों
एषु=दन
सोकेषु=धोकों वा शरीरों में
श्रद्धपर्थन्त=एक दूसरे के दवाने के
क्रिये इच्छा करते भये

ह्=तत्त्रवात् तेळ्वे देवाः=देवता ऊञ्जः=विचार करते भवे कि हरत=यदि सवकी अनुसति हो तो + चयम्=हस यक्तं =ज्योतिष्टोम नामक यक्तं में उद्गीथेन=उद्गीय की सहायता करकें प्रसुराज्=असुरों के ऊपर अस्ययाम }=अतिकम्मच करें हति }

भावार्थ ।

हे सौम्य ! ऐसा सुना गया है कि प्रजापित के संतान दो प्रकार के हुये, इनमें से एक देवता थे, दूसरे असुर थे, असुर देवताओं की अपेक्षा संख्या में क्यादा थे, और देवता असुरों की अपेक्षा संख्या में क्यादा थे, और देवता असुरों की अपेक्षा संख्या में क्यादा थे, और देवता असुरों की अपेक्षा संख्या में कम थे, विद्योगों को वा शरीरों में एक दूसरे के दवाने के किये इच्छा करते अये, तिसके पीछे देवताओं को मालूम हुआ कि असुर हमको दवाकोंगे सब वे आपुस में एक दूसरे से कहने की कि यदि सब की अनुमति हों तो क्योतिष्ठोम नामक यहां में खद्गीथ की सहायता करके असुरों पर अतिक्रमणा करें।। १॥

मन्त्रः २

ते ह वाचपूचुस्त्वं न उद्गायेति तथेति तेभ्यो वागुद्गायत् यो वाचि भोगस्तं देवेभ्य आगायच्यत्कल्याणं वदति तदात्मने ते विदुरनेन वैनज्द्गात्राऽत्येष्यन्तीति तमभिद्वत्य पाप्पनाऽविध्यन्स वः स पाप्का यदेवेदममतिरूपं वदति स इव स प्राप्ता।

ते, ह, वाचम्, ऊचुः, त्वम्, नः, उद्गाय, इति, तथा, इति, तेभ्यः, बाकू, उदगायत्, यः, वाचि, भोगः, तम्, देवेभ्यः, आगायत्, यत्, कल्यासाम्, वदति, तत्, आत्मने, ते, विदुः, अनेन, वै, नः, उद्गात्रा. अत्येष्यन्ति, इति, तम्, अभिद्वत्य, पाप्मना, अविध्यन्, सः, यः, सः, पाप्मा, यत्, एव, इदम्, अप्रतिरूपम्, वदति, सः, एव, सः, पाप्मा ॥ पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः श्चन्धयः

ते⇒वे देवता ह≕निश्चय के साथ बाचम्=वाग् देवी से ऊचुः=कहते भये कि + देखि=हे देवी !

त्वम्≕तृ नः=हमारे कस्याणार्थ

का गानकर

तथा इति=बहुत अच्छा इति=ऐसा

+ उक्त्या≔कहकर वाक्,≔व₁ग् देवी

ते¥यः=उन देवताओं के कल्याय के विषे

उद्गायत्⇒उद्गीत का गान करती भट्ट

+ तदा=तिसके पीछे बाचि≔वाची में

यः≕जो -भोगः=कव है तम्=इसको

+ जिभिः }=तीन पदमान स्तोन करके

देवेभ्यः=देवतीं के हित के क्षिये श्चागायत्=वह वासी देवी भन्नी

> प्रकार गाती अहे + च≕भीर

यत्=जो कल्याग्रम्=मंगलदायक वस्तु है

नः=हमारे करुपायार्थ + स्रवशिष्टः } _ वचे हुवे पवमान नौ उद्गाय=डद्गात बनकर उद्गीय

तत्≕उसको आत्मने=अपने हित के किये वद्ति=गाती भई + तदा=तव

तं=वे भ्रसुर विदुः=जानते भये कि श्रनेन≔इस

उद्गात्रा=उद्गाता की सहायता

नः=इम लोगों के ऊपर

अत्येष्यन्ति=देवता साक्रम**क क**रेंगे इति≂इसकिये तम्=वायीरप

श्राभिद्राय=इस उद्गाताके सामने

+स्वेन=घपने
पाप्मना=पापरूप श्रम्भ करके
श्रविध्यन्=वेधित करते भये

यत्≔िजस कारण एच≕िनश्चय करके सः≔वही

सः=यह प्रसिद्ध एच≕निस्संदेह पाप्मा=पाप है यः=जो

सः=वह वाणी में स्थित हुआ।

सः=यह प्रसिद्ध पाप्मा=पाप

इद्म्=इस अप्रतिरूपम्=मूट ग्रादिक को घटति=बोजता है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! देवताओंने पूर्व कहे हुये विचार को निरचय करके वाग्देवी से कहा है देवी ! तू उद्गात्री बनकर हमारे कल्यागार्थ उद्गीथ का गायन कर, उसने कहा बहुत अच्छा, ऐसाही करूंगी, यह कहकर वाग्देवी उन देवताओं के कल्यागा के लिये गान करती भई, तिसके पीछे वाक् में जो भोग है अथवा बाक् इन्द्रियद्वारा जो भोग प्राप्त होता है, उसको तीन पवमान स्तोत्रों करके देवताओं के लिये वाग्देवी भलीप्रकार गान करती भई, और जो मंगलदायक वस्तु वाग्गी करके प्राप्त होने योग्म है, उसको अपने लिये नौ पवनमान स्तोत्रों करके गाती भई, तव असुरों को मालूम हुआ कि देवता इस उद्गाता की सहायता करके हमारे ऊपर आक्रमण करेंगे इसिलये इस वाग्गीरूप उद्गाता के सामने जाकर उसको अपने पास अस्त करके विधित कर दिया, तिसी कारगा जो वह पाप है वही यह प्रत्यक्ष पाप है, जिस करके वाग्गी अयोग्य वचनों को वोकती है ॥ २ ॥

मन्त्रः ३

त्रथ ह प्राणमूचुस्त्वं न उद्गायिति तथिति तेभ्यः प्राण उदगायधः प्राणे भोगस्तं देवेभ्य त्रागायद्यत्कस्याणं जिन्नति तदात्मने ते विदु-रनेन वै न उद्गात्रात्येष्यन्तीति तमिभद्वत्य पाष्मनाविध्यन्स यः स पाष्मा यदेवेदममतिरूपं जिन्नति स एव स पाष्मा ॥

पदच्छेदः ।

द्यथ, ह, प्रात्मम्, ऊचुः, त्वम्, नः, उद्गाय, इति, तथा, इति, तेभ्यः, प्रात्मः, उदगायत्, यः, प्रात्मे, भोगः, तम्, देवेभ्यः, आगायत्, यत्, कल्यात्मम्, जिन्नति, तत्, आत्मने, ते, विदुः अनेन, वे, नः, उद्गात्रा, आत्येष्यन्ति, इति, तम्, आभिद्रुत्य, पाप्मना, आविष्यन्, सः, यः, सः, पाप्मा, यत्, एव, इदम्, आप्रतिरूपम्, जिन्नति, सः, एव, सः, पाप्मा।।

श्रन्वयः

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

श्रथ ह=इसके बाद प्राण्म्=घ्राण्देव से + ते=वे देवता

क्त त=व दवता ऊचुः=कहते भये कि देव=हे देव

द्व≕६ ५५ त्वम्=तृ

नः=हमारे जिये उद्गाय=उद्गीय का गानकर

इति तथा≔बहुत श्रच्छ। इति=ऐसा

+ उक्त्या=कहकर प्राग्गः=प्राग्यदेव तेश्यः=उन देवताओं के जिये

उद्गायस्=उद्गान करता भया स्र=श्रीर

यः=जो प्राणे=घाण में भोगः=भोग है तम्=रसको

देवेभ्यः=देवतामां के लिये उद्गायत्=वह ब्राय देवता गान

करता भवा

+ च=धौर यत्=जो

कल्याणम् = { मंगज सुगन्धी वस्तु हि श्रीर जिसको उद्गाता सूंचता है

> तत्=उसको झात्मने=अपने जिये प्राणः≔श्राय देवता उद्गाता=गाता भया + तद्ग≔तव

+ ते=वे घसुर विदुः=जानगये कि स्रोने=इस उद्गात्रा=उद्गाता करके

नः≔हसको ऋत्येष्यन्ति=देवता जीत केंगे इति=इसिखये तम्=डस डद्गाता के

श्रभिद्धत्य=सामने जाकर तम्=उस उद्गाता को

+ स्वेन=अपने पाप्मना=पापजक करके झविश्यम्=वेश करते भये यस्=िजस कारण ध्य=ितरचय करके सः=वही सः=पह प्रसिद्ध एस=िन:संदेह पादमा=पाप है धः=जो सः=बह प्राय में स्थित हुका सः=प्रसिद्ध धाप्मा=पाप इदम्=इस ब्रप्नतिक्पम्=दुगंज्यी को जिञ्जति=संघता है

भावार्थ।

हे सौम्य ! तिसके पीछे घाण्दिव से सब देवता कहने लगे कि हे देव ! तू हम लोगों के लिये उद्गाता होकर उद्गीथ का गान कर, उसने कहा बहुत अन्छा, ऐसा कहकर वह घाण्दिव उन देवताओं के लिये उद्गाय का गान करता भया, और जो घाण्य में भोग है यानी जो भोग घाणेन्द्रिय करके प्राप्त होता है उसको देवताओं के लिये वह घाणा देवता गान करता भया, और जो सुगंधि वस्तु घाणेन्द्रिय करके प्राप्त होने योग्य है, उसको अपने लिये वह गान करता भया, तब वे असुर जान गये कि उद्गाता की सहायता करके देवता हमको जीत लोगे, तब वे घाण्दिव उद्गाता के सामने जाकर अपने पापरूप अस्त से वेधित कर दिया, इसलिये वह यही पाप है जिस करके घाणा इन्द्रिय दुर्गिथी को सूंप्रता है ॥ ३ ॥

मन्त्रः ४

भय इ चष्ठुरुवुस्त्वं न उद्गायिति तथेति तेभ्यश्चश्चरुदगायत् यश्चश्चिषि भोगस्तं देवेभ्य भागायद्यत्करुयाणं पश्यति तदात्मने ते विदुरनेन वै न उद्गात्राऽत्येष्यन्तीति तमभिद्वत्य पाप्मनाऽविध्यन्स यः स पाप्मा यदेवेदममतिरूपं पश्यति स एव स पाप्मा ॥

पदच्छेदः ।

अप, इ. बक्षुः, ऊचुः, त्वम्, नः, उद्गाय, इति, तथा, इति, तेभ्यः, बक्षुः, उदगायत्, यः, चक्षुषि, भोगः, तम्, देवेभ्यः, आगायत्, यत्, कल्यायाम्, पश्यति, तत्, आत्मने, ते, विदुः, आनेन, ते, नः, उद्गात्रा, आत्येध्यन्ति, इति, तम्, अभिद्रत्य, पाप्मना, आविध्यन्, सः, यः, सः, पाप्मा, यत्, एव, इदम्, आप्रतिरूपम्, पश्यति, सः, एव, सः, पाप्मा ॥ अस्वयः पदार्थाः अस्वयः पदार्थाः

श्रथ ह=इसके पीछे ते=वे देवता स्रश्चुः=चक्षु श्रभिमानी देवतासे ऊचुः=कहते भये कि त्वम्=त् नः=हमारे जिये

नः≔इभार ।वाय उद्ग(य≔उद्गाता बनकर उद्गीथ का ग्रान कर

तथा≔बहुत भ्रच्छा इति≕ऐसा

+ उक्त्या=कहकर चक्षुः=चक्षु घनिमानी देवता तेभ्यः=उन देवताक्यों के क्षिये

उद्गायत्=उद्गान करता अया च=मीर पे=नेत्र में यः=जो भोगः=भोग है तम्=उसको देवेभ्यः=देवताचों के किये°

> + च=घौर यत्=जो

कत्याणम्) मंगलदायक रूपहे और पश्यति) जिसको वह देसता है

तत्≔डसको श्रारमने≔मपने विये +उदगायत्≕गता भवा +तदा=तव ते=वे असुर विदुः=जान गये कि अनेन=इस उद्गाजा=उद्गाता करके नः=हमारे ऊपर

अत्येष्यत्ति≔वे देवता बाक्षमवा करेंगे इति=इसक्षिये तम्=डस उद्गाता के अभिद्वत्य≕सामने जाकर

+ स्वेन=चपने पाप्मना=पाप चन्न से तम्=उसको

श्रविध्यन्≔वेषते भवे
यत्=जिसी कारण
पव=निरचय करके
सः≔वदी
सः=वदिसम्देद्व
पव=निस्सम्देद्व

पाप्मा=पाप है यः=जो

यः-जा सः=वह नेत्र में स्थित हुना सः=प्रसिद्ध

पाप्सा=पाप इदम्≔इल

अप्रतिकृपम्=मयोग्य रूप को पश्यति=देवता है

भाषार्थ ।

हे सौन्य ! फिर वे देवता चक्रुआभिमानी देवता से कहने जो कि हे चक्रुदेव ! तू हमारे जिये उद्गाता बनकर उद्गीथ का गान कर, उसने कहा बहुत अन्छा, ऐसा कह कर चक्रुदेवता उन देवत ओं के जिये उद्गात करता भया, और फिर चक्रु करके जो भोग प्राप्त होने योग्य है उसको देवताओं के जिये उद्गान करता भया, और जो मंगजन्दायक स्वरूप है उसको अपने जिये उद्गान करता भया तब वे असुर जान गये कि उद्गाता करके देवता हमारे उपर आक्रमण करेंगे, इसजिये वे असुर उस उद्गाता के सामने जाकर उसको अपने पाप अस्त्र करके वेश्वत करदिया, इसजिये वह पाप यही है जिस करके चक्रुदेवता अयोग्य क्पों को देखता है।। ४।।

मन्त्रः ५

श्रथ इ श्रोत्रमूचुस्त्वं न उद्घायिति तथेति तेभ्यः श्रोत्रमुद्गायत् यः श्रोत्रे भोगस्तं देवेभ्य श्रागायद्यत्कल्याणं शृणोति तदात्मने ते विदुरनेन वै न उद्घात्राऽत्येष्यन्तीति तमभिद्युत्य पाप्मनाऽवि-ध्यन्स यः स पाप्मा यदेवेदमप्रतिरूपं शृणोति स एव स पाप्मा।। पदच्छेदः।

श्राथ, ह, श्रोत्रम, ऊचु:, त्वम्, नः, उद्गाय, इति, तथा, इति, तेम्यः, श्रोत्रम्, उदगायत्, यः, श्रोत्रे, भोगः, तम्, देवेभ्यः, श्रागायत्, यत्, कल्याग्यम्, श्रुगोति, तत्, श्रात्मने, ते, विदुः, श्रानेन, वे, नः, उद्गात्रा, श्रात्येष्यन्ति, इति, तम्, श्राभिद्धत्य, पाप्मना, श्राविध्यन्, सः, यः, सः, पाप्मा, यत्, एव, इदम्, श्रप्रतिरूपम्, श्रुगोति, सः, एव, सः, पाप्मा।।

अन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

श्रथ ह=इसके पीछे + देखाः=देवता ऊचुः=बोते कि त्वम्=त्

भात्रम्=कर्ण श्रमिमानी देवता से

नः≔हमारे क्रिये

श्रद्धाद्य इति=उद्गाता चनकर उद्गीय का गान कर तथा=बहुत सच्छा इति=ऐसा + उक्त्वा=कहकर श्रोत्रम्=भोत्रश्रमिमानी देवता तेभ्यः=उन दवताओं के क्षिय उदगायत्≕उद्गीथ का गान करता + च=धौर यः≕जो ·श्रोत्रे=श्रोत्र इन्द्रिय में भोगः=ग्रानन्दादिक हैं तम्=उसको देवेभ्यः=देवताओं के लिये श्रागायत्=गान करता भया + च=श्रीर यत्=जो कल्यागम्] मंगलदायक वस्तुहे श्रीर श्रुणोति) जिसको वह सुनता है तत्द्≕उसको श्चात्मने=अपने लिये + झागायत्=गान करता भया

> + तदा≔तव ते=वे असुर

श्रानेन=इस

विदुः=जान गये कि

वै=निस्सन्देह + ते=वे देवता नः=हमारे ऊपर श्चत्येष्यान्त=श्रतिक्रमण करेंगे इति=इसी से तम्≔उस श्रोत्राभिमानी देवता के **अभि**दृत्य=सामने जाकर + तम्=उसको पाष्मना≔पाप के श्रस्त करके श्रविध्यन्≔वेध कर देया तस्मात्=इसविये यत्=जिस कारण **एच**=निश्चय करके सः=वही सः=यह प्रसिद्ध **एव**=निस्सन्देह पाटमा=पाप है यः≕जो सः=वह श्रोत्रमें स्थित हम्रा सः=प्रसिद्ध पाप्मा=पाप इद्म्≔इस अप्रतिरूपम्=धनुचित वास्पको

श्यवोति=पुनता है

उद्गात्रा=उद्गाता करके

भावार्थ ।

हे सीम्य ! तिसके पीछे कर्माझाभिमानी देवतासे सब देवता बोले कि हे देवेश ! तू हमारे लिये उद्गाता बनकर उद्गीध का गान कर, उसने कहा बहुत झण्ड्या, ऐसा कहकर वह ओत्रझसिमानी देवता उन देव- ताओं के किये उद्गीध का गान करता भया, और दूसरी बार भी श्रोत्रेन्द्रिय बिषे जो आनन्दादिक फल है, उसका गान देवताओं के किये करता भया, श्रीर जो मंगलादि वस्तु उससे प्राप्त होने योग्य है उसको अपने लिये गाता भया, तब असुरों को मालूम होगया कि इस उद्गाता की सहायता करके ये सब देवता हमारे ऊपर अतिक्रमण् करेंगे, ऐसा सोच कर वे असुर उस श्रोत्रअभिमानी देव उद्गाता के सामने जाकर उसको अपने पापअस करके वेध करदिया, इसकारण यह वही पाप है जिस करके वह श्रोत्रदेव अनुचित वाक्यको सुनताहै।। १ 11

मन्त्रः ६

श्रथ ह मन ऊचुस्त्वं न उद्गायेति तथेति तेभ्यो मन उदगायचो मनसि भोगस्तं देवेभ्य श्रागायचत्कल्याणं सङ्कल्पयति तदात्मने ते विदुरनेन वै न उद्गात्राऽत्येष्यन्तीति तमिभेद्वत्य पाप्मनाऽविध्यन्स यः स पाप्मा यदेवेदममतिरूपं सङ्कल्पयति स एव स पाप्मैवमु खल्वेता देवताः पाप्मभिरुपास्नक्षेवमेनाः पाप्मनाविध्यन् ॥

पदच्छेदः ।

अथ, इ, मनः, ऊचुः, त्वम्, नः, उद्गाय, इति, तथा, इति, तेश्यः, मनः, उद्गायत्, यः, मनसि, भोगः, तम्, देवेश्यः, आगायत्, यत्, कस्यात्तम्, संकल्पयति, तत्, आत्मने, ते, विदुः, अनेन, ते, नः, उद्गात्रा, अत्येष्यन्ति, इति, तम्, अभिद्वत्य, पाप्मना, अविध्यन्, सः, यः, सः, पाप्मा, यत्, एव, इदम्, अप्रतिरूपम्, संकल्पयति, सः, एव, सः, पाप्मा, एवम्, उ, खल्लु, एताः, देवताः, पाप्मभिः, उपास्-जन, एवम्, एनाः, पाप्मना, अविध्यन् ॥

श्चान्ययः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

श्रथ ह=इसके पीहे ते≔वे देवता

ऊचुः=क्हते संये कि त्वस=त

मनः=मव श्रमिमानी देवतासे नः=हमारे विषे

उद्गाय=उद्गाता बन करके उद्दीध का गान कर तथा इति≔बहुत भव्हा इति=ऐसा + उक्त्वा=स्हकर मनः=मन मभिमानी देवता तेक्यः=उन देवताश्रों के विये उद्गायत=ंगान करता भया + च=श्रीर यः=जे ग्रनस्थि=मनमें भोग:=श्रानंदादिक फल'है तम्=उसको देखें¥यः=देवताश्रां के लिये श्चागायत्=गान करता भया + च=ग्रीर यत्=जो कल्याणम्=मंगलदायक वस्त् है धौर जिसको वह संकल्पयति=संकल्प करता है तत्≕इसको श्चात्मने=भपने विये + आगायत्=गान करता भवा तदा≔तव ते≕वे बसुर बिदुः=जानगये कि बै=ग्रवस्य ही श्रनेन=इस उद्गात्रा=मनोदेव उद्गाता की सहायता करके जः≔हमारे ऊपर श्रत्येष्यन्ति=देवता श्रतिक्रमस करेंगे

इति=इसिवये + ते≔वे भसुर तम्=उस मनोदेव उद्गाताके श्च(भेद्रत्य=सामने जाकर तम्=उसको पाटमना=पाप श्रम करके ञ्चविध्यन्≕वेध करते भये यत्=जिसी कारण ध्व≕निश्चय काके सः≔वही सः=यह प्रसिद्ध एय=निस्तन्देह षाप्मा=पाप है यः=जो सः=वह मन में स्थित हुआ सः≔प्रसिद्ध षाप्मा=पाप इद्म्=इस श्रप्रतिरूपम्=श्रयोग्य वस्तुको सङ्करपयति=संकरप करता है उ≔इसी प्रकार खलु≕निश्चय करके पताः≔इन वानी देवताः=वचामादि इन्द्रियामि-मानी देवताश्रोंको भी पाष्मभिः=पाप करके ते=वे श्रमुर म्रविध्यन्=वेध करते भवे .**एवम्**=इसीपकार एताः=इन त्वचादि देवतायाँको चाप्मिः=पापी करके उपास्तान्=संसर्ग करते भये

भावार्थ ।

हे सीम्य ! तदनन्तर वे सब देवता मनोदेव से कहते भये कि हे मन ! तू उद्गाता बनकर हमारे जिये उद्गीध का गान कर, उसने कहा बहुत अच्छा, ऐसाही करूंगा, और फिर वह मनोदेव उन देवताओं के जिये गान करता भया, और मन विषे जो आनन्दादि फल है, उसको देवताओं के जिये मन देवता तीन पवमान स्तेत्रों करके गान करता भया, और जो जो उसमें मंगलदायक वस्तु है, उसको नव पवमान स्तेत्रों करके अपने जिये गाता भया, तब अधुरों ने देखा कि वे सब देवता इस मनोदेव उद्गाता की सहायता करके हमारे उपर आक्रमणा करेंगे, इसजिये वह अधुर उस मनोदेव उद्गाता के सामने जाकर उसको अपने पापअख करके वेधित करते भये, इसजिये वही यह पाप है जिस करके वह मनोदेव इस अयोग्य वस्तुको संकरूप करता है, यानी अयोग्य वस्तु की इच्छा करता है, और इसी प्रकार त्वचा आदि इन्द्रियाभिमानी देवताओं को भी अपने पाप करके वे अधुर वेधते भये ॥ ६ ॥

मन्त्रः ७

श्रथ हेममासन्यं माणमूचुस्तं न उद्गायित तथेति तेभ्य एष माण उदगायचे विदुरनेन वे न उद्गावाऽत्येष्यन्तीति तदमिद्धत्य पाप्मनाऽविन्यत्सन्स यथाऽश्मानमृत्वा लोष्टो विध्वंसेतैवं हैव विध्वंसमाना विष्वंचो विनेशुस्ततो देवा अभवन्पराऽसुरा भवत्या-त्मना पराऽस्य द्विषन्श्रातृच्यो भवति य एवं वेद ॥

पदच्छेदः ।

अथ, ह, इमम्, आसन्यम्, प्राग्मम्, ऊचुः, त्वम्, नः, उद्गाय, इति, तथा, इति, तेभ्यः, एवः, प्राग्मः, उदगायत्, ते, विदुः, अनेन, वे, नः, उद्गात्रा, अत्येष्यन्ति, इति, तत्, अभिदुत्य, पाप्मना, अविन्यत्सन्, सः, यथा, अश्मानम्, शृंत्वा, लोष्टः, विर्धः- क्षेत, एबम्, ह, एव, विश्वंसमानाः, विष्वंचः, विनेशुः, ततः, देवाः, द्यभवन्, परा, इप्रसुराः, भवति, झात्मना, परा, इप्रस्य, द्विपन, भ्रातृब्यः, भवति, यः, एवम्, वेद् ॥ पदार्थाः

द्यस्वयः

पदार्थाः अन्वयः

आधा ह=इसके पाचे + ते=वे देवडा इमम्≔इस **ग्रा**सन्यम्=मुख्य प्रात्म्=प्राच से ऊ जुः≔क इते भये कि त्वम्=त् नः=इमारे कल्यावार्थ उद्गाय=बद्गाता बनकर उद्गीय का गान कर तथा इति=यहुत श्रद्धा इति=पेसा + उद्दरवा=कहकर एच:=यही प्राग्ः=मुख्य प्राच तेभ्यः=उन देवताओं के खिये उद्गायत्≕गान करता भया

+ तदा=तब त=वे घसुर ∙ विदुः=जानते भये कि श्चनेन≃इस उद्गात्रा=प्राबदेव उद्गाता की सहायता करके

नः=हमारे जपर वै=श्रवश्यही

श्रात्यच्यन्ति≔श्रति क्रमणकरेंगे इति≔इसक्षिये

तत्≃डस प्राखदेव उद्गाता के स्रभिद्रत्य=सामने जाकर + स्वेन=धपने

पादमना=पाप श्रम करके + तम्=इसको

श्रविटयरसन्=वेषने की इच्छा करते भवे

> + तदा=तव यथा=जैसे सः≔वह

स्रोष्टः=मही का देखा श्रश्मानम्=पत्थर पर भ्राृत्वा≔गिरकर विध्वंसेत=नष्ट होजाता है प्वम् इ एव≔तिसीप्रकार

+ श्रसुराः=मसुर विष्यंचः=इधर उधर भागते

विध्वंसमानाः=१४६ १४६ होकर विनेशः=नष्ट होते भवे ततः=तिसी कारथ + ते=वे

देवताः=दंवता

+ किंच=घीर

श्चसुराः=त्रसुर परा=परास्त श्रमबन्=होते भये यः=जो उपासक एवम=ऐसा वेद=जानता है

श्वस्य=उसका द्विपत्=द्वेष करनेवाला स्रात्च्यः=यनु श्रात्मना=उस प्रजापति करके जो उसका स्वरूप होगयाहै परा अवति=नष्ट होजाता है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! तदनन्तर वे सब देवता मुख्य प्राण् से कहने लगे कि हे प्राण् ! त् हमारे कल्यागार्थ उद्गाता बनकर उद्गीथ का गानकर, उसने कहा बहुत अच्छा, ऐसा कहकर वह मुख्य प्राण् देवताओं के लिये उद्गीथ का गान करता भया, तब वे अधुर जान गये कि इसु प्राण्डिव उद्गाता की सहायता करके यह सब देवता हमारे उत्पर अवश्य अतिक्रमण करेंगे, इसिलये उस प्राण्डिव उद्गाता के सामने जाकर अधुर उसको वेधने की इच्छा करते भये, तब जेंसे मिट्टी का ढेला पत्थर पर गिरने से चूर चूर होकर इधर उधर छितर बितर होजाता है, उसी प्रकार अधुर इधर उधर मागते हुये पृथक् पृथक् होकर नष्ट होगये, यानी ऐसे भागे कि उनका पता न लगा, तिस कारण्या सब देवता पहिले जैसे जैसे प्रकाशमान थे वैसे ही प्रकाशमान होते भये, यानी अधुरों के उत्पर विजयी हुये, और अधुर परास्त होगये, हे सौम्य ! को उपासक इस प्रकार जानता है उसका देख करनेवाला शत्रु नष्ट होजाता है।। ७।।

मन्त्रः ८

ते होचुः क नु सोऽभूचो न इत्थमसक्वेत्ययमास्येऽन्तरिति सो-यास्य त्राङ्गिरसोऽङ्गानां हि रसः ॥

पदच्छेदः ।

ते, ह, ऊचु:, क, तु, सः, श्रमूत्, यः, नः, इत्थम्, श्रसक्त, इति, अयम्, श्रास्त्रे, श्रतः, इति, सः, श्रायास्यः, श्राङ्गरसः, श्रङ्गानाम्, हि, रसः ॥

पदार्थाः भ्रत्वयः + तत्पश्चात्=तिस के पीछे ते=वे देवता ऊच्यः ह=कहते भये कि यः=जिसने नः=हमारी इत्थम्=इसतरह श्रसक्र=साथ दिवा है सः=वह क=कहां श्रभृत्=है नु इति=इस प्रश्नपर + उत्तरम्=उत्तर मिला कि सः=वही श्चयम्≃यही प्राण है

य:=नो

श्चन्ययः पदार्थाः श्चास्य श्चंतः=मृत्त के संतर + भवति=हता है + च=श्चोर इति=इसीक्षिये सः=वह प्राया श्चयास्यः=मृत्त्वसे उत्पन्न हुणा + कथ्यते=कहा जाता है + सः=वही मृत्य प्राया श्चांगिरसः=श्चांगिरस भी + कथ्यते=कहा जाता है हि=स्यांकि + सः=वह

रसः=श्राःमा है

भावार्थ ।

हे सोम्य ! ता वे देवता आपस में कहने लगे कि वह जिसने हमारी इस प्रकार रक्षा की है कहां है, इस प्रश्न के उत्तर में उनमें से किसी ने कहा कि जिस ने हमारी ऐसी रक्षा की है वही प्राया है, वही मुख के अन्तर सदा निवास करता है, इसी िलये वह मुख्य प्राया मुख से उत्पन्न हुआ। कहा जाता है, और आङ्गिरस भी कहा जाता है, क्यों कि वह अंगों का आस्मा है ॥ = ॥

मन्त्रः ६

सा वा एषा देवताद्नीम द्र १ श्रम्या मृत्युर्द्र १ ह वा अस्मा-न्मृत्युर्भवति य एवं वेद ॥

पदच्छेदः।

सा, बा, एवा, देवता, दूः, नाम, दूरम्, हि, ऋस्याः, मृत्युः, दूरम्, इ, वा, ऋस्मात्, मृत्युः, भवति, यः, एवम्, वेद स

पदार्थाः । अन्वयः श्रम्बयः

पदाथाः

सा≔वही वा=निरचय करके षषा=यह देवता=देवता

दुः≔रूर नाम=नाम करके प्रसिद्ध है

हि=श्योंकि **श्चस्याः**≔इसप्राखदेवतःकेपाससे

मृत्युः=पापसंसष्ट मृत्यु

दूरम्=दूर रहता है यः≕जो उपासक ष्वम्=इस तरह चेद=जानता है

श्चस्मात्=डस उपासक से ह वा=ग्रवश्य

सृत्युः=पापरूप सृत्यु दूरम्=दूर भवति=रहता है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! यह मुख्य प्रागादेव "दृर '' नाम करके भी प्रसिद्ध है, क्योंकि इस प्रागादेवता के पास से पापसंसृष्ट मृत्यु दूर रहता है, जी उपासक इस तरह से जानता है, उस उपासक से भी पापरूप मृश्य श्चावश्य दूर रहता है ॥ ६ ॥

मन्त्रः १०

सा वा एषा देवतैतासां देवतानां पाप्मानं मृत्युमपहत्य यत्रा-ऽऽसां दिशामंतस्तद्गमयाश्वकार तदासां पाप्मनो विन्यदधात्तस्मान्न जनिषयात्रान्तिमयानेत्पाप्मामं मृत्युपन्ववयानीति ॥

पदच्छेदः ।

सा, वा, एवा, देवता, एतासाम् , देवतानाम् , पाप्मानम् , मृत्युम् , अपहत्य, यत्र, आसाम् , दिशाम् , अंतः , तत्, गमयाञ्चकार, तत् , श्रासाम्, पाप्मनः, विन्यद्धात्, तस्मात्, न, जनम्, इयात्, न, अन्तम, इयात, नेत्, पाप्मानम्, मृत्युम्, अन्ववयानि, इति ॥ पदार्थाः पदार्थाः श्चन्यः श्चन्वयः

सा वै=वही ष्या देवता=यइ प्रागदेवता पतासाम्=१न देवतानाम्=वागादि इन्द्रियों के पाप्मानम्=पापरूप **मृ**त्युम्=मृत्युको अपहत्य=दीन करके + तत्=वहीं

गमयाश्चकार=नेगया इयात्≕जाय +च=भौर यत्र≔जहां अन्तम्=उस दिशा के शंत श्रासाम्=१न दिशाम्=दिशाओं का को भी अन्तः=मन्त है यानी भारत-वर्ष देशका भनत है इयात्=गाय + च=श्रीर + च=श्रीर तत्≔वहांही इति≕ऐसा श्चासाम्=इन देवताश्ची के नेत्≔डर रहे कि + यंदि=भगर पाप्मनः=पापां को विन्यद्धात्=स्थापित कर दिया +जगम=मैं गया तो तस्मात्=इसक्रिथे पाप्मानम्=पापरूप + तत्≔वहांके मृत्युम्=मृत्यु को जनम्=बोगों के पास कोई अन्ववयानि=प्राप्तद्वंगा स=न

भावार्थ ।

हे सौन्य ! वह प्रायादेवता इन वागादि इन्द्रियों के पापरूप मृत्यु को पकड़ करके वहां लेगया, जहां इन दिशाओं का अंत होता है, यानी जहां भारतवर्ष देशका अंत है, और वहांही इन देवताओं के पापों को छोड़िदया है, इसिलये वहांके लोगों के पास कोई न जावे, अभीर उस दिशाके अंत को यानी भारतवर्ष के बाहर न जावे, ऐसा डरता रहे कि अगर में भारतवर्ष के बाहर गया तो पापरूप मृत्यु को प्राप्त हो जाऊंगा ॥ १० ॥

मन्त्रः ११

सा वा एषा देवतैवासां देवतानां पाप्मानं मृत्युमपहत्याथेना मृत्युमत्यवहत् ॥

पदच्छेदः ।

सा, वा, एषा, देवता, एतासाम्, देवतानाम्, पाप्मानम्, मृत्युम्, अपहत्य, अथ, एनाः, मृत्युम्, अति, अवहत् ॥ श्रन्वयः

पदार्थाः

श्रन्वयः

पदार्थाः

सा चे=वही

पषा=्यह मुख्य प्राया

देवता=रेवता

पतासाम्=इन देवतानाम्=वागादि देवताश्रों के

पाटमानम्=पापरूप

मृत्युम्=मृत्यु को

श्रपहत्य=उन से छीनकर

श्रथ=ग्रीर

मृत्युम्=मृत्युको

श्चिति=श्रतिक्रमंग करके एनाः=वागादि देवताश्रोंको

अवहत्=उत्तम पदवी को प्राप्त

करता भया

भावार्थ ।

हे सौम्य ! यही मुख्य प्राग्णदेवता वागादि देवताओं के पापरूप मृत्यु को उनसे पृथक् करके और उसको पकड़कर और स्वत: मृत्यु को आक्रमण करके उन्हीं वागादि देवताओं को उत्तम पदवी पर प्राप्त करता भया और तभी से वे निष्पाप और अमर हैं ॥ ११ ॥

मन्त्रः १२

त्त वै वाचमेव पथमामत्यवहत्सा यदा मृत्युमत्यमुच्यत सोग्नि-रभवत्सोयमग्निःपरेण मृत्युमतिक्रान्तो दीप्यते ॥

पदच्छेदः ।

सः, वे, वाचम्, एव, प्रथमाम्, श्रति, श्रवहत्,सा, यदा, मृत्युम्, श्राति, श्रामुच्यत, सः, श्राग्निः, श्रभवत् , सः, श्रयम् , श्रग्निः, परेग्रा, मृत्युम् , श्रातिकान्तः, दीप्यते ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः

श्रन्वयः

पदार्थाः

सः≔वह प्रागादेव वै=निश्चय करके

4-17रयप करम +मृत्युम्=पापरूप मृत्युको +ग्रतीत्यं=मतिकमण कर

प्रथमाम्=सर्वो में श्रेष्ठ

वाचम्≔नासी को प्रस≕ही

अवहत्≕सत्यु से परे क्षेगया

यदा=जब सा≔वह वाणी

मृत्युम्=सत्युको

श्रति=श्रतिक्रमण करके श्रमुच्यत=स्वयंपायसे मुक्त होगई

+ तदा≔तव

+ सा≔वह वाणी

सःश्राग्निः≔वह श्राग्न

श्रभवत्=होगई सः=नही श्रयम्=यह श्राग्निः=श्राग मृत्युम्≃सृत्युको अतिकान्तः≔उद्वंघन करके परेण्चमृत्यु से परे दीप्यतं≔दीसिमान् होरही है

भावार्थ ।

हे प्रियदर्शन ! प्रागादेव पापरूप मृत्यु की अतिक्रमगा करके सब देवताओं में श्रेष्ठ वागादिव की मृत्युसे बहुत दूर केगया, और जब वह वागा मृत्यु की अतिक्रमगा करके पापसे मुक्त होगई, तब वह वागा अग्नि होगई, वही यह अग्नि मृत्यु की उत्कंघन करके मृत्युसे परे दीप्तिमान होरही है। १२।।

मन्त्रः १३

भथ ह प्रारामत्यवहत्स यदा मृत्युमत्यमुच्यत स वायुरभवत्सोर्थं वायुः परेरा मृत्युमतिक्रान्तः पवते ॥

पदच्छेदः ।

भ्रथ, ह, प्राराम्, भ्रति, भ्रवहत्, सः, यदा, मृत्युम्, भ्रति, श्रमु-च्यत, सः, वायुः, श्रभवत्, सः, श्रयम्, वायुः, परेगा, मृत्युम्, श्रति-क्रान्तः, पवते ॥

श्चन्यः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

श्रथ≃इसके पीखे ह=निरचय करके + प्राणः=प्राणदेव प्राणम्=प्राणदेव को + मृत्युम्=पापरूप सृत्यु से श्रति श्रवहत्=दूर बेगपा यदा=जब प्राणः=वह प्राणदेव

्र केगया वायुः≔वायु जव मृत्युम्≕मृत्यु वह प्राथदेव परेणु≔परे

मृत्युम्=मृत्यु से अति अमुच्यत=द्वृद गया

+ तदा=त्व

वायुः≔बाह्यवायु श्रभवत्=होता भवा सः=वही श्रयम्=यह वायुः=वायु सृत्युम्=सृत्यु के परेण्=परे श्रतिकान्तः=पापसे शुक्र होता

सः≔वही

हुमा प्रवंत =बहता है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! इसके पीछे प्रागादेव ब्रागादेव को पापरूप मृत्यु से दूर लेगया, श्रोर जब वह घारादिव पापरूप मृत्यु से छूटगया, तब वही बाह्य वायु होता भया, वही यह वायु मृत्यु के परे पापसे मुक्त हो कर बहता है।। १३।।

मन्त्रः १४

श्रथ चक्षुरत्यवहत्तद्यदा मृत्युमत्यमुच्यत स श्रादित्योभवत्सो-सावादित्यः परेगा मृत्युमतिक्रान्तस्तपति ॥

पदच्छेदः ।

श्राथ, चक्षः, श्रात्यवहत्, तत्, यदा, मृत्युम्, श्रात्यमुच्यत, सः, आदित्यः, अभवत्, सः, असौ, आदित्यः, परेशा, मृत्युम, अति-क्रान्तः, तपति ॥

श्रन्वयः

पदार्थाः

श्रन्वयः पदार्थाः

श्रथ≔इसके पीछे + प्राग्ाः=प्राग्यदेव चक्षुः≔नेत्रेन्द्रिय देवको + **मृत्युम्**≕मृत्यु से ऋत्यवहत्=दूर लेगया यद्ा≔जब तत्=वह **मृत्युम्**⇒मृत्युको ग्रतिकान्तः=श्रतिक्रमण करके श्चत्यमुच्यत=खूट ग**या**

+ तदा=तव

सः≔वही नेत्रस्थ प्राण् श्रादित्यः=सूर्य श्रमवत्=होता भया सः=वही श्रसौ=यह **म्रा**दित्यः=सूर्य मृत्युम्=मृत्यु के ं परेगा=परे

श्रतिकान्तः=श्रतिक्रमण करके तपति=प्रकाशता है

भावार्थ।

हे सौम्य ! इसके पीछे प्रागादेव नेत्र इन्द्रियदेव को मुत्यु से दूर क्रोगया, स्प्रीर जत्र नेत्रदेव मृत्युको अपिक्रमणा करके छूट गया, तब वही नेत्रदेव सूर्य होगया, वही यह सूर्य मृत्युको श्रातिकमगा करके मृत्यु से परे प्रकाशित हो रहा है ॥ १४ ॥

मन्त्रः १५

अथ ह श्रोत्रमत्यवहत्तवदा सृत्युमत्यमुच्यत ता दिशोभवंस्ता इमा दिशः परेण सृत्युमतिकान्ताः ॥

पदच्छेदः ।

श्रथ, ह, श्रोत्रम्, श्रति, श्रवहत्, तत्, यदा, मृत्युम्, श्रति, श्रमु-च्यत, ताः, दिशः, श्रभवन्, ताः, इमाः, दिशः, परेण, मृत्युम, श्रतिकान्ताः ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

श्रथ=इस के पींबे ह=निरवय करके प्राणः=वह प्राणदेव श्रोत्रम्=श्रोत्रेन्द्रिय को मृत्युम्=मृत्यु से श्रात्यवहत्=तूक् बोगया यदा=जब तत्=वह श्रोत्रदेव श्रोत्रम्=कर्णहिन्दय
 ताः=प्रसिद्ध
 दिशः=दिशाय
 अभवन्=होतीभई
 ताः=वही
 इमाः=यह
 दिशः=दिशाय
 मृत्युम्=मृत्युक
 परेख=परे

श्रत्यमुच्यत=ङ्ट गया + तद्दा=तव श्रतिकास्ताः=पाषसे मुक्त होगईं

भावार्थ ।

हे प्रियदर्शन ! इसके पीछे वह प्राग्तदेव श्रोत्रेन्द्रिय को पापरूप मृत्यु से दूर जेगया, श्रोर जब वह श्रोत्रदेव मृत्यु से छूट गया, तब वही श्रोत्रइन्द्रिय दिशा होती भई, वही यह दिशाय मृत्यु से परे मुक्क होगई।। १४ ॥

मन्त्रः १६

श्रथ मनोत्यवहत्तवदा मृत्युमस्यमुच्यत स चन्द्रमा श्रभवत्सोसी चन्द्रः परेण मृत्युमतिकान्तो भारयेवं ह वा एनमेवा देवता मृत्यु-मति वहति य एवं वेद ।।

पदच्छेदः ।

अथ, मन:, अति, अवहत्, तत्, यदा, मृत्युम्, अति, अमुन्यत, सः, चन्द्रमा, अभवत, सः, असौ, चन्द्रः, परेग्ग, मृत्युम्, अतिकान्तः, भाति, एवम्, ह, वा, एनम्, एवा, देवता, मृत्युम्, अति, वहति, यः, एवम्, वेद ॥

शन्वयः

पदार्थाः ऋन्वयः

पदार्थाः

श्रथ≔इसके पीखे ह=निरचय करके प्राण्यः=चह प्राण्यदेव मनः=मनको मृत्युम्=म्रुषु से श्रत्यवहत्=दूर क्षेगवा यदा=जव तत्=वह मनदेव मृत्युम्=म्रुषु से श्रत्यमुच्यत=च्याया + तदा=तव सः=वह मन चन्द्रमाः=चन्द्रमा श्रभवत्=होता भया

सः≔वही

चन्द्रः=चन्द्रमा
मृत्युम्=सृत्यु से
परेग्र्=परे
झितिकान्तः=झितकमण करके
भाति=प्रकाशित होता है
यः=जो
एवम्=हस प्रकार
वेद्=जानता है
एनम्=उस विज्ञानी को
एपा=यह
देवता=पाब देवता

एवम् ह वा=उसी प्रकार

मृत्युम्=मृत्यु के श्रतिवहति=पार पहुँचाता है

ग्रसौ=यह

भावार्थ ।

हे सोन्य ! इसके पीछे वह प्राण्यदेव मन को मृत्यु से दूर केगया, क्योर जब वह मनदेव मृत्यु से छूट गया तब वही मन चन्द्रमा होगया, वही यह चंद्रमा मृत्यु के परे मृत्युको क्यतिक्रमण करके प्रकाशित हो रहा है, जो उपासक इस प्रकार जानता है, उसको यह प्राण्यदेव मृत्यु के पार वैसाही पहुँचा देता है, जैसे उसने मनादिकों को मृत्यू के पार पहुँचा देया है ॥ १६ ॥

मन्त्रः १७

श्रयात्मनेत्राद्यमागायचि किश्राश्रमचतेनेनैव तदचतइह प्रति-विष्ठाति ॥

पदच्छेदः ।

श्रथ, श्रात्मने, श्रन्नादम्, श्रागायत्, यत्, हि, किला, श्रन्नम्, अयते, अनेन, एव, तत्, अयते, इह, प्रतितिष्ठति ॥ पदार्थाः

श्चन्वयः

श्चन्वयः

पदार्थाः

द्याध=तदनन्तर + प्राग्ाः=मुख्य प्राग्

श्चातमने≔श्चपने लिये श्रन्नाद्यम्=भोज्य श्रन्नका

श्चागायत्=गान करता भया

यत्च≕जो किच=कुष श्रन्नम्=त्रन ऋद्यते=खाया जाता है

तत्=वह द्यानेन=प्राण करके पव=ही.

द्मदाते≕लाया जाता है

+ च=ग्रीर

+ प्रागुः≔वही प्राग्र इह=इस देह में प्रतितिष्ठति=रहता है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! तिसके पीछे मुख्य प्रागा अपने जिये भोज्य अन्नका गान करता भया, क्योंकि जो कुछ अन्न खाया जाता है वह प्राग्त करके ही खाया जाता है. स्पीर वही प्रांगा जीवों के देहों में रहताहै ॥ १७॥

मन्त्रः १८

ते देवा अबुवन्नेतावद्वा इद सर्वे यदनं तदात्मन आगासीरत-ने।स्मिन्न श्राभजस्वेति ते वै माभिसंविशेति तथेति तं समन्तं परिषयविशन्त तस्माचदनेनान्नमित्त तेनैतास्तृप्यन्त्येव इवा एनं स्वा ग्रभिसंविशन्ति भत्तीस्वानां श्रेष्ठः पुर एता भवत्यन्नादोधिपति-र्य एवं वेद य उहैवंविदं स्वेषु मति मतिर्बुभूषति न हैवालं भार्येभ्यो भवत्यय ह य एवैतमनु भवति यो वैतमनु भायीन्बुभूशित स हैवालं भार्थेभ्यो भवति ॥

पदच्छेदः ।

ते, देवाः, अनुवन्, एतावत्, वा, इदम्, सर्वम्,यत्, अन्नम्, तत्, आत्मने, आगासीः, अनुनः, अस्मिन्, अन्ने, आभजस्व, इति, ते, वे, मा, श्रमिसंविशत, इति, तथा, इति, तम्, समन्तम्, परि, न्यविशन्त, तस्मात्, यत्, झनेन, झन्नम्, झत्ति, तेन, एताः, तृष्यन्ति, एवम्, ह, वा, एनम्, स्त्राः, श्रभिसंविशन्ति, भर्त्ता, स्वानाम्, श्रेष्ठः, पुरः, एताः, भवति, आजादः, आधिपतिः, यः, एवम्, वेद, यः, उ, ह, एवंविदम्, स्वेषु, प्रति, प्रति:, बुभूषति, न, ह, एव, श्रालम्, भार्येभ्यः, भवति, श्रथ, ह, यः, एव, एतम्, श्रनु, भवति, यः, वा, एतम्, झनु, भार्यान्, बुभूर्षति, सः,ह, एव, झलम्, भार्येभ्यः, भवति ॥ पदार्थाः श्रम्बयः श्रन्वयः पदार्थाः

देवाः≔वागादि देवता **+ मुक्यप्रा**खम् =मुख्य प्राख से म्राज्ञवन्≔कहते भये कि पतावत्=इतनाही इदम्≔यह अन्नम्≃त्रन है यत्=िनस तत्=उस सर्वम्=सबको आत्मने=अपने खिये ॰ +,स्वम्=तुम आगासी:=गान करते भये हो अनु≔मब नः≔हम सबको **अस्मिन्**=इस धक्षे=भ्रन्तमें

श्राभजस्य=भाग खेने हो

इति=इसपर + प्राग्ः=मुख्य प्राग्र + श्राह=कहता भवा कि . + ते≔वे + यूयम्=तुम सब वै≕घवश्य मा=मेरे में अभिसंविशत=भन्नी प्रकार प्रवेश तथा≔बहुत ग्रच्हा इति=ऐसा + उक्ता=कहकर + ते≕वे सब देवता तम्≃उस प्राय के परिसमन्तम्=चारो तरफ न्यविशन्त=भक्षी प्रकार प्रवेश करते अवे

तस्मात्=इसाक्षिये

यत्=जो श्रन्नम्=सबको श्रनेन=प्राण करके + लोकः=पुरुष श्रात्ति=बाता है तेन=उसी श्रम करके एताः≔ये वागादि देवता तप्यन्ति=तृप्त होते हैं (उसी प्रकार यानी ्रजैसे वागादिक एवम् इ वा=्र इन्द्रियां प्राया के प्राथय रहती हैं (वैसे ही पनम्=इस प्राणवित् पुरुष के स्वाः । ज्ञाति के जोग प्रतिः=प्रतिकृता अभिसं- । स्थित हो जाते हैं खुभूपति=होने की इच्छा विश्वान्ति । स्थानी उसके था- करता है तो स्थानी इसके द्वान + च=घोर स्वाः=वह स्वानाम्=अपने ज्ञाति का भर्त्ता=पातक + भवति=होता है + च=घौर श्रेष्ठः≔पूज्य होकर पुरः=सबके भगादी प्ताः=चलने वासा भवति=होता है + च=ब्रीर **अक्षादः=अन्नका भोका**

श्र**धिपतिः=श्रधिपति** + भवति≔होता है + इदम्≔यह + फलम्=फल + तस्य=उसको + भवाति=होता है यः=जो एवम्=कहेहुये प्रकार चेद्=प्राणको जानता है उ ह=श्रोर स्वेषु=ग्रपने यानी उसके ज्ञातियों में से यः=जो

ल प्रायावत् पुरुष के प्रश्निदम् प्रति={ वाजे प्रायाके उपा-ुचारो तरफ उसके स्ति मितिः=प्रतिक्क भार्थेभ्यः= { भरख पोषख योख भार्थेभ्यः= { क्रांतियों के भर-खार्थ न एव=कभी नहीं श्रतम्≕समर्थ भवति=होता है ह एव=यह निश्चय है अथ=और यः≕जो कोई प्तम् प्व≔इसी प्राचिता ं पुरुष के

अनु=अनुक्ब

भवति=होता है

वा=अथवा

यः=जो कोई

एतम्=हतीमाणवित्पुरुषके

अनु=मनुकूत बरतताहुमा
भार्यान्=अरयीय पुरुषों को
बुभूर्वति=पाळनकरनाचाहताहै

सः=वह एव=घवरय भार्येभ्यः=पात्तने बोग्य कोगॉ के बिये सत्तम्=समर्थ भवति=होता है

भावार्थ ।

तदनन्तर वागादि इन्द्रियदेवता मुख्य प्राशा से कहने क्षां कि जो कुछ भोजन करने योग्य अज है उसको आपने अपने लिये गान किया है, आप हम सबको उस अन में भाग दीजिये, उस पर मुख्य प्रागाने कहा कि तम सब मेरेमें प्रवेश कर जाव, जो कुछ में खाऊंगा वह सब तुमको भी मिलेगा, बहुत श्रन्छा, ऐसा कह कर वे सब देवता उस प्राणा में प्रवेश करते भये, इसिलये जो अन्न प्राणा करके खाया जाता है उसी अन करके वागादि देवता भी तम होते हैं. और जैसे वागादि इन्द्रियां प्राण् के आश्रय रहती हैं, वैसे ही उस प्राण-वित पुरुष के आश्रय उसके जाति के लोग भी रहते हैं. और वह अपने जातियों का पालन पोषगा करता है, और उनका पूज्य होकर उनके सबके अगाड़ी जानेवाला होता है, यानी उनको आच्छे मार्ग पर चलाता है, श्रोर वही नीरोग होकर श्रत्न का भोक्ता श्रोर श्राधिपति होताहै, ऐसा फल उसी पुरुषको मिलता है जो ऊपर कहे हुए प्रागाकी उपासना करता है. झाँर उसके ज्ञातियों में से जो कोई उसके प्रति-कुल चलने की इच्छा करता है वह भरगा पोषगा करने योग्य जातियों के भरगार्थ कभी समर्थ नहीं होता है, और जो कोई उसके अन-कूल चलने की इच्छा करता है, अथवा जो कोई उसके अनुकूल वर्त्तता है और भरगीय पुरुषको पालन करना चाहता है वह अवश्य पालन पोषरा करने योग्य लोगों के लिये समर्थ होता है ॥ १८॥

मन्त्रः १६

सोयास्य आङ्गिरसोङ्गानां हि रसः माखो वा अङ्गानां रसः भाखो हि वा अङ्गानां रसस्तस्माचस्मात्कस्माचाङ्गात्माख उत्क्रामित तदेव तच्छुष्यत्येष हि वा अङ्गानां रसः ॥

सः, अयास्यः, आङ्किरसः, अङ्गानाम्, हि, रसः, प्राग्यः, ना, अङ्गानाम्, रसः, प्राग्यः, हि, ना, अङ्गानाम्, रसः, तस्मात्, यस्मात्, कस्मात्, च, अङ्गात्, प्राग्यः, उत्कामित, तत्, एन, तत्, ग्रुष्यित, एवः, हि, ना, अङ्गानाम्, रसः ॥

शन्वयः

पदार्थाः झन्वयः

पदार्थाः

सः=वह
हि=निरचय करके

अयास्यः=मुख में रहनेवाला
प्राया

आक्रिरसः=आक्रिरस है
हि=क्योंकि
सः=वह मुक्य प्राया
वा=ही

अक्रानाम्=व श्रंगों का
रसः=तार है
प्रायाः=शाया
वा=ही

अक्रानाम्⇒ व श्रंगों का
रसः=सार है

प्रायाः=शाया
वा=ही

बा=ही श्रङ्गानाम्=सर्व श्रङ्गों का रसः=सार है तस्मात्=तिसी कारव यस्मात्=जिस कस्मात्=किसी अङ्गात्≕त्रंगों से प्राणः=प्राण उत्कामति=निकल जाता है तत् एव=वहां का ही तत्=वह भंग शुच्यति≔सुख जाता है + तस्मात्=इससिये एषः ह=यही मुक्य प्राच ब्रङ्गासाम्⇒सव जंगों का रसः=सार है

भावार्थ । -

वह मुख्यवाण आद्विरस भी है, क्योंकि वह अंगों का सार है, इसी कारण जिस अंगसे प्राण निकल जाता है वह अंग सूख जाता है ॥ १९॥

मन्त्रः २०

एष उ एव बृहस्पतिर्वाग् वै बृहती तस्या एष पतिस्तस्मादु बृहस्पतिः॥

एषः, उ, एव, बृहस्पतिः, बोर्क्, वै, बृहती, तस्याः, एषः, पतिः, तस्मात्, उ, बृहस्पतिः ॥

श्रम्बयः

पदार्थाः स्रन्वयः

पदार्थाः

प्यः प्य=यही मुख्य प्रायः यहस्पतिः=दृहस्पति है

र=धौर

स्पतिः=दृहस्पति है + हि=क्योंकि

वाक्=वाणी वै=निश्चय करके

बृहती=शृहती है यानी वाखी का नाम बृहती है तस्याः=उसी वाणी का एषः=यह मुख्य प्राण

पतिः=मधिपति है

उ=मौर तस्मात्=तिसी कारव + एषः=यह प्रावा

बृहस्पतिः=बृहस्पति कहस्राता है

भावार्थ ।

हे सोंम्य ! यही मुख्य प्राग्ण वृहस्पित भी है, क्यों कि वागी वृहती कहलाती है, यानी वागी का नाम वृहती है, वृहती का अर्थ बड़े के है, यानी व्यापक है, क्यों कि सबकी सिद्धि वागी करके होती है, इस वागी का प्राग्ण अधिपति है, यानी वागी प्राग्णके आअथ है, विना प्राग्ण के वागी कुछ कार्य नहीं कर सकती है, और यही कारगा है कि प्राग्ण वृहस्पित कहलाता है, जैसे सब देवताओं में वृहस्पित अष्ठ है, वैसे ही सब इन्द्रियदेवताओं में प्राग्ण श्रेष्ठ है। २०॥

मन्त्रः २१

एव उ एव ब्रह्मणस्पतिर्वाग् वे ब्रह्म तस्या एव पतिस्तस्यादु ब्रह्मणस्पतिः ॥

पदच्छेदः।

पपः, च, एव, ब्रह्मग्रास्पतिः, वाक्, वे, ब्रह्म, तस्याः, एषः, पतिः, तस्मात, उ, ब्रह्मग्रस्पतिः ॥

श्चन्यः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

ड=झौर एषः एष=वही मुख्य प्रांख ब्रह्मगुस्पतिः=ब्रह्मगुस्पति है + हि=क्योंकि

स्पतिः≔त्रज्ञयस्पति है + हि=त्र्योंकि बाक्=वायी वै=निश्चय करके

ब्रह्म=यजुर्वेद है

तस्याः=डस वाची का एषः=यह प्रायः पतिः=पति है तस्मात् उ=भौर इतीक्षये ब्रह्मस्परितः=यह ब्रह्मस्परित प्रायः + यज्जपास्=अर्जेद का + प्रास्यः=ब्रास्मा है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! यही प्राग्ण ब्रह्मका पति भी कहलाता है, वाग्णी यजुर्वेद है, उसका यह प्राग्ण पति है, इस कारग्ण इसका नाम ब्रह्मग्णरपति है॥ २१॥

मन्त्रः २२

एष उ एव साम वाग् वै सामैष साचामश्चेति तत्साम्नः सामत्वं यद्देव समः स्रुषिणा समो मशकेन समो नागेन सम एभिस्तिभिर्लोकैः समोनेन सर्वेण तस्माद्देव सामाश्चेते साम्नः सायुज्यं सलोकतां य एवमेतत्साम वेद ।।

पदच्छेदः ।

एषः, उ, एव, साम, वाक्, वै, साम, एषः, सा, च, झ्रमः, च, इति, तत्, साझः, सामत्वम्, यत्, उ, एव, समः, प्लुषिग्हा, समः, मशकेन, समः, नागेन, समः, एभिः, त्रिभिः, लोकैः, समः, झ्रनेन, सर्वेग्हा, तस्मात्, वा, एव, साम, झ्रश्तुते, साझः, सायुज्यम्, सक्रोक-ताम्, यः, एवम्, एतत्, साम, वेद् ॥

श्रन्वयः

पदार्थाः ऋन्वयः ् पदार्थाः

ड=घीर एषः=यही मुख्यप्राय एच=निश्चय करके साम=साम है

साम=साम । + प्रकृतः=प्रश्व

+ कथम्=कैसे

वाक् वै≔वायी निरचय करके साम=साम + भवति≔हो सकता है + उत्तरम्=उत्तर क्योंकि

सा≔बीकिंगमात्र

च=धौर ...

श्रमः≔पुष्टिंखग बात्र + पत्ती=वे दोगों एषः=वह मुख्य प्राया (करके कहे जाते हैं समान रूप से है तत्र≕सोई साम्नः=सामका सामस्वम्=सामस्व है यानी साम शब्द का अर्थ है व=घौर यत्=जिस कारण पश्च=निश्चय करके + सः=वह प्राण प्लुषिसा=कीट के बाकार के समः=बराबर है मशकेन=मच्छरके शरीर के समः=बराबर है नागेन समः=हाथी के शरीर के

+ च=घौर प्रिः≔ान त्रिभिलाँकै:=तीमाँ खोकों के समः≔बरांबर है तस्मात्=तिसी कारण अनेन≔इनही सर्वेग्र⇒सब कहे हुये के स्तमः=बराबर साम=साम है यः=जो उपासक एतत्=इस साम=साम को एवम्≔इस प्रकार बेद्=जानताहै यानी उपा-सना करता है + सः=वह साम्नः=साम की सायुज्यम्=सायुज्यता को सलोकताम्=साबोक्यताको

भावार्थ।

हे सौन्य ! यही मुख्य प्राया सामवेद भी है, प्रश्न होता है कि कैसे वायाी सामवेद हो सकती है, इसका उत्तर यह है कि सा की- लिंगमात्र छोर अगः पुल्लिंगमात्र ये दोनों मिलकर मुख्य प्राया कहे जाते हैं, यानी स्त्रीजाति छोर पुरुषजाति भरमें प्राया समानरूप से स्थित है, और जिस कारया यह प्राया होटे कीट के शरीर के छंदर होने से मच्छर के शरीर के अंदर होने से मच्छर के शरीर के बरावर छोर मच्छर के शरीर के अंदर होने से हाथी के शरीर के बरावर छोर तीनों लोकों के अन्दर रहने से तीनों लोकों

के बराबर सममा जाता है इसी कारण वह प्राण सब छोटे बड़े शरीरों के तुस्य सममा जाता है, झौर इन्हीं सबके बराबर साम भी है, क्योंकि साम और प्राण एकही हैं, जो उपासक इस सामकी इसप्रकार उपासना करता है वह साम के सायुज्यताको झौर साजो-कताको प्राप्त होता है ॥ २२ ॥

मन्त्रः २३

एष उ वा उद्गीयः प्राणो वा उत्प्राणेन हीद्छं सर्वमुत्तब्धं वागेव गीथोच गीथा चेति स उद्गीयः ॥

पदच्छेदः ।

एषः, उ, वा, उद्गीथः, प्रार्णः, वा, उत्, प्रार्णेन, हि, इदम्, सर्वम्, उत्तब्बम्, वाक् एव, गीथा, उत्, च, गीथा, च, इति, सः, उद्गीथः ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

ज≕श्रीर इदम्≔यह प्रचः≕यही सर्वम्=सब बस्तु उत्तब्धम्=प्रथित है वा=मुख्यप्राख उद्गीथः=उद्गीथ भी है मा=धौर च=ग्रीर बाकु एब=बाखी ही बै=निश्चय करके गीथा=गीथा है बानी गीथा उत्=उत् शब्दका प्रथ शब्दका सर्थ वागी है प्राणः=प्राण है उत्+गीथाइति=यह दोनों मिला करके हि=क्योंकि सः=वड प्राणेन=प्राण करके ही उद्गीथः=उद्गीथ शब्द होता है

मावार्थ ।

हे सौन्य ! यही प्राण् उद्गीथ भी है, उद्गीथ दो शब्द यानी उत् और गीथ करके बना है, उत्शब्द का अर्थ प्राण् है, और गीथशब्द का अर्थ वाणी है, प्राण् ही करके वाणी बोली जाती है, और प्राण्ही करके यावत् वस्तु संसार में हैं सब प्रथित है, इसिलये प्राण् और वाणी दोनों सिलकर उद्गीथ कहलाता है, इसी उद्गीथ की सहायता करके उद्गाता यजमान अभीट फलको प्राप्त होता है।। २३॥

मन्त्रः २४

तदापि ब्रह्मदत्तरचैकितायनेयो राजानं भक्षयन्तुवाचार्यः त्यस्य राजा मूर्थानम् विपातयाचिदितोयास्य श्राक्विरसोन्येनोदगायदिति वाचा च क्षेव स प्राणेन चोदगायदिति ॥

तत्, ह, श्रिपं, ब्रह्मदृत्तः, चेकितायनेयः, राजानम्, भक्षयन्, उवाच, श्रियम्, त्यस्य, राजा, मूर्धानम्, विपातयात्, यत्, इतः, श्रयास्यः, श्राङ्गिरसः, श्रम्येन, उदगायत्, इति, वाचा, च, हि, एव, सः, प्राण्ति, च, उदगायत्, इति ॥ श्रम्ययः पदार्थाः श्रम्वयः पदार्थाः

तत्≕ितस्त विषय में + झाख्या- } एक घाख्यायिका यिका ह } = भी है ऋपि }

+ समये=एक समय चैकितायनेयः=चिकितायन का पुत्र ब्रह्मद्ताः=ज्ञादत्त

राजानम्=यज्ञ में सोमबता के रस को अक्षयन्=पीता हुवा

+ इति=ऐसा उवाच=बोला कि

+ घ्रहम्≕में

+ अनुतवादी=असत्यवादी

+ स्याम्=होऊं + च=घौर

श्रयम् राजा=यह राजा सोम त्यस्य=उस

> + मे=मेरे मुधानम्=मस्तक को

विपातयात्=काट के गिरा देवे
यत्=यदि
इतः=इस वार्यायुन प्राय के सिवाय
अन्येन=और किसी देवताकी
सहायता करके

+ एषः=यह + ग्रहम्=में त्रयास्यः=त्रयास्य त्राङ्गिरसः=प्रक्रिस

+ ऋषीणाम्=िकसी ऋषि के + स्त्रेत्र=यज्ञ में उदगायस्=नान किया हो

च=इस कहने के पीछे सः≔वही खयास्य मक्तिरस बाचा=वावी करके

शस्त्रा=वाषा करक च=त्रोर

प्राणेन=प्राय करके एस हि इति=निस्सन्देश इस प्रकार उद्गायत्⇒गान करता भवा

भाषार्थ ।

हे सौन्य! जो कुछ उत्तर कहागया है उसके विषय में एक आख्यायिका इसप्रकार कही जाती है, एक समय चिकितायन का पुत्र ब्रह्मदत्त यहा में सोमलता के रसको पीता हुआ बोलता भया कि यहि में अयास्य अङ्गिरस ऋषि किसी यहा विषे सिवाय वाणी और प्राण् के उद्गीथ के गान में और किसी देवताकी सहायता ली हो तो में असत्यवादी होऊं, और मेरा मस्तक कटकर गिरपड़े, ऐसा कह करके वह अयास्य अङ्गिरस प्राण्क्प उद्गाता वाणी और प्राण् की सहायता करके उद्गीध का गान करता भया, और श्रुतिभी कहती है कि उसने इस यहा में भी वाणी और प्राण्की सहायता करके उस उद्गीध का गान किया। २४।।

मन्त्रः २५

तस्य हैतस्य साम्नो यः स्वं वेद भवति हास्य स्वं तस्य वै स्वर् एव स्वं तस्मादार्तिवज्यं करिष्यन् वाचि स्वरमिष्क्वेत तथा वाचा स्वरसंपन्नयार्तिवज्यं कुर्याचरमाच्छे स्वरवन्तं दिद्दक्षंत एव । अथो यस्य स्वं भवति हास्य स्वं य एवमेतत्साम्नः स्वं वेद ॥

पद्च्छेदः ।

तस्य, इ, एतस्य, साम्तः, यः, स्वम्, वेद, भवति, इ, झस्य, स्वम्, तस्य, वे, स्वरः, एव, स्वम्, तस्मात्, झार्त्विज्यम्, करिच्यन्, वाचि, स्वरम्, इच्छेत, तया, वाचा, स्वरसम्पन्नया, झार्त्विज्यम्, कुर्यात्, तस्मात्, यक्के, स्वरवन्तम्, दिदृक्षन्ते, एव, झथो, यस्य, स्वम्, भवति, इ, झस्य, स्वम्, यः, एवम्, एतत्, साम्नः, स्वम्, वेद् ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

यः=जो उद्गाता तस्य=उसी पतस्य=इस साम्रः=साम के

ş

स्वम्≔स्वरस्यी धनको वेद्=जानता है अस्य ह=डसको स्वम्=बौकिक धन

भवति=शास होता है तस्य≔उस उद्वाताका स्वरः एव=स्वरही स्वम्=धन है तस्मात्=इसिवये श्रार्त्विज्यम्=ऋत्विज कर्म करिष्यन्=करने की इच्छा करता हुआ षाचि=अपनी वाणी में स्वरम्=यथाशास्त्रविधि स्वर पाने की इच्छेत≔इच्छा करे + च=श्रीर तया=उसी स्वरसंपन्नया=संस्कार की हुई वाचा=वाणी करके आर्टिवज्यम्=उद्गाता के कर्मको कुर्यात्≕रे • तस्मात्=इसी कारख यक्षे⊐यज्ञ में स्वरवन्तम्=उत्तम स्वरवाले + उद्गातारम्=उद्गाता को

+ जनाः≕लोग प्रस=घवश्य दिद्धान्ते=देखने की इच्छा करते हैं अथो=अब फलको दिख-खाते हैं य:=जो साम्रः=साम के एतत्=इस स्वम्=स्वररूपी धनको एवम्=इस प्रकार . घेद=जानता है + च=श्रीर यस्य=जिसको स्वम्=स्वररूपी धन भवति=प्राप्त होता है श्चस्य=उसको इदम्≔वह स्वम्≔बाैकिक धन श्चिप=भी भवति=प्राप्त होता है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! जो उद्गाता साम के स्वररूपी धन को जानता है, उस को दुनियासंबन्धी धन अवश्य प्राप्त होता है, उद्गाता का धन उसका स्वर है, इसिजिये ऋृत्विज कर्म करने की इच्छा करता हुआ अपनी दायाी में यथाशास्त्रविधि उत्तम स्वर पाने की इच्छा करें, और उसी ऐसी संस्कार की हुई उत्तम वायाी करके यह्नकर्म को करें, और यही कारया है कि यह विषे उत्तम स्वरवाले उद्गाता नियत किये जाते हैं। हे प्रियदर्शन ! अब आगे इसके फलको दिखाते हैं, जो उपासक साम के स्वररूपी धनको अन्छे प्रकार जानता है, और जिसको स्वरह्ती धन प्राप्त है, उसीको यह संसारी धन भी प्राप्त होता है ॥ २५ ॥

मन्त्रः २६ तस्य हैतस्य साम्नो यः सुवर्णे वेद भवति हास्य सुवर्ण तस्य वै स्वर एव सुवर्ण भवति हास्य सुवर्णे य एवमेतत्साम्नः सुवर्षी वेद ॥

पदच्छेदः ।

तस्य, हं, एतस्य, साम्नः, यः, सुवर्गाम्, वेद, भवति, ह, ध्रस्य, सुवर्गाम्, तस्य, वे, स्वर:, एव, सुवर्गाम्, भवति, इ, झस्य, सुवर्गाम्, यः, एवम्, एतत्, साम्नः, सुवर्गाम्, वेद ॥

ध्यस्ययः

पदार्थाः श्चन्वयः पदार्थाः

यः≔जो पतस्य=इस

स्नाइनः=साम के सुवर्णम्=कंठादिस्थानसंबन्धी

वर्षाको

ह=भन्नी प्रकार

चेद=जानता है **ग्र**स्य=डसीको

स्वर्णम्≕संसारी धन भवति=भिजता है

+ च≕श्रीष

त्तस्य=उस उद्गाता का

वै=निरचय करके

भावाथे।

हे सौम्य ! जो इस साम के कंठादि स्थान संबन्धी वर्शाको जानता है उसीको संसारी धन प्राप्त होता है, उद्गाताको उत्तम स्वर से

स्वरः≔उत्तमं स्वर उद्यारख

करना

एव≕ही सुवर्णम्=भेष्ठ धन है

> + च=श्रीर यः=जो

स(म्नः=साम के

प्बम्≔कहेडूये प्रकार पतत्=इस

सुवर्णम्=सुस्वर उचारण को

वेद≃जानता है

श्रस्य ह=इसको ही सुवर्णम्≃यह साैकिक धन

भवति≕मिसता है

वासी का उचारसा करनाही श्रेष्ठ धन है, जो सामके, उपर कहे हुये प्रकार सुस्वर के उद्यारण करने को जानता है, उसीको यह लौकिक धन मिलता है।। २६।।

मन्त्रः २७

तस्य हैंतस्य साम्नो यः प्रतिष्ठां वेद प्रति ह तिष्ठति तस्य वै वागेव मतिष्ठा वाचि हि खल्वेष एतत्प्राणः प्रतिष्ठितो गीयतेष इत्यहैक श्राहुः ॥

पदच्छेदः ।

तस्य, इ, एतस्य, साम्नः, यः, प्रतिष्ठाम्, वेद, प्रति, इ, तिष्ठति, तस्य, बै, वाग्, एव, प्रतिष्ठा, वाचि, हि, खल्ल, एषः, एतत्, प्रागाः, प्रतिष्ठित:, गीयते, अन्ने, इति, उ, ह, एके, आहु: ॥

श्चन्यः

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

तस्य ह=उसी एतस्य साम्नः=इस सामके

यः≕जो

प्रतिष्ठाम्≕गुणको वेद≔जानता है + सः≔वह उपासक

ह≕भी

प्रतितिष्ठति=प्रतिष्ठावाला होता है तस्य=उस सामकी

प्रतिष्ठा=प्रतिष्ठा

पच≕ही वै=निश्चय करके

थाग्≔वासी है हि≕क्योंकि

एषः=यह

प्राणः=प्रागुरूप साम

ब्रलु≕निश्चय करके

वाचि=मुख के भीतर बाठ

जगहों में प्रतिष्ठितः+सन्⇒रहता हथा

> पतत् गीयते=गाया जाता है उ=श्रीर

एके=कोई आचार्य

इति ह=ऐसा भी आहः=कहते हैं कि

प्राणः=प्राण

अक्रे=चन्नमें

प्रतिष्ठित रहता है क्योंकि विना शक के प्राया श्रपना कार्य नहीं कर

भावार्थ ।

हे सौम्य ! जो इस सामके प्रतिष्ठाको जानता है, वह प्रतिष्ठावासा

होता है, साम की प्रतिष्ठा वागा है, क्यों कि यह प्राग्य साम मुख के भीतर आठ जगहों में रहता है, और उन्हीं के द्वारा गाया जाता है, और कोई कोई आचार्य ऐसा भी कहते हैं कि प्राग्य अन्नमें रहता है, क्यों कि विना अन्न के प्राग्य अपना कार्य नहीं करसका है, और न शरीर विषे स्थित रहसका है।। २७॥

मन्त्रः २८

श्रथातः पवमानानामेवाभ्यारोहः स वै खलु पस्तोता साम प्रस्तौति स यत्र प्रस्तुयात्तदेतानि जपेत् श्रसतो मा सद्गमय तमसो मा ज्योतिर्गमय मृत्योमीमृतं गमयेति स यदाहासतो मा सद्गमयेति मृत्युर्वा श्रसत् सदमृतं मृत्योमीमृतं गमयामृतं मा कुर्वित्येवेतदाह सत्योमीमृतं गमयामृतं मा कुर्वित्येवेतदाह सत्योमीमृतं गमयोतिरमृतं मृत्योमीमृतं गमयामृतं माकुर्वित्येवेतदाह मृत्योमीमृतं गमयोति नात्र तिरोहितमिवास्ति श्रथ यानीतराणि स्तोत्राणि तेष्वात्मनेत्राचमागायेत्तस्मादुतेषु वरं मृत्योति यं कामं कामयेत तः स एष एवंविदुद्वातात्मने वा यजमान्नाय वा यं कामं कामयते तमागायित तद्धैतल्लोकजिदेव न हैवालोन्वयताया श्राशास्ति य एवमेतत्साम वेद ॥

इति तृतीयं ब्राह्मणम् ॥ ३ ॥

पदच्छेदः ।

श्रथ, श्रत , पत्रमानानाम्, एत, श्रभ्यारोहः, सः, वे, खलु, प्रस्तोता, साम, प्रस्तौति, सः, यत्र, प्रस्तुयात, तत्, एतानि, जपेत्, श्रस्तः, मा, सत्, गमय, तमसः, मा, ज्योतिः, गमय, मृत्योः, मा, श्रमृतम्, गमय, इति, सः, यत्, श्राह, श्रस्तः, मा, सत्, गमय, इति, मृत्युः, सा, श्रस्त, सत्, श्रमृतम्, मृत्योः, मा, श्रमृतम्, गमय, श्रमृतम्, मा, कुरु, इति, एत, एतत्, श्राह, तमसः, मा, ज्योतिः, गमय, इति, मृत्युः, वे, तमः, ज्योतिः, श्रमृतम्, मृत्योः, मा, श्रमृतम्, गमय, श्रमृतम्, मा, कुरु, इति, एत, एतत्, श्रमृतम्, मृत्योः, मा, श्रमृतम्, गमय, श्रमृतम्, मा, कुरु, इति, एत्, एतत्, श्राह, मृत्योः, मा, श्रमृतम्, गमय, श्रमृतम्, मा, कुरु, इति, एत्, एतत्, श्राह, मृत्योः, मा, श्रमृतम्, गमय, श्रमृतम्, मा, क्रमृतम्, नामय, इति, न, श्रम्न, तिरोहितम्, इत्, श्रस्ति, श्रम्, यानि, इत्राण्या,

स्तोत्राग्ति, तेषु, श्रात्मने, श्रनाद्यम्, श्रागाथेत्, तस्मात्, उ, तेषु, वरम्, बृग्गीत, यम्, कामम्, कामयेत, तम्, सः, एषः, एवंवित्, उद्गाता, आत्मने, वा, यजमानाय, वा, यम्, कामम्, कामयते, तम्, आगा-यति, तत्, ह, एतत्, लोकजित्, एव, न, ह, एव, आकोक्यतायाः, श्चाशा, श्चस्ति, यः, एवम्, एतत्, साम, वेद् ॥

अन्वयः

पदार्था श्रन्वयः पदार्थाः

স্বথ=স্বৰ अतः≔इहां से पवमानानाम् (_पवमान स्तोत्रॉ **एव**े∫ ⁼कीही **अ**भ्यारोहः=श्रेष्ठता कथ्यते=कही जाती है वै खलु=निस्सन्देह यत्र≕जिस समय सः≔वह यज्ञ प्रसिद्ध प्रस्ताता साम=सामका प्रस्तौति=श्रारम्भ करता है तत्र=तब पहिले सः=वह प्रस्तोता प्रस्तुयात्=सामका श्रारंभ करै च=ग्रीर पतानि=यजुर्वेदके तीन मंत्रों को

> श्रसतः=त्रसत् से मा=मुक्ते सत्=सत्को गमय=पहुँचादे

उद्वाता=उद्गाता

+ इति=इस प्रकार

मा≔मुके ज्योतिः=ज्योति को गमय=पहुँचादे मृत्योः=मृत्यु से मा=मु के **ग्रमृतम्**=श्रमृतको गमय इति=पहुँचा दे इसप्रकार + एषाम्≔इन तीन मंत्रों को + अर्थे=प्रर्थ के विषय में यत्=जो कुछ + कथितम्=कहा गया है + तत्=उसी को + ब्राह्मसम्बद्ध ब्राह्मस प्रंथभी + निम्नप्रकारेग्=निम्नप्रकार + व्याचष्टे=ज्याख्या करता है श्रसत्=त्रसत् पदार्थ वै=निरचय करके

मृत्युहै बानी व्यव-

मृत्युः= र् हारिक कर्म और व्यवहारिक ज्ञाबहै

सत्=सत्'परमार्थिक कर्म

+ तस्मात्=उस

परमार्थिक ज्ञान है"

तमसः≔तम से

मृत्योः=व्यवहारिककर्म भार व्यवहारिक ज्ञानसे मा=मुक्ते असृतम्=परमार्थिक कर्मको भौर ,परमार्थिक ज्ञानको गमय=प्राप्त कर इति=इसी प्रकार एतत् एव≔इस बातको भी + मंत्रः=संत्र आह=कहता है कि उद्राता ऐसा कहै मा=मुक्ते श्रमृतम्=सब कर्मों से मुक्क कुरु≕कर च=श्रीर तमसः≔तमसे मा≔मुके ज्योतिः=ज्योति को गमय इति=प्राप्त कर तमः≔तम पदार्थ वै=निरचय करके (ग्रज्ञानहै क्योंकि मृत्युः=√ बज्ञान मरग का र्रे हेतु होता है च≕घोर ज्योति≔प्रकाश अमृतम्=चमर होने का कारव

ह तस्मात्=डसी तमसः⇒मरय हेतु ब्रज्ञान से मा≕मुक्षे अमृतम्⇒रेव स्वरूपको

गमय=प्राप्तकर इति=इसी प्रकार एतत् एव=इस बातको भी + मंत्रः=मंत्र **भ्राह**=कइता है कि उद्गाता ऐसा कहै मा=मुक्को श्चमृतम्=दैवस्वरूप कुरु=बनादे मृत्योः≔मृत्यु से मा=मुक्ते श्रमृतम्=श्रमस्व को गमय इति=प्राप्त कर दे श्चत्र=इसमें तिरोहितम्इव=पहिले दो मंत्रों की तरह ज़िपाहुआ ऋर्थ न=नहीं श्रस्ति=है ग्रथांत् मंत्रका ग्रर्थ स्पष्ट है श्रथ=श्रव इसके पीक्षे इतराशि=श्रीर यानि=जो + श्रवशिष्टानि=वचे हुये + नव=नौ स्तात्रााण्=पवमान स्तोत्र हैं तेषु) + प्रयुक्तेषु रे=उनके पढ़ने पर +सत्सु र

+ उद्गाता=डद्राता

आत्मने=अपने विधे

श्रद्धाद्यम्=भोज्य बद्धका

श्रागायेत्=गान करे

ड=झीर श्रागायति=गान करके प्राप्त तस्मात्=इस्रोबये करता है सः=वही च=घौर एषः≔यष्ठ तत् ह≔वही एवंवित्=प्राणवेत्ता यह प्राया ज्ञानयानी उद्गाता=४द्गाता पतत्= | समयानुसार स्वरॉ | का अपर नीचे के | जाना श्रादिक ज्ञान यम्=जिस कामम्=पदार्थ की कामयेत=इच्छा करे लोकजित्=बोक के विजय का तम्=उसी साधन वरम्=पदार्थ को एव=भवश्य तेषु) (उन्हीं पवमान + अस्ति≕है + प्रयुक्तेषु >= < स्तोन्नों को पढ़ते + सत्सु / (हुये यः≕जो पतत्≔इस वृण्ति=वरदान मांगे साम=साम को + डि=क्योंकि प्वम्≔इस प्रकार + उद्गाता=उद्गाता वेद=जानता है आत्मने=अपने विवे तस्य=उसको वा≔मौर पव ह=निश्चय करके यजमानाय वा=यजमान के विये आलोक्यतायाः=मुक्रिके जिये यम्≕जिस **आशा**=प्रार्थना कामम्=पदार्थ को न≕नहीं कामयते=चाहता है **श्रस्ति=**है यानी **वह श्रवश्य** तम्=उसको मुक्त होजाता है

भावार्थ।
हे सौम्य! अव पवमान नाम स्तोत्रों की श्रेष्ठता कही जाती है,
जब प्रस्तोता अनृत्विज साम का गान आरम्भ करता है तब उद्गाता
यजुर्वेद के तीन मंत्रों का जप निम्नप्रकार करता है। हे मंत्र! तू
सुभे असत् से सत्को पहुँचादे, हे मंत्र! तू सुभे तमसे प्रकाशको पहुँचा
दे, हे मंत्र! तू सुभे मृत्यु से अमरत्वको पहुँचादे इन तीनों मंत्रोंमें
जो कुछ अर्थ कहा गया है उसी को यह ब्राक्षस्य प्रंथ भी नीचे जिसे

हुये प्रकार कहताहै, श्रासत् पदार्थ निश्चयकरके मृत्यु है यानी व्यवहारिक कर्म और व्यवहारिक ज्ञान है, और सत् पदार्थ परमार्थिक कर्म और परमार्थिक ज्ञान है, हे मंत्र! तिस व्यवहारिक कर्म और व्यवहारिक ज्ञान से मुक्ते परमार्थिक कर्म और परमार्थिक ज्ञान को प्राप्त कर, और मंत्र ऐसा भी फहता है कि उद्गाता सब कमों से मुक्त होजाता है और तमरूपी ब्राज्ञान से प्रकाशरूपी ज्ञानको प्राप्त होता है, मंत्रकी ब्रोर ब्राभिमुख होकर उद्गाता कहता है कि तू मरगा हेतु श्रज्ञान से मुक्ते देवस्वरूप को प्राप्त कर झौर देवस्वरूप सुक्ते बनादे, मृत्यु से अमरत्वको प्राप्तकर, अब आगे जो नी बचे हुये पवमान स्तोत्र हैं उनके पढ़ने पर उद्गाता श्चपने लिये श्रम का गान करे, श्रीर वही यह प्राग्वेत्ता उद्गाता जिस पदार्थ की इन्ह्या करे उसी पदार्थ को उन्हीं नी पवमान स्तोत्रों को पहते हुये वर मांगे, हे सौम्य ! उद्गाता अपने लिये और यजमान के लिये जिस पदार्थ को चाहता है उस पदार्थ का गान करके प्राप्त करसकता है, उसका यह प्राण ज्ञानसमयानुसार सुरों का ऊपर नीचे लेजाना कोकों के विजय करने का साधन है, जो सामको इस प्रकार जानता है वह श्रवश्य मुक्त होजाता है ॥ २८ ॥

इति तृतीयं ब्राह्मण्म् ॥ ३ ॥ श्रथ चतुर्थं ब्राह्मण्म् ।

मन्त्रः १

श्रात्मैवेदमग्र श्रासीत्पुरुषविधः सोनुनीक्ष्य नान्यदात्मनोपश्य-त्सोइमस्मीत्यग्रे व्याहरत्ततोहं नामाभवत्तस्माद्ययेतक्कीमन्त्रितोहमय-भित्येवाग्रे उक्त्वाथान्यकाम प्रकृते यदस्य भवति स यत्पूर्वोस्मात्स-र्वस्मात्सर्वान्पाप्मन श्रीषत्तस्मात्पुरुष श्रोषति हवे स तं योस्मात्पूर्वो बुभूषति य एवं वेद ॥

पद्च्छेदः।

आत्मा, एव, इदम्, अमे, आसीत्, पुरुषविधः, सः, अनुवीक्ष्य, न, अन्यत्, आस्मनः, अपश्यत्, सः, आहम्, अहिम, इति, अमे, व्याहरत्, ततः, ष्टाहम्, नाम, श्रभवत्, तस्मात्, श्रापि, एतर्हि, श्राम-न्त्रितः, श्रहम्, श्रयम्, इति, एव, श्रमे, उक्त्वा, श्रथ, श्रन्यत्, नाम, प्रत्रृते, यत्, श्रस्य, भवति, सः, यत्, पूर्वः, श्रोपति, ह, वै, सः, तम्, सर्वान्, पाप्मनः, श्रोपत्, तस्मात्, पुरुषः, श्रोपति, ह, वै, सः, तम्, यः, श्रस्मात्, पूर्वः, बुसूषति, यः, एवम्, वेद् ॥

ग्रन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

इद्म्=यह जगत् श्चाग्रे=डत्पत्तिसे पहित्रे आत्मा एव=श्रात्मा ही म्रासीत्=था + पुनः=फिर **+सःपुरुषविधः**≔वही श्रात्मा हिरएय गर्भ + अभूत्=हुआ + सः=वह प्रथमपुरुष श्चनुवीक्ष्य=चारों तरफ देखकर श्चात्मनः=श्रपने से अन्यत्≕भिन्न कुछ न=नहीं **श्च**पश्यत्=देखता भया + तदा≔तव **अ**हम्=मेही + सर्वात्मा=सर का बात्मा अस्मि=हुं इति=ऐसा सः≔डसने श्रद्रे≔प्रथम व्याहरत्≔कहा ततः≕तिसी कारण + सः=हिरण्यगर्भ

श्रहम् नाम=श्रहंनामवाला श्रभवत्=होता भया + यतः=जिस कारण सः≔डसने अहमस्मि=''बहमस्मि" आह=कहा तस्मात्=तिसी कारण श्रिप पतर्हि=श्रव भी श्रामन्त्रितः=बुजाया हुन्ना पुरुष + आह⊐कहता है कि **ग्रह**म्=में अयम्≔यह हूं इति एव=ऐसा ही श्रग्रे≖पहिसे उक्त्वा=कहकर **अध**=पी**खे** श्चन्यत्≃भौर नाम=नाम यत्=जो श्रास्य=इस भादमी का भवति≔होता है प्रवृते=कहता है यत्=जिस कारग + सः≔यह प्रजापति

सर्वान्=सब पादमनः=पापोंको श्रीषत्=जलाता भया ग्रस्मात्=तिसी कारण

सर्वस्मात्=प्रजापति पद पाने सिःपुरुषः ह वै=वह पुरुष प्रवश्य वार्कों में से

+ सः≔वह पूर्वः=प्रथम

+ श्रभवत्=होता भया तस्मात्=इसविये यः=जो परुष

श्रस्मात्=अजापति होनेवाखाँ

+ प्रधमः=प्रथम

बुभूषति=होना चाइता है

तम्=उस पुरुषको श्रोषति=नाश करडालताहै यानी

> तेजहीन कर देता है . यः=जो

एचम्≔इस प्रकार चेद=श्रपने में उस पदवी पानेकी इच्छा करता है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! जगत् उत्पत्ति के पहिले केवल एक आस्माही था, वही पीछे से हिरगयगर्भ होता भया, झीर वही प्रथम पुरुष चारो तरफ देखकर झौर अपने से प्रथक् कोई भिन्न वस्तु न पाकर कहने कागा. मैं ही सबका आत्मा हूं और यही कारण है कि वह हिरययगर्भ आहं नामवाला होता भया, जिस कार्गा उसने प्रथम कहा तिसी कार्गा अव भी जोग पुकारे जाने पर कहते हैं कि यह मैं हुं ऋगैर इसके पीछे अपना दूसरा नाम देवदत्त आहि लगाकर कहते हैं और जिस कारगा उस प्रजापति ने सब पापों को जला दिया उसी कार्गा वह सब प्रजा-पतिपद पानेकी इच्छा करनेवालों में से प्रथम होता भया, इसिलये जो पुरुष प्रजापति होनेवालों में से प्रथय होना चाहता है वह पुरुष अवश्य उस पुरुषको नाश करडालता है यानी तेजहीन कर देता है जो इस प्रकार अपने में उस पदवी पाने की इच्छा करता है ॥ १॥

ग्रन्तः २

सोविभेत्तस्मादेकाकी विभेति स हायमीक्षांचक्रे यन्मदन्यश्वास्ति कस्माञ्ज विभेगीति तत एवास्य भयं वीयाय कस्माद्धचभेष्यददिती-याद्रै भयं भवति ॥

पदच्छेदः ।

सः, अविभेत्, तस्मात्, एकांकी, विभेति, सः, ह, अयम्, ईक्षां-चक्रे, यत, मत्, अन्यत्, नं, अस्ति, कस्मात्, तु, विभेमि, इति, ततः, एत, अस्य, भयम्, वीयाय, कस्मात्, हि, अभेष्यत्, द्वितीयात्, वे, भयम्, भवति ॥

श्चन्ययः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

सः≔बह प्रजापति + ग्रस्मदादिवत्≔हम बोगों की तरह श्रविभेत्≔दरता भया तस्मात्≕तिसी कारख + ग्रद्य=प्राजकब

पकाकी=श्रकेबा पुरुष बिभेति=डरता है

+ पुनः≕फिर सः ह=वडी झयम्≕यह प्रजापति

ईक्षांचके≔विचार करने बगा कि यत्≕जब मत्=मुक्त से अन्यत्≕दुसरा और कोई

अन्यत्–दूसरा जारका न=नहीं झस्ति≕है

+ तत्=तो

ते कड़ा

कस्मात् जु≔िकससे + ग्रहम्≕ैर्मे विभेमि इति≕रुरूं

> ततः एव=ऐसे विचार से ही श्रस्य=उस प्रजापति का

अस्य=वसं प्रजापात भयम्=भय बीयाय=दूर होगया भयम्=भय

हि=मवरय द्वितीयात्=दूसरे से सवति≕होता है

+ यदा) + ब्रन्यत् }=जब दूसरा रहा नहीं + नास्ति J

+ तदा=तब कस्मात्=कैसे अभेष्यत=भग होगा

भाषार्थ ।

हे सौम्य ! वह प्रजापित अकेला होने के कारण उरता भया और यही कारण है कि आजकल अकेला पुरुष उरता है किर वही प्रजापित विचार करने लगा कि जब अससे दूसरा कोई नहीं है तो मैं क्यों उरू ऐसे विचार से उस प्रजापित का डर दूर होगया क्यों कि भय दूसरे से होता है अपने से नहीं जब दूसरा नहीं रहा तब भय कैसे होगा। २।।

मन्त्रः ३

स नै नैव रेमे तस्पादेकाकी न रमते स द्वितीयमैच्छत् स हैता-वानास यथा स्त्रीपुमांसी संपरिष्वक्री स इममेवात्मानं द्वेषापातय-त्ततः पतिश्च पत्नी चाभवतां तस्पादिदमर्घद्वगलिमव स्व इति ह स्माह याक्षवल्क्यस्तस्मादयमाकाशः स्त्रिया पूर्यत एव तां समभव-त्ततो मनुष्या अजायन्त ॥

पदच्छेदः ।

सः, वै, न, एव, रेमे, तस्मात्, एकाकी, न, रमते, सः, द्वितीयम, ऐच्छत्, सः, इ, एतावान्, झास, यथा, स्त्रींपुमांसौ, संपिर्ध्वको, सः, इमम्, एव, आत्मानम्, द्वेषा, अपातयत्, ततः, पतिः, च, पत्नी, च, अभवताम्, तस्मात्, इदम्, अर्द्धवृगक्षम्, इव, स्वः, इति, इ, स्म, आह, याज्ञवल्क्यः, तस्मात्, अयम्, आकाशः, क्षिया, पूर्वते, एव, ताम, समभवत्, ततः, मनुष्याः, अजायन्त ॥

श्चन्यः

्रवदार्थाः व्यन्वयः

वयः पदार्थाः +चपुनः≕भौर फिर

सः=वह प्रजापति वै=निश्चय करके न एवं रेमे=चकेला होनेके कारण

न प्व रेमे=अकेबा होनेके कारण ्र आनंदित नहीं हुआ

तस्मात्=इसीबिये

+इदानीम् }=धव मी + अपि }

एकाकी=श्रकेता कोई पुरुष न=नहीं

> रमते=ज्ञानन्द को प्राप्त होता है

+ झतः=इसक्तिये सः=वह प्रजापति

द्वितीयम्=दूसरे की पेरुह्नुत्=इच्हा करता अवा सः=वही एतावान्=इतने परिमायावाका श्रास=हुत्रा किं यथा=जितना स्त्रीपुमांसी=की पुरुष दोनों मिक

संपरिष्वक्री=होते हैं + च=ग्रीर

> + पुनः≕िकर सः=वद्दी प्रजापति इसम्=द्दती

एव=ही आत्मानम्=मपने सरीर को

हो भाग में बानी होधा={ जी और पुरुष के श्रपातयत्=विभाग किया ततः=तिस शरीर विभाग होने पर पतिः=पति च≔घौर पत्नी च=पत्नी दो श्रभवत्=होते भवे तस्मात्=इसिवये स्वः=श्रात्मा का इद्म्=यह शरीर श्चर्यवृगलम् (धर्यभाग् दाल के `(⁼समान है इति ह=ऐसा याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने त्राह स्म=कहा है

तस्मात्=इसी कारण
अयम्=यह
आकाशः=पुरुष का आई भाग
आकाश
स्मिया पव=विवाहिता की करके
ही
पूर्यते=पूर्ण किया जाता है
+ च=जीर
+ पुनः=िकर
सः=वही प्रजापति यानी
स्वायंभू मनु
ताम्=उस शतरूपा नाम
की स्नी से
समभवत्=भैथुन करता भया
ततः=तिस मैथुन से
मनुष्याः=मनुष्य

श्रजायन्त≔उत्पन्न होते भये

भावार्थ ।

हे सोम्य ! वह प्रजापित अकेला होने के कारणा आनंदित नहीं रहा करता था, और यही कारणा है कि आजकल कोई पुरुष अकेला आनंदित नहीं होता है, जब प्रजापित ने देखा कि अकेले रहने में दुःख है तब दूसरे के प्राप्ति की इच्छा करता भया, और फिर अपने को इतना बड़ा परिमाणवाला बनाया जितना कि स्त्री पुरुष दोनों मिलकर होते हैं, और फिर उसी प्रजापित ने उस अपने शरीर को दो भागों में यानी स्त्री और पुरुष के रूपमें विभाग कर दिया, तिसी शरीर के विभाग होने पर पित और पत्नी दो होते भये, इसिलये शरीर का अर्द्धमाग दाल के समान है, ऐसा याझवल्क्य ने कहा है, इसी कारण इस पुरुष का अर्द्धभाग जो आकाश की तहर खाली है, वह विवाहिता स्त्री करके ही पूरणा कियाजाता है, और फिर वही

प्रजापति यानी स्वायंभू मनु उसी स्त्री यानी शतरूपा से मैंशुन करता भया तिसी मैंशुन से मनुष्य की सृष्टि उत्पन्न होती भई ॥ ३ ॥

मन्त्रः ४

सो हेयमीक्षांचके कथं तु मात्मन एव जनयित्वा संभवति इन्त तिरोसानीति सा गौरभवदृष्ट्रपभ इतरस्तां समेवाभवत्ततो गावोजा-यन्त वडवेतराभवद्श्वष्ट्रपभ इतरो गर्दभीतरा गर्दभ इतरस्तां समेवा-भवत्तत एकशफमजायताजेतराभवद् बस्त इतरोविरितरा मेष इतर-स्तां समेवाभवत्ततोजावयोजायन्तैवमेव यदिदं किंच मिथुनमापिपी-लिकाभ्यस्तत्सर्वमस्टजत !!

पदच्छेदः ।

सा, उ, ह, इयम्, ईक्षांचके, कथम्, नु, मा, आत्मनः, एव, जन-यित्वा, संभवति, हन्त, तिरः, आसानि, इति, सा, गौः, अभवत, वृषभः, इतरः, ताम्, सम्, एव, अभवत्, ततः, गावः, आजायन्त, वडवा, इतरा, अभवत्, अश्ववृषभः, इतरः, गर्दभी, इतरा, गर्दभः, इतरः, ताम्, सम्, एव, अभवत्, ततः, एकशफम्, आजायत, आजा, इतरा, अभवत्, वस्तः, इतरः, अविः, इतरा, मेषः, इतरः, ताम्, सम्, एव, अभवत्, ततः, आजाययः, आजायन्त, एवम्, एव, यत्, इद्म्, किंच, मिश्रुनम्, आपिपीलिकाभ्यः, तत्, सर्वम्, असुजत ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

पदार्थाः ग्रन्वयः पदार्थाः उ≕मौर श्चात्मनः=अपने से सा ह=वही एव≕ही इयम्≔यह शतरूपा मा≕मके र्द्धांचक्रे=विचार करती भई कि जनयित्वा=पैदा कर कथम् जु≔कैसे + कथम्≕कैसे संभवति=मुक्तसे मैथुन करता है + इदम्≔यह + श्रकृत्यम्=बात हत=लेद है श्रहम्=मैं + श्रयम्≔यह तिरः≕द्रिपकर पुरुषः=पुरुष

झसानि=दूसरी जाति में होळे इति=इसक्षिये सा=वह शतरूपा गौः=गाय

श्रमवत्=होती भई + तदा=तव इतरः=मनु वृषभः=वैक

श्रभवत्=होताभया + च=श्रौर

ताम् एष=ठसी गाय से समभवत्=मिथुन करता भया ततः≔उस मिथुन से गावः≕गौ बैज

झजायन्त=डत्पन्न होते भये + च=फिर इतरा=शतरूपा चडवा=पोबी होती भई इतरः=मनु

श्चश्चयुषः=घोडा श्चभवत्=होताभया इतरा=शतरूपा शर्दभी=गदही इतरः=मनु

गर्दभः=गदहा + अभवत्=होता भवा

+ धुनः≔फिर ताम् पव⇒उसी गतरूपा से समभवत्=मनु भिषुन करता भगा ततः = उस मिथुन से

एकशफम् = एक लुस्की सृष्टि

श्रजायत=होती सृष्ट्

हतरा=शतरूपा

श्रजा=वकरी

हतरः = मनु

बस्तः = चकरा

श्रमवन् = होताभया

हतरा=शतरूपा

श्रविः = भेदी होगई

हतरः = मनु

मेषः = भेदा

श्रमवन् = होताभया

ताम् = उस भेदी के

एव≔साथ समभवत्=वह बकरा व मेदा मैथुन करता भया ततः=तिसी काश्या

झजावयः=बक्ती भेड़ झजायन्त=होते भये पत्रम् एव=इसीतरह यस्=जो किंच=कुड़ इदम्≔यह स्रष्टि

श्रापिपीत्ति-) काभ्यः) =वींटी तक

> + अस्ति=है तत् सर्वम्=उस सबको मिथुनम्=मिथुन अस्जत=पैदा करता

भया

भावार्थ ।

है सौम्य ! वही यह शतरूपा की विचार करती भई कि जब इस पुरुषने मुक्तको अपने ही से उत्पन्न किया है तब फिर मेरे साथ यह कैसे भोग करता है, इस प्रकार पश्चात्ताप करके दूसरी योनिको प्राप्त होगई, जब वह गाय भई तब मनु बैल होगया और उससे मैथुन किया, तिस मैथुन से गाय और बैल उत्पन्न हुए, फिर जब वह शतरूपा की घोड़ी होगई तब मनु घोड़ा होगया, जब शतरूपा गदही हुई तब मनु गदहा होगया, फिर उसी शतरूपा से मैथुन किया तिस मैथुन से एक खुरवाली सृष्टि उत्पन्न होती भई, फिर शतरूपा बकरी होगई तब मनु बकरा होगया, जब शतरूपा भेड़ी होगई तब मनु भेड़ा होगया, आर शतरूपा भेड़ी होगई तब मनु भेड़ा होगया, आर शतरूपा भेड़ी होगई तब मनु भेड़ा होगया, आर शतरूपा भेड़ी होगई तब मनु भेड़ा होगया, अप शतरूपा भेड़ी होगई तब मनु भेड़ा होगया, और तब उसी भेड़ी के साथ भेड़ा मैथुन करता भया, तिस मैथुन से बकरी और भेड़की सृष्टि होती भई, इसप्रकार जो इन्छ सृष्टि ज्ञासे केकर चीटी पर्यंत देखने में आती है सबको मैथुनने ही उत्पन्न किया है ॥ ४ ॥

मन्त्रः ५

सोवेदहं वाव सृष्टिरस्म्यहं हीदं सर्वमस्सीति ततः सृष्टिरम-वत्सृष्ट्यां हास्यैतस्यां भवति य एवं वेद ॥

पदच्छेदः ।

सः, अवेत्, अहम्, वाव, सृष्टिः, अस्मि, अस्म्, हि, इदम्, सर्वम्, असृक्षि, इति, ततः, सृष्टिः, अभवत्, सृष्ट्याम्, ह, अस्य, एतस्याम्, भवति, यः, एवम्, वेद

श्रास्ययः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

पदाय सः≔बह प्रजापति इसेब्=जानता सबा कि झहम्=भैं दाव=ही सृष्टिः≔बह स्टिक्प झस्म=ई

हि=क्योंकि ऋहम्=मैंने ही इदम्=इस सर्वम्=सब जगद्द को असुद्धि इति=देश किया है ततः=इसी कारब + सः=वह
स्रिः=सृष्टिकप
अभवत्=होताभया
यः=गो पुरुष
पवम्=हस कहे हुवे प्रकार
वेद्=जानता है
+ सः=वह

ह=ष्रवरष
शस्य=इस प्रजापति की
पतस्याम्=इस
स्टष्ट्याम्=इष्टि में + प्रजापतिः=हृष्टिकर्ता भवति=होता है

भावार्थ ।

हे सीम्य ! वह प्रजापित जानता भया कि मैं सृष्टिरूप हूं, क्योंकि मैंने ही इस सब सृष्टिको रचा है, जो पुरुष इसप्रकार जानता है वह प्रजापित की सृष्टि में सृष्टिकर्ता अवश्य होता है ॥ ४ ॥

मन्त्रः ६

अथेत्यभ्यमन्यत्स पुलाच योनेईस्ताभ्यां चाग्निमस्जत तस्मादेत-दुभयमलोमकमन्तरतोलोमका हि योनिरन्तरतः तद्यविद्माहुरसुं यजामुं यजेत्येकैकं देवमेतस्यैव सा विस्रष्टिरेष उ क्षेव सर्वे देवाः अथ यिक्विद्माई तद्रेतसोस्जत तदु सोम एतावद्दा इदं सर्वमकं चैवा-श्रादश्च सोम एवान्नमग्निरन्नादः सैवा ब्रह्मणोतिस्रष्टिः यच्छ्रेयसो देवानस्जताथ यन्मर्त्यः सन्ममृतानस्जत तस्मादतिस्रष्टिरतिस्रष्ट्रणां हास्येतस्यां भवति य एवं वेद ॥

पदच्छेदः ।

अथ, इति, अध्यमन्थत्, सः, मुखात्, च, योनेः, हस्ताध्याम्, च, अिनम्, अस्तात्, तस्मात्, एतत्, उभयम्, अलोमकम्, अन्तरतः, अलोमका, हि, योनिः, अन्तरतः, तत्, यत्, इद्म्, आहुः, अमुम्, यज्ञ, अमुम्, यज्ञ, इति, एकेकम्, देवम्, एतस्य, एव, सा, विसृष्टिः, एवः, च, हि, एव, सर्वे, देवाः, अथ, यत्, किंच, इदम्, आर्द्रम्, तत्, रेतसः, अस्त्रज्ञतं, तत्, उ, सोमः, एतावत्, वा, इदम्, सर्वम्, अन्नम्, च, एव, अन्नादः, च, सोमः, एव, अन्नम्, अन्तिः, अन्नादः, सा, एवा,

ब्रह्मगाः, अतिसृष्टिः, यत्,श्रेयसः, देवान्, अस्जत, अथ, यत्, मत्यः, सन्, अमृतान्, अस् जत, तस्मात्, अतिसृष्टिः, अतिसृष्टगाम्, ह, श्रस्य, एतस्याम्, भत्रति, यः, एवम्, देद ॥ पदार्थाः अन्वयः श्चन्वयः पदार्थाः

अथ इति=इसके पीचे

सः≔वह प्रजापति

श्चभ्यमन्धत्≕मंथन करता भवा

+ तदा=तब

मुखात् च=मुखरूप

योनेः=योनि यानी निकलने की जगह से

+ च=श्रोर

हस्ताभ्याम्=हस्तरूप योनि यानी

निकलनेकी जगह से

श्राग्निम्=श्रीग्नको

भ्रसृजत=उत्पत्न करता भया

तस्मात्=इसिवये

एतत्त्≔यह

उभयम् { दोनों यानी मुख द्यान्तरतः= { श्रीर हाथ का श्रभ्यंतरी भाग

आसामिकम्=रोम रहित है

हि=क्योंकि

थोनिः≔धाग के उत्पत्ति का

स्थान

भ्रान्तरतः=भीतरसे

मलोमका=बोम रहित होता है तत्=इसी कारण कोई

कोई

+ याक्षिकाः=याज्ञिक

यत्=जो

इदम्=यह

आडुः≔कहते हैं कि

श्रमुम्=इस एकैकम्=एक एक देव को

यज=यजन करो

ते=वे

न=नहीं

विजानन्ति=जानते हैं कि

एतस्य एव=इसी प्रजापित की

सा=वह

चिस्रि := अग्न्यादि देवस् हि है

उ≕श्रोर

सर्वे≕ये सब

देखाः=अम्म्यादि देवता

एषः=यही प्रजापति है **अध=श्र**ीर

यत्=जो

किंच=कुष इदम्=यह

आर्द्रम्=ाीखी वस्तु है वानी

मनादि है

तत्=उसको

रेतसः=अपने वीर्य से

+ सः≔वह

श्रस्जत=पैदा करता भवा

उ=मीर

तत्=वही

स्रोमः≍सोम है च=ग्रीर यावत्≕िजतना त्रन्नम्=^{त्रन} है च=ग्रौर श्रक्तादः=ग्रज्ञ काभोक्राहे प्तावत्≃उतनाही इदम् सर्वम्=यह सब जगत् है श्चनम् एव≃श्रन्नही सोमः=सोम है च=ग्रीर श्रुगिनः=श्रगिन श्रन्नादः=श्रन्नका मोक्रा है सा=वही

> **एषा**=यह ब्रह्मणः=प्रजापति की

श्रतिसृष्टिः=श्रेष्ठ सृष्टि है

यत्=जो

देवान=देवों को

श्रेय**सः**=श्रेष्ठ

श्चामुजत=वह उत्पन्न करता भया

भावार्थ । हे सौम्य ! हे प्रियदर्शन ! इसके पीछे जब वह प्रजापति अस्नि को मंथन करता भया तब उसके मुख झ्रौर हाथरूप योनि से झ्राग्न उत्पन्न होता भया, ख्रौर चूंकि झग्नि के निकत्तने का स्थान जोमरहित हैं इसिलिये यह मुख झीर हाथ जहां से झिन्नि निकला है रोमरहित है, आरे जो कोई याहिक ऐसा कहते हैं कि एक एक देवताकी पृथक् पृथक् पूजन करो तो वह ठीक नहीं कहते हैं, शायद वह नहीं जानते हैं कि इसी प्रजापति के वे द्यग्नि आपादि देव सृष्टि हैं, आपीर यह सब द्रारित इसदि देवता प्रजापतिरूपही हैं, क्रीर जो कुद्ध ये गीली वस्तु

अथ≕धीर यत्=जिस कारग प्रजापतिः=प्रजापति मर्त्यः सन्=मरग्धमीं होता हुग्राभी

श्चमृतान्=ग्रजर ग्रमर देवोंको श्रसृजत=पैदा करता भवा तस्मात्=तिसी कारण श्रतिसृष्टिः=देवों की सृष्टि प्रजा-पति से श्रतिश्रेष्ट है

ग्रतः=इसविये यः≕नो उपासक एवम्≕इस प्रकार चेद=जानता है सः=वह

श्रस्य≔इस प्रजापति की एतस्याम्=इस श्रतिसृष्ट्याम्=बतिसृष्टि में + स्नष्टा=सृष्टिकतां भवति=होता है

देखने में आती है उस सबको प्रजापित ने अपने वीर्य से पैदा किया
है, और ओ अन्न है वही सोम है, और जितना अन्न है और अन्न
का भोक्ता है उतनाही यह सब जगत् है, हे सीम्य! वास्तव में अन्न
ही सोम है, और अग्नि ही अन्नका भोक्ता है, और जिस कारण
प्रजापित मरणाधर्मी होता हुआ भी अन्नर अमर देवताओं को पैदा
किया है तिसी कारण देवों की सृष्टि प्रजापितकी सृष्टि से अतिश्रेष्ठ
है, इसिलये जो उपासक प्रजापित की अतिसृष्टि में इस प्रकार जानता
है वह प्रजापितकी सृष्टि में सृष्टिकर्त्ता होता है।। है।।

मन्त्रः ७

तद्धेदन्तर्श्वन्याक्रुतमासीत्तन्नामरूपाभ्यामेव न्याक्रियतासीनामायमिदं रूप इति तदिदमप्येतिर्द्दं नामरूपाभ्यामेव न्याक्रियतेसी
नामायमिदं रूप इति स एप इह प्रविष्टः श्रानखाग्रेभ्यो यथा क्षुरः
धुरधानेविहतः स्याद्विश्वम्मरो वा विश्वम्भरकुलाये तन्न पश्यन्ति
श्रक्कस्तो हि स पाणनेव पाणो भवति वदन्वाक्पश्यंश्रक्षुः शृगुवन् श्रोत्रं मन्वानो मनस्तान्यस्यैतानि कर्मनामान्येव स योत एकैकमुपास्ते न स वेदाक्रुत्स्नो ह्येपोत एकैकेन भवत्यात्मेत्येवोपासीतात्र
ह्येते सर्व एकं भवन्ति तदेतत्यदनीयमस्य सर्वस्य यदयमात्मानेन
ह्येतत्सर्व वेद यथा ह वै पदेनानुविन्देदेवं कीर्त्ति श्लोकं विन्दते स
य एवं वेद ॥

पदच्छेदः ।

तत्, ह, इदम्, तर्हि, झन्याकृतम्, झासीत्, तत्, नामरूपाभ्याम्, एव, न्याक्रियत, झसीनामा, झयम्, इदम्, रूपः, इति, तत्, इदम्, श्रिपं, एतर्हि, नामरूपाभ्याम्, एव, न्याक्रियते, झसौनामा, झयम्, इदम्, रूपः, इति, सः, एवः, इह, प्रविष्टः, झा, नखाप्रभ्यः, यथा, क्षुरः, क्षुरधाने, झवहितः, स्यात्, विरवंभरः, वा, विरवंभरकुलाये, तम्, न, परयन्ति, झक्रस्तः, हि, सः, प्राग्नन्, एव, प्राग्नः, भवति, वदन्, वाक्, परयन्,

चक्षुः, श्वराप्तवन् , श्रोत्रम् , मन्वानः, मनः, तानि, श्ररय, एतानि, कर्म-नामानि, एव, सः, यः, झतः, एकैकम्, अपास्ते, न, सः, वेद, झक्र-त्स्नः, हि, एषः, झतः, एकैकेन, भवति, झात्मा, इति, एव, उपासीत, अत्रत्न, हि, एते, सर्वे, एकम्, भवन्ति, तन्, एतत्, पदनीयम्, अस्य, सर्वस्य, यत्, श्रायम्, श्रातमा, श्रानेन, हि, एतत्, सर्वम्, वेद, यथा, ह, वै, पदेन, श्रानुविन्देत्, एवम्, कीर्त्तिम्, रस्नोकम्, विन्दते, सः, यः, एवम्, वेद् ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः ।

तत् ह≔वही इदम्≕यह जगत् तर्हि=सृष्टि के प्रादि में अव्यक्तिम्=अव्यक्ति यानी नाम

रूपकी उपाधिसे रहित श्रासीत्=था

तत् पव=सोई

नामरूपाभ्याम्=नाम रूप करके व्याक्रियत=व्याकृत यानी नामरूप

वासा होता भया

+च पुनः≔भौर फिर श्रयम्=वही जीवात्मा

असीनामा=उस नामवाला

च=ग्रीर

इदंक्रपः≔इस रूपवाला

इति=ऐसे होकर

व्याक्रियते=विकृति को प्राप्त होता

भया

तत्=तिसी कारख इदम्=इस जगत् में

पतर्हि≔त्रब

अपि=भी

श्रन्वयः

पदार्थाः

पव≕श्रवश्य

नामरूपाभ्याम्=नाम रूप करके अयम्=यह जीवात्मा

असौनामा)

+व्याकियते=विकार को प्राप्त

होता है

+ च=भौर

सः=वही

प्षः=यह जीवात्मा

इह=इस देह में

श्रानखाग्रेभ्यः≔नख से लेकर शिर तक

प्रविष्टः=प्रविष्ट है

यथा=जैसे

भूरः=ब्रुरा

ध्ररधाने=नाई की पेटी में

श्रवहितः=प्रविष्ट

स्य।त्≕रहता है

वा≔प्रथवा

+ यथा≃जैसे

विश्वस्भर:=मनि

विश्वम्भर- } =काष्टादिक में + अवहितः=प्रविष्ट स्यात्=रहती है परन्त ती=परन्तु उस खुरे श्रीर श्राग्निको + जनाः=बोग न=नहीं पश्यन्ति=देखते हैं सः=वह जीवात्मा हि=निश्चय करके श्रकृत्स्नः=अपूर्ण है + यः≕जो + एकाङ्गे≕एक शक्त में + बसति≔वास करता है + सः=वह जीवात्मा + यदा≔जब प्रात्त्व्य=प्रात्यकाही व्यापार करनेवाला + भवति≔होता है + तदा≔तव प्रागुः≔प्राग के नाम=नाम से भवति= रुडबाता है + यदा=जब वद्न्=बोबनेवाबा + भवति≔होता है + तदा≔तव वाक्=बाक्के नाम से + प्रसिद्धः=प्राप्तिद + भवति=होता है + यदा≃जब

पश्यन्=द्रष्टा भवति=होता है + तदा=तव स्रशुः≔चक्षु के नाम से + प्रसिद्धः≔प्रसिद्ध + भवति≔होता है + यद्ग=जब श्युग्वन्=सुनने वाता + भवति=होता है + तदा≔तव श्रोत्रम्≕श्रोत्र के नाम से + प्रसिद्धः=प्रसिद्ध + भवति=होता है + यदा=जब मन्वानः=मनन करनेवाला + भवाति=होता है + तदा≔तव मनः=मनके नाम से + प्रसिद्धः=प्रसिद्ध + भवति=होता है **ग्रस्य=**इसके तानि≔वे एतानि=वे भेनामानिएव=सब कर्मजन्य नाम हैं अतः=इस कारण सः=वह यः=जो एकैकम्=एक शंग का उपास्ते=बात्मा सममकर उपासना करता है सः=वह पूर्व प्रात्माको न चै⇒नहीं

वेद्≕नानता हैः हि≔क्पोंकि ग्रतः≔इसक्रियेः एषः=यहः जीवात्मा एकैकेन=एक एक शंग-करके श्रकत्स्लः=अपूर्वही रहता है + सर्वम्≔सक्को श्चात्मा=बात्मा + मत्वा इति=मान करके एव≕डी उपासीत=डपासना करे हि=क्योंकि श्रत्र=इसी में प्ते≕ये सर्वे≕सब एकम्=एक भवन्ति=होजाते हैं तत्न्=तिसी कारण एतत्=यहः जीवास्मा पद्नीयम्=खोजने योग्यःहै यत्≕िनस कारण श्रस्य=इस सर्वस्य=सब वस्तु में श्रयम्≔षह

श्चारमा=त्रारमा + विद्यमानः=विषमान है + ततः=तिसी कारश झनेन हि=इसी भारमा करके डी + सः=वह उपासक पतत्≔इस सर्वम्≕सबको वेद्⇒जान क्षेता है यथा=जिसप्रकार पदेन=पाद के चिह्न करके निस्सन्देष्ठ **श्रजुविन्देत्**=खोयेडुये पशुको पुरुष तबाश कर बेता है प्वम्=तिसी प्रकार यः≕जो कोई **श्चातमानम्=घात्मा** को वेद=लोज करलेता है सः=बह कीर्तिम्=कीर्ति + च=भौर श्लोकम्=यशको **ह≔षवर** य विन्दते=पाप्त होजाता है

भावार्थ ।

हे सीम्य ! यह जगत् जो दिखाई दे रहा है सृष्टिके झादि में झज्या-कृत था, यानी नामरूप से रहित था, पीछे से यही जगत् व्याकृत यानी नामरूपवाला होता भया, झौर फिर उसी नामरूपवाले विकृति में जीवारमा प्रवेश करता भया, झौर तिसी कारणा यही विकृतिवाला यानी नामरूपवाला कहलाता है, सोई झारमा इस देहमें नखसे शिख

तक प्रविष्ट है, जैसे द्वरा नाई की पेटी में प्रविष्ट रहता है, अथवा जैसे अपिन काष्ट में जीन रहता है, और उस हुरे और अपिन की कोई नहीं देखता है तद्दत्, जो जीवात्मा एक आंग में वास करता है वह अपूर्ण होता है, ऐसा जीवात्मा जब प्रारा का व्यापार करने वाला होता है तब प्राग्ता के नाम से पुकारा जाता है, जब बौक्तने का व्यापार करनेवाला होता है तब वाक्य के नाम से प्रकारा जाता है, जब द्रष्टा होता है तब चक्षके नाम से प्रसिद्ध होता है, जब श्रवण च्यापार करनेवाला होता है तब श्रोत्र नामसे प्रसिद्ध होता है, जब मनन करनेवाला होता है तब मन के नामसे प्रसिद्ध होता है, यह जीवात्मा के उपाधिजन्य नाम हैं, इस कारणा जो पुरुष जीवात्मा के एक अंगकी उपासना करता है वह पूर्ण आतमा की नहीं प्राप्त होता है, क्यों कि यह जीवात्मा एक अंग करके अपूर्ण ही रहता है, इस लिय उपासक को चाहिये कि सब श्रंगोंको एक श्रात्मा मानकर उपा-सना करे, क्योंकि उसी भात्मा में ये सब एक होते हैं, ऐसा यह जीवात्मा खोजने योग्य है, श्रौर जिस कारण यह जीवात्मा सब वस्तुश्रों में विद्यमान है तिसी कारण सबको वह उपासक जानलेता है, और जिसप्रकार पादके ख़रके चिह्न करके खोये हुये पशुको पुरुष तलाश करलेता है उसी प्रकार जो कोई अपत्मा को खोज करलेता है वह कीर्त्ति और यशको प्राप्त होता है ॥ ७ ॥

मन्त्रः ८

तदेतत्त्रेयो पुत्रात्मेयो वित्तात्मेयोन्यस्मात्सर्वस्मादन्तरतरं यदय-मात्मा स योन्यमात्मनः प्रियं द्वुवाणं व्यात्मियं रोत्स्यतीश्वरो ह तथैव स्पादात्मानमेव प्रियमुपासीत स य आत्मानमेव प्रियमुपास्ते न हास्यिपयंप्रमायुकं भवति ॥

पदच्छेदः ।

तत, एतत्, प्रेयः, पुत्रात्, प्रेयः, वित्तात्, प्रेयः, अन्यस्मात्, सर्व-

स्मात्, अन्तरतरम्, यत्, अयम्, आत्मा, सः, यः, अन्यम्, आत्मनः, प्रियम्, ब्रुवार्ग्णम्, ब्रूयात्, प्रियम्, रोत्स्यति, इति, ईश्वरः, ह, तथा, एव, स्यात्, आत्मानम्, एव, प्रियम्, उपासीत, सः, यः, आत्मानम्, एव, प्रियम्, उपास्ते, न, ह, अस्य, प्रियम्, प्रमायुकम्, भवति ॥

भ्रन्वयः

ग्रन्वयः

पदार्थाः

पदार्थाः

तत्=नही

पतत्=यह आत्मा
पुत्रात्=पुत्र से

प्रेयः=प्यारा है
वित्तात्=धन से भी

प्रेयः=प्यारा है

यत्=जो

श्रयम्=यह

श्रात्मा=श्रात्मा है

+ तत्=वही

श्चश्यस्मात्=श्रोर सर्वस्मात्=सब वस्तुश्रों से भी प्रयः=प्यारा है

+ हि=क्योंकि श्रन्तरतरम्=चति निकट है

सः=सो यः=जो कोई बात्मज्ञानी श्राम्यम्=बपने से पृथक् पुत्रा-दिक को

श्चात्मनः=भपने बात्मा से प्रियम्=प्रियतम श्रुवाणम्=माननेवाचे से श्रुयात्=कदे कि + ते⊂तेरा प्रियम्=पुत्रादि पदार्थ रोस्स्यति=नप्ट होजायगा + सः≔वह श्रात्मज्ञानी तो ह=श्रवश्य

तथा एव=ऐसा कहने को ईश्वरः=समर्थ स्यात्=है श्वतः=इसक्षिये

प्रियम् } =श्चपने त्रिय श्चात्माकी श्चात्मानम्

एव=ही
उपासीत=डपासना करे
सः=वहै
यः=जो
प्रियम्=प्रिय
आत्मानम्=मात्माकी
उपास्त=डपासना करता है
अस्य ह=डसका ही
प्रियम्=प्रिय पुत्रादिक

प्रमायुकम्=मरखवासा एव म=कभी नहीं भवति=होता है

भावार्थ ।

हे सौम्य । यह अन्त:करगाविशिष्ट चैतन्य आत्मा सत्र वस्तुओं

से प्यारा है, यह पुत्र से प्यारा है, धन से प्यारा है, क्योंकि आति निकट है, और जो कोई आत्मज्ञानी अनात्मज्ञानी से जो अपने से अपने पुत्रादिकों को प्रिय मानता है कहे कि तेरा प्रिय पुत्रादि पदार्थ नष्ट होजायगा तो उस आत्मज्ञानी का ऐसा कहा हुआ सन् होता है इसिलये पुरुष अपने आत्मा की ही सदा उपासना करता रहे, जो अपने प्रिय आत्मा की उपासना करता है उसका प्रिय पुत्रादिक मरगा भर्मवाला कभी नहीं होता है।।
।।

मन्त्रः ६

तदाहुर्यद् ब्रह्मविद्यया सर्वे भविष्यन्तो मनुष्या मन्यन्ते किमु तद्ब्रह्मावेद्यस्मात्तत्तर्वमभवदिति ॥

पदच्छेदः ।

तत्, आहुः, यत्, ब्रह्मविद्यया, सर्वम्, भविष्यन्तः, मनुष्याः, मन्यन्ते, किसु, तत्, ब्रह्म, अयेत्, यस्मात्, तत्, सर्वम्, अभ-चत्, इति ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

तत्=यहां श्राहु:=कोई ज्ञानी कहते हैं कि ब्रह्मविद्यया=ज्ञह्मविद्या करके ही सर्वम्=सब वस्तुको भविद्यन्तः=हम प्राप्त होंगे स्थवा तह्म होंगे + इति=इस प्रकार मजुष्याः=मनुष्य यत्=जो

भन्यन्ते=मानते हैं तो

किमु=क्या संभव है कि + सः≔षह

सः=वह तत्=उस

ब्रह्म≔ब्रब को इति≕ऐसा

श्रवेत्=जानसके यस्मात्=जिस ज्ञान से

यस्मात्=ागलः तत्=यह

सर्वम्=सब जगत् + ब्रह्म=ब्रह्मरूप

अभवत्=होताभया है

भाषाथे।

हे सौम्य ! यहां कोई ज्ञानी ऐसा कहते हैं कि ब्रह्मविद्या करके ही सब बस्त को हम प्राप्त होंगे अध्यवा हम इन के तहूप होजायेंगे इस प्रकार जो मनुष्य मानते हैं तो क्या संभव है कि वह उस ब्रह्मकी ऐसा जानसके जिससे यह सब जगत् ब्रह्मरूप होता भया है ॥ ६ ॥

मन्त्रः १०

ब्रह्म वाइदमय आसीत्तदात्मानमेवावेत् । अहं ब्रह्मास्मीति त-स्मात्तत्तर्वमभवत्तवो यो देवानां प्रत्यबुध्यत स एव तदभवत्त्यर्थीणां तथा मनुष्याणां तद्धैतत्पश्यन्तृशिर्वामदेवः प्रतिपेदेऽहं मनुरमवं सूर्य-श्वेति । तदिदमप्येतिहं य एवं वेदाहं ब्रह्मास्मीति स इदं सर्वे भवति तस्य ह न देवाश्च नाभूत्या ईशते आत्मा श्वेषां स भवति अथ योन्यां देवतामुपास्तेन्योसावन्योहमस्भीति न स वेद यथा पशुरेवं स देवानाम् यथा ह वै बहवः पश्यो मनुष्यं सुक्रच्युरेवमेकैकः पुरुषो देवान्मुनक्त्येकस्मिन्नेव पशावादीयमानेऽपियं भवति किमु बहुपु तस्मादेषां तन्न थियं यदेतन्मनुष्या विद्याः ॥

पदच्छेदः ।

ब्रह्म, बै, इत्म, अप्रे, आसित्, तत्, आसानाम्, एव, अवेत्, आहम्, प्रह्म, अहम्, हिन, तस्मात्, तत्, सर्वम्, अभवत्, तत्, यः, वेवानाम्, प्रत्यवुध्यतं, सः, एव, उत्, अभवत्, तथा, अष्ट्रविणाम्, तथा, मनुष्याणाम्, तत्, ह, एतत्, पर्यम्, अष्ट्रिः, वामदेवः, प्रति-पेने, आहम्, मनुः, अभवम्, सूर्यः, च, इति, तत्, इदम्, आपि, एतर्हि, यः, एवम्, वेद, आहम्, श्रद्धाः, असिम, इति, सः, इदम्, सर्वम्, भवति, तथ्य, ह, न, देवाः, च, न, अभ्रत्ये, ईशते, आत्मा, हि, एषाम्, सः, भवति, अथ, यः, अन्याम्, देदताम, उपास्ते, अन्यः, असी, अन्यः, आहम्, इति, न, सः, वेद, यथा, प्रष्टुः, एवम्, सः, देवानाम्, यथा, ह, वे, बह्वः, प्रावः, मनुष्यम्, भुक्क्युः, एवम्, एकेकः, पुरुषः, देवान्, भुनक्ति, एकस्मिन्, एव, प्रशो, आदीयमाने, आप्रियम्, भवति, किन्नु, बहुषु, तस्मात्, एषाम्, तत्, न, प्रियम्, यत्, एतन्, मनुष्याः, विद्यः ॥

श्रक्षयः

पदार्थाः

श्रन्वयः

षदार्थाः

इद्म्य≡यह एक ब्रह्म=ब्रह्म वै=ध अधे=सृष्टि के भादि में श्चासीत्=था तत् एव=सोई आत्मानम्=अपने को **श्र**हम्=भें ब्रह्म=मध श्राह्म=हं इति≕ऐसा श्चवेत्=जानता भया तस्मात्=इसिबये तत्=वह ब्रह्म सर्वम्=सब रूप यानी व्यापक श्रभवत्=होताभवा तत्=तिसी कारख देवानाम्=देवताश्रीं में ं तथा=मथवा त्रमुषीलाम्=ऋवियों में तथा मनु-)=अथवा सनुष्यें में ज्यायाम् य:=जो यः=जो प्रत्यबुध्यत≔ज्ञानवान् हुये **सः ए**व=यही वहां

> तत्≔वह बद्य श्रभ**यत्**=होते भये

> > पतस्≔इस बद्धज्ञान को

तत् ह=उसी ही

पश्यम्=जानता हुआ वामदेवः=वामदेव **भृषिः=ऋषिने** ध्याद≕कहा कि श्रहम्='भैंही **मनुः**≔मनु श्रभवम्≔श्रोता भया च≔धौर + ऋहम्=मैंही सूर्यः=सूर्य + श्रभवम्=होतामवा " इति=ऐसे प्रतिपदे=ज्ञानको वह प्राप्त हुश्रा तत्=तिसी कारण यः≕जो एतर्हि=श्राजकत श्रापि=भी तत्=डस इदम्≔इस प्रसिद्ध ज्ञानके। वेद्=जानता है सः=वह भी इति≕ऐसा +श्राह=कहता है कि श्रहम्≃''में ब्रह्म=त्रहा श्रस्मि=हूं" + च=श्रीर सः=वही इदम्=यह

सर्वम्=सम्रह्य

भवति=होता है तस्य=उस ब्रह्मवेता के श्चभूत्यै=त्रकल्यायार्थ + कश्चित्=कोई भी देवाः=देवता न हन≕कभी नहीं **ईश**ते=समर्थ होते हैं हि=क्योंकि सः=वह ज्ञानी एषाम्=उन देवतायों का श्चात्मा=श्रात्मा भवति=होता है श्रथ≕भौर श्चलौ=यह अन्यः=श्रीर है + श्रहम्≕में **अन्यःश्र**स्मि=श्रौर हूं इति≔इस प्रकार 🛨 श्चात्या=जान करके यः=जो **श्रन्याम्**=श्रन्य देवताम्=देवताश्रों की उपास्ते=उपासना करता है सः=वह **न**=नहीं वेद्≕जानता है कि सः≔वह ग्रज्ञानी एव≕निश्रय करके **देवानाम् पशुः**≔देवताश्रों का पशु है यथा=जैसे बह्यः=यहुत पश्चः=पशु

ह वै=निश्चय करके मनुष्यम्=मनुष्यको भुञ्ज्युः≔पोषण करते हैं एवम्=उसी प्रकार एकैकः≔एक एक पुरुषः=श्रज्ञानी पुरुष देवान्=देवताश्रां को भुनक्ति=पोषण करता है पकस्मिन्)

_किसी एक पशुके

पव पशी }= व्यानिये जाने पर आदीयमाने श्रप्रियम्=दुःख + स्वामिनः=उस के स्वामी को भवति=होता है बहुषु=बहुतरे पशुके चुरा

जाने पर

किम्+तस्य दशो भवि- >=क्या उसकी दशाहे।गी

इदम् (_यही श्रनुभव करने । श्रनुभवाहम् (योग्य हे तस्मात्=इसलिये एषाम्≔इन देवतान्नीं को तत्≕त्रवज्ञान न=नहीं त्रियम्=त्रिय बगता है + श्रतः=इस ख्यावा से कि यत्≕शायद + ब्रह्मज्ञानेन=ब्रह्मज्ञान करके मनुष्याः=मनुष्य प्तत्≖इस बद्यको विदुः≔कहीं जानजायँ

भावार्थ ।

हे सौम्य ! सृष्टि के आदि में केवल एक ब्रह्मही था, वही ब्रह्म जब आपने को जानता भया कि मैं ब्रह्म हूं, तब वही सबरूप यानी व्यापक होता भया, तिसी कारण देवताओं में, भाषियों में, मनुष्यों में, जो जो ज्ञानवान हुये वेही वेही, ब्रह्मस्वरूप होते भये, तिसी ब्रह्मको जान करके वामदेव ऋषिभी ब्रह्मरूप होता भया, श्रीर • कहने लगा कि सूर्य मैंही हूं,मनु मैही हूं, भौर तिसीकारण आजकल के लोग जो इस प्रसिद्ध ब्रह्मज्ञान को जानते हैं वह भी ऐसा कहते हैं कि मैं ब्रह्म हुं, धीर वही सबरूप होते भी हैं; ऐसे ब्रह्मवेत्ता को कोई देवता एक बाल भी टेडा नहीं करसका है. और जो पुरुष यह जानता है कि मैं और हूं और देवता और हैं. और फिर उनकी उपासना करता है वह अज्ञानी निश्चय करके देवताओं का पशु है, और जैसे पशु मनुष्योंका पोषगा करता है. उसी प्रकार एक एक आज्ञानी देवताओं का पोषणा करता है, जब एक पशुके चुराजाने पर उसके स्वामी को दु:ख होता है तो यदि उसके बहुत से पग्र चुरा जिये जायँ तो उसके दःख की क्या दशा होगी ? हे सौम्य ! तम अनुभव करसके हो, और यही कारता है कि देवताओं को ब्रह्मज्ञान प्रिय नहीं लगता है, और वे इस ख्याल से उरा करते हैं कि कहीं मेरे सेवक ब्रह्मज्ञान करके ब्रह्म को न प्राप्त होजायँ झौर मेरी सेवा न छोड़दें ॥ १०॥

मन्त्रः ११

ब्रह्म वाइद्मम्र श्रासीदेकमेव तदेकं सन्न व्यभवत् तच्छ्रेयोरूप-मत्यम् जत क्षत्रं यान्येतानि देवत्रा क्षत्राणीन्द्रो वरुणः सोमो रुदः पर्जन्यो यमो मृत्युरीशान इति । तस्मात्क्षत्रात्परं नास्ति तस्माद्-ब्राह्मणः क्षत्रियमधस्तादुपास्ते राजसूये क्षत्र एव तद्यशो द्याति सैषा क्षत्रस्य योनिर्यद्ब्रह्म तस्माद्यद्यि राजा परमतां गच्छति ब्रह्मैवा- न्तत उपनिश्रयति स्वां योनि य उ एनं हिनस्ति स्वां स योनिमृच्छति स पापीयान् भवति यथा श्रेयांसं हिंसित्वा ॥

पदच्छेदः ।

श्रक्ष, वै, इदम, अभे, आसीत्, एकम्, एव, तत्, एकम्, सत्, न, न्यभवत्, तत्, श्रेयोरूपम्, अत्यस् जत, क्षत्रम्, यानि, एतानि, देवत्रा, क्षत्रािण्, इन्द्रः, वक्ष्यः, सोमः, रुद्रः, पर्जन्यः, यमः, मृत्युः, ईशानः, इति, तस्मात्, क्षत्रात्, परम, न, अस्ति, तस्मात्, श्राक्षाः, क्षत्रियम्, अवस्तात्, उपास्ते, राजसूये, क्षत्रे, एव, तत्, यशः, दधाति, सा, एषा, क्षत्रस्य, योनिः, यत्, श्रद्धा, तस्मात्, यदि, अपि, राजा, परमताम्, गच्छति, श्रद्धा, एव, अन्ततः, उपनिश्रयति, स्वाम्, योनिम्, यः, उ, एनम, हिनस्ति, स्वाम्, सः, योनिम्, अम्चति, यथा, श्रेयांसम्, हिंसित्वा ॥

अन्वयः

पदार्थाः | अन्वयः

पदार्थाः

वे≕धवश्य इदम् एकम्=यह एक ब्रह्म एव≔ बाग्रयवर्ण श्राग्रे=सष्टि के भादि में श्रासीत्=था तत्=वही ब्राह्मणवर्ष पकम्=एक सत्=होने के कारण न व्यभवत्=विशेष वृद्धिको नहीं प्राप्त हुवा तत्=तव + तत्त्=उस बाद्ययवर्णने . श्रयोद्धपम्=प्रशंसनीय क्षत्रम्=क्षत्रिय जातिको श्रात्यसृजतः=उत्पत्र किया यानि=जिन

पतानि≔इन देवत्रा=देव क्षत्राणि=क्षत्रियों में **इ**न्द्रः≔गरुड् बरुगुः=वरुग सोमः=चन्द्रमा रुद्धः=रुद् पर्जन्यः≕इन्द्र यमः=यमराज मृत्युः=मृत्यु ईशानः≔वायु इति=करके प्रसिद्ध हुये हैं तस्मात्=इसलिये . क्षत्रात्=क्षत्रिय से परम्=भेष्ठ न अस्ति≔कोई वर्ण नहीं है

तस्मात्=इसी कारव राजसूये=राजसूय यत्र में ब्राह्मगुः=ब्राद्यग श्राधस्तात्+ सन्=क्षत्रिय से नीचे बैठा **अत्रियम्=क्ष**त्रिय की उपास्ते≕सेवा करता है + च≂म्रोर क्षत्रे=क्षत्रिय विषे एव=ही तत् यशः=उस यानी भपने वशको डधाति=स्थापित करता है यत्≕जो ब्रह्म≕ब्राह्मण है सा=धही एषा=यह **क्षत्रस्य=क्षत्रिय** के योनिः=उत्पत्ति का स्थान है तस्मात्=तिसी कारण यदिश्रपि=यद्यपि राजा≔राजा + रःजस्ये=राजस्य यज्ञमें परमताम्=श्रेष्ठ परवी को गच्छति=प्राप्त होता है

+ परम्तु=परन्तु श्चन्ततः=यज्ञ के घन्तमें स्वाम्≃भपने योनिम्=डत्पत्तिके स्थान यानी ब्रह्म एव≕अश्वय के निकट उपनिश्रयति=बैठता है उ=श्रोर यः=जो क्षत्रिय एनम्=बाह्ययको हिनस्ति=तिरस्कृत करता है सः≔वह स्वाम्=श्रपने योनिम्=उत्पत्तिके स्थान की श्चाच्छति=नाश करता है + च=भीर सः≔वह + तथा=वैसेही पापीयान्=मति पातकी भवति=होता है यथा=जैसे कोई श्रेयांसम्=भपने से बड़े का हिंसित्वा=तिरस्कार करके + पापतरः≔पातकी

+ भवति=होता है

भावार्थ ।

हे सौन्य ! सृष्टि के आदिमें केवल एक ब्राह्मण वर्णाथा, वह ब्राह्मण वर्णा एक होने के कारण विशेष बृद्धिको नहीं प्राप्त हुआ, यानी आपनी रक्षा नहीं करसका इसलिये उस ब्राह्मण वर्णाने एक प्रशंसनीय क्षत्रिय जातिको उत्पन्न किया, और उन्हीं क्षत्रियों में बड़े वह महान पुरुष कैसे गरुड़, वरुण, चन्द्रमा, रुद्र, इन्द्र, मृत्यु, वायु, यमराज आदि के नाम से विख्यात हैं, इसलिये क्षत्रिय जातिसे आरे कोई श्रेष्ठ नहीं है, आरे यही कारणहें कि राजस्य्यक्ष में ब्राह्मण जो क्षत्रियों के दर्शिक कारण है क्षत्रिय राजा के नीचे वैठता है, और उसकी सेवा करता है, और अत्रियविषे वह ब्राह्मण अपने यशको स्थापित करता है, ब्राह्मण ही क्षत्रिय के उत्पत्ति का स्थान है, इसी कारण यद्यपि राजा राजस्य यक्ष में श्रेष्ठ पदवी को प्राप्त होता है परन्तु यक्षके समाप्त होने पर वह ब्राह्मण् के निकटही बैठता है, और जो क्षत्रिय ब्राह्मण्को तिरस्कार करता है, वह अपने उत्पत्तिके स्थान को नाश करता है, और वह वैसे ही अतिपातकी समका जाता है, जैसे कोई अपने से बड़े को तिरस्कार करके पातकी होता है।। ११॥

मन्त्रः १२

स नैव व्यभवत्स विशमछजत यान्येतानि देवजातानि गराश भारत्यायन्ते वसवो रुद्रा भादित्या विश्वेदेवा मस्त इति ॥

पदच्छेदः ।

सः, न, एव, व्यभवत्, सः, विशम्, ऋसूजत, यानि, एतानि, देवजातानि, गगाशः, श्राख्यायन्ते, वसवः, रुद्राः, श्रादित्याः, विश्वे-देवाः, मरुतः, इति ॥

पदार्थाः श्रानेष्ठयः व्यक्त्वयः + यदा≃जव श्चासुजत=उत्पन्न करता भवा यानि≕जो सः≃वह श्राद्यग + कर्मेशे=द्रव्य उपार्जन के एतानि≔ये स्त्रिंये देवजातानि⇒रेव बैरय न एव≔नहीं गणशः=गव ब्यभवत्≕समर्थ हुमा + इति=करके श्चाख्यायन्ते≔कहे जाते हैं + तदा≔तब सः=वह विशम्≔वैश्यजाति को बसवः=बाठ बस

रुद्धाः≓यारह रुद्ध श्चादित्याः=गरह सूर्य विश्वेदेवाः=तेरह विश्वेदेव मरुतः=सात वायु इति } वैश्यजाति करहे +वैश्यजातिः + प्रसिद्धः } प्रसिद्ध हैं

भावार्थ ।

हे सौम्य ! जब वह ब्रह्मा (ब्राह्मण्) द्रव्य उपार्जन के करने में असमर्थ हुआ, तब वह वैश्यजाति की सृष्टिको रचता भया, हे सौम्य ! जो यह सब देवगण् कहे जाते हैं उनमें आठ वसु, ग्याग्ह रुद्र, बाग्ह सूर्य, तेग्ह विश्वेदेव, सात वायुदेव वैश्यजाति करके प्रसिद्ध हैं ॥ १२ ॥ मन्त्रः १३

स नैव व्यभवत्स शौद्रं वर्णमस्जत पूषणभिवं वे पूषेवं हीर्दं सर्वे

पुष्यति यदिदं किंच ॥

पदच्छेदः ।

सः, न, एव, व्यभवत्, सः, शौद्रम्, वर्ग्यम्, असुजत, पूषगाम्, इयम्, वै, पृषा, इयम्, हि, इदम, सर्वम, पुष्यति, यत्, इदम्, किंच ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

> + यदा=जब सः≔बह पुरुष

+ सर्वार्थम्=सब के पोषण के जिये

न एय=नहीं ब्यभचत्=समर्थ होता भया

+तदा=तब

सः=वह पृषगुम्=पोषग्र करने वासे शोद्गम्=शूद

वर्णम्=वर्णको

श्रासुजत=उत्पन्न करता भया

इयम् हि=यही शृद्धजाति वै=निश्चय करके

पूषा=पृष्टिकत्रीं है + यथा=जैसे

> इयम्=यइ पृथ्वी इदम्=उस

सर्वम्=सबको

पुष्यति=पृष्ट करती है यत्≕जो

किंच=कुछ

इदम्≔यह है यानी इस के धार्थय है

भावार्थ ।

हे सौस्य! जब वह ब्राह्मणा सब कं सेवा करने को समर्थ नहीं

भया, तब उसने पोषणा करनेवाले शूद्रवर्णाको उत्पन्न किया, यही शूद्र जाति निरचय करके सबको पुष्ट करती है जैसे यह पृथ्वी सक्को पुष्ट करती है ॥ १३ ॥

मन्त्रः १४

स नैव व्यभवत्तच्छ्रेयोरूपमत्यस्यत धर्म तदेतत्क्षत्रस्य क्षत्रं यद्धर्म-स्तस्माद्धर्मात्परं नास्त्यथो अवलीयान्वलीयांसमाशंसते धर्मेण यथा राज्ञैवं यो वे स धर्मः सत्यं वे तत्तस्मात्सत्यं बदन्तमाहुर्धर्मे वदतीति धर्मे वा वदन्तं सत्यं वदतीत्येतद्धचेत्रैतदुभयं भवति ।।

पदच्छेदः ।

सः, न, एव, व्यभवत्, तत्, श्रेयोरूपम्, झात्यसृजत, धर्मम्, तत्, एतत्, क्षत्रस्य, क्षत्रम्, यत्, धर्मः, तस्मात्, धर्मात्, परम, न, झस्ति, झथो, झवलीयान्, बलीयांसम्, झाशंसते, धर्मेण, यथा, राज्ञा, एवम्, यः, वे, सः, धर्मः, सत्यम्, वे, तत्, तस्मात्, सत्यम्, वदन्तम्, झाहुः, धर्मम्, वदति, इति, धर्मम्, वा, वदन्तम्, सत्यम्, वदति, इति, एतत्, हि, एव, एतत्, उभयम्, भवति ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

+ यदा=जब
सः≔वह ब्रह्मत्वाभिमानी
पुश्व
+वृद्धिम् कर्तुम्=वृद्धि करने में
नैव=नहीं
व्यभवत्=समर्थे हुमा
तत्=तब
श्रेयोरूपम्=करपायरूप
धर्मम्=धर्म को
अस्जत=उरप्त ह ता भया
तस्मात्=इसिबेये
यत्=जो

पतत्=यह धर्मः=धर्म है तत्=वही क्षत्रस्य=क्षत्रका

भन्न है. यानी वह शासन करनेवाले क्षत्रियों का भी शासक है

तस्मात्=तिसी कारण धर्मात्=धर्म से परम्=श्रेष्ठ नास्ति=कोई नहीं है

श्रथो=श्रीर **ग्रब**लीयान्=निर्वत **बलीयांसम्**=बलीके +जेतुम्≕जीतने को धर्मेंग=धर्म करके ही आशंसते=इच्छा करता है यथा=जैसे राझा≔राजा के साथ स्पर्द्धमानः=भगदा करनेवाला पुरुष धर्मेग्=धर्म करके ही जीयते≕जीता जाता है वै≕निश्चय करके यः≕जो सः≃वह धर्मः=धर्म है तत्=वही सत्यम्=सस्य है तस्मात्=इसीबिये

सत्यम्=सत्य वदन्तम्=बोखनेवाले को इति=ऐसा आहुः≔खोग कहते हैं कि स्नः=वह धर्मम्=धर्म की बात वदति=कहता है वा≃ग्रौग धर्मम्=धर्म के वद्न्तम्=कहने वाले को इति≕ऐसा + आहुः=कहते हैं कि + सः=वह सत्यम्=सत्य चदति=कहता है हि=स्योंकि एतत्=यहं सस्य भौर धर्म उभयम्≔दोनों एतत्=यही है यानी एकही है

भावार्थ।

हे सौन्य ! जब वह ब्राह्मणा वृद्धिक करने में ब्रासमर्थ हुआ, तब वह कल्याग्यारूप धर्म को उत्पन्न करता भया, इसिक्षिय जो कुछ यह धर्म है वह क्षत्रका क्षत्र है यानी वह शासन करनेवाको क्षत्रियों का भी शासक है, तिसी कारणा धर्म से श्रेष्ठ और कोई वस्तु नहीं है, क्यों कि इसी धर्म करके निर्वली बली के जीतने की इच्छा करता है, और जैसे राजा, चोर, डांकू, दुष्ट पुरुषों को धर्म करके जीत लेता है, वैसे ही राजा भी धर्मही करके जीता जाता है, जो धर्म है वही सत्य है अरे यही कारणा है कि सत्य बोलनेवाको को लोग कहते हैं कि वह धर्म की बात कहता है, और धर्म के कहनेवाले को लोग कहते हैं कि वह सत्य कहता है, क्यों का स्तर्भ दोनों एकही हैं।। १४ ॥

मन्त्रः १५

तदेतद्ब्रह्म क्षत्रं विर् शूद्रस्तदिग्ननेव देवेषु ब्रह्माभवद्ब्राह्मणो मनुष्येषु क्षत्रियेण क्षत्रियो वैश्येन वैश्यः शूद्रेण शूद्रस्तस्माद्ग्नावेव देवेषु लोकिमिच्छन्ते ब्राह्मणो मनुष्येष्वेताभ्यां हि रूपाभ्यां ब्रह्माभवद्य यो ह वा श्रस्माल्लोकात्स्वं लोकमदृष्ट्या भैति स एनमिविदितो न भुनिक्र यथा वेदो वाननुक्रोन्यद्वा कर्माकृतं यदिह वा श्रप्यनेवंविन्महत्युष्यं कर्म करोति तद्धास्यान्ततः क्षीयत एवात्मानमेव लोकमुपासीत स य श्रात्मानमेव लोकमुपासीत स य श्रात्मानमेव तोकमुपासीत स य श्रात्मानमेव तोकमुपासीन न हास्य कर्म क्षीयते श्रस्माद्धयेवात्मनो यद्यत्कामयते तत्तत्स्रजते ॥

पदच्छेदः ।

तत्, एतत्, ब्रह्म, क्षत्रम्, विट्, शूरः, तत्, अग्निना, एव, देवेषु, ब्रह्म, अभवत्, ब्राह्मएः, मनुष्येषु, क्षत्रियेण, क्षत्रियः, वैश्येन, वैश्यः, शृद्रेण्, शृद्रः, तस्मात्, अग्नौ, एव, वेदेषु, लोकम्, इच्छन्ते, ब्राह्मणः, मनुष्येषु, एताभ्याम्, हि, रूपाभ्याम्, ब्रह्म, अभवत्, अथ, यः, ह, वै, अस्मात्, लोकात्, स्वम्, लोकम्, अट्टृष्टा, प्रेति, सः, एनम्, अविद्तः, न, अनिक्त, यथा, वेदः, वा, अननुक्तः, अन्यत् , वा, कर्म, अक्तम्, यत्, इह, वा, अपि, अनेवंवित्, महत्, पुण्यम्, कर्म, करोति, तत्, ह, अस्य, अन्ततः, श्रीयते, एव, आत्मानम्, एव, लोकम्, उपासीत, सः, यः, आत्मानम्, एव, लोकम्, उपासीत, सः, यः, आत्मानम्, एव, लोकम्, उपासीत, सः, यः, आत्मानम्, एव, क्रात्मनः, यत्, यत्, क्रास्य, कर्म, क्षीयते, अस्मात्, हि, एव, आत्मनः, यत्, यत्, क्रास्य, व्यत्, क्रास्य, कर्म, क्षीयते, अस्मात्, हि, एव, आत्मनः, यत्, यत्, क्रास्ययते, तत्, तत्, तत्, त्वन, स्नते॥

श्रन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

तत्=वही पतत्=यह ब्रह्म=माद्यय क्षत्रम्=क्षत्रिय विट्=वैश्य ग्रद्धः=गृद + चातुर्वेगर्यम्=चारवर्ध हैं तत्=चद्दी त्रक देवेषु=देवताओं में झिनिना एव=चन्निस्प करके

ब्रह्म=ब्रह्मा अभवत्=होताभया +सः≔वही मनुष्येषु=मनुष्यों में + ब्राह्मगुः=नाह्मग्र **+ ग्रभवत्**≔होताभया +एवम्=इसीतरह क्षात्रियेसा=क्षत्रिय करके क्षत्रियः=क्षत्रिय वैश्येन=वैश्य करके वैश्यः=वैश्य श्रद्रेग=श्रुद्ध करके श्द्र≔शृद + श्रभवत्=होताभया तस्मःत्=इसिबये अग्नौ=श्रग्नि विषे एव=ही + याशिकाः=यज्ञ करने वाले लोकम्=कर्मफलकी इच्छन्ते=इच्छा करते हैं हि=क्योंकि मनुष्येषु=मनुष्यों के मध्य ब्रह्म=ब्रह्म पताभ्याम्≔इनहीं यानी युज्ञकर्मकाकर्ता ब्राह्मग्रः=ब्राह्मग्र श्रभवत्=होताभया

श्रथं≕दौर यः≕जो

ष्ठ वै≕निरचय करके स्वम्≕भपने लोकम्=चात्माको श्रद्धा=न जानकर **शस्मात्**=इस लोकात्≕कोक से मैति=कूंच करजाता है सः≔वह अविदितः≔त्रज्ञानी एनम्=श्रपने श्रात्मानन्दको न=नहीं भुनक्ति=प्राप्त होता है यथा वा=जैसे श्रननुक्रः≔गुरुक्षे न पढ़ाहुश्रा वेदः≔वेद दंधेषु=देवताओं के मध्य + न + भुनक्ति=कर्म के फलको नहीं देता है या=सथवा +यथा=जैसे अकृतम्=नहीं की हुई कर्म=खेती + न + फलम्=नहीं फलको +भुनक्ति=देती है यत्=जिसकारण इह=इस लोक में अनेवंवित्=अपने आत्मा का न जानने वाला #पि=भी महत्=वदे पुरायम्=पुराय कर्म=कर्म को करोति=करता है

उपास्ते=उपासना करता है + परन्तु=परन्तु श्र**स्य ह**=उसकाही श्चस्य=उसका कर्म=कर्म फल तत्≔वह फल न हि≔कभी नहीं ह एव=श्रवश्य अन्ततः≔भोगने के पीछे श्रीयते=श्री**ण होता** है श्रीयते=नष्ट होजाता है हि=न्यों कि + त्रातः=तिस कारण श्रस्मात् **१** हि एव } = इसही आत्मानम्) लोकम् 🗸 = अपने आत्माकी ही श्चात्मनः=श्रात्मा से यत्≕जो उपासीत=उपासना करे यानी यत्चा श्चपने श्चारमाको जाने + सः≔वह सः=वह कामयते=चाहता है यः=जो तत् तत्=उस उसको त्रात्मानम् } =श्चपने ही श्रात्मा की एव लोकम् सुजते=प्राप्त करता है

भावार्थ ।

हे सीम्य ! ब्राह्मण, क्षत्रिय, वेश्य, शृहवर्गों में ब्राह्मण झ्रानिक्ष्य ब्रह्म होता भया, वही मनुष्यों में ब्राह्मण होता भया, क्षत्रियों के मध्य देववेश्य होता भया, शृहों के मध्य शृह होता भया, इसिलिये देवताओं के मध्य अपिन विषे यह करनेवाले कर्मफल की इच्छा करते हैं, क्योंकि मनुष्यों के मध्य ब्राह्मण में यह्मकर्म का कर्ता और यह्मकर्म का अधिकरण अपिनरूप ब्राह्मण में यह्मकर्म का कर्ता और यह्मकर्म का अधिकरण अपिनरूप ब्राह्मण ही होता भया है और जो अपिन आत्माको न जानकर इसलोक से कूंच करजाता है, वह अहानी अपिन आत्माको न जानकर इसलोक से कूंच करजाता है, वह अहानी अपिन आत्माको नहीं देता है, अथवा जैसे नहीं की हुई खेती फलको नहीं देती है, और जिस कारण इस लोक में अपिन आत्माको न जाननेवाला बड़े पुएय कर्म को करता हुआ भी कर्म फलके भोगने के पीछे नष्ट होजाता है, तिसी कारण

पुरुष आपने आस्मा की उपासना करे यानी आपने आस्माको जाने जो पुरुष आपने आस्मा की उपासना करता है उसका कर्मफल कभी नष्ट नहीं होता है, क्योंकि उपासक जो जो वस्तु आस्मासे चाहता है उस उस वस्तु को वह प्राप्त होता है ॥ १४ ॥

मन्त्रः १६

अथो अयं वा आत्मा सर्वेषां भूतानां लोकः स यज्जुहोति यचजते तेन देवानां लोकोथ यदनुकूते तेन ऋषीग्णामथ यत्पितृभ्यो निषृ-णाति यत्मजामिच्छते तेन पितृग्णामथ यन्मनुष्यान्वासयते यदेभ्यो-शनं ददाति तेन मनुष्याग्णामथ यत्पशुभ्यस्तृग्णोदकं विन्दति तेन पश्नां यदस्य गृहेषु श्वापदा वयांस्यापिपीलिकाभ्य उपजीवन्ति तेन तेषां लोको यथा ह वै स्वाय लोकायारिष्टिमिच्छेदेवं हैवंविदे सर्वाणि भूतान्यरिष्टिमिच्छन्ति तद्वाएतिहदितं मीमांसितम् ॥

पदच्छेदः ।

अथो, अयम्, वै, आतमा, संवेषाम्, भूतानाम्, कोकः, सः, यत्, जुहोति, यत्, यजते, तेन, देवानाम्, लोकः, अथ, यत्, अनुबूते, तेन, भृषीणाम्, अथ, यत्, पितृभ्यः, निपृणाति, यत्, प्रजाम्, इच्छते, तेन, पितृणाम्, अथ, यत्, मनुष्यान, वासयते, यत्, एभ्यः, अश-नम्, ददाति, तेन, मनुष्याणाम्, अथ, यत्, पग्रुभ्यः, नृणोदकम्, विन्दति, तेन, पश्रुनाम्, यत्, अस्य, गृहेषु, श्वापदाः, वयांसि, आ, पिपीकिकाभ्यः, उपजीवन्ति, तेन, तेषाम्, लोकः, यथा, ह, वे, स्वाय, क्रोकाय, अरिष्टिम्, इच्छत्, एवम्, ह, एवंविदे, सर्वाणि, भूतानि, अरिष्टिम्, इच्छन्ति, तन्, वे, एतन्, विदितम्, मीमांसितम् ॥

म्रान्वयः पदार्थाः मन्वयः परार्थाः

श्चथो=तत्परचात् चै=निरचय करके श्चयम्=यह ग्रहस्थाश्रमी म्रात्मा=पुरुष सर्वेषाम्=सब भूतानाम्=प्राणियों हा

लोकः≔ग्राथय है सः≔वह पुरुष यत्=जो जहोति=होम करता है यत्=गो यजते=प्रतिदिन यज्ञ करता है तेन=उसी कर्म करके + सः≔वह देवानाम्=देवोंका लोकः=ग्राभय + भवति=होता है अथ≕भौर यत्≕गे **श्र**नुत्र्वे=पठन पाठन करता तेन=उसकरके . '+ सः≔वह ऋषीणाम्=ऋषियों का + लोकः=भ्राभय + भवति=होता है **अथ**=श्रीर यत्=जो पिएभ्यः≐पितरों के जिये निपृणाति=पिंडा श्रीर पानी देताहै + च=श्रौर यत्≕जो **प्रजाम्**=संतान की इच्छते=इच्छा करता है तेन=उस पिंडदान और संतान करके पितृगाम्=पितरा का + सः≔वह + लोकः=ग्राश्रय

+ भवति=होता है मध=मीर यत्≕जो मनुष्यान्=मनुष्यों को (श्रपने वरमें जगह वासयते= 🗸 जनादि देकर वास र् कराता है + च=ग्रीर यत्=जो एभ्यः=डनके विवे अशनम्=भोजन ददाति=देता है तेन=उस जल वस्त्र श्रम्न मनुष्यासाम्=मनुष्यों का + सः≔वह + लोकः≔ग्राधय + भवति=होता है ऋथ=श्रोर यत्≕जो पशुभ्यः=पशुद्धों के लिये तृगोदकम्=घास फ्स भौर जब विन्द्ति=देता है तेन≔उस करके पशूनाम्=पशुद्धों का + सः=वह + लोकः≕भाशव + भवति=होता है यत्≕जो श्रस्य=इसी गृहस्थी के गृहेषु=घरों में

श्वापदाः=चौपावे

वयांसि=पक्षी आपिपीलि- }=मौर चींटी तक उपजीधन्ति=भन्न पाकर जीते हैं तेन=उसी करके + सः≔वह तेषाम्=चौपायों बादिकों का लोकः=श्राश्रय + भवति≔होता है + श्रथ ह वै≕धीर भवश्य ही यथा=जैसे + प्रत्येकः=इरएक पुरुष स्वाय=भ्रपने लोकाय=देहप्रविष्ट जीवात्मा के जिये श्वरिष्टिम्=श्रविनाशित्व को इच्छेत्=इच्छा करता है एवम् ह=वैसेही

प्रवंविदे=ऐसे जानने बाखे के विवये भी सर्वाणि≕सव भूतानि=प्राची देवतादि + तस्य=उसके श्ररिष्टिम्=श्रविनाशित्व को इच्छान्ति=चाहते हैं + च=श्रीर तत्=सोई पतत्=यह यशादिकर्म विदितम्=पंचमहायज्ञादि प्रक-रण में कहा गया है + स=श्रीर + तत् एव=वही + इह=यहां पर भी मीमांसितम्=कर्तन्यरूप से विचार

का विषय हुआ है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! गृहस्थाश्रमी पुरुष सब प्राशियों का आश्रय है, वह पुरुष जो होम करता है, और जो निस्टप्रित यह करता है, वह उसी कर्म करके देवोंका आश्रय होता है, ओर जो पठन पाठन करता है वह उस करके ऋषियों का आश्रय होता है, आर जो पितरों के लिये पिंडा पानी देता है और जो संतान की इच्छा करता है तो वह उस पिंडदान और संतान करके पितरों का आश्रय होता है, और जो अभ्यागतों को अपने घर में ठहरा कर जल मोजनादि देता है उस जल वस्त्र अन्न करके वह मनुष्यों का आश्रय होता है, और जो पशुओं को घास पूस देता है, वह उस करके पशुओं का आश्रय होता है, इसीम्य ! उसी गृहस्थाश्रमी पुरुष के घर में पशु, पश्ची

चींटी तक सब अन्न पाकर जीते हैं, उसी करके वह पुरुष पशु पक्षी आदिकों का आश्रय होता है, और जैसे हर एक पुरुष अपने देह प्रविष्ठ जीवात्मा के अविनाशित्व को इच्छा करता है वैसेही ऐसे उपासक के िलये भी सब प्राग्यी देवता आदिक उसके अविनाशित्व को भी चाहते हैं, और सोई यह यज्ञादिकमं वेद के पंचमहायज्ञ प्रक-रण में कहा गया है, और वही यहां पर भी कर्तव्यक्ष से विचार का विषय हुआ है।। १६ ॥

मन्त्रः १७

श्रात्मैवेदमम् श्रासीदेक एव सोऽकामयत जाया मे स्यादथ प्रजायेयाथ वित्तं मे स्यादथ कर्म कुर्वियेत्येतावान्वै कामो नेच्छंश्च नातो.
भूयो विन्देत्तस्मादप्येतर्श्वेकाकी कामयते जाया मे स्यादथ प्रजायेयाथ
वित्तं मे स्यादथ कर्म कुर्वियेति स यात्रद्प्येतेषाभेकैकं न प्रामोत्यकुत्स्न एव तावन्मन्यते तस्ये।ऽकुत्स्नता मन एत्रास्याऽऽत्मा वाग्जाया
प्राणः प्रजा चश्चर्मानुषं वित्तं चश्चषा हि तद्दिन्दते श्रोत्रं दैवछश्रोत्रेण
हि तच्छृणोत्यात्मैत्रास्य कर्माऽऽत्मना हि कर्म करोति स एष पांक्रो
यज्ञः पांक्रः पशुः पांक्रः पुरुषः पांक्रीमदछ सर्वयदिदं किंच तदिदछ सर्वमामोति य एवं वेद ॥ इति चतुर्थं बाह्मणम् ॥

पदच्छेदः ।

आत्मा, एव, इट्म्, अप्रे, आसीत्, एकः, एव, सः, अकामयत, जाया, मे, स्यात्, अथ, प्रजायेय, अथ, वित्तम्, मे, स्यात्, अथ, कर्म, क्र्यीय, इति, एतावात्, वे, कामः, न, इच्छत्, च, न, अतः, भूयः, विन्देत्, तस्मात्, अपि, एतर्हि, एकाकी, कामयते, जाया, मे, स्यात्, अथ, प्रजायेय, अथ, वित्तम्, मे, स्यात्, अथ कर्म, कुर्तीय, इति, सः, यावत्, अपि, एतेषाम्, एकैकर्, न, प्राप्तोति, अक्रत्स्नः, एव, तावत्, मन्यते, तस्य, उ, अक्रत्स्नता, मनः, एव, अस्य, आत्मा, वाक्, जाया, प्राणः, प्रजा, चक्षुः, मानुषम्, वित्तम्, चक्षुषा,

हि, तत्, विन्दते, श्रोत्रम्, दैवम्, श्रोत्रेण्, हि, तत्, श्रुणोति, आत्मा, एव, अस्य, कर्म, आत्मना, हि, कर्म, करोति, सः, एवः, पाङ्कः, यज्ञः, पाङ्कः, पशुः, पाङ्कः, पुरुषः, पाङ्कम्, इदम्, सर्वम्, यत्, इदम्, किंच, तत्, इदम्, सर्वम्, आप्नोति, यः, एवम्, वेद ॥

श्रन्वयः

पदार्थाः

श्रन्वयः

पदार्थाः

श्रग्रे=तिवाहविधि से पहिले इदम्=यह प्रत्यक्ष

एकः=एक

श्चातमा=पुरुष एव =ही

श्रासीत्=था

+ पुनः≕किर सः एव=वही पुरुष

श्रकामयत=इच्छा करता भया

+कर्माधिकार- } =यज्ञ कर्म के बिये सम्पत्तये }

जाया≔भी

मे≃मेरे को

स्यात्=प्राप्त होवे

श्चथ=श्रीर

+ ऋहम्≕में

प्रजायेय=इस जाया से संतानके

स्वरूपमें उत्पन्न होऊं

श्रथ=इस के पीछे

म=मेरेलिये

वित्तम्=गौ बादिक धन

स्यात्=प्राप्त होवे

श्रध=किर

+ ऋहम्≕में

कर्म=वेद्विहित कर्म को

कुर्वीय=कर्रू

पतावान् वै=इतनी ही कामः≔मेरी कामना है

इति=इस प्रकार

इच्छन्=इच्हा करता हुआ

च=भीर

न + इच्छुन्=नहीं इच्छा करता

हुन्ना

+ पुरुषः=पुरुष

श्रतः≔इससे

भूषः≔प्रधिक धन न=नहीं

चिन्देत्=पासका है

तस्मात् श्रवि=इसी कारव

एतर्हि=श्राजकत भी

पकाकी=अनब्बाहा पुरुष कामयते=चाइता है कि

जाया=बी

मे=मेरे जिये

स्यात्=प्राप्त होवे

श्रथ=तत् पक्षात्

+ श्रहम्≕भें

प्रजायेय=पुत्ररूप से उसमें

उत्पन्न होळं

द्राध≕फिर मे=मेरे विषे वित्तम्=गौ भादिक कर्म सा-धन द्रव्य स्यात्≔प्राप्त होवे श्रथ=तत् परचात् + ब्रहम्≕में कर्म=मुक्ति के साधन कर्म कुर्वीय=करं इति=इस प्रकार सः≔वह पुरुष यावत् ऋपि=जव तक धतेषाम्=इन कहे हुये पदार्था में से एकैकम्=एक एकको न=नहीं प्राप्नोति=पाबेता है तावत्=वन तक + सः≔बह मन्यते=मानता है कि + ग्रहम्=भैं प्व≕निश्चय करके **ऋकृत्स्नः**=श्रपूर्ण + श्रस्मि=ह् उ≕मोर तस्य=उसकी **मृ.त्स्नता**≔पृर्वता + तद्ा=तव

+ मवति=होती है

+ यहा=जब

+ सः≔वह

+ प्राप्नोति=मनोगत स्रभिकाका को पास होता है + उ=पर + तस्य=उस की + पूर्णता≔पूर्णता · + यद्।≕ज**ब** भविष्यति=होगी यदा=जब + तस्य=उसका + विचारः े ऐसा विवार होगा + इति मनः=मन एव=ही श्चात्मा=उसका भारमा है वाक्=वाणी ही जाया=उसकी भी है प्राणः=प्राणही प्रजा=उसका पुत्र है चञ्चः≔नेत्रही मानुषम्=उसका मनुष्य सम्बन्धी वित्तम्≕धन है हि=प्योंकि चञ्चषा=नेत्र करके ही तत्=उस मनुष्य सम्बन्धी धन को विन्दते=शास होता है + च=भौर देवम्=देवता सम्बन्धी धन यानी विज्ञान श्रोत्रम्=श्रोत्र है हि=क्योंकि

श्रोत्रेग्=भोत्र करके ही तत्=इस ज्ञानको श्रृणोति=सुनता है श्रस्य=उस साधनयुक्त पुरुष श्चातमा एव=शरीर ही कर्म=कर्म है हि=क्यों कि श्चातमना=शरीर करके ही कर्म=कर्म को करोति=वह करता है +तस्मात्=इसिबये सः=वडी एषः=यह यज्ञः=यज्ञ पांक्रः=पांच पदार्थों से सिद्ध हुन्रा पशः पांकः=यज्ञपश् है

+ सः=वही + एषः≔यह पांक्रः≔पांचतत्त्वसे बनाहुन्ना पुरुषः=पुरुष है इदम्=यह जगत् सर्वम्≃सब पांक्रम्=पांच तस्ववाका है यः≔जो एवम्≔इस प्रकार वेद=जानता है यत्≕जो किंच=कुछ इद्म्=यह है तत्=उस इदम्=इस सर्वम्=सबको आप्रोति=पाप्त होता है

भावार्थ ।

हे प्रियदर्शन! विवाहविधि से पहिले केवल एक पुरुष था, वहीं ऐसी इच्छा करता भया कि कर्म करने के लिये मुमको स्त्री प्राप्त होवे, झौर मैं उस स्त्री से संतान की सूरत में उत्पन्न होऊं, झौर फिर मेरे को गो आदिक धन प्राप्त होवें, तिनकी सहायता करके मैं वेद-विहित कर्मको करूं. इन सबकी प्राप्ति होने से मेरी कामना पूर्ण हो जायगी. इस प्रकार इच्छा करता हुआ और नहीं इच्छा करता हुआ भी पुरुष इससे अधिक धनको नहीं पा सकता है, और यही कारण है कि आजकल भी वे व्याहा पुरुष चाहता है कि मेरे को स्त्री प्राप्त होवे, तिसमें में पुत्ररूप से उत्पन्न होऊं, फिर मेरे को गौ आदिक कर्म साधन द्रव्य प्राप्त होवे, ताकि मैं मुक्ति के साधन कर्म को करूं. इस

प्रकार जब तक इन कहे हुये पदार्थों में से एक एक को नहीं पालेता है, तब तक वह सममता है कि मैं अपूर्ण हूं, परंतु हे सोम्य! उस की पूर्णता तब होतीहै जब वह मनोगत अभिलाषा को प्राप्त होताहै, और उसकी पूर्णता तमी होगी जब उसका विचार ऐसा होगा कि मनही उसका आत्मा है, और वाली ही उसकी स्त्री है, प्रार्ण ही उसका पुत्र है, नेत्रही उसका मनुष्यसम्बन्धी धन है, क्यों कि नेत्र करके ही मनुष्यसम्बन्धी गी आदि धन उसको प्राप्त होता है, क्यों के नेत्र करके ही उसका सुनता है, उसका शरीरही कर्म है, क्योंकि श्रीत्र करके ही उस ज्ञानको सुनता है, उसका शरीरही कर्म है, क्योंकि श्रीत्र करके ही वह कर्म को करता है, इसलिये हे प्रियदर्शन! वही यह यज्ञ पांच पदार्थों से सिद्ध हुआ यज्ञ पशु है, वही यह पांच तक्त से बनाहुआ पुरुष है, वही यह जगत् पांच तक्तोंवाला है, वह जो इस प्रकार जानता है वह जो इन्छ जगत् विषे है सबको प्राप्त होता है। १७ ॥

इति चतुर्थे ब्राह्मणम् ॥ ४ ॥

श्रथ पञ्चमं ब्राह्मणुम्। मन्त्रः १

यत्सप्तात्रानि मेथया तपसाऽजनयित्वता एकमस्य साधारणं द्वे देवानभाजयत् त्रीएयात्मनेऽकुरुत पशुभ्य एकं प्रायच्छत् तस्मि-न्सर्वे मतिष्ठितं यच पाणिति यच न कस्मात्तानि न क्षीयन्तेऽद्यमानानि सर्वेदा यो वैतामक्षितिं वेद सोऽन्नमित मतीकेन स देवानिप गच्छति स ऊर्जमुपजीवतीति श्लोकाः ॥

पदच्छेदः ।

यत्, सप्त, श्रञ्जानि, मेथया, तपसा, श्रजनयत्, पिता, एकप्, अस्य, साधारण्म्, हे, देवान, अभाजयत्, त्रीणि, आत्मने, अकु-

हत, पशुभ्यः, एकम् , प्रायच्छत् , तस्मिन् , सर्वम् , प्रतिष्ठितम् , यत् , च, प्राश्चिति, यत्, च, न, कस्मात्, तानि, न, क्षीयन्ते, श्रद्यमा-नानि, सर्वदा, यः, वा, एताम्, श्रक्षितिम्, वेद, सः, श्रन्नम्, श्रत्ति, प्रतीकेन, सः, देवान्, अपि, गच्छति, सः, ऊर्जम्, उपजीवति. इति, श्लोकाः ॥

श्चन्यः

पदार्थाः ग्रन्वयः पदार्थाः

यत्≔जो सप्त=सात श्रञ्जानि=धन्न मेधया=मेधा + च=श्रौर तपसा=तप करके पिता=पिताने **श्रजन**यत्=पैदा किया श्चस्य=डनमें से एकम्=एक साधारगाम्=साधारग है यानी सबके जिये सामेमेंहैं + च=श्रीर द्वे=दो अक्ष देवान्=देवताश्रों को **ग्र**भाजयत्⊐देदिया त्रीणि=तीन श्चात्मने=अपने विवे **श्रकुरुत=**रक्खा

पशुभ्यः≔पशुद्रां के लिये

तस्मिन्=तिसी श्रव विषे

एकम्=एक

सर्वम=सब

यत्=जो

प्रायच्छत्≕दिया

प्राशिति=श्वास बेते हैं च=श्रौर यत्=जो न=नहीं च=भी + प्राणिति=श्वास लेते हैं प्रति। ष्टेतम्=प्रतिष्ठित हैं यानी आश्रित हैं यः=जो ज्ञानी

वा=निश्चय करके ताम्≕उस भवको अक्षितिम्=षविनाशी वेद=जानता है च=श्रीर सः≔वह श्रद्मम्≔उसी बनको

प्रतीकेन=मुख करके अस्ति=खाता है सः≔वह देवान्=देवतायां को गच्छति=आप्त होता है + च=भौर सः=वही ऊर्जम्=बलको भी

+ उपजीवति=शास होता है

कस्मात्=िकस कारय तान्=वे सर्वदा=सदा अधमानानि=खाये जाने पर भी न=नहीं क्षीयन्ते≔नाराको प्राप्त होते हैं इति≔इस विषय में श्लोकाः≔त्रागेवाले मंत्र प्रमाख हैं

भावार्थ ।

हे सौन्य! जो सात प्रकार के अन्न हमारे पिता ब्रह्मदेव ने तप आगेर बुद्धि करके उत्पन्न किये, उन में से एक सबको साम्ने में दिया, दो अन्न देवताओं को दिया, और तीन अपने लिये रक्खा, केवलं एक पशुओं के लिये दिया, जिसके आश्रय सब जीव हैं, चाहे वह स्वास लेते हों और चाहे न लेते हों, प्रश्न उठता है कि किस कारगा सब अन्न खाये जाने पर भी श्लीगा नहीं होते हैं, उत्तर यही आता है कि सब अन्न परमात्मा से उत्पन्न हुये हैं, आर चूंकि वह परमात्मा नाशरहित हैं इस कारगा उससे उत्पन्न हुये अन्न भी नाशरहित हैं, जो ज्ञानी इन अनों को अविनाशी जानकर खाता है, वह देवताओं की पदवी को प्राप्त होता है और वही बलको भी प्राप्त होता है इस विषय में आगेवाले मंत्र प्रमाग्य हैं ॥ १॥

मन्त्रः २

यत्सप्तान्नानि मेथया तपसाऽजनयित्पतेति मेथया हि तपसाऽजनयत्पिता एकमस्य साधारणिभितीदमेवास्य तत्साधारणमन्नं यदिदमद्यते स य एतदुपास्ते न स पाप्मनो व्यावर्तते मिश्रशं होतद् द्वे
देवानभाजयिति हुतं च प्रहुतं च तस्माद्देवेभ्यो जुह्वति च म च
जुहृत्यथो आहुर्दश्पूणमासाविति तस्मान्नेश्चियाजुकः स्यात् पशुभ्य
एकं प्रायच्छदिति तत्पयः पयो होवाग्ने मनुष्याश्च पश्वश्चोपजीवन्ति
तस्मात्कुमारं जातं छृतं वैवाग्ने मितलेह्यन्ति स्तनं वाऽनुथापयन्त्यथ
वत्सं जातमाहुरतृणाद इति तस्मिन्सर्व मितिष्ठितं यच माणिति यच्च
नेति पयसि हीदंशं सर्व मितिष्ठितं यच माणिति यच्च न तद्यदिदमाहुः

संवत्सरं पयसा जुहदपपुनर्गृत्युं जयतीति न तथा विचायदहरेव जुहोति तद्दृः पुनर्गृत्युमपजयत्थेवं विद्वान्सर्वे हि देवेम्यो-जाचं मयच्छाति कस्मात् तानि न क्षीयन्तेष्ठमानानि सर्वदेति पुरुषो वाद्यक्षितिः स हीदमन्नं पुनः पुनर्जयते यो वैतामसितिं वेद वेदेति पुरुषो वा स्रक्षितः सहीदमन्नं थिया थिया जनयते कर्माभियद्दैतन्न कुर्यात् क्षीयेत ह सोन्नमत्ति पतीकेनेति पुरुषं मतीकं पुखेनेत्येतत् स देवानिष गच्छाते स कर्जभुपजीवतीति पश्सा ॥

पदच्छेदः ।

यत, सत, अन्नानि, मेथया, तपसा, अजनबत्, पिता, इति, मेथया, हि, तपसा, अजनयत्, फिता, एकम्, अस्य, साधारगाम्, इति, इदम्, एव, श्रास्य, तत्, साधारणाम्, श्रात्रम्, यत्, इदम्, अधते, सः, यः, एतत्, उपास्ते, न, सः, पाष्मनः, व्यावर्त्तते, मिश्रम्, हि, एतत्, हे, देवान, अभाजयत्, इति, हुतम्, च, प्रहुतम्, च, सरमात्, देवेभ्यः, जुह्बति, च, प्र, च, जुह्बति, श्रथो, श्राहुः, दर्श-पूर्णमासी, इति, तस्मात्, न, इष्टियाजुकः, स्यात्. पशुभ्यः, एकम्, प्रायच्छत, इति, तत्, पयः, पयः, हि, एव, अप्रे, मनुष्याः, च, परावः, च, उपजीबन्ति, तस्मात्, कुमारम, जातम्, घृतम् , वा, एव, अभे, प्रतिकेहयन्ति, स्तनम्, वा, अनुधापयन्ति, अथ, वत्सम , जातम् , भ्राहुः, अनृगादः, इति, तस्मिन, सर्वम, प्रतिष्ठितम्, यत्, च, प्राश्मिति, यत्, च, न, इति, पयसि, हि, इदम्, सर्वम्, प्रतिष्ठितम्, यत्, च, प्राशिति, यत्, च, न, तत्, यत्, इदम्, धाहुः, संवत्सरम् , षयसा, जुह्वत्, श्राप, पुनः, मृत्युम् , जयति, इति, न, तथा, विद्यात, यत्, श्रहः, एव, जुहोति, तत्, श्रहः, पुनः, मृत्युम्, श्रप, जयति, एवम्, विद्वान्, सर्वम्, हि, देवेभ्यःं, अभाचम्, प्रयच्छति, कस्मात, तानि, न, श्लीयन्ते, अध्यमानानि, सर्वदा, इति, पुरुष:, वा, अक्षितिः, सः, हि, इदम, अन्नम्, पुनः, पुनः, जयने, यः, वा, एताम्,

अक्षितिम्, वेद, वेद, इति, पुरुषः, वा, अक्षितिः, सः, हि, इदम, अज्ञम्, धिया, धिया, जनयते, कर्मभिः, यत्, वा, एतत्, न, कुर्यात्, क्षीयेत, ह, सः, अज्ञम्, अत्ति, प्रतीकेन, इति, मुखम्, प्रतीक्रम्, मुखेन, इति, एतत्, सः, देवान्, अपि, गच्छति, सः, अर्जम्, उपजीवति, इति, प्रशंसा ॥
अन्वयः पदार्थाः | अन्वयः पदार्थाः

श्चन्वयः यत्⇒जो

+ मन्त्रः=मंत्र इति=ऐसा

+ आह≔कहता है कि पिता≕पिता ने

(पता–।पता प सप्त≒सात

श्रश्नानि=पन्न को

मेधया=मेधा करके + च=धौर

तपसा≔तप करके श्रजनयत्≕पैदा किया

+ तत्≔सो

+ इति=ऐसा

+ सत्यम्=डीकही

+ आह=कहता है हि=क्योंकि

।६≔क्याक पिता≕पिता ने

मेधया=मेधा करके + च=ग्रीर

⊤ च=शार तपसा=तप करके

+**त्रक्षम्**=त्रज्ञ को श्रज**नयत्**=पैदा किया

+ च=भौर

+ यत्=जो

+इति≕ऐसा

+ ब्राह≕कहता है कि

एकम्=एक श्रम्न साधारणम्=साधारण है यानी

. सबके लिये बराबर है

तत्≕तो

श्रस्य + श्रर्थः =उसका श्रर्थ इदम्≔यह है कि

इदम्=वह

साधारसम्=साधारस बन्न

+ सर्वेग्र=सब करके

श्चयते=बाया जाता है

सः≃वह यः≃जो

पतत्=इस साधारण श्रनकी उपास्ते=उपासना करता है

सः≔वही

पाष्मनः=पाप से

न व्यावर्त्तते=निवृत्त नहीं होता है

हि=क्योंकि

पतत्≔यह सांधारवा सन्न

मिश्रम्=सबका है

+ पिता=पिता

. द्वे≔दो शक्ष जनग–नन

हुतम्=हुत

च≕षौर

महुतम्=अहुत इति=नाम करके देवान्=देवताश्रां को ग्रभाजयत्=देता भवा च=मौर तस्मात्≔इसी कारण देवेभ्यः=देवताओं के बिये + विद्वान् } =विद्वान् स्रोग + जनः } ज़ह्नति च=श्रीन में होम श्रीर बिलप्रदान करते हैं च=घौर . प्रज़हृति=विशेष करके भ्रानि में अधिक होम करतें श्रधो≔श्रौर +श्रन्याचार्याः=कोई कोई श्राचार्य आडुः=कहते हैं कि + एतौ=ये दोनों अन दर्शपूर्णमासौ=दर्श और पूर्णमास इष्टि के नाम इति=करके हैं तस्मात्=इस विवे **इ**ष्टियाजुकः≔कामय**इ** न स्यात्=न करे + च=श्रोर + यत्≕जो पशुभ्यः=पशुर्त्रों के लिये एकम्≔एक अत्र प्रायच्छत्=दिया इति=ऐसा + उक्तम्≔कहा गया है

तत्≔मह सम

हि=क्योंकि एव=निश्चय करके श्रग्रे≔पहिले मनुष्याः=मनुष्य च=धौर पश्चवः≔पशु स्त≂भी पयः≔दुध को उपजीवन्ति=प्रहण करके जीते हैं तस्मात्=इस निये जातम्=उत्पन्न हुये कुमारम्=बन्ने को श्रग्रे=प्रथम वा एव=श्रवश्य घृतम्≔धृत प्रतिलेहयन्ति=चटाते हैं वा≔ग्रथवा स्तनम्=माता के स्तन को श्रनुधा- | पयन्ति | =पिबाते हैं श्रथ≠भौर + पशुनाम् =पशुन्रों में जातम्⇒उत्पन्न हुये वत्सम्=बद्धरे को श्चतृणादः=तृय न खानेवाला इति=ऐसा त्राहुः=कहते हैं तस्मिन्=उसी दूषपर सर्वम्=सब जीव प्रतिष्ठितम्≃षाश्रित हैं यत्=जो

प्राणिति=रक्षस बेते हैं च≕मौर यत्≕जो न≖नहीं च=भी + प्राणिति=स्वास केते हैं हि=क्यांकि पयसि=दूथ के ही ऊपर इदम्=यह सर्वम्=सर्व जीव प्रतिष्ठितम्=श्राश्रित हैं यत्=जो प्राणिति=स्वास खेते हैं च=ग्रौर यत्≕जो न≕नहीं ચ=મો + प्राणिति=स्वास केते हैं तत्=तिसी कारव यस्=जो इत्म्≈यह + ब्राचार्याः=प्राचार्य आडुः≔कहते हैं कि संघत्सरम्≔एक साब तक पयसा≔तूध करके + य≔जो **पुनः**≕निरम्सर ज्ञहाति≔होम करता है सः≔वह श्रापमृत्युम्=बकालमृत्यु को अयति इति=जीत बेता है त्तथा=वैसा

विद्यात्=सम के यत् एव=जिसी ऋहः≔दिन जुहोति=ध्वन करता है तत्=डसी ऋहः=दिन पुनः≔वार बार भानेवाको मृत्युम्=मृत्यु को अपजयति=जीत बेता है + हि=क्योंकि एवम्≔इस प्रकार विद्वान्=सात श्रव का जानने वासा विद्वान् सर्वम्=सब अन्न।द्यम्=बन्नादि को देखेभ्यः=देवताओं के क्षिये प्रयच्छति=रेता है कस्मात्=िकस वास्ते तान्=वे सर्वदा=सर्वदा श्रद्यमानानि=साये जानेवाले श्रद्ध न श्रीयन्ते=नहीं कम होते हैं इति=कारख यह है कि पुरुषः क्षा≔पुरुषद्दी यानी शक्र का भोक्रा अक्षितिः=चविनाशी है सः हि=वही इदम्≔इस ग्रज्ञम्=मन को पुनः पुनः≔बार बार

जनयते≕पैदा करता है वा=ग्रीर यः=जो पताम्=इसको श्रक्षितिम्=शक्षिति वेद इति=जानता है सः≔वही पुरुष अक्षिति:=अविनाशी है हि=वयों के इदम्=इस ग्रन्नम्=त्रन्न को धिया धिया=बुद्धि से और कर्मभिः≔कर्म से + सः=वह जनयते=उत्पन्न करता रहता है यत् ह≕यदि + सः≔वह श्रविनाशी पुरुप एतत्=इस ग्रज्ज को न=न कुर्यात्=उत्पन्न करता तो + तत्=वह श्रद्मम्=त्रद्ग ह्≕ग्रवश्य श्रीयते=नाश होजाता + च=घौर इति⇒जो ऐसा कहा गया है कि

सः=वर्ह श्रद्धम्=भन्न का प्रतीकेन⇒मुख से अत्ति=खाता है इति=उसका भाव यह है कि प्रतीकम्=प्रतीक का श्वर्थ मुखम्=मुख है इति=इस विये एतत्=यह मुखेन इति="मुखेन" ऐसा पद + उक्तम्=कहा है च≔ग्रौर य:=जो इति=ऐसा उक्तम्≔कहा गया है कि सः≔वह पुरुष देवान्=देवताओं को (प्राप्त होता है यामी गच्छति=√ देवयोनि को प्राप्त + च=धौर सः=वही ऊर्जम्=दैवबन्न को उपजीवति=बास होता है तो इति=ऐसा कडना श्रपि=केवब प्रशंसा=चन्न यज्ञ कर्म की प्रशंसा है

भाषार्थ ।

हे सौम्य ! जो मंत्र ने ऐसा कहा है कि पिताने मेथा झौर तप करके सात झन्न उत्पन्न किये हैं सो ठीक कहा है, मेथा ज्ञान है,

भीर ज्ञानही तप है, उससे पृथक दूसरा कोई तप नहीं है, भीर जो मंत्र यह कहता है कि पिताने एक अन्न सब के वास्ते उत्पन्न किया है, उसका भाव यह है कि वह अन्न सब प्राणियों करके खाया जाता है, यानी उसमें सब का भाग है जो कोई इस अन्न को केवल अपना ही समम कर खाता है, विना दिये दूसरों को वह पाप से निवृत्त नहीं होता है, कारण यह है कि यह अन्न सब के साम्ते का है, खास उसी का नहीं है, हे सौम्य! और जो मंत्र ने 'यह कहा है कि पिताने दो अन्त "हुत" और "प्रहुत" नाम करके देवताओं को दिया है, उसका अर्थ यह है कि दो कर्म यानी वैश्वदेव और बिलहरन कर्म देवताओं के लिये रक्खा गया है, श्रीर इसी कारण विद्वान लोग श्रभ्यागत-रूप देवता के आपने पर उसकी प्रतिष्ठा के लिये होम द्रव्य आगिन में देते हैं. और कोई कोई आचार्य ऐसा भी कहते हैं कि यह दोनों अन दर्श यानी अमावस और पूर्णमास के नाम से समम्हे जाते हैं. इस लिये हर अमावस और पूर्णमास को निष्काम यह अवश्य करे, और जो मंत्र ने यह कहा है कि प्राभों के लिये एक अन्न दिया गया है उसका अर्थ यह है कि वह दिया हुआ अन पय है, क्योंकि मनुष्य भ्योर पशु दोनों उत्पन्न होते ही पय को प्रहरा करते हैं भीर उसी करके जीते हैं, अभीर यही कारणा है कि उत्पन्न हुये बन्ने की प्रथम घत अवश्य चटाते हैं, अध्या माता के स्तन को पिलाते हैं, अधीर पशुर्क्यों में उत्पन्न हुये बह्यरों को श्रतृगाद यानी तृगा न खानेवाला कहते हैं. इस लिये सब जीव चाहे वह श्वास लेते हों चाहे न लेते हों उस पर्यके आश्रित हैं, इसी कारण जो आचार्य कहते हैं कि जो कोई निरंतर एक साजतक दूध करके होम करता है वह श्रकाजमृत्यु को जीत लेता है सो केवल इतनाही नहीं सममता चाहिये बल्कि यह समम्तना चाहिये कि जिस दिन वह दूध से हवन करता है उसी दिन अकालमृत्य को जीतलेता है, अब प्रश्न यह है कि वे अन खाये जाने

पर भी क्यों कम्र नहीं होते हैं उत्तर यह मिलता है कि पुरुष यानी आल का भोक्ता अविनाशी है, वही इस अलको बार बार उत्पल्न करता है, और जो इस अलको अश्वत जानता है वही पुरुष अविनाशी होता है, क्योंकि इस अलको बुद्धि और कर्म करके उत्पल्ल किया करता है, यदि वह पुरुष इस अलको उत्पल्ल न किया करता तो वह अल अवश्य नाश हो जाता और जो ऐसा कहा है कि वह अल को मुख से खाता है उस का भाव यह है कि प्रतीक का अर्थ मुख है, इस जिये "मुखेन" यह पद मूल में कहागया है, और जो मंत्र में यह कहा गया है कि वह पुरुष यानी अलका भोका देवयोनि को प्राप्त होता है यह अलयक की प्रशंसा है।। २।।

मन्त्रः ३

त्रीएयात्मनेऽकुरुतेति मनो वाचं पाणं तान्यात्मनेऽकुरुतान्यत्र-मना अभूवं नादर्शमन्यत्रमना अभूवं नाअौषमिति मनसा क्षेव पश्यति मनसा शृरणोति कामः संकल्पो विचिकित्सा श्रद्धाऽश्रद्धा धृतिरधृति-हींधीभींदित्येतत्सर्वे मन एव तस्मादिष पृष्ठत उपस्पृष्ठो मनसा विजा-नाति यः कश्च शब्दो वागेव सा एषा क्षन्तमायत्तेषा हि न प्राणो-ऽपानो व्यान उदानः समानोऽन इत्येतत्सर्वे पाण एवैतन्मयो वा अययात्मा वास्त्रयो मनोमयः पाणमयः ॥

पदच्छेदः।

त्रीणि, आत्मने, अकुरुत, इति, मनः, वाचम्, प्राण्म्, तानि, आत्मने, अकुरुत, अन्यत्रमनाः, अभूवम्, न, अदर्शम्, अन्यत्रमनाः, अभूवम्, न, अदर्शम्, अन्यत्रमनाः, अभूवम्, न, अदर्शम्, अन्यत्रमनाः, अभूवम्, न, अश्रोषम्, इति, मनसा, हि, एव, पश्यति, मनसा, शृतोति, कामः, संकरुपः, विचिकित्सा, अद्धा, अश्रद्धा, वृतिः, अन्धिः, भीः, इति, एतत्, सर्वम्, मनः, एव, तस्मात्, अपि, पृष्ठतः, उपस्पृष्टः, मनसा, विज्ञानाति, यः, कः, च, शब्दः, वाक् एव, सा, एवा, हि, अन्तम्, आयन्ता, एवा, हि, न, प्राणः, अपानः,

ध्यानः, उद्दोनः, समातः, झनः, इति, एतत्, सर्वम्, प्रांगाः, एव, एतन्मयः, बा, अयम्, झात्मा, बाङ्मयः, मनोमयः, प्राग्यमयः॥

भ्रन्वयः पदार्थाः पदार्थाः + कल्पादी=करूप के भादि में मनसा एव=मन क्रके ही + पिता≕पिता + पुरुषः=पुरुष श्चात्मने=भपने विये पश्यति ⇒देखता है त्रीिख्⊐तीन श्रद्ध मनसा वै≠मन करके ही श्रकुरुत=उत्पन्न करता भया श्यणोति=सुनता है तानि=अर्थात् इन अत्रों को + अधुना≔श्रव यानी +मनःस्वरूप- } _ मनका स्वरूप कहा मुच्यते } जाता है मनः=मन वाचम्=वाणी कामः≕काम च≕शौर संकल्पः≕संकल्प विचिकित्सः⇒संदे**ह** प्राणम्=प्राण को आत्मने=श्रपने तिये अद्धा=भहा अकुरुत=उत्त्पन्न करता भवा षश्रदा≕त्रश्रदा **धृतिः=धृ**ति यदा=जब अन्यत्रमनाः स्त्रीत जगह गया है मन जिसका ऐसा महोता भया **अ**धृतिः=त्रधृति होः=सजा धीः≔बुद्धि इति≕तव भीः≔भय **म ऋदर्शम्**=में रूप को नहीं दे-इति=इस प्रकार खता भया पतत्त्≐ये + यदा=जब सर्वम्≃सव भन्यत्रमनाः=धौर जगह गया हुमा मनः एव≕मनहीं के स्वरूप हैं

है मन जिसका ऐसामें तस्मात् अपि जिसी कारण अभूषम् इति भवा वानीऐसी पृष्ठतः ज्यपं ने ने से न देखी मेरी अवस्था भई हुई पीठ पर + अतः ज्ञतिस हेतु उपस्पृष्ठः ज्यूसरे के हाथ से अभीषम्हित जैने नहीं सुनता मया हुन्ना हुन्ना हिज्योंकि + पुरुषः ज्युष्ट

+ मनसा=अपने मन करके विजानाति= र्जानताहै कि मेरी पीठ को किसी ने छुत्रा है + ऋध=स्रव

+ वाक्=वाणी का स्वरूप

+ इति=इस प्रकार

+ कथ्यते=कहा जाता है

यः≕जो

कश्च=कोई यानी वर्णात्मक

श्रीर ध्वन्यात्मक

शब्द:=शब्द है

सा≔वह

पव≕ही

वाकु=वासी है यानी वासी

का स्वरूप है

एषा हि=यही वाशी निश्चय

करके

श्चन्तम्=निर्णय के श्चन्त तक श्रायत्ता=पहुँची हुई है

हि=क्योंकि

एषा=यह वाणी

+ अन्यन न) और करके नहीं प्रकाश्या / प्रकाश होने योग्य है

+ श्रध=श्रव

+ प्रागः=प्राग का स्वरूप

+ उच्यते=कहा जाता है

द्यापानः≔नाभिसेनीचेतक जाने वाला वाय

उदानः≕पैर से खेकर मस्तक तक ऊर्ध्वसंचारी वायु

समानः≔लाये हुये श्रव को पचाने वाला बाय

+ एत=ये

+ पञ्चधा=पांच प्रकार के

+ प्रागः=प्राग हैं

+ च=श्रीर

इति अनः≔इस प्रकार का चलने

वाला

पतत्=यह

सर्वम्=सब प्रागुः≔प्राग्

एव=ही है

+ अतः=इस लिये

श्रयम्≕यह

श्चात्मा=जीवारमा

पतन्मयः≔एतन्मय है प्रर्थात वाङ्मयः=वाणीमय है

मनोमयः=मनोमय है

प्राणुमयः=प्राणमय है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! सिष्ट के आदि में जो पिताने अपने लिये तीन आ में को उत्पन्न किया वे तीन अन्न मन, वाणी और प्राण् है, इसिनये हे सौम्य ! जब किसी का मन ऋौर जगह चला जाता है तब वह कहता है कि मन झौर जगह होने के कारणा मैंने इस रूप को नहीं देखा, ख्रीर फिर कहता है कि मन ख्रीर जगह चले जाने के कारण प्रैंने किसी बात को सुना भी नहीं. हे प्रियदर्शन ! मन करके ही पुरुष देखता है, मन करके ही पुरुष सुनता है, यदि मन न हो तो वह न देख सकता है, न सुन सकता है, सुनो ब्राव मैं मनके स्वरूप को कहता हूं जो कामना है, संकल्प है, श्रद्धा है, अश्रद्धा है, सन्देह है, घृति है, द्र्याधृति है, जल्जा है, बुद्धि है, भय है वह सब मनही के रूप हैं. इसी मन करके उस पुरुष को सब बस्तुओं का ज्ञान होता है, अध्यर कोई पुरुष किसी की पीठ को छूदेतो उस पुरुष को पीठन देखने पर . भी मन के द्वारा इस बात का ज्ञान होजाता है कि किसी पुरुष ने मेरी पीठ को छूट्या है. हे सौम्य ! सुनो अध्व में वागाि के स्वरूप को कहता हूं जो शब्द है चाहे वह वर्गातमक हो चाहे ध्वन्यात्मक हो उसका ज्ञान वास्ती करके ही होता है, छौर उस शब्द के निर्साय के छन्त तक वार्गी ही पहुँचती है, जैसे मन प्रकाशस्त्ररूप है वैसे वार्गी भी प्रकाशस्वरूप हें, ऋव में प्राग्त के स्वरूप को कहता हूं तुम सावधान होकर सुनो प्राग्त पाँच प्रकार का है उसके नाम प्राग्त, श्रपान, व्यान, े उदान, समान हैं, प्राग्त वह वायु है जो मुख से नासिका तक चलता है, आरपान वह वायु है जो नामिभे नीचे को जाता है, व्यान वह वायु है जो प्रागा झौर त्र्यपान को नियम में रखता है, उदान वह वायु है जो पेरस लेकर मस्तक तक चला करता है, समान वह वायु है जो खाये हुये श्चन्नको पचाता है, श्चीर इन्हीं सबके साथ यह जीवात्मा एतन्मय है यानी यही वासीमय है, यही मनोमय है, यही प्रासामय है ॥ ३ ॥ मन्त्रः ४

त्रयो लोका एतएव वागेवायं लोको मनोऽन्तरिक्षलोकः पाणो-ऽसौ लोकः ॥

पदच्छेदः ।

त्रयः, लोकाः, एते, एव, वाग्, एव, अयम्, लोकः, मनः, अन्त-रिक्षलोकः, प्रायाः, असी, लोकः ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

एते एव=ये ही मन वाणी प्राण त्रयः≕तीन

श्रयम्=यह स्तोक:=पृथ्वीलोक है

लोकाः≔जोक यानी भ

घर :=मन

भुवः, स्वः

श्रन्तरिक्षलोकः=भन्तरिक्ष लोक है + च=श्रोर

+सन्ति≕हैं

+ तत्र=तिनमें

प्रासाः=प्रासही श्रसी=वह

वाग्=वार्या पच=निश्चय करके

लाकः≔युवोक है

भावार्ध ।

हे सौम्य ! यही तीन यानी वाग्गी, मन ऋौर प्राग्ग तीन लोक भूः भुवः स्वः हैं, तिन में से वास्ती निश्चय करके यह पृथ्वीलोक है, भन श्चन्तरिक्षलोक है, श्रीर प्राण गुजोक है।। ४।।

मन्त्रः ५

त्रयो वेदा एतएव वागेवर्ग्वेदो मनो यजुर्वेदः पाराः सामवेदः ॥ पदच्छेदः ।

त्रयः, वेदाः, एते, एव, वाक्, एव, ऋग्वेदः, मनः, यजुर्वेदः, प्रागाः, सामवेदः ॥

श्चन्चयः

पदार्थाः | अन्वयः

पदार्थाः

पते पव=यहरी

त्रयः≔तीन यानी वाणी, ऋग्वेदः=ऋग्वेद है

ं मन, प्राण् बेटाः=तीन वेद हैं

+ तत्र≔तिनमें वाक=बायी पच≕निश्चय करके

ग्रन:=मन यजुर्चेदः=यजुर्वेद है

प्रागुः=प्राग सामवेदः=सामवेद है

भावार्थ।

हे सौम्य ! यही तीन यानी वार्ग्गा, मन, प्राग्ग तीन वेद हैं, तिन में वार्ग्गा निश्चय करके ऋग्वेद है, मन यजुर्वेद है, प्राग्ग साम-वेद है ॥ ४ ॥

मन्त्रः ६

देवाः पितरो मनुष्या एतएव वागेव देवा मनः पितरः पार्गो मनुष्याः ॥

पदच्छेदः ।

देवाः, पितरः, मनुष्याः, एते, एव, वाग्, एव, देवाः, मनः, पितरः, प्रागाः, मनुष्याः ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः श्रम्वयः

पदार्थाः

पते=यह पव=ही

एव=हा + त्रयः≔तीन यानी वाणी,

मन, प्राग् **देवाः**≔देवता पितर≔पितर

मनुष्याः≔मनुष्य हैं + तत्र=तिनमें से वाग्=वार्षी

एव=निश्चय करके

देवाः=देवता हैं मनः=मन

पितरः=िषतर हैं प्रागुः=प्राग

मनुष्याः=मनुष्य हैं

भावार्थ ।

यही तीन यानी वास्मी, मन, प्रास्म, देवता, पितर, मनुष्य हैं, तिनमें से निश्चय करके वास्मी देवता हैं, मन पितर हैं, और प्रास्म मनुष्य हैं ॥ ६ ॥

मन्त्रः ७

पिता माता भजैत एव मन एव भिता वाङ्माता शाणः भजा ॥ पदच्छेदः।

पिता, माता, प्रजा, एते, एव, मनः, एव, पिता, वाक्, माता, प्रारााः, प्रजा ॥ ग्रन्धयः

पदार्थाः श्चन्ययः पदार्थाः

पति=यह एव=ही

प्रजः=मन

+श्रयः=तीन यानी वाणी

प्रश्च=निरचय करके

मन प्राया

पिता=पिता

माता=माता पिता=पिता वाक्=वाणी माता=माता है

प्रजा=पुत्र हैं + तत्र=डनमें से

प्रागुः=प्राग प्रजा=पुत्र हैं

भावार्थ ।

हे सोम्य ! यही तीन यानी वागाी, मन, प्रागा, माता, पिता, पुत्र हैं. तिन में से निश्चय करके मन पिता है, वागी माता है, प्रागा प्रत्र है ॥ ७ ॥

मन्त्रः ट

विज्ञातं विजिज्ञास्यमविज्ञातमेतएव यर्तिकच विज्ञातं वाचस्त-द्रपं वाग्घि विज्ञाता वागेनं तद्भुत्वाऽवति ॥

पदच्छेदः।

विज्ञातम्, विजिज्ञास्यम्, अविज्ञातम्, एते, एव, यत्, किंच, विज्ञातम्, वाचः, तत्, रूपम्, वाग्, हि, विज्ञाता, वाग्, एनम्. तत्त. भृत्वा, श्रवति ॥

ग्रन्वयः

पदार्थाः | श्रन्वयः

पदार्थाः

प्रते=यह पच=ही

+ च=शं श्रविद्यातम्=अविज्ञात (जो श्रवि-

+ श्रयः=तीन यानी मन,वाणी,

ज्ञात है)

प्राचा

+ तत्र≕तिनमें से यत्=जो

विज्ञातम्=विज्ञात (जो ज्ञात हो चुका है)

किच=कुष

विजिज्ञास्यम्=विजिज्ञास्य (जो ज्ञात होने योग्य है)

विश्वातम्≕जाना गया है तत्=वह

वाचः≔वायी का क्रपम्≔रूप है हि=क्योंकि वाग्र्≕वायी ही विक्राता≔विकाती भी है वानी

तत्=ऐसा विज्ञात भूस्या≔होकर्षै पनम्=वायों के महस्व जा-वनेवाले पुरुष को अवति⇒अञ्च करके पोषया करती है

जाननेवाली है वाग्=वार्गा ही

भावार्थ ।

हे सौम्य ! यही तीन यानी वार्ग्या, मन, प्राग्य विज्ञात (जो ज्ञात हो चुका है) विजिज्ञास्य (जो जानने योग्य है) ध्रौर ध्रविज्ञात (जो नहीं जाना गया है) हैं, तिनमें से जो कुछ जाना गया है वह वार्ग्या का रूप है, क्योंकि वार्ग्या ही विज्ञात्री है, यानी जानने वाज़ी है, वार्ग्या ही ऐसी विज्ञात होकर वार्ग्या के महत्त्व के जाननेवाले पुरुष को ध्रत्र करके पालन पोषग्य करती है।।
।।

मन्त्रः ६

यत्किंच विजिज्ञास्यं मनसस्तद्भुपं मनो हि विजिज्ञास्यं मन एनं तद्भूत्वाऽवति ।।

पदच्छेदः ।

यत्, किंच, विजिज्ञास्यम्, मनसः, तत्, रूपम्, मनः, हि, विजि-ज्ञास्यम्, मनः, एनम्, तत्, भूत्वा, श्चवति ॥ श्चन्वयः पदार्थाः । श्चन्वयः पदार्थाः

झन्वयः पदाथाः यत्≕नो किंच≕कुष

+ तत्≔वही मनः≔मन है

विजिहास्यम्≕जानने योग्य है तत्म्≕वही

मनः=मनही तत्=जानने योग्य

मनसः=मनका

भूत्वा=होकर

रूपम्≔स्वरूप है हि=क्योंकि

एनम्=मनके महस्वके जा-ननेवाको पुरुष की

+ यत्≕जो

श्रवति=रक्षा करता है

विजिज्ञास्यम्=जानने योग्य है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! जो जानने योग्य है, वही मन का स्वरूप है, क्योंकि जो जानने योग्य है वही मन है, मनही जानने योग्य होकर मन के महत्त्व के जाननेवाले पुरुष की रक्षा करता है ॥ ६ ॥

मन्त्रः १०

यत्किचाविज्ञातं प्राणस्य तद्रूपं प्राणोद्यविज्ञातः प्राण एनं तद्भूत्वाऽवति ॥

पदच्छेदः ।

यत्, किंच, अविज्ञातम्, प्राणस्य, तत्, रूपम्, प्राणः, हि, अविज्ञातः, प्राणः, एनम्, तत्, भूत्वा, अविति ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

यत्=जो किंच=कुष श्रविज्ञातम्=नहीं जाना गया है तत्=वही प्रागुस्य=प्रायुका

तत्=वहा |ग्रास्य=प्राग्य का रूपम्=रूप है |हि=क्योंकि प्राग्राः=प्राग्य श्रविज्ञातः=श्रविज्ञात है + च=श्रीर

> प्राणः=वह प्राणही तत्=श्रविद्यात

भृत्वा≔होकर एनम्=प्राखवेत्ता पुरुष की

श्रवति=रक्षा करता है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! जो कुछ नहीं जाना गया है, वही प्राग्त का स्वरूप है, क्योंकि प्राग्त अविज्ञात है, और यही प्राग्त अविज्ञात होकर प्राग्त-वेत्ता की रक्षा करता है ॥ १०॥

मन्त्रः ११

तस्यै वाचः पृथिवी शरीरं ज्योतीरूपमयमग्निस्तवावत्येव वाक्ना-वती पृथिवी तावानयमग्निः ॥

पदच्छेदः ।

तस्यै, वाचः, पृथिवी, शरीरम्, ज्योतीरूपम्, श्रयम्, श्राग्नः, तत्, यावती, एव, वाक्, तावती, पृथिवी, तावान्, श्रयम्, श्राग्नः ॥ **अ**न्वयः

पदार्थाः म्रन्वयः

पदार्थाः

तस्यै=उस वाचः=वायी का शरीरम्=शरीर पृथिवी=पृथिवी है + च=श्रीर ज्योतीरूपम्=प्रकाशात्मकरूप श्रयम्=यह प्रत्यक्ष श्राग्नः=झिन है तत्=तिसी कारख यावती=जितनी दूर तक
पृथिवी=पृथिवी है
तावत्=उतनी दूर तक
वाक्=वायी है
+ च=भीर
यावत्=जितनी दूर तक
अग्नि:=भ्रानि है
तावत्=उतनी ही दूर तक

भावार्थ ।

हे सौम्य ! वाणी का शरीर पृथिवी है, स्प्रीर वाणी का प्रका-शात्मक रूप यह प्रत्यक्ष ऋगिन है, इसी कारण जितनी दूर तक पृथिवी है उतनी ही दूर तक वाणी है, अ्रोर जितनी दूर तक अपिन है उतनी दर तक अपनि का प्रकाशात्मक रूप है, अप्रथवा जहां तक पृथिवी आरेर अप्रिन है, वहां तक वाणी अप्रौर वाणी का स्वरूप है, हे सौम्य ! पृथिवी में पांच तत्त्व हैं, पृथिवी, जल, श्राग्नि, वायु, श्राकाश इन्हीं करके सारी सृष्टि की उत्पत्ति है. इसिनये जहां तक इन पांच तत्त्वों का श्रीर खास करके पृथिवी श्रीर श्राग्न का विस्तार है वहां तक वासी का भी विस्तार है, जैसे अपिन का कार्य नेत्र है, जिसके आश्रयरूप है, वैसे ही वाणी अगिन के आश्रय है, यानी विना अगिन के वाणी नहीं रह सक्ती है, यह प्रत्यक्ष देखने में आता है कि पुरुष के मरते समय जब तक शरीर में उच्याता रहती है तब तक भाषया शक्ति भी रहती है. जब शरीर से उष्णाता चल देती है और शीतलता आजाती है तत्र वाग्गी भी बंद हो जाती है, इसी से जाना जाता है कि वाग्री अग्नि शक्ति के आश्रित है, और जैसे अग्नि पदार्थों का प्रकाशक, और अन्धकार का नाशक है, वैसेही वासी भी उद्यारस करके सत्र पदार्थीं की प्रकाशिका है।। ११॥

मन्त्रः १२

अयैतस्य मनसो चौः शरीरं ज्योतीरूपमसावादित्यस्तवावदेव मनस्तावती चौस्तावानसावादित्यस्तौ मिथुन एसमैतां ततः पाणोऽ-जायत स इन्द्रः स एषोऽसपत्ने द्वितीयो वै सपत्नो नास्य सपत्नो भवति य एवं वेद ॥

पदच्छेदः ।

अथ, एतस्य, मनसः, दोः, शरीरम्, ज्योतीरूपम्, असौ, आदित्यः, तत्, यावत्, एव, मनः, तावती, दौः, तावान्, असौ, आदित्यः, तौ, मिधुनम्, समैताम्, ततः, प्राग्यः, अजायत, सः, इन्द्रः, सः, एषः, असपनः, द्वितीयः, वै, सपनः, न, अस्य, सपनः, अवित, यः, एवम्, वेद ॥

द्यान्वयः

पदार्थाः ग्रन्थयः

पदार्थाः

श्रथ=श्रीर एतस्य=इस मनसः=मन का श्रारीरम्≈शरीर द्योः=स्वर्ग है +तस्य=उसका ज्योतीक्ष्यम्=श्रकाशक्ष श्रादित्यः=सूर्य है तत्=इस कारवा यावत्=जितना प्रमाणवाला मनः=मन है तावती एव=ज्वना ही प्रमाण

धीः=स्वर्ग है ताबान्=उतनाही प्रमाख

द्यस्थै≔यह द्यादित्यः=सूर्व है + यदा=जब तौ=ये दोनों यानी मन भौर वःगी मिथुनम्=मिथुनभाव को समैताम्=शप्त हुवे ततः=तव उनसे प्राचा:=प्राच ष्रजायत=हुमा सः=बह प्राख इन्द्र:=बड़ा शक्तिमान् है सः=वही एषः=यह प्राख असपद्गः=स्पर्धारहित चै=निरचय करके है सपका:=स्पर्धा करने वासा

द्वितीयः≠दूसरा + भवति=होता है यः=जो प्रवम्=ऐसा वेद=जानता है

अस्य=इसक। सपज्ञः=मुकानिका करने वाला दूसरा स=नडीं अधित=डोता डै

भाषार्थ ।

हे सौम्य ! उस मन का शरीर स्वर्ग है, उसका प्रकाशक्त्प यह सूर्य है, इस कारण जितना प्रमाण्याला मन है, उतना ही प्रमाण्याला आकाश है, उतना ही प्रमाण्याला आकाश है, उतना ही प्रमाण्याला यह सूर्य है, जब दोनों यानी मन और बाणी मिश्रुनभाव को प्राप्त होते हैं, यानी संमिलित होते हैं तब उनसे प्राण्य उत्पन्न होता है, वह प्राण्य बड़ा शक्तिमान है, वही यह प्राण्य स्पर्धारहित है, स्पर्धा करनेवाला दूसरा होता है, जो ऐसा जानता है उसका मुकाबिला करनेवाला दूसरा नहीं होता है ॥ १२ ॥

मन्त्रः १३

भ्रथेतस्य पारास्यापः शरीतं ज्योतीरूपमसौ चन्द्रस्तद्यावानेव पारा-स्तावत्य त्र्यापस्तावानसौ चन्द्रस्त एते सर्व एव समाः सर्वेऽनन्ताः स यो हैतानन्तवत उपास्तेऽन्तवन्त ५ स लोकं जयत्यथ यो हैतान-नन्तानुपास्तेऽनन्त ५ स लोकं जयति ॥

पदच्छेदः ।

श्रथ, एतस्य, प्राग्रस्य, श्रापः, शरीरम्, ज्योतीरूपम्, श्रस्तौ, चन्द्रः तत्, यावान्, एव, प्राग्रः, तावत्यः, श्रापः, तावान्, श्रस्तौ, चन्द्रः, ते, एते, सर्वे, एव, समाः, सर्वे, श्रनन्ताः, सः, यः, ह, एतान्, श्रन्त-वतः, उपास्ते, श्रन्तवन्तम्, सः, लोकम्, जयित, श्रथ, यः, ह, एतान्, श्रनन्तान्, उपास्ते, श्रानन्तम्, सः, लोकम्, जयित ॥

श्रान्यः पदार्थाः श्रन्तयः पदार्थाः

श्रथ=भीर . **ए**तस्य=इस प्राग्रस्य=पाय का शरीरम्=शरीर

आपः=जब है + च=घीर + तस्य=इसका ज्योती रूपम्=प्रकाशास्मकस्त्र श्रसी=यह प्रत्यक्ष चन्द्रः≔चन्द्रमा है तत्=तिसी कारण यावान्=जितना एव=ही प्रागाः=प्राग है ताबत्यः=उतना ही श्रापः=जल है तावान्=उतनाही श्रक्षी=वह चन्द्रः=चन्द्रमा है ते=वे वाणी मन और प्राण एते=ये सर्वे=संब पच=निरचय करके समाः=श्रापस में बराबर हैं सर्वे≕सब द्यनन्ताः=धनन्त हें

े सः≔वह यः=जो ह=निश्चय करके एतान्≔इनको श्चन्तवतः=परिव्हिक् + झात्वा=जानकर उपास्ते=उपासना करता है + सः=वह ह=धवश्य **अन्तवन्तम्**=नाशवःन् लोकम्=लोकको जयति=जीतता है श्रध=थीर यः=जो पतान्≕ान मन वासी प्रासा को श्रमन्तान्=श्रपरिच्छिन्न + शात्वां=जानकर उपास्ते=उपासना करता है सः=वह श्रमन्तम्=श्रन्तरहित स्रोकम्=कोक को जयति=जीतता है

भावार्थ ।

हे सौन्य ! उस प्राण का शरीर जल है, यानी जल के आश्रय प्राण है, इसी कारण संस्कृत में कहा है, "नलं जीवनम्" विना जल के किसी प्राणों का जीवन नहीं रह सक्ता है, और प्राण का प्रकाशक्त यह चन्द्रमा है, इस कारण जहां तक प्राण की स्थित है वहां तक जल है, और वहीं तक चन्द्रमा है, इस लिये वाणी, मन और प्राण आपसा में वरावर है, और सबही अनन्त हैं जो कोई इन वाणी, मन और प्राण का प्रति है वह अवस्य

नाशवान् कोकों को प्राप्त होता है, झोर जो उपासक मन, वासी, प्रास्त को अपरिच्छित्र जानकर उपासना करता है, वह अवश्य अन्त-रहित लोकों को प्राप्त होता है ॥ १३॥

मन्त्रः१४

स एष संवत्सरः प्रजापितः षोडशकलस्तस्य रात्रय एव पश्च-दश कला ध्रुवैवास्य षोडशीकला स रात्रिभिरेवाऽऽच पूर्यतेऽप च श्लीयते सोऽमावास्या ५ रात्रिमेतया षोडश्या कलया सर्वमिदं पाण-भृदनुप्रविश्य ततः प्रातर्जीयते तस्मादेता ५ रात्रिं प्राणभृतः प्राणं न विच्छिन्द्यादिष कुकलासस्यैतस्या एव देवताया अप।चत्यै ॥

सः, एषः, संवत्सरः, प्रजापितः, षोडशकजः, तस्य, रात्रयः, एव, पश्चदश, कजाः, ध्रुवा, एव, अस्य, षोडशीकजा, सः, रात्रिभिः, एव आ, च, पूर्वते, अप, च, क्षीयते, सः, अमावास्याम्, रात्रिम्, एतया, षोडश्या, कज्जया, सर्वम्, इदम्, प्राग्णभृत्, अनुप्रविश्य, ततः, प्रातः, जायते, तस्मान्, एताम्, रात्रिम्, प्राग्णभृतः, प्राग्णम्, न, विच्छिन्न्यान्, अपि, क्रकजासस्य, एतस्याः, एव, देवतायाः, अपचित्ये ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

शात, अपि, क्रुकजासस्य, एतस्य
स्यः पदार्थाः
सः=वही
एषः=्वह
वोडशक्तः≔सोलह कलावाला
स्वरसरः=कालरूर
प्रजापतिः=प्रजापति है
तस्य=उस प्रजापति के
रात्रयः=शुक्र और कृष्यपश्च
की शात्रि सिकाकर
पञ्चत्श=पन्द्रह
कलाः=कला है बानी भाग

+ च=षीर

श्रस्य=उस प्रजापति की
वीडशीकला=सोबद्दर्गी कक्षा
प्रवा एच=ध्रुव कक्षा है जो सद्दा*
श्रवा एच स्थान रहती है
सः=वह प्रजापति
रात्रिभिः=कक्षाओं करके
एव=ही
ग्रापूर्यते=पूर्ण कियाजाता है

अपक्षीयते= { ही श्रीय मीकिया जाता है

+ततः=तत्परचात् सः=वही प्रजापति

श्रमाबास्याम्) = श्रमावस की तिथिको रात्रिम्)

पतया=इस बोडश्या=सोबहवीं कलया=कवा के साथ इदम्=इस सर्वम्=सव प्राण्युत्=माथियों में

अनुप्रविश्य=प्रवेश करके प्रातः=दूसरे दिन प्रातःकास

जायते=उत्पन्न होता है

तस्मात्=इस विये

पताम्=इस

रात्रिम्=समावास्या की

रात्रि को

प्राश्मभृतः=जीवमात्र को न विच्छिन्द्यात्=कोई न मारे + च=भौर

कृकलासस्य=घदश्रेनीय भीर सुभाव हिंस्य गिरगिट के

> प्राग्म्=प्राय को श्रपि=भी

पतस्याः पव=इस€ी देवतायाः=चन्द्रदेवता के झपचित्यै=पृजा के क्रिये

+ न एच=न + छिन्द्यात्=मारे

भावार्थ।

हे सौम्य ! वही यह सोलह कलावाला संवत्सरात्मक प्रजापित है, और जैसे शुक्तपक्ष और कृष्णपक्ष की रात्रि मिलाकर पन्द्रह कला इसके घटते बढ़ते हैं, और सोलहवीं इसकी कला जो सदा अवल रहती है, और अमावस की तिथिको सोलहवीं कला से शुक्त होकर सब प्राण्यों के अन्दर प्रवेश करता है और दूसरे दिन प्रातःकाल उत्पन्न होता है, इसी प्रकार यह पुरुष भी सोलह कलावाला है, इसके सोलह कलाओं में से पन्द्रह कला गौ, महिष, भूमि, हिरयय, साम्राज्यादि धन हैं, जो घटते बढ़ते रहते हैं और सोलहवीं इसकी कला आत्मा है जो घटने बढ़ने से रहित होकर अचल स्थित रहता है हे सौम्य ! इस लिये इस अमावस की रात्रिको जीवमात्र का मारना निषेष है, यहां तक कि अदर्शनीय स्वभावहिंस्य गिरगिटान को भी चन्द्रदेवता की प्रतिष्ठानिमत्त भी हत न करे ॥ १४॥

मन्त्रः १५

यो वै स संवत्सरः मजापतिः षोडशकलो ऽयमेव स यो ऽयमेवं वित्पुरू-पस्तस्य वित्तमेव पञ्चदश कला श्रात्मैवास्य षोडशी कला स वित्तेनै-वाऽऽच पूर्वतेऽप च श्लीयते तदेतन्नभ्यं यदयमात्मा मथित्रित्तं तस्माच-चपि सर्वज्यानिं जीयते त्रात्मना चेज्जीवति मधिनाऽगादित्येवाऽऽहुः॥

पदच्छेदः ।

यः, वै, सः, संवत्सरः, प्रजापतिः, षोडशकलः, श्रयम्, एव, सः, यः, अयम, एवंवित्, पुरुषः, तस्य, वित्तम्, एव, पश्चदश, कला, आत्मा, एव, श्रास्य, षोडशी, कला, सः, वित्तेन, एव, श्रा, च, पूर्यते, श्राप, च, क्षीयते, तत्, एतत्, नभ्यम्, यत्, अयम्, अन्तमा, प्रधिः, विक्तम्, तस्मात्, यदि, श्रापि, सर्वज्यानिम्, जोयते, श्रात्मना, चेत्, जीवति, प्रधिना, श्रमात्, इति, एव, श्राहुः ॥

अन्वयः

पदार्थाः यः≕जो सः=वह वै=िनश्चय करके षोडशकलः=सोलह कलावाला संवत्सरः=संवत्सरात्मक प्रजापतिः=प्रजापति है सः एव=वह ही श्रयम्=यह सोलह कलायुक्र पुरुषः=पुरुष है **एखं** वित्=इस प्रकार जानता है तस्य≕उसका वित्तम्=धन गौ भादि प्रच≕ग्रवश्य पञ्चदश कक्षा=पन्द्रह कलाके तुस्य

पदार्थाः **ग्रस्य=**उसका श्चात्मा=श्रात्मा एव=निश्चय करके षे) डशी=सो बहवीं कला≔कला धुव के तुस्य भटल है सः=वह पुरुष वित्तेन=गा भादि धन करके पव≕ही आपूर्यते=बदता है + च=ग्रौर श्रपक्षीयते=घटजाता है यदि्≕अगर यत्=जो श्रयम्=यह

श्चारमा=वात्मा है

तत्=पो
पतत्=यह
नभ्यम्=नामिस्थानी है
च=शौर
यत्=जो
वित्तम्=गी झादि धन है
प्रधिः=वह प्रधि के समान है |
सस्मात्=इस कारण
यद्यपि=यचपि
श्चस्य=इसका
सर्वज्यानिम्=सर्वस्वहानि को
जीयते=पास होजाय
+ तथापि=तो भी उसकी

+ म + श्वातः=कोई क्षति नहीं है
चेत्=मगर
आत्मना=भारमा करके
+ सः=वह
जीवति=जीता हुआ हो
हति=ऐसी हाजत में
आहु: पूध=जोग उनके बारे में
यही कहेंगे कि
सः=वह केवल
प्रधिना=प्रधिस्थानी धन से
हुआ है पर आस्मा
अगात्=

भावार्थ।

हे सोम्य! जैसे सोलह कलायुक्त संवत्सगत्मक प्रजापित है वैसे ही यह सोलह कलायुक्त पुरुष भी है, झौर जैसे प्रजापित के पन्द्रह कला यानी प्रतिपदा से आमावस के अर्धभागतक घटते बढ़ते हैं वैसे ही इस ज्ञानी पुरुष के भी गौ आदि धन बढ़ते घटते हैं, और जैसे प्रजापित का सोलहवाँ कला यानी अन्तिमभाग आमावस और पूर्णमासी का धुववत् अटल रहता है, उसी प्रकार इस पुरुष का भी सोलहवाँ कला यानी आत्मा अटल बना रहता है, और इसी अविनाशी आत्मा के आअय पन्द्रह कला स्थित रहते हैं, ये पन्द्रह कला अरा और परिधि के तुल्य हैं, और आत्मा चक्र के नाभिस्थानी है, जैसे नाभि के वन रहने पर निकले हुये और और परिधि दुरुस्त होसको हैं उसी प्रकार आत्मा के आअय गो आदि धन भी रहते हैं, यदि यह धन एकबार नष्ट भी होजायँ और आत्मा बना रहे तो फिर भी धन प्राप्त हो सक्ता है, और संसार में लोग ऐसा भी कहते हैं कि अरा

कोर परिधि के तुल्य इस पुरुष के सब धन नष्ट होगय हैं, परन्तु इसका क्यात्मा चक्रनाभि के तरह बना है जिस करके यह फिर अपने धन को पूर्ण करलेगा ।। १४ ।।

मन्त्रः १६

श्रथ त्रयो वाव लोका मनुष्यलोकः भितृलोको देवलोक इति सोऽयं मनुष्यलोकः पुत्रेणैव जय्यो नान्येन कर्मणा कर्मणा पितृलोको नि-षया देवलोको देवलोको वै लोकाना ५ श्रेष्ठस्तस्माद्विष्ठां प्रश्×सन्ति॥

पदच्छेदः ।

अथ, त्रयः, वाव, लोकाः, मनुष्यलोकः, पितृलोकः, देवलोकः, इति, सः, अयम्, मनुष्यलोकः, पुत्रेग्ग, एव, जय्यः, न, अन्येन, कर्मग्गा, फितृलोकः, विद्यया, देवलोकः, देवलोकः, वे, लोकानाम, श्रेष्ठः, तस्मात्, विद्याम, प्रशंसन्ति ॥

पदार्थाः | ग्रन्वयः श्चाथ=श्रीर त्रयः=तीन वाव=ही लोकाः=लोक हैं यानी मनुष्यलोकः=मनुष्यलोक पित्रलांकः=पितरसांक + स=धीर देवलोकः इति=देवलोक के नाम से प्रसिद्ध है + तत्र≕तिनमें सः≔वही श्रयम्≔यह मनुष्यक्षोकः=मनुष्यक्षोक पुत्रेगा=पुत्र करके एव≕ही

श्रन्थयः पदार्थाः

न सन्येन } = सन्य यज्ञावि कर्म

कर्मणा > = करके नहां

कर्मणा=कर्म करके

पितृलोकः=पितरलोक

+ च=श्रीर
विद्यया=विया करके
देवलोकः=देवलोक

+ जर्थः=जीतने योग्य है
देवलोकः=देवलोक
वै=निरचय करके
लोकानाम्=तीनों लोकों में
श्रेष्ठः=श्रेष्ठ है
तस्मात्=ह्सी कारय
विद्याम्=विया की

+ विद्यांसः=विद्यान्तोग

भावार्थ ।

है सौम्य ! तीन लोक हैं, यानी मनुष्यलोक, पितरलोक, देवलोक.
मनुष्यलोक पुत्र करके प्राप्त होने योग्य है, और कमों करके नहीं,
यज्ञादि कमों करके पितरलोक प्राप्त होने योग्य है, और ज्ञान करके
देवलोक प्राप्त होने योग्य है, कहे हुये तीनों लोकों में से देवलोक श्रेष्ठ
है, क्योंकि देवलोक की प्राप्ति ज्ञान करके होती है, और यही कारगा
है कि ज्ञानकी प्रशंसा विद्वान लोग करते हैं ॥ १६ ॥

मन्त्रः १७

अथातः संप्रिचिदा प्रैष्यन्मन्यतेऽथ पुत्रमाह त्वं ब्रह्म त्वं यहस्वं लोक इति स पुत्रः प्रत्याहाहं ब्रह्माहं यह्नोहं लोक इति यद्दे किंचा-नृक्कं तस्य सर्वस्य ब्रह्मेत्येकता ये वे के च यह्नास्तेषा स्मवषां यह्न इत्येकता ये वे के च लोकास्तेषा सर्वेषां लोक इत्येकतैतावद्वा इद स्मित्रमा सर्वे सन्न्यमितोऽभुनजदिति तस्मात्पुत्रमनुशिष्टं लोक्य-माहुस्तस्मादेनमनुशासति स यदैवंविदस्माल्लोकात्प्रैत्ययेभिरेव प्राणैः सह पुत्रमाविशति स यचनेन किंचिद्रस्णयाऽकृतं भवति तस्मा-देन सर्वस्मात्पुत्रो मुख्यति तस्मात्पुत्रो नाम स पुत्रणैवास्मिल्लोके मतितिष्ठत्यथैनमेते दैवाः प्राणा अमृता आविशन्ति ।।

पदच्छेदः ।

अथ, अतः, संप्रत्तिः, यदा, प्रेच्यन्, मन्यते, अथ, पुत्रम्, आह, त्वम्, ब्रह्म, त्वम्, यहः, त्वम्, लोकः, इति, सः, पुतः, प्रत्याह, अहम्, ब्रह्म, यहः, अहम्, लोकः, इति, यत्, वै, किंच, अन्-क्रम्, तस्य, सर्वस्य, ब्रह्म, इति, एकता, ये, वै, के, च, यहाः, तेषाम्, सर्वेषाम्, यहः, इति, एकता, ये, वै, के, च, लोकः, तेषाम्, सर्वेषाम्, यहः, इति, एकता, एतावत्, वा, इदम्, सर्वम्, एतत्, मा, सर्वम्, सन्, अयम्, इतः, अभुनजत्, इति, तस्मात्, पुत्रम्, अनुशासवि, सः, यदा, रिष्टम्, लोक्यम्, आहुः, तस्मात्, एनम्, अनुशासवि, सः, यदा,

एवंवित्, झस्मात्, क्षोकात्, प्रैति, झथ, एभिः, एव, प्रायौः, सह, पुत्रम्, आविशति, सः, यदि, अनेन, किंचित्, अक्ष्णया, अकृतम्, भवति, तस्मात्, एनम्, सर्वस्मात्, पुत्रः, मुश्वति, तस्मात्, पुत्रः, नाम, धः, पुत्रेगा, एव, अस्मिम्, क्लोके, प्रतितिष्ठति, अथ, एनम्, एते, दैवाः, प्राग्णाः, अमृताः, आविशन्ति ॥ पदार्थाः

पदार्थाः ं अन्वयः ग्रन्वयः

द्धाथ अतः=तीन लोकों के कथन

के पी खे संप्रसि:=संप्रति कर्म का वर्णन

+ कथ्यते=किया जाता है

यदा=जब

+ पिता=पिता प्रैध्यन्=मरनेवाला

मन्यते=अपने को समसता है

श्रथ=तब

+ सः=वह पुत्रम्=पुत्र से

आह=कइता है कि

त्वम्⇒त्

ब्रह्म=वेद है

त्वम्=त् यज्ञः=यज्ञ है त्वम्=त्

लोकः=बोक है इति=इस प्रकार

+ शुरवा=सुन कर

सः=वह

पुत्रः=पुत्र

प्रत्याह=जवाव देता है कि

श्रहम्≕में

Ę

श्रहम्≕में यक्षः≔यज्ञ है

लोकः इति=जोक हं तब

+ पिता पुनः } पिता फिर कहता चदति } = है कि

यत्≕जो

किंच वै⇒कुछ गुम करके अनूक्रम्=पदा गया है अथवा

नहीं पदा गया है

तस्य=उस

सर्वस्य⇒सबकी एकता=एकता

ब्रह्म इति=वेद के साथ हैं

+ च=भीर ये वै के=जो कोई

तेषाम्=डन

सर्वेषाम्=सबकी प्रकता≕एकता

यज्ञः इति=यज्ञ के साथ है ख≕भौर

ये वै के=जो कोई

(स्रोक मुसकरके जीते स्रोकाः={ गर्ने हैं अथवा नहीं जीते गर्ने हैं

तेषाम्=उन सर्वेषाम्=सब्की एकता=एकता

पकता≔पुकता स्रोकः इति≕बोकपद के साथ है + पुत्र≕हे पुत्र !

म पुत्र⊸र पुत्र ! एतावत् वै=इतना ही

इदम्=यह

सर्वेम्= { सबहै यानी इन तीन सर्वेम्= { कमों से अधिक और कोई कमें नहीं है

पतत्=इस सर्वम्=सर भार को

्रमुक्तले अलग करके - मापिक्छ्य= { मौर अपने उपर रख करके

> + मम=मेरा सन्=विद्वान् श्रयम्=यह पुत्र इतः=इस खोक से मा=मुक्को

अभुनजत् (जण्डी तरह पानेगा स्ति यानी सर्व बन्धनों से डुवादेगा

तस्मात्=इस कारण अनुशिष्टम्=सुशिक्षित पुत्रम्=पुत्रको सोकम्=पिटकोकदितकारी

+ जनाः=विद्वानुसोग भादुः=कहते हैं + च=षौर तस्मात्=इसी कारवा प्रनम्=इस पुत्र को अनुशासति=विद्या पदाते चौर कर्म सिसाते हैं

> + यदा≔जब सः=वह पिता प्रवंबित्=ऐसा जाननेवासा अस्मात्=इस स्रोकात्≕सोक से यानी इस शरीर से

प्रैति=चना जाता है इथ=तब

+ सः≔वह

प्रसिः≔इन प्राणः प्रच=वायी, मन भौर

> प्राया के सह=साथ पुत्रम्=पुत्र में

श्राविशति=प्रवेश करता है + येन=जिस करके

+ सः≔वह पुत्र

+ पितृवत्=पिता की तरह

+ कर्म=कर्मी को + कराति=करता है

यदि=ग्रगर

भनेन≔इस पिता कस्के

किंचित्=कुष् झस्साया=विप्तवस^{्य} श्रकुतम्=नर्हो किया गया

भवति=होता है तो

सः≔बह

पुत्रः=पुत्र
तस्मात्⇒वस
सर्वस्मात्=सव त्रकृत कर्म से
पनम्=इस पिता को
मुञ्जिति=खुदा देता है
तस्मात्=इस कारण
• सः=वइ पिता
पुत्रः=पुत्र रूप
नाम=करके प्रसिद्ध है
+श्चतः=इसी कारण
• सः=वइ पिता

पुत्रेण्=पुत्रहप से
श्रहिमन् लोके=इस बोक विवे
पव=चवरय
प्रतितिष्ठति=विद्यमान रहता है
श्रथ=तत्परचात्
पनम्=इस पुत्र में
पते=वे
प्राणाः=मन, वाक्, प्राणादि
देवाः=देवता
श्रमृताः=मरणधर्मरहित
श्राविशन्ति=प्रविष्ट रहते हैं

भावार्थ ।

हे सौम्य ! तीन लोक जो ऊपर कथन कर आये हैं उन सबके पीछे अब सम्प्रत्ति कर्मका वर्गान करते हैं, हे सीम्य ! जब पिता मरने स्नगता है तब वह अपने पुत्र को समम्ताता है कि है पुत्र ! तू वेद है यानी तु वेद को पह, तु यज्ञ है यानी यज्ञ को कर, तु लोक है यानी तू सब लोकों को अपने पुरुषार्थ करके प्राप्त कर यह सुन कर पुत्र जवाब देता है कि है पिता ! मैं वेद हूं यानी वेद को पहूंगा, मैं यज्ञ हं यानी यज्ञ करूंगा श्रीर में लोक हूं यानी लोकों को जीतूंगा, तब फिर पिता कहता है, हे पुत्र ! जो कुछ मुक्त करके पढ़ा गया है, झौर जो नहीं पढ़ा गया है उन सबकी एकता वेद के साथ है. आरे जो कुछ मुक्त करके यज्ञ किया गया है उनकी एकता यज्ञ के साथ है. झौर जो क़क्क लोक जीते गये हैं या नहीं जीते गये हैं, उन सबकी एकता जोकपद के साथ है. इस ऊपर कहे हुये का आभिप्राय यह है कि जो क़द्ध पिताने खढ़के को सिखलाया है और जो क़द्ध लड़के ने पिता से सीखने को कहा है वह सब वेद में अनुगत है, और जो कुछ पितासे जड़के ने यहा करने को वाक्य दिया है वह सब यहा विषे अनुगत है, और जो पितासे लोकों की प्राप्ति के लिये जडके ने कहा है वह सब जोक में अनुगत है, हे सौन्य ! फिर पिता अपने पुत्र से कहता है कि यही तीन कर्म ऊपर कहे हुंथे हैं, इनसे अधिक कर्म कोई नहीं है, हे पुत्र ! तू मुम्त को इसके भार से उद्धार कर, और उस भारको अपने ऊपर रख, और मुम्तको सब प्रकार के बन्धनों से छुड़ा दे, पुत्र कहता है ऐसाही करूंगा. इस कारण सुशिक्षित पुत्र पितरों का हितकारी होताहै, ऐसा विद्वान जोग कहते हैं, और इसी कारण पुत्र को विद्या पढ़ाते हैं, कर्म सिखाते हैं, और जब वह पिता इस जोक से चजाजाता है तब वह इन वाक्, मन और प्राण्य के साथ पुत्र में प्रवेश करता है, और यही कारण है कि पुत्र पिताकी तरह कर्मों को करने जगता है, यदि पिताने कोई कर्म विद्याश नहीं किया है वो पुत्र उस अकृत कर्म को करके पिता को पाप से छुड़ा देता है, इसी कारण वह पिता पुत्र के रूप में संसार विषे विद्यामन रहता है, और उस पुत्र में ही सब वाक्, प्राण्य, मन आदि देववा मरण्धमं से रहित होते हुये प्रवेश करते हैं ॥ १७ ॥

मन्त्रः १८

पृथिव्ये चैनमग्नेश्च दैवी वागाविशति सा वै दैवी वाग्यया यद्यदेव बदति तत्त्वद्भवति॥

पदच्छेदः ।

पृथिन्ये, च, एनम्, झग्नेः च, देवी, वाग्, झाविशति, सा, वे, देवी, वाग्, यया, यत्, यत्, एव, वदति, तत्, तत्, भवति ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

पृशिदये=पृथिवी संशसे पृथक् स्व=मीर स्वानेः=मन्त्रि संश से

ख=भी पृथक् + सदा=जव

सदा=जय देवी=देवी सक्तियुक्त वार्य=वायी प्नम्=इस इतकूस्य पुरुष में ब्राविशैति=पवेश करती है

भावरात-म्यस्य करता **६** + तदा=तव वै≕निरचव करके

धे=ानरचन करके सा≔नही देथी=देवी थाग्≔वाथी है यया≕जिस करके यत् यत्≕को जो

+ पुरुषः=वह पुरुषः धदति=कहता है तत् तत् एव=वही वही भवति=होता है

भावार्थ ।

हे सौन्य ! यह दैनीशक्तियुक्त वार्गी पृथिवी डांश डाँग डाँग डाँग डांश से पृथक् होकर जब इस कृतकृत्य पुरुष में प्रवेश करती है तभी निरचय करके दैवी वार्गी है जिस करके वह पुरुष जो जो कहता है वह वह सब सत्य होता है ॥ १८ ॥

मन्त्रः १६

दिवरचैनमादित्याच दैवं मन श्राविशति तद्वै दैवं मनो येनाऽऽ-ं नन्येव भवत्यथो न शोचति ॥

पदच्छेदः ।

दिवः, च, एनम्, आदित्यात्, च, दैवम्, मनः, आविशति, तत्, वै, दैवम्, मनः, येन, आनन्दी, एव, भवति, अथो, न, शोचति ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

+ यदा=जब दैवम्=दैवीशक्षियुक्त मनः=भन दिवः=बाकाश के बंशसे पृथक् च=बीर बादित्यात्=सूर्य के बंश से पृथक्

+ भूत्वा=होकर एनम्=हर्से कृतकृत्य पुरुष विवे

माविशति=अवेश करता है

+ तद्।≃तव

तत्≔नद वै≕िनरचय करके दैवम्≕दैवीशक्तियुक्त मनः≔मन दे येन≕जिस करके

+ पुरुषः=पुरुष पव=भवरय झानन्दी=भानन्दित सबति=होता है झथ=भीर

न शोखति=सोच नहीं करता है

भावार्थ ।

है सौन्य ! जब दैवीशक्तियुक्त मन आकाश और सूर्य के

डांश को त्याग करके इस फ़तकृत्य पुरुष में प्रवेश करता है तब बड़ी निश्चय करके दैवीशक्तियुक्त मन है जिस करके पुरुष खानन्दित होता है झोर शोक नहीं करता है ॥ १६ ॥

मन्त्रः २०

भद्रधरचैनं चन्द्रपसरच दैवः प्राण आविशाति स वै दैवः प्राणो यः संचर १ रचासंचर १ रच न व्यथते अयो न रिष्यति स एवं-वित्सवेंषां भूतानामात्मा भवति यथेषा देवते व १ स्यथतां देवता १ सर्वाणि भूतान्यवन्त्येव १ हैवं विद १ सर्वाणि भूतान्यवन्ति यदु किं चेमाः प्रजाः शोचन्त्यमेवाऽऽसां तद्भवति पुष्यमेवाग्रुं गच्छति न ह वै देवान्यापं गच्छति ॥

पदच्छेदः ।

आह्रयः, च, एनम्, चन्द्रमसः, च, दैवः, प्राग्यः, आविशति, सः, वै, दैवः, प्राग्यः, यः, संचरन्, च, असंचरन्, च, न, व्यथते, आयो, न, रिष्यति, सः, एवंवित्, सर्वेषाम्, भूतानाम्, आत्मा, भवति, यथा, एवा, देवता, एवम्, सः, यथा, एताम्, देवताम्, सर्वािष्या, भूतािन, आवन्ति, एतम्, ह, एवंविद्म्, सर्वािष्या, भूतािन, आवन्ति, यत्, च, किंच, इमाः, प्रजाः, शोचन्ति, आमा, एव, आसाम्, तत्, भवति, पुर्ययम्, एव, आसुम्, गच्छति, न, ह, वै, देवान्, पापम्, गच्छति।।

श्चन्वयः पदार्थाः

प्रत्यः पद्ययः + यद्ाः=जब देवः=देवीशक्षेत्रयुक्षः प्रात्यः=जाव झञ्जयः=जब के संशसे पृथक् ख=सीर ख=मी स्रतिरिक्षः + भूत्वा=हो कर **श**न्वयः

धनम्≔्स पुरुष में श्राविशति=भवेश करता है + तदा=तब सःवै=बही हैवः=दैवीशक्रिपुक प्रायाः=भाख है यः=को खंखरन्=चक्रता हुआ

च≔घौर ः **श्चलंचरन् च=**नहीं चलता हुन्नामी नं≕नहीं व्यथते=दुःखित होता है श्रथो=भौर न=नहीं रिष्यति=नष्ट होता है प्वंवित्=प्राणकी ऐसी महिमा का जानने वाला सः≔वह पुरुष सर्वेषाम्≕सब भूतानाम्=प्राणियों का . स्नात्मा=त्रिय श्रात्मा भवति=होता है +च=मौर यथा≕जैसे एषा=यह प्राख देवता=देवता कल्यागरूप है **एवम्**=तैसेही सः=वह भी कल्यागरूप + भवति=होता है + च=धौर यथा=जैसे सर्वाणि=सब भूतानि=प्राणी पताम् देवताम्=इस प्राणदेवता की श्चवन्ति=रक्षा करते हैं

एवम् ह=वैसे ही

सर्वागि⇒सव भूतानि=पायी एवंविदम्=इस प्रायवेता की भी श्रवन्ति=रक्षा करते हैं उ=घीर यस्=जो

> इमाः=यह प्रजाः=प्रजार्थे

शोक करती हैं यानी शोखन्ति={जो कुछ उनको दुःख पहुँचता हैं

तत्=वह सब दुःख
श्रासाम्=इन प्रजाधों के
श्रासा के
श्रासा=साथ
प्रव=ही
भवति=होता है
+ परन्तु=परन्तु
श्रामुम्=इस प्राणवित् देव
पुरुष को
पुरायम् प्रव=सुख स्रवस्य
गञ्छति=प्राप्त होता है
ह वै=क्योंकिनिरचय करके
देवान्=देघों को
पाधम्=पापजन्य दुःख
म=नहीं

गच्छति=प्राप्त होता है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! जब देवीशिक्तियुक्त प्रांग जल झंश झौर चन्द्र झंश को त्याग करके इस कृतकृत्य पुरुष विषे प्रवेश करता है तब वही दैवीशिक्षियुक प्राग्य है जो चलता है झोर नहीं भी चलता है सो ऐसा यह प्राग्य न नष्ट होता है, न दुःखित होता है, प्राग्य की इस मिहमा का जाननेवाला जो पुरुष है वह सब प्राग्यियों का प्रिय आग्रसमा होता है, झोर जैसे वह प्राग्य देवता कल्याग्यरूप है, तैसेही वह पुरुष भी कल्याग्यरूप होता है, झोर जैसे सब प्राग्यी उस प्राग्यदेवता की रक्षा करते हैं वैसेही सब प्राग्यी इस प्राग्यवेत्ता की रक्षा करते हैं, झोर है सौम्य! जो कुछ यह प्रजा शोक करती है यानी जो कुछ उसको दुःख होता है वह दुःख इस प्रजा के झात्मा को भी पहुँचता है, झोर इस प्राग्यवित् पुरुष को प्रायप्तक यानी सुख झवश्य प्राप्त होता है, क्योर इस प्राग्यवित् पुरुष को प्रायप्तक यानी सुख झवश्य प्राप्त होता है, क्योर हमीकि देवताओं को पापजन्य दुःख नहीं प्राप्त होता है।। २०।।

मन्त्रः २१

भ्रथातो व्रतमीमाश्सा प्रजापितई कर्माणि सस्रजे तानि स्ष्ट्रा-न्यन्योन्येनास्पर्धन्त विद्ण्याम्येवाइमिति वाग्द्रभे द्रक्षाम्यइमिति चक्षुः श्रोष्याम्यइमिति श्रोत्रमेवमन्यानि कर्माणि यथाकर्म तानि मृत्युः श्रमो भूत्वोपयेमे तान्यामोत्तान्याप्त्वा मृत्युरवारुन्थ तस्मा-च्छाम्यत्येव वाक् श्राम्यति चक्षुः श्राम्यति श्रोत्रमयेममेव नामो-चोऽयं मध्यमः पाणस्तानि झातुं दिभिरे भ्रयं वै नः श्रेष्ठो यः संचर् श्वासंचर श्व न व्यथते ऽथो न रिष्यति हन्तास्यैव सर्वे रूपमसोमिति त एतस्यैव सर्वे रूपमभव स्त्रस्मादेत एतेनाऽऽख्या-यन्ते पाणा इति तेन ह वाव तत्कुलमाचक्षते यस्मिन्कुले भवति य एवं वेद य उ हैवंविदा स्पर्धतेऽनुशुष्यत्यनुशुष्य हैवान्ततो भ्रियत इत्यध्यात्मम् ॥

पदच्छेदः ।

श्रथ, श्रतः, त्रतमीमांसा, प्रजापतिः, ह, कर्माश्रि, सस्जे, तानि, सृशानि, श्रान्योन्येन, श्रास्पर्धन्त, बदिष्यामि, एव, श्रह्म्, इति, वाग्, दमे, द्रक्ष्यामि, श्रह्म्, इति, चक्षुः, श्रोष्यामि, श्रह्म्, इति, श्रोत्रम्, एवम्, अन्यानि, कर्माणि, यथाकर्म, तानि, मृत्युः, अमः, भूत्वा, जपयेमे, तानि, आप्रांत्, तानि, आप्त्वा, मृत्युः, अवारुन्भ, तस्मात्, आम्यति, एव, वाक्, श्राम्यति, चक्षुः, श्राम्यति, श्रोत्रम्, अथ, इमम्, एव, न, आप्रांत्, यः, अयम्, मध्यमः, प्राणः, तानि, ज्ञातुम्, दिधेरे, अयम्, वे, नः, श्रेष्ठः, यः, संचरन्, च, असंचरन्, च, न, व्यथते, अथो, न, रिष्यति, हन्त, अस्य, एव, सर्वे, रूपम्, असाम, इति, ते, एतस्य, एव, सर्वे, रूपम्, आववन्, तस्मात्, एते, एतेन, आख्यायन्ते, प्राणाः, इति, तेन, ह, वाव, तन्, कुलम्, आचक्षते, यस्मिन्, कुले, भवति, यः, एवम्, वेद, यः, उ, ह, एवंविदा, स्पर्धते, अनुग्रुष्यति, अनुग्रुष्य, ह, एव, अन्ततः, श्रियते, इति, अश्यास्मम् ॥

अन्वयः श्रन्वयः

पदार्थाः

श्रन्वयः

पदार्थाः

श्रथ≕श्रव स्रतः=यहां से

वतका विचार है वतमीमांसा=) यानी इन्द्रियों में कौन श्रेष्ठ है यह (विचारने योग्य है

⁴ सौम्य=हे सौम्य ! ह=वह प्रसिद्ध है वि

ह=वह प्रसिद्ध है कि प्रजापितः=प्रजापित कर्माणि=वागादि कर्मेन्द्रियों को सस्तेज=पैदा करता भया तानि=वे स्ट्रशनि=पैदा हुई इन्द्रियां अन्योग्येन=धापस में अस्पर्धन्त=हुंची कर गै भई कि अहम्=मैं वदिष्यामि=बोलती रहंगी इति=ऐसा वत वाग्=वार्षी द्धे=धारण करती भई श्रहम्≕में द्रस्यामि=देखतारहूंगा ६ति=ऐसा वत चश्चः=नेत्र द्धे≐धारग करता भया ग्रहम्=मैं ओष्यामि=सुनता रहूंगा इति=ऐसा वत श्रोत्रम्=श्रोत्र + द्घ्र=धारस करता भया एवम्=इसं प्रकार श्रन्यानि=श्रौर कर्माशि=इन्द्रियां भी

यथाकर्म=अपने अपने कर्मानुसार + दिधिरे=त्रत धारण करती भई + तद्ग≔तव अमः≖श्रम सृत्युः≔मृत्यु भूत्वा≔हो कर तानि=उनको उपयेमे=पक्द जिया यानी काम में थका दिया + च=भौर तानि=उनको श्राप्रोत्= { भ्रपना स्वरूप दिख-श्राप्रोत्= { बाताभया यानाउन के निकट भ्रापहुँचा + च=ग्रौर श्चा⊂उनके पास जाकर मृत्युः≔वर्हा सत्यु ब्रावाहत्ध=उनको भगने काम से

मृत्युः=वहीं सृत्यु

श्रवारु-ध=वनकी सपने काम से
रोकता भया

तस्मात्=तिती कारण

वाक् एव=वाणी घवरय

श्राम्बति=वोजते २ थक जाता है
चश्रुः=नेन

श्राम्यति=देखते २ थक जाता है
शोजम्=श्रीन
श्राम्यति=सुनते २ यक जाता है
+ सौम्य=हे सौम्य !

श्रथ=भव स्रज्ञप्द मत को
कहते हैं
+ सृत्युः=श्रत्युक्पी श्रम

इमम् एव=इस माण को

स=नहीं

आभोत्=पक्द सका यः=जो श्चयम्=यह मध्यमः=मध्यम यानी सब इ-न्द्रियों में फिरनेवासा प्रागाः=प्राग है + नम् }=उसके जानने के स्निये भातुम् तानि=वे सब इन्द्रियां द्धिरे=इच्छा करती अई + च=घौर + तम्=उसको + झात्वा=जानकर +वदन्ति+स्म=कहने सर्गी कि नः=हम लोगों में + प्रागः वै=प्रागही श्रेष्ठः=श्रेष्ठ है यः=जो संचरन्≔चलता हुचा च=घौर श्चसंचरन्=न चलता हुआ च=भी न∘न व्यथते=दुःखी होता है अथो=श्रौर न≕न रिष्यति=नष्ट होता है हन्त=यदि सबकी राय हो तो सर्वे≔हम सब ग्रस्य=इसीका यव≔ही इतमं=स्व

श्वसाम=वनजायं

इति=ऐसा सुनने पर
ते सर्वें=व सव

पतस्य=इसका
पव=हाँ
रूपम्≔हप श्रमचन्=होते भये
तस्मान्=इसी कारण पते=थे वागादि इन्द्रियां पतेन=३स पाण के नामसे६। प्रांत्=ऐसा थ' इति=ऐसा

त्राख्यायन्ते= कहे जाते हैं यानी प्रायके नाम करके ही पुकारे जाते हैं

यः=जो कोई एवम्-इस प्रकार वेद्=प्राया की श्रेष्ठता को जानसा है

सः=वह प्रावावित् पुरुष यस्मिन् कुले=जिस कुल म

भवति=उत्पन्न होता है तत्=डस कुलम्⇒कुब को तेन=डसी नाम से ह वाघ=निरचय करके आचक्षते⇒सोग कहते हैं ख=मौर यः≕जो एवंविदा=ऐसे जाननेवाले के + सह=साथ स्पर्धते=हंषां करता है + सः≔वह ह≕प्रवश्य श्रनुशुष्यति=पुल जाता है + च≔र्घार **अ**नुशुष्य=स्**लकर** ह एव=श्रवश्य

द्यन्ततः=ग्रन्त में

म्रियते=नाश होजाता है

विचार है

इति=ऐसा यह

श्रध्यात्मम्=श्रध्यात्मविषयक

. भावार्थ ।

हे सौम्य ! अव प्राग्त की श्रेष्ठता को दिखलाते हैं, और वत का विचार करते हैं, यानी इन्द्रियों विषे कौन इन्द्रिय श्रेष्ठ है, हे सौम्य ! यह संसार में प्रसिद्ध है कि जब प्रजापित ने वागादि कमेंन्द्रियों को उत्पन्न किया तब पैदा की हुई इन्द्रियां आपस में ईर्षा करती मई. वाग्ती ऐसा जत धारणा करती मई कि मैं सदा बोलती रहूंगी, नेन्न ऐसा जत धारणा करता भया कि मैं सदा देखता रहूंगा, श्रोन्न ने ऐसा अत धारणा करता भया कि मैं सदा देखता रहूंगा, श्रोन्न ने ऐसा अत धारणा किया कि मैं सदा देखता रहूंगा, श्रोन्न ने ऐसा

इन्डियों ने भी ऐसा व्रत धारण किया तब उन सब को साहकार पाकर श्रम ने मृत्यु होकर उन सबको पकड़ जिया, यानी उन को सतके कार्य में थका दिया, और उनके निकट जाकर उनकी अपने काम से रोक दिया. इसी कारणा वाणी अवश्य बोलते बोलते थक जाती है, नेत्र देखते देखते थक जाता है, श्रोत्र सुनते सुनते थक जाता है. हे सौम्य ! अब आगे उस ब्रत को कहते हैं जो अखिगड़त रहता है. हे सौम्य ! वह अमरूप मृत्य इस प्राणा को नहीं पकड सका. जो यह इन्द्रियों में फिरनेवाला प्राशा है उसके जानने की इच्छा सब इन्द्रियां करती भई, और उसके महत्त्व को जानकर आपस में कहने क्रगों कि निस्संदेह यह प्राग्त हम लोगों में श्रेष्ठ है. जो चलता हुआ और नहीं चलता हुआ भी न कभी दुःखी होता है न कभी नष्ट होता है. यदि सब की राय हो तो हम इसका ही रूप वन जायें. ऐसा सुनने पर वे सब इसके ही रूप हो गये. इसी कार्गा वे वागादि इन्द्रियां इसी प्राणा के नाम से पुकारी जाती हैं. हे सीम्य ! जो कोई इस प्रकार प्राचा की श्रेष्ठता की जानता है, वह जिस कुल मं पैदा होता है वह कुल उसी के नाम से पुकारा जाता है. और जो कोई ऐसे प्राशावित पुरुष के साथ द्वेष करता है वह सुख जाता है और सुख कर अन्त में नाश होजाता है. हे सोम्य ! ऐसा यह अध्यात्मविषयक विचार है ॥ २१ ॥

मन्त्रः २२

श्रथाधिदेवतं ज्वलिष्याम्येवाहमित्यग्निर्द्धे तप्स्याम्यहमित्या-दित्यो भास्याम्यहमिति चन्द्रमा एवमन्या देवता यथादेवत ५स यथेषां प्राणानां मध्यमः प्राण एवमेतासां देवतानां वायुम्लोंचन्ति सन्या देवता न वायुः सेषाऽनस्तमिता देवता यद्वायुः ।।

पत्र्छेदः । अथ, अभिदेवतम्, ज्वलिष्यामि, एव, अहम्, इति, अग्निः, दभे, द्यप्त्यामि, आहम्, इति, आदित्यः, भास्यामि, आहम्, इति, चन्द्रमाः, एवम्, अन्याः, देवताः, यथादैवतम्, सः, यथा, एषाम्, प्राशानाम्, मध्यमः, प्राशाः, एवम्, एतासाम्, देवतानाम्, वायुः, म्लोचन्ति, हि, झन्याः, देवताः, न, वायुः, सा, एषा, झनस्तम्, इता, देवता,

यत्, वायुः ॥ ग्रन्वयः

पदार्थाः

ऋन्वयः

पदार्थाः

श्चाय=धध्यात्म वर्णन के

ऋधिदेवतम्=देवता सम्बन्धी विषय + कथ्यते=कहा जाता है

श्रहम्≕भें

ज्वित्रिष्यामि } ⇒जलता ही रहूंगा पव

इति≕ऐसा वत

ऋरिनः=ग्रश्नि द्ध्र=धारग करता भया श्चहम्≕में

तदस्यामि+एव=तपताही रहूंगा इति=ऐसा वत

श्चादित्यः=सूर्य

+ द्भ=धारण करता भया + च=ग्रौर

श्रहम्=में

भास्यामि+एव=प्रकाश करता ही

रहूंगा इति=ऐसा वत

चन्द्रमाः=चन्द्रमा

+ द्झे=धारण करता भया एवम्=ऐसेही

श्रम्याः=भौर

देवताः=देवता भी

यथादैदतम्=मपने स्वभाव म्रनुसार + अकुर्वन्=वत धारव करते अये

+ ख=भीर

+ सौम्य=हे सौम्य ! यथा=जैसे

पषाम्≔इन

प्राणानाम्=प्रार्खी में

'सः=वह

मध्यमः प्राणः=मुख्य प्रावा

+ श्रेष्ठः=श्रेष्ठ है **एवम्**=वैसेही

पतासाम्≔इन

वेवतानाम्=श्रानि श्रादि देव-साओं में

बायुः=वायु

+ श्रेष्ठः=श्रेष्ठ है

हि=श्योंकि श्रन्याः=श्रौर

देवताः=देवता

म्लोचन्ति=अपने कार्य में थक

जाते हैं

+ परन्तु=परन्तु

वायुः=वायु **न**=नहीं

+ आम्यति=षकता है

+ च=झौर यत्≕इसी कारब सा≔वही

एषा≈यह

वायुः≐वायु देवता⇒वेवता सनस्तम्=नहीं सस्त को इता=मास होता है

भाषार्थ।

हे सौम्य ! अध्यात्मवर्णन के पीछे अव देवतासम्बन्धी विषय कहा जाता है, इसको तुम सावधान हो कर सुनो. मैं जलताही रहूंगा ऐसा व्रत अग्नि देवता ने धारणा किया, मैं तपता ही रहूंगा ऐसा व्रत अग्नि देवता ने धारणा किया, मैं प्रकाशित करता रहूंगा ऐसा व्रत चन्द्रदेवता ने धारणा किया, मौं प्रकाशित करता रहूंगा ऐसा व्रत चन्द्रदेवता ने धारणा किया, और इसी प्रकार खोर देवता भी अपने स्वभाव और कर्म अनुसार व्रतको धारणा करते भये. हे सौम्य ! जैसे इन इन्द्रियों विषे और प्राण्यदेवताओं विषे ग्रुष्ट्य प्राण्य श्रेष्ठ है वैसेही इन अग्नि आदि देवताओं विषे वायु देवता श्रेष्ठ है. क्योंकि और देवता अपने कार्य करते करते थक जाते हैं. परन्तु वायु देवता अपने कार्य के करने में कभी नहीं थकता है. और यही कारणा है कि वह वायु देवता कभी अस्त को नहीं प्राप्त होता है।। २२॥

मन्त्रः २३

अथेष श्लोको भवति यतश्वोदेति सूर्योऽस्तं यत्र च गच्छतीति पारागद्वा एष उदेति पाराऽस्तमेति तं देवाश्वकिरे धर्मः स एवाद्य स उ श्व इति यद्वा एतेऽमुक्केश्वियन्त तदेवाप्यद्य कुर्वन्ति तस्मादेकमेव व्रतं चरेत्पाययाचैवापान्याच चेन्मा पाप्मा मृत्युराप्नुवदिति यद्य चरेत्स-मापिपयिषेचेनो एतस्य देवताये सायुज्य समानाकतां गच्छति ॥

इति पृश्चमं ब्राह्मग्रम् ॥ ४ ॥

श्वथ, एवः, श्लोकः, भवति, यतः, च, उदेति, सूर्यः, अस्तम्, यत्र, च, गच्छति, इति, प्रागात, वा, एवः, उदेति, प्रागो, अस्तम्, एति, तम्, देवाः, चिक्तरे, धर्मम्, सः, एव, अदा, सः, ७, श्वः, इति, यत्, वा, एते, अमुहिं, अधियन्त, तत्, एव, अपि, अदा, कुर्वन्ति, तस्मात्, एकम्, एव, व्रतम्, चरत्, प्राययात्, च, एव, ध्रपान्यात्, च, चेत्, मा, पाप्मा, मृत्युः, आप्नुवत्, इति, यदि, उ, चरेत्, समापिपयि-वेत्, तेन, उ, एतस्यै, देवतायै, सायुज्यम्, सजोकताम्, गच्छति ॥ आन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

यतः=कहांसे सूर्यः≔सूर्य उदेति=उदय होता है च=घौर यत्र=किसमें श्चस्तम्≔धस्त को गच्छति=पास होता है + इदम्=इसका + उत्तरम्=उत्तर यह है एषः≔यह सूर्व प्राणात्=पाय से वै≕ही उदिति=उदय होता है च=भौर प्राग्रे=प्राग्य में ही ग्रस्तम्=श्रसको प्ति≔पास होता है झथ≔इस अर्थ विवे ख्यः इक्षोकः=यही मन्त्र प्रमाख है तम् धर्मम्=उसी वाले प्राया के व्रत की देखाः=बागादि देवता + एव=भी चक्रिरे=प्रदय करते भये उ=घौर

यस्≕जो वत

श्रद्य=ग्राज है

सः एव≔वह ही श्वः≔कल भी इति=ऐसाही + भविता=बना रहेगा वा=भौर यत्=जिस वत को श्रमुहिं=स्यतीत कान में पते=थे वागादि देवता ऋधियन्त≔धारण करते भवे सः तत् एव=उसही निश्रय किये हुये व्रत को श्रदा=प्राजकल श्रपि=भी कुर्घन्ति≖वेई देवता करते हैं तस्मात्=इस कारवा एकम्=केवल एक एव≔ही व्रतम्=वत को चरेत्=पुरुष करे च≕मोर + यथा=जैसे श्राएयात्≃प्राण व्यापार करता च≔घोर + यथा=जैसे अपान्यात्=अपान व्यापार करता + तथा=वैसे एव=ही

स्रोत्=पुरुष करे समापिपयिषेत्=उस वत के समाक्षि

+ सः≔बह पुरुष भी भ्रपना

कीं इच्छाभी रक्खे

वत

उ≔क्योंकि

+ कुर्यात्⇒करता कि पाटमा=पापरूप मृत्युः=मृत्यु तेन=उसी वत करके

न्दृत्युः-न्दृतु मा=मुक्तको वानी उसको + सः=वह उपासक पतस्यै=इस

नेत् प्राप्तुवत्=न प्राप्त होवे उ=ग्रीर देवताय=प्राखदेवता के सायुज्यम्=सायुज्यक्रोक को घौर

उ≕ग्रीर यत्≕जिस व्रतको ससोकताम्=सामीप्यक्षोक को गच्छति=पाह्य होता है

याबार्थ ।

हे सौम्य ! प्रश्न होता है कि कहां से सूर्य उदय होता है, और किस में अब होता है, इसका उत्तर यही मिलता है कि यह सूर्य मागा से ही उदय होता है, इसका उत्तर यही मिलता है कि यह सूर्य मागा से ही उदय होता है, अगेर प्रागा में ही अब होता है और जसे सूर्य देवता ने अहिनिश जगातार चलने का अत किया है, उसी प्रकार वागादि देवताओं ने भी अत किया है, और जैसे सूर्य का जो अत आज है वही कल रहेगा, वैसेही अत इन देवताओं का भी है, और ज्यतीतकाल में जिस अत को वागादि देवताओं ने धारणा किया था, उसी अत को आजकल भी वे धारणा किये हैं. इसी कारणा है सौम्य ! पुरुष एकही अत को धारणा करे, और जैसे प्रागा अपान अपने ज्यापार को किया करते हैं, वैसेही वह पुरुष भी अपने अत को धारणा किया करे, ऐसा करने से पापरूप मृत्यु कभी उसके पास न आवेगा, हे सौम्य! जिस अत को पुरुष एक वार करे उसी अत की पूर्णता का भी ध्यान रक्से, ऐसा करने से उपासक प्रागादेवता के सायुज्य कोक को और साझोक्यता को प्राप्त होता है ॥ २३॥

इति पञ्चमं बाह्यसम् ॥ ४ ॥

श्रथ षष्ठं ब्राह्मग्रम्। 🐪

मन्त्रः १

त्रयं वा इदं नाम रूपं कमे तेषां नाम्नां वागित्येतदेषामुक्थमथो हि सर्वाणि नामान्यु चिष्ठन्ति । एतदेषा सामैतद्धि संवैनीमभिः समयेतदेशं ब्रह्मैतदि सर्वाणि नामानि विभर्ति ॥

त्रथम्, वै, इदम्, नाम, रूपम्, कर्म, तेषाम्, नाम्नाम्, वाक्र, इति, एतद्, एषाम्, उक्थम्, द्यथो, हि, सर्वाणि, नामानि, उत्, तिष्ठन्ति, एतद्, एषाम्, साम, एतद्, हि, सर्वैः, नामभिः, समम्, एतर्, एषाम्, ब्रह्म, एतर्, हि, सर्वाणि, नामानि, विभर्ति ॥ पदार्थाः श्चन्वयः पदार्थाः द्यान्वयः

बै=निश्चय कर

इदम्=ये

त्रयम्=तीन

नाम=नाम

रूपम्=रूप + च=श्रोर

कर्भ=कर्म

+ सन्ति≕हैं

तेषाम्≈उन

+ त्रयाणांमध्ये≔तीनों में से एषाम्≔इन

नाम्नाम्=नामों का

एतत्=यह

वागिति=वागी ही उक्थम्=उपादान कारण है

श्रथो=क्योंकि

हि=जिससे

सर्वाशि≕सब

नामानि≕नाम

उत्तिष्टन्ति=उत्पन्न होते हैं

पतत्=यही

एष(म्=इन नामों की

साम=समता है

एतत्∙हि=यही

सर्वेः≔सब

नामभिः=नामी की

समम्=बराबरी है

पतत्च्यह

यषाम्≖इनका

ब्रह्म=ब्रह्म है

एतद्∙हि=यही सर्वाग्रि=सब

नामानि=नामी को

विभर्ति=धारण करता है

भावार्थ।

ये तीन नाम, रूप, भौर कर्म हैं, इनमें से नामों का वायाी ही

उपादान कारण है. क्योंकि वाणी ही से सब नाम कहे जाते हैं. यह वाणी ही इन सब नामों की समतारूप है, यही सब नामों की समानता है, यही इनका ब्रह्म है, क्योंकि यह वाणीही सब नामों को धारण करती है विना वाणी के नामों का उचारण नहीं होसका है ॥ १ ॥

मन्त्रः २

श्रथ रूपाणां चक्षुरित्येतदेषामुक्यमतो हि सर्वाणि रूपाण्यु-चिष्ठ-त्येतदेषा सामेतदि सर्वेरूपेः सममेतदेषां ब्रह्मेतदि सर्वाणि रूपाणि विभर्ति ॥

पदच्छेदः ।

श्चर्य, रूपाणाम्, चक्षुः, इति, एतद्, एषाम्, उक्थम्, श्चतः, हि, सर्वाणि, रूपाणि, उत्, तिष्ठन्ति, एतट्, एषाम्, साम, एतट्, हि, सर्वैः, रूपैः, समम्, एतट्, एषाम्, श्रद्धा, एतट्, हि, सर्वीणि, रूपाणि, त्रिभर्ति ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

अध=भव

एषाम्=इन

सितासित- } =सक्रेद, काके आदि

प्रभृतीनाम् } =सक्रेद, काके आदि

क्रपाणाम्=रूपों का

प्रतत्=यह

चक्षुः=नेन

इति=ही

उक्थम्-श्रस्त=डपादान कारय है

श्रतः-हि=हसी से
सर्वाण्=स्य

क्रपाण=रूप

उलिष्ठन्ति=यह होते हैं

एतत्=यह

एषाम्=इनका

साम=साम
+ श्रास्त=है

पतद्हि=यही

सर्वैः=सब

कपैः=रूपों की

समम्=समता है

पतद्=यही

पपाम्=इन रूपों का

ब्रह्म=नक्ष
+ श्रास्त=है

पतद्-हि=यही नक्ष

सर्वाण=स्मा
कपाण=स्मा
के।

- भावार्ध ।

और इन सफ़ेद काले आदि रूपों का चक्षुही उपादान कारगा है, इसी चक्षुसे हो सब रूप देखे जाते हैं, यही इनका साम है, यही समस्तरूपों की समता है, यही इन रूपों का ब्रह्म है, यही ब्रह्म सब रूपों को भारता है।। २।।

मन्त्रः ३

श्रय कर्मणामात्मेत्येतदेषामुक्थमतो हि सर्वाणि कर्माण्युत्ति-श्रन्त्येतदेषा सामैतद्धि संवैः कर्मभिः सममेतदेषां ब्रश्कैतद्धि सर्वाणि कर्माणि विभिति तदेतत्त्रय सदेकमयमात्माऽऽत्मो एकः सन्नेतत्त्रयं तदेतदमृत सत्येनच्छनं प्राणो वा श्रमृतं नामरूपे सत्यं ताभ्यामयं प्राणश्रद्धनः ॥

इति पष्ठं ब्राह्मग्रम् ॥ ६ ॥ इति श्रीबृहदारएयकोपनिषदि मथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ पदच्छेरः।

अथ. कर्मणाम्, आत्मा, इति, एतर्, एवाम्, उक्थम्, अतः, हि, सर्वािणः, कर्मािणः, उत्, तिष्ठन्ति, एतर्, एवाम्, साम, एतत्, हि, सर्वेः, कर्माभः, समम्, एतत्, एवाम्, ब्रह्म, एतत्, हि, सर्वािणः, कर्मािणः, कर्माभः, सत्, एतत्, अथम्, आत्मा, आत्मा, उ, एकः, सन्, एतत्, त्रयम्, सत्, एतत्, अमृतम्, सत्येन, छत्रम्, प्राणः, वे, अमृतम्, नामरूपे, सत्यम्, ताभ्याम्, अयम्, प्राणः, छत्रः ॥ अम्वयः पदार्थाः अन्वयः एदार्थाः

श्रथ=थैर प्रवाम्=इन' कर्मणाम्=कमें का प्रतत्=यह श्रारमा इति=बात्माही उक्थम्=उपादान कारव + ब्रस्ति=है - क्रश-हि=इसी से ही सर्वाणि=सब कर्माणि=कर्म उत्तिष्ठन्ति=पैदा होते हैं पतत्=यह पपाम्=हन कर्मों का साम=साम है पतद्-हि=यही सर्वें:=सब्

कर्मभिः≔कर्मी के +ध्यवस्थितम्=स्थित है समम्=बराबर है एतत्=यही एतद् + एव=यही एषाम्=इनका ब्रह्म=ब्रह्म है एतव्-हि=यही सर्वाणि=सब कमां शि=कर्मों को विभाति=धारण करता है तत्-एतत्=सो यह पूर्व कथना-नुसार त्रयम्≕तीर्नो सदेकम्=सत्यरूप होकर एक हैं श्रयमू≔यही आत्मा=भावमा है = और

+एतावत्-हि=स्तनाही + इद्म्-सर्वम्=यह सब नाम-रूप-कर्म

एकः=एक

आत्मा=बात्मा

त्रयम्=तीनीं +नाम रूप कर्म=नाम-रूप-कर्म हैं तत्=सः पतत्=यह **असृतभ्**=श्रमृतरूप सत्येन=पञ्चभूतात्मक से प्राणः=प्राख वै≔ही अमृतम्=असृत है

सन्=होता हुचा

+ च=घौर नामरूपे≕नाम रूप सत्यम्=कार्यात्मक हैं ताभ्याम्=डन दोनों से श्चयम्=यह प्राणः=प्राण लुका:=अप्रकाशित है

भावार्थ

श्रीर कर्मी का श्रात्मा ही उपादान कारण है, क्योंकि श्रात्मा से ही सब कर्म किये जाते हैं, यही इन कर्में का साम है. यही सब कर्मी के समान है और यही इनका ब्रह्म है. यही सब कर्मी को धारता है, येही तीनों सत्यरूप होकर एक हैं. यही नाम-रूप-कर्मात्मक आत्मा है, यही तीनों नाम-रूप-कर्म वाला है, वही यह अविनाशीरूप होकर पश्चमहाभूतों से घिरा है. और प्राग्यही अमृतरूप है और नाम-रूप कर्मात्मक हैं उन दोनों से ही यह प्राशा अप्रकाशित रहता है ॥ ३ ॥

इति षष्ठं त्राह्मसाम् ॥ ६ ॥

इति श्रीवृहदारएयकोपनिषदि भाषानुवादे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

श्रीगणेशाय नमः ।

ऋथ द्वितीयोऽध्यायः।

श्रथ प्रथमं ब्राह्मग्रम्।

मन्त्रः १

दृप्तवालाकिर्हानुचानो गार्ग्य श्रास स होवाचाजातश्रृं काश्यं ब्रह्म ते ब्रवाणीति स होवाचाजातशत्रुः सहस्रमेतस्यां वाचि द्बो जनको जनक इति वै जना धावन्तीति ॥

पदच्छेदः ।

द्याबाकाकिः, ह, अनूचानः, गार्ग्यः, श्रास, सः, ह, ख्वाच, अजात-शत्रुम्, काश्यम्, ब्रह्म, ते, ब्रवाणि, इति, सः, ह, उवाच, श्रजातशत्रुः, सहस्रम्, एतस्याम्, वाचि, दद्मः, जनकः, जनकः, इति, वै, जनाः, धावन्ति, इति ॥

ग्रन्वयः

पदार्थाः **ह**=किसी समय किसी

देश में

गार्ग्यः≕गर्गगोत्र में उत्पन्नहुत्रा द्यसवालाकिः=दप्तबालाकी नामक अनुचानः≔वेद का पढ़ने वाबा श्चास=रहता था सः≃वह काश्यम्≔काशी देश के राजा 🗐 स्रजातशत्रुम्=स्रजातशत्रु से उवाच=कहता भया कि ते=आपके जिये ब्रह्म=बद्ध का उपदेश ह=भन्नी प्रकार

ब्रवाशि=करूंगा में

पदार्थाः इति≕ऐसा सुन कर

सः≔वह ह=प्रसिद्ध **ग्रजातशत्रुः**=श्रजातशत्रु राजा उवाच=बोला कि

पतस्याम्=इस वाचि=वचन के बदले में + ते=तेरे जिये

सहस्रम्=एक इज्ञार गौवें वै≕ग्रभी

द्याः≔देता हूं + किम्=क्यों

=जनक जनक ऐसा

ने बदन्तः≃पुकारते हुये + तस्य≃डसके

+ निकटम=पास जनाः=सब मनुष्य धावन्ति इति=दौढ़े जाते हैं

भावार्थ ।

हे सौम्य! किसी समय गर्गगोत्र में उत्पन्न हुआ एक आहंकारी वेद का पढ़नेवाला बालाकीनामक ब्राह्मगा था, वह एक दिन काशी के राजा अजातशत्रु के पास पहुँचा, स्त्रीर उससे कहा कि मैं आपके क्षिय ब्रह्मविद्या का उपदेश करूंगा. यह सुन कर राजा बढ़ा प्रसन्न हुआ स्रोर कहा हे ब्राह्मणा ! तू धन्य है, ऐसा तेरे कहने पर मैं एक सहस्र गौ देता हूं, जनक जनक ऐसा पुकारते हुये लोग क्यों उनके पास (जनक के पास) जाते हैं, अपीर मेरे निकट क्यों नहीं आपते हैं. मैं सहस्रों गी देने को तैयार हूं, यदि ब्रह्मवादी मेरे पास आवें, आरि मुम्तको ब्रह्मोपदेश का अधिकारी समर्मे ॥ १ ॥

मन्त्रः २

स होवाच गार्ग्यो य एवासावादित्ये पुरुष एतमेवाई ब्रह्मो-पास इति स होव।चाजातश्तुर्मा मैतस्मिन्संविद्घा श्रतिष्ठाः सर्वेषां भूतानां मूर्घा राजेति वा अहमेतमुपास इति स य एतमेवमुपास्ते-ऽतिष्ठाः सर्वेषां भूतानां मूर्घा राजा भवति ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, उवाच, गार्ग्यः, यः, एव, श्रसौ, श्राद्त्ये, पुरुषः, एतम्, एव, श्रहम्, ब्रह्म, उपासे, इति, सः, ह, उवाच, श्रजातशत्रुः, मा, मा, एतस्मिन्, संवदिष्ठाः, अतिष्ठाः, सर्वेषाम्, भूतानाम्, मूर्घा, राजा, इति, वै, झहम्, एतम्, उपासे, इति, सः, यः, एतम्,एवम्, उपास्ते, अतिष्ठाः, सर्वेषाम्, भूतानाम्, मूर्धा, राजा, भवति ॥

श्रन्धयः

पदार्थाः स्रन्वयः

पदार्थाः

सः-ह=वह प्रसिद्ध वालाकी गार्थः=गर्गगोत्रवादा

उवाख=बोसता भया कि धस=निश्चय करके

यः≕जो ∖ ग्रसौ≔वह पुरुषः=पुरुष श्चादित्ये=सूर्यं विषे + अस्ति=है एतम् एव≕उसही को ब्रह्म=बद्य इति=करके श्रहम्≕में उपासे=उपासना करता हूं + तद्।=तव सः≔बह ह=प्रसिद्ध **सजातशत्रुः**=श्रजातशत्रु राजा उवाच=बोसा कि पतस्मिन्≕इस बद्य विषे मा मा संवदिष्ठाः≔ऐसा मत कहो ऐसा मत कहो + सः≔बह सूर्यस्थ पुरुष द्यातिष्ठाः=सवजीवों को श्रतिकः मणकरकेरहनेबाबाहै सर्वेषाम्=सब भूतानाम्=प्रावियों का मुर्घा=शिर है + च=ब्रौर

राजा=प्रकाशवाका है इति≕ऐसा + मत्वा≔मान कर ग्रहम्≕में वै=प्रवरय ए नम्=इसकी उपास=उपासना करता हूं + च=ग्रीर इति=ऐसा + मस्वा≔मानकर यः=जो प्तम्≔इसकी एवम्=इस प्रकार उपास्ते=उपासना करता है सः≔बह उपासक श्चतिष्ठाः≔सबको भतिकमख करके रहने वासा + भवति=होता है + ख≕भौर सर्वेषाम्=सब भूतानाम्=प्राविवी के मध्य मुर्धा=प्रतिष्ठाबाखा + च=घौर राजा=राजा भवति=होता है

भावार्थ ।

तव वह असिद्ध बालाकी गर्गगोत्रवाला बोलता भया कि हे राजन् ! सूर्यविषे जो पुरुष दिखाई देता है वही ब्रह्म है, और उसी को मैं ब्रह्म मानकर उसकी उपासना करता हूं, तब वह आजातशत्रु राजा ऐसा सुनकर बोला कि ब्रह्मसंबाद विषे ऐसा मत कहो, यह आदित्य जो दिखाई देता है वह बड़ा नहीं है, यह सुर्यस्थ पुरुष निस्संदेह सब जीवों को अतिकामण करके रहता है, यानी जब सब जीव नष्ट होजाते हैं तब भी यह बना रहता है, यह सब प्राणियों का शिर है, यानी सबों करके पूजने योग्य है, और यही प्रकाशवाजा भी है, ऐसा मानकर में इस सूर्य की बपासना करता हूं, और ऐसा समम कर जो कोई इसकी उपासना करता है, वह उपासक सबको अतिक्रमण करके रहता है, और सब प्राणियों के मध्य में प्रतिष्ठा पानेवाजा और राजा होता है। २॥

मन्त्रः ३

स होवाच गार्ग्यो व एवासी चन्द्रे पुरुष एतमेवाहं ब्रह्मोपास इति स होवाचाजातशत्रुमा मैतस्मिन्संविद्धा बृहन्पाएडरवासाः सोमो राजेति वा अहमेतमुपास इति स य एतमेवगुपास्तेऽहरहई सुतः प्रसुतो भवति नास्याचं क्षीयते ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, उवाच, गार्ग्यः, यः, एव, असी, चन्द्रे, पुरुषः, एतम्, एव, अहम्, त्रहा, उपासे, इति, सः, ह, उवाच, आजातशत्रुः, मा, मा, एतस्मिन, संबदिष्ठाः, बृहन्पायङ्ग्वासाः, सोमः, राजा, इति, वै, आहम्, एतम्, उपासे, इति, सः, यः, एतम्, एवम्, उपास्ते, आह-ग्रहः, ह, सुतः, प्रसुतः, भवति, न, अस्य, अञ्चम्, श्रीयते ॥

भ्रान्वयः पदार्थाः भ्रान्वयः

पदार्थाः

सः≖वह ह=प्रसिद्ध ग्राग्यैः=गर्गगोत्रवादा + बालाकिः=बालाकी उवाच=बोलता भया कि यः=को खन्द्रे=बन्द्रमा विवे श्रसी=नह पुरुषः=पुरुष है एतम्=हर्शको एस=ही श्रहम्=म श्रह्म=नव हति=करके प्द=निस्तन्देह

हिन्देसा

+ शुरवा=शुनकर
सः=वह

अजातराष्ट्रः=चजातराष्ट्र राजा

जवाच=कहता भया कि

प्तिस्मिन्=इस नव विषे

मामा } = ऐसा मत कहो

संविदेष्ठाः } = ऐसा मत कहो

+ श्रयम्=यह
राजा=प्रकाशवाका
सोमः=चन्द्रमा
वै=निश्चय करके

हिन्पाग्रहर- }

वास्माः
हिनेप्रस्ती

श्रहम्≕में

एतम्=इसकी उपासे=डपासना करता हं + च=मौर इति≕इस प्रकार यः≕जो कोई पतम्=इसकी आहरहः=प्रतिदिन उपास्ते=उपासना करता है सः≔वह सुतःप्रसुतः=सोम यज्ञ का करने वाला भवति=होता है + च=धौर **श्चस्य=**उसका अन्नम्≔धन्न न=कभी नहीं श्रीयते=श्रीष होता है

भावार्थ ।

फिर वह प्रसिद्ध गर्गगोत्री बाजाकी बोजा कि जो चन्द्रमा बिधे पुरुष है, उसीको मैं ब्रह्म समम्मकर उपासना करता हूं. ऐसा सुन-कर वह अजातरात्रु राजा कहता भया कि इस ब्रह्मसंवाद विषे ऐसा कहना ठीक नहीं है, यानी यह ब्रह्म नहीं है, निस्संदेह यह रवेत वक्ष-धारी चन्द्रमा प्रकाशमान है, मैं इसकी उपासना ऐसा समम्मकर करता हूं, और जो इसकी उपासना इसीप्रकार प्रतिदिन करता है, वह अपने घर में सोमयह का करनेवाजा होता है, और उसके घर में कभी अब्र श्रीण नहीं होता है। 3 ।।

मन्त्रः ४ स होनाच गार्ग्यो य एनासी नियुति पुरुष एतमेनाहं ब्रह्मोपास

इति स होषाचाजातराचुर्या मैतस्मिन्संवदिष्ठास्तेत्रस्वीति वा अहमे-तमुपास इति स य प्तमेवमुपास्ते तेजस्वी इ भवति तेजस्विनी हास्य मजा भवति ।।

1 1

सः, इ, उवाच, गार्ग्यः, यः, एव, असी, विद्युति, पुरुषः, प्रतम्, एव, अहम्, ब्रह्म, उपासे, इति, सः, इ, उवाच, अजातशत्रुः, मा, मा, एतस्मिन्, संवदिष्ठाः, तेजस्वी, इति, वै, अहम्, एतम्, उपासे, इति, सः, यः, एतम्, एवम्, उपास्ते, तेजस्वी, इ, भवति, तेजस्विनी, इ, अस्य, प्रजा, भवति ॥

ग्रन्वयः

पदार्थाः स्रन्वयः

पदार्थाः

+ पुनः=किर सः=वह ह=प्रसिद्ध गार्ग्यः=गार्गगोत्री वालाकी उवाच=बोलता भया कि यः=नो ससी=वह

म्या-पर विद्युति=विजनी विदे पुरुषः=पुरुष है

एतम्-एव=उसही को

श्रहम्=में श्रह्म=नश इति=करके ह=ही

गसे=डपासनः करता हूं

+ शैत=ऐसा

+ शुत्वा=सुन कर सः=वह

मजातशत्रुः=चनातशत्रु राजा स्वाच-ह्र≃सक बोबा कि पतस्मिन्=इस बद्धा विवे मामा } _ुऐसा मत कहो ऐसा संवदिष्ठाः ∫ मत कहो

तवाद्ष्ठाः) मत कहा यः≕जो + हृदये≔हृदय में

> इति≕ऐसा तेजस्वी=तेजस्वी देवता है

राजस्य।=राजस्य। द्वता ह एतम् एव=उसही की स्रहम्=में

> प्वम्=इस प्रकार वै≕िनरचय करके

खपासे=डपासना करता हूं इति=इसी प्रकार

यः≕जो

+ झन्यः=सीर कोई यतम्=इसकी उपास्ते=डपासना करता है

सः≔बह

+ एव≕भी

तेजस्वी=सेजस्वी भवाति=होता है + च=ग्रीर भक्य=सकी

प्रजा=संतान ह=भी तेजस्थिनी=तेजन।सी अवृति=होती है

भाषार्थ ।

फिर वह प्रसिद्ध गर्गगीत्र में उत्पन्न हुआ बालाकी बोला कि है राजन ! जो बिजली बिषे पुरुष है उसीको में ब्रह्म करके उपासना करता हूं, ऐसा सुनकर आजातरात्र राजा बोलता भया कि है बालाकी ब्राह्मगा ! इस ब्रह्म बिषे ऐसा मत कही जिसको तुम बिजली बिषे पुरुष-रूप ब्रह्म समम्मते हो वह वास्तव में हृदय में तेजस्वी देवता है, में उसकी उपासना ऐसा समम्म कर करता हूं, और जो कोई इसकी उपासना ऐसा समम्मकर करता है वह भी तेजस्वी होता है, और उसकी संतान भी तेजस्विनी होती है ॥ ४ ॥

मन्त्रः ५

स होवाच गार्ग्यो य एवायमाकाशे पुरुष एतमेवाहं ब्रह्मोपास इति स होवाचाजातशत्रुर्मा मैतस्मिन्संविद्षष्टाः पूर्णममवर्चीति वा श्रहमेतमुपास इति स य एतमेवमुपास्ते पूर्यते प्रजया पशुमिनीस्या-स्माल्लोकात्प्रजोद्वर्त्तते ॥

पदच्छेदः ।

सः, इ, उवाच, गार्ग्यः, यः, एव, श्रयम्, श्राकाशे, पुरुषः, एतम्, एव, श्रहम्, श्रह्म, उपासे, इति, सः, ह, उवाच, श्रजातशत्रुः, मा, मा, एतिस्तिन्, संविद्धाः, पूर्णम्, श्रप्रवर्त्ते, इति, वे, श्रहम्, एतम्, उपासे, इति. सः, यः, एतम्, एवम्, उपास्ते, पूर्यते, प्रजया, पश्चिमः, न, श्रस्य, श्रस्मात्, जोकात्, प्रजा, उद्वत्ते ॥

ग्रन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

+ पुनः≕फिर सः≔वड ह=प्रसिद्ध शास्त्री:=गर्गगोत्रोत्पन्न वास्त्रकी

उवाच=बोबा कि पूर्णम्=पूरा अप्रवर्त्ति=कियारहित पुरुष है यः=जो श्रहम्≃में भ्रयम्≔यह पतम्≕उसकी आकाशे≔स्राकाश विषे बै=ही पुरुषः=पुरुष इ इति=ऐसा समक्र कर ष्तम् एव≔उसही को उपासे=उपासना करता ई श्रहम्≕में एवम्=इसी प्रकार ब्रह्म=ब्रह्म + यः≕जो इति=करके + अन्यः≃भौर कोई उपासे=उपासना करता हूं उपास्ते=उपासना करता है + इति=ऐसा सः≔वह + श्रुत्वा=सुन कर प्रजया=संतान करके सः=वह पशुभिः=पशुश्रों करके ह=प्रसिद्ध पूर्यते=पूर्ण होता है श्रजातश्रञ्जातश्रञ्जातश्रञ्जा + च=ग्रीर उवाच=बोला कि श्रस्मात्=इस

पतस्मिन्=इस बद्ध बिषे मा मा } देसा मत कहो ऐसा संवदिष्ठाः ऽ मत कहो

यः=जो + आकाशे=माकाश विषे

भावार्थ ।

लोकात्=बोक से

श्रस्य≔इसकी

प्रजा≕संतान

न=नहीं

उद्धर्तते=दूर की जाती है

हे सौम्य ! फिर भी वह प्रसिद्ध गर्गगोत्र में उत्पन्न हुआ वालाकी कहता भया कि हे राजन ! आकाश विषे जो पुरुष है उसी की मैं न्रह्म करके उपासना करता हूं, ऐसा सुनकर वह राजा आजातशत्रु ऐसा कहने लंगा कि हे नाक्षरण ! इस न्रह्म विषे ऐसा मत कहो, यह न्रह्म नहीं है, जिसको तुम न्रह्म समस्तते हो, जो आकाश विषे पूरा और क्रियारहित पुरुष है, उसकी उपासना ऐसा समस्त कर मैं करता हूं, और जो कोई उसकी उपासना ऐसा ही समस्त कर करता है वह संतान

१४८

करके और पशुक्रों करके पूर्ण होता है, और उसकी संतान नष्ट नहीं होती है।। ५ ॥

मन्त्रः ६

स होवाच गार्ग्यो य एवायं वायौ पुरुष एतमेवाहं ब्रह्मोपास इति स होबाचाजातरात्रुमी मैतस्मिन्संवदिष्ठा इन्द्रो वैकुएठोऽपराजिता सेनेति वा श्रहमेतगुपास इति स य एतमेवगुपास्ते जिष्णुईपिराजि-ष्णुर्भवत्यन्यतस्त्यजायी ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, उवाच, गार्ग्यः, यः, एव, श्रयम् , वायौ, पुरुषः, एतम् , एव, **अह**म् , ब्रह्म, उपासे, इति, सः, ह, उवाच, अजातशत्रुः, मा, मा, एत-स्मिन् , संवदिष्ठाः, इन्द्रः, वैकुगठः, अपराजिता, सेना, इति, वै, ब्राहम्, एतम्, उपासे, इति, सः, यः, एतम्, एवम्, उपास्ते, जिष्णुः, ह, अप-राजिष्णः, भवति, श्रन्यतस्त्यजायी ॥

ग्रन्वयः

पदार्थाः ग्रन्वयः पदार्थाः

+ पुनः≕फिर सः≔वह ह=प्रसिद्ध गार्ग्यः=गर्गगोत्रोत्पन्न बालाकी उवाच=बोला कि यः⇒जो पख=निरचय करके ऋयम्=यह वायौ⇒वायु में पुरुषः=पुरुष है ऋहम्≃में ₋ पतम्-एव=इसही पुरुष की

इति=करके

उपासे=डपासना करता हुं + इति=ऐसा + श्रुत्वा=सुन कर सः≔वह **अजातशत्रुः=च**जातशत्रु राजा उवाच=बोला कि एतस्मिन्=इस बद्ध विवे मामा रे_ऐसामत कही संवदिष्ठाः } रेसा मत कही + श्रयम्=यह इन्द्रः≔ऐरवर्यवाला वैकुएठः≔भजय वायु भधि-ष्टान पुरुष है ∔ का≕शीर

त महताम्=पवनों के मध्य में

अपराजिता | अपराजिता यानी सेनाइति | अपराजिता यानी सेनाइति | अपराजित सेना है से=निरवय करके अहम्=में एतम्=इसकी उपासे=उपासना करता हूं इति=इस प्रकार यः=जो + अन्यः=और कोई एसम्=इसर्का

सः=बह

+ एव=भी
जिच्छाः=जीतनेवाजा
ह=धवरय
भवित=होता है
अपराजिच्छाः=हारनेवाजा नहीं
भवात=होता है

+ किच=भीर
अन्यतस्त्य- } = दूसरों से हारनेवाजा
जायी } नहीं

+ भवति=होता है

उपास्ते=उपासना करता है | भावार्थ ।

हे सौम्य ! फिर वह गर्गगोत्र में उत्पन्न हुम्मा बाजाकी बोजा कि है राजन ! जो बायु बिषे पुरुष है में उसकी उपासना ब्रह्म समक्त कर करता हूं, ऐसा सुन कर वह राजा बोजा कि हे बाजाकी ! तुम इस ब्रह्म बिषे ऐसा मत कहो, वह ब्रह्म नहीं है जिसको तुम ब्रह्म समक्तते हो, बायु बिषे जो पुरुष है वह इन्द्र है, वह अजय है, वह ऐरवर्य बाजा है, वही पवनों की अजीत सेना का सेनापित है, में इसकी खपासना इस प्रकार निरचय करके करता हूं, और जो कोई दूसरा पुरुष उसकी उपासना इस प्रकार करता है, वह भी जीतनेवाजा अवस्य होजाता है, वह किसी करके जीता नहीं जाता है ॥ ह ॥

मन्त्रः ७

स होवाच गार्ग्यो य एवायमग्नौ पुरुष एतमेवाहं ब्रह्मोपास इति स होवाचाजातशत्रुमी मैतस्मिन्संविद्या विषासहिरिति वा अहमेत-मुपास इति स य एतमेवमुपास्ते विषासहिर्ह भवति विषासहिर्हास्य मजा भवति ॥

पद्ब्छेदः। सः, ह्, उनाच, गार्ग्यः, यः, एन, अग्रम्, अग्नौ, पुरुषः, एतम्, एव, आहम्, ब्रह्म, उपासे, इति, सः, ह, उवाच, आजातशत्रुः, मा, मा, एतस्मिन, संविद्धाः, विषासिहः, इति, वे, आहम्, एतम्, उपासे, इति, सः, यः, एतम्, एवम्, उपास्ते, विषासिहः, ह, भवति, विषासिहः, ह, अस्य, प्रजा, भवति ॥

भ्रन्वयः

पदार्थाः | श्रन्थयः

पदार्थाः

सः=वह ह्र≖प्रसिद्ध गार्थः=गर्गगोत्रोत्यन + बालाकि:=बाकाकी उवाच=बोला कि यः=जो **ञ्च**यम्≔यह प्च≕निश्चय करके द्याग्नौ=ग्रग्नि विषे पुरुषः=पुरुष है श्रहम्=मैं चतम्≕उसको एव≕ही ब्रह्म=वस इति=करके उपासे=उपासना करता हूं + इति=प्रेमा शुत्वा=सुन कर , सः=वह 8=प्रसिद्ध

उवाच=शेक्षा कि एतस्मिन्=इस बद्ध विवे मामा / ऐसामत कहो संबदिष्ठाः / "ऐग मत कहो

द्मजातश्रञ्जः=श्रजातशत्रु राजा

ः + एतत्≔यह

+ ब्रह्म≓जक्ष + न=नहीं है

+ त्रयम्=यह भनि विषासहिः=सब कुछ सहनेवासा है

इति=ऐसा वै=निश्चय कर

श्रहम्⊐में एतम्=इसकी

उपासे=डपासना करता हं

+ च=धौर

यः=जो कोई + भ्रान्यः=ग्रन्य

+ अन्यः=श्रन्य एतम्≃इसकी एव=ही

उपास्ते=उपासना करता है

सः=बह ह=भी

विषासहिः=सहनशीसवासा भवति=होता है

+ च=श्रोर

श्चस्य≃डसकी

प्रजा=संतान

विषासहिः=सहनशीलवाली ह=मवरय

ह=भवरय भवति=होती है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! वह प्रसिद्ध गर्गगोत्रोत्पन्न वालाकी बोला कि हे राजन् ! जी यह अग्निविषे पुरुष है, यानी उसका जो अधिष्ठात्री देवता है, उसको मैं ब्रह्म समम्प्रकर उपासना करता हूं, तुम भी ऐसाह्म करो ऐसा सुनकर राजा ने कहा कि हे अग्नुचान, ब्राह्मणा ! ऐसी बात इस ब्रह्म विषे मत कहो, जिसको तुम ब्रह्म करके समम्प्रते हो, वह ब्रह्म नहीं है, वह अग्नि देवता है, जो सब कुछ सहनेवाला है, यह सब से बड़ा ज्ञयरदस्त है, मैं इसको ऐसा समम्प्र कर इसकी उपासना करता हूं, परंतु ब्रह्म समम्प्र कर नहीं करता हूं, भौर जो अग्न्य पुरुष इसकी उपासना ऐसाह्मी समम्प्र कर करता है, वह भी सहन-शीलवाला होता है, और उसकी संतान सहनशिकवाली अवस्य होती है।। ७।।

मन्त्रः द

स होवाच गार्ग्यो य एवायमप्सु पुरुष एतमेवाहं ब्रह्मोपास इति स होवाचाजातशत्रुमी मंतस्मिन्संवदिष्टाः मतिरूप इति वा अहमेत-मुपास इति स य एतमेवमुपास्ते मतिरूप ६ हेवैनमुपगच्छाति नाम-तिरूपमयो मतिरूपोऽस्माज्जायते ॥

पद्च्छेदः ।

सः, ह, उवाच, गार्ग्यः, यः, एव, ध्रयम्, ध्रस्सु, पुरुषः, एतम्, एव, झ्रह्म्, ब्रह्म, उपासे, इति, सः, ह, उवाच, झ्रजातशत्रुः, मा, मा, एतस्मिन्, संवदिष्ठाः, प्रतिरूपः, इति, वै, झ्रह्म्, एतम्, उपास, इति, सः, यः, एतम्, एवम्, उपास्ते, प्रतिरूपम्, ह, एव, एनम्, उपाच्छिति, न, अप्रतिरूपम्, अथो, प्रतिरूपः, झ्रस्मात् जायते ॥ अन्वयः पदार्थाः झन्वयः एदार्थाः

सः=वह ह=प्रसिद्ध शार्ग्यः=गर्वमोत्रोत्पन्न + वालाकिः≔वालाकी उवास्त्र≔वोलाःकि यः≠जो

ग्रयम्≔पह एघ=निरचय करके श्रप्यु≃जब में श्रहम्≕में पतम्=इसको एव=ही ब्रह्म=मद्य इति=करके उपासे=डपासना करता हूं + इति=ऐसा + भुत्वा=सुन कर सः=वह ह=प्रसिद अजातश्रञ्जः=बजातशत्रु राजा उवाच=बोता कि प्तस्मिन्ःस वद्य विषे मा मा } ूपेसा नत कहो संवदिष्ठाः > पेसा मत कहो +ऋयम्=यह प्रतिरूपः=प्रतिविम्बहै यानी मनु-कृतस्य गुयावाचा है इति=ऐसा + हात्वा⇒नानकर

वै=निस्संदेड ग्रहम्≕र्मे एतम्=इसकी उपासे=उपासना करता हूं +च=भौर यः=जो कोई + श्रन्यः=श्रन्य प्तम्=इसका पव=ही इति=ऐसा + ज्ञात्वा=जानकर उपास्ते=डवासना करता है सः≔वह भी पनम्≔इस प्रतिरूपम्=भनुक्बता बानी भनुकुल पदार्थी को ह एव=भवश्य उपगच्छति=मास होता है श्रप्रतिरूपम्=विपरीत वस्तु को न=नहीं अथो=भार **ग्रस्मात्=इ**स पुरुष से प्रतिरूपः≔इसके समान पुत्र

जायते=उत्पश्च होते हैं

मावार्थ।

से कहता भया कि जो निश्चय करके जल विषे पुरुष है यानी पुरुष का प्रतिविन्य है, मैं उसको ब्रह्म समग्र कर उपासना करता हूं, आप भी ऐसा ही करें. यह सुनकर वह राजा वोजा कि हे अनुषान, ब्राह्मणा! इस ब्रह्म विषे ऐसा मत कहो यह ब्रह्म नहीं है. जिसको तुम उपासना करते हो यह केनल पुरुष का प्रतिविम्न है यानी इसमें अनुकूलत्व अुगा है ऐसा जानकर में इसकी उपासना करता हूं और जो कोई अन्य इसको ऐसा ही जानकर उपासना करता है वह भी अनुकूलता यानी अनुकूल पदार्थों को प्राप्त होता है, विपरीत वस्तुको नहीं, और इस पुरुष के समान इसके पुत्र पौत्र उत्पन्न होते हैं ॥

□ 11

मन्त्रः ६

स होवाच गार्ग्यो य एवायमादर्शे पुरुष एतमेवाई ब्रह्मोपास इति स होवाचाजातशञ्जर्मा मैतस्मिन् संवदिष्ठा रोचिष्णुरिति वा श्राहमेतमुपास इति स य एतमेवमुपास्ते रोचिष्णुई भवति रोचिष्णु-होस्य मजा भवत्यथो यैः संनिगच्छति सर्वा स्तानतिरोचते ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, जवाच, गार्ग्यः, यः, एव, अयम्, आदर्शे, पुरुषः, एतम्, एव, अहम्, ब्रह्म, उपासे, इति, सः, ह, धवाच, अजातसञ्जः, मा, मा, एतस्मिन्, संवदिष्ठाः, रोचिष्णुः, इति, वै, अहम्, एतम्, ख्यासे, इति, सः, यः, एतम्, एवम्, उपास्ते, रोचिष्णुः, ह, भवति, रोचिष्णुः, ह, अस्य, प्रजा, भवति, अथो, यैः, संनिगच्छति, सर्वाम्, वान्, अतिरोचते।

द्यान्वयः

पदार्थाः स्रन्वयः

पदार्थाः

सः≔वह ह=प्रसिद् गाग्येः≔गर्गवंशी + बालाकिः=बासकी उचाच=बोबा कि

यः=जो

श्चयम्=वह यस्=निस्तंदेड द्याद्शैं=दर्पय में पुरुषः=पुरुष है यानी प्रति-विस्व पदता है स्रहम्≕में

झहम्≃म एतम्≕सको एव≔ही

+ शास्त्राञ्जानकर

उपासे=उपासना करता इं + इति=ऐसं + श्रत्या=सुन कर सः=वह ह=प्रसिद्ध श्रजातश्रत्रुः≔चजातशत्रु राजा उवाच=बोला कि एतस्मिन्=इस ब्रह्म बिवे ्मामा } ुऐसा संबदिष्टाः } देसा +न एतत् } =यह ब्रह्म नहीं है + ब्रह्म + श्रयम्=यह रोचिष्णुः=प्रकाशमान द्वायाप्राही वस्तु हं इति=ऐसा · + बुद्ध्वा=ज्ञान कर श्रहम्≕भैं वै≕श्रवश्य डपासे=उपासना करता हं + च=श्रीर

+ श्रन्यः=ग्रीर . पतम्= सको एवम्=ऐसाही इति एव=समक्रकर उपास्ते=उपासना करता है सः=वह एव=भी रोचिष्णुः=प्रकाशवाला भवति≕होता है + च=श्रीर **ग्रस्य=इ**सकी प्रजा≔संतान ह≕निस्संदेह रोचिप्युः=प्रकाशवाली भवति=होती है अधो=श्रीर यैः=जिनके साथ संनिगच्छति=सम्बन्ध करता है तान्≕उन सर्वान=सबको

भावार्थ ।

हे सौम्य ! वह प्रसिद्ध गर्गवंशी वालाकी राजा से कहता भया कि हे राजन् ! दर्पण में जो पुरुष है उस विषे जो प्रतिविन्न है, में उसको ब्रह्म समस्त कर उसकी उपासना करता हूं, आपभी ऐसाही करें. यह सुन कर राजा कहता है कि हे अनुचान, ब्राह्मणा ! ऐसी बात ब्रह्म बिने मत कहो, यह ब्रह्म नहीं है, जिसको तुम ब्रह्म समस्त कर उपासना करते हो यह प्रकाशमान द्यायप्राही वस्तु है, ऐसा जानकर में इसकी उपासना करता हूं. जो कोई अन्य पुरुष ऐसाही जान कर

इसकी उपासना करता है, वह भी प्रकाशवाला होता है, झौर इसकी संतान भी प्रकाशवाली होती है, झौर जिनके साथ वह सम्बन्ध करता है उन सबको प्रकाशमान करता है ॥ ६ ॥

मन्त्रः १०

स होवाच गाग्यों य एवायं यन्तं पश्चान्छब्दोऽनुदेत्येतमेवाहं ब्रह्मोपास इति स होवाचाजातशत्रुमी मैतस्मिन्संवदिष्ठा श्रसुरिति वा श्रहमेतमुपास इति स य एतमेवमुपास्ते सर्वे ईवास्मिङ्लोक त्रायुरेति नैनं पुरा कालात्पाणो जहाति ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, उवाच, गार्ग्यः, यः, एव, श्रयम्, यन्तम्, पश्चात्, शब्दः, अनुदेति, एतम्, एव, श्रहम्, ब्रह्म, उपासे, इति, सः, ह, उवाच, श्चजातशत्रुः, मा, मा, एतस्मिन्, संवदिष्टाः, श्चसुः, इति, वै, श्चहम्, एतम्, उपासे, इति, सः, यः, एतम्, एतम्, उपास्ते, सर्वम्, ह, एव, म्चस्मिन्, लोके, भ्रायुः एति, न, एनम्, पुरा, कालात्, प्रागाः, जहाति ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः श्रन्वयः पदार्थाः

सः≔वह

गार्ग्यः=गर्गगोत्रोत्पन्न बालाकी उवाच=बोला कि

यः=जो

श्रयम्=यह एच=निश्चय करके

यन्तम्=गमन करनेवाले पुरुष के

पश्चात्=पीष्ठे

अजु=श्रतिसमीप

श्रब्दः=शब्द उदेति=३८ता है

त्रहम्≕में एतम् एव=उसही को

> ब्रह्म=ब्रह्म इति=करके

उपासे=उपासना करता हू

+ इति≔ऐसा

+ श्रुत्वा=सुन कर सः≔वह

ह=श्रसिद्ध

ग्रजातश्त्रः=ष्रजातशत्रु राजा

उवाच=बोबा कि . एतम् इसको उपास्ते=उपासना करता है यतस्मिन्=इस ब्रश्च विषे मा मा } _ऐसा संवदिष्ठाः } =ऐसा सः=वह एव≔भी श्चा€मन्=इस + एतत्-ब्रह्म=यह ब्रह्म + न=नहीं है हु≔ही लोके=बोक में + श्रयम्=^{यह} सर्वम्=पूर्ण श्रासुः=प्राग है श्चायुः=श्चायुको इति + मत्वा=ऐसा समक्र कर प्रति=शास होता है बै=ानसंदेह + च=श्रोर कालात्=नियत समय से पतम्≕सकी पुरा≔पहिले उपासे=उपासना करता हूं + च=ग्रीर प्रागः=प्राग यः=जो कोई एनम्=इसको न≕नहीं + ऋन्यः=श्रन्य पुरुष एवम्=इसी प्रकार जहाति≕सागता है

भावार्थ।

हे सौन्य ! जब वह प्रसिद्ध गर्गगोत्रवाला बालाकी राजा से कहता मया कि गमन करनेवाले पुरुष के पीछे पीछे आतिसमीप जो शब्द उठता है में उसीको ब्रह्म समम्म कर उसकी उपासना करता हूं. ऐसा सुन कर आजावशत्रु राजा कहता भया कि हे अनूचान, ब्राह्मण् ! तुम क्या कहते हो, यह ब्रह्म नहीं है, तुमको ऐसा कहना नहीं चाहिये, यह प्राण् है, ऐसाही इस हो समम्म कर इसकी उपासना में करता हूं. जो कोई इसको ऐसा समम्म कर इसकी उपासना में करता हूं. जो कोई इसको ऐसा समम्म कर इसकी उपासना करता है वह अवश्य इसलोक में पूर्ण आयुको प्राप्त होता है, और वह नियमित काल से पहिले अपने शरीर को नहीं त्यागता है, यानी बड़ी आयुवाला होता है।।१०॥

मन्त्रः ११

स होताच गार्ग्यो य हवायं दिक्षु पुरुष एतमेताहं ब्रह्मोपास

इति स होवाचाजातशतुर्भा मैतस्मिन्संविद्या द्वितीयोऽनपग इति वा श्रहमेतमुपास इति स य एतमेवमुपास्ते द्वितीयवान्ह भवति नास्मा-द्वस्परिक्षयते ।।

पदच्छेदः ।

सः, ह, उवाच, गार्ग्यः, यः, एव, श्रायम्, दिश्च, पुरुषः, एतम्, एव, श्राहम्, श्रह्म, उपासे, इति, सः, ह, उवाच, श्राजातशत्रुः, मा, मा, एतिसमन्, संविद्षष्ठाः, द्वितीयः, श्रानपगः, इति, वे, श्राहम्, एतम्, उपासे, इति, सः, यः, एतम्, एवम्, उपास्ते, द्वितीयवान्, ह, भवित, न, श्रास्मात्, गग्एः, छिद्यते ॥

सः=वह ह=प्रसिद्ध शाग्येः=गर्गगोत्रोत्पत्र बालाकी उदान्य=बोला कि यः=जो श्रायम्=यह

दिश्च=षारों दिशाचों में पुरुषः=पुरुष है

भ्रहम्≕में

प्तम्=इसको प्व=ही

ब्रह्म=ब्रह्म

इति=मान करके

उपासे=उपासना करता हूं इति=ऐसा

+ श्रुत्वा=सुन कर सः=बह

ह=प्रसिद्ध

द्यजातशृत्रुः≔षजातरात्रु राजा

ग्रन्वयः

पदार्थाः

उवाच=बोला कि एतस्मिन्=इस बद्य विषे मा मा }ूऐसा मत कहो संवदिष्ठाः }ेऐसा मत कहो

+ एतत्=यह

+ ब्रह्म=ब्रह्म

+ न≂नहीं है

+ अयम्≔यह

श्रनपगः=नहीं त्याग करनेवासा द्वितीयः=दूसरा दिशागत पुरुष

\$

वै=निश्चय करके

ग्रहम्≃में इति≔ऐसा

+ मत्वा=मान कर एतम्=इसकी

डपासे=डपासना करता हूं

+ च=भीर

यः=जो कोई

+ झन्यः=झन्य पुरुष

+ एष=भी

एतम्=इसकी

एवम्=इस प्रकारं

उपास्ते=उपासना करता है

सः=नद्द एव=भी

द्वितीयचान्=द्वितीयवान्

भवति≔होता है

ग्रस्मात्=इससे

गखः=पुत्र पशु घादि समु
दाय

न=नहीं

छिद्यते=नष्ट होते हैं बानी वे

ाळुद्यत≔नष्ट हात ह याना व सदा बने रहते हैं

भावार्थ ।

वह प्रसिद्ध गर्गगोत्री बालाकी बोला कि हे राजन ! जो चारों दिशाओं में पुरुष है, वही ब्रह्म है, उसी को मैं ब्रह्म मान कर उसकी उपासना करता हूं. ऐसा सुन कर अजातरात्रु गंजा बोला है अन्चान, ब्राह्मण ! यह तुम क्या कहते हो, यह ब्रह्म नहीं है, यह निश्चय करके नित्यसम्बन्धी दिशागत दूसरा वायुरूप पुरुष है, मैं उसको ऐसा समम कर उसकी उपासना करता हूं. हे ब्राह्मण ! जो कोई इसको इस प्रकार जान कर इसकी उपासना करता है, वह भी दितीयहीन नहीं होता है, आँग इसके पुत्र पशु आदि इससे पृथक् नहीं होते हैं, यानी सदा इसके साथ बने रहते हैं।। ११॥

मन्त्रः १२

स होवाच गार्ग्यो य एवार्य छायामयः पुरुष एतमेवाहं ब्रह्मो-पास इति स होवाचाजातशत्रुर्मा मैतस्मिन्संविद्षष्ठा मृत्युरिति वा ऋहमेतमुपास इति स य एतमेवमुपास्ते सर्वश्हैवास्मिल्लोक आयु-रेति नैनं पुरा कालान्मृत्युरागच्छति ॥

पद्च्छेदः ।

सः, ह, उवाच, गार्ग्यः, यः, एव, अयम्, छायामयः, पृहषः, एतम्, एव, आहम्, श्रह्म, उपासे, हति, सः, ह, उशाच, आजातशत्रुः, मा, मा, एतस्मिन्, संवदिष्ठाः, मृत्युः, हति, वे, आहम्, एतम्, उपासे, इति, सः, यः, एतम्, एवम्, उपास्ते, सर्वम्, ह, एव, आस्मिन्, लोके, आयुः, एति, न, एनम्, पुग, कालात्, मृत्युः, आगच्छति ॥

प्रत्ययः

पदार्थाः

ग्रन्वयः

पदार्थाः

सः=वह ह=प्रसिद्ध गार्ग्यः=गर्मगोत्रोत्यव वासाकी खवाच=बोबा कि यः≕जो श्चयम्=यह एव=निश्चय करके **छ्रायाम्यः≔द्वायारू**पी पुरुषः=पुरुष है अहम्≕में पतम्≔इसको पव≕ही ब्रह्म=ब्रह्म इति=मान करके उपासे=उपासना करता हुं इति=ऐसा + शुरवा=पुन कर सः=वह

ह=प्रसिद्ध **सजातश**त्रुः=सजातशत्रु राजा डवाच=बोबा कि एतस्मिन्=इस ब्रह्म विषे मामा { _ऐसामत कही संविविद्याः 🕽 🚉 सा मत कहो

+ पतत्=पर

+ ब्रह्म=बद्ध + न=नहीं है

+ झयम्=यह द्वायापुरुष मृत्युः≃स्त्यु है इति + मत्वा=ऐसा मान कर वै=निस्संदेह ब्रह्म्≔में पत्रम्≔इसकी उपासे=उपासना करता हं + ख≕घोर यः≕जो कोई + इप्रत्यः एव≔भ्रम्य भी एतम्=इसकी पवम् उपास्ते=इस प्रकार उपासना

सः=वह ह=धवश्य म्रस्मिन्≡इस लोके=कोक में सर्वम्=पूर्व द्यायुः=घायु को पात=शास होता है + च≔बीर मृत्युः≃सृत्य कालात्=नियमित काल से पुरा=पहिसे प्तम्≔इसके पास म≕नहीं आगच्छति=भाती है

करता है

मावार्थ ।

हे सौन्य ! वह प्रसिद्ध गर्गगोत्रवाला बालाकी राजा से कहता

भया कि जो यह द्वायापुरुष है, इसीको में ब्रह्म मान कर इसकी उपासना करता ें ऐसा सुन कर अजातरांत्रु राजा ने जवाब दिया कि हे ब्राह्मण ! यह तुम क्या कहते हो, ऐसा मत कहो, यह ब्रह्म नहीं है, यह तो द्वायापुरुष मृत्यु है, क्योंकि जब उपासक को यह कटा कुटा दिखाई देता है तब उसीको अपने मरने का बोध होता है. इसको में ऐसा समम्म कर इसकी उपासना करता हूं. जो कोई इसकी उपासना इस प्रकार समम्म कर करता है, वह अवश्य इस लोक में पूर्ण आयु को प्राप्त होता है, और उसके निकट मृत्यु नियत कालसे पहिले नहीं आती है ॥१२॥

मन्त्रः १३

स होवाच गार्गे य एवायमात्मिन पुरुष एतमेवाई ब्रह्मोपास इति स होवाचाजातरातुर्मा मैतिस्मिन्संविदिष्टा आत्मन्वीति वा अहमे-तमुपास इति स य एतमेवमुपास्त आत्मन्वी ह भवत्यात्मिन्वनी हास्य प्रजा भवति स ह तृष्णीमास गार्ग्यः ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, जवाच, गार्ग्यः, यः, एव, अयम्, आत्मनि, पुरुषः, एतम्, एव, अहम्, अहम्, उपासे, इति, सः, ह, जवाच, आजातरात्रुः, मा, मा, एतिस्मन्, संवदिष्ठाः, आत्मन्वी, इति, वै, आहम्, एतम्, उपासे, इति, सः, यः, एतम्, एवम्, उपास्ते, आत्मन्वी, ह, भवति, आत्म-न्विनी, ह, अस्य, प्रजा, भवति, सः, ह, तृष्णीम्, आस्, गार्ग्यः ॥ अन्वयः पदार्थाः | अन्वयः पदार्थाः

सः=वह प्य=ितश्य करके
ह=मसिद ग्रात्मिन=हवय में
ग्राह्मी:=गर्गगोगोत्राच पुरुष:=पुरुष है
वालाकी ग्राह्म=में
उपाण्य=बोला कि प्रत्म्=हसको
य:=गो झहा=हस

उपासे=उपासना करता हूं इति≕ऐसा + शुत्वा=सुन कर सः=वह ह्र⇒प्रसिद्ध **ग्रजातशत्रुः=ग्र**जातरात्रु राजा उवाच=बोना किं एतस्मिन्=इस ब्रह्म विवे मा मा १ पेसा मत कहो संविद्धाः (पेसा मत कहो + एतत्त्≃यह + ब्रह्म≕ब्रह्म + न≔नहीं है +श्रयम्=यह श्चाहमन्वी=जीवात्मा पराधीन **है** इति=इस प्रकार वै=विश्चय करके श्रहम्=मैं पतम्≃इसको + एव=निस्संदेह उपासे=उपासना करता हूं + च≔ग्रीर यः≕जो कोई

+ एव=भी यतम्=इसकी एवम्=इस प्रकार डपास्ते=डपासना व ता है सः=वह + एव=भी हु=स्रवस्य श्रात्मन्वी=शु**खगु**खप्रा**ही** भवति=होता है + ख=श्रीर हुः≖ग्रवरय श्चस्य=इसकी प्रजा=संतान + एच≕मी श्चारमन्विभी=शुद्ध बास्मावासी मवति=होती है ह=इसके पश्चात्

> सः=वह गार्ग्यः=गर्वगोत्री वासाकी

तूष्णीम्=चुपचाप

श्रास=होता भवा

+ झान्यः=झन्य पुरुष

भावार्थ।

हे सौम्य ! वह प्रसिद्ध गर्गगोत्रोत्पन्न वालाकी बोका कि हे राजम ! इस हृदयाकाश विषे जो पुरुष है उसको में नहा मान कर उसकी उपा-सना करता हूं, ऐसा सुन कर वह प्रसिद्ध राजा अजातशत्रु बोका कि हे अनुचान, न्नाह्मणा ! तुम क्या कहते हो, तुमको ऐसा नहीं कहना चाहिये, जिसको तुम नहा समसे हो वह नहां है, यह तो केवल जीवात्मा पराधीन है, में इसको ऐसा जान कर इसकी उपासना करता है वह हुं, जो कोई इसको ऐसा जान कर इसकी उपासना करता है वह अवश्य ग्राद्रग्रागाही होता है, और उसकी संतति भी ग्राद्ध आत्मा-बाली होती है, ऐसा उत्तर पाकर बालाकी चुपचाप होगया ॥ १३॥

मन्त्रः १४

स होवाचाजातशत्रुरेतावन्त् ३ इत्येतावद्धीति नैतावता विदितं भवतीति स होबाच गार्ग्य उप त्वा यानीति ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, उवाच, भ्रजातशत्रुः, एतावत्, नू, इति, एतावत्, हि, इति, न, एतावता, विदितम्, भवति, इति, सः, इ, उवाध, गार्ग्यः, उप, त्वा, यानि, इति ॥

श्रश्वयः

. पदार्थाः ग्रन्वयः

पदार्थाः द्ध≔तब विदितम्=नस का ज्ञान सः=वह न≕नहीं **श्रजातशत्रुः=श्र**जातशत्रु राजा भवति=होता है उषाच=बोला कि इति=ऐसा नू=क्या + शुत्वा=सुन कर _तुम इतनाही सः≔वह जानते हो ह=प्रसिद्ध + बालाकि#=बालाकी गार्ग्यः=गर्गगोत्रोत्पन्न + उवाच=बोना कि बाबाकी हि=हां श्रवश्य उवाच=बोबा कि पतायत् इति=इतनाही ब्रह्म विषे त्वा=भ्रापके + जानामि=मैं जानता हूं उप=िनकट + पुनः≕फिर + ग्रहम्=मैं +काश्यः≔काशी के राजाने + शिशुचत्=शिष्यवत् आह=कहा इति=ऐसा पतावता } ⊨इतना करके इति } यानि=भाप्त हूं भावार्थ ।

हे सीम्य ! जब बाजाकी चुप होगया, तब राजा अजातसञ्जू ने

कहा है अनुचान, ब्राह्मणा ! क्या तुम ब्रह्म विष इतनाही आनते हो ? उसने कहा हां महाराज, ब्रह्म विषे इतनाही में जनता हूं. इसस राजा को विज्ञात होगया कि यह ब्राह्मणा ब्रह्मज्ञान में अपूर्ण है, और फिर कहा कि इतने करके ब्रह्म का ज्ञान नहीं होसकता है, इस पर बाजाकी को मालूम होगया कि राजा को ब्रह्म का पूरा ज्ञान है, ऐसा जान कर राजा से कहा कि हे भगवन ! मैं आपके निकट शिष्यभाव से प्राप्त हूं।। १४।।

मन्त्रः १५

स होवाचाजातशतुः प्रतिलोमं चैतद्यद्त्राह्मणः क्षत्रियसुर्पेयाद्
ब्रह्म मे वक्ष्यतीति व्येव त्वा अपिष्यामीति तं पाणावादायोचस्यौ तौ ह पुरुष सुप्तमाजम्मतुस्तमेतैर्नामिभरामन्त्रयाश्वके बृहन्पाष्टरवासः सोम राजिन्नति स नोत्तस्यौ तं पाणिनाऽऽपेषं बोधयाश्वकार स होत्तस्यौ ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, उवाच, अजातशतुः, प्रतिलोमम्, च, एतत्, यत्, ब्राह्मणाः, क्षित्रियम्, उपेयात्, ब्रह्म, मे, वक्ष्यति, इति, वि, एव, त्वा, क्षपिष्यामि, इति, तम्, पाण्गे, आदाय, उत्तस्यो, तो, ह, पुरुषम्, सुप्तम्, आज-मतुः, तम्, एतेः, नामभिः, आमन्त्रयाश्वके, वृहन्, पायस्रवासः, सोम, राजन्, इति, सः, न, उत्तस्यो, तम्, पाण्गिना, आपेषम्, बोधया-श्वकार, सः, ह, उत्तस्यो ॥

झन्चयः पद् ह=तव सः=वह अजातशत्रुः=अजातशत्रु राजा उचाच⇒बोज्ञा कि

यत्=जो ब्राह्मग्रः=ब्राह्मग्र पदार्थाः । अन्वयः पदार्थाः

क्षत्रियम्=क्षत्रियं के पास उपेयास्=निकट जाय

इति=इस श्राशासे कि मे=मेडेकिये

+ सः=वह ह=भवरय

ब्रह्म=ब्रह्म को एतेः≔इन वश्यति=उपदेश करेगा तो नामभिः=नामा से श्रामन्त्रयाश्चके=जगाने के लिये एतत्=यह प्रतिलोमम्=शास्त्रविरुद्ध पुकारने समे + अस्ति=है बृहन्=हे श्रेष्ठपुरुष, परन्तु=परन्तु पाराजरचासः=हे श्वेतवस के धारख श्रहम्=मैं करने वाखे, एव=श्रवश्य सोम=हे सोम ! त्वा=तुमको राजन्=हे राजन् ! विज्ञपयिष्यामि=वहा के विषे कहूंगा + उत्तिष्ठ≕जागो इति≕इतना + परन्तु=परन्तु + उक्त्वा≔क्ह कर सः=वह सोया हुन्ना पुरुष तम्≕उसके न=नहीं पासौ=हाथ को उत्तस्थी=उठा श्रादाय=पक्द कर ह्≕तब उत्तस्थी=उठखड़ा हुम्रा पाशिना≔हाथ से + च=ग्रीर श्चापेषम्=दवा दवा कर ती=वे दोनों सुप्तम्=किसी सोये हुये तम्=उसको पुरुषम्=पुरुष के पास बोधयाञ्चकार=जगाया आजग्मतुः≔षाये + तदा≕तब + च=घौर सः=वह उत्तस्थी=जगडठा तम्=डस सोये हुये पुरुषको

भावार्थ ।

इस पर हे सौम्य ! राजा आजातशत्रु ने जवाव दिया कि हे बालाकी ! यदि ब्राह्मत्मा क्षत्रिय के पास इस आशा से जाय कि वह क्षत्रिय सुम्कको ब्रह्म का उपदेश करेगा तो उसका ऐसा करना शास्त्रविरुद्ध है, परन्तु में तुमको अवश्य ब्रह्म विषे कहूंगा, इतना कह कर उसका हाथ पकड़ कर उठ खड़ा हुआ, और दोनों एक सोये हुये पुरुष के पास आये, और उसके जगाने के क्षिये ऐसे पुकारने क्षेगे कि, हे श्रेष्टपुरुष ! हे प्रवेतवस्त धारणा करनेवाले ! हे चन्द्रमुख ! हे प्रकाशवाले ! जागो, जागो, उठो, परन्तु जब वह नहीं जागा, तब हाथ से उसके शरीर को दवा दवाकर उसको जगाया, तब वह उठ बैठा ॥ १४ ॥

मन्त्रः १६

स होवाचाजातशत्रुर्वत्रेष एतत्सुप्तोऽभूद्य एष विज्ञानमयः पुरुषः क्षेष तदाऽभूत्कुत एतदागादिति तदु इ न मेने गार्ग्यः ॥

सः, ह, उवाच, अजातशत्रुः, यत्र, एषः, एतत्, सुप्तः, अभूत्, यः, एषः, विज्ञानमयः, पुरुषः, ज्ञ, एषः, तदा, अभूत, कुतः, एतत्, आगात, इति, तत्, उ, ह, न, मेने, गार्ग्यः ॥

भ्रन्वयः

पदार्थाः | अन्वयः

पद्मर्थाः

+ झथ≕तिस के पीछे विद्यानमयः=विज्ञानमय पुरुषः=पुरुष है सः≔वह एषः≔यह ह=प्रसिद्ध तवा=सोते वक् श्रजातशत्रुः≔श्रजातशत्रु राजा क=कहां उवाच=बोबा कि श्रभूत्=था + बालाके≕हे बालाकी ! + च≔मौर यत्र=जिस कास कुत≔कहां से ह=निस्संदेह एतत्≃उस काब में यानी एषः=यह जीवात्मा जागने पर एतत्=इस शरीर में आगात् इति=मागया ऐसे सुप्तः≔सोया हुन्ना तत्य्≕इन दोनों प्रश्नों को ड ह=चच्छी तरह से श्रभृत्≕था गार्ग्यः=बाताकी + च≔द्योर यः=जो . स=नहीं मेने⇒सममा एषः=यह

भावार्थ ।

हे सौम्य ! वह प्रसिद्ध राजा अजातरात्रु बोला कि हे बालाकी ! जिस कार्ल में यह जीवात्मा सोया हुआ था; उस अवस्था में यह विक्रानमय पुरुष कहां था, और जब शरीर के दवाने से जगाया गया तो यह कहां से आगया, यानी इस पड़े हुये शरीर में कीन सोचे और जागनेहारा है, और कीन जगाया गया है, और वह कहां से आया है, यह मेरा प्रश्न है, हे अनूचान, ब्राह्मणा! क्या दुम इन सबकी जानते हो ? यह सुन कर वह ब्राह्मणा बोला कि मैं आपके प्रश्नों का उत्तर नहीं दे सकता हूं, क्यों कि मैं इस विषय को नहीं जानता हूं।। १६।।

मन्त्रः १७

स होवाचाजातरात्रुर्यत्रेष एतत्सुप्तोऽभूच एष विज्ञानमयः पुरुष-स्तदेषां माणानां विज्ञानेन विज्ञानमादाय य एषोऽन्तर्हृदय आकाशः स्तस्मिञ्जेते तानि यदा गृह्वात्यथ हैतत्पुरुषः स्विपति नाम तद्-गृहीत एव माणो भवति गृहीता वाग् गृहीतं चक्षुर्गृहीत ॥ श्रोत्रं गृहीतं मनः ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, खवाच, आजातशत्रः, यत्र, एषः, एतत्, सुप्तः, आमृत्, यः, एषः, िज्ञानमयः, पुरुषः, तत्, एषाम्, प्राग्णानाम्, विज्ञानेन, विज्ञानम्, आदाय, यः, एषः, आन्तर्दृदये, आकाशः, तस्मिन्, शेते, तानि, यदा, गृह्वाति, अथ, ह, एतत्, पुरुषः, स्विपिति, नाम, तत्, गृहीतः, एत, प्राग्णः, भवति, गृहीता, वाग्, गृहीतम्, चक्षः, गृहीतम्, श्रोत्रम्, गृहीतम्, मनः ॥

अश्वयः

पदार्थाः भ्रन्वयः

पदार्थाः

सः≔वह ह=असिद स्रजातशत्रुः=सजतरात्रु राजा

अशास=वोबा कि यश्र≐जिस काब में यश्र=यह जीवात्मा पतत्≔इस शरीर विवे सुप्तः≔सोवा हुमा स्रभृत्=था

+ तत्≕उस भवस्था में यः≕जो

एषः=यह

विज्ञानमयः } _विज्ञानमय पुरुष कर्मी पुरुष: र्िका करनेष्टारा है विद्वानिन=अपने ज्ञान करके एषाम्=इन प्राशानाम्=वागादि इन्द्रियों के विज्ञानम=विषय प्रहण सामर्थ्य श्चादाय=ने कर तस्मिन्=उस विषे शेते⇒सोता है यः=जो एषः=यह अन्तईदये=हृदय के भीतर आकाशः=त्राकाश है + च=ग्रीर यदा=जब + सः≔वह पुरुष तानि=डन वागादि इन्द्रियों को ग्रह्माति=अपने में बाब कर श्चाध=तव · ह्न≔वह प्रसिद्ध

पतत्पुरुषः=यइ पुरुष स्विपिति="स्विपिति" के नाम=नाम से +विख्याता रे + च=ग्रीर तत्त=तबहीं प्रागाः=ब्राग इन्द्रिय गृहीतः एव=स्वकार्य में प्रसमर्थ भचति=होती है + एवम्≃इसी प्रकार वाक्=वाकी इन्द्रिय गृहीता=स्वकार्य में प्रसमर्थ + भवति=होजाती है च्यञ्जः=नेत्र इन्द्रिय गृहीतम्=स्वकार्य में असमर्थ + भवति=होजातां है श्रोत्रम्=श्रोत्र इन्द्रिय गृहीतम् र _स्वकार्य में बद्ध + भवति 🕽 होजाती है मनः=मन गृहीतम रे इस्वकार्य में बद + भवति र्रे होजाता है

भावार्थ ।

तब वह प्रसिद्ध आजातरात्रु राजा बोजता भया कि हे ब्राह्मणा !
जिस काल में यह जीवात्मा इस शरीर बिषे सोया हुआ था, उस
आवस्था में यह विज्ञानमय जीवात्मा कर्मों का करने हारा आपनी ज्ञानशक्ति करके इन बागादि इन्द्रियों के स्व, स्वविषय मह्न्या सामर्थ्य को
केकर उस देश में जाकर जो हृद्य के भंतर स्थित है सोगया था. हे

सौम्य ! जब यह पुरुष वागादि इन्द्रियों को अपने में अय कर जेता है, तब जोग ऐसा कहते हैं कि यह पुरुष सोता है, उस समय इस पुरुष की बागोन्द्रिय अपने कार्य के करने में असमर्थ होजाती है, नेत्रेन्द्रिय अपने कार्य के करने में असमर्थ होजाती है, श्रोत्र अपने कार्य के करने में असमर्थ होजाता है, और मन अपने कार्य के करने में असमर्थ होजाता है। १७॥

मन्त्रः १८

स यत्रैतत्स्वप्न्यया चरति ते द्दास्य लोकास्तदुते महाराजो भवत्युतेव महाब्राह्म ए उत्तेवोच्चावचं निगच्छति स यथा महाराजो जानपदान् गृहीत्वा स्वे जनपदे यथाकामं परिवर्त्ततैवमेवेष एतत्याए।न् गृहीत्वा स्वे शरीरे यथाकामं परिवर्तते ।।

पद्च्छेदः।

सः, यत्र, एतत्, स्वप्नयया, चरति, ते, ह, अस्य, जोकाः, तत्, उत, इव, महाराजः, भवति, उत, इव, महाश्राह्मगाः, उत, इव, उश्चा-वचम्, निगच्छति, सः, यथा, महाराजः, जानपदान्, गृहीत्वा, स्वे, जनपदे, यथाकामम्, परिवर्तेत, एवम्, एव, एपः, एतत्, प्रागान्, गृहीत्वा, स्वे, शरीरे, यथाकामम्, परिवर्तते ॥

अन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पः पदार्थाः लोकाः≕किये हुये सब कर्म

यत्र≕जिस काल में सः=वह • स

फख

स्वप्न्यया=स्वप्रद्वारा ष्टतत्≔इस शरीर में ह=स्रवश्य

> चरति=स्वम के व्यापारों की करता है

+ तदा=उस समय में झस्य=इस पुरुष के ते=वे + उत्तिष्ठन्ते=उदय हो द्याते हैं तत्=डस द्यवस्था में ृ उत⇒कमी सः≔वह

सहाराजः=सहाराजा के इख=समान षतत्=इस शरीर में भवति=विचरता है उत्त=चौर कभी
महाब्राह्मण्ः≔महाब्राद्मण की
ह्य=भाित
+ भविति=विचरता है
उत=चौर कभी
+ सः≔वह सुसगत
+ पुरुषः=पुरुष
+ महाब्राह्मण्ः≔महाब्राह्मण की
ह्य=भांति
उद्यायचम्=ऊंच नीच योनिको
निगच्छृति=प्राप्त होता है
+ च=चौर
यथा=औसे
महाराजः≔कोई महाराजा

आनपदान्=जीते हुये देशों के
पवार्थों को
गृहीत्वा=जे कर
स्वे=अपने
जनपदे=देश में
यथाकामम्=अपनी इच्छानुसार
परिवर्षेत=धृमता किरता है
एवम् पव=इसी प्रकार
पषः=यह पुरुष मी
प्राणान्=जागदिक इन्द्रियों को
गृहीत्वा=जे कर
स्वे=अपने
गृरीरे=शरीर में
यथाकामम्=कामना के अनुसार
परिवर्तेत=अमण करता है

भाषार्थ।
हे सौम्य! जिस काल में यह जीवातमा इस शरीर में स्वप्रद्वारा
स्वप्र के व्यापार को करता हैं, तब उसके पूर्वके किये हुये कर्म के
फल उदय हो आते हैं, और तभी यह जीवातमा कभी महाराजा
के समान वर्तता है, और कभी महाब्राह्मस् के समान विचरता है,
और कभी ऊंच नीच योनिको प्राप्त होता है. यानी कभी राजा
होता है, और कभी चायडाल बनता है, कभी हँसता है, कभी रोता
है, कभी मारता है, और कभी माराजाता है, और जैसे कोई महाराजा जीते हुये देशों के पदार्थों को लेकर आपने देश में आपनी
इच्छानुसार घूमता किरता है, इसी प्रकार यह पुरुष यानी जीवात्मा
भी इस शरीर में जो उसका देश है, आपनी कामनानुसार आपनी
इन्द्रियों के साथ अमस्या करता है।। १८।।

मन्त्रः १६ अथ यदा मुचुतो भवति यदा न करण्वन वेद हिता नाम नाड्यो द्वासप्ततिः सहस्राणि हृदयात्पुरीततमभिप्रतितिष्ठन्ते ताभिः प्रत्यवस्रप्य पुरीतति शेते स यथा कुमारो वा महाराजो वा महा-ब्राह्मणो वाऽतिश्रीमानन्दस्य गत्वा शयीतैवमेवैष एतच्छेते ॥

पदच्छेदः।

अथ, यदा, सुषुतः, भवति, यदा, न, कस्यचन, वेद, हिताः, नाम, नाड्यः, द्वासप्तिः, सहस्राणि, हृदयात्, पुरीततम्, अभिप्रतितिष्ठन्ते, ताभिः, प्रत्यवसृष्य, पुरीतति, शेते, सः, यथा, कुमारः, वा, महाराजः, वा, महान्राह्मणः, वा, अतिन्नीम्, आनन्दस्य, गत्वा, शयीत, एवम्, एव, एवः, एतत्, शेते ॥

पदार्थाः श्रन्वयः पदार्थाः श्चन्वयः अभिप्रति- } = स्याप्त हैं तिष्ठन्ते श्रय=तदनन्तर यदा=जब पुरुषः=पुरुष + सः=वह ताभिः=डन के द्वारा सुषुप्तः⇒सुषुप्तिगत + बुद्धः=बुद्धि के साथ भवति=होता है प्रत्यवस्यव्य=बीट कर + ख=धौर पुरीतित=सुषुम्ना नादी में यदा≃जब शेते=सोता है यानी भानन्द कस्यचन=किसी पदार्थ को भोगता है न≕नहीं + श्रत्र=इस विषय में वेद=जानता है + द्रष्टान्तः=इष्टान्त हे कि तदा=उस भवस्था में यथा≃जैसे हिताः नाम=हिता नामक सः=कोई + य=जो द्वासप्तति:=बहत्तर कुमारः≔ब।लक सहस्राचि=हजार वा=प्रथवा माड्यः=नादियां महाराजः=महाराजा इदयात्=इदय से वा=ग्रथवा + निस्तीर्थ=निकत कर महाब्राह्मस्ः=दिस्य ब्राह्मस् पुरीततम्,=शरीर भर में श्रानन्द्स्य=भागन्द की

स्रतिझीम्=सीमा को + गत्सा=पा कर शुयीत=सोता है एसम् एव=इसी प्रकार एषः=वह जीवाला एतत्=इस शरीर में शेते=धानन्दपूर्वक सोताहै

भावार्थ।

हे सौन्य! फिर जब यह पुरुष सुषुप्ति में रहता है, और जब किसी पदार्थ को नहीं जानता है, तब वह पुरुष सोया हुआ है ऐसा कहा जाता है, उस अवस्था में जो ये बहत्तर हज़ार नाहियां हृदय से निकलकर शरीर भरमें ज्याप्त हैं उनके साथ वह घूम फिर कर बुद्धि में सिमट कर शरीर में, अथवा सुषुन्ना नाड़ी में आनन्दभोका हो जाता है, हे सौन्य! इस विषय में लोग ऐसा दृष्टान्त देते हैं कि वह आतमा ऐसा आनन्दपूर्वक सोता है जैसे कोई वालक अथवा महाराजा अथवा कोई दिज्य बाह्यण आनन्द में पढ़ा हुआ सोता है।। १६॥

मन्त्रः २०

सं यथोर्णनाभिस्तन्तुनोचरेद्यथाऽग्नेः श्रुदा विस्फुलिङ्गा व्युचर-न्त्येवमेवास्मादात्मनः सर्वे प्राणाः सर्वे लोकाः सर्वे देवाः सर्वाखि भूतानि व्युचरन्ति तस्योपनिषत्सत्यस्य सत्यमिति प्राणा वे सत्यं तेषामेष सत्यम् ॥

इति प्रथमं ब्राह्मणम् ॥ १ ॥ पदच्छेदः।

सः, यथा, ऊर्णनाभिः, तन्तुना, उत्तरेत्, यथा, आन्तः, क्षुद्राः, विस्फुलिङ्गाः, व्युत्तरन्ति, एवम्, एव, आस्मात्, आत्मनः, सर्वे, प्राणाः, सर्वे, लोकाः, सर्वे, देवाः, सर्वािण्, भूतानि, व्युत्तरन्ति, तस्य, उपनिषत्, सत्यस्य, सत्यम्, इति, प्राणाः, वे, सत्यम्, तेषाम्, एषः, सत्यम् ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

यथा=जैसे

तन्तुना=अपने तन्तु के शाथय

सः=यह प्रसिद्धः

उद्गच्छेत्=विकरती है

ऊर्ज्यनाश्चिः≔मक्दी

+ ख≔बीर

यथा=जैसे भूतानि=बाकाशादि सहामृत प्राक्तेः≔ग्राग्नि से व्युवारन्ति=निक्सते हैं **भ्रद्धाः=छो**टी तस्य≈उसका विस्फुलिङ्गाः=चिनगारियां उपनिषद्=ज्ञानही ब्युच्चर्निःचनिकसती हैं सत्यस्य=सत्य का एवम् एव=इसी प्रकार निरचय सत्यम्=सत्य है इति=इसी प्रकार ग्रस्मात्=इस प्राणाः≔इन्द्रियां श्चात्मनः=श्चात्मा से वै=िनश्चय करके सर्वे⇒सब सत्यम्=सत्य हैं यानी प्राशाः=वागादि इन्द्रियां सर्वे≕सब नाशवान हैं स्रोकाः=भूरादिलोक तेषाम्=उन सब में सर्वे⇒सब एषः=यह धारमा सत्यम्=सत्य है यानी देवाः=सूर्यादि देवता सर्वाणि=सब स्रविनाशी है

भावार्थ ।

्रहे सौन्य! जैसे उर्त्यानाभि नामक कीट अपने मेंसे उत्पन्न किये हुये तन्तुओं के आश्रय विचरता है, उसी प्रकार न्ना भी अपने से किये हुये जगत् के आश्रय विचरता हुआ प्रतीत होता है, और जैसे अग्नि से छोटी छोटी चिनगारियां इधर उधर उहती हुई दिखाई देती हैं, उसी प्रकार इस जीवात्मा से सब वागादि इन्द्रियां, सब भूरादि लोक, सब सूर्यादि देवता, आकाशादि पश्चमहाभूत निकलते हैं, और दिखाई देते हैं, हे सौम्य! उसका ज्ञानही सत्य का सत्य है, और ऐसेही वागादि इन्द्रिया भी उसके आश्रय होने के कारण सत्य हैं नहीं तो नाशवान हैं और वह इनमें अविनाशी है ॥ २०॥

इति प्रथमं ब्राह्मसाम् ॥ १ ॥

श्रथ दितीयं श्राह्मण्म्।

मन्त्रः १

यो ह नै शिशु असाधान अस्तियाधान असस्यू एक सदामं बेद सप्त ह द्विषतो भ्रातृन्यानवरुणद्धि श्रयं वाव शिशुर्योऽयं मध्यमः प्राणस्तस्येदमेवाऽऽधानमिदं प्रत्याधानं पाणः स्थूणाऽसं दाम ॥

पदच्छेदः ।

यः, ह, वै, शिशुम्, साधानम्, सप्रत्याधानम्, सस्थूगाम्, सदा-मम्, वेद्, सप्त, ह, द्विषतः, भ्रातृत्यान्, अवरुगाद्धि, श्रयम्, वाव. शिशुः, यः, अयम्, मध्यमः, प्रागाः, तस्य, इदम्, एव, आधानम्, इदम्, प्रत्याधानम्, प्रागाः, स्थृगाा, श्रन्नम्, दाम ॥ ग्रन्वयः

पदार्थाः |

पदार्थाः

ग्रन्वयः य:=जो ह=निश्चय करके साधानम्=श्राधान सहित सप्रत्याधानम्=प्रत्याधान सहित सस्थू गुम्=स्थागुसहित सदामम्=दामसहित शिशुम्=बद्धवे को वेद्=जानता है + सः≔वह ह वै=घवरय सप्त≈सात द्विपतः≔द्वेष करनेहारे भ्रातृब्यान्=शत्रुष्मीं को श्रवरुगुद्धि=वशमें करबेता है + तेषु=तिन शतुकों के मध्य

यः=जो श्रयम्=यह मध्यमः=बीच में रहनेवाला प्रागः=प्राग है श्रयम्≔यही वाव=निस्संदेह शिशुः=बद्धदा है तस्य≖उसका आधानम्=अधिष्ठान बानी उसके रहने की जगह इदम्=यह एव≃ही + शरीरम्=स्थूल शरीर है इड्स्=यह + शिरः=शिर

+ तस्य=उसके

्रहने की अनेक जगह यानी शिर में आंख, कान, नाक, मुख जो अनेक जगह हैं उनमें बहरहताहै + तस्य=उसका स्थुणा≕बुंदा प्राणः=सम्भ से पैदा हुन्या बल है + तस्य=डसकी दाम=रस्सी अन्नम्=सम् यानी भोज्य पदार्थ है

भावार्थ ।

हे सौम्य! इस मन्त्र में मुख्य प्राग्त को गाय के बळाड़े के साथ उपमा दिया है, जैसे बळाड़ा खुंटे से बँबा हुआ घासादि खाकर बली हो जाता है, वैसेही विविध प्रकार के भोजनादि करने से यह प्राग्त भी बली होजाता है, हे सौम्य! जिस में कोई वस्तु रहे, उसको आधान कहते हैं, प्राग्त के रहने की जगह यह स्थूल शरीर है, इस लिये इस स्थूल शरीर कोई। आधान कहा है, क्यांकि इस शरीर में ही प्राग्त रहता है, एक स्थान के अन्दर और कई जगह रहने का हो तो उसे प्रत्याधान कहते हैं. यह शिर प्रत्याधान है, क्योंकि इसमें प्राग्त के रहने की बगह सात हैं, यानी दो आँख, दो कान, दो नासिका, एक रसना है, यह आजोरपन्न बल ही प्राग्त क्यांक हुआ बळाड़ घास फूसादि जो उसका भोग है खा कर बली होता है, वैसेही यह प्राग्त शरीर से बँधा हुआ बळाड़ा घास पूसादि जो उसका भोग है खा कर बली होता है, वैसेही यह प्राग्त शरीर से बँधा हुआ अनेक प्रकार के भोजन करके बली बनता है॥ १॥

मन्त्रः २

तमेताः सप्ताक्षितय उपतिष्ठन्ते तथा इमा अक्षन्लोहिन्यो राजय-स्तामिरेन छ रुद्रोऽन्वायत्तोऽथ या अक्षन्तापस्ताभिः पर्जन्यो या कनीनिका तयाऽऽदित्यो यत्कुष्णं तेनाग्निर्यच्छुक्तं तेनेन्द्रोऽधरयैनं वर्तन्या पृथिव्यन्वायत्ता चौरुत्तरया नास्यानं क्षीयते य एवं वेद ॥

पद्चक्षेदः ।

तम्, पताः, सप्त, आक्षितयः, उपतिष्ठन्ते, तत्, याः, इमाः, अक्षन्,

कोहिन्यः, राज्ञयः, ताभिः, एनम्, कद्रः, अन्वायत्तः, अथ, याः, अक्षन्, आपः, ताभिः, पर्जन्यः, या, कनीनिका, तया, आदित्यः, यत्, कृष्णम्, तेन, अप्वः, यत्, युक्तम्, तेन, इन्द्रः, अप्यरया, एनम्, वर्तन्या, पृथ्वी, अन्वायत्ता, यौः, उत्तरया, न, अप्य, अन्नम्, श्रीयते, यः, एवम्, वेद ॥

अन्वयः

पदार्थाः

तम्= १स तिङ्गात्मा प्राय को षताः=ये

सप्त≔सात

श्रक्षितयः=भ्रजय देवता उपतिष्ठन्ते=पृजते हैं

उपातधन्त=पूजत ह तत्=तिस विषे

याः=जो इमाः=वे

स्रोहिन्यः=सास

राजयः⇒रेखार्थे

श्चक्षन्=नंत्र विषे हैं ताभिः=उन करके

तक्षमः=डन करक एनम्=इस मध्यम प्राण् के

स्रन्दर

रुद्रः=रुद्रदेवता

श्रन्वायत्तः=उपस्थित है

द्यथ=भीर

थाः⇒जो

भारः=जब

अक्षन्=नेत्र विवे **हैं**

ताभिः=उन् करके

पर्जन्यः=पर्जन्य देवता

+ ग्रन्थायत्तः=उपस्थित है याः=जो

कतीनिका=पुतसी है

ग्रन्वयः

पदार्थाः

तया=उस करके श्रादित्यः=सूर्य देवता

+ ग्रक्षन्=नेत्र विवे

+ ग्रन्वायत्तः=उपस्थित है

यत्=जो

+ श्रक्षन्=नेत्र विषे

कृष्णम्=कासायन् है

तेन=उस करके श्रुविनः=ग्राग्नदेवता

+ उपतिष्ठते=उपस्थित है

यत्=जो

+ सञ्जूषि=नेत्र विवे

शुक्कम्=श्वेतता है

तेन=उस करके इन्द्रः=इन्द्र देवता

+ उपतिष्ठते=डपस्थित है

पृश्यिबी≕पृक्षिबी

द्यधरयाः=नीचेवाती वर्तन्याः=पत्नकों करके

एतम्=इस मध्यम प्राय के

अन्वायत्तः=अनुगत है

+ च=भौर

द्यौः=माकाश

उत्तरया=अपरवासी

+ वर्शनदा=पवको करके

+ श्रन्वायत्तः=भ्रमुगत है यः=जो उपासक एवम्=इस प्रकार बेद=जानता है

द्यस्य=इसका स्रक्षम्=मक न=कभी नहीं भीयते=श्रीय होता है

भावार्थ।

हे सौम्य! इस लिङ्गातमक प्राग्त को जो सात अनय देवता इसके निकट रह कर पूजते हैं-वे ये हैं, जो नेत्र विषे लाल रेखाओं द्वारा इस मध्यम प्राग्त को पूजता है वह रह है, जो जल करके नेत्र में रहने वाले प्राग्त को पूजता है वह पर्जन्यदेवता है, जो पुतली में मध्यम प्राग्त को पूजता है वह स्व्येदेवता है, जो नेत्र विथे कालापन है उसमें रहने वाले प्राग्त को जो पूजता है वह अग्निदेवता है, जो नेत्र विषे श्वेतता है उसके अन्दर जो प्राग्त रहता है उसको जो पूजता है वह इन्द्रदेवता है, पृथिवी अभिमानी देवता नेत्र के नीचे की पलकों के अन्दर रह कर प्राग्त की पूजा करता है, अग्रेर खो अभिमानी देवता उपर के पलकों के अन्दर रह कर प्राग्त की पूजा करता है, इस प्रकार जो उपासक प्राग्त को जानता है उसका अन कभी क्षीग्त नहीं होता है।। २।।

मन्त्रः ३

तदेष श्लोको भवित अर्वाग्विलश्रमस ऊर्ध्वब्रुधस्तस्मिन् यशो निहितं विश्वरूपं तस्याऽऽसत ऋषयः सप्त तीरे वागष्टमी ब्रह्मणा संविदानेति अर्वाग्विलश्रमस ऊर्ध्वब्रुध इतीदं तिस्वर एष हार्वाग्विलश्रमस ऊर्ध्वब्रुध इतीदं तिस्वरूपमिति प्राणा वे यशो विश्वरूपं प्राणानेतदाह तस्याऽऽसत ऋषयः सप्त तीर इति प्राणा वा ऋषयः प्राणानेतदाह वागष्टमी ब्रह्मणा संविदानेति वाग्ध्यपी ब्रह्मणा संविदानेति वाग्ध्यपी ब्रह्मणा संविदानेति वाग्ध्यपी ब्रह्मणा संविदानेति

पदच्छेदः ।

तत् , एषः, रलोकः, भवति, श्चर्वाग्विलः, चमसः, ऊर्ध्वबुध्नः, तस्मिन् , यशः, निद्दितम् , विश्वकृपम् , तस्य, श्चासते, शृषयः, सप्त, तीरे, बाग् ,

पदार्थाः

आष्ट्रमी, ब्रह्मसा, संविदाना, इति, अर्वाग्विकाः, चमसः, उर्ध्वशुष्टः, इति, इदम्, तत्, शिरः, एषः, हि, अर्वाग्विकः, चमसः, उर्ध्वशुष्टः, तिहमन्, यशः, निहितम्, विश्वक्षपम्, इति, प्रासाः, वे, यशः, विश्वक्षपम्, प्रासान्, एतत्, आह, तस्य, आसते, अगृषयः, सप्त, तीरे, इति, प्रासाः, वे, अगृषयः, प्रासान्, एतत्, आह, वाग्, अष्टमी, ब्रह्मसा, संविदाना, इति, वाग्, हि, अष्टमी, ब्रह्मसा, संविदाना, स्वार्

श्चन्वयः

ĭ

पदायाः अः तत्≕पिछले मन्त्र में जो कहागयाहै उस विषे

एषः=यह श्लोकः=मन्त्र भवति=प्रमाण है द्यवीग्विलः=नीचे है मुख जिसका + च=चीर

कर्ध्वंबुधः=कपरहेपॅदा जिसका चमसः=ऐसा यज्ञ का कटोरा +शिरः=मनुष्य का शिरहे तस्मिन्=उसमें

विश्वक्षपम् } नाना प्रकार का
यशः } विभववाद्धा प्राया
निहितम्=स्थित है
तस्य=उसके
तीरे=किनारे पर
सस=सात
ऋषयः=माय्युक्क हन्द्रियां है
+ च=शीर

ब्रह्मणा≔नेर से संविदाना=संवाद करनेवासी अष्टमी=ब्रह्मी बाक्-बाकी

पदार्थाः अन्वयः -

त्रासते=स्थित है स्रर्वाम्बिलः=नीचे हे मुखरूप वित्त

जिसमें + च=धौर

ऊर्घ्ववुधः=अपर है पेंदा जिसमें इति=ऐसा

तत्=वह

इदम्=यह

खमसः=चमसाकार शिरः=मनुष्य का शिर है

प्ररः≖मनुष्य का शार ह हि=क्योंकि

एषः≔यह मनुष्य का शिर अर्वाग्विलः≕नीचे छेदवाला च≕भीर

ऊध्वेबुधः=ऊपर पेंदावासा चमसः=यज्ञ का कटोरा है

त्रस्यः=यश् का कटार तस्मिन्=तिसी शिर में

विश्वरूपम्=नाना मकार का यशः=विभववासा प्राय

निहितम्=स्थित है इति=वही

बिश्वरूपम्≃सर्वशक्तिमान् सञ्जः=चिश्वववाद्या वै=निश्चय करके

+ इति=इस जिये
प्रांगान्=प्राया को ही
पतत्व=यह विश्वक्ष यश
आह=कहते हैं
तस्य=तिसके
तीरे=समीप
सस=सात
अह्ययः=इन्द्रियां
आसेत=रहती हैं
इति=इस प्रकार
सात इन्द्रियां
अग्रुवे नाहिका जीर प्रकित्वां
प्राणाः वै=प्राणाः हैं

+ इति=इसी कारग

मस्त्रः=सन्त्र ने एतत्=इसको प्राशान्≃प्रास आह=कहा है + ख=धौर ब्रह्मसा्स=वेद से संविदाना=संवाद करनेवाली श्रष्टमी=ग्रहवीं वाग्=वार्या है इति≕ऐसा + भन्त्रः=मन्त्र ने + उक्तम्≔क्हा है हि=क्यों कि श्रष्टमी=बाउवीं वाक=वाणी ब्रह्मणा=वेद के साथ संवित्ते=सम्बन्ध करती है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! जो पिछले मन्त्र में कहा गया है कि जीवात्मा के सात शत्रु हैं, उन्हीं का व्याख्यान इस मन्त्र में कहा जाता है सुनो, जिसका मुख नीचे है और पेंदा ऊपर है, ऐसा यह का कटोरावत् जो मनुष्य का शिर है, उसमें नाना प्रकार के चमत्कारवाले प्राणा स्थित हैं, और उसके किनारे पर सात प्राणायुक्त इन्द्रियां, यानी दो नेत्र, दो कर्णा, दो नासिका, और एक जिह्ना (विषयों की भोगनेवाली और इसी कारणा जीवके शत्रु) स्थित हैं, और हे सौम्य ! एक प्राणा-युक्त वेद से संवाद करनेवाली आठवीं वाणी भी स्थित है।। ३।।

मन्त्रः ४

इमावेष गोतमभरद्वाजावषमेव गोतमोऽयं भरद्वाज इमावेव वि-. स्वामित्रजणद्रम्मी अध्यमेष विश्वाभित्रोऽयं जमद्ग्निरिमावेव वसिष्ठ- कश्यपावयमेव वसिष्ठोऽयं कश्यपो वागेवात्रिवीचा क्षममद्यतेऽचिई वै नामैतद्यदत्रिरिति सर्वस्यात्ता भवति सर्वमस्यानं भवति य एवं वेद।।

इति द्वितीयं ब्राह्मणम् ॥ २ ॥

पदच्छेदः ।

इमी. एव, गोतमभग्द्वाजी, श्रायम्, एव, गोतमः, श्रायम्, भरद्वाजः, इमी, एव, विश्वामित्रजमद्ग्नी, श्रयम्, एव, विश्वामित्रः, श्रयम्, जमद्गिन:, इमौ, एव, वसिष्ठकश्यपौ, श्रयम्, एव, वसिष्ठः, श्रयम्, कह्यपः, वाक्, एव, श्रत्रिः, वाचा, हि, श्रत्रम्, श्रद्यते, श्रत्तिः, ह, वे, नाम, एतत्, यत्, आत्रिः, इति, सर्वस्य, आस्ता, भवति, सर्वम्, श्चास्य, श्चन्नम्, भवति, यः, एवम्, वेद् ॥ पदार्थाः

पदार्थाः श्चन्त्रयः श्चन्वयः

+ गुरुः=गुरु

+ शिष्यम्=शिष्य से

+ आह≔कहता है इसी एव=ये दोनों कर्ण निश्चय

गोतम् र गोतम और भरद्वाज भरद्वाजी } हैं बानी श्रयम्≔यह दहिना कर्य एख=निस्संदेह गोतमः=गोतम है श्चयम्≔यह वायां कर्ण भरहाजः=भरदाज है इसौ=ये दोनों नेत्र एव=निश्चय करके

विश्वामित्र- । विश्वामित्र शौर जमद्ग्वी) जमद्ग्वि हैं यानी आयम् रे यह दहिना नेत्र नि-⁼रचय करके विष्यामित्रः=विश्वामित्र है

द्मयम्=यह बायां नेत्र जमद्यानः=जमद्यान है इमी=ये दोनों नासिका पच≕निस्संदेह वसिष्ठकश्यपौ=वसिष्ठ भौर कश्यप

> हैं यानी श्रयम् एवं=यह दहिनी नासिका निरचय करके

वसिष्ठः=वसिष्ठ है द्ययम्=यह बाई नासिका कश्यपः=करयप है

वाक्=वायी एव=निस्संदेह अत्रिः=मनि है हि=न्योंकि

वाचा=वाणी करके श्रद्धम्=धव ग्रहाते=खायाजाता है

+ तस्मात्≔इस विये

वेद=जानता है + ग्रह्य=इस वाणी का ह वै=प्रसिद्ध निश्चय करके सः≔वह सर्वस्य=प्रव प्रव का न[म=नाम श्रतिः=श्रति है श्रचा=भोका भवति=होता है यत्=जो एतत्= यह है + च=श्रीर + तत्=वही सर्वम≈सब श्रात्रिः=श्रत्रि है श्रन्नम्=मन्न इति=ऐसा श्चस्य=इसका य:=जो + भे(उयम्=भोज्ब भवति=होता है एवम=कहे हुये प्रकार भावाधे ।

हे प्रियदर्शन ! गुरु शिष्य से कहता है कि ये दोनों कर्गा गौतम आरे भरद्वाजन्मृषि हैं, यानी यह दहिना कर्गा गौतम है, और यह बायां कर्गा भरद्वाज है, उसीतरह नेत्रों को अंगुली से बताकर कहता है कि ये दोनों विश्वामित्र और जमदिन हैं, यानी यह जो दिहा नेत्र है वह विश्वामित्र है, और जो यह बायां नेत्र है वह जमदिन है, फिर दोनों नासिका को अंगुली से दिखा कर कहता है, हे शिष्य ! ये बसिष्ठ और कश्यप हैं, यानी जो यह दिहनी नासिका है, वह विश्व ! ये बसिष्ठ और कश्यप हैं, यानी जो यह दिहनी नासिका है, वह विश्व ! ये बसिष्ठ और कश्यप हैं, यानी जो यह दिहनी नासिका है, वह विश्व ! वागी निस्सन्देह अति हैं, क्योंक वागी करके ही अन्न खाया जाता है, इसीका प्रसिद्ध नाम अति हैं, जो अति हैं, वही अत्रि हैं, जो उपासक इस प्रकार जानता है वह सब अनों का भोका होता है, और सब अन्न इसका भोज्य होता है ॥ ४ ॥

इति द्वितीयं ब्राह्मग्राम् ॥ २ ॥

श्रथ तृतीयं बाह्मग्रम् ।

मन्त्रः १

द्वे वाव ब्राह्मणो रूपे पूर्त चैवापूर्त च पत्ये चामृतं च स्थितं च यच सच त्यं * च ॥

पदच्छेदः ।

द्वे, बाब, ब्रह्मगाः, रूपे, मूर्त्तम्, च, एव, श्रमूर्तम्, च, मर्त्यम्, च, श्रमृतम्, च, स्थितम्, च, यत्, च, सत्, च, त्यम्, च॥ पदार्थाः ऋन्वयः पदार्थाः श्चन्वयः

ब्रह्मगः=ब्रह्म के वाव=निश्चय करके द्वे=दो क्रपे=रूप हैं मूर्त्तम्=एक मृर्त्तिमान् च=ग्रौर श्रमूर्त्तम्=दूसरा श्रमृत्तिमान् है मर्त्यम्=एक मरग्रधमी

ħ

च=श्रीर अमृतम्=दूसरा श्रमत्धर्मी स्थितम्=एक श्रवत च=श्रीर यत्=दूसरा चल सत्=एक व्यक्त च≃श्रौर एव=निश्चय करके

त्यम्=दूसरा भव्यक्र

भावार्थ ।

हे सौम्य ! ब्रह्म के दो रूप हैं, एक मूर्तिमान, दूसरा अमूर्तिमान, एक मरगाधर्मी, दूसरा श्रमरधर्मी, एक चल, दूसरा श्रचल, एक व्यक्त, दसरा भ्राञ्चक, कार्यरूप करके जगत के भ्राथवा ब्रह्मागड के जितने रूप हैं सब मूर्तिमान हैं, अपेर इसीिक्षये नाशवान भी हैं, परन्तु जो परमासुंरूप से सृष्टि के नाश होने पर स्थित रहते हैं, वे अप्रमूर्तिमान् झ्रीर मरगाधर्मरहित कहे जाते हैं. यही परमाणु जब ईश्वर जगत् के रचने की इच्छा करता है एक दूसरे से मिलकर स्थूल गोलाकार क्लोकआदिक बन जाते हैं, और फिर उन क्लोको में ईश्वर की प्रेरणा

[🗯] इस मन्त्र में चकार झाठ हैं जिनमें से चार का अर्थ गया है भीर चार छोड़ दिये गये।

करके चलनशक्ति होने लगती है, झौर तत्पश्चात् मूर्तिमान् वृक्ष, कीड़े, पतिंगे झौर जीवजन्तु उत्पन्न हो जाते हैं ॥ १ ॥

मन्त्रः २

्तदेतन्पूर्त्ते यदन्यद्वायोश्चान्तरिक्षाचैतन्मर्त्यमेतस्<mark>स्थितमेतस्सत्तस्यै</mark>-तस्य पूर्तस्येतस्य मर्त्यस्येतस्य स्थितस्येतस्य सत एव रसो य एव तपति सतो होप रसः ॥

पद्दु च्छेदः।

तत्, एतत् , मूर्त्तम् , यत् , अन्यत् , वायोः, च, अन्तरिक्षात् , च, एतन्, मर्त्यम्, एतत्, स्थितम्, एतत्, सत्, तस्य, एतस्य, मूर्त्तस्य, एतस्य, मर्त्यस्य, एतस्य, स्थितस्य, एतस्य, सतः, एषः, रसः, यः, एषः, तपति, सतः, हि, एषः, रसः ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः । श्रन्वयः 🕟 पदार्थाः यत्≕जो एतस्य=इस वायोः=वायु से मर्त्यस्य=मरणधर्मी का च=श्रीर एतस्य=इस **ग्र**न्तरिक्षात्=श्राकाश से स्थितस्य=स्थायी का श्चम्यत्=भिन्न तेज जल पृथ्वीहै एतस्य=इस तत्≔वही सतः=ध्यक्र का एषः⇒यह एतत्≕यह मूर्त्तम्=मूर्त्तिमान् है एतत्=यही रसः=सार है मर्त्यम्=मरणधर्मी है यः=जो एतत्=यही एषः=यह सूर्य स्थितम्=स्थायी है तपति=प्रकाशता है हि=म्यॉकि एतत्=यही सत्≔बक हे एषः=मह तस्य=तिस सतः=पृथ्वी जल श्रीर द्यग्निका एतस्य=इस मूर्त्तस्य=मूर्तिमान् का रसः=सार है

भाषार्थ ।

हे सीम्य ! वायु श्रीर श्राकाश से पृथक् जो तेज, जल, पृथ्वी हैं वे मूर्तिमान्, मरगाधर्मी, श्रास्थायी, व्यक्त यानी रूपवाले कहे जाते हैं, तिनका जो सार है वह यही सूर्य है, जो सामने प्रकाश करता है।। २।।

मन्त्रः ३

अथापूर्त वायुरचान्तरिक्षं चैतदमृतमेतद्यदेतत्त्यं तस्येतस्यापूर्त-स्येतस्यामृतस्येतस्य यत एतस्य त्यस्येष रसो य एष एतस्मिन्य-एडले पुरुषस्त्यस्य क्षेष रस इत्यधिदैवतम् ॥

पद्चञ्जेदः ।

अथ, अमूर्त्तम्, वायुः, च, अन्तिरिक्षम्, च, एतत्, अमृतम्, एनन्, यन्, एतत्, त्यम्, तस्य, एतस्य, अमूर्त्तस्य, एतस्य, अमृतस्य, एतस्य, यतः, एतस्य, त्यस्य, एषः, रसः, यः, एषः, एतस्मिन्, मगडले, पुरुषः, त्यस्य, हि, एषः, रसः, इति, अधिदैवतम् ॥
अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पटार्थाः

श्चन्वयः श्चर्य=श्रब

ग्रमृत्तम्=बहा का प्रमृत्तिमान् रूपः

+ उच्यते≔कहाजाता है एतस्≔यह

वायुः=वायु

ख≕भौर

अन्तरिक्षम्=श्राकाश

श्चमृतम्=श्रमर धर्मवाने हैं एतत्=यह दोनों

यत्=चलने फिरने वाले हैं

एतस्=यह दोनीं त्यस्=अन्यक्र हैं

तस्य≕तिस

एतस्य=इस

अमूर्तस्य=अमूर्तिमान् का

ः पदार्थाः एतस्य=इस

श्चमृतस्य=श्मर धर्मवाले का एतस्य=इस

यतः=चलने फिरने वाले का

पतस्य≔इस

त्यस्य=भव्यक्र का

यः≕जो एषः=यह

रसः=सार है

+ सः≔वही

पतस्मिन्=इस सूर्य मण्डले=मण्डल में

एषः≕यह

पुरुषः=पुरुष है

हि=**न्योंकि**

प्रवः=षह पुरुष त्यस्य=अन्यक्रकाही रसः=सार है इति=यह श्रभिदेवतम्=देवतासम्बन्धी विज्ञान है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! अब इस मन्त्र में ब्रह्म के अमूर्तिमान रूप को कहते हैं. पांच महाभूतों में से तीन यानी तेज, जल, पृथ्वी मूर्तिमान हैं, जिनका व्याख्यान पहिले मन्त्र में हो चुका है, और हो यानी वायु ओर आकाश अमूर्तिमान हैं, यानी उनकी अपेक्षा ये दोनों अमरधर्मी हैं, चलने किरने वाले हैं, और अव्यक्त हैं, यानी निगकार हैं, इन दोनों का सार सूर्यस्थ पुरुष है, यह देवतासम्बन्धी उपदेश है ॥ ३ ॥

मन्त्रः ४

अथाध्यात्मिमदमेव मूर्ज यदन्यत्माणाच यश्चायमन्तरात्म-श्नाकाश एतन्मर्त्यमेतित्स्थतमेतत्सत्तस्यैतस्य मूर्जस्यैतस्य मर्त्यस्यै-तस्य स्थितस्यैतस्य सत एष रसो यचक्षः सतो ह्येष रसः ॥

पदच्छेदः ।

श्रथ, श्रध्यात्मम्, इद्रम्, एव, मूर्त्तम्, यत्, अन्यत्, प्रागात्, च, यः, च, श्रयम्, अन्तरात्मन्, आकाशः, एतत्, मर्त्यम्, एतत्, स्थितस्, एतत्, सत्, तस्य, एतस्य, मूर्तस्य, एतस्य, मर्त्यस्य, एतस्य, स्थितस्य, एतस्य, सतः, एषः, रसः, यत्, चक्षुः, सतः, हि, एषः, रसः ॥

भ्रन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

अध=त्रब अध्यात्मम्=त्तरीरसम्बन्धी + ज्ञानम्=ज्ञान + उच्यते=कहा जाता है यत्=जो प्राचात्=वायु से अन्यत्=भिन्न है च=कीर

श्चयम्=यह श्चन्तरात्मन्=शरीर के ह खर स्राकाशः=बाकाश है + तस्मात्=उससे एव=भी + यः=जो

+ भिन्नः=दृथक् है

यः≕जो

इस्म्=वही
+ एतत्=यह
मृत्तेम्=मृत्तिमान् है
एतत्=वही
मर्स्यम्=मर्याधर्मी है
एतत्=वही
स्थितम्=स्थायी है
एतत्=वही
स्थत्न्=वही
स्त्=व्यक्ष है
तस्य=उसी
एतस्य=इस
मृत्तेस्य=मृत्तिमान् का
एतस्य=इस
मर्द्यस्य=स्स

पतस्य=इस स्थितस्य=स्थाधी का पतस्य=इस स्यतः=अपक्र का यत्⇒जो प्षः=यइ रसः=सार है + तत्≖वही स्रशुः=नेत्र है हि=क्योंकि प्षः=यह नेत्र स्रतः=स्थक्ष का यानी स्रानि, जल स्रोर पृथ्यी का

भावार्थ ।

हे सीन्य ! आव शरीगसम्बन्धी उपदेश कहा जाता है, जो बायु आर वायु के विकार से भिन्न है, जो शरीगस्थ आकास और आकास के विकार से भिन्न वस्तु है, यानी जो आग्नि, जल, पृथिवी है, वही मूर्तिमान् है, वही मरसाधर्मी है, वही स्थायी है, वही व्यक्त है, तिसी मूर्तिमान् का, तिसी मरसाधर्मी का, तिसी स्थायी का, और तिसी व्यक्त का जो सार है वही नेत्र है। ४॥

मन्त्रः ५

श्रयामूर्त्तं पाणरच यरचायमन्तरात्मकाकाश एतदमृतमेतचदेतस्यं तस्येतस्यामूर्तस्येतस्यामृतस्येतस्य बत एतस्य त्यस्येष रस्ये योऽयं दक्षिणेऽक्षम्युरुषस्त्यस्य ग्रेष रसः ॥

पद्च्छेदः ।

श्रथ, श्रमूर्तम, प्राग्यः, च, बः, च, श्रयम्, श्रन्तरात्मन्, श्राकाशः, एतत्, श्रमृतम्, एतत्, यद्, एतत्, त्यम्, तस्य, एतस्य, श्चमूर्त्तस्य, एतस्य, श्रमृतस्य, एतस्य, यतः, एनस्य, त्यस्य, एषः, रसः, यः, श्रयम्, दक्षिणे, श्रक्षन् , पुरुषः, त्यस्य, हि, एवः, रसः ॥ पदार्थाः पदार्थाः श्रन्वयः

श्चन्ययः

স্তার্য =মর श्रमूर्त्तम्=श्रमूर्त के बारे में + उच्यते=उपदेश किया जाता है यः-च=जो श्रयम्-च=^{यह} **ग्रन्तरात्मन्**=हृद्य के भीतर आकाशः=आकाश है + च=ग्रीर + यः=जो प्राग्ाः=प्राग है + च= { श्रीर जितने प्राण श्रीर + च= { श्राकाश के भेद हैं **एतस्**=वही श्चमृतम्=श्रमरधर्मी है पतत्=वही यत्=गमनशील हे एतत्=यही त्यम्=स्रव्यक्त है

तस्य≔उसी

श्रमुर्सस्य=ध्रमूर्तिमान् का पनस्य } = इस श्रमरधर्मी का श्रमृतस्य } एतस्य-यतः=इस चलनशील का पतस्य=इस त्यस्य=ग्रव्यक्र का यः=जो. एषः=यह रसः=सार है

प्तस्य**≔र्**स

श्चयम्=यही दक्षिग=दहिने **ग्रक्षन्**=नेत्र में पुरुषः=पुरुष है ्र त्यस्य=) बाकाश घोर वायुका हि=ही

एषः=यह नेत्रस्थ पुरुष रसः≔सार इं

भाषार्थ ।

हे सौम्य ! श्राव श्रामूर्त्त जो पदार्थ है उस विषय का उपदेश किया जाता है, जो हृदय के भीतर आकाश है, और जो शरीरस्थ प्राया है, झौर जितने प्रारा झौर झाकारा के भेद हैं, वही यह झमरघर्मी है, वही गमनशीकवाका है, वही ब्राव्यक्त है, उसी श्रमूर्तिमान् का, उसी द्यमरधर्मी का, उसी चलन शीलवाले का, उसी झाव्यक्त का जो सार है, वही दहिने नेत्र में पुरुष है, आध्यवा दृष्टिने नेन्नस्थ पुरुष आसकाश बायुका सार है।। ४।।

मन्त्रः ६

तस्य हैतस्य पुरुषस्य रूपं यथा महारजनं वासो यथा पाएडा-विकं यथेन्द्रगोपो यथाग्न्यार्चिर्यथा पुण्डरीकं यथा सकृद्विद्युत्तछं सकृद्विद्युत्तेव ह वा अस्य श्रीभेवति य एवं वेदाथात आदेशो नेति नेति न श्रेतस्मादिति नेत्यन्यत्परमस्त्यथ नामधेयछं सत्यस्य सत्य-मिति प्राणा वै सत्यं तेषामेष सत्यम् ॥

इति तृतीयं ब्राह्मणम् ॥ ३ ॥

पदच्छेदः ।

तस्य, इ, एतस्य, पुरुषस्य, रूपम्, यथा, महारजनम्, वासः, यथा, पागञ्ज, आविकम्, यथा, इन्द्रगोपः, यथा, अग्न्यिचैः, यथा, पुणडरीकम्, यथा, सकृत्, विद्युत्, तम्, सकृत्, विद्युत्ता, इव, ह, वै, अस्य, श्रीः, भवति, यः, एवम्, वेद, अथ, अतः, आदेशः, न, इति, न, इति, न, हि, एतस्मात्, इति, न, इति, अन्यत्, परम्, अस्ति, अथ, नामधेयम्, सत्यम्, सत्यम्, हति, पागाः, वै, सत्यम्, तेवाम्, एषः, सत्यम् ॥

श्रन्वयः पद्ययः

+ श्रथ=धव

तस्य=उस

एतस्य=इस

ह=प्रसिद्ध

पुरुषस्य=जीवासमा के

रूपम्=रुप की

+ श्राह=कहते हैं

+ कहा=कभी

+ श्रस्य=इस जीवासमा का

+ स्यरूपम्=स्वरूप

महारजनम्=कुतुंन के कुर्जो से

रंगा हुषा

वासः यथा=वक्ष की तरह

+ भवति=डोता है

+ कदा=कभी
पागडु=कुछ रवेत
यथा ग्राविकम्=भेदी के रोम की तरह
+ भवित=होता है

+ कदा=क्मी

यथा इन्द्रगोपः=बीरबहूटी कीट के

+ भवति=होता है + कदा=कमी यथा अन्वर्योचेः=मानि की ज्वाबा की

> + अवति=होता है + कदा=क्भी

+ प्रारभ्यते=शारम्भ करते हैं यथा पुराह- रे =श्वेत कमल की तरह हि=च्योंकि + भवति=होता है पतस्मात्=इस + कदा=कभी + उपदेशात्≔उपदेशसे यथा सकृत् । एकायक वियुत् के वियुत्तम् (प्रकाश की तरह +ग्रन्योपदेशः=श्रीर उपदेश न=श्रेष्ठ नहीं है (होता है यानी इन + हि=क्योंकि उपमाश्रों के समान श्चरमात्=इस परमात्मा से + भवति= रंवह जावास्मा विषयों **ग्रन्यत्**=दूसरा के संयोगसे अनेकरू (पवाला हुआ करताहै परम्=उत्कृष्टदेव नेति श्रस्ति=नहीं है + यः=जो + एतस्य=इस जीवात्मा को श्रध≕धब नामध्यम्=बहा के नाम को एवम्=जपर कहे हुये प्रकार + आह≔कहते हैं वेद=जानता है तस्य=उसकी + तस्य=उसका श्री:=संपत्ति + नाम=नाम सत्यस्य=सत्य का सकृत्वियुत्ता } = { एकबारगी विद्युत् के प्रकाशकेसमान चमकने वाली सत्यम्⇒सत्य इति=ऐसाई यानी परम-सत्यहै ह वै=निस्संदेह प्रात्ताः≔प्रायों का भवति=होती है + नाम=नाम वै=निश्चय करके श्रथ=श्रव + बालाके=हे बालाके सत्यम्=सस्य है श्रतः=यहां से तेषाम्=उन प्राचीं को आदेश:=परमात्मा के विषय + एव≔भी 🐇 में उपदेश एषः=वह परमात्मा नेति नेति=न इति न इति करके सत्यम्=सत्ता देनेवाला है

भाषार्थ। है सौन्य ! अन इस जीवात्मा के स्वरूप को अनेक उपमाओं द्वारा वर्णन करते हैं, हे सौन्य ! कभी इस जीवात्मा का स्वरूप कुर्सुभके फूर्जों से रँगे हुये कपड़ों की तरह होजाता है, कभी किंचित् स्वेत मेड़

के रोम की तरह होजाता है, कभी इन्द्रगोपनामक कीट (बीरबहूटी) की तरह होजाता है, कभी श्राग्नि की ज्वाला की तरह उसका रूप होजाता है, कभी श्वेतकमल की तरह उसका रूप होजाता है, कभी विद्युत् के प्रकाश की तरह इसका रूप बन जाता है, यानी जैसी इस की उपाधि होती है वैसेही यह आतमा भी देख पड़ता है, हे प्रिय-दर्शन ! जो पुरुष इस रहस्य का जाननेवाला है उसकी संपूर्ण संपत्ति विद्युत् के प्रकाश की तरह चमकनेवाली होती है, हे बालाके ! जो कुछ अप्रभी तक कहा गया है, वह प्रकृति आयोर जीव के विषय में कहा ' गया है, अब परमात्मा के विषय में उपदेश प्रारम्भ करते हैं, हे ब्राह्मशा ! उस परमात्मा का उपदेश नेति नेति शब्दों से होना है, क्योंकि इस **उपदेश से बढ़कर दुसरा कोई उपदेश नहीं है, क्योंकि इस परमात्मा** से बढ़कर न कोई उत्क्रष्ट देव है, न कोई उसके समान है, झौर न कोई सामग्री उसके वर्गान के लिये है, इस लिये नेति नेति शब्द के द्वारा उसका उपदेश किया जाता है. हे बालाके ! जगत् के दो भाग हैं, एक मूर्त्तिमान्, ऋौर एक अप्रमृत्तिमान्, इन दोनों के लिये दो न-कार प्रयुक्त हैं, यानी मूर्तिमान वस्तु को देखकर शिष्य के प्रश्न करने पर कि यह ब्रह्म है ? गुरु कहता है-यह नहीं है, यह नहीं है, ज्यों ज्यों ब्रह्म बिषे शिष्य प्रश्न करता जाता है त्यों त्यों गुरु नेति नेति करके उत्तर देता जाता है, जब संपूर्ण मृर्तिमान विषय यानी अग्नि, जल, पृथ्वी की सब वस्तुओं की समाप्ति होजाती है, श्रीर जब शिष्य अप्रमूर्तिमान् यानी वायु अरोर आकाश के कार्यों के विषय में प्रश्न करता है तब गुरु फिर भी नेति नेनि शब्द से उसको उपदेश करता जाता है, जहां शिष्य का प्रश्न समाप्त होजाता है, वहां दोनों यानी शिष्य और गुरु चप चाप होजाते हैं, वहीं पर शिष्य को इहा की तग्फ निर्देश करके गुरु बताता है कि यह इहा है, ख्रीर फिर वहां से ही उत्पर को यानी कारणा के कार्य को बताता चलां आता है कि यह

भी ब्रह्म है, यह भी ब्रह्म है, क्योंकि कार्य में कारण अनुगत रहता है, अथवा कार्य कारण एकरूप होता है, सब संसार भर ब्रह्मरूप ही है, ऐसा उपदेश पाने के बाद शिष्य शान्त होकर महाआनन्द को प्राप्त होजाता है, आर फिर शिष्यत्व और गुरुत्व भाव दोनों का नष्ट होजाता है, हे बालाके ! इस ब्रह्म का नाम सत्य का सत्य है, जो बाह्म, आर अध्यन्तर प्राण्य है, उसका नाम भी सत्य है, उन प्राण्यों का भी जो प्रेरक हो यानी सत्ता देनेवाला हो, वही त्रिकालाबाध सिंहदानन्द स्वरूप है, यही उसका नाम है ॥ ६॥

इति तृतीयं त्राह्मग्राम् ॥ ३ ॥

श्रथ चतुर्थं ब्राह्मण्म् । मन्त्रः १

मैत्रेयीति होवाच याज्ञवलक्य उन्नास्यन्वा ऋरेऽहमस्मात्स्थाना-दस्मि हन्त तेऽनया कात्यायन्याऽन्तं करवाणीति ॥

पदच्छेदः ।

मेंत्रेयि, इति, ह, उवाच, याझवल्क्यः, उद्यास्यन्, वै, अरे, श्रहम्, अस्मात्, स्थानात्, श्रस्मि, हन्त्, ते, श्रनया, कात्यायन्या, अन्तम्, करवाणि, इति ॥

अन्तयः पदार्थाः अन्तयः पदार्थाः मैत्रेयि=हे प्रियमैत्रेयि स्थानात्-गृहस्थ श्राक्षम से हति=ऐसा सम्बोधन करके वै=िनस्चय करके याझवहत्त्रयः=याज्ञवत्त्रय उद्याच=बोले कि उद्यास्यन् } क्रपरको जानेवाला इ्रप्राची वानप्र-इ्रप्राची वानप्र- कानया≔इस निकट वैठी हुई कात्यायन्या≔कात्यायनी के साथ ते≔तम्हारा

करद् धाना सुब नीनों के मध्य धन को बराबर बांट दूं ताकि एक दूसरेसे कोई सम्बन्ध न

श्चन्तम=सम्बन्ध को पृथक्

पृथक् भागार्थ ।

हे सौम्य! एक समय राजा जनक और याज्ञवल्क्य ऋषि परस्पर बातचीत कर रहे थे, राजा जनक ने याज्ञवल्क्य महाराज से कहा कि हे प्रभी! मैंने वैराग्य के स्वरूप को नहीं देखां है, उसका कैसा स्वरूप होता है, मैं देखना चाहता हूं, याज्ञवल्क्य महाराजने कहा कि कल मैं तुमको वैराग्य का स्वरूप दिखादूंगा. ऐसा कहकर अपने घर चले आये, और अपनी लघुपल्ली मेंत्रेयी से कहा हे प्रियमेंत्रेयि! मैं इस गृहस्थाश्रम को त्यागना चाहता हूं, और वानप्रस्थाश्रम को शहरण करनेवाला होना चाहता हूं, यदि तुम्हारी अनुमित हो तो तुम्हारे और कात्यायनी के मध्य में द्रव्यको बरावर बरावर वांट दूं।। १।।

मन्त्रः २

सा होवाच मैत्रेयी यसु म इयं भगोः सर्वा पृथिवी वित्तेन पूर्णा स्यात्कथं तेनामृता स्यामिति नेति होवाच याइवन्त्रयो यथैवोप-करणवतां जीवितं तथैव ते जीवितथं स्यादमृतत्वस्य तु नाऽऽशा-ऽस्ति वित्तेनेति ॥

पदच्छेदः ।

सा, ह, जवाच, मेंत्रेयी, यत्, तु, मे, इयम्, भगोः, सर्वा, पृथिवी, विसेन, पूर्णा, स्यात्, कथम्, तेन, झमृता, स्वाम्, इति, न, इति, ह, उवाच, बाङ्गवस्क्यः, यथा, एव, उपकरगावताम्, जीवितम्, तथा, एव, ते, जीवितम्, स्यात्, झमृतत्वस्य, तु, न, झाशा, झस्ति, विसेन, इति ॥

पदार्थाः पदार्थाः श्रम्बरः द्धति≕ऐसा + इलि=यह + शुरुषा=पुन कर + भुत्वा=सुन कर ह=प्रसिद्ध सा=वह ह=प्रसिद्ध याञ्चयत्क्यः=याज्ञवस्क्य मैत्रेयी=मैत्रेयी उवाच=बोले कि उवाच=बोर्सी कि म इति≔ऐसा नहीं भगोः=हे भगवन् ! यथा=जैसे एच=निश्चय करके नु=में पूछती हूं कि यत्=जो उपकरणवताम्=उत्तम सुख साधन वास्तों को इयम्=यह सर्वा=सब जीवितम्≕र्जावन + भवति=होता है पृथिवी=पृथिवी तथैव=तैसंडी वित्तन=धन करके पूर्णा=पूर्व ते=तेरा भी जीवितम्⇒जीवन मे=मेरी ही स्यात्=होजाय तो स्यात्=होगा कथम्=किसी प्रकार तु=परन्तु **ग्रमृतस्**य≕मुक्तिकी तेन=उस धन करके + श्रहम्=मैं श्राशा=श्राशा वित्तेन=धन करके

भावार्थ ।

न ऋस्ति इति=कभी नहीं होसकती है

श्चमृद्वा=मुक्र स्याभ्=होजाऊंगी

यह सुनकर मेत्रेयी बोली कि हे प्रभो, हे भगवन् ! में पूछती हूं आप क्रपा करके सुम्मको उत्तर दीजिये. हे प्रभो ! मान लीजिये कि यह सब पृथ्वी धन करके पूर्यो है, यदि दैवइच्छा से मेरी होजाय तो क्या उस धन करके में तापत्रय से छूट जाऊंगी, यानी सुक्त होजाऊंगी, याझवल्क्य महाराज ने जवाब दिया कि ऐसा तो नहीं होसकता है, हाँ जैसे उत्तम सुखसाधनवालों का जीवन होता है बैसेही तुम्हारा भी जीवन हो जायगा, परन्तु सुक्त की आशा धन करके नहीं हो सकती है ॥ २ ॥

मन्त्रः ३

सा होवाच मैत्रेयी येनाहं नामृता स्यां किमहं तेन कुर्यो बदेव भगवान्वेद तदेव मे बूहीति ॥

पदच्छेदः।

सा, ह, उवाच, मैंत्रेयी, येन, ऋहम्, न, आयृता, स्थाम्, फिन्, अस्म्, तेन, कुर्याम्, यत्, एव, भगवान्, वेद, सत्, एव, मे, शृहि, इति ॥

द्यन्वयः

पदार्थाः

श्रम्बयः

TETE

+ तद्।=तव सा=यह ह=प्रसिद्ध मैत्रेयी=भैत्रेयी उवाच=वोजी कि येज=जिस धन करके श्रहम्=मैं श्रमुता=मुक न=नहीं स्याम्=होसकी हूं तेन=उस धन से शहम्व्यैं
किम्व्या कुषीम्व्या स्टाइंगी यत्विस सावय की भगवान्व्याप पश्चित्रचय करके वेद्वायते हो तत्-एष्वडसी सावन की केव्मेरी मुक्तिके विके

भावार्घ ।

मैत्रेयी बोली कि हे भगवन् ! जिस धन करके मैं मुक्त नहीं हो सकती हूं, उस धन से मैं क्या जाभ उठाउंगी ? जिस साधन को झाप जानते हैं, उस साधन को मेरी मुक्ति के जिये बताइसे, झौर जिस श्रेष्ठ धनको झाप जिये जाते हैं उसमें मेरे को भी भाग दी बिये ॥ ३ ॥

मन्त्रः ४

स होवाच याइपल्क्यः निया बतारे नः सती मियं भाषस पद्मास्त्र व्याख्यास्यामि ते व्याचक्षाग्यस्य तु मे निदिष्मासस्वेति ॥

पदच्छेदः।

सः, इ, व्याच, याज्ञवस्त्यः, प्रिया, वत, अरे, नः, सबी, प्रियम्,

भाषसे, एहि, झास्स्व, व्याख्यास्यामि, ते, व्याचक्षास्यस्य, तु, मे, निविध्यासस्व, इति ॥

अन्वयः

पदार्थाः स्रम्बयः

पदार्थाः

+इति=ऐसा + श्रुत्वा=सुन कर

सः=बह ह=प्रसिद्ध

थाश्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य उवाच=वोले कि

अरे≔हे प्रियमत्रेयि ! सः=तुमेरी

त्रिया=प्यारी सती=पतित्रता की है

+ त्वम्=त् वत=प्रेमके साथ प्रियम्=पिय भाषसे≔बोनती है एहि=धावो स्रास्स्व=बैठो

व्याख्यास्यामि=तेरे विये मुक्ति के साधन को कहुंगा

तु=पर

व्याचक्षाणस्य=व्याख्यान करते हुये :

मे=भेरी + वाक्यानि=वार्ती पर निदिध्या- } =ध्यान करके सुनो सन्त्व इति }

भावार्थ ।

हे प्रियदर्शन ! ऐसा सुनकर वह प्रसिद्ध याज्ञवल्क्य महाराज बोले कि है मैंत्रेचि ! तू मेरी पतिव्रता स्त्री है, तू सदा मेरे साथ प्रियभाषणा करती रही है, स्त्रोर झब भी प्रिय बोलती है, हे प्यारी ! उठो, एकान्त बिचे चलो, तेरी मुक्ति के लिये मुक्ति के साधन को कहूंगा, तू मेरी बातों पर ध्यान देकर सुन, तेरा कल्याला झवश्य होगा ॥ ४ ॥

मन्त्रः ५

स होवाच न वा अरे पत्युः कामाय पतिः पियो भवत्यात्मनस्तु कामाय पतिः पियो भवति। न वा अरे जायाये कामाय जाया पिया भवत्यात्मनस्तु कामाय जाया पिया भवति। न वा अरे पुत्राणां कामाय पुत्राः पिया भवन्त्यात्मनस्तु कामाय पुत्राः पिया भवन्ति। न वा अरे वित्तस्य कामाय वित्तं प्रियं भवत्यात्मनस्तु कामाय वित्तं वियं भवति। अ वा अरे सक्काराः कामाय स्त्रा प्रियं भवत्यात्मनस्तु कामाय झक्क मियं भवति । न वा अरे सञ्जस्य कामाय क्षञ्जं मियं भव-त्यात्मनस्तु कामाय क्षञं मियं भवति । न वा अरे लोकानां कामाय लोकाः मिया भवन्त्यात्मनस्तु कामाय लोकाः मिया भवन्ति । न वा अरे देवानां कामाय देवाः भिया भवन्त्यात्मनस्तु कामाय देवाः मिया भवन्ति । न वा अरे भूतानां कामाय भूतानि भियािण भवन्त्या-त्मनस्तु कामाय भूतानि मियािण भवन्ति । न वा अरे सर्वस्य कामाय सर्वे मियं भवत्यात्मनस्तु कामाय सर्वे भियं भवति । आत्मा वा अरे द्रष्ट्रच्यः श्रोतन्यो मन्तन्यो निदिध्यासितन्यो मैत्रेय्यात्मनो वा अरे दर्शनेन श्रवणेन मत्या विज्ञानेनद्रं अर्स्व विदितम् ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, उवाच, न, वै, श्ररे, पत्युः, कामाय, पतिः, प्रियः, भवति, श्चात्मनः, तु, कामाय, पतिः, प्रियः, भवति, न,वै, श्चरे, जायायै, कामाय, जाया, विया, भवति, श्रात्मनः, तु, कामाय, जाया, विया, भवति, न, वै, श्ररे, पुत्राशाम्, कामाय, पुत्राः, प्रियाः, भवन्ति, श्रात्मनः, तु, कामाय, पुत्राः, प्रियाः, भवन्ति, न, वै, श्ररे, वित्तस्य, कामाय, विक्तम्, प्रियम्, भवति, श्रात्मनः, तु, कामाय, विक्तम्, प्रियम्, भवति, न, वै, ध्रोर, ब्रह्मगाः, कामाय, ब्रह्म, प्रियम् , भवति, श्रात्मनः, तु, कामाय, ब्रह्म, वियम्, भवति, न, वै, अरे, क्षत्त्रस्य, कामाय, क्षत्त्रम्, प्रियम्, भवति, धात्मनः, तु, कामाय, क्षत्त्रम्, प्रियम्, भवति, न, वै, धारे, कोकानाम्, कामाय, लोकाः, प्रियाः, भवन्ति, श्रात्मनः, तु, कामाय, क्लोकाः, प्रियाः, भवन्ति, न, वै, झरे, देवानाम्, कामाय, देवाः, प्रियाः, भवन्ति, आत्मनः, तु, कामाय, देवाः, प्रियाः, भवन्ति, न, वै, अरे, भूतानाम्, कामाय, भूतानि, प्रियागि, भवन्ति, श्रात्मनः, तु, कामाय, भूतानि, प्रियाणि, भवन्ति, न, वै, श्रोरे, सर्वस्य, कामाय, सर्वम् , प्रियम्, भवति, आत्मनः, तु, कामाय, सर्वम्, प्रियम्, भवति, आत्मा, वै, अरे, द्रष्टन्यः, भोतन्यः, मन्तन्यः, निद्धियासितन्यः, मैन्नेयी, श्राह्मनः, वै,

आरे, दर्शनेन, अवगोन, मत्या, विज्ञानेन, इदम्, सर्वम्, विदिवम् ॥ पदार्थाः ग्रन्वयः पदार्थाः श्रन्धयः भवति=होती है सः ह=वह प्रसिद्ध याज्ञवहक्य खवाच≔बोबा कि द्यार=हे त्रियमैत्रेयि ! ऋरे=हे प्रियमैत्रेयि ! पुत्राणाम्=पुत्रों की कामाय=कामना के विवे पत्युः=पति की कामाय=कामना के खिये पुत्राः=पुत्र प्रियाः≔प्यारे पति:=पति + भार्याम्= भार्या को न भवन्ति=नहीं होते हैं प्रियः=प्यारा तु=किन्तु वै≕निश्चय करके न भवति=नहीं होता है द्यात्मनः=अपने यानी माता तु≔िकन्तु बै=निश्चय करके पिता के सात्मा की आत्मनः=धपने जीवात्मा की कामाय≔कामना के क्रिये कामाय=कामना के व्रिये पुत्राः=चड्के प्रति:=प्रति प्रियाः≕प्यारे भवन्ति=होते हैं + भार्याम्=भार्या को भार=हे प्रियमेत्रेयि ! प्रियः=प्यारा भवति≔होता है वित्तस्य=धनकी द्यार≔हे प्रियमैत्रेथि ! कामाय=कामना के क्रिये जायायै≕जाया की वित्तम्=धन कामाय=कामना के बिये प्रियम्≕प्यारा न भवति=नहीं होता है जाया=स्री तु=किन्तु प्रिया≔प्यारी . वै=निश्चय करके न भवति=नहीं होती है श्चारमनः=अपने यानी धनीकी तु≔किन्तु वै=निरचय करके धारमा की कामाय=कानना के बिये द्यात्मनः=श्रंपने यानी पति के श्चात्मा की विसम्≕धन

कामाय=कामना के क्षिषे प्रियम्=प्यारा जाया=की भवति=होता है प्रिया=प्यारी क्षारे=है मिनमैन्नेवि !

ब्रह्मणः=बाद्यस्य की कामाय≔कामना के विवे ब्रह्म=माह्मग प्रियम्=प्यारा न भवति=नहीं होता है तु=किन्तु वै≕निरचय करके श्चात्मनः=श्चपने यागी यजमान के ग्रात्मा की कामाय=कामना के लिये ब्रह्म=ब्राह्मय व्रियम्=प्यारा भवति=होता है श्चरे=हे प्रियमेश्चेयि ! श्चात्त्रस्य=क्षत्रिय की कामाय=कामना के जिये क्षत्त्रम्=क्षत्रिय प्रियम्=प्यारा न भवति=नहीं होता है तु=किन्तु बै≕निश्चय करके श्चात्मनः=श्चपने यानी पालनीय की प्रात्मा की कामाय=कामना के विये क्षत्त्रम्=क्षत्रिय प्रियम्≕प्यारा भवति=होता है अरे≔हे प्रियमेत्रेषि ! स्रोकानाम्≕क्षोर्गो की कामाय=कामना के विये स्रोकाः=स्रोग त्रियाः=प्यारे

न भवति=नहीं होते हैं तु=किन्दु चै=निश्चय करके श्चातमनः=ग्रपने यानी ग्रर्थी की धास्मा की कामाय=कामना के विवे लोकाः=खोग धियाः=प्यारे भवन्ति=होते हैं स्रोरे≔हे प्रियमैत्रेषि ! देवानाम्≔देवों की कामाय=कामना के व्यिये देवाः=देव व्रियाः=प्यारे न भवन्ति=नहीं होते हैं तु=किन्तु ू व=निश्चय करके श्चातमनः=भ्रपने यानी उपासक की भात्मा की • कामाय≔कामना के खिये देवाः=देवता प्रियाः=प्रिय भवन्ति=होते हैं ऋरे=हे प्रियमैत्रेयि ! भूतानाम्=प्राणियों के कामाय=कामना के बिये भूतानि=पार्खी व्रियाशि=प्यारे न भवन्ति=नहीं होते हैं तु=किन्त बै=निश्चय करके

च्चात्मनः=चपने यानी प्राची की चारमा की कामाय=कामना के विये भुतानि=प्राची प्रियागि=प्यारे भवान्त=होते हैं श्चारे≕हे प्रियमैत्रेयि ! स्पर्श स्य≕सबकी कामाय=कामना के लिये सर्वमू≔सब प्रियम्≕प्रिय न भवति=नहीं होता है तू=किन्त श्चातमतः=ग्रपने यानी सब लोगों की ग्रात्मा की कामाय=कामना के जिये सर्वम्=सब ब्रियम्=िप्रय भवति=होता है द्वारे=हे प्रियमैत्रेयि !

+ तस्मात्≖इस क्षिये ज्ञातमा=अपना ज्ञातमा द्रष्टध्यः≔दर्शन के योग्य है श्रोतब्यः≔यदी मुरु जीर शास्त्र करके सुनने योग्य है मन्तब्यः≕विचार करने योग्य है

निदिध्यासि-तव्यः } =िनश्चय करने बोग्य है

> स्ररे मैत्रेयि=हे प्रियमैत्रेषि ! श्रात्मनः=झात्मा के दर्शनेन=दर्शन से श्रवणंन=सुनने से मत्या=समसने से विद्यानेन=जानने से इदम्=यह सर्वम्=सब विदितम्=जाना हुसा वै=स्रवस्य + भवति=होता है

भावार्ध ।

हे सौन्य ! मेत्रेयी देवी ने आपने पति याज्ञवल्क्य महाराज से सिवनय प्रार्थना किया कि जिस साधन करके आप आपने आतमा सम्बन्धी ज्ञानरूपी धन को अपने साथ जिये जाते हैं उसमें मुम्को संमिजित की जिये, यह मुनकर याज्ञवल्क्य महाराज बड़े प्रसन्न हुये, और बोजे हे प्रियमेत्रेयि ! पति की कामना के जिये पति भार्या को प्यारा नहीं होता है, किन्तु निज आतमा की कामना के जिये भार्या को पति प्यारा होता है, हे प्रियमेत्रेयि ! जाया की कामना से जाया पति को प्यारी नहीं होती है, किन्तु पति के निज आत्मा की कामना के लिये जाया प्रिय होती है. हे प्रियमैत्रेथि ! पुत्रों की कामना के लिये पुत्र पिता को प्यारे नहीं होते हैं. किन्त माता पिता की कामना के जिये जड़के जड़की प्यारे होते हैं. है प्रिय-मैनेयि ! धनकी कामना के जिये धन धनी को प्यारा नहीं होता है. किन्त धनी की निज आत्मा की कामना के लिये धन प्यारा होता है. हे प्रियमेंत्रेयि ! ब्राह्मणा की कामना के लिये ब्राह्मणा यजमान को प्यारा नहीं होता है, किन्तु यजमान के आत्मा की कामना के लिये ब्राह्मण प्यारा होता है. हे प्रियमैत्रेयि ! क्षत्रिय की कामना के जिये क्षत्रिय स्वामी को प्यारा नहीं होता है, किन्तु पालनीय के आत्मा की कामना के लिये क्षत्रिय प्यारा होता है. हे प्रियमैत्रेयि ! लोगों की कामना के लिये लोग प्यारे नहीं होते हैं, किन्तु अर्थी की कामना के क्रिये जोग प्यारे होते हैं. हे प्रियमैत्रेयि ! देवों की कामना के जिये देव उपासकों को प्यारे नहीं होते हैं, किन्तु उपासक की कामना के लिये देवता उपासक को प्यारे होते हैं. हे प्रियमैत्रेयि ! प्राशायों की कामना के लिये प्रांगी को प्रांगी प्यारे नहीं होते हैं. किन्तु प्रांगी के आतमा की कामना के लिये प्रांगी प्यारे होते हैं. हे प्रियभैत्रेयि! सब की कामना के लिये सबको सब प्यारे नहीं होते. हैं, किन्तु सबजोगों की आतमा की कामना के लिये सब प्रिय होते हैं. इस लिये. है प्रिय-मैत्रेयि ! यह अपना आत्माही दर्शन के योग्य है. यही गुरु और शास्त्र करके सुनने योग्य है, यही विचारने योग्य है, यही निश्चय करने योग्य है. हे प्रियमैत्रेयि ! इस आतमा के दर्शन से. सुनने से. सममने से. जानने से यावत कुछ ब्रह्मागड विषे है सब जाना जाता है. हे प्रियमैत्रेयि ! अपने आत्मा को जानो, इसीसे तुम्हारा कल्यासा होगा. वही सत्र वस्तु प्रिय है, जिससे इस आत्मा को आनन्द मिलता है क्योंकि यह आत्मा आनन्दस्वरूप है इससे अतिरिक्ष कहीं आनन्द नहीं है, जो कुछ है वह आत्माही है ॥ ४ ॥

मन्त्रः ६

ब्रह्म तं परादाचोऽन्यत्राऽऽत्मनो ब्रह्म वेद सत्रं तं परादाचो-ऽन्यत्राऽऽत्मनः सत्रं वेद लोकास्तं परादुर्योऽन्यत्राऽऽत्मनोलोकान्वेद देवास्तं परादुर्योऽन्यत्राऽऽत्मनो देवान्वेद भृतानि तं परादुर्योऽन्य-त्राऽऽत्मनो भृतानि वेद सर्वं तं परादाचोऽन्यत्राऽऽत्मनः सर्वं वेदेदं ब्रह्मेदं सत्रमिमेलोका इमेदेवा इमानि भृतानीद्ष्यं सर्वं यदयमात्मा ॥

पदच्छेदः ।

ब्रह्म, तम्, परादात्, यः, अन्यत्र, आत्मनः, ब्रह्म, वेद, क्षञ्जम्, तम्, परादात्, यः, अन्यत्र, आत्मनः, क्षञ्जम्, वेद, कोकाः, तम्, परादुः, यः, अन्यत्र, आत्मनः, लोकान्, वेद, देवाः, तम्, परादुः, यः, अन्यत्र, आत्मनः, देवात्, वेद, भूतानि, तम्, परादुः, यः, अन्यत्र, आत्मनः, भूतानि, वेद, सर्वम्, तम्, परादात्, यः, अन्यत्र, आत्मनः, भूतानि, वेद, सर्वम्, तम्, परादात्, यः, अन्यत्र, आत्मनः, पर्वम्, वेद, इदम्, ब्रह्म, सर्वम्, इमे, लोकाः, इमे, देवाः, इमानि, भूतानि, इदम्, सर्वम्, यत्, अयम्, आत्मा।

श्चन्वयः

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

श्रद्धाः पद्धाः प्रदेशयः अहाः = ब्रह्मः व तम् = उस पुरुष को परादात् = स्याग देता है यः ⇒ जो झारमनः = भ्रास्मा से झन्य ज = प्रथक् झ्रह्मः = ब्रह्मः व को वेद = जानता है श्रुद्धम् = स्रिक्षः को परादात् = स्याग देता है यः = जी

श्रान्यश्र=ष्ट्रथक् श्रञ्जम्=क्षत्रियस्य को वेद=जानता है लोकाः=लोक तम्=उस पुरुष को परादुः=स्याग देते हैं यः=जो श्रात्मनः=चाला से श्रान्यत्र=भिक्ष सोकान्=लोकों को वेद्=जानता है देषाः=देवतालोग तम्=इस पुरुष को

परातुः≔स्याग देते हैं यः=जो भारमनः=भारमा से ग्रन्यत्र=भिष देवान्=देवों को वेद=जानता है भूत।नि=प्राणिमात्र तम्=उस पुरुष को परादुः≕त्याग देते हैं यः≔जो श्चात्मनः=घात्मा से द्यन्यत्र≐भित्र भूतानि=प्राणियों को वेद=जानता है तम्=उसके। सर्वम्≈सब परादात्≕याग देता है यः≕जो आत्मनः=भाष्मा से

द्यस्यत्र≕भिक्ष सर्वम्=सब्हो वेद्⇒जानता है इदम्=यह ब्रह्म=बास्य इदम्=यह क्षत्रम्=क्षत्रिष इमे=ये लोकाः=बोक इमे⇒वे देघाः=देवता इमानि≕ये भूतावि=प्राणिमाक यस्=जो कुछ इदम्=यह सर्वम्⇒सब है श्रयम्=यइ सब आत्मा=भारमाही है

भावार्थ ।

हे मैंत्रेयि ! ब्रह्मत्व उस पुरुष को त्याग देता है, जो आत्मा से पृथक् ब्रह्मत्व को जानता है. क्षत्रियत्व उस पुरुष को त्याम देता है, जो आत्मा से पृथक् क्षत्रियत्व को जानता है. खुलोक, अन्तरिक्षलोक, पृथिवीलोकादि उस पुरुष को त्याग देते हैं जो आत्मा से भिन्न उस लोकों को जानता है. सूर्य, चन्द्रमा, वरुगा, शिव आदि देवता उस पुरुष को त्याग देते हैं जो अपने जीवात्मा से इन देवों को पृथक् जानता है. सकल प्राची उस पुरुष को त्याग देते हैं जो अपने जीवात्मा से इन देवों को पृथक् जानता है. सकल प्राची उस पुरुष को त्याग देते हैं जो अपने जीवात्मा से इन सबको पृथक् जानता है. हे मैंत्रेयि ! मैं इस विषय में बहुत क्या कई इतनाही कहना बहुत है कि जो कुछ ब्रह्मायड विषय है, हे मैत्रेयि !

वह उस पुरुष को त्याग देते हैं जो अध्यनी आधात्मा से पृथक् उन सब को जानता है. हे मैत्रेयि ! ब्राह्मगा, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, लोकलोका-न्तर, देवता आसदि प्राशिएमात्र जो इन्छ है यह सब जीवात्माही है, इससे पृथक् कुछ नहीं है ॥ ६ ॥

मन्त्रः ७

ၞ स यथा दुन्दुभेहेन्यमानस्य न बाह्याञ्शब्दाञ्शक्तुयाद्ग्रहणाय दुन्दुभेस्तु ग्रह्योन दुन्दुभ्याघातस्य वा शब्दो गृहीतः ॥

पदच्छेदः ।

सः, यथा, तुन्दुभेः, इन्यमानस्य, न, बाह्यान् , शब्दान् , शक्तुयात्, प्रहृत्ताय, दुन्दुभेः, तु, प्रहृत्तोन, दुन्दुभ्याघातस्य, वा, शब्दः, गृहीतः ॥ पदार्थाः पदार्थाः श्रन्वयः श्चन्ययः

+ अत्र=इस विषे सः≕प्रसिद्ध

+ द्यान्तः≔स्यान्त + बदति≕देते हैं कि यथा=जैसे

हृन्यमानस्य=षजाये हुये

हुन्दुभेः=नगारे के बाह्यान्≔बाहर निकले हुये शब्दान्=शब्दों को ग्रह्णाय=पकड़ने के विये

+ जनः≔कोई मनुष्य न=नहीं

शक्तुयात्=समर्थ होता है

तु=परन्तु

दुन्दुभेः प्रह्रोन=दुन्दुभि के पकड़

वा≔ग्रथवा (दुम्दुभि के बजाने तुन्दुभ्याघ) (हुन्दुभि व तस्य) = (वाले के

+ प्रह्योन) (क्षेने से

शब्दः=शब्द

गृहीतः≔गृहीत + भवति=होता है

+ तद्वत्=उसी प्रकार

+ त्रात्मनः=चात्मा के ज्ञान से

+सर्वस्य झानम्≔सबका ज्ञान

+ भवति=होता है

भावार्थ ।

हे सीन्य! मैत्रेथी को दृष्टान्त देकर वाज्ञवल्क्य महाराज समकातेई कि हे मैत्रेयि ! जैसे बजाये हुये नगारे के बाहर निकले हुये शब्दों को कोई मनुष्य नहीं पकड़सक्ता है वैसेही झात्मा को कोई बाहर से पकड़ना चोह तो नहीं पकड़ सक्ता है, परन्तु जैसे दुन्दुभिके पकड़ कोने से अथवा दुन्दुभिके बजाने वाले को पकड़कोने से शब्द पकड़ा जा सक्ता है उसी प्रकार हे प्रियमेत्रेयि ! आत्मा के समीप जो इन्द्रियसमूह हैं उनके दोकने से आत्मा का ज्ञान होसक्ता है।। ७।।

मन्त्रः ८

स यथा शङ्कस्य ध्मायमानस्य न नाह्याञ्शब्दाञ्शक्तुयाद्व्रहणाय शङ्कस्य तु ब्रहणेन शङ्कध्मस्य ना शब्दो गृहीतः ॥

पदच्छेदः ।

सः, यथा, शङ्कस्य, ध्यायमानस्य, न, बाह्यान्, शब्दान्, शङ्ग-यान्, प्रह्याय, शङ्कस्य, तु, प्रह्योन, शङ्कष्यस्य, वा, शब्दः, गृहीनः ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

न्वयः

+ अत्र=इस विषे

सः=यह प्रसिद्ध

+ हम्रान्तः=रहान्त

+ वद्ति=कहते हैं

यथा=जैसे

ध्यायमानस्य=बजते हुये

श्रह्मस्य=शंख के

बाह्यान्=बाहर निकते हुये

श्रह्मान्=शब्दों को

प्रह्माय=प्रह्म करने को

+ जनः=कोई मनुष्य

न=नहीं

शक्नुयाल्=समर्थ होता है

तु=परन्तु

शङ्खस्य=शंस के प्रहणेन=प्रहण से वा=प्रथवा

शृक्षध्मस्य=शंख वजाने वाले के + श्रष्टगोन=प्रदेश से

शब्दः=शब्द का गृहीतः=प्रहण

+ भवति=होजाता है

+ तद्वत्=उसीप्रकार

+ भारमनः≔बात्मा के ज्ञानसे

+ सर्वस्य } =सबका ज्ञान ज्ञानम्

+ भवति≔होजाता है

भावार्थ ।

हे सौन्य ! याझवल्क्य महाराज फिर दृष्टान्त देकर मैत्रेयी को समस्तात हैं कि हे प्रियमैत्रेयि ! जैसे बजते हुये शंख के बाहर निकले हुये शब्दों को प्रहत्ता करने के क्षिये कीई मनुष्य समर्थ नहीं होता है, नैसेही इस आत्मा से निकले हुये शास्त्र आदि के प्रहर्ण करने से आत्मा का प्रहर्ण नहीं होसका है. परन्तु शंख के प्रहर्ण करने से अथवा शंख के बजानेवाले के प्रहर्ण करने से शंख क शब्दका प्रहर्ण होजाता है, उसीतरह इन्द्रियादिकों के प्रहर्ण करलेने से उसके साथ जो आत्मा है उसका प्रहर्ण होता है।।

...

मन्त्रः ६

स यथा व आये वाद्यमानाये न वाह्याञ्शब्दाञ्शक्तुयाद्ग्रह-रणाय वीर्णाये तु ग्रहर्णेन वीर्णावादस्य वा शब्दो गृहीतः ॥

पदच्छेदः ।

सः, यथा, वीगाये, वाद्यमानाये, न, वाह्यान्, शब्दान्, शकुयात्, प्रहिताय, वीगाये, नु, प्रहिताः ॥ अन्वयः पदार्थाः । अन्वयः पदार्थाः

+ श्रत्र=इस विषे
सः=प्रसिद्ध
+ दृष्टान्तः=दृष्टान्त
+ वृद्गित=कहते हैं
यथा=जैसे
वाद्यमानाय=वजती हुई
वीणाय=वीणा के
वाद्यान्=वाहर निकले हुये
शृद्धान्=याद्यां को
श्रहणाय=भलीप्रकार प्रहण
करने के जिये
+ जनः=कोई मनुष्य

न⇒नहीं

तु=परन्तु चीगायै=वीगा के गहरोत=महर्ग करने से चा=प्रथवा बीगावादस्य=वीगा बजाने वालं के + प्रहरोत=महर्ग करने से शब्द:गृहीतः=शब्द का प्रहर्ग

शक्तुयात्=समर्थ होता है

+ भवति=होता है
+ तद्भत्=डसीतहह
+ ऋ त्मा=झात्मा
+ ग्रहीतः=ग्रहेत

+ भवति=होता है

भावार्थ ।

हे सौन्य ! तीसरा टटान्त देकर मैत्रेयी को याज्ञवल्क्य महाराज समम्मात हैं कि हे मैत्रेयि ! जैसे बजती हुई बीन के बाहर निकले हुये शब्दों को भजीप्रकार प्रह्मा करने के जिये कोई मनुष्य समर्थ नहीं होता है उसीप्रकार बाहर सुने सुनाये उपदेशों करके आत्मा का प्रहण नहीं होता है, परम्तु जैसे वीगा के प्रहण करने से आथवा वीगा के बनाने वाले के प्रहण करने से शब्द का प्रहण होता है उसी तरह से मन आदिक इन्द्रियों के वश करने से आत्मा का ज्ञान होता है ॥ ६ ॥

मन्त्रः १०

स यथाऽऽद्वैधाग्नेरभ्याहितात्पृथग्धूमा विनिश्वरन्त्येवं वा अरे-Sस्य महतो भूतस्य निश्वसितमेतचरुग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदो Sथर्वाङ्गिरस इतिहासः पुरागं विद्या उपनिषदः श्लोकाः सूत्राग्य-नुच्याख्यानानि च्याख्यानान्यस्येवैतानि निश्वसितानि ॥

पदच्छेदः ।

स:, यथा, ऋर्दिधाग्ने:, अभ्याह्तात्, पृथक्, धूमा:, विनिश्चरन्ति, एवम्, वै, ऋरे, ऋस्य, महतः, भृतस्य, निश्वसितम्, एतत्, यत् भगवेदः, यजुर्वेदः, सामवेदः, अथर्वाङ्गिरसः, इतिहासः, पुराराम्, विद्या:, उपनिषदः, श्लोकाः, सूत्राणि, श्रमुख्यानानि, व्याख्यानानि, श्चस्य, एव, एतानि, निश्वसितानि ॥

द्यान्वयः

पदार्थाः श्रन्वयः पदार्थाः

+ ग्रत्र≔इस विषे विनिश्चरन्ति=निकत्तती हैं सः=यह प्रसिद्ध एवम्=इसी प्रकार वै=निश्चय करके + द्यान्तः=स्थान्त + चद्ति=कहते हैं कि म्रोर=हे प्रियमैत्रेश्व ! यथा=जैसे यत्=जो अभ्यादितात्=स्थापित की हुई एतत्≔यइ वक्ष्यमाग आर्द्धेधाग्ने:=गीकी लक्की जलती ऋाग्वेदः=ऋग्वेद है हुई श्रीम से यज्ञुर्वेदः=यजुर्वेद है सामवेद:=सामवेद है पृथक्≂नाना प्रकार के धूमा:=धूर्वे भार चिनग्रिरियां अथवीङ्गिरसः=अथवेश वेद है इतिहासः=इतिहास है मादि

पुराणम्=पुराण है ग्रस्य=उसी
विद्याः=विद्या हैं ग्रह्तः=श्रेष्ठ
उपनिषदः=वेदान्तरास हैं भ्रूतस्य⇒जीवात्मा के
श्लोकाः=काव्य हैं भ्रूतस्य⇒जीवात्मा के
स्वाणि=पदार्थसंग्रहवाक्य हैं निश्वसितम्=रवास हैं
सजुङ्या- }= मन्त्रव्याक्या हैं ग्रह्म=उसके
व्याल्यानानि=श्रथंन्याख्या हैं प्रस=ही
प्रतानि=ये सब निश्वसितानि=परश्या हैं

भावार्थ ।

हे सौम्य ! याज्ञवत्क्य महाराज मैत्रेथी महारानी से कहते हैं कि हे प्रियमैत्रेथि ! जैसे एक जगह रक्खी हुई गीस्त्री लकड़ी जब जलाई जाती है तब उसमें से नाना प्रकार के धूर्ये झौर चिनगारियां झादि निकलती हैं इसी प्रकार इस श्रेष्ठ जीवात्मा के रवास से झृग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, झार्थर्वण्यवेद, इतिहास, पुराण, विद्या, वेदान्त-शास्त्र, रखोक, सूत्र, मन्त्र, व्याख्या झौर झार्थव्याख्यादि निक-स्तरी हैं ॥ १०॥

मन्त्रः ११

स यथा सर्वासामपाछ समुद्र एकायनमेवछ सर्वेषाछ स्पर्शानां त्वगेकायनमेवछ सर्वेषां गन्धानां नासिके एकायनमेवछ सर्वेषाछ रसानां जिहेकायनमेवछ सर्वेषाछ रूपाणां चक्षुरेकायनमेवछ सर्वेषाछ रसानां जिहेकायनमेवछ सर्वेषाछ रूपाणां चक्षुरेकायनमेवछ सर्वेषाछ शब्दानाछ श्रोत्रमेकायनमेवछ सर्वेषांछ संकल्पानां सन एकायनमेवछ सर्वासां विद्यानाछ हृदयमेकायनमेवछ सर्वेषां कर्मणाछ हुस्तावेकायनमेवछ सर्वेषामानन्दानामुपस्य एकायनमेवछ सर्वेषां विसर्गाणां पायुरेकायनमेवछ सर्वेषामध्वनां पादावेकायनमेवछ सर्वेषां वेदानां वागेकायनम् ॥

पदच्छेदः।

सः, यथा, सर्वासाम्, अपाम्, समुद्रः, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्,

स्पर्शानाम्, त्वक्, एकायनम्, एवम्, सर्वेशाम्, गन्धानाम्, नासिके, एकायनम्, एवम्, सर्वेशाम्, रसानाम्, जिह्वा, एकायनम्, एवम्, सर्वेशाम्, रह्यान्म्, एकायनम्, एवम्, सर्वेशाम्, रह्ययम्, एकायनम्, एवम्, सर्वेशाम्, कर्मणाम्, हस्तौ, एकायनम्, एवम्, सर्वेशाम्, आनन्दानाम्, खपस्थः, एकायनम्, एवम्, सर्वेशाम्, रह्यानम्, एवम्, सर्वेशाम्, अप्रवनम्, एवम्, सर्वेशाम्, अप्रवनम्, एवम्, सर्वेशाम्, व्रान्न्। एवम्, सर्वेशाम्, अप्रवनाम्, पादौ, एकायनम्, एवम्, सर्वेशाम्, वेदान्नाम्, वाक्, एकायनम् ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः

श्रन्वयः

पदार्थाः

+ श्रत्र=इस विवे सः=यह प्रसिद्ध + द्यान्तः=दशन्त है कि यथा=जैसे सर्वासाम्=सर श्रप≀म्=जलों का समुद्रः≕समुद्र एकायनम्=एकायन है एवम्=इसी प्रकार .. सर्वेषाम्≕सब स्पर्शानाम्=स्पर्शे का त्वक्=त्वचा **एकायनम्**=एकायन है एवम्=इसी प्रकार सर्वेषाम्≖सब नन्धान।म्⇒गन्धों का नासिकं=दोनों नासिका षकायनम्≔एकायन हें प्वम्=इसी प्रकार सर्वेषाम्=सब

रसानाम्≔रसों का जिह्वा=जीभ एकायनम्=एकायन है एवम्=इसी प्रकार सर्वेषाम्=सब रुपाणाम्=रूवों का चश्चः≔नेत्र एकायनम्=एकायन है एवम्=इसी प्रकार सर्वेषाम्=सब शब्दानाम्=शब्दों का श्रोत्रम्=कान एकायनम्=एकायन है एवम्=इसी प्रकार सर्वेषाम्=सब संकल्पान।म्=संकर्पो का सनः=मन एकावनम्=एकायन है एवम्=इसी प्रकार सर्वासाम्≃सर

विद्यानाम्=ज्ञानीं का हृद्यम्=हृदय एकायनम्=एकायन है एसम्=इसी प्रकार सर्वेषाम्=सब कर्मगाम्=कर्मी का हस्तौ=रोनों हाथ एकायनम्=एकायन हैं एवम्=इसी प्रकार सर्वेषाम्=सब श्चानन्दानाम्=श्रानन्दीं का उपस्थः=उपस्थ इन्द्रिय एकायनम्=एकायन है एवम्=इसीप्रकार सर्वेषाम्=सब विसर्गाणाम्=स्यागों का

पायुः=पायु इन्द्रिय एकायनम्=एकायन है एवम्=इसी प्रकार सर्वेषाम्≕सब श्रध्वनाम्=मार्गी का पादौ=दोनों पाद एकायनम्=एकायन हैं एवम्=इसी श्रकार सर्वेषाम्≕सब वेदानाम्=वेशें का वाक्=वार्या एकायनम्≔एकायन है + तथा एव=हसी प्रकार + त्रायम्=यह जीवास्मा + सर्वेषाम्=सब का + एकायनम्=एक।यन है

भावार्थ ।

हे सीम्प ! याझवल्क्य महाराज फिर भी दृष्टान्त देकर मैंत्रेयी महारानी को समकाते हैं, हे प्रियमेंत्रेयि ! जैसे सब जलों की स्थिति की एक जगह समुद्र हैं, जैसे सब स्पर्शों के रहने की एक जगह त्वचा है, जैसे सब गन्भों के रहने की एक जगह दोनों नासिका हैं, जैसे सब रसों के रहने की एक जगह जिहा है, जैसे सब रूपों के रहने की एक जगह नेत्र हैं, जैसे सब शन्दों के रहने की एक जगह मान हैं, जैसे सब हानों के रहने की एक जगह मान हैं, जैसे सब हानों के रहने की एक जगह हानों के रहने की एक जगह हानों हाथ हैं, जैसे सब प्रानन्दों के रहने की एक जगह उपस्थ इन्द्रिय हैं, जैसे सब त्यागों के रहने की एक जगह उपस्थ इन्द्रिय हैं, जैसे सब त्यागों के रहने की एक जगह उदा इन्द्रिय हैं, जैसे सब मार्गों के रहने की एक जगह हात इन्द्रिय हैं, जैसे सब मार्गों के रहने की एक जगह हात होनें पाद हैं, जैसे सब

बेदों के रहने की एक जगह वाणी है, वैसेही है मैत्रेयि ! सब के रहने काएक स्थान जीवात्मा है।। ११॥

• मन्त्रः १२

स यथा सैन्धवलिल्य उदके प्रास्त उदकमेवानुविलीयेत न हास्यो-द्ग्रहणायेव स्याद् यतो यतस्त्वाददीत लवणमेवैवं वा ऋर इदं महद्-भूतमनन्तमपारं विज्ञानघन एव एतेभ्यो भूतेभ्यः समुत्थाय ताम्येवान् विनश्यति न प्रेत्य संज्ञास्तीत्यरे ब्रवीमीति होवाच याज्ञवल्क्यः ॥

पदच्छेदः ।

सः, यथा, सैन्यवखिल्यः, उदके, प्रास्तः, उदकम्, एव, अनु, विलीयेत, न, ह, श्रस्य, उद्ग्रहणाय, इव, स्यात्, यतः, यतः, तु, श्चाददीत, लक्सम्, एव, एदम्, वै, श्चारे, इदम्, महत्, भृतम्, श्चनन्तम्, श्चपारम्, विज्ञानघनः, एव, एतेभ्यः, भूतेभ्यः, **स**मुत्थाय, तानि, एव, अनु, विनश्यति, न, प्रेक्ष्य, संज्ञा, अस्ति, इति, अरे, **झवीमि, इति, ह**, उवाच, याज्ञवल्क्यः ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः | श्रन्वयः

पदार्थाः

+ ग्रत्र=इस विषे सः≔प्रसिद्ध + द्रष्टान्तः ⇒द्रष्टान्त है कि यथा=जैसे उदके=जल में प्रास्तः=डाला हवा सैन्धव खिल्यः=सैन्धव नमक का दबा उदकम्-श्रनु=जल में एव=ही विर्लाधेत=गतकर सय होजाताहै + च=श्रीर

+ कश्चित् } =कोई उपाय उपायः } न हु इध=निश्चय करके नहीं स्यात्=हासका है + च=श्रीर यतः यतः=जहां जहां से आदर्वात=प्रहण करागे + ततः + ततः=वहां वहां सेः लवगम् पव=नमकही को + आदर्श=पावोगे एवम् + एव=श्सी प्रकार आरे≔हे प्रियमेत्रेवि ! वै=निस्संदेह

उद्मह्णाय=बाहरनिकालनेकेखिये

+ पुनः≕िकर

श्चस्य=उसके

र्दम्=बर

महत् भूतम्=महाम् श्वास्मा श्रमन्तम्=श्रमन्त + स्थ=श्रीर श्रपारम्=श्रपार है + स्थ=श्रीर एव्चिनरचय करके विद्यानधनः=विज्ञानरूप है + श्रयम्=बह एतेश्यः=इन भूतेश्यः=मृतीं से

समुत्थाय=डठ कर

तानि=उन्हीं के

श्चनु एव=घन्तरही

चिनश्यांत=असतैन्धववत्
ध्रद्धष्ट होजाता है

+ पुनः=फिर
श्रेत्य=मरने पर
संझा=उसका नाम
न=नहीं
श्रादित=रहता है
द्योर=हे त्रियमैन्नेयि!
इति=ऐसा
+ ते=तेरे विये
ध्रवीाम=मैं कहताहूं
+ इति=ऐसा
याञ्चवह्नय:=याज्चवह्नय

ह=निश्चय के साथ

उवाच=कहते भये

मावार्थ ।

हे सौम्य ! याज्ञवल्क्य महाराज अपनी प्रियपत्नी को दृष्टान्त देकर समम्माते हैं, यह कहते हुये कि जैसे जलमें डाला हुआ नमक का ढला गक्त कर लय होजाता है, और उसके बाहर निकालने के लिये कोई उपाय नहीं होसका है. और जहां कहीं से यानी उपर नीचे, दृष्टिने बार्ये, मध्य से पानी को जो कोई चखना है तो नमकही नमक पाता है. उसी प्रकार हे मेत्रिय ! यह जीवात्मा निस्संदेह इन पांच तत्त्वों में और उमके कार्यों में अनन्त और अपाररूप से स्थित है, यह विज्ञान-रूप है, इन भूतों से उठकर इन्हीं में जलसैन्धववत् अदृष्ट होजाता है, आर फिर शरीर से पृथक् होने पर उस जीवात्मा का कोई नाम नहीं रहता है ॥ १२ ॥

मन्त्रः १३

सा होवाच मैंत्रेय्यत्रेव मा भगवानमूमुहस्र प्रेत्य संज्ञाऽस्तीति सः होवाच न वा श्ररेऽहं मोहं ब्रवीम्यलं वा श्रर हुदं विज्ञानाय ॥ सा, ह, ख्वाच, मैत्रेयी, आत्र, एव, मा, भगवाच, आमूमुहत्, न, प्रेत्य, संज्ञा, आस्ति, इति, सः, ह, ख्वाच, न, वै, आरे, आहम्, मो६म्, इतिम, आक्रम्, वे, आरे, इदम्, विज्ञानाय ॥

श्चन्ययः

पदार्थाः | सन्वयः

पदार्थाः

सा=बह ह=प्रसिद्ध मैत्रेथी=मैत्रेथी उदाख=बोर्ला कि + यत्=जो भगवान्=धापने + उक्कम्=कहा है कि प्रेरय=मरने पर संज्ञा=उस महान् धारमा का नाम म=नहीं

सङ्गा=उस महान् आत्मा का नाम म=नहीं ग्राहित=रहजाता है श्रञ्ज एख=इसी विषय में ही + भगवान्=धापने मा=मुक्को अभूमुहत्=अममें डाख दिया है + तदा=स्व ह=प्रसिद्ध वाज्ञवरूष
उद्याच=बोले कि
श्राहम्=भैं
श्राह्म है प्रियमैत्रेवि !
वै=निश्चय करके
भोहम्=अम में डालने वाली
वात को
न=नहीं
श्राची मि=कहताहूं
+ किन्तु=किन्तु
श्राहे मैत्रेवि !
हत्म्=भेरा यह कहना

सः=वह

श्रतम्=पूर्ण

विश्वानाय=ज्ञानके विये वै=ही है

भागार्थ ।

हे प्रियदर्शन ! याज्ञवल्क्य महाराज के बचन को सुनकर मेंत्रेयी

ती कि जो झापने सुम्मसे कहा कि मरने पर इस जीवातमा का
कोई नाम नहीं रह जाता है, यह सुनकर मैं बड़ी श्रान्ति को प्राप्त हुई

हूं, ऐसा मालूम होताहै कि झापने सुम्मे श्रम में डाज दिया है, तब
वह प्रसिद्ध याज्ञवल्क्य महाराज बोले कि हे प्रियमैत्रेयि ! ऐसा मत
कहो, जो कुछ मैंने तुकसे कहा, वह यथार्थ कहा है, मेरा उपदेश

तुम्हारे प्रति भ्रम से निकालने का है न कि भ्रम में डालने का. जो कुद्ध मैंने तुमसे कहा है, वह तुम्हारे पूर्ण्झान के लिये कहा है।। १३।।

मन्त्रः १४

यत्र हि द्वैतिमिव भवित तदितर इतरं जिघति . तदितर इतरं परयित तदितर इतरं परयित तदितर इतरं७ शृखोित तदितर इतरमिवदित तदितर इतरं मनुते तदितर इतरं विजानाित यत्र वा अस्य सर्वमात्मैवाभूत्त-त्केन कं जिघेचत्केन कं परयेचत्केन कं७ शृख्याचत्केन कमिवदेच-त्केन कं मन्वीत तत्केन कं विजानीियाद् येनेद ७ सर्व विजानाित तं केन विजानीयादित ।।

इति चतुर्थं ब्राह्मणम् ॥ ४ ॥

पदच्छेदः ।

यत्र, हि, हैतम्, इव, भवित, तत्, इतरः, इतरम्, जिञ्चित, तत्, इतरः, इतरम्, पश्यित, तत्, इतरः, इतरम्, श्र्योति, तत्, इतरः, इतरम्, श्र्योति, तत्, इतरः, इतरम्, श्र्योति, तत्, इतरः, इतरम्, श्र्योति, तत्, इतरः, इतरम्, विज्ञानाति, यत्र, वे, श्रस्य, सर्वम्, श्रात्मा, एव, श्रभूत्, तत्, केन, कम्, जिञ्चेत्, तत्, केन, कम्, पश्येत्, तत्, केन, कम्, श्र्यायात्, तत्, केन, कम्, श्राभवदेत्, तत्, केन, कम्, मन्वीत, तत्, केन, कम्, विज्ञानीयात्, येन, इदम्, सर्वम्, विज्ञानाति, तम्, केन, विज्ञानीयात्, विज्ञातारम्, श्ररे, केन, विज्ञानीयात्, इति ॥
श्रम्वयः पदार्थाः श्रम्वयः प्रवार्थाः

श्चन्वयः पदः + द्वारे मैत्रेयि=हे पियमैत्रेयि ! ाः पदार्थाः जिब्रति≕सृंघता है

यन्न=नहां हि=निरचय करके द्वेतम् इय=द्वेतके समान आवना भवति=होती है तत्त्=तहां तत्≔वहां इतरः≔इतर इतरम्≔इतर को पर्श्यात≔देखता है

तत्=तहां इतरः=घोर इतरम्=घोर को तत्=वहां इतरः=चौर इतरम्=चौर को

श्रृगोति=सुनता है तत्=बहां इतरः≔ग्रीर इतरम्=श्रीर को अभिवद्ति=कहता है तत्≔वहां इतर:=श्रीर इतरम्=श्रीर को मनुते=सममता है तत्=वहां इतर:=धीर इतरम्=श्रीर को विज्ञानाति=जानता है + परन्तु=पर यत्र⇒जहां बै=निश्चय करके सर्वम्=सब श्चस्य=इस ब्रह्मवित् पुरुष का श्चातमा प्व=श्वातमाही श्रभूत्=होगया है तत्=तहां केन=किस करके कम्=किसको जिन्नेत्=सृषता है तत्=तहां केन=किस करके कम्=िकसको पश्येत्=देखता है तत्≕तहां

केनजिस करके क्रम्=किसको श्युयात्=सुनता है तत्=तहां केन=किस करके कम्=किसको श्रभिवदेत्=कहता है तत्=तहां केन=किस करके कम्=किसको मन्वीत=मानता है ततः≂तहां केन=किस करके कम्=क्सिको विज्ञानीयात्=जानता 🕏 येन=जिस भारमा करके इदम्=इस सर्वम्=सबको + पुरुषः=पुरुष विजानाति=जानता है तम=उस भारमा को केन=किस करके विजानीयात्=कोई जानसका है श्चरे=हे प्रियमैत्रेयि ! विद्यातारम्≔विज्ञाता को • केन=किस साधन करके विजानीयात् } =कोई जानसङ्गा है

भावार्थ ।

याज्ञवल्वय महाराज फिर भी अपनी प्रिया मैत्रेयी से कहते हैं

कि, हे मैत्रेयि ! जहां द्वैत की भावना होती है वहांही इतर इत र की संघात है, वहां ही इतर इतर को देखता है, वहां ही और और को समस्ता है, वहां ही और और को कहता है, वहां ही और और को समस्ता है, वहां ही इतर इतर को जानता है. हे प्रियमेत्रेयि ! जहर सब आत्मा ही होगया है, वहां किस करके किसको कौन संघता है, वहां किस करके किसको कौन संघता है, वहां किस करके किसको कौन उत्ता है, वहां किस करके किसको कौन अनता है, वहां किस करके किसको कौन कहता है, वहां किस करके किसको कौन जानता है, जिस आत्मा करके इस सबको पुरुष जानता है उस आत्मा को किस करके कौन जानसक्ता है ? ज्ञानस्वरूप आत्मा को किस सरके कोई प्रहरा कर सक्ता है ? आत्मा ज्ञानस्वरूप, आनन्दस्वरूप हांने के कारसा, अपने को ऐसा नहीं जान सक्ता है ऐसी अवस्थापर इस जीवात्मा के मरने पर कुद्ध नहीं रहजाताहै॥ १४॥

इति चतुर्थं ब्राह्मग्राम् ॥ ४ ॥

श्रथ पञ्चमं ब्राह्मग्म्।

मन्त्रः १

इयं पृथिवी सर्वेषां भूतानां मध्वस्यै पृथिव्यै सर्वाणि भूतानि मधु यश्चायमस्यां पृथिव्यां तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषो यश्चायम-ध्यात्मश्र शारीरस्तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषोऽयमेव स योऽयमात्मेदम-मृतिमदं ब्रह्मेद् छ सर्वम् ॥

पदच्छेदः ।

इयम्, पृथिवी, सर्वेषाम्, भूतानाम्, मधु, अस्ये, पृथिव्ये, सर्वाणि, भूतानि, मधु, यः, च, अयम्, अस्याम्, पृथिव्याम्, तेजोमयः, अमृत-मयः, पुरुषः, यः, च, अयम्, अध्यात्मम्, शारीरः, तेजोमयः, अस्तनयः, पुरुषः, अयम्, एव, सः, यः, अयम्, आत्मा, इत्म्, अस्तम्, इदम्, अस्तम्।

ग्रन्धयः

पदार्थाः । ऋन्वयः

पदार्थाः

इयम्=यह पृथिबी=पृथ्वी सर्वेषाम्=सब भूतानाम्≔पञ्च नहाभूतों का मञ्च=सार है यानी सबके रस से संयुक्त है + च≕धौर ग्रस्यै≔इस पृथिदयै=पृथ्वी का मधु=सार सर्वाग्रि=सब भूतामि=पांचों महाभृत हैं च=धौर श्रस्याम्=इस पृथिवयाम्=प्रथिवी में यः=जो श्रयम्=यह तेजोमयः=प्रकाशस्वरूप **श्र**मृतमयः=प्रमरपर्मी पुरुषः≔पुरुष है च≕ग्रीर

श्रध्मतमम्=हरयं में श्रयम्≕जो यह शारीरः≕शरीर उपाश्विवाला तेजोमयः=प्रकाशस्वरूप **श्रमृतम**यः=श्रमरधर्मी पुरुषः#पुरुष हे ष्ठायम्≔यही हृदयस्य पुरुष एव≕निश्चय करके सः=वही पृथ्वीसम्बन्धी पुरुष ह च=श्रार यः=जो ष्ट्रायम्≕यह हृदयगत श्चातमा=बात्मा है इदम्≔यही श्रमृतम्≔श्रमर है इदम्≔यही ब्रह्म=ब्रह्म है इदम्≔यही

सर्वम्≃सर्वशक्तिमान् है

भाषार्थ ।

हे सौष्य! या झवर्क्य महाराज मैंत्रेयी देवी से फिर कहते हैं कि हे देवि! यह पृथिवी सब भूतों का सार है, यानी सब भूतों के रससे संयुक्त है, और इस पृथ्वीका सार पश्चमहाभूत हैं, यानी इसका भाग और तर्त्वों में भी स्थित है, जैसे झौरों का भाग इसमें स्थित है. हे देवि! इस पृथ्वी में जो प्रकाशस्वरूप, आमरधर्मी पुरुष है. वही हृदयस्थ, शरीर उपाधिवाला, प्रकाशस्वरूप, आमरधर्मी पुरुष है, यानी दे। में एकही हैं. और जो हृदयस्थ पुरुष है यही आमरहै, यही शक्ष है, यही सर्वशिक्तमान है ॥ १ ॥

मन्त्रः २

इमा त्रापः सर्वेषां भूतानां मध्वासामपाछं सर्वाणि भूतानि मधु यश्चायमास्वप्सु तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषो यश्चायमध्यात्मधः रैतसस्तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषोऽयमेव स योऽयमात्मेदममृतमिदं ब्रह्मेद्धं सर्वम् ॥

पदच्छेदः ।

इमाः, आपः, सर्वेषाम्, भूतानाम्, मधु, आसाम्, अपाम्, सर्वाणि, भूतानि, मधु, यः, च, अयम्, श्रासु, अप्सु, तेजोमयः, श्रमृतमयः, पुरुषः, यः, च, श्रथम्, श्रध्यात्मम्, रैतसः, तेजोमयः, श्चमृतमयः, पुरुषः, श्चयम् , एव, सः, यः, श्चयम् , श्चात्मा, इदम् , श्चमृ-तम्, इदम्, ब्रह्म, इदम्, सर्वम् ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः

इमाः=यह श्रापः=जल सर्वेषाम्≔सब भूतानाम्=महःभूतों का मधु≔सार है + च=श्रौर आसाम्=इन श्रपाम्≕जलें का मधु≕सार सर्वााग्=सब भूतानि=महाभृत हैं श्रासु=इन श्रप्सु≕जलों में यः=जो श्चयम्=यह तेजोमयः=प्रकाशरूप श्रमृतमयः=समरभर्मी

श्चन्वयः

पदार्थाः पुरुषः=पुरुष है च=श्रौर श्रध्यातमम्=हृदय में यः=जो श्चयम्=यह रैतसः=वीर्यसम्बन्धी तेजोमयः=प्रकाशरूप श्चमृतमयः=श्रमरधर्मी पुरुषः≔पुरुष है अयम्=यही हदयगत पुरुष एव=निश्चय करके सः≔वह है जो जलादि श्रन्तर्गत है च=घौर यः=जो श्रयम्=यह आत्मा= हृदयस्थ जातमा है

इदम्≖यही असृतम्=असरधर्मी है इदम्=यही ब्रह्म=ब्रह्म इदम्=यही सर्वम्=सर्वशक्तिमान् है

भावाथे।

हे सौम्य ! याज्ञवरूक्य महाराज मैत्रेयी देवी से फिर कहते हैं कि, हे प्रियमेत्रेयि ! जल सब भूतों का सार है, और जलका सार सब भूत है, और हे देवि ! जो जल विषे प्रकाशस्वरूप अमरधर्मी पुरुष है, बही हृदयगत वीर्यसम्बन्धी प्रकाशस्वरूप अमरधर्मी पुरुष है, यानी दोनों एकही हैं, और जो हृदयस्य पुरुष है, यही अमर है, अजर है, यही श्रद्ध है, यही स्वर्शक्तिमान है ॥ २ ॥

मन्त्रः ३

श्रयमिनः सर्वेषां भूतानां मध्वस्याग्नेः सर्वाणि भृतानि मधु यश्चायमस्मित्रग्नो तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषो यरचायमध्यात्मं वा-श्रायस्तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषोऽयमेव स योऽयमात्मेदममृतमिदं ब्रह्मेद्छं सर्वम् ॥

पदच्छेदः।

अयम्, अग्निः, सर्वेषाम्, मूतानाम्, मधु, अस्य, अग्नेः, सर्वाणि, मूतानि, मधु, यः, च, अयम्, अस्मिन्, अग्ने, तेजोमयः, अमृतमयः, पुरुषः, यः, च, अयम्, अध्यात्मम्, वाड्ययः, तेजोमयः, अमृतमयः, पुरुषः, अयम्, एव, सः, यः, अयम्, आत्मा, इदम्, अमृतम्, इदम्, अस्तम्, इदम्,

श्चन्वयः

पदार्थाः | श्रन्वयः

पदार्थाः

श्रयम्=यह श्राग्नः=धान सर्वेषाम्=सब भूतानाम्=यहामूर्तो का मचु=सम् हैं + च=भीर ग्रस्य=इस ग्रम्नेः=ग्रम्निका सर्वा शि=सब भूतानि=महाभूत मधु=सार हैं ख=ग्रीर

अयम् एव=यही वाणी में रहने यः=ने द्मायम्=यह सः=वह पुरुष है जो भगिन श्रहिमन्=इस श्चानी=भग्नि में विषे है तेजोमयः=प्रकाशरूप + च=श्रीर श्चमृतमयः=श्रमरधर्मी यः=जो पुरुषः=पुरुष है श्चयम्=यह च=धौर श्चातमा=वार्णामय श्रातमा है य:=जो इदम्=षही श्चयम्=^{यह} श्रमृतम्=श्रमर है श्चध्यात्मम्=शरीर में इदम्=यही वाङ्मयः=वाणीमय तेजोमयः=प्रकाशस्वरूप इदम्=यही श्रमृतमयः≕धमर सर्वम्=सर्वशक्तिमान् है पुरुषः=पुरुष है भावार्थ ।

हे सौम्य ! याज्ञवस्क्य महाराज फिर मैत्रेयी देवी से कहते हैं कि यह प्रत्यक्ष झ्रान्ति सब महाभूतों का सार है, झ्रोर इस झ्रान्ति का सार सब महाभूत हैं, यानी जैसे इस झ्रान्ति में झ्राप्ते भाग के सिवाय झाकाश, वायु, जल, पृथ्वी का भाग भी है, वैसेही इस झ्रान्ति का झंश उन चारों में भी प्रवेश है, झ्रोर जो इस झ्रान्ति विषे प्रकाशस्वरूप झमरधर्मी पुरुष है झ्रोर जो वाङ्गय, तेजोमय, झमृतमय पुरुष है, वे दोनों एकहीं हैं. हे देवि ! यही वास्ति में रहनेवाला पुरुष झजन्मा है, झ्रान्त है, ब्राह्म है, ब्राह्म है झीर सर्वशिक्तमान है ॥ ३ ॥

मन्त्रः ४

अयं वायुः सर्वेषां भूतानां मध्वस्य वायोः सर्वाणि भूतानि मधु पश्चायमस्मिन्वायौ तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषो यश्चायमध्यात्मं प्राणस्तेनोमयोऽमृतमयः पुरुषोऽयमेव स योऽसमात्मेदममृतिमदं ब्रह्मेद् सर्वम् ॥

पदच्छेदः ।

श्चयम्, वायुः, सर्वेषाम्, भूतानाम्, मधु, श्चस्य, वायोः, सर्वाणि, भूतानि, मधु, यः, च, श्चयम्, श्चस्मिन्, वायौ, तेजोमयः, श्चमृतमयः, पुरुषः, यः, च, श्चयम्, श्चम्यात्मम्, प्राग्गः, तेजोमयः, श्चमृतमयः, पुरुषः, श्चयम्, एव, सः, यः, श्चयम्, श्चात्मा, इदम्, श्चमृतम्, इदम्, श्रद्धा, इदम्, सर्वम् ॥

श्चराः

पदार्थाः | म्रन्वयः

पदार्थाः

ग्रयम्=यह वायुः=वाषु सर्वेषाम्=सब भूतानाम्=महाभूतों का मधु=सार ह + तथा=तैसेही **ग्रास्**य=इस षायोः=वायुका सर्वागा=सब भूतानि=मह।भूत मधु=सार हैं च=श्रौर यः=जो श्च**स्मिन्**=इस वायी=वायु विवे श्रयम्=यह तेजोस्यः=प्रकाशस्वरूप **श्चमृतमयः=श्रमरधर्मी** पुरुषः=पुरुष है चं=बौर

श्वध्यातमम्=शरीर में
श्रयम्=यह
प्राणः=प्राणरूप
तेजोमयः=प्रकाशात्मक
श्रमृतमयः=श्वमर
पुरुषः=पुरुष है
श्रयम्=यही हृद्यगत पुरुष
एच=निश्चय करके
सः=वह पुरुष है जो वायु
विषे रहनेवाला है
यः=जो
श्रयम्=यह हृद्यगत
श्रातमा=श्रातमा (पुरुष है)
हृद्म्=यही
श्रमृतम्=श्रममी है

इदम्=यही ब्रह्म=ब्रह्म है

इदम्≕यही

सर्वम्=सर्वशक्तिमान् है

यः≕जो

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि हे मैत्रेयि, देवि ! जैसे यह प्रत्यक्ष बायु सब महाभूतों का सार है वैसेही इस वायु का सब महाभूत सार हैं यानी इसका सूक्ष्म आंश सब में प्रभेश है अथवा कारणा कार्य एकही हैं और हे मैत्रेयि ! जो वायु विषे तेजोमय, अमृतमय पुरुष है और जो हृदय में और ब्रागाइन्द्रियक्यापी, प्रकाशात्मक, अमरधर्मी पुरुष है ये दोनों निश्चय करके एकही हैं. इसमें उसमें कोई भेद नहीं है. और हे देवि ! जो यह हृदयगत पुरुष है अथवा अपत्मा है, यही अमरधर्मी है, यही ब्रह्म है, यही सर्वशिक्तमान है ॥ ४ ॥

मन्त्रः ५

श्रयमादित्यः सर्वेषां भूतानां मध्वस्यादित्यस्य सर्वाणि भूतानि मधु यश्चायमस्मिन्नादित्ये तेजोमयोऽमृतमयःपुरुषो यश्चायमध्यात्मं चाक्षुषस्त्रेजोमयोऽमृतमयः पुरुषोऽयमेव स योऽयमात्मेदममृतिमिदं विद्यास्य स्वर्मेष्

पदच्छेदः।

अयम्, आदित्यः, सर्वेषाम्, भूतानाम्, मधु, अस्य, आदित्यस्य, सर्वाणि, भूतानि, मधु, यः, च, अयम्, अस्मिन्, आदित्ये, तेजोमयः, अमृतमयः, पुरुषः, यः, च, अयम्, अध्यात्मम्, चाक्षुषः, तेजोमयः, अमृतमयः, पुरुषः, अयम्, एव, सः, यः, अयम्, आत्मा, इदम्, अमृतम्, इदम्, इदम्, इदम्, सर्वम् ॥

श्चम्बयः

पदार्थाः

पदार्थाः

श्रयम्=यह श्रादित्यः=सूर्य सर्वेषाम्=सब भूतानाम्=भूतों का मधु=सार है + च=श्रीर श्रस्य=इस श्रादित्यस्य=सूर्य का मधु=सार सर्वाशि=सब भूतानि=भत हैं
यः=शे
यः=शे
श्राह्मन्=इस
श्राह्तये=स्यं विषे
श्रयम्=यह
तेजोमयः=भकाशस्वरूप
श्रमृतमयः=स्रमरि
पुरुषः=पुरुष है
स= श्रीर
यः=जा

अध्यात्मम्≔शरीर में यः=जो श्रयम्=यह श्रयम्=यह चाश्चुषः≔नेत्रसम्बन्धी आत्मा=नेत्रगत श्रातमा है तेजोमयः=प्रकाशरूप इदम्≕यही श्रमृतमयः=श्रमरधर्मवाला श्रमृतम्=श्रमर है पुरुषः=पुरुष है इदम्=यही श्चयम्=यही एव=निश्चय करके ब्रह्म=बद्य है सः=वह पुरुष है जो सूर्य इदम्=यही विषे है सर्वम्=सब कुछ है यानी सर्व-च=भीर शक्तिमान् हे

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि हे मैत्रेयि, देवि ! यह दृश्यमान सूर्य सब भूतों का सार है, स्रोर इस सूर्य का सार सब भूत है, यानी जैसे ये सब भूतों में प्रवेशित हैं, वैसेही इसमें सब भूत सूक्ष्म स्रंशों से प्रवेशित हैं, अथवा कारणा कार्य एकही हैं. स्रोर जो तेजोमय, स्रमृत-मय पुरुष हैं, स्रोर जो यह नेत्रविषे प्रकाशस्त्ररूप स्रमरधर्मवाला पुरुष है, ये दोनों एकही हैं. स्रोर हे मैत्रेवि ! यही नेत्र विषे स्थित पुरुष स्थातमा स्रमरधर्मी है, यही ब्रह्म है, यही सर्वशक्तिमान है, यही सब का स्राधिष्ठान है ॥ १ ॥

मन्त्रः ६

इमा दिशः सर्वेषां भूतानां मध्वासां दिशाश्च सर्वाणि भूतानि मधु यश्वायमासु दिश्च तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषो यश्वायमध्या-त्मश्च श्रोत्रः पातिश्चत्कस्तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषोऽयमेव स योऽय-मात्मेदयमृतमिदं ब्रह्मोदश्च सर्वम् ॥

पदच्छेदः ।

इमाः, दिशः, सर्वेषाम्, भूतानाम्, मघु, झासाम्, दिशाम्, सर्वािश, भूतानि, मधु, यः, च, झयम्, झासु, दिक्षु, तेजोमयः, २३२ ब्रामृतमयः, पुरुषः, यः, च, ब्रायम्, ब्राध्यात्मम्, श्रीत्रः, प्रातिश्रुत्कः, तेजोमयः, अमृतमयः, पुरुषः, अयम्, एव, सः, यः, अयम्, आत्मा, इदम्, श्रम्तम्, इदम्, ब्रह्म, इदम्, सर्वम् ॥ पदार्थाः पदार्थाः । श्रन्वयः

श्चन्वयः

इमाः≔ये दिश:=दिशार्थे

सर्वेषाम्=सब भूतानाम्=प्राणियों को

मधु=^{प्रिय} हैं च=ग्रीर

त्रासाम्=^{इन} दिशाम्=दिशाश्रों को

सर्वाणि=सब भूतानि=प्राणी मघु=^{त्रिय हैं}

+ च=धौर यः=जो

ग्रासु=^{हन} दिश्च=दिशाश्रों में

भ्रयम=^{यह}

तेजामयः=प्रकाशस्बरूप श्चमृतमयः=धमरधर्मी पुरुषः=पृरुष है

च=ग्रीर य:=जो

श्रध्यात्मम्=शरीर में

श्रयम्=^{यह} श्रीत्रः=कर्षाध्यापी

प्रातिशुत्कः≔प्रातिध्वनिरूप तजोमयः=तेजोमय

श्चमृतमयः=ग्रमृतमय

पुरुषः=पुरुष है श्रयम् एव=यही यानी कर्ण-

ब्यापी पुरुष सः≔वह दिशा ब्यापी

पुरुष है च=श्रोर

यः=जो त्र्यम्=य**इ कर्ग**ञ्यापी

श्चात्मा=श्चारमा है इदम्=यहा

श्रमृतम्=श्रमरधर्मी है इद्म्=यही

ब्रह्म=बद्य है इदम्=यही

सर्वम्=सर्वशक्षिमान् है

भावार्थ ।

हे प्रियदर्शन ! याज्ञबल्क्य महागाज मेत्रेयी देवी से कहते हैं कि, ये दिशायें सब प्राणियों को प्रिय हैं झ्रीर इन दिशाओं को सब प्राणी≉ प्रिय हैं क्योंकि विना दिशा के किसी प्राणी का आपना जाना नहीं होसकता है. सब कार्य दिशा के आधीन हैं. कमेंन्द्रिय, झानेन्द्रिय, मन,

बुद्धि, चित्त, आहंकार और पांचों प्राग् ये सब दिशा केही आधीन हैं, विना दिशा की सहायता के किसी कार्य के करने में आसमर्थ हैं. इस लिये दिशा थें सब प्राग्यों को प्रिय हैं और जो वस्तु प्रिय होती है उसी को लोग अपने में रखते हैं और चूंकि पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिग् दिशाओं में सब चराचर सृष्टि ज्याप्त हैं इस लिये दिशा को सब प्रिय हैं, हे देवि! जो प्रकाशस्त्ररूप, अपरधर्मी पुरुष इन दिशाओं में है और जो शरीर में करगाज्यापी, प्रतिध्वनिज्यापी, तेजोमय, अस्तुतमय पुरुष है वे दीनों एकही हैं. और जो करगाज्यापी, प्रतिध्वनिज्यापी पुरुष है, यही ब्रह्म है, यही अपरथर्मी है, यही सर्वज्यापी है, यही सर्वशिक्तमान है, यही सब का अधिष्ठान है।। ६।।

मन्त्रः ७

श्रयं चन्द्रः सर्वेषां भूतानां मध्वस्य चन्द्रस्य सर्वाणि भूतानि मधु यश्चायमस्मिश्वश्चन्द्रे तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषो यश्चायमध्यात्मं मानसस्तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषोऽयमेव स योऽयमात्मेदममृतिमिदं ब्रह्मोद्धं सर्वम् ॥

पदच्छेदः ।

अयम्, चन्द्रः, सर्वेषाम्, भूतानाम्, मधु, अस्य, चन्द्रस्य, सर्वाणि, भूतानि, मधु, यः, च, अयम्, अिमन्, चन्द्रे, तेजीमयः, अमृतमयः, पुरुषः, यः, च, अयम्, अध्यात्मम्, मानसः, तेजीमयः, अमृतमयः, पुरुषः, अयम्, एव, सः,यः, अयम्, आत्मा, इदम्, अमृतम्, इदम्, श्रद्धः, इदम्, सर्वम् ॥

द्यान्वयः

पदार्थाः | श्रन्वयः

पदार्थाः

श्रयम्=यह चन्द्रः=चन्द्रमा सर्वेषाम्=प्तब भूतानाम्=प्रावियों को मधु=प्रिय दे

श्रस्य=इस चन्द्रस्य=चन्द्रको सर्वाणि=सब भृतानि=प्राणी मधु=बिय हैं

+ ख≔और पुरुषः=पुरुष है यः=जो श्रयम् एव=यही मनसम्बन्धी श्र(स्मन्≔इस पुरुष चन्द्रे=चन्द्रमा में सः=वह चन्द्रमासम्बन्धी पुरुष है श्चयम्=यह ==ग्रीर तेजोमयः=प्रकाशरूप श्रमृतमयः≕श्रमरधर्मा यः=जो पुरुषः=पुरुष है श्रयम्=यह च=धौर श्रातमा=मनोब्यापी घातमा है यः=जो इदम्=यही श्रमृतम्=श्रमर है ऋयम्≔यह श्रध्यात्मम्≔इस शरीर में इदम्=यही मानसः=मनोब्यापी व्रह्म=बद्य है तें जो मयः =तेजो मय इदम्=यही सर्वम्=सर्वशक्तिमान् है श्रमृतमयः=श्रमृतमय

भावार्थ।

याज्ञवल्क्य महागाज कहते हैं कि हे मैत्रेयि, देवि ! यह चन्द्रमा सव प्राणियों को प्रिय है, झौर इस चन्द्रमा को सब प्राणी प्रिय हैं, जो प्रिय होता है उसी की तरफ लोग देखा करते हैं, सब प्राणी चन्द्रमा की तरफ देखा करते हैं, इस लिये चन्द्रमा सबको प्रिय है, झौर चन्द्रमा भी सब की तरफ देखा करता है, इस लिये सब चन्द्रमा को प्यारे हैं, हे देवि ! जो चन्द्रमा विषे प्रकाशस्वरूप, झमरधर्मी पुरुष है झौर जो इस शरीर में मनोव्यापी, तेजोमय, झमृतमय पुरुष है ये दोनों एकही हैं, झौर जो मनोव्यापी झात्मा है, यही झमर है, यही ब्रह्म है, यही सर्वशक्तिमान है ॥ ७॥

मन्त्रः ८

इयं विद्युत्सर्वेषां भूतानां मध्वस्ये विद्युतः सर्वाणि भूतानि मधु यरचायमस्यां विद्युति तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषो यरचायमध्यात्मं

पदच्छेदः ।

इयम् ,विद्युत् , सर्वेषाम् , भूतानाम् ,मधु,श्चस्ये, विद्युतः , सर्वाधाः, भूतानि, मधु, यः, च, श्चयम् , श्वस्याम् , विद्युति, तेजोमयः, श्चमृतमयः, पुरुषः, यः, च,श्चयम् , श्रध्यात्मम् , तेजसः, तेजोमयः, श्चमृतमयः, पुरुषः, श्चयम् , एव, सः, यः, श्चयम्, श्चात्मा, इदम् , श्चमृतम् , इदम् , श्रद्य, सर्वम् ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः

श्रन्वयः

पदार्थाः

इयम्=यह विद्युत्=विजली सर्वेषाम्=सर भूतानाम्=प्राणियों को मधु=प्रिय है + च=घौर श्रस्यै≕इस वियुतः=विजली को सर्वाणि=सब भूतानि=प्राची मधु=ित्रय हैं च=ग्रीर बः≕जो श्चस्याम्=इस वियुति=बिजली में श्रयम्=यह तेजोमयः=प्रकाशस्वरूप श्रमृतमयः=श्रमरधर्मी पुरुषः=पुरुष है च≕शौर

यः=जो
श्रध्यातमम्=शरीर में
श्रयम्=यह
तेज्ञसः=स्वरासम्बन्धी
तेजोमयः=प्रकाशरूप
श्रमृतमयः=श्रमधर्मी
पुरुषः=पुरुष है
श्रयम् एव=यही स्वचासम्बन्धी

प्रव=यही त्वचासम्बन्धी
पुरुष निश्चय करके
सः=वह है यानी विद्युद्
व्यापी पुरुष है
यः=जो
श्रयम्=यही त्वचासम्बन्धी
आतमा=झात्मा है
हदम्=यही

श्रमृतम्=धमर है इदम्=यही ब्रह्म=ब्रह्म है इदम्=यही सर्वम्=सर्वशक्रिमान् है

भावार्थ।

याज्ञवल्क्य महाराज मेंत्रेथी देवी से कहते हैं कि हे देवि ! ये वरूय-

मार्गा विजली सब प्राशियों को प्रिय है आरो इस विजली को सब प्रांगी प्रिय हैं, जब वर्षा काल बिपे काले बादलों में बिजली चमकती है तब सब का बड़ी प्रिय जगती है, जो वह सब के स्प्रमने बार बार प्रकाशित होती है जसी से मालूम होता है कि सब उस को आति प्रिय हैं, हे देवि ! जो प्रकाशस्वरूप, अमरधर्मी पुरुष इस बिजली बिषे है, वही प्रकाशस्वरूप, अभरधर्मी पुरुष इस शरीर की त्वचा में है, यानी दोनों एकही हैं, ऋौर हे देवि ! जो यह त्वचासम्बन्धी पुरुष है, यही आत्मा है, यही अमर हे, यही ब्रह्म है, यही सर्वशिक्तमान् है ॥ < ॥

सन्त्रः ६

श्रय छ स्तनियंत्तुः सर्वेषां भृतानां मध्वस्य स्तनियत्नोः सर्वाणि भृतानि मधु यश्चायमस्मिन्स्तनयित्नौ तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषो य-श्चायमध्यात्मश्रं शाब्दः सौवरस्तैजोमयोऽमृतमयः पुरुषोऽयमेव स योऽयमात्मेद्ममृतमिदं ब्रह्मेद्धं सर्वम् ॥

पदच्छेदः ।

श्रयम्, स्तनयित्तुः, सर्वेपाम्, भूतानाम्, मधु, श्रास्य, स्तनयित्नोः, सर्वाग्गि, भूतानि, मधु, यः, च, अयम्, अस्मिन्, स्तनयित्नो, तेजोमयः, अमृतमयः, पुरुषः, यः, च, श्रयम्, श्रध्यात्मम्, शाब्दः, सौवरः, तेजो-मयः. भ्रमृतमयः, पुरुषः, श्रयम्, एव, सः, यः, श्रयम्, श्रात्मा, इदम्, श्चमृतम्, इदम्, ब्रह्म, इदम्, सर्वम् ॥

श्चान्वयः

पदार्थाः । श्रन्वयः

पदार्थाः

ं श्रयम्=यह स्तनथित्नुः=मेघ सर्वेषाम=सब भूतानाम्=भूतों का मधू≔सार है अथवा सब प्राशियों को प्रिय है + च=श्रीर

ग्र**स्य=**इस स्तनयिल्लाः=मेघ का सर्घात्गु≔सब भूतानि=भूत मधु=सार हैं अथवा इस मेघ को सब प्राची प्रिय हैं च=धौर

यः=जो
श्रिक्सिन्=इस
स्तनियत्ती=भेष में
श्रयम्=यह
ते जोमयः=प्रकाशरूप
श्रमृतमयः=श्रमरधर्मा
पुरुषः=पुरुष है
श्रयम् एव=यही
सः=वह है
यः=जो
श्रध्यात्मम्=देह विषे
श्रयम्=यह
शाददः=शददस्यापी
सौवदः=स्वरस्यापी

तेजोमयः=मकाशरूप
ग्रमृतमयः=भन्नशरूप
पुरुषः=पुरुष है
च=भौर
थः=जो
श्रयम्=यह शब्द भौर स्वर
व्यापी
श्रातमा=भारमा है
इदम्=यही
ग्रमृत्यही
ग्रमु=यही
ग्रमु=यही
स्वस्=यही
स्वस्=यही
स्वस्=यही

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि हे मेत्रेयि, देवि ! नाद करनेवाला मेघ सत्र भूतों का सार है, अथवा सत्र प्राणियों को प्रिय है, और इस मेघका सार सत्र भूत हैं, अथवा इस मेघको सत्र मनुष्यादि प्राणी प्रिय हैं, और हे मेत्रेयि ! इस मेघिको जो यह प्रकाशस्वरूप अमर-धर्मी पुरुप है, यही वह है जो देहिबिषे स्वर्गव्यापी अथवा स्वरव्यापी, तेजोमय, अमृतरूप पुरुष है, यानी दोनों में कोई भेद नहीं है, और हे मैत्रेयि ! जो इस देह में शब्दव्यापी और स्वरव्यापी पुरुष है वही अमररूप है, यही सर्वशक्तिमान है, यही तुम्हारा रूप है ॥ ६ ॥

मन्त्रः १०

अयमाकाशः सर्वेषां भूतानां मध्वस्याऽऽकाशस्य सर्वाणि भूतानि मधु यश्वायमस्मिक्षाकाशे तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषो यश्वायमध्या-त्मश्र हृद्यकाशस्तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषोऽयमेव स योऽयमात्मेद-ममृतमिदं ब्रह्मेद्धं सर्वम् ॥

पदच्छेदः ।

श्चयम्, श्चाकाशः, सर्वेषाम्, भूतानाम्, मधु, श्वस्य, श्चाकाशस्य, सर्वाित्ताः, भूतािन, मधु, यः, च, श्चयम्, श्वस्मिन्, श्चाकाशे, तेनोमयः, श्चमृतमयः, पुरुषः, यः, च, श्चयम्, श्रथ्यात्मम्, हृदि, श्चाकाशः, तेनोमयः, श्चमृतमयः, पुरुषः, श्चयम्, एव, सः, यः, श्चयम्, श्चात्मा, इदम्, श्चमृतम्, इदम्, श्रह्म, इदम्, सर्वम् ॥

पदार्थाः श्चन्वयः श्रयम्=यह **त्राकाशः=**ग्राकाश सर्वेषाम्=सब भूतानाम्=भूतां का मधु=सार है भ्रथवा सब प्राणियों को प्रिय है ग्रस्य=इस आकाशस्य=त्राकाश के सर्वाग्रि=सब भूतानि=भूत मधु=सार हैं श्रथवा श्राकाश को सब प्राची प्रिय हैं च=श्रीर यः≕जो श्रस्मिन्≕इस श्चाकाशे≕श्राकाश में श्रयम्=यह तेजोमयः=प्रकाशरूप **श्चमृ**तमयः=श्रमरधर्मी पुरुषः=पुरुष है

पदार्थाः श्चन्वयः श्रयम् एव≕यही सः=वह है यः=जो श्चध्यात्मम्=देह में हृदि=हदय विषे श्रयम्≐यह श्चाकाशः=श्चाकाशस्यापी तेज्ञोमयः=तेजोमय श्रमृतमयः=श्रमृतमय पुरुषः=पुरुष है च=श्रौर य:=जो श्चयम्=यह हृदयसम्बन्धी श्चातमा=श्चातमा यानी पुरुष है इदम्=यही श्रमृतम्=श्रमर है इदम्=यही ब्रह्म=ब्रह्म है इदम्=यही सर्वम्=सर्वशक्रिशाली है

भावार्थ ।

हे मेन्नेयि, देवि ! यह दश्यमान आकाश सन भूतों का खार है, आध्या सन प्राणियों को प्रिय है, और सन भूत आकाश के सार है, आथवा आकाश को सब प्रास्ति प्रिय है, और हे देवि ! जो आकाश में प्रकाशस्वरूप, अमरधर्मी पुरुष है, यह वही है जो हृद्यविषे आकाश-व्यापी, तेजोमय, अमृतमय पुरुष है, यानी दोनों एकही हैं, आरे जो हृद्यगत पुरुष है, यही अमरधर्मी है, यही व्यापक है, यही सर्व-श हितमान है, यही तुम्हारा रूप है।। १०॥

मन्त्रः ११

श्चयं धर्मः सर्वेषां भूतानां मध्वस्य धर्मस्य सर्वाणि भूतानि मधु यश्चावमस्मिन्धमें तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषो यश्चायमध्यात्मं धार्म-स्तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषोऽयमेव स योऽयमात्मेदममृतमिदं ब्रक्षे-दथ्धं सर्वम् ॥

पदच्छेदः ।

श्चयम, धर्मः, सर्वेषाम्, भूतःनाम्, मधु, श्चस्य, धर्मस्य, सर्वाणि, भूतानि, मधु, यः, च, श्चयम्, श्चास्मन्, धर्मे, तेजोमयः, श्चमृतमयः, पुरुषः, यः, च, श्चयम्, श्चम्यात्मम्, धार्मः, तेजोमयः, श्चमृतमयः, पुरुषः, श्चयम्, एव, सः, यः, श्चयम्, श्चात्मा, इदम्, श्चमृतम्, इदम्, श्रद्धः, इदम्, सर्वम् ॥

श्रन्ययः

श्चन्ययः पदार्थाः श्चयम्=यह धर्मः=श्रोतस्मात्तं धर्म सर्वेषाम्=सब भूतान।म्=मडामृतों का मधु=सार है श्वथवा सब प्रावियोंको भिय है ख=श्रीर श्चर=इस धर्मस्य=धर्म के सर्वाखि=सब भूतानि=मडामृत

सार है अथवा है
प्रमु को सब प्राय
धर्म को सब प्राय
ध्रम है
च्चार
च्यार
च्यार
च्यार
स्रम्भ = इस
धर्म = यह
तेजोमयः=प्रकाशरूप
स्रम्भ स्रम्

श्चयम् एष=यही
सः=वह है
यः=जो
श्चयम्=यह
श्चर्यातमम्=यरीर में
धार्मः=धर्मन्यापी
तेजोमयः=श्वरास्यस्य
श्चर्यतमयः=श्वर्यास्य
पुरुषः=पुरुष है
यः=जो

श्रयम्=यह

श्रात्मा=धर्मव्यापी धारमा

यानी पुरुष है

इद्म्=यही

श्रमृतम्=श्रमृतरूप है

इद्म्=यही

श्रह्म=श्रहरूप है

इद्म्=यही

श्रह्म=श्रहरूप है

इद्म्=यही

सर्वम्=यही

सर्वम्=यही

भावार्थ ।

हे मैत्रेयि, देवि! यह श्रोतस्मार्त्त धर्म सब महामूर्तो का सार है, अथवा सब प्राणियों को प्रिय है, ओर इस धर्म का सार सब महामूर्त हैं, अथवा इस धर्म को सब प्राणी प्रिय हैं, ओर हे देवि! जो इस धर्म में यह प्रकाश-स्वरूप, अमरधर्मी पुरुष है, यही वह है जो शरीर विषे धर्मव्यापी, तेजोमय, अमृतमय पुरुष है, यानी दोनों एक ही हैं, इन में कोई भेद नहीं हैं, और हे प्रियमैत्रेयि! जो यह धर्मव्यापी शरीर विषे पुरुष है, यही अमृत-रूप है, यही ब्रह्मरूप है, यही सर्वशक्तिमान है, यही तुम्हारा रूप है। १९॥

मन्त्रः १२

इद्धं सत्यथं सर्वेषां भूतानां मध्वस्य सत्यस्य सर्वाणि भूतानि मधु यश्चायमस्मिन्सत्ये तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषो यश्चायमध्यात्मं सत्यस्तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषोऽयमेव स योऽयमात्मेदममृतिमदं ब्रह्मेद्धं सर्वम् ॥

पदच्छेदः ।

इदम्, सत्यम्, सर्वेपाम्, भूतानाम्, मत्रु, श्वस्य, सत्यस्य, सर्वाित्ता, भूतानि, मधु, यः, च, श्रयम्, श्रस्मिनं, सत्ये, तेजोमयः, श्रमृतमयः पुरुषः, यः, च, श्रयम्, श्रध्यात्मम्, सत्यः, तेजोमयः, श्रमृतमयः, पुरुषः, श्रयम्, एव, सः, यः, श्रयम्, श्रात्मा, इदम्, श्रमृतम्, इदम्, श्रद्धा, इदम्, सर्वम्॥ श्चन्वयः

पदार्थाः ऋषयः

पदार्थाः

इदम्=गह सत्यम्=सत्य सर्वेषाम्=सब

भूतानाम्=भूती का मधु=सार है श्रथवा सब

भूतों को प्रिय है + च=श्रौर

श्चस्य=इस

सत्यस्य=सःय का सर्वोणि=सब

भूतानि=भूत

मधु=सारहें यानी इस सत्य को सब प्राची प्रिय हैं

च=ग्रौर य:=जो

ग्रस्मिन्=इस

सत्ये=सत्य में

श्चयम्=यह तेजामयः=प्रकाशस्वरूप

श्चमृतमयः=श्रमरधर्मी

पुरुषः=पुरुष है च≕मीर यः⊐जो द्ययम्=यह हृदयस्थ

पुरुषः=पुरुष है

सः=वह है

यः≕जो

श्रध्यारमम्=हृदयसम्बन्धी

श्चयम्≔यह

सत्यः=सत्य तेजोमयः=प्रकाशस्त्ररूप

समृतमयः=धमरधर्मी

ग्रयम्-एव=यहीः निरचय करके

अयम्=यह हृदयस्य श्रातमा=बात्मा है यानी पुरुष है

इदम्=यही ऋमृतम्=स्थार है इदम्=यही + झ्हा=म्बा है इदम्=यही सर्वम्=सर्वशक्षिमान् है

भावार्थ ।

हे मेत्रेयि, देवि ! यह परिच्छित्र सत्य सब मूनों का सार है, डाथवा सब प्राितायों को प्रिय है, डार इस डापिरिच्छित्र सत्य का सब भूत सार है, यानी सब इसको प्रिय हैं, डार हे देवि ! जो प्रकाशस्वरूप, डामरधर्मी पुरुष इस सत्य में रहता है वही निश्चय करके हृदय विषे सत्य है, वही प्रकाशस्वरूप, डामरधर्मी पुरुष हृदय विषे रहता है, यानी दोनों एकही हैं इन दोनों में कोई भेद नहीं है, डार हे देवि ! जो हृदयस्थ झात्मा है यानी हृदय विषे जो पुरुष शयन किये हुये है, यही डामर है, यही झझ है, यही सर्वशिक्तमान है, यही तुम्ह।रा रूप है ॥ १२ ॥

मन्त्रः १३

इदं मानुषश्च सर्वेषां भूतानां मध्वस्य मानुषस्य सर्वाणि भूतानि
मधु यश्चायमस्मिन्मानुषे तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषो यश्चायमध्यात्मं
मानुषस्तेजोमयोऽमृतमयः पुरुषोऽयमेव स योऽयमात्मेदममृतमिदं
ब्रह्मेद्धं सर्वेम् ॥

पदच्छेदः ।

इदम्, मानुषम्, सर्वेषाम्, भूतानाम्, मधु, श्रस्य, मानुषस्य, सर्वािग्, भूतान्न, मधु, यः, च, श्रयम्, श्रस्मिन्, मानुषे, तेज्ञोमयः, श्रमृतमयः, पुरुषः, यः, च, श्रयम्, श्रम्यात्मम्, मानुषः, तेज्ञोमयः, श्रमृतमयः, पुरुषः, श्रायम्, एव, सः, यः, श्रयम्, श्रात्मा, इदम्, श्रमृतम्, इदम्,

श्रन्दयः पदार्थाः इदम्=यह मानुपम्=मनुष्यजाति सर्वेषाम्=सब भूतानाम्=भूतों का मधु=सार है श्रथवा सब प्राणियों को प्रिय है + स=धौर श्रस्य=इस मानुषस्य=भनुष्यजाति का सर्वाणि=वब भूता नि=भृत मधु=सार हे श्रथवा सब प्रार्गा इसका प्रिय हैं च=श्रौर य:=जो **श्चय**म्≔यह श्रस्मिन्=इस

पदार्थाः श्रन्वयः मानुष=मनुष्यजाति में तेजोमयः=प्रकाशरूप श्रमृत मयः=श्रमरधर्मी पुरुषः≔पुरुष ई + च≕श्रोर यः=जा श्चयम्≕यह **ऋ**ध्यात्मम्=शरीरविषे मानुषः=मनुष्यव्यापी तेजे(मय:=तेजोमय श्रमृतमयः=श्रमृतमय पुरुषः=एरुष ह श्चयम्=बही एव=निश्चय करके सः=वह है यानी जो हृद्य में स्थित है च्च=श्रीर

यः≕जो

याम् =यह हदयगत श्रातमा=श्रातमा है इदम्=यही श्रमृतम्=श्रमर है इदम्=यही ब्रह्म=ब्रह्म है

इदम्=यही सर्वम्=सर्वशक्तिमान् है

भाषाधे ।

हे मैत्रेयि, देवि ! यह मनुष्यजाति सब भूतों का सार है, आपवा सब प्राणियों को प्रिय है, और सब भूत इस मनुष्यजाति के सार हैं, आपवा सब प्राणी इसको प्रिय हैं, यानी जैसे यह औरों को चाहता है वैसेही और प्राणी भी इसको चाहते हैं, और हे देवि ! जो इस मनुष्यजाति में प्रकाशस्वरूप अमरधर्मी पुरुष है और जो हृदय में प्रकाशरूप आमरधर्मी पुरुष है ये दोनों एकही हैं, कोई उनमें भेद नहीं है, और हे देवि ! जो यह हृदयगत पुरुष है, यही अमर है, यही ब्रह्म है, यही सर्वशिक्तमान है, यही तुम्हाग रूप है।। १३।।

मन्त्रः १४

श्रयमात्मा सर्वेषां भूतानां मध्वस्या ऽऽत्मनः सर्वाणि भृतानि मधु यश्चायमस्मिन्नात्मनि तेजोमयो ऽमृतमयः पुरुषो यश्रायमात्मा तेजोमयो ऽमृतमयः पुरुषो ऽयमेव स यो ऽयमात्मेदमयृतमिदं ब्रह्मे-दथ्ठ सर्वम् ॥

पद्रच्छेदः ।

अयम्, आत्मा, सर्वेवाम्, भ्तानाम्, मधु, श्रस्य, आत्मनः, सर्वाणि, भूतानि, मधु, यः, च, श्रयम्, श्रस्मिन्, आत्मिनि, तेजो-मयः, अमृतमयः, पुरुषः, यः, च, श्रयम्, श्रात्मा, तेजोमयः, श्रमृत-मयः, पुरुषः, श्रयम्, एव, सः, यः, अयम्, आत्मा, इदम्, श्रमृतम्, इदम्, श्रद्म, सर्वम् ॥

श्चन्ययः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

श्रयम्=यह परिचित्रन्न श्रातम्=त्रातमा सर्वेषाम्=सब भूतानाम्=म्हों का

मधु=सार है श्रथवा सब प्रास्थियों को प्रिय है + ख=घौर ग्रस्य=इस **आत्मनः≔ब**परिच्छित्र सर्वाग्रि=सब भृतानि=मृत मधु≔सार है बथवा सब प्राची इसको प्रिय हैं च=श्रोर य:=जो श्रस्मिन्≡इस द्यातमनि=ग्रपरिच्छित श्रासा में श्रयम्=यह . तजोमयः=प्रकाशस्वरूप श्रमृतमयः=श्रमरधर्मी

पुरुषः=पुरुष है श्रयम-ध्य=यही निश्चय करके सः≔वह है यः=जो त्रात्मा=परिच्छित्र बास्मा तेजोमयः=तेजोमय श्चमृतमयः=ध**म्**तमय पुरुषः=परुष है यः≕जो श्रयम्≔यह श्चातमा=परिच्छित्र श्चारमा है इद्म्≔यही श्चमृतम्=धमरधर्मा है इदम्=यही ब्रह्म=बद्य है इद्म्=यही सर्वम=सर्वशक्रिमान् है

भावार्थ ।

हे मैत्रेयि, देवि! यह जो परिच्छिन बुद्धि है, यह सब भूतों का सार है, अथवा सब भूतों को प्रिय है, अ्रोर इस अपरिच्छिन बुद्धि का सब भूत सार हैं, अथवा सब प्राग्गी इसको प्रिय हैं, अ्रोर जो अपरिच्छिन बुद्धि में प्रकाशरूप, अमरधर्मी पुरुष हैं, अ्रोर जो परि-च्छिन बुद्धि में तेजोमय पुरुष है, यह दोनों एक ही हैं, अ्रोर हे देवि! जो परिच्छिन बुद्धि बिषे पुरुष है, यही अमर है, यही श्रद्धा है, यही सर्वशक्तिमान है, अ्रोर यही तुम्हारा रूप है।। १४।।

मन्त्रः १५

स वा श्रयमात्मा सर्वेषां भूतानामधिपतिः सर्वेषां भूतानाधः राजा तद्यथा रथनामा च रथनेमो चाराः सर्वे समर्पिता एवमेवा- स्मिन्नात्मिन सर्वाणि भूतानि सर्वे देवाः सर्वे लोकाः सर्वे प्राणाः सर्वे एत श्रात्मानः समर्पिताः ॥

पदच्छेवः ।

सः, वै, अयम्, आत्मा, सर्वेषाम्, भूतानाम्, अधिपतिः, सर्वेषाम्, भूतानाम्, राजा, तत्, यथा, रथनाभी, च, रथनेमी, च, अराः, सर्वे, समर्पिताः, एवम्, एव, अस्मिन्, आत्मिन, सर्वािश्या, भूतानि, सर्वे, देवाः, सर्वे, जोकाः, सर्वे, प्राशाः, सर्वे, एते, आत्मानः, समर्पिताः॥ अन्वयः पदार्थाः | अन्वयः पदार्थाः

वै=निरचय करके

एवम् एव≔इसी प्रकार निरचय

सः=वही

श्रयम्≔यह

श्चातमा=परमात्मा सर्वेषाम्=सब

भूतानाम्=भूतों का

श्रधिपतिः=श्रीषपति है

सर्वेषाम्=सब

भूतानाम्=प्राणियों में राजा=प्रकाशस्वरूप है

तत्≕सो

यथा=जैसे

रथनाओ=रथचक की नाभिमें

रथनेमौ=रथचक्र की परिधिमें सर्वे=सब

श्चराः≔षरे

समर्पिताः=जगे रहते हैं

करके
श्रिस्मन्=इस
श्रात्मिन=परमासमा में
सर्वाण्=सब
भूतान=ब्रह्मा से खेकर तृष
पर्यन्त भृत
सर्वे=सब
देवा:=ध्रग्नादि देवता
सर्वे=सब
स्रोक्=सब
प्राणा:=ब्रागादि इन्द्रियां
ख=धीर
प्रेन=थे
सर्वे=सब

श्चारमानः=जीवारमा

समर्पिताः=समर्पित रहते हैं

भावार्थ ।

हे मैन्नेयि, देवि ! यही परमात्मा सब भूतों का ऋषिपति है, यही सब प्राश्मियों में प्रकाशस्त्रक्ष है, और जैसे रथचक की नाभि में और परिधि में सब और को रहते हैं, इसी प्रकार इस परमात्मा में सब ब्रह्मा से लेकर तृत्या पर्यन्त सब भूत, सब अग्नि आदि देवता, सब भूरादि लोक, सब बागादि इन्द्रियां, सब जीव समर्पित रहते हैं, यानी कोई विना आधार परमात्मा के रह नहीं सक्ता है, यानी इसी से सबकी उत्पत्ति हैं, इसीमें सबका लय है, इसीमें सबकी रिथति हैं, ऐसा यह परमात्मा सबका आत्मा है, यही तुम्हारा स्वरूप है।। १४॥

मन्त्रः १६

इदं वै तन्मधु दध्यङ्ङाथर्वणोऽश्विभ्यामुवाच तदेतदृषिः परय-त्रवोचत्। तद्दां नरा सनये दछंस उग्रमाक्ष्टिकृणोमि तन्यतुर्ने दृष्टिम्। दध्यङ् ह यन्मध्वाथर्वणो वामश्वस्य शीष्णो प्र यदीमुवाचेति ॥ पवच्छेवः।

इदम्, वै, तत्, मधु, दध्यक्, आधर्वताः, अश्विभ्याम्, खवाच, तत्, एतत्, ऋषिः, पश्यन्, अवोचत्, तत्, वाम्, नराः, सनये, दंसः, खश्रम्, आविः, कृशोमि, तन्यतुः, न, वृष्टिम्, दध्यक्, ह, यत्, मधु, आधर्वत्यः, वाम्, अश्वत्य, शीष्णाः, प्र, यत्, ईम्, खवाच, इति ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

न्वयः

+ मैत्रेयि=हे वियमैत्रेयि !

चे=िरचय करके

श्रहम्=मैं

इदम्=इस

तत्=डस

मधु=त्रसविषा को

+ चिद्ध्यामि=कहता हुं

यत्=ित्रसको

शाधर्वणः=धर्यवेवरी

दध्य=्=दध्य=्ऋषिने

श्रिवभ्याम्=धरिवनीकुमारों के

प्रति

उदाच=कहा भा

+ सः=वह दध्यङ्काषि
तेषाम्=उनसे
हित=पेना
श्रवोचन्=कहता भया कि
नराः=हे श्रीरवनीकुमारो !
वाम्=तुम दोनों के जिये
तत्=उसी
एतत्=हस महाविषा को
युवयोः=तुन्हारे
सनथ=जाम के जिये
हित=पेसा साफ

- न=जैसे

तन्यतुः≔विषुत् वृष्टिम्=वृष्टि के भाने को + सुन्नयति=वताती है तत्पश्चात्=इसके वाद तत्=उस उग्नम्=उम दंसः≔कमं को पश्यन्=ग्रनुभव करता हुन्ना स्राधर्वयाः=स्रथवेवरी
दश्यङ्=दश्यङ्सपि
स्रश्यङ्य=योदे के
शीदणी=शिर के द्वारा
तेषाम्=उनको
मधु=बस्तिया को
प्रोचाच=कहता भया

भावार्थ ।

हे प्रियमैत्रेयि ! एक समय दोनों अप्रिवनीकुमार देवताओं के वैद्य, अधर्ववेदी दध्दङ्कृषि के पास गये, और सविनय प्रार्थना किया. यह कहत हुये कि है प्रभी ! इम लोगों के प्रति आप कृपा करके ब्रह्म-विद्या का उपदेश करें, ऋषि महाराज ने कहा कि में उपदेश करने को तैयार हुं, परन्तु मुक्त का इन्द्र का भय है, क्योंकि उसने कहा है कि अप्रार तम कभी ब्रह्मविद्या का उपदेश किसी को करोगे तो तुम्हारा शिर मैं काट डालुंगा, सो अप्रगर मैंने तुम को उपदेश किया तो वह मेरा शिर श्रवश्य काटडालेगा. ऐसा सुन कर श्रश्विनीकुमारों ने श्रावि को आध्वासन देकर कहा कि आप न घबड़ाइये हम आपके शिर की काट कर अप्रजा रखदेंगे, अप्रीर एक घोड़े के शिर को काट कर आपकी गर्दन पर लगा देंगे, उसके द्वरा आप हम को उपदेश करें, जब इन्द्र आकर घोडेवाके आपके शिर को काटडालेगा तब हम फिर आप के पहिले शिर को आपकी गर्दन से जोड़ देंगे. यह सुन कर दध्य इस्पृति आश्वनीकुमारों को उपदेश के लिये उद्यत हुये, और आश्वनीकुमार्ग ने अपने कहने के अनुसार दध्य इकृषि का शिर काट कर आक्रम रख दिया, और एक घोड़े का शिर काट कर दध्य उन्मृषि की गर्दन से जोड़ दिया, तब अनृषि ने उस घोड़े के शिर के द्वारा अप्रिवनी कुमारों को ब्रस्मविद्या का उपदेश किया, जब यह हाल इन्द्र को मालूम हुआ। तब इन्द्र आन कर दृष्ट्यङ्मृषि के घोड़ेवाज़े शिर को काट कर चलागया तत्परचात् अश्विनीकुमारों में मृषि महाराज के पहिलेवाज़े शिर को जाकर उनकी गर्दन से जोड़ दिया, इस आख्यायिका से ब्रह्मविद्या का महत्त्व दिखाया गया है, ओर हे मेंत्रेयि ! उसी ब्रह्मविद्या को मैं तुम से कहता हूं ॥ १६ ॥

मन्त्रः १७

इदं वै तन्मधु दघ्यङ्काथर्वणोऽश्विभ्यामुवाच । तदेतदृषिः पश्यन्न-वोचत् । त्र्याथर्वणायाश्विना दघीचेऽरव्यर्छ शिरः प्रत्येरयतं स वां मधु मवोचदृतायन्त्वाष्ट्रं यदस्राविष कक्ष्यं वामिति ॥

पदच्छेदः।

इदम्, वै, तत्, मधु, दध्यङ्, आधर्त्रणः, अश्विभ्याम्, उताच, तत्, एतत्, अनृषिः, पश्यन्, अशोचत्, आपर्वगाय, अश्विमः, दधीचे, आश्विम्, शिरः, प्रत्येश्यतम्, सः, वाम्, मणु, प्रवोचत्, अनृतायन्, त्वाष्ट्रम्, यद्, दस्तौ, अपि, कश्यम्, वाम्, इति ॥ अन्वयः पदार्थाः । अन्वयः पदार्थाः । सेनेप्रयि=हे मैत्रेपि ! अश्वत्वर्णः अश्वत्तिः हे ॥ श्वित्वर्णः अश्वत्तिः हे ॥ श्वित्वर्णः स्र

+ मेत्रीयं च्हे मत्रीयं !

आधर्वणः=त्रथ्यक्त्विः
दश्यक्=दश्यक्त्विः
श्रित्यक्ष्याम्=श्रितनीकुमारों के
प्रति
तत्=उस
इत्म=इस
मधु=मधुनामक ब्रझविद्या को
उवाच=कहता भया
तत्=ितसी
एतत्=इसी दश्यक् की कही
दुई ब्रह्मविद्या को
ऋथिः=एक ऋषि

पश्यम् च्यवता हुआ

+ प्रश्यम् । } = शश्यमीकुमारों से

+ इति = ऐसा
प्रयोचन् = कहता भवा कि
प्रश्यमा = दे प्रश्यमीकुमारों !

+ युवाम् = तम दोनों ने

+ यस्म = जिस
प्रथाय = प्रथावेदी
दर्धाचे = दश्यक् के किये
प्रश्यम् श्रीरा = प्रश्यक् के किये
प्रश्यम् = प्रश्यम् करावा है
सः = उसी दश्यक्षिये ने
वाम् = तुम दोनों के जिये

श्चृतायम् १ ्रचपने वचन को + सन्) पालन करता हुआ मधु १ मधुविद्या का स्रवेश्चित् । उपदेश किया

+ च=श्रौर दस्ती=हे शत्रुहन्ता धश्विनी-

कुमारो !

यस्=जो

त्वाष्ट्रम्=चिकित्सा शाध-सम्बन्धी ज्ञान है श्चपि=श्रीर + यत्=जो कश्यम्≕भात्मविज्ञान है + ते=उन दोबों को वाम्=तुम दोनों के जिये इति=इस प्रकार + श्रवोचत्=उपदेश करता भया

हे मैत्रेयि, देवि ! जिस मधुनामक ब्रह्मविद्या को ऋश्विनीकुमारों के लिये अधर्ववेदी दध्यङ्क्ष्मिष ने उपदेश किया उसी ब्रह्मविद्या के उप-देश को सुन कर एक ऋषिने भी अश्विनीकुमारों से ऐसा कहा. हे अश्विनी-कुपारो ! जिस दध्यङ्क्ष्युषि के शिर को काट कर तुम जोगों ने श्चलग कर दिया श्चीर उसकी जगह पर घोड़े के शिर को लाकर लगा दिया, तिसी दृष्यङ्कप्तृषि ने तुम्होर कल्याग्रार्थ स्त्रीर स्रापने वाक्य-पालनार्थ ब्रह्मविद्या का उपदेश तुम दोनों को किया, श्रीर हे शत्रुहन्ता, श्रारिबनीकुमारो ! जो चिकित्साशास्त्रसम्बन्धी ज्ञान है, श्रीर जो श्रात्म-सम्बन्धी ज्ञान है, उन दोनों का भी उपदेश तुम्हारे िक्नंथ किया. इस मन्त्र से यह प्रकट होता है कि दध्य इक्ष्मृषि से चिकित्साशास्त्र झीर श्चात्मज्ञान, श्चरिवनीकुमारों को मिले हैं ॥ १७ ॥

मन्त्रः १८

इदं वैतन्मधु दध्यङ्काथर्वणोऽश्विभ्यामुवाच तदेतद्दिः पश्यम-वोचत् पुरर ५के द्विपदः पुरश्चके चतुष्पदः पुरः स पक्षी भूत्वा पुरः पुरुषः त्राविशदिति स वा श्रयं पुरुषः सर्वासु पूर्षे पुरिशयो नैनेन किंचनानाष्ट्रतं नैनेन किंचनासंद्रतम् ॥

इदम, वे, तत्, मधु, दध्यङ्, आयर्वगाः आश्विभ्याम्, खवाच,

तत्, एतत्, अर्थिः, पश्यन्, अवोचत्, पुरः, चक्रे, द्विपदः, पुरः, चक्रे, चतुष्पदः, पुरः, सः, पक्षी, भूत्वा, पुरः, पुरुषः, आविशत, इति, सः, वै, अयम्, पुरुषः, सर्वासु, पूर्षुं, पुरिशयः, न, एनेन, किंचन, आनावृतम्, न, एनेन, किंचन, असंवृतम् ॥

पदार्थाः । श्रन्वयः + मेत्रेथि=हे प्रियमैत्रेयि ! च=निश्चय करके तत्र्≂उसी इदम्=इस मधु≔मधु ब्रह्मविया को **आथर्वणः=ग्र**थर्ववेदी द्ध्यङ्=दध्यङ्ऋषि **अश्विभ्याम्=अश्विनीकुमारी** के प्रति उवाच=कहता भया तत्=डसी एतत्≔इस मधु बह्यविद्या को पश्यन्≔देखते हुये ऋषिः≔एक ऋषि ने श्रवोचत्=कहा कि सः≔बह परमात्मा द्विपदः≔दो पादवाले पुर:=पक्षी श्रीर मनुष्यों के शरीरों को चतुष्पदः≔चार पादवाले पुरः≔पशुम्राके शरीरों को चक्रे≕बनाता भया + सः≔वही परमास्मा पुरः⇒पहिले

> पक्षी=लिङ्गशरीर भूत्य(=हो कर

पदार्थाः श्रन्वयः पुरः=शरीरों में पुरुष यानी पुर में पुरुषः = | रहनेवाला ऐसा + सन् = | श्रथंपाही नाम | धारण करता हुन्ना श्राविशत् इति=प्रवेश करता भया ' सः { =वही श्चयम्=यह परमात्मा सर्वासु=सब पूर्षु=शरीरों में पुरिशयः } =सोनेवाला है एनन=इसी पुरुष करके कि**ञ्चन**=कुछ भी श्चनाबृतम्=त्रनाच्छादित नहीं है यानी इसी पुरुष करके सब चराचर ब्रह्माग्ड श्राच्छादित है + तथा=तैसेही

एनन=इसी पुरुष करके

्रधनुम्बेशित् नहीं है श्रसंवृतम् ्रेऐसा नहीं है वानी न ्रेसब कुछ इसी परुष (करके प्रवेशित है

किञ्चन=कुछ भी

भावार्थ ।

याज्ञवत्क्य महाराज कहते हैं हे मैत्रेयि ! उसी मधुनामक ब्रह्माविद्या का उपदेश अर्थवेवेदी दध्यक्ष्मृषि ने आरिवनीकुमारों के प्रति कहा और तिसी मधुनामक ब्रह्माविद्या को जानता हुआ एक ऋषि उन अरिवनीकुमारों से ऐसा कहता भया कि हे आरिवनीकुमारों ! वह परमात्मा दो परवाले पक्षी और मनुष्य के शरीरों को और फिर चार पैरवाले पश्ची और मनुष्य के शरीरों को आह फिर चार पैरवाले पश्ची में पुरुष यानी पुर में रहनेवाला ऐसा आधिद में लिङ्गशरीर होकर शरीरों में पुरुष यानी पुर में रहनेवाला ऐसा आर्थप्राही नाम धारणा करता हुआ प्रवेश करता भया. वही परमात्मा सब शरीरों में सोने वाला पुरुष है, इसी पुरुष करके सब आच्छादित है यानी इसी पुरुष करके सब चराचर ब्रह्मायड ज्यात है और इसी पुरुष करके कुछ भी अननुप्रवेशित नहीं है यानी सब कुछ प्रवेशित है, अथवा सब में यह ज्यात है. हे मेत्रेयि, देवि ! जो कुछ दिष्टगोचर है वह सब ब्रह्मरूप्री है।। १८॥

मन्त्रः १६

इदं वै तन्मधु दृध्यङ्ङाथर्वणोऽश्विभ्यामुनाच तदेतदृषिः पश्य-स्नवोचत् रूपछं रूपं प्रतिरूपो वभूव तदस्य रूपं प्रतिचक्षणाय इन्द्रो मायाभिः पुरुरूप ईयते युक्ता बस्य हरयः शता दशेति अयं वै हरयो-ऽयं वै दश च सहस्राणि बहूनि चान्तानि च तदेतद्वस्रापूर्वमनपर-मनन्तरमबाद्यमयमात्मा ब्रह्म सर्वानुभूरित्यनुशासनम् ॥

इति पश्चमं ब्राह्मणम् ॥ ४ ॥

पदच्छेदः ।

इदम्, वै, तत्, मधु, दध्यङ्, आथर्वगाः, अश्विभ्याम्, उवाच, तत्, एतत्, अर्थः, पश्यन्, अवीचत्, रूपम्, रूपम्, प्रतिरूपः, वभूव, तत्, अस्य, रूपम्, प्रतिचक्षगाय, इन्द्रः, मायाभिः, पुरुरूपः, ईयते, युक्ताः, हि, अस्य, हरयः, शता, दश, इति, अयम्, वै, हरयः, अयम्, वै, दश, च, सहस्राणि, बहूनि, च, अनन्तानि, च, तत्, एतत्, अस्य,

अंपूर्वम् , अनपरम् , अनेन्तरम् , अवाह्यम् , अयम् , आत्मा, ब्रह्मा, सर्वा-नुभूः, इति, अनुशासनम् ॥

श्चान्धयः

पदार्थाः + मैत्रेयि=हे प्रियमैत्रेयि, देवि !

वै≕निश्चय करकं

तत्≕ःस

=इस मधुविद्या को श्चाथर्वणः=ग्रथर्ववेदी

द्ध्यङ्=दध्यङ्ऋषि

अश्विभ्याम्=त्रारवनीकुमारोंके प्रति

उवाच=कहता भया

तत्=इसी

एतत्=इस मधुविया को पश्यन्=देखता हुन्ना

ऋषिः≔एक ऋषि

श्रवोचत्=कहता भया कि

+ सः=वह परमात्मा

= इरएक रूप में

प्रतिरूपः=प्रतिबिम्बरूप षभूव=होता भया

+किमर्थमिदम्=यह प्रतिविम्बरूप

क्यों होता भया + उच्यते=उत्तर यह कहा जाता

श्रस्य=इस श्रात्मा का तत्=बह

रूपम्=प्रतिबिम्बरूप

प्रतिचक्षगाय=श्रात्मत्व सिद्धि के लिये

्र_{्य} + अस्ति=है यानी यदि प्रतिविम्ब न हो तो विम्ब का

ज्ञान नहीं हो सक्रा है

श्चन्वयः

इन्द्रः=परमास्मा

मायाभिः=नाम रूप उपाधि करके पुरुद्धपः=बहुत रूपवासा

पदार्थाः

ईयते=जाना जाता है

यथा=जैसे

+ रध=रथ में

युक्ताः=बगे हुये

हरयः=घोदे

+राधनम्=रथी को

+ स्वहप्रदेशम्=अपने नेत्र के सामने के देश की तरफ

+ नयन्ति=ले जाते हैं

+ तथा≕तैसेडी

अस्य=इस प्रत्वगात्मा को

+ शरीरे=शरीर में युक्ताः≔युक्र हुई

> हरयः≕विषयहरण करने वाकी इन्द्रियां भी

+ नयन्ति=से जाती हैं ते=वे इन्द्रियां

+ यदि=श्रगर

श्राता (= से हैं तो

इति≕उतनाही

श्रयम्=यह प्रत्यगारमा भी वै≔निरचय करके

· अस्ति=है

ख≔शौर

+ यदि=भगर + ते=वे इन्दियां दश } <u>_</u>दश सहस्राणि } हज़ार है तो इति=उतनाही श्चयम्=यह प्रत्यगारमा भी है च=श्रोग + यदि=ग्रगर त=वे इन्द्रियां बहुनि=बहुत च=घौर द्यनन्तानि=असंख्य हैं तो इति≔उतनाही म आरे मैंत्रेयि=हे मैत्रेयि !

तत्=सोई एतत्=यह ब्रह्म=ब्रह्म-म्रनपरम्=जातिरहित है श्चनन्तरम्=व्यवधानरहित है श्र**बाह्यम्**≔सर्वब्यापी है श्चायम=यही प्रत्यगातमा ्रब्रह्म=बद्य है सर्वानुभृः=सबका अनुभव करने वाला है इति=इस प्रकार + झरे=हे पियमैन्नेपि ! त्रायम्=यह प्रत्यगात्मा भी है श्रानुशासनम्=यह सब वेदान्त का सपदेश है

भावार्थ ।

हे प्रियमेत्रेयि ! इसी मधु ब्रह्मविद्या को अथर्ववेदी दध्यह्मभूषि अधिवनीकमारों के प्रति कहता भया और उसी विद्या की जानता हुआ एक मुचि भी अपने शिष्य अश्विनीकुमारों से कहता भया कि वह परमात्मा हरएक रूप में प्रतिबिम्बरूप सं स्थित हुआ है. प्रश्न होता है. वह क्यों ऐसा होता भया. उत्तर मिलता है कि वह प्रतिविम्ब विम्ब की सिद्धि के लिये होता भया है, क्योंकि विना प्रतिविम्ब के झान के बिम्ब का ज्ञान नहीं हो सक्ता है, हे मैत्रेयि ! वह परमात्मा नामरूप उपाधि करके वहरूपत्राका जाना जाता है, वास्तव में उसका एकही रूप है. हे प्रियमैत्रेयि ! जैसे स्थ में लगे हुये घोड़े स्थी को अपने नेत्र के सामने के देश की तरफ केजाते हैं. तैसेही इस प्रत्यगात्मा यानी जीव को शरीर में जगी हुई विषयहरण करनेवाली इन्द्रियां मी विषय की तरफ क्षेजाती हैं, वे इन्द्रियां एक हज़ार हैं, दश हज़ार हैं, बहुत हैं, इप्रसंख्य हैं, यानी जितनी वे हैं उतनाही यह प्रत्यगात्मा भी दिख-

स्ताई देता है. यही प्रत्यगात्मा ज्यापक ब्रह्म है, यही अब्रितीय है, यही स्तव ज्यवधानों से रहित है, यही प्रत्यगात्मा सबका अनुभवी है, हे प्रियमैत्रेयि ! यही वेदान्त का उपदेश है ॥ १६॥

इति पञ्चमं ब्राह्मग्राम् ॥ ४ ॥

श्रथ षष्ठं बाह्मग्रम् । मन्त्रः १

श्रथ वर्धशः पौतिमाष्यो गौपवनाद्गौपवनः पौतिमाष्यात्पौति-माष्यो गौपवनाद्गौपवनः कौशिकात्कौशिकः कौषिडन्यात्कौषिडन्यः शारिडल्याच्छारिडल्यःकेशिकाच गौतामाच गौतमः॥ १॥ श्रीग्न-ं वेश्यादाग्निवेश्यः शाण्डिल्याचानभिम्लाताचानभिम्लात त्र्यान-भिम्लातादानभिम्लात श्रानभिम्लातादानभिम्लातो द्रौतमः सैतवपाचीनयोग्याभ्याधः सैतवप्राचीनयोग्यौ पाराशर्या-त्पाराशयों भारद्वाजाद्धारद्वाजो भारद्वाजाच गौतमाच गौतमो भार-द्वाजाद्भारद्वाजः पाराशर्यात्पाराशर्यो बैजवापायनाह्रैजवापायनः कौशिकायनेः कौशिकायनिः ॥ २ ॥ वृतकौशिकाद्यृतकौशिकः पाराशयीयणात्पाराशयीयणः पाराशयीत्पाराशयीं जातूकएयोज्जा-तुकर्ण्य त्रासुरायणाच यास्काचाऽ ऽसुरायणस्त्रेवणेस्त्रेविणरीपजन्धने रौपजन्धनिरासुरेरासुरिर्भारद्वाजाद्भारद्वाज त्रात्रेयादात्रेयो माएटे-र्माएटगींतमादुगीतमो गीतमाद्गीतमो वात्स्याद्वात्स्यः शाएडल्या-च्छाएिडल्यः कैशोर्यात्काप्यात्कैशोर्यः काप्यः कुमारहारीतात्कुमार-हारीतो गालवादगालवो विदर्भीकौएिडन्याद्विदर्भीकौएिडन्यो व-त्सनपातो बाभ्रवाद्वत्सनपाद्बाभ्रवः पथः सौभरात्पन्थाः सौभरो ऽयास्यादाङ्गिरसादयास्य त्राङ्गिरस त्राभृतेस्त्वाष्ट्रादाभृतिस्त्वाष्ट्रो विश्वरूपात्त्वाष्ट्राद्विश्वरूपस्त्वाष्ट्रोऽश्विभ्यामश्विनौ दुधीच द्याथ-र्वेणाइध्यङ्गार्थवेणो दैवादथर्वादैवो मृत्योः प्राध्वर्धसनान्मृत्यु-

प्रध्वश्रमनः प्रध्वश्रमनात्मध्वश्रमना एकपेरेकपिविप्रचिचित्रिविप्रचि-चिर्च्यष्टेर्व्यिष्टः सनारोः सनारः सनातनात्मनातनः सनगात्सनगः परमेष्ठिनः परमेष्ठी ब्रह्मणो ब्रह्म स्वयम्भु ब्रह्मणे नमः ॥ ३ ॥ इति षष्ठं ब्राह्मणम् ॥ ६ ॥

ृहित पष्टं ब्राह्मणम् ॥ ६ ॥ इति श्रीबृहदारएयकोपनिषदि द्वितीयोऽघ्यायः ॥ २ ॥

श्रथ वंशः।

पौतिमाध्य ने गौपवन से दिया प्राप्त की, गौपवन ने पौतिमाध्य से विद्या प्राप्त की, पौतिमाध्यने गौपवनसे, गौपवनने कौशिक से, कौशिकने कौ गिडन्यसे, कौ गिडन्यने शागिडल्यसे, शागिडल्यने कौ शिक श्रीर गौतमसे, गौतमने आग्निवेश्यसे, आग्निवेश्यने शाधिडत्य और अनिभ-म्लातसे, अनभिम्लातने आनभिम्लातसे, आनभिम्लातने आनभिम्लात से. आनभिम्लातने गौतम से, गौतमने सेतव और प्राचीनयोग्यसे, सेतव श्रीर प्राचीनयोग्य ने पाराशर्य से, पाराशर्य ने भारद्वाजसे, भारद्वाजने भारद्वाज श्रीर गौतमसे, गौतमने भारद्वाज से, भारद्वाज ने पाराशर्य से, पाराशर्य ने बैजवापायनसे, बैजवापायनने कौशिकायनि से, कौशिकायनिने घृतकौशिकसे, घृतकौशिकने पाराशर्यायगासे, पारा-शर्यायमाने पाराशर्य से, पाराशर्य ने जातूकमर्य से, जातूकमर्य ने श्राप्तरायण श्रीर यास्कसे, श्राप्तरायण श्रीर यास्कन त्रैवणिसे. त्रैविश्यित श्रीपत्रन्थनिसे, श्रीपत्रन्थनिने श्रासुरिसे, श्रासुरिने भारद्वाज से, भारद्वाजने आत्रेवसे, आत्रेयने मागिटसे, मागिटने गौतम से, गौतमने गौतमसे, गौतमने वास्यसे, वात्स्यने शाधिडल्यसे, शागिडल्य कैशोर्यकाप्यसे, कैशोर्यकाप्यने कुमारहारीतसे, कुमारहारीतने गालवसे, गालवने विदर्भिकौ विडन्यसे, विदर्भिकौ विडन्यने वत्सन-पातवाभ्रवसे, वत्सनपातवाभ्रवने पन्था श्रीर सीभरसे, पन्था श्रीरं सीभरने आयास्य और आङ्गिरसस, आयास्य आङ्गिरसने आभिति-

त्वाष्ट्रसे, आभूतित्वाष्ट्रने विश्वरूपत्वाष्ट्रसे, विश्वरूपत्वाष्ट्रने अश्विद्वय से, अश्वि ने दृष्यङ्ख्याथर्वण्योसे, दृष्यङ्ख्याथर्वण्योने अथर्वादेवसे, अथर्वादेवने मृत्यु प्राध्वंसनसे, मृत्युप्राध्वंसनने प्रध्वंसनसे, प्रध्वंसनने एकर्षिसे, एकर्षिने विप्रचित्तिसे, विप्रचित्तिने न्यष्टिसे, न्यष्टिने सनारुसे, सनारुने सनातन से, सनातनने सनगसे, सनगने परमेष्टीसे, परमेष्टीने ब्रह्मसे, ब्रह्म स्वयंभू है, उस ब्रह्मको नमस्कार है ॥ १।३॥

इति षष्ठं ब्राह्मग्राम् ॥ ६ ॥

इति श्रीबृहद्।रगयकोपनिषदि भाषानुवादे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

श्रीगरोशाय नमः ।

अथ बृहदारएयकोपनिषदि तृतीयाध्याये

जनकारवमेधप्रकरणम् ।

श्रथ प्रथमं ब्राह्मग्रम्।

मन्त्रः १

*ॐजनको ह † वैदेहो ‡ बहुदक्षिणेन यज्ञेनेजे तत्र ह कुरुपश्चालानां ब्राह्मणा त्रभिसमेता वभूवुस्तस्य ह जनकस्य वैदेहस्य विजिज्ञासा वभूवकःस्विदेषां ब्राह्मणानामनूचानतम इति स ह गवाछ सहस्रम-वस्रोध दश दश पादा एकैकस्याः शृक्षयोराबद्धा वभूवुः ॥

पदच्छेदः ।

भ्रम्, जनकः, ह, वेदेदः, बहुदक्षियोन, यझेन, हंजे, तत्र, ह, कुरु-पञ्चाक्षानाम्, ब्राह्मयाः, अभिसमेताः, बभूवुः, तस्य, ह, जनकस्य, वेदेहस्य, विजिज्ञासा, बभूव, कः, स्वित्, एपाम्, ब्राह्मयानाम्, अन्-चानतमः, इति, सः, ह, गवाम्, सहस्रम्, अवरुरोध, दस, दश, पादाः, एकैकस्याः, श्रक्कयोः, आवद्धाः, बभूवुः ॥

^{*} जितने मिथिलादेश के राजा हुये हैं वे सब जनक नाम से प्रसिद्ध हुये हैं , क्योंकि वे अपनी प्रजा के ऊपर पिता के सदश कृपा रखते थे ॥

[†] नेंदेह—इस राज्द में नि उपसर्ग है, जिसका धर्थ नहीं है, त्रीर देह का ऋषे शरीर है, वेंदेह वह पुरुष कहा जाता है जिसका शरीराभिमान नष्ट होगया है, चूंकि मिथिलादेश के राजा जितने हुये हैं वे सन निद्वान् ऋसनिद देहाभिमानराहित हुये हैं, इस कारण ने नैंदेह कहलाते रहे ॥

¹ बहुदिविया वह यज्ञ है जिसमें बहुत दिवया ब्राह्मणों को दिया जाय, ऐसे यक्क अश्वमेश और राजसूयादिक हैं॥

श्चर्यः

पदार्थाः | श्रन्वयः

पदार्थाः

अम्=अम् ह=प्रसिद्ध वैदेहः=विदेह देशका राजा जनकः=जनक बहुद्श्विगोन=बहुद्श्विगासम्बन्धी यक्षेन=यज्ञ करके ईजे=यज्ञ करता भया च=श्रौर + यदा=जब तत्र≔उस यज्ञ में कुरुपञ्चालानाम्=कुरु श्रीर पद्माल देश के ह=परम प्रश्सिद्ध ब्राह्मण्ः=विद्वान् बाह्मण् द्यभिसमेताः=एकत्र बभूबुः=होते भये वैदेहस्य=विदेहदेश के राजा जनकस्य≃जनक को

विजिन्नासा=तीन जिज्ञामा बभूव=उत्पन्न होती भई कि एषाम्=इन उपस्थितमान्य ब्राह्मणानाम्=ब्राह्मणां के मध्य में काः≔कौन स्वित्=सा बाह्यय श्रनुचानतमः=श्रति बहावेत्ता है + प्रवंविचार्थ=ऐसा विचार करके पकैकस्याः=एक एक गौके श्रृङ्खयोः=दोनों सींगों में दश दश=दस दस

इति=ऐसी

पादाः=पाद सुवर्ण श्रावद्धाः=वँ**धे** बभूबुः=हुये गवाम् सहस्रम्=एक सहस्र गौत्रों को सः ह≔वह राजा

श्रवहरोध=एक जगह रखवाता

भावार्थ।

हे सीम्य ! एक समय मिथिलादेश के राजा जनकुने बहुदक्षिगा-नामक यज्ञको किया, उस यज्ञ में देश देशान्तर के ब्रह्मविद् ब्राह्मशा बुलाये गये, उसमें से विशेष करके कुरु श्रीर पञ्चालदेशके ब्राह्मण थे, ऐसा विचार कर राजा जनक ने इस यज्ञ का आरम्भ किया कि जो ब्रह्मवित् पुरुष इस यज्ञ निमित्त यहां एकत्र होंगे उनमें से कौन श्रात-श्रेष्ठ ब्रह्मवेत्ता निकलेगा, जो मेरे को उपदेश करने को योग्य होगा, ऐसी विशेष जिङ्डासा करके एक सहस्र नवीन दुग्धवती गौद्यों को सींगों में सुवर्ण के पत्र मह्वाकर दान निमित्त एकत्र करवाया ॥ १ ॥

मन्त्रः २

तान्होवाच ब्राह्मणा भगवन्तो यो वो ब्रह्मिष्टः स एता गा उद-जतामिति ते ह ब्राह्मणा न दप्रृषुरथ ह याज्ञवल्क्यः स्वमेव ब्रह्म-चारिणमुवाचैताः सोम्योदन सामश्रवा ३ इति ता होदाचकार ते ह ब्राह्मणारचुकुषुः कथं नो ब्रह्मिष्ठो ब्रुवीतेत्यथ ह जनकस्य वैदेहस्य होताऽश्वलो वभूव स हैनं पप्रच्छ त्वं नु खलु नो याज्ञवल्क्य ब्रह्मिष्ठोसी ३ इति स होवाच नमो वयं ब्रह्मिण्ठाय कुर्मो गोकामा एववय स्म इति तथ ह तत एव मण्डुं दधे होताश्वलः ॥

पदच्छेदः ।

तान्, ह, उवाच, ब्राह्मणाः, भगवन्तः, यः, वः, ब्रह्मिष्ठः, सः, पताः, गाः, उदजताम्, इति, ते, ह, ब्राह्मणाः, न, द्धृषुः, श्रथ, ह, याज्ञवल्कयः, स्त्रम्, एव, ब्रह्मचारिग्रम्, उवाच, एताः, सोम्य, उदज, सामश्रवाः, इति, ताः, ह, उदाचकार, ते, ह, ब्राह्मणाः, चुक्रुषुः, कथम्, नः, ब्रह्मिष्ठः, ब्रुवीत, इति, श्रथ, ह, जनकस्य, वैदेहस्य, होता, श्रश्वलः, वम्, सः, ह, एनम्, पप्रच्छ, त्वम्, नु, ख्रुनु, नः, याज्ञवल्क्य, ब्रह्मि, इति, सः, ह, उवाच, नमः, वयम्, ब्रह्मिष्ठाय, कुमैः, गोकामाः, एव, वयम्, समः, इति, तम्, ह, ततः, एव, प्रष्टुम्, द्धे, होता, श्रश्वलः।।

श्चन्वयः प

पदार्थाः स्रम्बयः

पदार्थाः

सः ह=वह प्रसिद्ध राजा जनक

तान्=डन झाझयों से इति=ऐसा उवाच=कहता भया कि

+ हे ब्राह्मणाः=हे ब्राह्मणो !

यूयम्=त्राप भगवन्तः=सबही पूज्य हैं

+ परन्तु=परन्तु

वः=चापलोगों में यः=जो ब्रह्मिष्ठः-ऋति बद्गितिष्ठ हो सः=वद प्ताः=इन

साः≔गैःकों को उद्जताम्=भपने घर ले जाब

+ यदा=जब ते≕वे ब्राह्मणाः=ब्राह्मण + गाः=उन गौधों को न≕नहीं द्रधृषुः=प्रहश करते भये श्रथ=तब ह≕पूज्य

याज्ञवल्क्यः=यःज्ञवल्क्य ने स्वम् ब्रह्म } = अपने एक ब्रह्मचारी चारियाम् } = शिष्यं से

> इति=ऐसा उवाच=कहा कि सामश्रवाः=हे सामवेदिन्, सोम्य=सौम्य !

+ त्वम्=तू पताः≔इन गौथ्रों को उदज=मेरे घर लेजा ह=तब

+ सः≔वह शिष्य एताः=उन गौश्रों की उदाश्वकार=गुरु के घर ले गया

> ह्र≕उस पर ते≕वे

ब्राह्मगाः=ब्राह्मग चुकुधुः≔क्रोध करते सये + च=ग्रौर इति=ऐसा + ऊचुः=कहते भये कि

नः=इम लोगों में ब्रह्मिष्ठः≔श्रधिक ब्रह्मवेत्ता ऋःस्म=हं में + त्यम्=त्ने

कथम्=कैसे ऐसा ब्रुवीत=अपने को कहा श्रथ=तिसके पश्चात्

ह=तब चैदेहस्य=विदेह देश का राजा जनकस्य=जनक का

ह=पूउय

श्चाश्चलाः=श्चरवत्तनामक ऋषि यः=जो

होता⇒यज्ञ में होता बभृय=हुत्रा था

सः=वह

एनम्≔इस याज्ञवहत्रय से ह≔स्पष्ट

पप्रच्छ=पूंछता भया कि याञ्चयत्क्य=हे याज्ञवस्क्य !

> नु=क्या खलु=निरचय करके त्वम्=तू

नः=हम लोगों में ब्रह्मिष्ठः=श्रतिब्राध्यष्ठ श्रसि=है

इति=ऐसा + श्रत्वा=तिरस्कार वाक्य को

सुन कर सः ह≔वह पृष्य याज्ञवस्क्य उवाच=कहता भया कि वयम्≕में

ब्रह्मिष्ठाय=वस्रवेत्तात्रों को नम:=नमस्कार

कुर्मः=करता हूं

घयम्=भें

एव=केवल बोकामाः स्मः≕गैत्रों की कामना

वासा हूं इति≕तब तम≕उस याज्ञबल्क्य से

भ्-उत पार्रापराय त भावार्थ । ततः एव=श्रीष्ठ प्रतिशा स्वी-कार करने के कारख अञ्चलः=अरवलनामक होता=होता प्रस्टुम्=प्रश्नों का करना

दश्च=श्रारम्भ किया

हें सीम्य ! अब राजा जनक न देखा कि सब ब्राह्मण एकत्र हो गये हैं तब उनसे बोले कि है माननीय, पूज्य, ब्राह्मणो ! आप कोगों में से जो श्चितिशय करके ब्रह्मविद् हों वे इन गौद्यों को श्चपने घर लेजायें, इतना कह कर चप होगये. यह सनकर सब ब्राह्मगा एक दूसरे की तरफ देखने लगे, पर उनमें से किसी को साहस न हुआ कि वह उन गौओं को अपने घर ले जाय, जब याज्ञवरक्य ने देखा कि कोई लेने को समर्थ नहीं होता है. तब उन्होंने अपने प्रिय शिष्य सामश्रवा से कहा कि हे प्रिय! तू इन गौओं को मेरे घर ले जा, ऐसा सुनकर वह उन सब गौओं को लेकर याज्ञवल्क्य के घर चला गया, यह देख कर समस्त ब्राह्मरा कद्ध हो एक-बारगी बोल उठे कि यह याज्ञवरक्य हम लोगों में अपने को अति ब्रह्मनिष्ठ श्रीर ब्रह्मविद् कैसे कह सकता है ? इसके पीछे राजा जनक का होता श्रास्वल नामक ब्राह्मशा क्रोधित होकर याज्ञवल्क्य से कहता है अरे याज्ञवल्क्य ! क्या तही सबसे श्रेष्ठ ब्रह्मवेत्ता है याज्ञवत्क्य ने कहा हे होता, श्राश्वल ! मैं श्रपने को ऐसा नहीं समभता हूं, मैं ब्रह्मवेत्ता पुरुषों का दास हूं, उनको मैं नमस्कार करता हूं, मैंने अपने को गौत्रों की कामनावाला आँर आप कोगों को गौओं की कामना से रहित पाकर गौओं को अपने घर भेज दिया है, ऐसा सुनकर श्राश्वल ने कहा यह बात नहीं तु श्रापने को श्रावश्य श्चिति श्रेष्ठ मानता है, मैं प्रश्न करता हूं, तू उनका उत्तर है ॥ २ ॥

मन्त्रः ३

याज्ञवल्क्येति होवाच यदिद्छ सर्वं मृत्युनाप्तछं सर्वे मृत्युनाभि-

पत्रं केन यजमानो मृत्योराप्तिमतिमुच्यत इति होत्रर्त्विजाग्निना वाचा वाग्वे यज्ञस्य होता तचेयं वाक्सोयमग्निः स होता स मुक्लिः सातिमुक्तिः ॥

पदच्छेदः ।

याज्ञवल्क्य, इति, ह, उवाच, यत्, इदम्, सर्वम्, मृत्युना, श्राप्तम्, सर्वम्, मृत्युना, श्रमिपन्नम्, केन, यजमानः, मृत्योः, श्राप्तिम्, श्रतिमु-च्यते, इति, होत्रा, भृत्विजा, श्राग्निना, वाचा, वाग्, वै, यझस्य, होता, तत्, या, इयम्, वाक्, सः, श्रयम्, श्रग्निः, सः, होता, सः, मुक्तिः, सा, श्र्वतिमुक्तिः ॥

ष्रस्वयः

पदार्थाः

इति=ऐसा शुत्वा≔सुन कर उवाच ह=श्रश्व कहता भयाकि

याञ्चलक्य≔हे याज्ञवल्क्य !

यत्=जो इदम्=यह

सर्वम्=सब पदार्थ यज्ञ बिषे दीखते हैं

तत्=वह मृत्युना=मृत्यु करके श्चाप्तम्=प्रस्त हैं

च=ग्रौर सर्वम्⇒सब पदार्थ

मृत्युना=मृत्यु करकेही आभिपन्नम्=वशीकृत हुये हैं

+पतइशायाम्=ऐसी हालत में केन=किस साधन करके

> यज्ञमानः=यजमान मृत्योः=मृत्यु के

श्चन्यः

पदार्थाः '

श्राप्तिम्=ब्रहोरात्ररूप पाश को श्रतिमुच्यते=उल्लङ्घन करसङ्गा है

+ यात्रवर∓यः=याज्ञवरक्य

+ उवाच=कहते भये कि

+ अश्वल=हे श्ररवतः! होत्रित्वजा=होत।रूप ऋत्विज्

श्चरिनना=ऋत्विज्रूप श्ररिन

वाचा=श्रीग्नरूप वाणी करके

+ सः=वह यजमान + मुच्यते=मृत्यु के पाश से

मुक्र होजाता है

+ हि≔क्योंकि

यञ्जस्य=यज्ञका होता=होताही

वाक्=वाक्य है

तत्≔इस जिये

इयम्≔यह या=जो

बाक्,≕वाक्य है

सः≔वही

श्चयम्≔यह श्चरिनः=श्चरिन है सः=वही होता=होताहै सः=वही होतारूपी श्चरिन सुक्कि:=पुक्ति है यानी मुक्ति का साथन है + च=भीर सा=वही मुक्ति यानी वही मुक्ति का साधन

^न अतिसुक्तिः≐अतिमुक्ति है

भावार्थ ।

हे याज्ञवल्क्य ! यज्ञ में जो कुछ वस्तु दिखाई देती हैं, वे सब मृत्यु से प्रसित हैं, ऐसी हालत में किस के द्वारा यजमान मृत्यु की पाश से छूट जाता है, इसके उत्तर में याज्ञवल्क्य कहते हैं कि होता नामक भृत्विज् की सहायता करके यजमान मृक्त होजाता है, वह होता ध्यग्निरूप है, ध्राग्निसे तात्पर्य वाक्य से हैं, यानी जब होता शुद्ध वाणी से उदात्त, ध्रातृत्तत्त, स्वरित स्वरों के साथ वैदिकमन्त्रों का उच्चारण यज्ञ विषे करता है तब देवता प्रसन्न होकर यजमान को स्वर्ग में ले जाते हैं, इस लिये हे ध्रश्वल ! वाणी ही यज्ञ का होता है, वही ध्राग्न है, ख्रोर वही मुक्ति का साथन है ॥ ३ ॥

मन्त्रः ४

याज्ञवल्क्येति होवाच यदिद्धं सर्वमहोरात्राभ्यामाप्तधं सर्वम-होरात्राभ्यामभिषकं केन यजमानोऽहोरात्रयोराप्तिमतिमुच्यत इत्य-ध्वर्युणार्त्विजा चक्षुषादित्येन चक्षुर्वे यज्ञस्याध्वर्युस्तद्यदिदं चक्षुः सोसावादित्यः सोध्वर्युः स मुक्तिः सातिमुक्तिः ॥

पदच्छेदः ।

याज्ञवल्क्य, इति, ह, उवाच, यत्, इदम्, सर्वम्, आहोशत्राभ्याम्, आप्तम्, सर्वम्, आहोरात्राभ्याम्, आभिपन्नम्, केत, यज्ञमानः, आहो-रात्रयोः, आप्तिम्, आतिसुक्त्यते, इति, आध्वर्युगा, ऋतिज्ञा, चक्षुवा, आदित्येन, चक्षुः, वै, यज्ञस्य, अध्वर्युः, तत्, यत्, इदम्, चक्षुः, सः, आसौ, आदित्यः, सः, अध्वर्युः, सः, सुक्तिः, सा, अतिसुक्तिः ॥

श्रन्वयः

पदार्थाः ग्रन्वयः + ग्राष्ट्रवलः=श्रवत ने इति=ऐसा उवाच=कहा कि याञ्चवल्यय=हे याज्ञवल्क्य! यत्≕जो इदम्≃यह सर्वम्=सब सामग्री + दृश्यते=यज्ञ विषे दिखाई देती हैं तस्≔वह सब श्रहोरात्राभ्याम्=दिन रात्रि करके आप्तम्=गृहीत हैं च=श्रीर सर्वम्=सर सामग्री **ऋहोरात्रा**भ्याम्=दिन रात्रि करके श्रभिपन्नम्=वशीकृत हुई हैं + एतइशायाम्=ऐसी हालत में केन=किस साधन करके यजमानः=यजमान श्रहोरात्रयोः=ग्रहोरात्र **के** श्चाप्तिम्=पाश को श्रतिमुच्यते=उल्लंबन करके मुक्र हो जाता है + याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + उवाच=उत्तर दिया कि + अश्वल=हे अश्वल!

ग्रध्वर्युगा=ग्रध्वर्युरूप

ऋत्विजा=ऋत्विज् चक्षुपा=ऋविज्रूप चक्षु आदित्येन=चक्षुरूप भादित्य करके + सः=वह जीव + मुच्यते=मुक्र होता है हि=क्योंकि यञ्चस्य=यज्ञ का **ग्र**ध्वर्युः=श्रध्वर्यु वै=ही चश्चः=नेत्र है यत्=जो इदम्=यह चक्षुः=नेत्र है सः=वही श्रसौ=यह द्यादित्यः=सूर्य है सः=वद्दी सूर्य श्चध्वर्युः=ग्रध्वर्यु हे सः=वही श्रध्वर्यु मुक्तिः=यजमान की मुक्ति का कारण है सा=वही

श्रतिमुक्तिः=उसकी श्रीतमुक्ति का

भी कारण है

पदार्थाः

भावार्थ।

प्रथम प्रश्न के उत्तर के पाने से समाधान होकर अध्यक्त होता सन्तृष्ट होता हुआ फिर प्रश्न करता है, हे बाझवल्क्य ! इस संसार में यावद् बस्तु हैं सब दिन श्रीर रात्रि से गृहीत हैं, ऐसी हालत में किस उपाय करके यंक्र का कर्ता यानी यजमान श्रहोगत्र के पाश की उल्लिक्षन करके मुक्त हो जाता है, इस के उत्तर में याज्ञवल्क्य कहते हैं कि हे श्रश्वल ! श्रश्वर्युनामक जो ऋत्विज् है, उसकी सहायता करके यज्ञ का कर्ता यजमान मुक्त हो जाता है, हे श्रश्वल ! श्रश्वर्यु के कहने से मेरा मतलब नेत्र श्रीर सूर्य है, जब यजमान नेत्र के द्वारा भली प्रकार विधिप्रके यज्ञ करता है, तब सूर्यदेवना श्रापनी रश्मियों द्वारा उस यज्ञकर्ता को श्रह्मलोक को ले जाकर श्रावागमन से गुक्त करदेता है, इस लिये यजमान का शुद्ध वश्रु ही श्रश्वर्यु है ॥ ४ ॥

मन्त्रः ५

याज्ञवल्वयेति होवाच यदिद् अ सर्व पूर्वपक्षापरपक्षाभ्यामाप्तध्य सर्व पूर्वपक्षापरपक्षाभ्यामभिषकं केन यजमानः पूर्वपक्षापरपक्षयो-राप्तिमतिमुच्यत इत्युद्धात्रार्त्विजा वायुना भाणेन प्राणो वै यज्ञस्यो-द्वाता तथोयं भाणः स वायुः स उद्गाता स मुक्तिः साऽति दुक्तिः ॥

पदच्छदः ।

याज्ञवल्क्य, इति, ह, उवाच, यत्, इत्म्, सर्वम्, पूर्वपक्षापरपक्षा-भ्याम्, आप्तम्, सर्वम्, पूर्वपक्षापरपक्षाभ्याम्, अभिपन्नम्, केन, यज-मानः, पूर्वपक्षापरपक्षयोः, आप्तिम्, अतिमुच्यते, इति, उद्गाता, ऋतिजा, वायुना, प्राग्येन, प्राग्यः, वे, यज्ञस्य, उद्गाता, तत्, यः, अध्म्, प्राग्यः, सः, वायुः, सः, उद्गाता, सः, मुक्तः, सा, अतिमुक्तिः ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

+ अश्वलः=अश्वल ने

तत=वह सब

+ उवाच=कहा कि याझबरुक्य=हे याझबरुक्य !

पूर्वपक्षापर- } =शुक्र कृष्ण पक्ष करके पक्षाभ्य।म् } आत्मम्=प्रस्त हैं

यत्=जो इदम्=यह सर्वम्=सब पशर्थ यज्ञ विषे हैं

+ च≓धौर सर्वम्≖वही सब

पूर्वपक्षांपर- (_शुक्र और कृष्य पक्ष पक्षाभ्याम् 🕽 करके र्ज्ञामपन्नम्=वशीकृत हुये **हैं** + पतद्शायाम्=ऐसी हासत में + याञ्चवल्क्य=हे याञ्चवल्क्य ! .यज्ञमानः=यजमान क्त=किस साधन करके पूर्वपक्षापर-पक्षयोः आप्तिम्=पाश को श्रातिमुच्यते=उल्लङ्गन करके मुक्र होता है + याज्ञचल्क्यः=याज्ञवस्क्य + उवाच=कहते भये कि + श्राष्ट्रवल=हे धश्वल ! उद्गात्रा=उद्गातारूपी ऋत्विजा=ऋत्विज् वायुना=ऋत्विज्रूप वायु प्रांग्न=वायुरूप प्राम करके सः≔वह यजमान

+ सुख्यते=मुक्त हो जाता है हि=क्योंकि यशस्य=यश का प्राणः≔प्राय ही उद्गाता=उद्गाता है तत्≔इस क्रिये य:=जो श्रयम्≔यह प्रागाः≔प्राग है सः≔वही वायुः=बाद्यवायु है सः=वही उद्गाता=उद्गाता है सः=बही मुक्तिः=यजमान के मुक्ति का साधन है सा=वही मुक्ति श्रतिमुक्तिः=श्रतिमुक्ति का भी साधन है

भावार्थ ।

अप्रविक्त होता फिर प्रश्न करता है, हे याझवत्क्य ! संसार में सब पदार्थ कृष्णा और शुक्तपक्ष करके व्याप्त हैं, ऐसी अवस्था में हे याझ-बन्क्य ! किस उपाय करके पूर्वपक्ष और अपरपक्ष की व्याप्ति से यझकर्ता सुक्त होता है, इस के उत्तर में याझवत्क्य कहते हैं कि हे अप्रविक्त ! उद्गातानामक ऋत्विज् की सहायता से यजमान दोनों पक्षों की व्याप्ति से झूट जाता है, मनुष्यसम्बन्धी उद्गाता से मेरा मतलब नहीं है, विक्त प्राण्वायु से और याझवायु से मतलब है, हे अप्रविक्त ! यह प्राण्वायु प्राण्वायु है, यही उद्गाता है, यही बाझ-बायु है, यही प्राण् है आसाही को इन्द्रियां भी कहते हैं, प्रत्येक इन्द्रियों का शुद्ध करना ही परम साधन है जब इन्द्रियां शुद्ध होजाती हैं तब इनकी सहायता करके यजमान का कल्यासा होता है ॥ ४ ॥

मन्त्रः ६

याज्ञवल्क्येति होवाच यदिदमन्तरिक्षमनारम्बर्णामव केनाऽऽक्र-मेण यजमानः स्वर्ग लोकमाक्रमत इति ब्रह्मणर्त्विजा मनसा चन्द्रेरा मनो वे यज्ञस्य ब्रह्मा तद्यदिदं मनः सोऽसौ चन्द्रः स ब्रह्मा स मुक्लिः सातिमुक्लिरित्यतिमोक्षा अथ संपदः ॥

पदच्छेदः ।

याज्ञवल्क्य, इति, ह, उवाच, यत्, इदम्, अन्तरिक्षम्, अनार-म्बर्ग्यम्, इव, केन, आक्रमेग्, यजमानः, स्वर्गम्, लोकम्, आक्रमने, इति, ब्रह्मग्रा, ऋत्विजा, मनसा, चन्द्रेग्ग्, मनः, वै, यज्ञस्य, ब्रह्मा, तत्, यत्, इदम्, मनः, सः, असौ, चन्द्रः, सः, ब्रह्मा, सः, मुक्तिः, सा, अतिमुक्तिः, इति, अतिमोक्षाः, अथ, संपदः ॥

स्वर्गम्=स्वर्ग

क्लोकम्=बोक को

पदार्थाः श्राक्रमते=प्राप्त होता है + याञ्चवल्क्यः=याज्ञवरूक्य ने + उवाच=कहा ब्रह्मग्रा=ब्रह्मारूप **ऋ**त्विजा=ऋत्विज् मनसा=ऋत्विज्रूप मन + च=श्रीर चन्द्रेगा=मनरूप चन्द्र करके आक्रमते⇒प्राप्त होता है हि=क्योंकि यञ्चस्य≔यजमान का मनः=मन वै=ही ब्रह्मा:=ब्रह्मा है तत्=इस ावये

यत्=जो इदम्=यह मनः=मन है सः=वही ऋसो=यह चश्दः=चन्द्रमा है सः=वही चन्द्रमा ऋहा=अझा है सः=वही बखा मुक्तिः=यजमान के मुक्ति का साधन है सा=नह मुक्ति श्रातिमुक्तिः=श्रातिमुक्ति है इति=इस प्रकार श्रातिमोक्षाः=यजमान तापत्रय से खूट जाता है श्राथ=श्रव श्रागे संपदः=पुरुवार्थक संपत्तियां + कथ्यन्ते=कडी जाती हैं

भावार्थ ।

अप्रवल फिर प्रश्न करता है, हे याज्ञवस्तय ! यह सामने का अन्त-रिक्ष यानी आकाश निराक्षम्य प्रतीत होता है, और स्वर्गलोक इससे अगो है, तब किसकी सहायता से यजमान स्वर्गलोक को पहुँचता है, इस पर याज्ञवस्त्रय कहते हैं कि हे अप्रवल ! ब्रह्मानामक अनुत्विज की सहायता से यजमान स्वर्गजोक को चढ़ता है, हे अप्रवल ! ब्रह्मा से भेरा मतलब मनरूपी चन्द्रमा से है, जब यजमान का कल्याग्य होगा तब केवल शुद्ध मन करकेही होगा यही मन यज्ञ का ब्रह्मा है, इस लिये जो यह मन है वही चन्द्रमा है, वही ब्रह्मा है, वह चन्द्रमाही मुक्ति का साधन है, इस लिये शुद्ध मनही यजमान को चन्द्रलोक में पहुँचा कर उसको अरयन्त सुखाभोगी बनाता है।। है।।

मन्त्रः ७

याज्ञवल्क्येति होवाच कितिभरयमद्यिगहींताऽध्मिन् यज्ञे करिष्य-तीति तिस्रिभिरिति कतमास्तास्तिस्र इति पुरोनुवाक्या च याज्या च शस्यैव तृतीया किं ताभिर्जयतीति यत्किश्चेदं प्राणभृदिति ।।

पदच्छेदः ।

याज्ञवल्क्य, इति, ह, उवाच, कतिभिः, श्रयम्, श्रयः, श्रृत्भिः, होता, श्रस्मिन्, युक्के, करिष्यति, इति, तिसृभिः, इति, कतमाः, ताः, तिस्रः, इति, पुरोनुवाक्या, च, याज्या, च, शस्या, एव, नृतीया, किम्, ताभिः, जयित, इति, यत्, किञ्च, इदम्, प्राग्णभृत्, इति ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

+ ऋश्वलः=धरवल ने इति=इस प्रकार उवाच=कहा कि याक्रवल्क्य=हे याज्ञवस्क्य ! श्रयम्≕यह होता≔होता श्रदा=श्राज कतिभिः=िकतनी त्रमुग्भिः=ऋचात्रों करके श्चार्मन्=इस संमुख यक्र≒यज्ञ में करिष्यति=स्तुति करता हुन्ना श्रपना कार्य करेगा इति=ऐसा सुन कर + याञ्चवत्क्यः=याज्ञवत्क्य ने उवाच=उत्तर दिया कि तिसुभिः=तीन ऋचाम्रां करके करेगा

> + श्राह=कहा ताः=वे

+ श्राश्वलः=श्रश्वल ने

कतमाः=कौनसी

तिस्त्रः≔तीन ऋचायें हैं

इति≔इस पर

+याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ उवाच=कहा

पुरोनुवाक्या=पहिली पुरोनुवाक्या है याज्या=तूसरी याज्या है

च=म्रोर

तृतीया=तीस्ररी शस्या=शस्या है

ततः=तिसके पीछे

+ ऋश्वतः≔ऋश्वत ने

+ पप्रच्छ=पूँछा

ताभिः=उन तीन ऋचाओं

करके

यज्ञमानः=यजमान किम्=किसको जयति=जीतता है इति=इस पर

+ याञ्चन्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ श्राह=कहा

यत् किञ्च=जितने इस जगत् में प्रात्यभृत=प्रायधारी हैं उन

सब को

भावार्थ ।

अधरवल फिर प्रश्न करता है, हे याझवल्क्य ! कितनी अनुचाओं से आज यह होता प्रस्तुत यज्ञ में हवनादि कार्य करेगा, उसके उत्तर में याझवल्क्य कहते हैं, तीन अनुचाओं करके होता अपना कार्य करेगा, फिर झरवल पूंद्धता है, हे याझवल्क्य ! वह तीन भृचायें कौन कौनसी हैं, इसके उत्तर में याझवल्क्य कहते हैं, हे झरवल ! पहिली भृचा पुरोनुवाक्या है, दूसरी याज्या है, तीसरी शस्या है, यानी जो भृचायें कार्यारम्भ के पहिले पढ़ी जाती हैं, वे पुरोनुवाक्या हैं, झौर जो भृचायें प्रत्येक विधि में पढ़ी जाती हैं, वे याज्या कही जाती हैं, झौर जो झन्त में स्तुतिनिमित्त बहुतसी भृचायें पढ़ी जाती हैं, वे शस्या कहलाती हैं, उन्हीं सब भृचाओं को पढ़ कर होता झाज यझ करेगा, उसको सुन कर फिर झरवल पूंद्धता हैं कि हे याझवल्क्य ! इन तीन प्रकार की भृचाओं से यजमान का क्या लाभ होताहै ? इस पर याझवल्क्य उत्तर देते हैं कि हे झरवल ! जगत् में जितने प्राग्ती हैं वे सब यजमान को प्राप्त होते हैं ।। ७ ॥

मन्त्रः ८

याज्ञवल्क्येति होवाच कत्यथमद्याध्वर्युरिस्मन् यज्ञ आहुतीर्होष्य'तीति तिस्न इति कतमास्तास्तिस्न इति या हुता उज्ज्वलन्ति या
हुता अतिनेदन्ते या हुता अधिशेरते किं ताभिर्जयतीति या हुता
चज्ज्वलन्ति देवलोकमेव ताभिर्जयति दीप्यत इव हि देवलोको
या हुता अतिनेदन्ते पितृलोकमेव ताभिर्जयत्यतीव हि पितृलोको
या हुता अधिशेरते मनुष्यलोकमेव ताभिर्जयत्यध इव हि
मनुष्यलोकः ॥

पदच्छेदः ।

याज्ञवत्क्य, इति, इ, उवाच, कित, अयम्, अद्य, आध्वर्युः, आस्मिन, यज्ञे, आहुतीः, होष्यिति, इति, तिस्रः, इति, कतमाः, ताः, तिस्रः, इति, याः, हुताः, ष्ठज्ञवलित, याः, हुताः, आतिनेदन्ते, याः, हुताः, अधिशेरते, किम्, तािभः, जयित, इति, याः, हुताः, उज्ज्वलित, देवलोकम्, एव, तािभः, जयित, दीप्यते, इव, हि, देवलोकः, याः, हुताः, आतिनेदन्ते, पिनृलोकम्, एव, तािभः, जयित, आतीव, हि, पिनृलोकम्, याः,

हुनाः, श्रिधिशेरते, मनुष्यज्ञोकम्, एव, ताभिः, जयति, श्रिषः, इव, हि, मनुष्यलोकः ॥

श्रन्वयः

पदार्थाः

ग्रन्वयः

पदार्थाः

न्वयः + ग्रश्वलः=श्रश्वत ने द्वित=इस प्रकार उवाच=पृंजा कि याज्ञवल्क्य=इं याज्ञवल्क्य ! ग्राह्म=श्राज

श्रवम्=यह श्रध्वर्युः=श्रध्वर्यु श्रस्मिन्=इस

यक्के=यज्ञमें कति=कितनी

श्चाहुतीः=श्चाहुनियां होष्यति=होम करेगा हति=इस पर

+ याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

श्राह=कहा तिस्त्रः≔्तीन श्राहुतियां होष्यति≕होम करेगा इति=तब

इति=तब सः=वह घरवत उदान्य=बोता

ताः=वे तिस्नः=तीन

कतमाः≔कौन प्राहुतियां हैं १ + याझवल्क्यः≔इसके उत्तर में

> याज्ञवस्क्य **कथ**यति=कहते **हैं**

ायात-म्बर याः≕जो हुताः=ग्राहुतियां कुण्ड में हाली हुई

उज्ज्वलन्ति=ऊपर को प्रज्वेबित होती हैं या:≕जे स्राहुतियां

हुनाः=कुरड में डाली हुई ऋतिनेदन्ते=ऋत्यन्त नाद करती हैं

याः=जो बाहुतियां हुताः=कृषड में डाली हुई बाधिकाने=कपर जाकर नीचे

श्चिशिरते=अपर जाकर नीचे को बैठ जाती हैं

+ इति=इस पर ग्रश्वलः=ग्रश्वल ने उचाच=पृंक्षा कि

ताभिः=उन श्राहुतियों करके + यजमानः=यजमान

किम्≕िकसको जयति≕जीतता है १ इति≕इस पर याइवरुक्य

कहते हैं

याः=जो हुताः=म्राहृतियां उउज्ज्वलन्ति=कपर ज्ववित होती हैं ताभिः=उन करके

तामः=७५ ५२५ देवलोकम्=देवलोक को एव=श्रवश्य

> जयति≕जीतता है हि=व्योंकि

देवलोकः=देवलोक
दीप्यते इय=प्रकाशवान् सा
दीखता है
याः=जा
हुताः=प्राहुतियां
अतिनेदन्तं=श्रति नाद करती हैं
ताभिः=डन श्राहुतियों करके
पिनृलोक म्=पिनृलोक को
प्य=श्रवश्य
ज्ञराति=जीतता है
दि=क्योंकि
पिनृलोक:=पिनृलोक

श्चर्ताव=श्रत्यन्त राज्य करते हैं
याः=जो
हुताः=श्चाहुतियां
श्चिशिरते=नीचे बैठती हैं
ताभिः=उन करके
मनुष्यलोकम्=मनुष्यलोक को
जयांत=जीतता है
हि=क्योंकि
श्चयम्=यह
मनुष्यलोकः=मनुष्यलोक
श्चयः=नीचे स्थित है

भावार्थ ।

पुनः श्राश्वल प्रश्न करना है कि हे याज्ञवल्क्य ! आज यह श्राध्वयुं किननी आहुतियां को इस यज्ञ विषे देगा ! इसके उत्तर में याज्ञवल्क्य कहते हैं कि तीन श्राहुतियां, फिर अप्रकल पृंद्धना है वे तीन श्राहुतियां कोन कीन स्ती हैं ! याज्ञवल्क्य कहते हैं पहिली आहुति वे हैं जो श्रानिकुगड में डालने पर अपर को प्रव्वलित होती हैं, दूमरी वे हैं जो श्रानिकुगड में डालने पर अस्वन्त नाद करती हैं, तीसरी वे हैं जो श्रानिकुगड में डालने पर नीचे को बैठनी हैं, इन तीन श्राहुतियों के साथ अपर कही हुई तीन प्रकार की श्राचाये पढ़ी जाती हैं, तिस पर अप्रवल फिर पृंद्धता है कि हे याज्ञवल्क्य ! उन आहुतियों करके यज्ञमान किस वस्तु को पाता है ! आप कहें, इस पर याज्ञवल्क्य समान्यान करते हैं कि हे अप्रवल ! जो आहुतियां उत्पर को प्रव्वलित होती हैं उन करके यज्ञमान देवलोक को जय करता है, क्योंकि देवलोक प्रकाशवान् है, इस कारगा देवलोक की प्रांत प्रव्वलित आहुतियों करके कही गई है, जो आहुतियां अपति नाद करती हैं उन करके यज्ञमान पितृलोक को जय करता है, क्योंकि वेवलोक प्रकाशवान् है, इस कारगा देवलोक की नाद करती हैं उन करके यज्ञमान पितृलोक को जय करता है, क्योंकि पितृलोक में पितर

पदार्थाः

कोग सुख के कारण उन्मत्त होकर नाद करते हैं, इस कारण पितृ-कोक की प्राप्ति नाद करती हुई झाहुतियों करके कही गई है, जो झाहुतियां नीचे को बैठती हैं, उन करके वह मनुष्यकोक को जय करता है, क्योंकि मनुष्यकोक नीचे है, इसी कारण इसकी प्राप्ति उन झाहुतियों करके कही गई है जो नीचे को जाती हैं ॥ □ ॥

मन्त्रः ६

याइवल्क्येति होवाच कतिभिरयमध ब्रह्मा यहं दक्षिणतो देवताभिर्गोपायतीत्येकयेति कतमा सैकेति मन एवेत्यनन्तं वै मनो-ऽनन्ता विश्वेदेवा अनन्तमेव स तेन लोकं जयति ॥

पदच्छेदः ।

याज्ञवल्क्य, इति, ह, उवाच, कितिभः, भ्रायम्, श्रद्धा, श्रद्धा, यज्ञम्, दक्षिगातः, देवताभिः, गोपायति, इति, एकया, इति, कतमा, सा. एका, इति, मनः, एव, इति, भ्रानन्तम्, वै, मनः, ध्रानन्ताः, विश्वेदेवाः, भ्रानन्तम्, एव, सः, तेन, लोकम्, जयति ॥

याञ्चवत्क्यः=याञ्चवक्कयः ने

 + उवाच=कद्दाः
 एकया=एक देवता करके
 ६ति=तव
 + सः=उसने
 पप्रच्छ=पूंछा कि
 सा=बद्द

इति≃इस पर

इति=इस पर

+ सः≕डसने + आहः ःश्तर दिया कि

एका=एक देवता है

मनः≔मन एव=ही तत्=वह देवता है वै=और मनः≔मन द्यनन्तम्=वृत्तिभेद करके अनन्त है + तस्य=उस मन के विश्वेदेवाः=विश्वेदेवता भी
श्रानन्ताः=धनन्त हैं
तेन⇒उसी कारण
सः=वह यजमान
श्रानन्तम्=धनन्त लोकम्=बोक को
एव=धवश्य
जयति⇒जीतता है

भावार्थ ।

अप्रवल फिर प्रश्न करता है कि हे याज्ञवल्क्य ! यह ब्रह्मा दक्षिण दिशा में बैठ कर कितने देवताओं से यज्ञ की रक्षा करेगा ? इसके उत्तर में याज्ञवल्क्य कहते हैं कि केवल एक देवता करके यज्ञ की रक्षा होती है, इस पर अप्रवल पूंछता है कि वह एक कौनसा देवता है ? याज्ञवल्क्य उत्तर देते हैं कि वह एक देवता मन है, मन यद्यपि एक है, पर उसकी वृत्तियां अमन्त हैं, इस कारण मनसम्बन्ध करके विश्वे-देवता भी अमन्त हैं, ऐसे मन करके यज्ञमान अमन्तलोकों को जीतता है।। है।।

मन्त्रः १०

याज्ञवस्क्योति होवाच कत्यवमधीद्गातास्थित् यज्ञे स्तोत्रिया स्तोष्यतीति तिस्र इति कतमास्तास्तिस्र इति पुरोनुवाक्या च याज्या च शस्यैव तृतीया कतमास्ता या ऋध्यात्मिनित माण एव पुरोनुवाक्यात्मी याज्या व्यानः शस्या किं तामिर्जयतीति पृथिवीलोकि सेथ पुरोनुवाक्यया जयत्यन्तरिक्षलोकं याज्यया चुलोकछ शस्यया तति ह होताश्वल उपरराम ॥

इति प्रथमं ब्राह्मणम् ॥ १ ॥ पदच्छेदः।

याज्ञवल्क्य, इति, ह, उवाच, कति, अयम्, अय, उद्गाता, अस्मिन, यहो, स्तोत्रियाः, स्तोष्यति, इति, तिस्रः, इति, कतमाः, ताः,

तिस्रः, इति, पुरोनुवाक्या, च, याज्या, च, शस्या, एव, तृतीया, कतमाः, ताः, याः, अध्यात्मम्, इति, प्राग्ताः, एव, पुरोनुवाक्या, अपानः, याज्या, व्यानः, शस्या, किम्, ताभिः, जयति, इति, पृथिवी-स्रोकम्, एव, पुगोनुवाक्यया, जयति, अन्तरिक्षस्रोकम्, याज्यया, द्युस्रो-कम्, शस्यया, ततः, ह, होता, अश्वकः, उपरशम ॥

अन्वयः

पदार्थाः । श्रन्वयः

पदार्थाः

+ अञ्चलः≔अश्वल ने इ।ति≕इस प्रकार उवाच=पृंद्धा कि याञ्चवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! श्रद्य=श्राज श्चयम्=यह उद्गाता=उद्गाता श्रस्मिन्=इस यक्षे=यज्ञ में कति=कितनी स्तोत्रियाः=ऋग्वेद श्रीर सामवेद की ऋचाओं की स्तोष्यति=स्तुति करेगा इति=इस पर + सः=उसने + उबाच=कहा कि तिस्रः≔तीन ऋचा इति≕तब किर पप्रच्छ=पृंछा कि ताः=वे कतमाः≔कौनसी तिस्त्रः≔तीन ऋचा हैं इति≔ऐसा + श्रुत्वा=सुन कर

+ याज्ञवल्क्यः⇒याज्ञवल्क्य ने + उवाच=कहा पुरोजुवाक्या=पुरोनुवाक्या पहिली ऋचा है च=श्रोर याज्या=दूसरी याज्या ऋचा है च≔ग्रौर तृतीया=तीसरी एच≕निश्चय करके श्रस्या=शस्या ऋचा है + पुनः प्रश्नः≕फिर प्रश्न है **कतमाः**≔कौनसी ताः≔वेऋचाहें ? याः=जो श्रध्यात्मम्=श्रध्यात्मविषा से + सम्बन्धनः=सम्बन्ध रखती हैं + सः≔याज्ञवल्क्य ने + उवाच=उत्तर दिया कि प्रागुः=प्राग् पव⇒ही पुरोनुवाक्या=पुरोनुकाक्या ऋषा है

अपानः=श्रपान

ड्य र सः=व्यान

याज्या=याज्या ऋचा है

श्रस्या=शस्या ख्र्या है
+ पुनः प्रश्नः=किर प्रश्न है कि
ताभिः=तीन श्र्या करके
+ यज्ञमानः=थनमान
किम्=किसकी
जयति=जीतता है
हति=इस पर
+ याझ्यल्स्यः=याञ्चयल्स्य ने
उवाच्च=उत्तर दिया कि
पुरोजुवाक्यया=पुरोजुवाक्या श्रदा
करके
पृथिवीलोकम्=प्रथिवीलोक को
+ सः=वह यजमान

प्य=सवस्य
जयित=जीतता है
याज्यया=वाज्या ऋषा करके
अन्तरिक्षम्=धन्तरिक्षकोक को
+ जयित=जीतता है
शस्यया=रास्या ऋचा करके
युलाकम्=स्वर्गकोक को
+ जयित=जीतता है
ततः ह=तक
होतः=होता
अञ्चलः=अरवल
उपरराम=चुप होगया

भावार्थ ।

अप्रवक्त फिर प्रश्न करता है कि हे याज्ञवल्क्य ! इस यज्ञ विषे आज उद्गातानामक भृत्विज् किनने स्तीत्र पढ़ेगा, तब याज्ञवल्क्य उसके उत्तर में कहते हैं कि जो अध्यातमसम्बन्धी है वह तीन स्तीत्र पढ़ेगा, तब आप्रवक्त पृंद्धता है कि वह तीन स्तीत्र कीन से हैं ! याज्ञवल्क्य उत्तर देते हैं प्रथम पुरोनुवाक्या भृचा है, दूसरी याज्यानामक भृचा है, तीसरी शस्यानामक भृचा है, फिर अप्रवक्त पृंद्धता है कि हे याज्ञवल्क्य ! पुगोनुवाक्या आदि भृचाओं से आपका क्या तात्पर्य है ! इसके उत्तर में याज्ञवल्क्य कहते हैं कि पुरोनुवाक्या भृचा से मेरा मतक्षव प्राग्यवायु से है, याज्या भृचा से मेरा मतक्षव प्राग्यवायु से है, याज्या भृचा से मेरा मतक्षव अपानवायु से है, शस्या भृचा से मेरा मतक्षव ज्यानवायु से है, श्वाच्या भृचा से मेरा मतक्षव उ्याज्ञवल्क्य ! याज्यवल्क्य उत्तर देते हैं कि, हे अप्रवक्त ! पुरोनुवाक्या भृचा से यजमान पृथ्वीकोक को जीतता है, याज्या मृचा करके वह से यजमान पृथ्वीकोक को जीतता है, याज्या मृचा करके वह

अपन्तरिक्षलोक को जीतता है, और शस्या अनुचा करके होता है, ऐसा सुन कर अश्वल चुप होगया ॥ १० ॥ इति प्रथमं ब्राह्मग्राम् ॥ १ ॥

प्राप्त

श्रंथ द्वितीयं ब्राह्मणम् ।

मन्त्रः १

श्चथ हैनं जारत्कारव श्चार्त्तभागः पप्रच्छ याज्ञवल्क्येति होवाच कति ग्रहाः कत्यातिग्रहा इति अष्टी ग्रहा अष्टावितग्रहा इति ये तेऽष्टी ग्रहा ऋष्टावतिग्रहाः कतमे त इति ॥

पदच्छेदः ।

झथ, ह, एनम्, जागत्कारवः, आर्तभागः, पप्रन्छ, याज्ञवल्क्य, इति, ह, उवाच, कति, प्रहाः, कति, ऋतिग्रहाः, इति, ऋष्टो, ग्रहाः, ब्रष्टो, अतिप्रहाः, इति, ये, ते, अष्टो, प्रहाः, श्रप्टो, अतिप्रहाः, कतमे, ते, इति ॥ पदार्थाः

श्चन्वयः

पदार्थाः

अथ ह=धरवल के चुप होने

एनम् ह=उस प्रसिद्ध याज्ञवस्वय से

जरत्कारवः=जरत्कारुके वंश का श्चार्त्तभागः=श्चार्त्तभाग

इति पप्रच्छ=ऐसा पृद्धता भया कि याञ्चलक्य=हे याज्ञवल्क्य !

कति=कितने ग्रहाः=पह हैं ?

+ ख≕ग्रीर

कति=कितने

श्चन्वयः

श्चतिग्रहाः=ग्रतिग्रह हैं ? इति=इस पर

ह≕साफ्र साफ्र

याञ्चयत्क्यः=याञ्चवस्क्यने उवाच≕कहा

ग्रहाः=प्रह हैं + च=भौर श्चाष्ट्री=श्चाठ श्रतिप्रहाः=श्रतिप्रह

इति=पेसा

+ श्रुत्वा=सुन कर

+ पुनः प्रश्नः=फिर प्रश्न किया कि ये=जो ते=चे श्रष्टी=श्राठ ग्रहाः=ग्रह हैं + च=भीर द्राष्ट्री≔षाठ आतिग्रहाः=ष्रातिग्रह हैं कतमे=उनमें से किसने ते=वे ग्रह भौर किसने स्रतिग्रह हैं

भावार्थ ।

जब अरवल चुप होगया, उसके पीछे जरत्कार के पुत्र आर्त्तभाग ने प्रश्न करना आरम्भ किया, यह कहता हुआ कि हे याझवल्क्य ! प्रह कितने हैं ? श्रीर आतिप्रह कितने हैं ? याझवल्क्य उत्तर देते हैं कि आठ प्रह हैं, और आठही अतिप्रह हैं, पुनः आर्त्तभाग पूंछता है हे याझवल्क्य ! वे आठ प्रह कौन कौन हैं, और आठ अतिप्रह कौन कौन हैं।। १।।

मन्त्रः २

प्राणो वै ग्रहः सोपानेनातिग्राहेण गृहीतोपानेन हि गन्धा-ञ्जिघति ॥

पदच्छेदः ।

प्रार्गः, वै, प्रहः, सः, श्रपानेन, श्रतिप्राहेग्ग, गृहीतः, श्रपानेन, हि, गन्धान्, जिन्नति ॥

ί

प्रन्वयः पदार्थाः श्रपानेन=श्रपानवायु करके गृहीतः=गृहीत है हि=स्योंकि + स्नोकः≔जोक श्रपानेन≈श्रपानवायु करके गन्धान्⇒गन्धों को जिन्नति≕स्थता है

भावार्थ ।

आतिभाग के प्रश्न को सुन कर याज्ञवल्क्य कहते हैं कि हे आर्त-भाग ! उन आठ प्रहों में से प्रथम प्रह आयोन्द्रिय है, और इसका विषय सुगन्धी और दुर्गन्धी अविग्रह हैं, इस किये वह आयाल्प इन्द्रिय प्रह विषयरूप अतिग्रह करके गृहीत हैं, क्योंकि अपानवायु करके आयोन्द्रिय नाना प्रकार के गन्धों को ग्रह्ण करता है, याज्ञवल्क्य के कहने का तात्पर्य यह है कि आठ प्रह यानी इन्द्रियां हैं, और आठही उनके आतिग्रह हैं, यानी विषय हैं और चूंकि विषय इन्द्रियों को दबा लेते हैं, इसिलये इन्द्रियों की अपेक्षा विषय बलवान होते हैं, और यदी कारण है कि विषयों का नाम अतिग्रह हैं ॥ २ ॥

मन्त्रः ३

वाग्वैग्रहः स नाम्नातिग्राहेण गृहीतोवाचा हि नामान्यभि-वदति ॥

पदच्छेदः ।

वाक्, वै, ग्रहः, सः, नाम्ना, अतिप्राहेगा, गृहीतः, वाचा, हि, नामानि, श्रमिवदति ॥

ग्रन्वयः पदार्थाः श्रन्वयः

यः पदार्थाः गृहीतः=गृहीत है

व¦क्=वागिन्द्रिय वे=ही

हि=क्योंकि

ग्रहः=प्रह है स्यः=वही वागिन्द्रियरूपप्रह + लें(कः=कोक वान्ता=वासी करके

नाम्ना=नामरूप श्रतिग्राहेगा=त्रितग्रह यानी

नामानि=नामों को

विषय स

्रा अभिवद्ति=कहता है

भावार्थ।

वागिन्द्रिय ग्रह है, वह वागिन्द्रिय बागी ऋौर नाम ऋतिप्रह से गृहीत है, क्योंकि जितने नाम हैं वे सब बागी के प्रकाशक हैं, और वास्ती वागिन्द्रिय का प्रकाशक है, वरीर नाम के वास्ती की सिद्धि नहीं होसकती है, जैसे किसी वस्तु की सिद्धि वरीर नाम के नहीं होसकती है. यह घट है, यह पट है, यह ब्रह्म है, यह जगत् है, इन सबकी सिद्धि नाम करके ही होसकती है, यदि नाम न हो तो किसी वस्तु की सिद्धि कभी नहीं होसकती है, और यदि वास्ती न होय तो वागिन्द्रिय यानी मुख की सिद्धि नहीं होसकती है, इस किये वागिन्द्रिय से वास्ती श्रेष्ठ है, श्रोर वास्ती से नाम श्रेष्ठ है, वागिन्द्रिय को प्रह (बन्धक) इस कारसा कहा है कि वह पुरुषों को बांधती है, क्योंकि संसार में श्रमस्यादिक श्रम्भिक कहेजाते हैं, यदि वागिन्द्रिय से सत्यादिक श्रम्भिक कहा जाय तो वही वागिन्द्रिय उस कहनेवाले को मुक्ति का कारसा होसकती है, यहां पर संसार के ज्यवहार की श्रम्भिकता के कारसा वागिन्द्रिय को प्रह कहा है।। ३।।

मन्त्रः ४

जिह्ना ने ग्रहः स रसेनातिग्राहेरा ग्रहीतो जिह्नया हि रसा-न्विजानाति ॥

पदच्छेदः ।

जिह्ना, वै, ग्रहः, सः, रसेन, श्रातिप्राहेगा, गृहीतः, जिह्नया, हि, रसान्, विजानाति ॥

श्चन्वयः पदार्थाः श्च जिह्ना=जीम वै=ही श्रहः=श्रह है सः=वही जीम रसेन=रसरूप अतिप्राहेण्=श्चतिग्रह करके यानी विषय करके

श्चन्वयः प्रदार्थाः गृदीतः=गृहीत है . हि=क्योंकि + सोकः=कोक जिह्नया=जीभही करके रसान्=रसों को विजानाति≕जानता है

भावार्थ ।

जीभ ग्रह है, उपीर इसका विषय रस अतिप्र है, रस करके ही जीभ गृहीत है, क्यों कि जीभसेही विविध प्रकार के रसों का ज्ञान होता है, यह जीभ अनेक प्रकार के रस यानी विषयसम्बन्धी स्वाद को ग्रह्मण करती है, इस जिये जीवके बन्धन का हेतु है। ४॥

मन्त्रः ५

चक्षुर्वे ग्रहः स रूपेणातिग्राहेण गृहीतश्चक्षुपा हि रूपाणि पश्यति ।। पदच्छेदः ।

चक्षुः, वै, ब्रहः, सः, रूपेग्, अस्तिब्राहेग्ग्, गृहीतः, चक्षुषा, हि, रूपाग्ग्, पश्यति ॥

श्चन्ययः

ं पदार्थाः

ग्रेहः=प्रह**हे** सः=वहीं नेव

चक्षः=नेत्र

रूपेगा=रूपस्त्ररूप स्रतित्राहेगा=स्रतिग्रह यानी

=अ्रातग्रहयान विषय करके - घन्वयः

पदार्थाः

गृहीतः=गृहीत हैं हि≔क्योंकि

+ लोकः≃लोक

चञ्जुषा=नेत्र करके ही रूपार्शा=रूपें। को

पश्यति=देखता है

भावार्थ ।

नेत्र निश्चय करके बह है, झौर रूप उसका अतिब्रह है, रूप करके नेत्र गृहीत है, क्योंकि पुरुष चक्षु करकेही अनेक प्रकार के रूपों को देखता है, चूंकि रूप करके पुरुष बन्धन में पड़ता है, इस कारगा चक्षु को ब्रह यानी बांधनेवाला कहा है ॥ ४ ॥

मन्त्रः ६

श्रोत्रं वै प्रहः स शब्देनातिष्राहेण गृहीतः श्रोत्रेण हि शब्दा-व्याणित ॥

पदच्छेदः ।

श्रोत्रम्, वै, ब्रहः, सः, शब्देन, श्रविब्राहेगा, गृहीतः, श्रोत्रेगा, हि, शब्दान्, शृशोति ॥

पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः श्चन्वयः

> गृहीतः=गृहीत है श्रोत्रम=कर्ण हि=क्योंकि ग्रहः≔प्रह है सः≔वही कर्ण + लोकः≕लोक श्रांत्रेग=कान करके शब्देन≔शब्दरूप

श्रतिग्राहेगा=श्रतिग्रह यानी **श**ब्दान्=शब्दों को श्वराति=सुनता है

विषय करके

भावार्थ ।

श्रोत्रेन्द्रिय निश्चय करके ग्रह है, शब्द अतिग्रह है, क्योंकि शब्द करकेही श्रोत्रेन्द्रिय गृहीत है, चूंकि विषयसम्बन्धी शब्द पुरुष को बांधता है, इस कारणा श्रोत्रेन्द्रिय को ग्रह यानी बांधनेवाला कहा है ॥ ६ ॥

मन्त्रः ७

मनो वै ग्रहः स कामेनातिग्राहेण गृहीतो मनसा हि कामा-न्कामयते ॥

पदच्छेदः ।

मनः, वै, ब्रहः, सः, कामेन, श्रातिब्राहेशा, गृहीतः, मनसा, हि, कामान्, कामयते ॥

श्चान्य थः पदार्थाः श्चान्वयः पदार्थाः

> ग्रहीतः=गृहीत है मनः=मन वं≕िनश्चय करके हि=क्योंकि ग्रहः=प्रह है + लोकः≕लोक सः=वही मन मनसा=मन करकेडी

कामेन≕कामनारूप कामान्=इच्छित पदार्थों की

अतिग्राहेण=श्रांतग्रह यानी

विषय करके कामयते=इच्छा करता है

भागार्थ ।

मन इन्द्रिय ग्रह है, कामरूप उसका आतिग्रह है, क्योंकि कामना करके मन गृहीत होरहा है, यानी मनसही अनेक कामना पुरुष करता है, चूंकि विषय की कामना में पुरुष फँसा रहता है, इस कारगा मन को ग्रह यानी बांधनेवाला कहा है ॥ ७ ॥

मन्त्रः ८

हस्तो वै ग्रहः स कर्मणातिग्राहेण गृहीतो हस्ताभ्या छ हि कर्म करोति ॥

पदच्छेदः ।

हस्ती, वै, प्रहः, सः, कर्मणा, श्रातिप्राहेण, गृहीतः, हस्ताभ्याम्, हि, कर्म, करोति ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः बै=निश्चय करके हस्तौ≃दोनों हाथ ग्रहः≔प्रह हैं सः≔वही दोनों हाथ कर्मगा=कर्मरूपी श्रतिब्राहेण=श्रतिब्रह यानी विषय करके

ग्रन्वयः

पदार्थाः

गृहीतः=गृहीत है हि=क्योंकि + लोकः=लोक हस्ताभ्याम्=हाथों से करोति=करता है

भावार्थ ।

दोनों हाथ प्रह है, ऋौर कर्म उसका ऋतिप्रह है, दोनों हाथ कर्म करके गृहीत हैं, क्योंकि हाथों करके ही पुरुष कर्म को करता है, चूंकि आधिक करके हाथ करकेही बुरे कर्म किये जाते हैं, जिससे कि कर्मकर्त्ता बन्धन में पड़ता है, इसी लिये दोनों हाथों को प्रह यानी बांधनेवाला कहा है।। ⊏।।

मन्त्रः ६

त्वग्वै ग्रहः स स्पर्शेनातिग्राहेख गृहीतस्त्वचा हि स्पर्शान वेद-यत इत्येतेऽष्टी ग्रहा ऋष्टावातिग्रहाः ॥

पदच्छेदः ।

त्वक्, वै, ब्रहः, सः, स्पर्शेन, श्चातिग्राहेगा, गृहीतः, त्वचा, हि, स्पर्शान्, वेदयते, इति, एते, श्रष्टो, ब्रहाः, श्रष्टो, श्चातिग्रहाः ॥ श्चन्वयः पदार्थाः | श्चन्वयः पदार्थाः

यः पदार्था त्सक्=स्विगिन्द्रय व≔निश्चय करके प्रहः≔प्रह ह स्यः≔वही त्वप्रूप प्रह स्पर्शेन=स्पर्शरूप

श्चतिब्राहण्=श्चातिब्रह करके गृहीतः=गृहीत है हि=क्योंकि

> ₹पश्(न्=श्रनेक प्रकार के स्पश्धें को

त्वचा=स्वचा करके ही

+ पुरुषः=पुरुष

वंदयते=जानता है इति=इस प्रकार

प्ते≈बे श्रष्टी=श्राठ

अह।=आ**०** ...

प्रहाः≔प्रह हैं

+ च=श्रौर श्राष्ट्री=श्राट

श्रातिग्रहाः=श्रतिग्रह हैं

भावार्थ ।

त्वक् इन्द्रिय प्रह है, आरे स्पर्शरूप उसका आविष्ठह है, त्विग-न्द्रिय स्पर्श से गृहीत है, क्वेंकि त्विगिन्द्रिय से ही विविध प्रकार के स्पर्शों को पुरुष जानता है, चूंकि त्विगिन्द्रिय द्वारा आनेक प्रकार के स्पर्श को भोगता है, और भेग कर बन्धन में पड़ता है, इस जिये त्विगिन्द्रिय को ग्रह यानी बांबनेवाला कहा है ॥ ६ ॥

मन्त्रः १०

याज्ञवल्क्येति होवाच यदिद्धं सर्व मृत्योरत्नं कास्वित्सा देवता यस्या मृत्युरत्नमित्यग्निर्वे मृत्युः सोऽपामन्नमपपुनर्मृत्युं जयति ॥ पवच्छवः।

याज्ञवल्क्य, इति, ह, उवाच, यत्, इदम्, सर्वम्, मृत्योः, अन्नम्, का, स्वित्, सा, देवता, यस्याः, मृःयुः, अन्नम्, इति, अन्निः, वे, मृत्युः, सः, अपाम्, श्रनम्, अप, पुनः, मृत्युम्, जयति ॥

पदार्थाः श्चन्यः । + अर्तिभागः=प्रार्तभाग ने इति=इस प्रकार उवाच=कहा याश्चवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! यत्≕जो इदम्⊐यह सर्वम्=सब वस्तु दष्ट व श्रदष्ट स्थृत व सृक्ष्म है + तत् सर्वम्≔वह सब मृत्योः=प्रह श्रतिग्रहरूप मृत्यु का श्रन्नम्=श्राहार है का=कौन स्वित्≕सा सा=वह देवता=देवता है यस्याः=जिसका श्रन्नम्=ब्राहार

पदार्थाः श्चन्ययः मृत्युः≔मृत्यु है इति≔ऐसा + श्रुत्वा=सुन कर + याझवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + उवाच=उत्तर दिया कि श्रारितः=ग्रारित वै=निरचय करके मृत्युः=उसका सृत्यु है सः=वह श्राग्नि श्रपाम्≕जल का श्रन्नम्=भक्ष्य है + यः=जो पुरुष + इति=इस प्रकार विज्ञान।ति=जानता है सः≔वह युनः=फिर मृत्युम्=मृत्यु को

श्चपजयि≃जीत लेता है

भावार्थ ।

जरत्कारु के पुत्र झार्तभाग ने देखा कि याज्ञवत्क्य का उत्तर ठीक है तब द्वितीय प्रश्न इस प्रकार करता भया कि जो यह सब दृष्ट झटष्ट अथवा मूर्त अथवा स्थूल सूक्ष्म दिखाई दता है वह सब ग्रह और अपित्रहरूप मृत्यु का आहार है तब वह कौन देवता है ? जिसका आहार ग्रह आतिग्रहरूप मृत्यु है, याज्ञवत्क्य महाराज उत्तर देते हैं कि वह देवता आग्नि है, वह आग्नि जल का भक्ष्य है, जो मनुष्य इस विज्ञान को जानता है, वह मृत्यु का जय करता है, याज्ञवत्क्य महाराज ने जो ऐसा दृष्टान्त देका मृत्यु का मृत्यु बताया है उससे उनका मतलब यह है कि संसार में जितने पदार्थ हैं सब मृत्यु से ग्रसित हैं, जो मृत्यु से

प्रसित नहीं है उसका अपन्वेषणा करना उचित है वही ब्रह्म ज्ञान का साधन है, वही ब्रह्म ज्ञान ईश्वर का साक्षात् कराता है और तभी पुरुष सब दुःखों से छूट जाता है।। १०।।

मन्त्रः ११

याज्ञवल्क्येति होवाच यत्रायं पुरुषो भ्रियत उदस्मात्पाणाः क्राम-न्त्याहो ३ नेति नेति होवाच याज्ञवल्क्योऽत्रैव समवनीयन्ते स उच्छ्व-यत्याध्मायत्याध्मातो मृतः शेते ॥

पदच्छेदः ।

याज्ञवल्क्य, इति, ह, उत्ताच, यत्र, अयम्, पुरुषः, म्रियते, उत्, अस्मात्, प्राणाः, क्रामन्ति, आहो, न, इति, न, इति, ह, उवाच, याज्ञवल्क्यः, अत्र, एव, सम्, अव, नीयन्ते, सः, उच्छ्कुयति, आध्मा-यति, आध्मातः, मृतः, शेते ।।

श्चन्वयः

पदार्थाः श्रान्वयः + श्राक्तिभागः=श्रातंभाग ने इति=इस प्रकार उवाच=कहा कि याञ्चवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! यत्र≕जिस समय श्रयम्=यह पुरुषः=ज्ञानी पृरुष भ्रियते=मरता है + तद्ा≔तव श्रस्मात्=इस मरे हुये पुरुष से प्राणाः≔प्राणादि इन्द्रियां उत्≔ऊपर को कामन्ति=जाती हैं **श्चा**हो=श्रथवा

न≕नहीं

इति=ऐसा
+ मम प्रश्नः=मेरा प्रश्न है
+ याझवल्क्यः=याझवल्क्य ने
ह=स्पष्ट
इति=ऐसा
उवाच=उत्तर दिया कि
न=नहीं
+ क्रामित्=अपर को जाती हैं
श्रत्र प्रच=यहीं पर यानी
उसी मही
समवनीयम्त=जीन होजाती हैं
+ च=मीर
सः=वह झानी पृरुष
उच्छ्रयति=अर्थ्न को रवास केने
कारता है

पदार्थाः

पुनः≔किर श्चाध्मायति=खरखराहट का शब्द करने लगता है ततः≕तिसके पीछे

आध्मातः=वाय से धौंकनी की तरह फूला हुआ मृतः≃मरा हुन्ना शते≔सोता है

भावार्थ ।

श्रार्त्तभाग फिर द्वितीय प्रश्न करता है, हे याज्ञवल्क्य ! जब यह ज्ञानी पुरुष ग्रह त्र्यतिग्रहरूप मृत्यु से छूट कर मरता है तब उस मरे हुये पुरुष से सब इन्द्रियां वासना सहित ऊपर को जाती हैं या नहीं ? याज्ञवल्क्य ने उत्तर में कहा कि इन्द्रियां ऊपर को नहीं जाती हैं उसी में लीन होजाती हैं, ऋौर वह ज्ञानी आनन्दपूर्वक देह को त्यागता है, त्रौर सोया हुआ सा प्रतीत होताहै ॥ ११ ॥

मन्त्रः १२

याज्ञवल्क्येति होवाच यत्रायं पुरुषो भ्रियते किमेनं न जहातीति नामेत्यनन्तं वै नामानन्ता विश्वेदेवा अनन्तमेव स तेन लोकं जयति ॥

पदच्छेदः ।

याज्ञवल्क्य, इति, ह, खवाच, यत्र, अप्रयम्, पुरुषः, म्रियते, किम्, एनम्, न, जहाति, इति, नाम, इति, श्रनन्तम्, वै, नाम, श्रनन्ताः, बिश्वे, देवा:, अनन्तम्, एव, सः, तन, लोकम्, जयति ॥

पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः ग्रन्वग्रः आर्त्तभागः=ग्रार्त्तभाग ने + तर्हि=तब किम्=कौनसा पदार्थ इति=इस प्रकार एनम्=इस विद्वान् को उवाच=कहा कि याञ्चयन्त्रय=हे याज्ञवस्क्य ! स≕नहीं यत्र≕ितस समय जहाति≕यागता है इति=ऐसा श्चयम्=यह + मम प्रश्नः=मेरा प्रश्न है पुरुषः=ज्ञानी पुरुष भ्रियते=मरता है

+ याञ्चलक्यः=याजवस्मय ने

+ उदाच्चः उत्तर दिया कि
नाम=नाम

+ न जहाति=नहीं त्यागता है
नाम=नाम
अनन्तम्=अनन्त है
विश्वेरे वाः≕विश्वेरेव
अनन्ताः=अनन्त है

तेन≃ितस कारख सः≔यह पुरूष अनन्तम्≔िनस्य ब्रह्म लोकम्=लोक को जयति=जीतता है यानी प्राप्त होताहे

भावार्थ ।

ध्रार्तभाग सम्बोधन करके फिर पृंद्धता है कि हे याझवरक्य ! जब झानी पुरुष मर जाना है, तब क्या छोड़ जाना है ? इसके उत्तर में याझवरक्य महाराज कहते हैं कि अपने पीछे अपना नाम छोड़ जाता है, यानी जो जो श्रेष्ट कार्य करता है जिस के कारगा वह प्रसिद्ध होजाता है, उस अपने नाम को छोड़ जाता है, जैसे पागिति अपि की बनाई अप्टाध्याथी के पठन पाठन का प्रचार रहने से पागिति का नाम अभीतक चला जाता है, इसी प्रकार झानी पुरुष के मरने के पीछे उसका नाम बना रहता है, चूंकि नाम अनन्त हैं और लोक भी अनन्त हैं, और उनके अभिमानी देवता भी अनन्त हैं, इस लिये वह विद्वान जिसने अनेक ग्रुभ कार्यों करके अनेक नाम अपने पीछे छोड़ा है, उन नामों करके अनेक देवताओं के लोकों के अविनाशी कोक को वह जीतता है यानी प्राप्त होताहै ॥ १२ ॥

मन्त्रः १३

याज्ञवल्क्येति होवाच यत्रास्य पुरुषस्य मृतस्याग्नि वागप्येति वातं प्राणश्चश्चरादित्यं मनश्चन्द्रं दिशः श्रोत्रं पृथिवी छ शरीरमा-काशमात्मोषधीलोंमानि वनस्पतीन्केशा अप्सु लोहितं च रेतश्च निधीयते कायं तदा पुरुषो भवतीत्याहर सोम्य हस्तमार्चभागावामे-वैतस्य वेदिष्यावो नावेतत्सजन इति तौ होत्क्रम्य मन्त्रयाञ्चकाते तौ ह यद्चतुः कर्म हैंब तद्चतुरथ यत्प्रशश्छसतुःकर्म हैव तत्प्रशश्छ सतुः पुष्यो ने पुष्येन कर्मणा भवति पापः पापेनेति ततो ह जार-त्कारव त्र्यार्चभाग उपरराम ॥

इति द्वितीयं ब्राह्मणम् ॥ २ ॥

पदच्छेदः ।

याज्ञवल्क्य, इति, ह, उवाच, यत्र, श्रस्य, पुरुषस्य, मृतस्य, श्रिन्म्, वाक्, श्रप्येति, वातम्, प्राग्तः, चक्षुः, श्रादित्यम्, मनः, चन्द्रम्, दिशः, श्रोत्रम्, पृथिवीम्, शरीरम्, श्राकाशम्, श्रात्मा, श्रोपधीः, लोमानि, वनस्पतीन्, केशाः, श्रप्तु, लोहितम्, च, रेतः, च, निधीयते, क, श्रयम्, तदा, पुरुषः, भवति, इति, श्राह्म, सोम्य, हस्तम्, श्रात्तमाग, श्रावःम्, एव, एतस्य, वेदिष्यावः, नौ, एतत्, सजने, इति, तौ, ह, उत्क्रम्य, मन्त्रयाश्वकाते, तौ, ह, यत्, उत्चतुः, कमं, ह, एव, तत्, उत्चतुः, श्रथ, यत्, प्रशशंसतुः, पुर्यः, वै, पुर्येन, कर्मग्रा, भवति, पापः, पापेन, इति, ततः, ह, जारत्कारवः, श्रात्तभागः, उपरराम ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः

श्रन्वयः पदाध
+ श्रार्त्तभागः=श्रार्त्तभाग ने

इति=इस प्रकार
उवाच=कहा
याञ्चवरुक्य=हे याज्ञवरुक्य !

यश्र=जिस काल में
श्रस्य=इस
मृतस्य=मरे हुये
पुरुषस्य=ज्ञानी पुरुष की
वःक्=वागिन्द्रियशक्रि
श्रिनम्=श्रीन में
श्राप्येति=प्रवेश कर जाती है
प्राणः=प्राण
वातम्=बाह्यवायु में
चश्रुः=नेत्र

श्रादित्यम्=सूर्य **में**

श्चन्वयः

पदार्थाः

मनः=मन
चन्द्रम्=चन्द्रमा में
श्रोत्रम्=कर्ष
दिशः=दिशा में
श्रात्मा=शरीर का श्राकाश
श्राकाशम्=बाब श्राकाश में
शरीरम्=शरीरक पार्थिवभाग
पृथिवीम्=एश्वी में
लोमानि=रोवां
श्रोषधीः=श्रोषधी में
केशाः=केश
वनस्पतीन्=वनस्पति में
च=श्रोर
लोहितम्=रक्ष वानी रजोगुकः

रेतः≔वीर्य श्रप्सु=जल में निर्धायते=जा मिलते हैं तदा=तब श्रयम्=यह पुरुषः=पुरुष क=िस आधार पर भवति=स्थित रहता है ? + तदुत्तरे=इसके उत्तर में याञ्चचल्क्यः=याज्ञवल्वय ने उवाच=कहा सोम्य } =हे सौम्य, श्रार्तभाग ! श्रार्त्तभाग } + त्वम्=तृ + माम्=मुभको ह्र स्तम्=हाथ श्राहर≔दे श्रावाम्=हम तुम पतस्य } वेदितब्यम् } ≕इस जानने योग्य को एव≕प्रवश्य वेदिष्यावः≕जानेंगे पतत्≕यह वस्तु नौ=हमारे-तुम्हारे + निर्णेतुम्=निरचयं करने के लिये सजने=जनसमृह में न=नहीं शक्यते≕शक्य है ह≕तब तौ≕दोनों

उत्क्र∓य=उठ कर

+ एकान्तम्=एकान्त जगह में + गत्वा≔जा कर मन्त्रयाञ्चकाते=विचार करते भये + च=बौर + विचार्य=विचार करके यत्=जो कुछ ऊचतुः=उन दोनों ने कहा + तत्=वइ कर्म ह एच=कर्मही को कहा श्रथ=इसके पीड़े यत्≕जो कुछ प्रशशंसतुः=प्रशंसा करते भये तत्=बह कर्म=कर्मकीही प्रशशंसतुः=प्रशंसा करते भये हि=क्योंकि वै=निश्चय से पुरायेन=पुरायजनक कर्म से पुरायः=पुराय च=ग्रौर पापेन=पापजनक कर्म से पाप:=पाप भवति=होता है इति≕ऐसा + श्रत्वा=सुन कर ततः=तत्पश्चात् जारत्कारवः=जरत्कारु गोत्र का ग्रार्चभागः=प्रार्त्तभाग उपरराम=उपराम यानी चुप होता भया

ध्याय ३ ब्राह्मशा २ भावार्थ।

धार्त्तभाग ने बहुत कठिन प्रश्न किया, पर उनका यथार्थ उत्तर पाकर अपित प्रसन्न हुआ। अब अद्वितीय प्रश्न करता है, यह कहता हुआ कि हे याज्ञवल्क्य ! जिस काल में इस मरे हुं युक्ष की वाणि-न्द्रिय शक्ति अगिन में नष्ट होजाती है, और हृदयस्थ उष्णाता चली जाती है प्रागा बाह्यवायु में मिल जाता है, दर्शनशिक चक्ष स्रादित्य में चली जाती है, मन की वृत्ति चन्द्रमा में लय होजाती है, श्रवग् शक्ति दिशाक्यों में मिल जाती है, शारीम्क स्थूल पार्थिव भाग प्रश्वी के साथ जा मिलता है, शरीर के अभ्यन्तरीय आकाश, बाह्य आकाश में प्रवेश कर जाता है, शरीर के रोम श्रीषधी में मिल जाते हैं, श्रीर शरीर के माथे के केश वनस्पति में प्रवेश कर जाते हैं, शरीर के रहा श्चीर रक्त के साथ अन्यजलीय भाग वीर्य अथवा वीर्य के तुल्य श्चन्य पदार्थ जल में मिल जाते हैं श्चर्थात जब कार्य कारण में लय होजाता है, तब यह पुरुष कहां श्रीर किस आधार पर रहता है ? हे याज्ञवल्क्य ! इसका उत्तर आप मुम्नको दें. याज्ञवल्क्य कहते हैं, हे प्रिय. आर्त्तभाग ! इस प्रश्न का उत्तर जनसमूहों में देना ठीक नहीं है, अपना हाथ हमको देव, उठो चलो, इस प्रश्न के विषय में जो कुछ विचारगीय है उसको हम तुम दोनों एकान्त में विचार करेंगे. इस प्रश्न के उत्तर को इस सभा में कोई नहीं समसेगा, इस किये उसका कहना सभा के मध्य में श्रयोग्य है, इस पर वे दोनों कहीं एकान्त में जाकर विचार करने लगे श्रीर विचार करते करते ऐसा निश्चय किया कि कर्मही श्रेष्ठ है, कर्मकेही आश्रय पुरुष की स्थिति है. जबतक पुरुष कर्म करता रहेगा तवतक वह बना रहेगा, उसकी मिक नहीं है, प्रायजनक कर्म से पुराय होताहै, ख्रीर पापजनक कर्म से पाप होताहै, पुरायकर्म मोक्ष का साधक है, और पापकर्म बन्ध

का कारमा है, ऐसा यथार्थ उत्तर पाकर जरत्कारु का पुत्र आर्त्तभाग चुप होगया ॥ १३ ॥

इति द्वितीयं ब्राह्मग्राम् ॥ २ ॥

श्रथ तृतीयं बाह्मग्म्।

मन्त्रः १

त्रथ हैनं भुज्युर्लाह्यायनिः पपच्छ याज्ञवल्क्येति होवाच मद्रेषु चरकाः पर्यव्रजाम ते पतञ्चलस्य काष्यस्य गृहानैम तस्यासीहुहिता गन्धवेगृहीता तमपृच्छाम कोऽसीति सोऽब्रवीत्सुधन्वाङ्गिरस इति तं यदा लोकानामन्तानपृच्छामाथैनमबूम क पारिक्षिता अभवाकिति क पारिक्षिता अभवन्स त्वा पृच्छामि याज्ञवल्क्य क पारिक्षिता अभवन्सित अभविनित ।।

पदच्छेदः ।

श्रथ, ह, एतम्, भुज्युः, लाह्यायितः, पप्रच्छ, याज्ञवस्कय, इति, ह, उवाच, मद्रेषु, चरकाः, पर्यव्रजाम, ने, पत्रश्वलस्य, काप्यस्य, गृहान्, ऐम, तस्य, ग्रासीन्, वृहिता, गन्धर्वगृहीता, तम्, श्रपृच्छाम, कः, श्रासि, इति, सः, श्रव्रवीत्, सुधन्वा, श्राङ्गिरसः, इति, तम्, यदा, लोकानाम्, श्रान्तान्, श्रपृच्छाम, अथ, एतम्, श्रव्रूम, क, पारिक्षिताः, श्रभवन्, इति, क, पारिक्षिताः, श्रभवन्, सः, त्या, पृच्छामि, याज्ञवरक्य, क, पारिक्षिताः, श्रभवन्, सः, त्या, पृच्छामि, याज्ञवरक्य, क, पारिक्षिताः, श्रभवन्, इति ॥

श्रन्वयः पदार्थाः श्रन्वयः **पदार्थाः**

श्रथ=इसके पीन्ने लाह्यायनिः=लःह्यायनि भुज्युः=भ़ज्य नं इति=ऐसा प प्रचन्न⇒भरन किया

उवाच=कहा कि याज्ञवल्क्य≔हे याज्ञवल्क्य ! मद्रेषु=भददेशों में वयम्=इम सब

+ च=श्रोर

श्चरकाः≕वत करने वाले विवाधीं होकर पर्यव्रजाम=पर्यटन करत भये + पुनः≕फिर ते=वे हमलोग काष्यस्य=कपिगोत्र वाले पतञ्चलस्य=पतञ्चन के गृहान्=घर को ऐम=जाते भये तस्य=उस पतञ्चल की दुहिता≕कन्या शन्धर्वगृहीता र्ाम्धर्वगृहीत थी याने श्रासीत् = उसको गन्धर्व लगाथा तम्=उस गन्धर्व से + वयम्=हम लोगों ने **अपृ**च्छाम=प्ंछा त्वम्=तू कः=कौन ग्रास=है + तदा=तब सः≔उस गन्धर्व ने इति=एंसा श्रव्रवीत्≕कहा कि + श्रहम्=भें त्र्याङ्गिरसः=त्राङ्गिरस गोत्रवाला सुधन्वा=सुधन्वानाम वाला हूं Ł नम्=उस गन्धर्व से

यदा≕जव वयम्=हमसोगों ने स्रोकानाम्=लोकों के म्रन्तान्=मन्त को **श्चपृ**च्छामः-प्ं**छा** ग्रथ=धौर पनम्≔उस से म्रब्र्म≕कहा कि पारिक्षिताः=परिक्षित वंश के लोग क=कहां श्रभवन्=गये ? + तदा=तब + सः=उसने + श्रव्रवीत्=सव वृत्तान्त कहा + इदानीम्=श्रव + ग्रहम्=भैं त्वा=तुभ याज्ञवस्वय से पृच्छामि=प्ंछता हूं कि पारिाक्षताः=परिक्षित वंश के लोग क्क=कहां श्रभवन्=गये १ याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्य्य ! पारिक्षिताः=परिक्षित वंश के स्रोग क=कहां श्रभवन्=जाते भये ? इ्ति=ऐसा मेरा प्रश्न है

भावार्थ ।

आर्त्तभाग के चुप होजाने पर लाह्यायनि भुज्युनामक ब्राह्मस् याज्ञवल्क्य से पृंछ्नता है कि अप्तर्म हुआ जब हम सब विद्यार्थी ब्रता-चरसापूर्वक मद्रदेश में विचरते थे, और काप्य पतश्वल के घर पर आये, वहां देखा कि उनकी कन्या गन्धर्वगृहीत हो रही थी, उस गन्धर्व से जो उसके शरीर विषे स्थित था, हमलोगों ने पूंछा, आप कौन हैं, आपका क्या नाम है ? उसने कहा मैं गन्धर्व हूं, मेरा नाम सुधन्वा है, आङ्गिरस गोत्र में उत्पन्न हुआ हूं, उससे हमलोगों ने अनेक लोकों के बारे में प्रश्न किया, इसका उत्तर उसने यथायोग्य दिया, जब हमलोगों ने उससे पूंछा कि हे गन्धर्व ! इस समय पारि-श्चित यानी अश्वमेश यज्ञकर्ता के वंश वाले कहां हैं ? जो कुछ उसने उत्तर दिया वह मुक्तको मालून है, आप कृपा करके बताइये कि पारिश्चित कहां पर हैं ? अगर आप ब्रह्मनिष्ठ हैं जैसा आप अपने को समक्तते हैं तो मेरे इस प्रश्न का उत्तर यथार्थ देंगे।। १।।

मन्त्रः २

स होवाचोवाच वै सोऽगच्छन्वै ते तद्यत्राश्वमेधयाजिनो गच्छ-न्तीति क न्वश्वमेधयाजिनो गच्छन्तीति द्वात्रि छेशतं वै देवस्थाक्ष्या-न्ययं लोकस्तछं समन्तं पृथिवी द्विस्तावत्पर्येति ताछं समन्तं पृथिवीं द्विस्तावत्समुद्रः पर्येति तद्यावतीः क्षरस्य धारा यावद्वा मक्षिकायाः पत्रं तावानन्तरेषाकाशस्तानिन्द्रः सुपर्णो भूत्वा वायवे मायच्छत्ता-न्वायुरात्मिनि धित्वा तत्रागमयद्यत्राश्वमेधयाजिनोभविन्तत्येविव वै स वायुमेव प्रशश्छंस तस्माद्वायुरेव व्यष्टिर्वायुः समष्टिरपपुन-र्मृत्युं जयति य एवं वेद ततो ह भुज्युर्लाक्षायनिरुपरराम ॥

इति तृतीयं ब्राह्मणम् ॥ ३ ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, उनाच, उनाच, वै, सः, अगन्छन्, वै, ते, तन्, यत्र, अप्रवमेषयाजिनः, गन्छन्ति, इति, क, नु, अप्रवमेषयाजिनः, गन्छन्ति, इति, क, नु, अप्रवमेषयाजिनः, गन्छन्ति, इति, द्वात्रिंशतम्, वै, देवस्थाह्नयानि, अयम्, लोकः, तम्, समन्तम्, पृथिवीम्, द्विः, तावत्, पर्येति, ताम्, समन्तम्, पृथिवीम्, द्विः, तावत्, समुद्रः, पर्येति, तत्, यावतीः, क्षुरस्य, धारा, यावत्, वा, मक्षिकायाः, पक्षम्, तावान्, आन्तरेता, आकाशः, तान्, इन्द्रः, सुपर्याः, सूवा,

वायवे, प्रायच्छत् , तान् , वायुः, आत्मिनि, धित्वा, तत्र, आगमयत् , यत्र, अप्रवमेधयाजिनः, अप्रभवन्, इति, एवम्, इव, वे, सः, वायुम्, एव, प्रशशंस, तस्मात्, वायुः, एव, व्यष्टिः, वायुः, समष्टिः, श्रप, पुनः, मृत्युम् , जयति, यः, एवम् , वेद, ततः, ह, भुज्युः, लाह्यायनिः, उपरराम ।। पदार्थाः पदार्थाः म्रन्वयः

ह=तब सः≔वह याज्ञवस्पय

उवाच=कहते भये कि + चरक=हे चरक !

सः≔वह गन्धर्व वै=निश्चय करके

+ त्वाम्=तुक्ष से इति=ऐसा उवाच=पारिक्षितों का हाल

कहता भया कि

यत्र=जहां

श्रश्वमेध- } = अश्वमेध करने वाले याजिनः } गच्छान्त=जाते हैं

तत्⊐वहां ते=वे पारिक्षित

वै=निस्संदेह

श्चगच्छन्≕जाते भ**ये** इति=ऐसा

+ श्रुत्वा=सुन कर

नु≕मैंने प्रश्न किया कि नर्जन वर्षे याजिनः } =श्रश्यमेध करने वाते ऋश्वुमेधः (

क=कहां

गच्छुन्ति=जाते हैं ?

+ याञ्चवल्ययः=याञ्चवस्क्य ने

+ उवाच=उत्तर दिया कि

भुज्यु=हे भुज्यु !

(सूर्यका रथ एक दिन देवरथाह्नथानि= रात में जितने देश 🕻 में जाता है

तस्य=उसका

द्वात्रिंशतम्=बत्तीसगुना

श्चयम्=यह

लोकः=जोकयानी भारतवर्ष है

+ श्रतःपरम्=इसके उपरान्त

+ परमलोकः=भन्तरिक्ष लोक है

तम्≕उसको

तावद् द्धिः=उतनाही द्विगुण प्रमाणवाला

समन्तम्=चारों तरफ्र से पृथिबी=पृथ्वी

पर्येति=धेरे है

+ च=ग्रीर

ताम्=उस पृथिवीम्=पृथ्वी को

समन्तम्=चारों तरफ्र से

तावत्=डतनाही

ब्रि:=द्ने प्रमाण्यासा

समुद्रः=समुद्र पर्येति=घेरे है

तत्=ऐसा होने पर

अश्वमेध- } याजिनः }=श्रश्वमेध कर्त्ताः श्चन्तरेग्=उसके श्रन्दर श्राकाशः=ब्राकाश व्यास है श्रभवन्=जाते हैं + सः≔वह एवंइववै=इसी प्रकार तावान्=उतना ही सृक्ष्म है सः=वह गन्धर्व यावत्=जितनी वायुम्पव≔वायु कीहा **श्चरस्य=**ङ्रा की प्रशशंस=प्रशंसा करता भया धारा=धार यानी श्रयभाग तस्मात्=इस जिये वा=श्रौर वायुः=वायु **याचत्**≕जितना + एव≕ही मक्षिकायाः=मक्षिका का व्याप्टः=व्यक्टिरूप है पन्नम्=पंख सृक्ष्म है वायुः≕वायु + तत्र=वहां एव=ही इन्द्र:=परम:त्मा समिष्टिः=समिष्टिरूप है सुपर्गः=पक्षी +भुज्यु=हे भुज्य ! भूत्वा≔हो कर एवम्=इस प्रकार तान्≕उन अश्वमेध यज्ञ यः=जो चेद्=जानता है करने वालों को वायवे=वायु के + सः≔वह प्रायच्छत्=सिपुर्द करता भया पुनः=फिर मृत्युम्=मृत्यु को वायुः=वायु श्चपजयति=जीतता है तान्=उनको श्चात्मनि=श्रपने में ततःह=इस प्रकार याज्ञवल्क्य के उत्तर पाने पर धित्वा=रख कर लाह्यायनिः=लाह्य का पुत्र तत्र≔वहां ऋगमयत्≕ के जाता भया भुज्युः=भृज्यु तत्र≔वहां उपरराम=चुप होगया

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज वोले कि हे लाह्यायिन, भुज्यु ! आप सुनो मैं कहता हूं. उस गन्धर्व ने आप से इस प्रकार कहा, पारिक्षित वहां गये सहां अश्वमेधयज्ञ के करनेवाले जाते हैं, वह लोक कैसा है ? उसको

भी तुम सुनो, जितना सूर्यदेव का रथ एक दिन रात्रि में निरन्तर काता आता है, उसके ऊपर अन्तरिक्षलोक है, उस लोक के चारों तरफ द्विगुरा परिमारावाला पृथ्वीलोक है, उस पृथ्वी के चारों तरफ द्विगुरा परिमारायुक्त समुद्र विद्यमान है, उन दोनों यानी अन्तरिक्ष और पृथ्वीलोक के मध्य में आकाश ज्याप्त है, वह इतना सूक्ष्म है जितना छुरा का अप्रभाग और मिक्षका का पर होताहै, ऐसे अतिस्हन और दुर्विज्ञेय देश में परमात्मा पक्षी के आकार में होकर उन पारिक्षितों को वायु अभिमानी देवता के सिपुर्द करता भया और वह वायु उन्हें अपने में रख कर वहां ले गया जहां अध्वमेनकर्ता रहते थे. इस उत्तर के देने से याज्ञनत्क्य महाराज ने वायु की प्रशंसा की इस जिथे साग ब्रह्मायङ और उसके अभ्यन्तर सारी सृष्टि, ज्यष्टि और समष्टि वायु करके ज्याप्त है जो विद्वान पुरुष वायु या प्रारा को इस प्रकार जानता है और उसकी उपासना करता है वह मृत्यु को जय करता है और अमर, अमर होजाता है. ऐसा सुन कर लाह्मायिन मुज्य चुप होगया ॥ २ ॥

इति तृतीयं ब्राह्मसम् ॥ ३ ॥

श्रथ चतुर्थं बाह्मणम्।

मन्त्रः १

श्रथ हैनमुपस्तश्चाकायणः पमच्छ याज्ञवल्क्येति होवाच यत्सा-क्षाद्परोक्षाद्व्रद्ध य श्रात्मा सर्वान्तरस्तं मे व्याचक्ष्वेत्येष त श्रात्मा सर्वान्तरः कतमो याज्ञवल्क्य सर्वान्तरो यः प्राणेन प्राणिति स त श्रात्मा सर्वान्तरो योऽपानेनापानिति स त श्रात्मा सर्वान्तरो यो व्यानेन व्यानिति स त श्रात्मा सर्वान्तरो य उदानेनोदानिति स त श्रात्मा सर्वान्तर एष त श्रात्मा सर्वान्तरः।।

पदच्छेदः ।

श्रंथ, ह, एनम्, उपस्तः, चाकायगाः, पप्रच्छ, याज्ञवत्क्य, इति, ह, उवाच, यत्, साक्षात्, श्रपरोक्षात्, श्रद्ध, यः, श्रात्मा, सर्वान्तरः, तम्, मे, व्याचक्ष्व, इति, एषः, ते, श्रात्मा, सर्वान्तरः, कतमः, याज्ञवक्ष्य, सर्वान्तरः, यः, प्राग्येन, प्राग्यिति, सः, ते, श्रात्मा, सर्वान्तरः, यः, ज्यानेन, श्रपानेन, श्रपानिति, सः, ते, श्रात्मा, सर्वान्तरः, यः, व्यानेन, व्यानिति, सः, ते, श्रात्मा, सर्वान्तरः, यः, उदानेन, उदानिति, सः, ते, श्रात्मा, सर्वान्तरः, एषः, ते, श्रात्मा, सर्वान्तरः ॥

पदार्थाः अन्वयः श्रन्चयः श्रथ ह=तत्पश्चात् चाक्रायग्ः=चक्र का पुत्र उषस्तः≂उपस्त एनम्≃उस याज्ञवल्क्य से पप्रच्छ=पूंछता भया + च=श्रीर इति=ऐसा उवाच=कहता भया कि + याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! यत्≕जो साक्षात्=साक्षात् श्रपरोक्षात्=श्रपरोक्ष ब्रह्म=बद्य है यः=जो श्रातमा=श्रातमा सर्चान्तरः=सब के श्रभ्यन्तर है तम्=उसको रें:=मेरे लिये व्याचक्व=कह

इति=ऐसा

श्रुत्वा=सुन कर

याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने उवाच=उत्तर दिया कि एषः≕यह ते=तेरा श्रात्मा=श्रात्मा सर्वान्तरः=सब के अभ्यन्तर विराजमान है + पुनः≕िकर + उपस्तः=उषस्त ने ग्राह=कहा याञ्चवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! + श्रसौ=यह कतमः=कौनसा सर्वान्तरः=श्रात्मा सर्वान्तर है + याज्ञचल्क्येन=याज्ञवल्क्य ने + उत्तरम्=उत्तर + दत्तम्≔िदया कि यः≃जो श्रात्मा

प्राग्तेन=प्राग्वायु करके

प्राणिति=चेष्टा करता है

सः=वही

पदार्थाः

ते=तेरा
श्चात्मा=श्चात्मा
सर्वान्तरः=सर्वान्तर्यामी है
यः=जो
श्चपानेन=श्रपान वायु करके
श्चपानिति=चेष्टा करता है
सः=वह
ते=तेरा
श्चात्मा=श्चारमा
सर्वान्तर:=सर्वान्तर्यामी है
यः=जो
व्यानिति=चेष्टा करता है
सः=वह
सं=वह
सं=वह

ते=तेरा

श्रातमा=श्रातमा
सर्वान्तरः=सर्वान्तर्यामी है

यः=शो
उदानेन=उदान वायु करके
उदानित=वेद्या करता है
सः=वद्द ते=तेरा
श्रातमा=श्रातमा
सर्वान्तरः=सर्वान्तर्यामी है

एष:=ऐसा कहा हुशा
ते=तेरा
श्रातमा=श्रातमा
सर्वान्तरः=सर्वान्तर्यामी है

भावार्थ ।

जब क्राह्मायिन मुज्यु चुप होगया तत्र चक्र के पुत्र उपस्त ब्राह्मग् ने याज्ञबल्क्य महाराज से पृंद्धना आरम्भ किया कि हे याज्ञबल्क्य ! जो प्रत्यक्ष ब्रह्म है, और जो सब के अभ्यन्तर है, उसको मेरे प्रति कहिये. यह सुनकर याज्ञबल्क्य महाराज उत्तर देते हैं. हे उघरत ! तेरा हृद्यगत आत्मा सब में विराजमान है, इस उत्तर को पाकर सन्तुष्ट न होकर उपस्त फिर याज्ञबल्क्य से पृंद्धता है. हे याज्ञबल्क्य ! कौनसा आत्मा सर्वान्तर है, याज्ञबल्क्य ने उत्तर दिया. हे उपस्त ! सुन जो प्रार्मा वायु करके चेष्टा करता है वही तेरा आत्मा सर्वान्तर है, जो ज्यान वायु करके चेष्टा करता है वही तरा आत्मा सर्वान्तर है, जो उदान वायु करके चेष्टा करता है वही तुम्हारा आत्मा सर्वान्तर है, जो उदान वायु करके चेष्टा करता है वही तुम्हारा आत्मा सर्वान्तर है, जो

मन्त्रः २

सहोवाचोवस्तरचाकायणो यथा विवृयादसौ गौरसावश्वइत्ये-

वमेवेतद् व्यपदिष्टं भवति यदेव साक्षादपरोक्षाद्बह्म य आत्मा सर्वान्तरस्तं मे व्याचक्ष्वेत्येष त आत्मा सर्वान्तरः कतमो याज्ञवल्क्य सर्वान्तरः। न दृष्टेर्द्रष्टारं परयेर्न श्रुतेः श्रोतार ७ श्रुत्या न मतेर्मन्तारं मन्वीथा न विज्ञातेर्विज्ञातारं विजानीयाः। एष त आत्मा सर्वान्तरो तोन्यदार्च ततो होषस्तरचाक्रायण उपरराम ॥

इति चरुर्थे ब्राह्मणम् ॥ ४ ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, उवाच, उपस्तः, चाकायणः, यथा, विक्रूयात्, असी, गीः, असी, अश्वः, इति, एवम्, एव, एतद्, व्यपदिष्टम्, भवति, यत्, एव साक्षात्, अपरोक्षात्, ब्रह्म, यः, आत्मा, सर्वान्तरः, तम्, मे, व्याचक्ष्व, इति, एवः, ते, आत्मा, सर्वान्तरः, कतमः, याज्ञवत्क्य, सर्वान्तरः, न, दृष्टेः, दृष्टारम्, पश्येः, न, श्रुतेः, श्रोतारम्, श्रुणुयाः, न, मतेः, मन्तारम्, मन्वीथाः, न, विज्ञातेः, विज्ञातारम्, विज्ञानीयाः, एषः, ते, आत्मा, सर्वान्तरः, अतः, अन्यत्, आर्तम्, ततः, ह, उषस्तः, चाका-यणः, उपस्तः ॥

पदार्थाः श्चन्वयः श्चयः पदार्थाः **श्र**सौ=यह ह=तब श्रश्वः=धश्व है **धाक्रायगः≔चक का पुत्र** एवम् एव=उसी प्रकार सः≔वह उषस्तः=उपस्त पतत्=यह उवाच=कइता भया कि व्यपदिष्टम्=न्नाप करके कहा हुन्ना + याज्ञचल्क्य=हे याज्ञवस्क्य ! त्रहा=बहा यथा≕जैसे भवति=होता है + कश्चित्≕कोई + परन्तु=परन्तु विव्यात=कहे कि असौ=यह + त्वम्=श्राप गौः≕गौ है न=नहीं

दिखाते हो अर्थात् जैसे कोई सामने की वस्तुको दिला कर कहता है कि · +दर्श्यते≓ घोड़ा है ऐसी आप ने चात्मा के दिखाने की प्रतिज्ञा की है प्रश्न + याज्ञचल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! यत्≕जो एव=निरचय करके साक्षात्=प्रत्यक्ष + च=धौर श्रपरोक्षात्≕साक्षी है + च=श्रीर यः=जो सर्वान्तरः=सबका श्रन्तर्यामी श्रात्मा=भात्मा है तम्=उसको मे=मेरे लिये ग्राचश्च=ग्राप करें इति≕ऐसा मम प्रश्नः≔मेरा प्रश्न है + याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + उवाच=उत्तर दिया कि एषः=यह ते=तेरा आत्मा=श्रात्मा एव=ही सर्वान्तरः=सबका श्रन्तर्यामी है + पुनः≕फिर

+ उषस्तेन=उषस्त ने + प्रश्नः=प्रश्न + कृतः≔िकया कि याञ्चलक्य=हे याज्ञवल्क्य ! कतमः≃कौनसा सर्वान्तरः=सर्वान्तर्यामी ब्रात्मा है? + याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + श्राह=कहा + उषस्त≕हे डषस्त ! + श्रृगु=त् सुन हुछ:=दर्शनशक्ति के द्रष्टारम्=द्रष्टा को न=नहीं पश्येः=तू देख सक्रा है श्रुतेः=श्रवगशक्ति के श्रोतारम्≔सुनने वाले को न शृशुयाः=त् नहीं सुन सक्ना है मतेः≕मननशक्ति के मन्तारम्=मनन करने वाले को न मन्वीथाः=नहीं तू मनन कर सका है च≕घौर विज्ञातेः=विज्ञानशक्ति के विश्वातारम्≕विज्ञाता को न विजानीयाः=नहीं तृ जान सक्ना है एषः=यही ते≕तेरा श्चात्मा=त्रात्मा सर्वान्तरः=सर्वान्तर्वामी है द्यतः=इससे श्रस्यत्≖भौर सब

श्चार्त्तम्=दुःखरूप है ह=तब

चाकायणः≔षक का पुत्र उपस्तः≔डपस्त उपरराम=उपस्त होता भया

ततः=उत्तर पाने के पीछे │

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य के उत्तर को पाकर, सन्त्रष्ट न होकर उपस्त फिर प्रश्न करता है. हे याज्ञवहरूय ! आपने ऐसा कहा था कि मैं आहमा को ऐसा स्पष्ट जानता हूं जैसे कोई कहै कि यह गी है, यह घोड़ा है, परन्त आप ऐसा नहीं दिखाते हैं, श्रव श्राप श्रात्मा को प्रत्यक्ष करके बतावें, में पुनः आप से पूंछता हूं, जो सबका आत्मा है, जो सब के मध्य में विराजमान है, उसे श्राच्छी तरह सममा कर बतावें. ऐसा सन कर याज्ञवल्क्य उत्तर देते हैं, हे उपस्त ! जो आतमा सबके आन्दर विराजमान है, वही तेरा आदमा है, वह दोनों एकही हैं, भेद आतमा में नहीं है, केवल शरीरों में है, फिर उपस्त प्रश्न करता है वह कौन सा आत्मा है ? जो सर्वान्तर्यामी है, उपस्त ऋषि के पूर्वोक्त प्रश्न को सुन कर याज्ञवल्क्य भ्रोर रीति से कहते हैं, हे उपस्त ! सुन दर्शनशिक्त के द्या को त गौ अश्वादिक की तरह नहीं देख सक्ता है, यानी जिस शक्ति करके दर्शनशक्ति अपने सामने के पदार्थों को देखती है उसे अपने पीछे स्थित हुई शक्ति को वह दुर्शनशक्ति नहीं देख सकती है. इसी प्रकार हे उपस्त ! जो अवगाशिक का श्रोता है उसको त नहीं सुन सकता है, अर्थात् जिस शिक्त करके अवगाशिक्त बाह्य वस्त के शब्दों को सुनती है उस शक्ति को श्रवग्रशक्ति नहीं सुन सक्ती है, हे उपस्त ! मननशिक्त के मन्ता की तु मनन नहीं कर सक्ता है. अर्थात जिस शक्ति करके मन मनन करता है उस शक्ति को मनन-शक्ति मनन नहीं कर सक्ती है, हे उपस्त ! विज्ञानशक्ति के विज्ञाता को तुम नहीं जान सकते हो, श्रर्थात् हे उपस्त ! उस शक्ति को विज्ञान शिक्त नहीं जान सकती है जो दृष्टि का द्रष्टा है, श्रुति का श्रोता है,

मित का मन्ता है, विक्षप्ति का विज्ञाता है, वही तेग आत्मा है, वही सव के अन्दर विराजमान है. इस आत्मविज्ञान से अप्तिरिक्त जो वस्तु है, वह दुःख मय है, ऐसा सुन कर चक्र का पुत्र उपस्त चुप होगया।। २।।

इति चतुर्थे ब्राह्मण्म् ॥४॥

श्रथ पञ्चमं वाह्मग्रम्।

मन्त्रः १

श्रथ हैनं कहोलः कौषीतकेयः पप्रच्छ याज्ञवल्क्येति होवाच यदेव साक्षाद्यरोक्षाद्बद्ध य श्रात्मा सर्वान्तरस्तं मे व्याचक्ष्वेत्येष त श्रात्मा सर्वान्तरः। कतमो याज्ञवल्क्य सर्वान्तरो योऽशनायापिपा-से शोकं मोहं जरां मृत्युमत्येति। एवं वे तमात्मानं विदित्वा ब्राह्म-णाः पुत्रेषणायाश्च वित्तेषणायाश्च लोकेषणायाश्च व्युत्थायाथ भिक्षाचर्य चरन्ति या श्रेव पुत्रेषणा सा वित्तेषणा या वित्तेषणा सा लोकेपणोभे श्रेतेएपणे एव भवतः। तस्माद्ब्याह्मणः पाण्डित्यं निर्विद्य बाल्येन तिष्ठासेत्। बाल्यं च पाण्डित्यं च निर्विद्याथ मुनिरमौनं च मौनं च निर्विद्याथ। ब्राह्मणः स ब्राह्मणः केन स्थाचेन स्यात्तेनेदृश एवातोन्यदार्त्तं ततो ह कहोलः कौषीतकेय उपरराम।।

इति पंचमं ब्राह्मणम् ॥ ५ ॥

पदच्छेदः ।

आथ, ह, एनम्, कहोलः, कोपीतभेयः, पप्रच्छ, याज्ञवल्क्य, इति, ह, चवाच, यत्, एव, साक्षात्, अपरोक्षात्, ब्रह्म, यः, आत्मा, सर्वान्तरः, तम्, मे, व्याचक्ष्व, इति, एपः, ते, आत्मा, सर्वान्तरः, कतमः, याज्ञवल्क्य, सर्वान्तरः, यः, अशनायापिपासे, शोकम्, मोहम्, जगम्, मृत्युम्, अत्येति, एतम्, वे, तम्, आत्मानम्, विदित्वा, ब्राह्मग्रः, पुत्रे-पग्यायः, च, वित्तेषग्रायाः, च, वित्तेषग्रायः, अथ, भिक्षाचर्यम्, चरन्ति, या, हि, एव, पुत्रेषग्रा, सा, वित्तेषग्रा, या, वित्तेषग्रा, सा, कोकैपग्रा, सा, वित्तेषग्रा, या, वित्तेषग्रा, सा, कोकैपग्रा, उमे, हि, एते, एषग्रे, एव, भवतः, तमात्,

ब्राह्मणः, पाणिडत्यम्, निर्विद्य, बाल्येन, तिष्ठासेत्, बाल्यम्, च, पागिडत्यम्, च, निर्विद्य, श्रथ, मुनिः, श्रमोनम्, च, मौनम्, च, निर्विद्य, अथ, ब्राह्मणः, सः, ब्राह्मणः, केन, स्यात्, येन, स्यात्, तेन, ईटशः, एव, अतः, अन्यत्, आर्त्तम्, ततः, ह, कहोलः, कौषीतकेयः, उपग्राम ॥

श्रन्वयः

पदार्थाः

पदार्थाः

श्रथ ह=इसके पीछे **कौषीतकेयः=कु**षीतक का पुत्र कहोलः=कहोल पप्रच्छ=प्रश्न करता भया

ह=श्रोर इति=ऐसा उक्तवा≔कह कर उवाच=सम्बोधन किया कि याश्चवत्क्य=हे याज्ञवत्क्य ! यत्=जो

एव=निश्चय करके साक्षात्=साक्षात्

+ च=श्रोर श्चपरोक्षात्=प्रत्यक्ष व्रह्म=ब्रह्म है

+ च=ग्रीर

यः=जो श्चातमा=श्चातमा सर्वान्तरः=सब के श्रभ्यन्तर है

तम्=उस श्रात्मा को मे=मेरे किये

व्यान्त्रक्ष्व=कहिये + याझवल्क्यः≔याज्ञवल्क्य ने

+उवाच=कहा

+ कहोल≔हे कहोल ! एषः=यही हृदयस्थ ते=तेरा

श्चात्मा=श्रात्मा

सर्वान्तर:=सर्वान्तर्यामी है + पुनः≕फिर

+ कहोताः=कहोल ने पप्रच्छ=पूंछा कि

याञ्चनल्क्य=हे याज्ञवल्क्य !

+ सः=वह

कतमः=कोनसा श्रात्मा सर्वान्तरः=सर्वान्तर्वामी है ?

+ एषः=यह

+ मम प्रश्नः=मेरा प्रश्न है याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

> उवाच=कहा यः=जो श्रात्मा

श्रशनाया- } = भृख प्यास को पिपासे

शोकम्≕शोक मोहम्=मोह को जराम्=जरा मृत्युम्=मृत्यु को

श्चत्येति=उल्लक्षन करके विद्यमान है

+ सः एव=वही + ते ब्राह्मा=तेरा ब्राह्मा है + सः एच=वही सर्वान्तर:=सब के श्रभ्यन्तर है बै≕निश्चय करके तम्≂उयी एतम्=इस **श्चात्मानम्**=श्रात्मा को विदित्वा=जान कर श्राध=श्रार पुत्रैषणायाः च=पुत्र की इच्छा से वित्तैषगायाः≔वित्त की इच्छा से स्रोकेषणायाः=लोककी इच्छा से ड्युत्थाय=<u>छ</u>ुटकारा पा कर व्यक्षासाः = ब्रह्मस् भिक्षाचर्यम्=भिक्षावत को चरन्ति=करते हैं या पुत्रैषस्।≔जो पुत्र की इच्छा है स्ना⇒वही हि एव=निश्चय करके वित्तैषणा=द्रव्य की इच्छा है सा=वहा लोकेषसा=लोक की इच्छा है उभे=ये दोनों निकृष्ट एपरो=इच्छाये एक दूसरे एव भवतः=श्रवश्य होती हैं तस्मास्=इस लिये व्राह्मणु:=बाह्मण् पाविडतः म्=शास्त्रसम्बन्धीज्ञानको निर्विद्य=स्याग कर बाल्यन≕ज्ञान विज्ञान शक्रि के भाश्रित होकर

तिष्ठासेत्=रहने की इच्छा करे तत्पश्चात्=इसके पीवे बाल्यम्=ज्ञान विज्ञान च≃शौर पारिहत्यम्=शास्त्रीयज्ञान को निर्विद्य=स्थाग करके सः=वह बाह्यग्र मुनिः≔मननशील मनि भवति=होता है च्च पूनः≔श्रीर फिर श्रामीनम् रे ज्ञान, विज्ञान श्रीर च मोनम् रे मननवृत्ति को निर्विद्य=स्याग करके ब्राह्मग्रः=ब्रह्मविन् भवति=होता है सः=वह ब्राह्मगुः=श्र**ा**ग यन=जिस केन=किशी साधन करके ∓यात्त्≕हो तेन=उसी साधन करके ईद्दश:=ऐसा कहे हुये प्रकार ब्रह्मचेत्ता स्यात्चहोता है श्रतः=इस विये द्यस्यत्≕श्रोर सब सापन **ग्र**ार्त्तम्*=*दुःखरूप है ततः ह=याज्ञवल्क्य महाराज से उत्तर पाने के पी छे कोषीतकेयः≔कुपीतक का पुत्र कहोलः≔कहोल उपरराम=उपरत होता भया

भावार्थ ।

जब चाकायरा उपस्त चुप होगया, तदनन्तर कहोल ब्राह्मरा याज्ञवल्क्य से प्रश्न करने लगा यह कहता हुआ कि. हे याज्ञवल्क्य ! जो ब्रह्म साक्षात् आत्मा के नाम से पुकारा जाता है, श्रीर जो सब प्राशियों के अभ्यन्तर में स्थित है, उस ब्रह्म के विषय में मैं आपका व्याख्यान सुनना चाहता हूं. इसके उत्तर में याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे कहोल ! वह ब्रह्म तुम्हारा आत्माही है, वही सब के आध्यन्तर स्थित है, वही अन्तर्यामी है, इसको सन कर उपस्तवत कहोल ने पूंछा हे याज्ञवत्क्य ! वह कौनसा आदमा सर्वान्तर है ? याज्ञवल्क्य कहते हैं, हे कहोल ! जो आत्मा क्षया पिपासा से रहित है: जो शोक, मोह, जग, मृत्यू से रहित है: वही आपका आत्मा है, वही सर्वान्तर है, वही सव का अन्तर्यामी है. हे कहोल ! जब पुत्रेषगा, वित्तेषगा, लोकैषगा से रहित होकर ब्राह्मण की वृत्ति आत्माकार होती है, यानी लगातार अपने चैतन्य आत्मा की तरफ चला करती है, तब केवल शरीर निर्वाहार्थ भिक्षावृत्ति वह करता है. हे कहोल ! ये तीनों इच्छार्ये एकही हैं, ये तीनों निकृष्ट इच्छायें हैं, इनको त्याग कर शास्त्रसम्बन्धी ज्ञान का आश्रय लेवे फिर उसको भी त्याग करके ज्ञान विज्ञान शक्ति के आश्रय होवे और अपने ज्ञान के वल करके स्थित होवे. जब वह बाह्मण ऐसा करता है, तब वह ब्राह्मण मुनि कहलाता है, अर्थात् श्रापने वास्तविकरूप का मनन करता है, श्रीर करते करते क़ळ काल के पीछे श्रमीन होजाता है, तय वह ब्रह्मवित होता है. ऐसे झान से अतिरिक्त और साधन द:खरूप हैं. याज्ञवल्क्य से ऐसा उत्तर पाकर भ्रोर उसके तात्पर्य को समभ कर, कुपोतक का पुत्र कहोन्न स्तन्ध होता भया ॥ १ ॥

इति पञ्चमं ब्राह्मग्राम् ॥ ५ ॥

श्रथ षष्टं बाह्मण्म् । मन्त्रः १

श्रथ हैनं गार्गी वाचक्रवी पप्रच्छ याक्षवल्ययेति होवाच यदिद्छं सर्वमप्स्वोतं च प्रोतं च कस्मिन्नु खल्वाप श्रोतारच प्रोतारचेति वार्यो गार्गीति कस्मिन्नु खल् वायुरोतरच प्रोतरचंत्यन्तरिक्षलोकेषु गार्गीति कस्मिन्नु खल्व वायुरोतरच प्रोतारचेति गन्धवंलोकेषु गार्गीति कस्मिन्नु खल्व गन्धवंलोका श्रोतारच प्रोतारचेत्यादित्यलोकेषु गार्गीति कस्मिन्नु खल्वादित्यलोका श्रोतारच प्रोतारचेति चन्द्रलोकेषु गार्गीति कस्मिन्नु खल्व चन्द्रलोका श्रोतारच प्रोतारचेति नक्षत्रलोकेषु गार्गीति कस्मिन्नु खल्व चन्द्रलोका श्रोतारच प्रोतारचेति नक्षत्रलोकेषु गार्गीति कस्मिन्नु खल्व नक्षत्रलोका श्रोतारच प्रोतारचेति देवलोकेषु गार्गीति कस्मिन्नु खल्व देवलोका श्रोतारच प्रोतारचेति द्रजापतिलोकेषु गार्गीति कस्मिन्नु खल्व प्रजापतिलोका श्रोतारच प्रोतारचेति प्रजापतिलोकेषु गार्गीति कस्मिन्नु खल्व प्रजापतिलोका श्रोतारच प्रोतारचेति प्रजापतिलोकेषु गार्गीति कस्मिन्नु खल्व प्रजापतिलोका श्रोतारच प्रोतारचेति स होवाच गार्गि मातिप्राक्षीर्मा ते मूर्धा व्यपप्तदनितप्रकर्मा वै देवतामतिपृच्छिस गार्गि मातिप्राक्षीरिति ततो हः गार्गी वाचक्रव्यपरराम ॥

इति पष्टं ब्राह्मणम् ॥ ६ ॥ पदच्छेदः ।

श्रथ, ह, एतम्, गार्गी, वाचक्रवी, पप्रच्छ, याज्ञवस्त्वय, इति, ह, उवाच, यत्, इद्म्, सर्वम्, श्रप्तु, श्रोतम्, च, प्रोतम्, च, कस्पिन्, चु, खलु, श्रापः, श्रोताः, च, प्रोताः, च, इति, वायौ, गार्गि, इति, कस्मिन्, नु, खलु, वायुः, श्रोतः, च, प्रोतः, च, इति, श्रान्तिःश्रलोकेषु, गार्गि, इति, कस्मिन्, नु, खलु, श्रान्तिःश्रलोकाः, श्रोताः, च, प्रोताः, च, इति, गन्धवंलोकेषु, गार्गि, इति, कस्मिन्, नु, खलु, गन्धवंलोकाः, श्रोताः, च, प्रोताः, च, द्रित, श्रादित्यलोकेषु, गार्गि, इति,

कस्मिन, नु, खलु, आदित्यलोकाः, ओताः, च, प्रोताः, च, इति, चन्द्रलोकेषु, गार्गि, इति, कस्मिन, नु, खलु, चन्द्रलोकाः, ओताः, च, प्रोताः, च, इति, नक्षत्रलोकेषु, गार्गि, इति, कस्मिन, नु, खलु, नक्षत्रलोकाः, ओताः, च, प्रोताः, च, इति, देवलोकेषु, गार्गि, इति, कस्मिन, नु, खलु, देवलोकाः, ओताः, च, प्रोताः, च, इति, इन्द्रलोकेषु, गार्गि, इति, कस्मिन, नु, खलु, इन्द्रलोकाः, ओताः, च, प्रोताः, च, इति, प्रजापतिलोकेषु, गार्गि, इति, कस्मिन, नु, खलु, प्रजापतिलोकाः, ओताः, च, प्रोताः, च, इति, प्रजापतिलोकाः, च, प्रोताः, च, इति, प्रज्ञलोकाः, च, प्रोताः, च, प्रोताः, च, इति, कस्मिन, नु, खलु, प्रज्ञलोकाः, ओताः, च, प्रोताः, च, इति, सः, ह, उवाच, गार्गि, मा, अतिप्राक्षीः, मा, ते, मूर्घा, व्यपप्रत्, अनिवप्रस्थाम्, वै, देवताम्, अतिप्रक्षीः, गार्गि, मा, अतिप्रक्षीः, इति, ततः, ह, गार्गि, वाचक्रवो, उपराम ।।

पदार्थाः

श्चन्यः

श्रथ ह=इसके पीछे वाचक्रवी=वचक्नुकी कन्या गार्गी=गार्गी एनम्=इस याज्ञवल्क्य से प्रप्रच्छ=प्रश्न करती भई च=ग्रीर उदाच=वोजी कि याञ्चवल्यय=हे याज्ञवल्य ! तत्≔जो इदम्=यह सर्वम्=सब दश्यमान वस्तु श्रप्सु≕जलमें ऋोतम्≕श्रोत च=श्रीर प्रोतम् च=मोत है म=तो

श्रन्वयः

पदार्थाः

श्रापः=जल
किसमं
किसमं
खलु=िनश्चय करके
श्रोताः=श्रोत
च=श्रोत
श्रोताः च=श्रोत हैं
इति=यह मेरा प्रश्न है
+ याज्ञचल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने
+ उवाच=उत्तर दिया कि
गािंग=हे गािं।
वायो=वायु में जल श्रोत
श्रोत हैं
इति=ऐसा
+ श्रदवा=सुनकर
+ सा=वह बोली

धागुः=वायु

कस्मिन्=किसमें श्रोतः≖श्रोत च≕घौर प्रोतः च=प्रोत है इति=ऐसा + श्रुत्वा=सुनकर + सः=वह याज्ञवल्स्य + उवाच=बोने कि गार्गि=हे गार्गि ! श्चन्तरिक्ष- } प्रन्तिरक्ष लोक में लोकेषु } वह श्रोत प्रोत है इति शुत्वा=यह सुन करके सा=वह गार्भ + पत्रच्छ=बोबी कस्मिन्तु≕िकसमें खलु=निश्चय करके श्चन्तरि- } = श्चन्तिक्ष कोक श्रोताः=श्रोत च≕ग्रीर प्रोताःच=प्रोत हैं इति=इस पर **सः**=वह याज्ञवल्वय + उवाच=बोबे गार्गि=हे गार्गि ! गन्धर्वलोकेषु=गन्धर्वलोकों में व श्रोत प्रोत हैं इति=इस पर गार्गी=गार्गी + उव।च=बोत्ती क€िमन्=िकसर्में नु खलु=निरचय करके

गन्धर्वलोकाः=गन्धर्वकोक श्रोताः=द्योत च=श्रीर प्रोताः च=प्रोत हैं इति=यह + श्रुत्वा=सुन कर याञ्चवत्क्यः=याज्ञवत्स्य ने + श्राह=कहा गार्गि=हे गार्गि ! चन्द्रलोकेषु=चन्द्रलोकों में वह श्रोत प्रोत हैं इति≔इस पर गार्गी=गार्गी उवाच=बोली चन्द्रलोकाः=चन्द्रलोक कस्मिन्=िकसमें नु खलु=निश्चय करके श्रोताः≔श्रोत च=धौर प्रोताः च=श्रीत हैं इति=ऐसा होने पर याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने उवाच=उत्तर दिया कि + गार्गि=हे गार्गि ! नक्षत्रलो केषु=नक्षत्र स्रोकों में वह श्रोत प्रोत है इति=ऐसा उत्तर पाने पर सा=वह गार्गी + उवाच=बोद्धी नक्षत्रलोकाः=नक्षत्रबोक कस्मिन्=िकस में ञ्राताः=श्रोत

च=घौर प्रोताः च=प्रोत हैं इति=ऐसा प्रश्न होने पर याश्रवल्क्यः=याश्रवल्क्य ने श्चाह=उत्तर दिया गार्गि=हे गार्गि ! देवलोकेष=देवलोकों में वह श्रोत प्रोत हैं इति=यह सुन कर गार्गी≕गर्गा वे पुनः पप्रच्छ=किर पृंछ। कस्मिन्तु≕िकसमें खलु=निश्चय करके देवलोकाः=देवलोक श्रोताः=श्रोत च=ग्रौर प्रोताः च=प्रोत हैं इति=इस पर + सः=वइ याज्ञवल्क्य उवाच≔बोला गार्गि=हे गार्गि ! इन्द्रलोकेषु=इन्द्रलोकों में वह स्रोत प्रोत हैं इति=ऐसा उत्तर पाने पर गार्गी=गार्गी ने + पुनः=फिर पप्रच्छ=पूंछा कस्मिन्=िकस में नु खलु=निश्चय करके इन्द्रलोकाः=इन्द्रजोक स्रोताः≔ष्रोत

च=घौर

प्रोताः च≔प्रोत हैं इति=यह सुन कर याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + उवाच=कहा गार्गि=हे गार्गि ! प्रजापति- रे प्रजापति लोकों में लोकेषु 🕽 वह स्रोत प्रोत हैं इति=यह सुन कर गार्गी=गार्गी + उवाच=बोली प्रजापति- } =प्रजापति लोकः कस्मिन्=किसमें नु खलु≕निश्चय करके श्चोताः=श्रोत च=श्रीर श्रोताः च=श्रोत हैं इति=ऐसा प्रश्न सुन कर + सः=वह याज्ञवस्वय उवाच≔बोले गार्गि=हे गार्गि ! ब्रह्मलोकेष्=ब्रह्मलोकों में वह श्रोत प्रोत हैं इति⇒ऐसा उत्तर पाने पर बार्बी=गार्गी उवाच=बोली ब्रह्मलोकाः=ब्रह्मजोक कस्मिन्=किसमें श्रोताः=घोत च=घौर मोताः च=_{मोत} हैं इति≔ऐसा प्रश्न होने पर ३ याह्रवहक्यः ⇒्याञ्चवह्वय ह=स्पष्ट उवाच=कहते भये कि गार्गि=हे गार्गि ! मा=मत मा=मुक्तते श्रतिप्राक्षीः =श्रधिक पृंछ श्रत्यथा=नहीं तो ते=तेरा मुर्था=मस्तक ज्यपसत्=गिरपड़ेगा श्चनतिप्रश्न्याम्⇒जो देवता चित प्रस् किये जाने योग्य नहीं है देवताम्⇒उस देवता के प्रति श्चतिपुञ्छसि=बारम्बार तृ पृंखती है गार्गि=हे गार्गि ! इति=इस प्रकार मा=सत श्चतिप्राक्षीः=प्रधिक पृंख ततः ह=तव वास्तकवी=वचक्तु की कन्या गार्गी=गार्गी उपरराम=चुप होगई

भावार्थ ।

जब कहोल चुप होगया तब उसके पीछे श्रीमती श्रव्यादिनी वाचकती गागी याज्ञवल्क्य महाराज से प्रश्न करने लगी, हे याज्ञवल्क्य ! जो यह सब वस्तु दिखाई देती है, वह जलमें ख्रोत प्रोत है यानी जिस प्रकार कपड़े में ताना बाना सून एक दूसरे से प्रथित रहते हैं वैसेही सब जल में दश्यमान पदार्थ प्रथित हैं, ऐसा शास्त्र कहता है, आप कृपा करके वतलाइये कि वह जल किसमें ख्रोत प्रोत हैं, याज्ञवल्क्य इसके उत्तर में कहते हैं, हे गागि ! वह जल वायु में ख्रोत प्रोत हैं, हे याज्ञवल्क्य ! वायु किसमें ख्रोत प्रोत हैं, हे गागि ! वह वायु ध्रन्तिक्षलोक में ख्रोत प्रोत हैं, हे याज्ञवल्क्य ! कार्यविक्षलोक किसमें ख्रोत प्रोत हैं, हे गागि ! वह अन्तिरक्षलोक गन्धवलोक में ख्रोत प्रोत हैं, हे गागि ! वह प्रविक्षलोक मान्धवलोक किसमें ख्रोत प्रोत हैं, हे गागि ! वह प्रविक्षलोक चन्द्रलोक में ख्रोत प्रोत हैं, हे गागि ! वह सादित्यलोक चन्द्रलोक में ख्रोत प्रोत हैं, हे गागि ! वह सादित्यलोक चन्द्रलोक में छोत प्रोत हैं, हे गागि ! वह स्वव्यादित्यलोक में छोत प्रोत हैं, हे याज्ञवल्क्य ! वह चन्द्रलोक किसमें छोत प्रोत हैं, हे गागि ! वह चन्द्रलोक किसमें छोत प्रोत हैं, हे गागि ! वह चन्द्रलोक किसमें छोत प्रोत हैं, हे गागि ! वह चन्द्रलोक किसमें छोत प्रोत हैं, हे गागि ! वह चन्द्रलोक किसमें छोत प्रोत हैं, हे गागि ! वह चन्द्रलोक किसमें छोत प्रोत हैं, हे याज्ञवल्क्य ! वह नक्षत्रलोक किसमें छोत प्रोत हैं, हे गागि ! वह चन्द्रलोक किसमें छोत प्रोत हैं, हे गागि ! वह चन्द्रलोक किसमें छोत प्रोत हैं, हे गागि ! वह चन्द्रलोक किसमें छोत प्रोत हैं, हे याज्ञवल्क्य ! वह नक्षत्रलोक

किसमें स्रोत प्रोत है, हे गागिं! वह नक्षत्रलोक देवलोक में स्रोत प्रोत है, हे याज्ञवल्क्य! वह देवलोक किसमें स्रोत प्रोत है, हे गागिं! वह देवलोक इन्द्रलोक में स्रोत प्रोत है, हे याज्ञवल्क्य! वह इन्द्रलोक किसमें स्रोत प्रोत है, हे गागिं! वह इन्द्रलोक प्रजापतिलोक में स्रोत प्रोत है, हे याज्ञवल्क्य! वह प्रजापतिलोक किसमें स्रोत प्रोत है, हे याज्ञवल्क्य! वह प्रजापतिलोक किसमें स्रोत प्रोत है, हे याज्ञवल्क्य! वह प्रजापतिलोक क्रह्मलोक में स्रोत प्रोत है, हे याज्ञवल्क्य! वह ब्रह्मलोक किसमें स्रोत प्रोत है, यह सुन कर याज्ञवल्क्य महाराज बोले कि, हे गागिं! तू स्रातिप्रश्न करती है, ब्रह्मचेत्तास्रों से स्रातिप्रश्न करना उचित नहीं है, यदि तू स्रातिप्रश्न करेगी तो तेग मस्तक तेरे धड़ से गिरजायगा, हे गागिं! ब्रह्मलोक से परे कोई लोक नहीं है, सबका स्राधार ब्रह्म है. याज्ञवल्क्य से ऐसा उत्तर पाकर गागीं चुप होगई॥ १॥

इति पष्टं त्राह्मराम् ॥ ६ ॥

श्रथ सप्तमं बाह्मग्रम्।

मन्त्रः १

अथ हैनमुद्दालक आरुणिः पप्रच्छ याज्ञवल्क्येति होवाच मद्रे-ष्ववसाम पत्रश्चलस्य काप्यस्य गृहेषु यज्ञमधीयानास्तस्यासीद्धार्या गन्धर्वगृहीता तमपृच्छाम कोऽसीति सोऽअवीत्कवन्ध आथर्वण हित सोऽअवीत्पतश्चलं काप्यं याज्ञिका छेश्च वेत्थ नु त्वं काप्य तत्स्पृत्रं येनायं च लोकः परश्च लोकः सर्वाणि च भूतानि संदृष्ट्यानि भवन्तीति सोऽअवीत्पतश्चलः काप्यो नाहं तद्धगवन्वेदेति सोऽअवीत् त्पतश्चलं काप्यं याज्ञिका छश्च वेत्थ नु त्वं काप्य तमन्तर्यामिणं य इमं च लोकं परं च लोकछ सर्वाणि च भूतानि योऽन्तरो यमय-कीति सोऽअवीत्पतश्चलः काप्यो नाहं तं भगवन्वेदेति सोऽअवीत् पतश्चलं काप्यं याज्ञिकाश्रंश्च यो वै तत्काप्य सूत्रं विद्यानं चान्तर्या-मिणमिति स ब्रह्मवित्स लोकवित्स देविवत्स वेदवित्स भूतवित्स आत्मवित्स सर्वविदिति तेभ्योऽव्रवीत्तदृहं वेद तचेन्त्वं याज्ञवल्क्यसूत्र-मविद्वाश्रम्तं चान्तर्यामिणं ब्रह्मगवीरुद्जसे मूर्या ते विपतिष्यतीति वेद वा ब्रहं गौतम तत्सूत्रं तं चान्तर्यामिणमिति यो वा इदं कश्चिद् ब्र्यादेद वेदेति यथा वेत्थ तथा ब्रहीति ॥

पदच्छेदः ।

श्रथ, ह, एनम्, उद्दालकः, श्रारुगाः, पप्रच्छ, याज्ञवल्क्य, इति, ह, उवाच, मद्रेषु, श्रवसाम, पतश्वलस्य, काप्स्य, गृहेषु, यज्ञम्, श्राधी-यानाः, तस्य, श्रासीतः, भार्या, गन्धर्वगृहीता, तम्, श्रपृच्छाम, कः, श्रसि, इति, सः, श्रत्रवीत्, कबन्धः, श्राथर्वगाः, इति, सः, श्रत्रवीत्, पतञ्चलम्, काप्यम्, याज्ञिकान्, च, वेत्थ, नु, त्वम्, काप्य, तत्, सूत्रम्, थेन, श्रयम्, च, लोकः, परः, च, लोकः, सर्वाग्रि, च, भूतानि, संदृब्धानि, भवन्ति, इति, सः, श्रश्नवीत्, पतञ्चलः, काप्यः, न, श्रह्म, तत्, भगवन्, वेद, इति, सः, श्रव्रवीत्, पतञ्चलम्, काप्यम्, याज्ञिकान्, च, वेत्थ, नु, त्वम्, काप्य, तम्, स्रन्तर्यामिगाम्, यः, इमम्, च, लोकम्, परम्, च, लोकम्, सर्वाणि, च, भूतानि, यः, झन्तरः, यम-यति, इति, सः, अप्रवीत्, पनश्वलः, काप्यः, न, श्रहम्, तम्, भगवन, ेबद, इति, सः, श्रम्भवीत्, पतञ्चलम्, काप्यम्, याज्ञिकान्, च, यः, वै, तत्, काप्य, सूत्रम्, विद्यात्, तम्, च, अन्तर्यामिगाम्, इति, सः, ब्रह्मदित्, सः, लोकवित्, सः, देववित्, सः, वेदवित्, सः, भूतवित्, सः, आत्मवित्, सः, सर्ववित्, इति, तेभ्यः, अन्नर्वात्, तत्, आहम्, बेद, तत्, चेत्, त्वम्, याज्ञवल्क्य, सूत्रम्, अविद्वान्, तम्, च, म्रान्तर्यामिसाम्, ब्रह्मगवीः, उदजसे, मूर्चा, ते, विपतिष्यति, इति, वेद, वे, श्रहम्, गौतम, तत्, सूत्रम्, तम्, च, श्रन्तर्यामिगाम्, इति, यः, वे, इदम्, कश्चित्, बूयात, वेद, वेद, इति, यथा, वेत्थ, तथा, बूहि, इति ॥

श्रन्वयः

पदार्थाः

ऋथ ह=गार्गी के चुप होने

पर श्राविणिः=श्ररुण का पुत्र उद्दालकः=उदालक ने पनम् ह=इस याज्ञनतक्य से पत्रच्छ=ग्ररन किया + च=श्रीर उदाच=बोला कि

याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! + वयम्=हमलोग

काप्यस्य=किपगोत्र के

पतञ्जातस्य=पतञ्जल के गृहेषु=धर

यञ्जम्=यज्ञशास्त्र को श्रधीयानाः=पदते हुये

मद्रेषु=मद्रदेशों में श्रवसाम=विचरते थे

तस्य≔उसकी

भार्या=की

गन्धर्वगृहीताझान्धर्वगृहीत ग्रासीत्=^{थी}

तम्=इस गन्धव से श्रपृच्छाम=इमक्षेगोंने पूंछा कि

पृच्छाम=हमलागान + त्वम्=त् कः=कौन

ग्रसि≕है १

प्रीत≔तब सः≔वह गन्धर्व

श्रव्रवीत्=बोद्धा कि + श्रदम्=में

आधर्वणः=अथर्वा का पुत्र

द्यान्वयः

पदार्थाः

क्वन्धः=कबन्धनामक हूं इति=इसके पीछे

सः≔उस गन्धर्व ने

काप्यम्=कपिगोत्रवाते पतञ्जलम्=पतञ्जल

च=घोर याक्षिकान्=उसके शिष्यों से

श्रव्रवीत्≕पृंका काप्य≕हे काप्य !

ना-प−४ रू. ५ नु≔क्का

त्वम्=त्

तत्=उस स्त्रम्=स्त्र को

वेत्थ=जानता है ?

येन=जिस करके श्रयम्=वह

लोकः=लोक

ख≕ग्रोर वरः≔पर

स्रोकः=बोक च=ग्रीर

सर्वाणि=संपूर्ण भूतानि=प्राणी

संरब्धानि } =गुधे हैं भवन्ति }

इति=ऐसा प्रश्न + श्रुत्वा=सुन कर

सः≔वह

काप्यः=किपगोत्रवासा

पतश्चलः=पतब्बल स्रव्रवीत्=बोदा कि

ब्रहम्≕में तत्=उस सूत्रात्मा को भगवन्=हे पूज्य ! त=नहीं वेद्≕जानता हूं इति=ऐसा + शुरवा=सुन कर सः=वह गन्धर्व काप्यम्=कपिगोत्रवाबे पतञ्चलम्=पतञ्चलसे च=घौर याज्ञिकान्=इम याज्ञिकों से श्रव्रवीत्=परन करता भया काप्य=हे कपिगोत्रवाले! नु=क्या त्वम्=तू तम्≕डस अन्तर्यामिणम्=अन्तर्यामी को यः=जो इमम्≔इस लोकम्=लोक को च≕ग्रीर परम्=पर लोकम्=बोक को यमयति=नियम में रखता है च=श्रोर यः=जो ग्रन्तरः=ग्रन्तर्यामी सर्वागि=सब भूतानि=भूतों को यमयति=नियम में रखता है वेत्थ=जानता है

इति≔ऐसा + श्रुत्वा=सुन कर सः≔वह काष्यः≔कपिगोत्रवाला पतञ्चलः=पतञ्चल श्रव्रवीत्=बोबा कि ग्रहम्=मैं भगवन्=हे पृज्य ! तम्=उस ग्रन्तर्यामी को वेद=जानता हुं इति⇒ऐसा शुत्वा=सुन कर सः≔वह गन्धर्व काप्यम्≕किपगोत्र के पतञ्चलम्=पतञ्चल से च=ग्रौर याज्ञिकान्=हम याज्ञिकों से श्रव्रवीत्=बोला कि काट्य=हे किएगोत्रवाते ! यः≕जो ग्रे≕निश्चण करके तत्≕उस सूत्रम्≃सृत्र च≕ग्रीर तम्=उस अन्तर्यामिणम्=अन्तर्यामी को विद्यात्≕जानजावे तो सः=वह ब्रह्मवित्=ब्रह्मवित् सः=वह लोकचित्=बोकवित्

सः≔वह देववित्=देववित् सः=वह बद्वित्=वेदवित् सः=वह भूतवित्=भृतवित् सः≔वह **श्चात्मवित्**=श्चारमवित् सः=वह सर्ववित्=सर्ववित् + भवति=होता है इति=इसके पीछे यस्=गो कुछ गन्धर्वः≔गन्धर्व ने तेभ्यः=उन बोगों से श्रव्रदीत्=कहा तत्=उस सबको श्रहम्≕में याञ्चलक्य=हे याज्ञवल्क्य ! वेद=जानता हूं चेत्=ग्रगर त्वम्=तृ तत्=डस सुत्रम्=सूत्र को च=श्रीर तम्≖उस भ्रान्तर्यामिग्राम्=श्रन्तर्यामी को श्रविद्वान्=महीं जामता हुश्रा ब्रह्मगची:=ब्राह्मणों की गौश्रों को उद्जसे≕िलये जाता है तो ते=नेश + यदि ब्र्यात्=भगर कहोगे तो

भूधी≃मस्तक

विपतिष्यति=गिरपदेगा इति=ऐसा + श्रत्वा≔सुन कर + याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्यने कहा वि गोतम≔हे गौतम ! श्रहम्=मैं तत्=डस सूत्रम्=सृत्र श्रात्मा को च=ग्रेर तम्=डस श्चन्तर्यामिणम्=श्रन्तर्यामी को वै=भन्नी प्रकार वेद्=जानता हूं इति≕तब + गौतमः=गीतम ने + आह=कहा कि याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! यः कश्चित्=जो कोई यानी सब कोई इदम्≔यह वृयात्≔कइते हैं कि वेद=मैं जानता हं वेद≕मैं जानता हूं

जु≔क्या

त्व**म्**=तुम तथा=वैसा

ब्यात्=कहोगे

यथा=जैसा

मृहि=कहिये

वत्थ≕जानत हो

भावार्थ ।

अब याइवल्क्य महाराज को दुर्धर्ष झौर श्राज्य विद्वान् पाकर प्रश्न करने से गार्गी उपरत होगई, तब श्रक्षमा ऋषि के पुत्र उदालक ने याज्ञवल्क्य से प्रश्न करना आरम्भ किया, ऐसा सम्बोधन करता हुआ। कि, हे याझवल्क्य ! हम लोग एक बार कपिनाम के गोत्र में उत्पन्न हुये पतञ्चलनामक विद्वान के गृह गये, ऋौर यज्ञशास्त्र पढ़ने के निमित्त वहां ठहरे, उनकी भार्या गन्धर्वगृहीत थी, उस गन्धर्व से हमलोगों ने पूंछा कि आप कौन हैं ? उसने उत्तर दिया कि मैं आधर्वा ऋषि का पुत्र हूं, मेरा नाम कबन्ध है, इसके पीछे उस गन्धर्व ने कपि-गोत्र बिषे उत्पन्न हुये पतञ्चल श्र्यौर यज्ञशास्त्र के श्रध्ययन करनेवाले र हमलोगों से पृंद्धा, ऐसा सम्बोधन करता हुद्या कि हे **प**तश्वल ! तू उस सूत्र को जानता है जिस करके यह दृश्यमान लोक स्रौर इसका सक्ष्मकारणा, ऋौर परलोक ऋौर उसका सूक्ष्मकारणा झौर समस्त जीव जन्तु सब प्रथित हैं, इसके उत्तर में काप्य पतश्वल ने कहा हे भगवन् ! उसको मैं नहीं जानता हूं, फिर उस गन्धर्व ने काप्य पतञ्चल और हम यज्ञशास्त्र के अध्ययन करनेवालों से पृंद्धा हे काप्य ! क्या तू उस झन्तर्यामी को जानता है ? जिस करके यह दश्यमान लोक अपने कारण सहित और सब भूत जो उसमें विराजमान हैं प्रथित होरहे हैं ? काप्य पतथ्बल ने कहा हे पूज्यपाद, भगवन् ! मैं उसको नहीं जानता हूं, जब गन्धर्व ने ऋपने दोनों प्रश्नों का उत्तर नहीं पाया, तत्र उसने काप्य पतञ्चल श्रौर यज्ञशास्त्र के श्रध्ययन करनेवाले हम क्षोगों से कहा कि हे पतश्चल ! जो विद्वान् उस सूत्र को झ्रौर उस श्चन्तर्यामी पुरुष को श्चन्द्वी प्रकार जानता है वह ब्रह्मवित्, मृः, सुवः, स्वः लोकवित्, वह श्राग्नि, सूर्य श्रादि देववित्, वह ऋक्, यजुः, साम, आधर्ववेदवित्, वह भूतवित्, वह आत्मवित्, वह सर्ववित् कहलाता है, यानी सब का ज्ञाता होता है, हे काप्य, पतश्वल ! जब श्चाप उस सूत्र को श्रीर श्रन्तर्यामी को नहीं जानते हैं तब श्रध्यापकरृत्ति कैसे करते हैं ? इस पर पतथ्वल श्रीर हमलोगों ने कहा, यदि श्राप उस सूत्र को श्रीर श्रन्तर्यामी को जानते हैं, तो हमारे लिये कहें, इसके उत्तर में उस गन्धर्व ने कहा में जानता हूं, फिर उस सूत्र श्रीर श्रन्तर्यामी का उपदेश हमलोगों से किया. हे याझवल्क्य ! मैं उस गन्धर्व के उपदेश किये हुये विज्ञान को जानता हूं, यदि श्राप उस सूत्र श्रीर उस श्रन्तर्यामी को न जानते हुये ब्रह्मवेत्ता निमित्त श्राई हुई गौश्रों को उन ब्रह्मवेत्ताओं का निरादर करके ले गये हैं तो श्रापका मस्तक श्रवश्य गिर जायगा, इसके उत्तर में याझवल्क्य कहते हैं कि, हे गौतम ! मैं उस सूत्र को श्रीर उस श्रन्तर्यामी को भली प्रकार जानता हूं, इस पर उदालक श्रृषि कहते हैं कि ऐसा सबही कहते हैं, मैं जानता हूं, मैं जानता हूं, यदि श्राप जैसा जानते हैं तो वैसा कहें, श्रर्थात् गर्जने से क्या प्रयोजन है, यदि श्राप जानते हैं तो उस विषय को कहें ॥ १ ॥ सन्त्रः २

स होवाच वायुर्वे गौतम तत्स्त्रं वायुना वै गौतम स्त्रेणायं च लोकः परश्च लोकः सर्वाणि च भूतानि संदब्धानि भवन्ति तस्माद्दे गौतम पुरुषं प्रेतमाहुर्व्यस्रश्रंसिषतास्याङ्गानीति वायुना हि गौतम स्त्रेण संदब्धानि भवन्तीत्येवमेवेतचाइवन्त्रयान्तर्यामिणं ब्र्हीति॥ परच्छेदः।

सः, ह, उवाच, वायुः, वै, गौतम, तत्, सूत्रम्, वायुना, वै, गौतम, सूत्रेग्ग, अयम्, च, लोकः, परः, च, लोकः, सर्वाग्गि, च, मूतानि, संहब्धानि, भवन्ति, तस्मात्, वै, गौतम, पुरुषम्, प्रेतम्, आहुः, व्यस्नं-सिषत, अस्य, अञ्जानि, इति, वायुना, हि, गौतम, सूत्रेग्ग, संहब्धानि,

भवन्ति, इति, एवम् , एव, एतत् , याज्ञवल्क्य, अन्तर्यामिण्म् , ब्रूहि, इति ।। अन्वयः पदार्थाः । अन्वयः पदार्थाः

> सः≔वह याज्ञवहन्य ह=स्पष्ट

उवाख=बोले कि गौतम=हे गौतम !

तत्≔वह सूत्रम्≕सूत्र वै=निश्चय करके वायुः=वायु है गौतम=हे गौतम ! वायुना=वायुरूप सूत्रेग्≔सूत्र करके श्रयम्≃यह लोकः च=लोक च=धौर परः च=पर लोकः=लोक + च=श्रीर सर्वागि⇒सब भूतानि=प्राणी संहब्धानि } =प्रथित हैं भवन्ति } तस्मात्≔इस निये गौतम=हे गौतम ! प्रेतम्≕मरे हुवे पुरुषम्=पुरुष को

चै=निस्सन्देह आदुः≔कहते हैं कि श्चस्य≔इसके श्रङ्गानि=श्रङ्ग व्यक्षांसचत=दीने होगये हैं हि=क्योंकि गौतम=हे गौतम ! वायुना=वायुरूप सूत्रेग्=सूत्र करके संदर्धानि } =सब श्रङ्ग ग्रथित होतेहैं भवन्ति } इति=ऐसा + श्रत्वा≔सुन कर गौतमः=गीतम ने श्राह=कहा याञ्चयत्रय=हे याज्ञवल्क्य ! एतत्≕यइ विज्ञान एवम् एव=ऐसाही है जैसा माप कहते हैं + अथ≈श्रव श्रन्तर्यामिणम्=श्रन्तर्यामी को मृहि=भाप कहें

भावार्थ ।

याझवल्क्य ने कहा हे गौतम ! आप सुनें, मैं कहता हूं. वायु ही वह सूत्र है, जिसको गन्धर्व ने आप से कहा था, वायुरूप सूत्र करके ही कारण सहित यह दृश्यमान लोक, और आकाश विषे स्थित दृश्यम्दर्य संपूर्ण लोक, प्राणी और पदार्थ जो उनके अन्दर हैं, प्रथित हैं, हे गौतम ! जब पुरुष मृत्यु को प्राप्त होजाता है, तब उसके मृतक शरीर को देखकर मृतुष्य कहते हैं, कि इस पुरुष के सब अवयव ढीले पड़गये हैं, जैसे माला में से सूत्र के निकल जान पर उसके मिण् इधर

उधर गिर पड़ते हैं, इस उदाहररा से आपको मालूम होसक्ता है कि वायुरूप सूत्र करके ही सब पदार्थ अधित हैं, ऐसा सुन कर गौनम उदालक कहते हैं कि, हे याज्ञवल्क्य ! यह विज्ञान ऐसाही है जैसा आपने कहा है, हे याज्ञवल्क्य ! आप कृपा करके अन्तर्यामी विषय के प्रश्न का उत्तर देवें ।। २ ।।

मन्त्रः ३

यः पृथिन्यां तिष्ठन्पृथिन्या अन्तरो यं पृथिवी न वेद यस्य पृथिवी शरीरं यः पृथिवीमन्तरो यमयत्येष त आत्मान्तर्याम्यमृतः॥ पदच्छेदः।

यः, पृथिव्याम्, तिष्ठन्, पृथिव्याः, श्रन्तरः, यम्, पृथिवी, न, वेद्, यस्य, पृथिवी, शरीरम्, यः, पृथिवीम्, श्रन्तरः, यमयति, एषः, ते, झात्मा, श्रन्तर्यामी, श्रमृतः ॥

श्चन्वयः पदार्थाः झन्वयः

यः=जो

पृथिद्याम्=पृथ्वी में

तिष्ठन्=स्थित है

+यः=जो

पृथिद्याः=पृथ्वी के

झन्तरः=बाहर है

यम्=जिसको

पृथिद्यिः=पृथ्वी

न=नहीं

वेद=जानती है

यस्य=जिसका

शरीरम=शरीर

पृथिवी⇒पृथ्वी है
यः≔जो
श्रान्तरः≔प्रश्वी के बाहर
भीतर रहकर
पृथिवीम्≕प्रश्वी को
यमयति≕स्व ब्यापार में जगाकर शासन करता है प्राप्तः=वही स्वान्तरा

पदार्थाः

ते=तेरा श्रमृतः=मरणधर्मरहित श्रात्मा=श्रात्मा श्रन्तर्यामी=श्रन्तर्यामी है

भावार्थ ।

याज्ञवक्क्य महाराज कहते हैं कि, हे गौतम ! जो पृथ्वी में रहता हुआ वर्त्तमान है वही अपन्तर्यामी है, गौतम कहते हैं हे याज्ञवक्क्य !

पार्थ्वी में तो सब पदार्थ रहते हैं क्या सबही अन्तर्यामी हैं ? याज्ञवहक्य कहते हैं, हे गौतम ! ऐसा नहीं, जो पृथ्वी के अन्तर है, जो पृथ्वी के बाहर है, जो प्रथ्वी के ऊपर है, जो प्रथ्वी के नीचे है, जिसको प्रथ्वी नहीं जानती है, जो पृथ्वी को जानता है. जिसका पृथ्वी शरीर है, जो पृथ्वी के बाहर भीतर रहकर पृथ्वी को उसके व्यापार में लगाता है आर जो अविनाशी है, निर्विकार है, श्रीर जो तुम्हारा और सब का आतमा है, वही हे गौतम ! अन्तर्यामी है ॥ ३ ॥

मन्त्रः ४

योऽप्सु तिष्टन्नद्धचोऽन्तरो यमापो न विदुर्यस्यापः शरीरं योऽपोन्तरो यमयत्येष त आत्माऽन्तर्याम्यमृतः ॥

पदच्छेदः ।

यः, श्राप्तु, तिष्ठन्, श्राद्ध्यः, श्रान्तरः, यम्, श्रापः, न, विदुः, यस्य, श्चापः, शरीरम्, यः, श्चपः, श्चन्तरः, यमयति, एपः, ते, श्चात्मा, श्चन्तर्यामी, श्चमृतः ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः

श्रन्ययः

पदार्थाः

श्रापः=जल है यः=जो

श्चन्तरः=जलके श्रभ्यन्तर

रह कर

श्रापः≕जल को यमयति≕स्वव्यापार में जगाता

पपः=वही

ने=तेरा स्रमृतः=श्रविनाशी ब्राह्मा=ब्राह्मा

श्चन्तर्यामी=श्चन्तर्यामी है

य:≕जो श्रप्सु=जल में तिष्ठन्=रहता है + च=श्रीर श्रद्धशः=जल के श्चन्तरः≔बाहर भी स्थित है यम्=जिस हो श्रापः≂त्रत न≕नहीं विदुः=जानते हैं + च=श्रीर यस्य=जिसका

शरीरम्=शरीर

ग्रन्वयः

बृहदारगयकोपनिषद् स०।

भावार्थ ।

हे गीतम ! जो जल में रहता है, झीर जो जल के बाहर भी है, जिसको जल नहीं जानता है, झीर जिसका शरीर जल है, झीर जो जल के बाहर भीतर रह कर उसको शासन करता है, वही तुम्हारा आत्मा है, वही अविनाशी है, वही निर्विकार है, यही वह अन्तर्यामी है। ४॥

मन्त्रः ५

योऽग्नौ तिष्ठन्नग्नेरन्तरो यमग्निर्न वेद यस्याग्निः शरीरं बीऽग्निमन्तरो यमयत्येष ते त्रात्माऽन्तर्याम्यमृतः॥

पदच्छेदः ।

यः, अग्नो, तिष्ठन्, अग्नेः, अन्तरः, यम्, अग्निः, न, वेद्, यस्य, अग्निः, रागीरम्, यः, अग्निम्, अन्तरः, यमयति, एषः, ते, आत्मा, श्रन्तर्यामी, अमृतः ॥

पदार्थाः

यः=जो
श्वागनी=श्वाग्न में
तिष्ठन्=रहता है
+ च=श्वोर
+ यः=जो
श्वागने:=श्वाग्न के
श्वानत्यः=भीतर स्थित है
यम्=जिसको
श्वागनः=श्वान

न=नहीं वेद=जानता है

य∓य≕जिसका

श्रन्ययः पदार्थाः श्ररीरम्=शरीर श्रार्गः=श्रीन है यः=जो श्रन्तरः=श्रीन के भीतर रह कर श्रीनम्=श्रीन को यमयति=शासन करता है एषः=वही ते⇒तेरा श्रम्तः=श्रीवनाशी श्रात्मा=श्रात्मा

भावार्थ ।

हे गौतम ! ऋौर भी सुनी, जो अभिन के अन्दर और बाहर स्थित

है, जो श्राग्नि का शरीर है, जिसको श्राग्न नहीं जानता है, और जो अग्नि को जानता है, और जो अग्नि के बाहर भीतर रह कर अन्नि को शासन करता है, जो अमृतरूप आपका आरमा है यही वह अन्त र्यामी है।। १।।

मन्त्रः ६

योऽन्तरिक्षे तिष्ठन्नन्तरिक्षादन्तरो यमन्तरिक्षं न वेद यस्यान्तरिक्षं शरीरं योऽन्तरिक्षमन्तरो यमयत्येष त त्रात्माऽन्तर्याम्यमृतः ॥ पदच्छेदः ।

यः, श्रान्तरिक्षे, तिष्टन्, श्रान्तरिक्षात्, श्रान्तरः, यम्, श्रान्तरिक्षम्, न. वेद. यस्य, श्रन्तरिक्षम्, शरीरम्, यः, श्रन्तरिक्षम्, श्रन्तरः, यम-यति, एष:, ते, आत्मा, अन्तर्यामी, अमृत: ॥ श्चन्धयः पदार्थाः श्चरवय:

यः=जो

श्चन्तरिक्षे=श्राकाश में

तिप्रन=स्थित है

+ च=श्रोग

+ यः≔जो

श्चन्तरिक्षात=श्राकाश के

झन्तरिक्षम्=बाकाश

ऋन्तरः=बाहर है यम्=जिसको

> न=नहीं वेद≔जानता है

यस्य=जिसका

पदार्थाः

श्ररीरम्=शरीर श्चन्तरिक्षम्=श्राकाश है

यः=जो

श्चन्तरः≔धाकाश में रह कर श्चन्तरिक्षम्=त्राकाश को

यमयति=नियमबद्ध करता है

ष्षः≔वही त=तेरा

श्रमुत:=श्रविनाशी **ञात्मा**ःश्रात्मा

श्चन्तर्यामी=श्चन्तर्यामी है

भावार्थ ।

हे गौतम ! जो अन्तरिक्ष में रहता है, और जो अन्तरिक्ष के बाहर स्थित है, जिसको अन्तरिक्ष नहीं जानता है, और जो अन्तरिक्ष को जानता है, जिसका शरीर अन्तरिक्ष है, और जो अन्तरिक्ष के बाहर भीतर स्थित होकर श्रन्तरिक्ष को शासन करता है, झौर जो झापका स्रविनाशी झात्मा है, यही वह झन्तर्यामी है ॥ ६ ॥

मन्त्रः ७

यो नायो तिष्ठन् वायोरन्तरो यं नायुर्न वेद यस्य नायुः शरीरं यो नायुमन्तरो यमयत्येष त आत्माऽन्तर्याम्यमृतः ॥

पदच्छेदः ।

यः, वायो, तिष्ठम , वायोः, झन्तरः, यम्, वायुः, न, वेद, यस्य, बायुः, शरीरम्, यः, वायुम्, झन्तरः, यमयति, एषः, ते, झात्मा, झन्तर्यामी, झमृतः ॥

द्यान्वयः

पदार्थाः | अन्वयः

पदार्थाः

यः=जो वायौ=वायु में तिष्ठन्=स्थित है

+ यः=जो वायोः=वायु के

द्यान्तरः=बाहर है यम्≕जिसको

वायुः=वायु न=नहीं

चेद्≕जानता है यस्य≕जिसका

श्रीरम्=शरीर

वायुः≔वायु है

यः=जो

श्चन्तरः=वायु के श्वभ्यन्तर

रह कर

व≀युम्≕वायु को

यमयात=नियमबद्ध करता है

प्षः≔वही

ते=तेरा श्रमृतः=श्रविनाशी

अस्तः=त्रात्मा श्राह्मा=त्राह्मा

श्चात्मा=श्चात्मा श्चन्तर्यामी=श्चन्तर्यामी है

भावार्थ।

जो वायु के बाहर भीतर रहता है, जिसको वायु नहीं जानता है, इकीर जो वायु को जानता है, जिसका वायु शरीर है, जो वायु के भीतर बाहर रह कर वायु को शासन करता है, जो आपका अविनाशी निर्विकार आस्मा है, यही वह अन्तर्यामी है।। ७।।

मन्त्रः ८

यो दिवि तिष्ठन्दिवोऽन्तरो यं द्यौर्न वेद यस्य द्यौः शरीरं यो दिवमन्तरो यमयत्येष त स्रात्माऽन्तर्याम्यमृतः ॥

पदच्छेदः ।

य:, दिवि, तिष्ठन्, दिवः, अन्तरः, यम्, द्योः, न, वेद, यस्य, द्योः, शरीरम्, यः, दिवम्, अन्तरः, यमयित, एषः, ते, आत्मा, अन्तर्यामी, अमृतः ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः म्नन्वयः

पदार्थाः

यः=जो दिवि=स्वर्ग में तिष्ठम्=स्थित है + च=और + यः=जो दिवः=स्वर्ग के क्यस्तरः=बाहर है

त्तरः-चाहर ह यम्=जिसको द्यौः=स्वर्ग न=नहीं

चेद्≕ज्ञानता है यस्य≕जिसका शरीरम्=शरीर द्यौः=स्वर्ग है

यः=जो

श्चन्तरः=स्वर्ग में रह कर

दिवम्=स्वर्ग को यमयति=नियमबद्ध करता है

एषः=वही ते=तेरा

श्रमृतः=ग्रविनाशी श्रात्मा=त्रात्मा

श्रन्तर्यामी=श्रन्तर्यामी है

भावार्थ ।

जो द्युलोक में स्थित है, जो द्युलोक के बाहर है, जिसको द्युलोक नहीं जानता है, आगेर जो द्युलोक को जानता है, जिसका शरीर द्युलोक है, आगेर जो द्युलोक के बाहर भीतर स्थित रह कर द्युलोक को शासन करता है, और जो अविनाशी आपका आस्मा है, यही वह अन्तर्यामी है ॥ ८॥

मन्त्रः ६

य त्रादित्ये तिष्ठकादित्यादन्तरो यमादित्यो न वेद यस्यादित्यः शरीरं य त्रादित्यमन्तरो यमयत्येष त त्रात्माऽन्तर्याम्यमृतः ॥

: 1

यः, आदित्ये, तिष्ठन्, आदित्यात्, अन्तरः, यम्, आदित्यः, न, वेद, यस्य, आदित्यः, शरीरम्, यः, आदित्यम्, अन्तरः, यमयित, एपः, ते, आत्मा, अन्तर्यामी, अमृतः ॥

पदार्थाः पदार्थाः श्चन्वयः श्रन्वयः यः≕जो श्ररीरम्≔शरीर द्यादित्ये=सूर्य में श्रादित्यः=सूर्य है तिष्टन्=स्थित है + यः=जो त्रान्तरः=सूर्य के भीतर रह करः श्रादित्यात्=पृर्व के श्रादित्यम्=सूर्य को श्रन्तरः=बाहर है यमयति=नियमबद्ध करता है यम्≕िजसको एषः=वही श्चाद्दित्यः=सूर्य ते=तेरा **न**=नहीं श्रमृतः=श्रविनाशी चद=जानता है श्चातमा=बातमा यस्य=जिसका श्चन्तर्यामी=श्रन्तर्यामी है

भावार्थ ।

जो आदित्य के भीतर वाहर रह कर स्थित रहता है, जिसको आदित्य नहीं जानता है, जो आदित्य को जानता है, जिसका शरीर आदित्य है, जो आदित्य के भीतर वाहर रह कर आदित्य को शासन करता है, और जो अविनाशी आपका आत्मा है, यही वह अन्तर्शमी है ॥ ६ ॥

मन्त्रः १०

यो दिश्च तिष्ठन्दिग्भ्योऽन्तरो यं दिशो न विदुर्यस्य दिशः शरीरं यो दिशोऽन्तरो यमयत्येष त आत्माऽन्तर्याम्यमृतः ॥ पदच्छदः।

यः, दिश्च, तिष्ठन्, दिग्भ्यः, झन्तरः, यम्, दिशः, न, विदुः, यस्य, दिशः, शरीरम्, यः, दिशः, झन्तरः, यमयति, एषः, ते, झात्मा, झन्तरांमी, झमृतः ॥

अन्वयः

ाः पदार्थाः
यः=जो
दिश्च=दिशाओं में
तिष्ठच=स्थित है
यः=जो
दिगम्यः=दिशाओं के
अन्तरः=बाहर है
यम्=िमसको
दिशः=दिशायें
न=नहीं
चिदुः=जानती हैं
यस्य=जिसका
शरीरम=शरीर

ग्रन्वयः

पदार्थाः दिशः=दिशायें हैं

यः≕जो

श्चन्तर:=दिशास्रों के भीतर

रह कर

दिश:=दिशायों को

यमयति=नियमबद्ध करता है

एषः=वही तं=तेरा

श्रमृतः=श्रविनाशी

ग्रात्मा=ग्रात्मा

श्चन्तर्यामी=श्रन्तर्यामी है

भावार्थ ।

जो दिशाओं के अभ्यन्तर रहता है, जो दिशाओं के बाहर है, जिसको दिशाओं कहीं जानती हैं, जो दिशाओं को जानता है, जिस का शरीर दिशायों हैं, जो दिशाओं के भीतर दाहर स्थित होकर दिशाओं का शासन करता है, जो आपका आत्मा है, जो अमृतरूप है, यही वह अन्तर्यामी है ॥ १०॥

मन्त्रः ११

यश्चन्द्रतारके तिष्ठु छेश्चन्द्रतारकादन्तरो यं चन्द्रतारकं न वेद् यस्य चन्द्रतारकछे शरीरं यश्चन्द्रतारकमन्तरो यमयत्येष त आत्माऽन्तर्याम्यमृतः ॥

पदच्छेदः ।

यः, चन्द्रतारके, तिष्ठन्, चन्द्रतारकात्, श्चन्तरः, यम्, चन्द्र-तारकम्, न, वेद, यस्य, चन्द्रतारकम्, शरीरम्, यः, चन्द्रतारकम्, श्चन्तरः, यमयति, एषः, ते, श्चात्मा, श्चन्तर्यामी, श्चमृतः ॥ **अ**न्वयः

पदार्थाः ।

ग्रन्वयः

पदार्थाः

यः≕गो चन्द्रतारके≕चन्द्रतारों में

तिष्ठन्=स्थित है + यः=जो

चन्द्रतारकात्=चन्द्रतारों के श्रान्तरः≔गहर है

श्चन्तरः≔गहर ह यम्=जिसको चन्द्रतारकम्=चन्द्रतारे

> न=नहीं वेद्=जानते हैं यस्य≕जिसका

शरीरम्=युशेर

चन्द्रतारकम्=चन्द्र ग्रीर तारे हैं

यः≕जो

श्चन्तरः≔चन्द्र श्रीर तारों के

अभ्यन्तर रह कर

चन्द्रतारकम्=चन्द्र तारों को

यमयति=नियमबद्ध करता है

एषः=यही

त=तेरा

श्चमृतः=श्रविनाशी

श्चातमा=श्चातमा

श्चन्तर्यामी=बन्तर्यामी है

भावार्थ ।

जो चन्द्रमा और तारों के भीतर बाहर स्थित है, जिसको चन्द्रमा और तारों को जानता है, जिस का शरीर चन्द्रमा और तारों को जानता है, जिस का शरीर चन्द्रमा और तारों के भीतर रह कर उनको शासन करता है, जो आपका आत्मा है, जो अमृतरूप है, यही वह अन्तर्यामी है।। ११।।

मन्त्रः १२

य त्राकाशे तिष्ठवाकाशादन्तरो यमाकाशो न वेद यस्याकाशः शरीरं य त्राकाशमन्तरो यमयत्येष त त्रात्माऽन्तर्याम्यमृतः ॥

पदच्छेदः ।

यः, आकाशो, तिष्ठन्, आकाशात्, झन्तरः, यम्, आकाशः, न, वेद, यस्य, आकाशः, शरीरम्, यः, आकाशम्, अन्तरः, समयति, एपः, ते, आत्मा, अन्तर्यामी, अमृतः ॥

धारवयाः

पदार्थाः श्चत्वयः पदार्थाः

यः=जो

द्याकाशे=श्राकाश में तिष्ठन्≕स्थित है

+ यः≕जो

श्राकाशात्=भाकाश से श्रन्तरः≔बाहर है

यम्=जिसको

श्राकाशः=श्राकाश

न=नहीं

वेद=जानता है **यस्य**=जिसका

शुरीरमू=शरीर

आकाशः=त्राकाश है

य:≕जो

श्चन्तर:=धाकाश के श्रभ्यन्तर

रह कर

आकाशम्=श्राकाश को यमयति=नियमबद्ध करता है

> प्रयः=वही ते≃तेरा

श्चमृतः=श्रविनाशी

श्चात्मा=श्रात्मा श्चन्तर्यामाः=अन्तर्यामी है

भावार्थ ।

जो श्राकाश के भीतर बाहर स्थित है, जिसको श्राकाश नहीं जानता है, जो आकाश को जानता है, जिसका शरीर आकाश है, जो श्राकाश के भीतर बाहर रह कर उसको शासन करता है, जो श्चापका आतमा है, जो अमृतस्वरूप है, यही वह अन्तर्यामी है।। १२॥

मन्त्रः १३

यस्तमास तिष्ठछंस्तमसोऽन्तरो यं तमो न वेद यस्य तमः शरीरं यस्तमोऽन्तरो यमयत्येष त आत्मान्तर्याम्यमतः ॥

पदच्छेदः ।

यः, तमसि, तिष्ठन्, तमसः, अन्तरः, यम्, तमः, न, वेद, यस्य, तमः, शरीरम्, यः, तमः, श्रान्तरः, यमयति, एपः, ते, श्रात्मा, ध्यन्तर्यामी. श्रमतः ॥

द्यास्वयः

पदार्थाः । श्रन्वयः

पदार्थाः

यः≕जो तमसि=श्रन्थकार में तिष्टन=स्थित है

+ यः≃जो तमसः=धन्धकार के भ्रान्तर:=बाहर है

यम् तमः=जिसको भन्यकार

न चेद=नहीं जानता है

यस्य=जिसका
शारीरम्=शरीर

तमः=तम है

यः=जो

अन्तरः=अन्यकार के भीतर

बाहर रह कर

तमः=घन्धकार को यमयति=नियमबद्ध करता है एषः=वडी ते⇒तेरा अस्तः=घविनाशी ब्रास्मा=बास्मा

श्चन्तर्यामी=धन्तर्यामी है

भावार्थ ।

जो तमके भीतर बाहर रहता है, जिसको तम नहीं जानता है, जो तमको जानता है, जिसका शरीर तम है, जो तम के अन्तर और बाहर रह कर उसको शासन करता है, जो अन्नतस्वरूप है, और जो आपका आत्मा है, यही वह अन्तर्यामी है।। १३।।

मन्त्रः १४

यस्तेजिस तिष्ठथंश्स्तेजसोऽन्तरो यं तेजो न वेद यस्य तेजः शरीरं यस्तेजोऽन्तरो यमयत्येष त आत्मान्तर्याम्यमृत इत्यिषदै-वतमथाधिभूतम् ॥

पद्च्छेदः ।

यः, तेजिस, तिष्ठन्, तेजसः, श्चन्तरः, यम्, तेजः, न, वेद, यस्य, तेजः, शरीरम्, यः, तेजः, श्चन्तरः, यमयति, एषः, ते, श्चारमा, श्चन्तर्यामी, श्चमृतः, इति, श्चथिदैवतम्, श्चथ्, श्चथिमृतम् ॥

श्चन्वयः पदार्थाः श्चन्वयः पदार्थाः यः=जो श्चन्तरः=वाहर्हे

तेजसि≔तेज में तिष्ठन्≕स्थित है + यः≕जो तेजसः≔तेज के श्रन्तरः≔षाहर है
यम्≕जिसको
तेजः≔तेज
न≕नहीं
वेद्≕जानता है

यस्य=जिसका शरीरम्=शरीर तेजः=केज है

य:=जो

श्चन्तर:=तेज के भीतर रह कर तेजः=तेज को

यमयति=नियमबद्ध करता है

एषः=वही ते=तेरा श्रमृतः :श्रीवनाशी श्रात्मा=त्रात्मा श्रन्तर्यामी=श्रन्तर्यामी है

इति=इस प्रकार

श्रधिदैवतम्= { देवता के उदेश्य से श्रमिदैवतम्= { श्रम्तर्शमा विषय कहा है

श्रथ⇒प्रब

म्राधिभूतम्=भौतिक विषय कहेंगे

भावार्थ ।

जो तेज के भीतर बाहर रहता हैं, जिसको तेज नहीं जानता है, जो तेज को जानता है, जिसका शरीर तेज हैं, जो तेज के भीतर बाहर स्थित रह कर उसको शासन करता है, जो आपका आत्मा है, जो अमृतस्वरूप है, यही वह अन्तर्यामी है इस प्रकार अधिदेव का वर्णान होकर अधिभृत का प्रारंभ होता है ॥ १४ ॥

मन्त्रः १५

यः सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्सर्वे भ्यो भूते भ्यो अन्तरो यर्छ सर्वाणि भूतानि न विदुर्यस्य सर्वाणि भूतानि शरीरं यः सर्वाणि भूतान्यन्तरो यमयत्येष त त्रात्मान्तयोभ्यमृत इत्यधिभृतमथाध्यात्मम् ॥

पद्च्छेदः ।

यः, सर्वेषु, भूतेषु, तिष्ठन्, सर्वेभ्यः, भूतेभ्यः, श्रन्तरः, यम्, सर्वाण्णि, भूतानि, न, विदुः, यस्य, सर्वाण्णि, भूतानि, शरीरम्, यः, सर्वाणि, भूतानि, श्रन्तरः, यमयति, एषः, ते, श्रात्मा, श्रन्तर्यामी, श्रमृतः, इति, श्राविभूतम्, श्रथ, श्रम्यात्मम् ॥

ग्रन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

यः≕जी सर्वेषु=सब भूतेषु=प्राणियों में तिष्ठन्≕स्थित है यः≕क्षो सर्वेभ्यः≔सव भूतेभ्यः≔माखियों के खन्तरः≔वाहर है यम्≕जिसको सर्वाखि⇔सव

यमयति=नियमबद्ध करता है भूतानि=प्राणी एषः≔वही न=नहीं ते≔तेरा विदुः≔जानते हैं श्चमृतः=श्रविनाशी यस्य=जिसका श्रातमा=ग्रात्मा श्ररोरम्≔शरीर श्चन्तर्यामी=ग्रन्तर्यामी है रुर्वाण्≔सब इति=इस प्रकार भूतानि=प्राणी हैं श्रिधिभूतम्=ग्रिधिभृत का वर्णन यः≕जो होचुका श्चन्तरः=प्राव्यियों के श्रभ्यन्तर श्रध=स्रब रह कर श्चध्यात्मम्=श्रध्यात्म का वर्णन सर्वागि≕सब होगा भूतानि=प्राशियों को

भावार्थ ।

जो सब भूतों में रहता है, जो सब भूतों के बाहर भी स्थित है, जिसको सब भूत नहीं जानते हैं, जो सब भूतों को जानता है, जिस का शरीर सब भूत हैं, जो सब भूतों के भीतर बाहर रह कर उनको शासन करता है, जो श्रमृतस्वरूप है, जो निर्विकार है, जो आपका श्रात्मा है, यही वह अन्तर्यामी है, इस प्रकार अधिभूत का वर्णन होकर अध्यात्म का आरम्भ होता है ॥ १४ ॥

. मन्त्रः १६

यः प्राणे तिष्ठन्त्राणादन्तरो यं प्राणो न वेद यस्य प्राणः शरीरं यः प्राणमन्तरो यमयत्येष त त्र्रात्मान्तर्याम्यमृतः ॥

पद्च्छुदः ।

यः, प्राग्गे, तिष्ठन्, प्राग्गात्, झन्तरः, यम्, प्राग्गः, न, वेद, यस्य, प्राग्गः, शरीरम्, यः, प्राग्गम्, झन्तरः, यमयति, एषः, ते, झात्मा, झन्तर्यामी, झम्रतः ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः | स्रन्वयः

पदार्थाः

यः≕जा प्रातो=प्राग में तिष्ठन्≕स्थित है + यः≖जो प्राणात्=प्राण के
श्चन्तरः=बाहर है
श्चम्=जिसको
प्राणः=प्राण
न=नहीं
वेद=जानता है
शह्य=जिसका
शरीरम्=्यारीर
प्राणः=प्राण है

यः≔को
आन्तरः≔प्राण में रह कर
प्राण्म्=प्राण को
यमयति≕नियमवद्ध करता है
एषः≔वही
ते≔तेरा
अमृतः≔ष्रविनाशी
आत्मा≔श्रात्मा
अन्तर्यामी=अन्तर्यामी है

भावार्थ ।

जो प्राग्ण के अन्तर रहता है, और बाहर भी रहता है, जिस को प्राग्ण नहीं जानता है, जो प्राग्ण को जानता है, जिसका शरीर प्राग्ण है, जो प्राग्ण के भीतर बाहर रह कर उसको शासन करता है, जो आपका श्रात्मा है, जो अविनाशी है, यही वह अन्तर्यामी है।। १६।।

मन्त्रः १७

यो वाचि तिष्ठन्वाचोऽन्तरो यं वाङ् न वेद यस्य वाक् शरीरं यो वाचमन्तरो यमयत्येष त त्र्रात्मान्तर्याम्यमृतः ॥

पदच्छेदः ।

यः, वाचि, तिष्ठन्, वाचः, श्चन्तरः, यम्, वाक्, न, वेद, यस्य, वाक्, शरीरम्, यः, वाचम्, अन्तरः, यमयित, एषः, ते, आस्मा, अन्तर्यामी, अमृतः ॥

ध्रन्चयः पदार्घाः यः=जो वाचि=वायी में तिष्ठन्≕स्थित है + यः≕जो वाचः=वायी के

वाचः=त्राणी के झन्तरः=बाहर है यम्=जिसको द्मन्वयः पदार्थाः वार्षो≔वार्षी न≔नर्ही

चेद=जानती है
यस्य≕जिसका
शरीरम्≕शरीर
चाकु=वाणी है
यः≔जो

श्चान्तरः=वाणी में रह कर बाचम्=वाणी को यमयति=नियमबद्ध करता है ते⇒तेरा ग्रमृतः=प्रविनाशी ग्राःस्मा=प्रात्मा ग्रान्तर्गामी=प्रन्तर्गामी है

एषः=वही

भावार्थ ।

जो वाग् के अन्तर स्थित है, जो वाग् के बाहर स्थित है, जिसको वाग् नहीं जानती है, जो वाग् को जानता है, जिसका शरीर वाग् है, जो वाग् के भीतर वाहर रह कर वाग् को शासन करता है, जो आपका आत्मा है, जो अमृतस्वरूप है, यही वह अन्तर्यामी है।। १७॥

मन्त्रः १८

यरचश्रुषि तिष्ठश्रंश्चश्लुषोऽन्तरो यं चश्चुर्न वेद यस्य चश्चुः शरीरं यरचश्चरन्तरो यमयत्येष त त्रात्मान्तर्याम्यग्रतः ॥

पदच्छेदः ।

यः, चक्कुषि, तिष्ठन्, चक्कुषः, अन्तरः, यम्, चक्कुः, न, वेद, यस्य, चक्कुः, शरीग्म, यः, चक्कुः, अन्तरः, यमयति, एषः, ते, आत्मा, अन्तर्यामी, असृतः।।

श्चन्चयः

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

यः≕जो चश्चिष्ठ=नेत्र में तिष्ठन्=स्थित है + यः≕जो चश्चषः=नेत्र कें श्चन्तरः=बाहर है यम्=जिसको प्रतिरम्=शरीर चश्चः=नेत्र है यः=जो श्रन्तरः=नेत्र में रह कर चश्चः=नेत्र को यमयति≔नियमबद्ध करता है एषः=वही

न≔नहीं बेद्≕जानता है यस्य≕जिसका ते=तेरा समृतः=घविनाशी सारमा=घारमा सन्तर्थामी=धन्तर्थामी है

भावार्थ।

जो चक्षु के अन्तर स्थित है, जो चक्षु के बाहर स्थित है, जिसको चक्षु नहीं जानता है, जो चक्षु को जानता है, जिसका शरीर चक्षु है, जो चक्षु के भीतर बाहर रह कर उसको शासन करता है, जो आपका आत्मा है, जो अविनाशी है, यही वह अन्तर्यामी है।। १८॥

मन्त्रः १६

यः श्रोत्रे तिष्ठञ्छ्रोत्रादन्तरो यथ् श्रोत्रं न वेद यस्य श्रोत्रथं श्रीरं यः श्रोत्रमन्तरो यमयत्येष त स्रात्मान्तर्याम्यमृतः ॥

पदच्छेदः ।

यः, श्रोत्रे, तिष्ठन्, श्रोत्रात्, झन्तरः, यम्, श्रोत्रम्, न, वेद, यस्य, श्रोत्रम्, शरीरम्, यः, श्रोत्रम्, झन्तरः, यमयति, एषः, ते, झात्मा, झन्तर्यामी, झमृतः ॥

द्यन्वयः

यः=जो श्रोत्रे=कर्ष में तिष्ठन्=स्थित है + यः=जो श्रोत्रात्=कर्ष के सन्तरः=बाहर है यम्=जिसको

श्रोत्रम्=कर्ष न=नहीं

वेद्≔जानता है यस्य≕जिसका

शरीरम्=शरीर

पदार्थाः । श्रन्वयः

पदार्थाः

श्रोत्रम्=कर्ष है यः=जो

श्चन्तरः=कर्ष के श्रभ्यन्तर

रह कर

श्रोत्रम्=कर्ण को

यमयति=नियमबद्ध करता है

एषः≔वही ते=तेश

अमृतः=श्रविनाशी

आहता=श्रास्मा श्राहमा=श्रास्मा

अन्तर्यामी=अन्तर्यामी है

भावार्थ ।

जो श्रोत्र के आध्यन्तर स्थित है, जो श्रोत्र के बाहर स्थित है, जिसको श्रोत्र नहीं जानता है, जो श्रोत्र को जानता है, जो श्रोत्र के श्चभ्यन्तर श्चौर बाहर स्थित होकर श्रोत्र को शासन करता है, जी श्चाप का श्चात्मा है, जो श्चमृतस्वरूप है, यही वह श्चन्तर्यामी है।।१६॥

मन्त्रः २०

यो मनसि तिष्टन्मनसोऽन्तरो यं मनो न वेद यस्य मनः शरीरं यो मनोऽन्तरो यमयत्येष त त्र्यात्मान्तर्याम्यमृतः ॥

पद्दच्छेदः ।

यः, मनसि, तिष्ठन्, मनसः, श्चन्तरः, यम्, मनः, न, वेद, यस्य, मनः, शरीग्म्, यः, मनः, श्चन्तरः, यमयति, एपः, ते, श्चात्मा, श्चन्त-र्यामी, श्चमृतः ॥

श्चन्वयः	पदार्थाः	श्र न्वयः	पदार्थाः
य:≕जो		श्रारीरम्=शरीर	
मनसि=मन में		मनः=मन है	
तिष्ठन्≕स्थित है		यः≕जो	
+ यः=जो		श्चन्तरः=मन में रह	कर
मनसः=मन के		मनः =मनको	
श्चन्तर:=बाहर है		यमयति=नियमवद	करता है
यम्=जिसको		एषः≔व∉ी	
मनः =मन		ते=तेरा	
न =नहीं		श्चमृतः=श्रविनाशी	
बेद्=जानता है		श्चात्मा=श्रात्मा	
यस् य=जिसका		श्रन्तर्यामी=श्रन्तर्यामी	है
		· •	

भावार्थ ।

जो मन के बाहर भीतर स्थित है, जिसको मन नहीं जानता है, जो मनको जानता है, जिसका शरीर मन है, जो मन के भीतर बाहर रह कर मनको शासन करता है, जो आपका आत्मा है, जो अमृत-स्वरूप है, यही वह अम्तर्यामी है ॥ २०॥

मन्त्रः २१

यस्त्वचि तिष्ठश्रंस्त्वचोऽन्तरो यं त्वङ् न वेद यस्य त्वक् शरीरं यस्त्वचमन्तरो यमयत्येष त त्रात्मान्तर्याम्यमृतः ॥

पद्च्छेदः ।

यः, त्वचि, तिष्टन्, त्वचः, अन्तरः, यम्, त्वक्, न, वेद, यस्य, त्वक्, शरीरम्, यः, त्वचम्, अन्तरः, यमयति, एपः, ते, श्रात्मा, अन्तर्यामी, अस्तः ॥

भ्रान्वयः

पदा
यः≕जो
त्वचि≕वचा में
तिप्रन्=म्थित है
+ यः≕जो
त्वचः≔त्वचाके
श्चन्तरः≔बाहर है
यम्≕जिसको
त्वक्≕त्वचा
न≔नहीं
चेद्=जानती है
यस्य=जिसका

ार्थाः अन्वयः पदाधाः शरीरम्=शतीर त्वक्≕त्वा है यः=जो अन्तरः=स्वचा में रह कर त्वचम्=स्वचा को

यमयति≔ित्यमबद्ध करता है एषः≔वही ते≕तेरा अमृतः≔श्रविनाशी श्रात्मा≔श्रात्मा अन्तर्यामा≕श्रन्तर्यामी है

भावार्थ ।

जो त्वचा के भीतर बाहर रहता है, जिसको त्वचा नहीं जानती है, जो त्वचा को जानता है, जिसका शरीर त्वचा है, जो त्वचा के भीतर बाहर रह कर त्वचा को शासन करता है, जो आपका आसा है, जो अस्तस्वरूप है, यही वह अन्तर्यामी है ॥ २१ ॥

मन्त्रः २२

 यो विज्ञाने तिष्ठन्विज्ञानादन्तरो यं विज्ञानं न वेद यस्य विज्ञानंश्र शरीरं यो विज्ञानमन्तरो यमयत्येष त श्रात्मान्तर्याम्यमृतः ॥

पदच्छेदः ।

यः, विज्ञाने, तिष्ठन्, विङ्गानात्, श्चन्तरः, यम्, विज्ञानम्, न, वेद, यस्य, विज्ञानम्, शरीरम्, यः, विज्ञानम्, श्चन्तरः, यमयित, एषः, ते, श्चात्मा, श्चन्तर्यामी, श्चारतः ॥ श्चन्वयः

पदार्थाः य:=जो विज्ञाने≕विज्ञान में तिप्टन्=स्थित है यः=जो विज्ञानात्≕विज्ञान के श्चन्तरः=बाहर है यम्=जिसको विज्ञानम्=विज्ञान न=नहीं चेद्=जानता है यस्य≕जिसका

श्चन्ययः

पदार्थाः श्ररीरम्=शरीर विज्ञानम्=विज्ञान है यः≕जो श्चान्तरः=विज्ञान में रह कर विज्ञानम्=विज्ञान को यमयति=नियमबद्ध करता है एषः=वही ते≕तेरा **ग्रमृतः**=ग्रविनाशी श्चन्तर्यामी=धन्तर्यामी है

भावार्थ ।

जो विज्ञान के इप्रन्तर स्थित है, जो विज्ञान के वाहर स्थित है, जिसको विज्ञान नहीं जानता है, जो विज्ञान को जानता है, जिसका शरीर विज्ञान है, जो विज्ञान के भीतर वाहर स्थित होकर विज्ञान को शासन करता है, जो श्रापका श्रात्मा है, जो श्रमृतस्वरूप है, यही वह ऋन्तर्यामी है ॥ २२ ॥

मन्त्रः २३

यो रेतसि तिष्टन् रेतसोऽन्तरो यथं रेतो न वेद यस्य रेतः शरीरं यो रेतोऽन्तरो यमयत्येप त आत्मान्तर्याम्यमृतोऽदृष्टो द्रष्टाऽश्रुतः श्रोतामतो मन्ताविज्ञातो विज्ञाता नान्योऽतोस्ति द्रष्टा नान्योऽतोस्ति श्रोता नान्योऽतोस्ति मन्ता नान्योऽतोस्ति विज्ञातैप त त्रात्मान्तर्या-म्यमृतोऽतोन्यदार्चं तता होदालक त्राक्षिकपरराम ॥

इति सप्तमं ब्राह्मणम् ॥ ७ ॥

पदच्छेदः ।

ाः, रेतस्म, तिष्ठत् , रेतसः, झन्तरः, यम् , रेतः, न, वेद, यस्य, रेतः, शरीरम्, यः, रेतः, अन्तरः, यमयति, एपः, ते, आत्मा, अन्तर्यामी, अमृतः, अटष्टः, द्रष्टा, अश्रुतः, श्रोता, अमतः, मन्ता, श्रविज्ञातः, विज्ञाता, न, अन्यः, श्रातः, अस्ति, द्रष्टा, न, अन्यः, अतः, अस्ति, श्रोता, न, अन्यः, श्रातः, अस्ति, श्रोता, न, अन्यः, श्रातः, अस्ति, विज्ञाता, एषः, ते, श्रात्मा, अन्तर्यामी, श्रमृतः, अतः, अन्यत्, आर्त्तम्, तः, ह. उद्दालकः, आरुगिः, उपरुगम ॥

श्चन्वयः

पदार्था अन्वयः

पद र्गः

य:=जो रेत(स=वीर्थ में तिष्ठन्≕स्थित है + यः=जो रेतसः=त्रीर्थ के श्चन्तरः=बाहर है यम्=जिसको रेतः=वीर्य न=नहीं चेद=जानता है यस्य=जिसका श्रशीरम्=शरीर रेतः=वीर्थ है य:=जो श्चान्तरः=वीर्य में रह कर रेतः≔वीर्थ को यमयति=नियमबद्ध करता है एषः≔वही ते=तेरा श्चात्मा=श्चात्मा म्रमृतः=ग्रविनाशी थमृत-स्वरूप है + एषः=यही आहप्ट:=अहष्ट होता हुँआ द्रष्टा=द्रष्टा है

+ एषः=यही श्चात्रतः=ग्रथ्त होतः हुमा श्रोता=श्रोता है α्षः=यही श्चमतः=श्रमत होता हुन्ना मन्ता=मन्ता है दानी मनन करने वाला है + एषः≔यही श्रविज्ञातः=अविज्ञात होता हुआ विद्याता≔विज्ञाता है श्चतः≔इससे द्यान्यः=श्रन्य कोई द्रश=द्रश न≕नहीं ग्रस्ति=है श्रतः≕इससे श्रान्यः=घन्य कोई श्रोता=श्रोता

न=नहीं

ग्रतः=इससे

मन्ता=मन्ता

द्यास्त=है

न=नहीं

ग्रान्यः=ग्रन्य कोई

ग्रस्ति=है

श्चतः=इससे
श्चन्यः=श्चन्य कोई
विद्याता=विज्ञाता
न=नहीं
श्चस्ति=है
+ एषः=यही
ते=तेरा
श्चम्दाः=श्चिनाशी

श्चन्तर्यामी=धन्तर्यामी है
श्चतः=इससे
श्चन्यत्=प्रथक् ग्रेर सक्
श्चात्तम्=दुःखरूप है
ततः ह=इसके पीछे स्पष्ट
श्चार्यागः=श्चरुष का पुत्र
उद्दालकः=डइग्लक
उपरराम=च्य होता भया

भावार्थ ।

जो वीर्य के भीतर वाहर स्थित है, जिसको वीर्य नहीं जानता है, जो वीर्य को जानता है, जिसका शरीर वीर्य है, जो वीर्य के भीतर बाहर रह कर वीर्य को शासन करता है, वही श्राहर होता हुआ द्रष्टा है, वही श्राहर होता हुआ श्रोता है, वही श्रामन्ता होता हुआ मनन करने वाला है, और आवज्ञात होता हुआ विज्ञात है, वही श्रापका आत्मा है, वही श्रामृतस्वरूप है, इससे पुष्पक् और कोई द्रष्टा नहीं है, इससे पुष्पक् कोई विज्ञाता नहीं है, इससे श्रान्य कोई मन्ता नहीं है, इससे श्रान्य कोई मन्ता नहीं है, इससे श्रान्य कोई विज्ञाता नहीं है, यही तेरा अविनाशी श्राहमा अन्तर्यामी है, इससे पृथक् और सब दुःखरूप है, इसके पीछे अहसा का पुत्र उद्दालक चुप होता भया ॥ २३ ॥

इति सप्तमं ब्राह्मशुम् ॥ ७ ॥

श्रथाष्टमं ब्राह्मण्म् । मन्त्रः १

श्रथ ह वाचक्रव्युवाच ब्राह्मणा भगवन्तो हन्ताहिममं द्वौ प्रश्नौ प्रक्ष्यामितो चन्मे वक्ष्यति न जातु युष्माकिममं कश्चिद्वह्नोद्यं जेतेति पृच्छ गार्गीति ॥

पदच्छेदः ।

श्चिथ, ह, वाचक्रवी, उवाच, ब्राह्मणाः, भगवन्तः, हन्त, श्चह्म, ह्मम्, द्वौ, प्रश्नो, प्रक्ष्यामि, तौ, चेत्, मे, वक्ष्यति, न, जातु, युष्माः कम्, इमम्, कश्चित्, ब्रह्मोद्यम्, जेता, इति, प्रन्छ, गार्गि, इति ॥ श्चन्वयः पदार्थाः श्चन्वयः पदार्थाः

न्त्ययः पदाया श्रथ ह=इसके बाद वाचक्रवी=गार्गी उवाच=बोर्जी कि ब्राह्मणाः } =हे पूज्य, ब्राह्मणो ! भगवन्तः }

हन्त≔यदि श्रापकी श्रनु-मति हो तो इमम्≔इन याज्ञवरुक्य से द्वौ≔दो प्रश्नौ≔प्रशन

श्रहम्=में प्रक्ष्यामि=ृङ्गी चेत्=श्रगर

+ सः=वह मे=मेरे

तौ≔उन दोनों प्रश्नों का

वध्यति=उत्तर देंगे तो युष्माकम्=श्रापकोगों में कश्चित्=कोई भी

इमम्=इस ब्रह्मोद्यम्=ब्रह्मवादी याज्ञवल्क्य

> कां ज:तु=कभी न=न

जेता=जीत पावेगा इति≔इस प्रकार

इति=इस प्रकार + शुत्वा=सुन कर

+ ब्राह्मसाः≔बाखय + ब्राहुः≔बोले कि गार्गि≔हे गार्गि ! पृच्छचतुम पूढ़ो इति≕ऐसा सर्वो ने कहा

भावार्थ ।

आरुशि उदालक के चुप होने पर वह प्रसिद्धा वाचक्रवी गार्गी बोली कि हे ब्रह्मवेत्ताओं ! हे परमपूज्य, महात्माओं ! यदि आपलोगों की आज्ञा हो तो मैं इन याज्ञवल्क्य महाराज से दो प्रश्न पूछूं, हे ब्राह्मशों ! यदि वह उन मेरे दोनों प्रश्नों का उत्तर कह देंगे तो मुक्तको निश्चय होजायगा कि आपलोगों में से कोई भी ब्रह्मवादी याज्ञवल्क्य महाराज को जीत नहीं सकेगा, गार्गी के इस वचन को सुन कर सब ब्राह्मण प्रसन्न होते हुये बोले कि, हे गार्गि ! तुम अपनी इच्छानुसार याज्ञवल्क्य से अवस्य प्रश्न करो ॥ १ ॥

मन्त्रः २

सा होवाचाहं वै त्वा याज्ञवल्क्य यथा कारयो वा वैदेहो वोक्र-पुत्र उज्ज्यं धनुरधिज्यं कृत्वा हो वारायम्तौ सपत्नातिव्याधिनौ हस्ते कृत्वोपोत्तिप्टेदेवमेवाहं त्वा द्वाभ्यां प्रश्नाभ्यामुपोदस्थां तो मे बृहीति पुच्छ गार्गीति ॥

पदच्छेदः ।

सा, ह, उवाच, श्रह्म, वे, त्वा, याझवल्क्य, यथा, काश्यः, वा, वेदेहः, वा, उप्रपुत्रः, उज्ज्यम्, धतुः, श्राधिज्यम्, कृत्वा, द्वौ, वागावन्तौ, सपल्लाति-व्याधिनौ, हस्ते, कृत्वा, उपौत्तिष्ठेत्, एवम, एव, श्रह्म, त्वा, द्वाभ्याम्, प्रश्नाभ्याम, उपोदस्थाम्, तौ, मे, बृहि, इति, पुच्छ, गार्गि, इति ॥

पदार्थाः । श्चन्वयः सा ह=वह गार्गी उचाच=बोबी कि याज्ञचल्कय=हे याज्ञवल्क्य ! यथा=जैसे काश्यः≔काशी वा=ग्रथवा वैदेहः≔विदेह के उग्रपुत्रः≔शूरवीरवंशी राजा उज्ज्यम्=प्रत्यञ्चारहित धनुः≔धनुप् को ऋधिज्यम् } =प्रत्यञ्चा चढ़ा करके सपत्नाति-) शत्र के बेधन करने व्याधिको 🗲 वाले वाराचन्ती=तीक्ष्णाप्र बार्खों को हस्ते≔हाथ में कृत्वा=खेकर

पदार्थाः ग्रन्वयः उपात्तिष्टेत्=शत्रुहनन के लिये उपस्थित होवे एषम् एव=वैसंहा श्रहम्=भें त्वा=तुम्हारे निकट द्वाभ्याम्=दो प्रश्नाभ्याम्=प्रश्नों के बास्ते **उपोद्स्थाम्**=उपस्थित हूं तौ=उन दोनों प्रश्नों के उत्तर को मे=मेरे लिये वृहि=कहिये इति=रेसा + श्रुत्वा=सन कर + याज्ञचल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + आह=कहा कि गार्गि≔हे गार्गि ! पृष्छ इति इतुम उन प्रश्नों को पृक्तीः

भावार्थ ।

हे याज्ञवल्क्य ! वह मेरे दो प्रश्न कैसे हैं सो सुनिये. जैसे काशी अथवा विदेह के शूरवीरवंशी राजा प्रत्यश्वारहित धनुष् पर प्रत्यश्वा चढ़ा करके शत्रु के हनन के िकये उपस्थित होवें वैसेही में आपके सामने आपके पराजय के निमित्त दो प्रश्नों को केकर उपस्थित हूं, आप उन दोनों प्रश्नों के उत्तर को मेरे किये कहिये, ऐसा सुन कर याज्ञवल्क्य ने कहा हे गार्गि ! तुम उन प्रश्नों को प्रसन्ततापूर्वक सुम्म से पृद्धों, इसके उत्तर में गार्गी कहती है, आप घवड़ाइये नहीं, में अवश्य पृद्धंगी ॥ २ ॥

मन्त्रः ३

सा होवाच यद्ध्वं याज्ञवल्क्य दिवो यदवाक्पृथिव्या यदन्तरा द्यावापृथिवी इमे यद्भ्तं च भवच भविष्यचेत्याचक्षते कस्मिध्ध-स्तदोतं च प्रोतं चेति ॥

पदच्छेदः ।

सा, ह, डवाच, यत्, ऊर्ध्यम्, याज्ञवल्क्य, दिवः, यत्, अवाक्, पृथिन्याः, यत्, अन्तरा, द्यावापृथिवी, इमे, यत्, मूतम्, च, भवत्, च, भविष्यत्, च, इति, आचक्षत्, किसम्, तत्, अोतम्, च, प्रोतम्, च, इति।।

श्चन्वयः पदार्थाः श्चन्वयः पदार्थाः स्र≔वह गार्गी यत्≕जो

ह=स्पष्ट उवाच=पृद्धती भई कि या**द्वय**ल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! यत्=जो

पत्-गः दिवः=गुलोक के ऊर्ध्वम्=अपर है पृथिव्याः=पृश्वीलोक के श्रवाकृ=नीचे ह यदन्तरा≕जिसके कीच में इमे=थे

द्यावापृथिवी=युकोक श्रोर पृथ्वी क्रोक

यत्=जिसको + पुरुषाः=पुरुष भूतम्=भूत **ख**=श्रीर भवत्=वर्त्तमान च=ग्रीर

भविष्यत्=भविष्यत्

श्राचक्षते=कहते हैं तत्=वह सब कस्मिन्=िकसर्मे श्रोतम्=श्रोत च=श्रीर

प्रोतम् इति=श्रोत है ऐसा प्रश्न किया

भावार्थ ।

तदनन्तर वह गार्गी पृद्धती है कि, हे याज्ञवल्क्य ! जो युलोक के ऊपर है, जो पृथ्वीलोक के नीचे है, श्रीर जो बुलोक श्रीर पृथ्वी लोक के मध्य में है, ऋौर जिसको लोक भत, वर्त्तमान, भविष्यत् नाम करके कहते हैं, हे याझवल्क्य ! वह सब किस में अप्रोत प्रात है, यानी किसके आश्रित है, यह भेरा प्रथम प्रश्न है, आप इसका उत्तर दें ॥ ३ ॥

मन्त्रः ४

स होवाच यद्र्ध्वं गार्गि दिवो यदवाक् पृथिव्या यदन्तरा द्यावापृथिवी इमे यद्भुतं च भवच भविष्यचेत्याचक्षत त्राकाशे तदोतं च प्रोतं चेति ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, उवाच, यत्, ऊर्ध्वम्, गार्गि, दिवः, यत्, अवाक्, पृथिव्याः, यदन्तरा, द्यावापृथित्री, इमे, यत्, भृतम्, च, भवत्, च, भविष्यत्, च, इति, त्र्याचक्षते, श्राकाशे, तत्, त्र्योतम्, च, प्रोतम्, च, इति ॥

पदार्थाः / अन्वयः ष्ट्रान्वयः सः=वह याज्ञवल्क्य ह=स्पष्ट उवाच=कहता भया कि गार्गि=हे गार्गि !

यत्=जो दिवः=धुलोक के ऊर्ध्वम्=जपर है यत्=जो

पदार्थाः

पृथिन्याः=पृथ्वीकोक के
श्रवाक्=नीचे हैं
यदन्तरा=जिसकं बीच में
हमें⇒थे
द्यावापृथिची=चुकोक और पृथ्वी
कोक हैं
यत्=जिसको
पुरुषाः=पुरुष
भूतम्≕भृत
भवत्=वर्षमान

मविष्यत्=भविष्यत् इति=करके श्राचक्षते=कहते हैं तत्=वह सब श्राकाशे=झाकाश मं श्रोतम्=भोत च=भौर मातम्=भोत है

भावार्थ।

गार्गी के प्रश्न को सुन कर याज्ञवल्क्य महाराज बोले हे गार्गि! जो युलोक के उपर है, जो पृथ्वीलोक के नीचे है, झौर जो युलोक झौर पृथ्वीलोक के मध्य में है, झौर जिसको विद्वान्लोग मूत, वर्तमान, भविष्यत् नाम करके कहने हैं वह सब झाकाश में प्रथित हैं झर्थात् आकाश में झोतप्रोत हैं, हे गार्गि! यह तुम्हारे प्रश्न का उत्तर है। ४॥

मन्त्रः ५

सा होवाच नमस्तेऽस्तु याज्ञवल्क्य यो म एतं व्यवोचोऽपरस्मै धारयस्वेति पृच्छ गार्गीति ॥

पदच्छेदः ।

सा, ह, उवाच, नगः, ते, धार्गु,याज्ञवत्क्य, यः, मे, एतम्, ब्यवोचः, श्चपरस्मे, धारयस्व, इति, पुच्छ, गार्गि, इति ॥

श्रन्वयः

श्चम्चयः पदार्थाः स्मा≔वह गागीं ह=फिर स्पष्ट उवाच=कहती भई कि याज्ञवल्क्य=हे वाज्ञवल्क्य ! ते=आपके किये

नमः≔नमस्कार श्चस्तु=होवै यः≕जिसने मे≔मेरे पतम्≡इस परन को

पदार्थाः

व्यवोचः=यथायोग्य कहा + स्रधुना=त्रव + मम=मेरे द्यपरस्मै=दूसरे प्रश्न के लिये धारयस्त्र=त्रपने को तैयार करो इति=ऐसा

+ शुत्वा=सुन कर +याझवल्क्यः=याज्ञवस्क्य ने + स्नाह=कहा कि गार्गि=हे गार्गि ! पृच्छ इति=तुम पूछो

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महागाज के समीचीन उत्तर को सुन कर गार्गी श्रातिप्रसन्न हुई, श्रीर विनयपूर्वक बोली कि, हे याज्ञवल्क्य ! श्रापको मेरा नमस्कार है, श्रापने मेरे पहिले प्रश्न का उत्तर विशेषरूप से व्याख्यान किया है, भेरे दूसरे प्रश्न के लिये श्राप श्रापने को दहतापूर्वक तैयार करें, गार्गी के इस वचन को सुन कर याज्ञवल्क्य कहते हैं, हे गार्गि ! तुम श्रापने दूसरे प्रश्न को भी पूत्रो, में उत्तर देनेको तैयार हूं ॥ १ ॥

मन्त्रः ६

सा होवाच यद्र्ध्वं याज्ञवल्क्य दिवो यदवाक् पृथिच्या यदन्तरा द्यावापृथिवी इमे यद्भूतं च भवच भविष्यचेत्याचक्षते कस्मिछ्स्त-दोतं च भोतं चेति ॥

पदच्छेदः ।

सा, ह, खवाच, यत्, ऋर्ष्वम्, याज्ञदहक्ष्य, दिवः यत्, अवाक्, पृथिज्याः, यदन्तगा, बावापृथिवी, इमे, यत्, भूतम्, च, भदत्, च, भिवत्यत्, च, इति, आचक्षते, कस्मिन्, तत्, आवेतम्, च, प्रोतम्, च, इति ॥

श्चन्वयः पदार्थाः श्चन्वयः सा=वह गार्गी ह=ःपष्ट उ उवाच=बोजी कि याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ैं पूर्व दिवः≕शुजोक से

न्वयः पदार्थाः यत्=मो ऊर्ध्वम्=जपर है यत्≕जो पृथिव्याः=पृथ्वीबोक से श्रवाकु=नीचे है यदन्तरा≕िजसके बीच में इमे=ये द्याव ृथिवी=शुलोक श्रीर प्रश्वी लोक स्थित है च=श्रीर यत्≕िजसको पुरुषाः=पुरुष भृतम्≕भृत भवत्=वसैमान

च=ग्रीर

भविष्यत्=भविष्यत् श्राचक्षते=कहते हैं तत्=वह सव कस्मिन्=किसमें श्रोतम्=श्रोत च=श्रीर प्रोतम्=प्रोत है यानी किसमें प्रथित है द्रिति≂इस प्रकार गार्गी का प्रश्न हुआ

भाषार्थ ।

याझवत्क्य महाराज की आझा पा करके गार्गी बोली कि, है याझ-बल्क्य ! जो दिवलोक के ऊपर हैं, जो पृथ्वीकोक के नीचे हैं, और जो दिवलोक और पृथ्वीकोक के मध्य में हैं, और जिसको विद्वान् लोग भूत, वर्त्तमान, भविष्यत् नाम से कहते हैं, वह सब किसमें झोत प्रोत हैं यानी किसमें ब्रथित हैं, इस प्रकार गार्गी का प्रश्न हुआ। ! ६ !!

मन्त्रः ७

स होवाच यद्र्ध्वं गार्गि दिवो यदवाक् पृथिव्या यदन्तरा द्यावा-पृथिवी इमे यद्भृतं चभवच भविष्यचेत्याचक्षत त्याकाश एव तदोतं च प्रोतं चेति कस्मिन्न खल्वाकाश त्योतश्च प्रोतश्चेति ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, उत्राच, यत्, अध्वम्, गार्ग, दिवः, यत्, अवाक्, पृथिव्याः, यद्न्तरा, द्यावापृथिवी, इमे, यत्, भूतम्, च, भत्रत्, च, भविष्यत्, च, इति, आचक्षते, आकाशे, एव, तत्, श्रोतम्, च, प्रोतम्, च, इति, कसिमन्, नु, खक्कु, आकाशः, श्रोतः, च, प्रोतः, च, इति ॥

श्चन्वयः पदार्थाः स्नन्वयः पदार्थाः सः=वह याज्ञवल्म्य उवास्च=वोले कि ह⇒स्पष्ट गार्गि≔हे गार्गि !

यत्=जो दिवः=युक्तोक के ऊर्ध्वम्=जपर है यत्=जो पृथिउयाः=पृथ्वीलोक के ध्रवाक्=नीचे है यदन्तरा=जिसके बीच में इमे=ये द्यादापृथिवी=चलोक श्रीर पृथ्वी-स्थित हैं यत्=जिसको पुरुषाः≕लोग भूतम्=भृत भवत्=वर्त्तमान च=धौर भविष्यत्=भविष्यत् नाम से

श्राचक्षते=कहते हैं
तत्=वह सब
श्राकाश=श्राकाश में
श्रांतम्=श्रोत
च=श्रोत हैं
इति=ऐसा सुन कर
नु=िकर गागी ने प्रश्न
किया कि
श्राकाश:=श्राकाश
कस्मिन्=िकसमें
खनु=िग्श्य करके
श्रोत:=श्रोत
च=भीर
श्रोत:च=भीत हैं

भावार्थ ।

गार्गी का प्रश्न सुनकर याझवल्क्य वोले कि हे गार्गि ! जो दिव-होक के उत्पर है, और जो पुश्वीलोक के नीचे हैं, श्रीर जो दिव-लोक श्रीर पुश्वीलोक के मध्य में है, श्रीर जिसको विद्वान्लोग भूत, वर्त्तमान, भविष्यत् नाम से कहते हैं, वह सब श्राकाश में श्रोत प्रोत हैं श्रार्थात् श्राकाश के श्राश्रय है, ऐसा सुनकर गार्गी पुन: पूछती हैं कि, हे याझवल्क्य ! वह श्राकाश किसमें श्रोत प्रोत है. इसका उत्तर श्राप सुक्तसे सविस्तार कहें ॥ ७ ॥

मन्त्रः ८

स होवाचैतदै तदक्षरं गागि ब्राह्मणा अभिवदन्त्यस्थूलमनएव-इस्यमदीर्घपत्रोद्वितमस्नेहमच्छायमतमोऽवाय्वनाकाशमसङ्गमरसम-गन्थमचञ्जष्कनश्रेत्वमवागमनोतेजस्कमशाणममुखममात्रमनन्तरम-बाह्यं न तदश्नाति किंचन न तदश्नाति कश्चन ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, उवाच, एतत्, वै, तत्, श्रक्षग्म्, गार्गिः ब्राह्मगाः, श्रभि-वदन्ति, श्रस्थूलम्, श्रनणु, श्रहस्वम्, श्रदीर्घम्, श्रलोहितम्, श्रस्तेहम्, श्राच्छायम्, अतमः, अवायुः, अनाकाशम्, असङ्गम्, अरसम्, अग-न्धम्, अचक्षुष्कम्, अश्रोत्रम्, अवाक्, अमनः, अतेजस्कम्, अप्राण्म्, श्रमुखम्, श्रमात्रम्, श्रनन्तरम्, श्रवाह्यम्, न, तत्, श्रश्नाति, किंचन, न, तत्, अश्नाति, कश्चन ॥

द्यन्वयः

पदार्थाः सः=वह याज्ञवल्क्य ह=स्पष्ट उवाच=कहते भये कि गार्गि=हे गार्गि ! तत्=वह एतत्=यह ग्रक्षरम्=ग्रविनाशी है श्रस्थूलम्=न वह स्थृल है श्चनगु≔न वह सूक्ष्म है श्रहस्वम्=न वह छोटा है श्चदीर्घम्≔न वह वड़ा है श्रलोहितम्=न वह लाल है श्चरनेहम्=न वह संसारी जीव-वत् स्नेहवाला है श्चच्छायम्=न उसका प्रतिविम्ब है अतमः=वह तमरहित है श्रवायुः=वायुरहित है श्चनाकाशम्=श्राकाशरहित है श्रसङ्गम्=भसङ्ग है **अरसम्=स्वादरहित है** श्चगन्धम्=गन्धरहित हे श्रचश्रुष्कम्=नेत्ररहित है

पदार्थाः श्रन्वयः श्रश्रोत्रम्=श्रोत्ररहित है श्रव:क्=वाणीरहित है श्रमनः=मनरहित है **श्रतेजस्कम्=ते**जरहित है श्रप्राग्म्=प्राग्ररहित है श्रमुखम्=मुखरहित है श्रमात्रम्=परिमाग्यरदित है **श्चनन्तरम्**=श्रन्तररहित है श्चबाह्यम्≔बाह्यरहित है न=न तत्≔वह किंचन=कुछ श्रश्नाति=बाता है च=श्रोर न=न कश्चन=कोई पदार्थ तत्=उसको **श्रश्नाति=**खाता है गार्गि=हे गार्गि ! इति=इस प्रकार ब्राह्म**णाः=त्रहा**वेत्ता श्रभिवद्गित=कहते हैं

भावार्थ ।

याज्ञवल्य बोले हे गार्गि ! जिसमें सब श्रोत प्रोत हैं वह श्रिकिनाशी है, वह न स्थूल है, न स्क्ष्म हे, न छंटा है, न बड़ा है, न बहु छाल है, न वह संसारी जीव की तरह पर स्नेहवाला है, वह त्यावरण्ग्राहत है, तमरहित है, वायुरहित है, स्वादरहित है, गन्धरहित है, नेत्रर्राहत है, श्रोत्ररहित है, वाय्पीरहित है, सनगहित है, तजरहित है, प्राम्परहित है, मुख्यरहित है, परिमाण्गरहित है, श्रान्तररहित है, बाह्यरहित है, न वह छुद्ध खाता है, न उसको कोई खाता है, हे गार्गि ! जिसमें श्राकाश भी श्रोत प्रोत है, उसको श्रह्मवेत्ता इस प्रकार कहते हैं ॥ ⊏ ॥

मन्त्रः ६

एतस्य वा श्रक्षरस्य प्रशासने गागि सूर्याचन्द्रमसौ विधृतौ तिष्ठत एतस्य वा श्रक्षरस्य प्रशासने गागि द्यावापृथिव्यौ विधृते तिष्ठत एतस्य वा श्रक्षरस्य प्रशासने गागि निमेषा मुहूर्त्ता श्रहोरात्रारायर्थ-मासा मासा ऋतवः संवत्सरा इति विधृतास्तिष्ठन्त्येतस्य वा श्रक्ष-रस्य प्रशासने गागि पाच्योऽन्या नद्यः स्यन्दन्ते श्वेतेभ्यः पर्वतेभ्यः प्रतीच्योऽन्या यां यां च दिश्यन्वेतस्य वा श्रक्षरस्य प्रशासने गागि ददतो मनुष्याः पश्रासने गागि ददतो मनुष्याः पश्रासने यज्ञमानं देवा दवीं पितरोऽन्वायत्ताः ॥

पदच्छेदः ।

एतस्य, वा, श्रक्षस्य, प्रशासने, गार्गि, सूर्याचन्द्रमसों, विधृतों, तिष्ठतः, एतस्य, वा, श्रक्षस्य, प्रशासने, गार्गि, चावापृथिव्यों, विधृते, तिष्ठतः, एतस्य, वा श्रक्षस्य, प्रशासने, गार्गि, निमेषाः, मुहूर्ताः, श्रहोगात्राग्गि, श्रर्थमासाः, मासाः, श्रृतवः, संवत्सराः, इति, विधृतः, तिष्ठन्ति, एतस्य, वा, श्रक्षरस्य, प्रशासने, गार्गि, प्राच्यः, श्रन्याः, नद्यः, स्यन्दन्ते, श्र्वेतेभ्यः, पर्वतेभ्यः, प्रतीच्यः, श्रन्याः, याम्, याम्, च, दिशम्, श्रनु, एतस्य, वा, श्रक्षरस्य, प्रशासने, गार्गि, ददतः, मनुष्याः, प्रशंसन्ति, यशमानम्, देवाः, दर्वीम्, पितरः, श्रन्वायत्ताः ॥

पदार्थाः ग्रन्वयः पदार्थाः

गार्गि=हे गार्गि ! वा≕निश्चय करके एतस्य=इसी श्रक्षरस्य=श्रक्षर के प्रशासने=आज्ञा में सूर्याचन्द्रमसी=सूर्य श्रीर चन्द्र विभृतौ=नियमित होकर तिष्ठतः=स्थित हैं वा=श्रीर वा=िनश्चय करके एतस्य=इसी श्रक्षरस्य=ग्रक्षर के प्रशासने=श्राज्ञा में गार्गि=हे गार्गि !

द्यावापृथिदयौ=स्वर्ग भौर पृथ्वी विधृते=नियमित होकर तिप्रतः≕स्थित हैं प्तस्य≔इसी श्रक्षरस्य=श्रक्षर के

प्रशासने=ऋका में गार्गि=हे गार्गि ! निमेषाः≕निमेष

मुहूर्त्ताः=पुहूर्त्त श्चहोरोत्राणि=दिन रात श्चर्धमासाः=श्रर्धमास

ऋतवः=ऋत्

संवत्सरा:=संवत्सरादि विधृताः=नियमित हुये

इति=इस प्रकार

तिष्ठन्ति=स्थित हैं गार्गि=हे गार्गि !

एतस्य=इसी श्रक्षरस्य=ग्रक्षर के

प्रशासने=श्राज्ञा में नद्यः≔कुछ नदियां

श्वेतंभ्यः=श्वेत यानी बरफवाले पर्वतेभ्यः=पहाड़ों से निकल कर

प्राच्यः≔पूर्व दिशा कां स्यन्दन्ते=बहती हैं

श्चन्याः=क्छ नदियां

प्रतीच्यः=पश्चिम दिशा को

+ स्यन्दन्ते=बहती हैं ' याम्=जिम

> यःम्≕िजस दिशम्=दिशाको

श्चनु≕जाती हैं + ताम्=उस

+ ताम्=उस

दिशम=दिशा को

न≕नहीं

व्यभिचरन्ति=छोड़ती हैं सामि=हे गामि !

चे=निश्चय करके

एतस्य=इसी

श्रक्षरस्य=त्रक्षर की प्रशासने=ग्राज्ञा में

मनुष्याः=मन्ष्य

ददतः=दान देनेवालों की

प्रशंस्त्रन्ति=प्रशंसा करते हैं + च=घौर

देवाः=देवता

यजमानमू=यजमान के

श्चन्वायत्तः:=श्चनुगामी होते हें + च=श्रीर पितरः=पितरलोग दर्वीत्=दर्वीहोम के स्रम्वायत्ताः=स्राधीन होते हैं

भावार्थ ।

याज्ञवल्स्य कहते हैं, हे गार्गि ! इसी अक्षर की आज्ञा से सूर्य आहेर चन्द्रमा नियमित होकर स्थित हैं, इसी अक्षर की आज्ञा से खुलोक और पृथ्वीलोक नियमित होकर स्थित हैं, हे गार्गि ! इसी अक्षर की आज्ञा से निमेप, मुहूर्त्त, दिन, रात, मास, अर्थमास, ऋतु, संवत्सरादिक नियमित होकर स्थित हैं, हे गार्गि ! इसी अक्षर की आज्ञा से कोई कोई निदयां वरफवाले पहाड़ से निकल कर पूर्व को बहती हैं, और कोई कोई निदयां पश्चिम को भी बहती हैं इसी अक्षर की आज्ञा को पा करके जिस जिस दिशा को जो जो निदयां बहती हैं उस उस दिशा को वह नहीं छोड़ती हैं, हे गार्गि ! इसी अक्षर की आज्ञा से मनुष्य-गण्ण दानी को प्रशंसा करते हैं, देवना यज्ञमान के अनुणामी होते हैं, और जित्रानोण दिये हुये द्वीं पिग्रड को प्रहण्ण करते हैं, इस अक्षर की महिमा अपार है ॥ ६ ॥

मन्त्रः १०

यो वा एतदक्षरं गार्ग्यविदित्वास्मिल्लोके जुहोति यजते तपस्त-प्यते वहूनि वर्षसहस्राएयन्तवदेवास्य तद्भवति यो वा एतदक्षरं गार्ग्यविदित्वास्माह्मोकात्प्रैति सक्रुपणोऽथय एतदक्षरं गार्गि विदि-त्वास्माह्मोकात्प्रैति सब्राह्मणः ॥

पद्च्छेदः ।

यः, वा, एतत्, श्रश्लरम्, गार्ति, श्रविदित्वा, श्रस्मिन्, लोके, जुद्गेति, यज्ञते, तपः, तत्यतं, बहूनि, वर्षसहस्राणि, श्रन्तव्त्, एव, श्रास्य, तत्, भवति, यः, वा, एतत्, श्रश्लरम्, गार्गि, श्रविदित्वा, श्रास्मात्, लोकात्, प्रेति, सः, क्रपणः, श्रथ, यः, एतत्, श्राक्षरम्, गार्गि, विदित्वा, श्रामात्, लोकात्, प्रेति, सः, श्राह्मणः॥

पदार्थाः श्राम्बयः गार्शि≔हे गार्गि ! यः≕जो चै=निश्चय करके एतम्=इस श्रक्षरम्=श्रक्षर को श्राविदित्वा=न जान कर श्रह्मिन्≡इस लोके≃लोक में ज़होति=होम या यज्ञ करता है यजते=पूजा करता है बहु नि=ग्रनेक वर्षसहस्राणि=सहस्रों वर्ष तक तपः तप्यतं =तप करता है श्चास्य=उसका तत्⊐वह सब कर्भ श्चन्तवत्=नाश एव≃भवश्य भवति=होता है गार्थि=हे गार्गि ! यः=जो

श्रन्वयः

पदार्थाः

दतत्≃इस ब्रक्षरम्≔बक्षर को श्रविदित्वा⇒न जान कर श्रस्मात्=इस लोकात्=लोक से व्रीति=मर कर जाता है सः≔वह क्रपणः≔क्रपण होता है श्रथ=गौर यः⇒जो गार्गि=हे गार्गि ! पतत्≔इस श्रक्षरम्=श्रक्षर को विदित्वा=जान कर श्रस्मात्ञ्इस लोकात्=लोक से प्रैति=जाता है सः≕वह ब्राह्मगः=ब्राह्मग + भवति=होता है

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज फिर कहते हैं, हे गार्गि ! सुनो जो पुरुष इस आक्षर को न जानकर इस लोक में होम या यज्ञादि करता है या पूजा करता है या सहस्रों वर्ष तक तप करता है उसका वह सब कर्म निष्फल होता है, और हे गार्गि ! जो पुरुष इस आक्षर को न जानकर इस लोक से मर कर चला जाता है वह जब फिर संसार में उत्पन्न होता है, तो बड़ा छपणा दरिद्र होता है, पर हे गार्गि ! जो इस आक्षर को जानकर इस लोक से प्रयाग करता है वह ब्राह्मणा होता है यानी ब्रह्म के जुल्य होजाता है ॥ १०॥

मन्त्रः ११

तद्वा एतदक्षरं गार्ग्यदृष्टं द्रष्ट्रश्चतक्ष श्रोत्रमतं मन्त्रविज्ञातं विज्ञातः नान्यदतोस्ति द्रष्टु नान्यदतोस्ति श्रोतः नान्यदतोस्ति मन्तः नान्यदनेति।।
तोस्ति विज्ञात्रेतस्मिन्न खल्वक्षरे गार्ग्याकाश स्रोतश्च प्रोतश्चेति।।

पदच्छेदः ।

तत्, वा, एतत्, श्रक्षरम्, गार्गि, श्रदृष्टम्, द्रष्टृ, श्रश्नुतम्, श्रोतृ, श्रमतम्, मन्तृ, श्रविज्ञातम्, विज्ञातृ, न, श्रन्यत्, श्रतः, श्रस्ति, द्रष्टृ, न, श्रन्यत्, श्रतः, श्रस्ति, श्रोतृ, न, श्रन्यत्, श्रतः, श्रस्ति, मन्तृ, न, श्रन्यत्, श्रतः, श्रस्ति, विज्ञातृ, एतस्मिन, नु, खल्लु, श्रक्षरे, गार्गि, श्राकाशः, श्रोतः, च, प्रोतः, च, इति ॥

श्चन्यः

पदार्थाः ऋन्वयः

पदार्थाः

गार्गि=हे गार्गि !
तत् चै=वही
एतत्=यह
प्रक्षरम्=श्रकर
श्रहएम्=श्रदष्ट होते हुये
द्रष्ट=द्रष्टा है
श्रश्रतम्=श्रश्रत होते हुये भी
श्रोतु=श्रोता है
समतम्=

(हुय भा मन्तृ=मनन करनेवाला है झविज्ञातम्=श्रविज्ञात होते हुये भी विज्ञात्नु=जाननेवाला है

> श्रतः=इससे प्रथक् श्रन्यत्≕ग्रोर कोई दूसरा

अन्यत्=आर क

द्वष्टृ=देखनेवाला न=नहीं

श्रस्ति≔है श्रतः=इससे प्रथक् श्रन्यत्=दूसरा कोई विज्ञातु=माननेवाला

न=नहीं श्रस्ति=है

पतस्मिन्=इसी श्रक्षरे=त्रक्षर में जुख्तु=निरचय करके

गार्गि=हे गार्गि !

त्राकाशः=श्राकाश श्रांतः=श्रोत

च=ग्रीर प्रोतः च=ग्रोत है

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज फिर बोले, हे गार्गि ! वही यह अक्षर अटछ

होते हुये भी द्रष्टा है, अर्थात् इस अक्षर को किसी ने नेत्र से नहीं देखा है, क्योंकि वह दृष्टि का अविषय है, परंतु वह स्वयं सब का द्रष्टा है, यानी देखनेवाला है, यही अक्षर अक्षत होता हुआ भी अोता है, यानी वह किसी के भोत्र इन्द्रिय का विषय नहीं है, परन्तु सबका सुननेवाला है, वही अक्षर परमात्मा मनन इन्द्रिय का अविषय होते हुये भी सब का मनन करनेवाला है, हे गार्गि ! वही अन्तर्यामी आत्मा सब को अविज्ञात होते हुये भी सब का विज्ञाता है, हे गार्गि ! इससे पृथक् कोई दूसरा मनन करनेवाला नहीं है, हे गार्गि ! इससे पृथक् कोई दूसरा मनन करनेवाला नहीं है, हे गार्गि ! इससे पृथक् कोई दूसरा आननेवाला नहीं है, हे गार्गि ! निश्चय करके इस अविनाशी परमात्मा में आकाश ओत प्रोत है ॥ ११ ॥

मन्त्रः १२

मन्येध्वं यदस्मान्नमस्कारेण मुच्येध्वं न वे जातु युष्माकिममं कश्चिद्ब्रह्मोद्यं जेतेति ततो इ वाचक्रव्युपरराम ॥ इत्यष्टमं ब्राह्मणम् ॥ ⊏ ॥

पदच्छेदः ।

मन्येध्वम्, यत्, श्रास्मात्, नमस्कारेग्ग, मुच्येध्वम्, न, वे, जातु, युष्माकम्, इमम्, कश्चित्, ब्रह्मोद्यम्, जेता, इति, ततः, ह, वाचक्रवी, उपरराम ॥

श्चान्त्रयः

पदार्थाः

श्रन्वयः

पदार्थाः

+ ह=स्पष्ट + उद्याच=बोली कि

+ सा≔वह गार्गी

+ भगवन्तः } =हे मेरे पूज्य ब्राह्मणो ! ब्राह्मणाः

प्राह्मणाः) + तत् प्व=यही + बहु=बहुत मन्येध्वम्=मानने के योग्य हैं यानी कुशल समक्षना चाहिये यत्=जो
श्रस्मात्=इस याज्ञवल्क्य से
नमस्कारेण्=नमस्कार करके
मुच्येध्यम्=धापलोग खुटकारा
पाजावें
वै=निस्सन्देह
युष्माकम्=धापलोगों में से
कक्षित्=कोई भी
इमम्=इस

ब्रह्मोद्यम्=मञ्जवादी याज्ञवल्वब को बातु=कभी च=नहीं जेता=जीत सकेगा इति=इसप्रकार + उक्त्या=कहकर ततः=िकर वाचक्कर्वा=गार्गी उपरगम=उपराम होती मई

भावार्थ ।

याज्ञवरूक्य महाराज के उत्तरको सुनकर, सबकी तरफ सम्बोधन करके गार्गी बोक्ती कि, हे मेरे पूज्यब्राह्मणो ! यदि आपक्षोगों का छुटकारा याज्ञवरूक्य महाराज से नमस्कार करके होजावे तो छुराज समिमिने, हे ब्राह्मणो ! आपकोगों में से कोई ऐसा नहीं है जो याज्ञ-वरूक्य महाराज को जीतसके इसप्रकार कह करके और उपराम होकर वह गार्गी बैटगई।। १२।।

इत्यष्टमं ब्राह्मग्राम् ॥ ८ ॥

श्रथ नवमं बाह्मग्रम् ।

मन्त्रः १

श्रथ हैनं विदग्धः शाकल्यः पप्रच्छ कति देवा याइवल्क्येति स हैत्येव निविदा प्रतिपेदे यावन्तो वैश्वदेवस्य निविद्युच्यन्ते त्रयश्च त्री च शता त्रयश्च त्री च सहस्नेत्योमिति होवाच कत्येव देवा याइवल्क्येति त्रयिक्ष्विश्रशदित्योमिति होवाच कत्येव देवा याइवल्क्येति प्रहित्योमिति होवाच कत्येव देवा याइवल्क्येति प्रय इत्योमिति होवाच कत्येव देवा याइवल्क्येति द्रावित्योमिति होवाच कत्येव देवा याइवल्क्येत्यध्यर्ष इत्योमिति होवाच कत्येव त्री च सहस्रोति ॥ पदक्केंद्रः।

काथ, ह, एनम्, विदग्धः, शाकल्यः, पप्रच्छ, कति, देवाः, याझ-वकृत्र्य, इति, सः, ह, एतया, एव, निविदा, प्रतिपेदे, यावन्तः, वैश्व-देवस्य, निविद्धि, उच्यन्ते, त्रयः, च, त्री, च, शता, त्रयः, च, त्री, च, सहस्र, इति, क्रोम्, इति, ह, उवाच, कित, एव, देवाः, याज्ञवत्क्य, इति, त्रयिक्षशत्, इति, क्रोम्, इति, ह, उवाच, कित, एव, देवाः, याज्ञवत्क्य, इति, घट, इति, क्रोम्, इति, ह, उवाच, कित, एव, देवाः, याज्ञवत्क्य, इति, त्रयः, इति, क्रोम्, इति, ह, उवाच, कित, एव, देवाः, याज्ञवत्क्य, इति, द्वौ, इति, क्रोम्, इति, ह, उवाच, कित, एव, देवाः, याज्ञवत्क्य, इति, क्राध्यर्द्धः, इति, क्रोम्, इति, ह, उवाच, कित, एव, देवाः, याज्ञवत्क्य, इति, क्राध्यर्द्धः, इति, क्रोम्, इति, ह, उवाच, किते, एव, देवाः, याज्ञवत्क्य, इति, एकः, इति, क्रोम्, इति, ह, उवाच, कतमे, ते, त्रयः, च, त्री, च, शता, त्रयः, च, त्री, च, सहस्र, इति ॥

पदार्थाः । श्चन्ययः श्रथ ह≔इस के उपरान्त शाकल्यः=शकलका पत्र चिद्रधः≕विद्रध एनम्=उसी याज्ञवस्क्य से इति=इसप्रकार पप्रच्छ=पृद्धता भया कि याञ्चयल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! कति≔कितने देवाः≔देव हैं इति=यह मेरा प्रश्न है सः=उस याज्ञवल्क्य ने ह=स्पष्ट एतया निविदा=इस मंत्रसमृह के विभागद्वारा ŧ प्रतिपेदे=उत्तर दिया कि यावन्तः=जितने वैश्वदेवस्य=विश्वदेवों के निविदि=मन्त्रों में + सन्ति=विखे हैं ताधन्तः=डतने ही उच्यन्ते≔कहे जाते हैं

पदार्थाः म्रन्वयः + चा≔धौर इमाः=ये त्रयः=तीन च≔श्रौर त्री=तीन च≃द्यौर त्रयः≔तीन श्रता≕सौ च=ग्रीर श्री≕तीन सहस्र=हजार हैं इति=ऐसा + श्रुत्वा=सुनकर + शाकल्यः } = शाकस्य विदग्धने स्राह् } = कहा श्रोम्=हां ठीक है + पुनः≕फिर + सः=शाकल्य विदग्ध ने + पप्रच्छ=पूछा कि याज्ञचल्क्य=हे याज्ञवस्क्य !

कति एव≔इनके घन्तर्गत कितने देवाः≔देव हैं इति≔इसपर + याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्स्य ने + आह=डत्तर दिया त्रय**स्त्रिशत्**=तेतीस हैं इति=ऐसा + श्रुत्वा=सुनकर शाकल्यः≔शाकल्य ने श्राह=कहा श्रोम्≔हां ठीक है पुनः≕िकर + शाकल्यः=शाकल्य विदग्ध ने उवाच=कहा कि याञ्चवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! कति एव≕डनके अन्तर्गत कितने देवाः=देवता हैं इति≕इसपर + याक्षवल्क्यः≔याज्ञवल्क्य ने + आह=उत्तर दिया षट्=छः हैं इति≕ऐसा सुनकर शाकल्यः=शाकस्य ने श्राह=कहा श्रोम्≔हां ठीक है पुनः≕िकर + शाकल्यः=शाकल्य ने उवाच=पृद्धा + याञ्चयल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! कृति एव=कितने उनके धन्तर्गत

देवाः≔देवता हैं इति=ऐसा सन कर याञ्चवल्क्यः ह=याज्ञवल्क्य ने स्पष्ट उवाच=कहा त्रयः=तीन देवता हैं इति=इस पर शाकल्यः=शाकल्य ने + श्राह≕कहा श्रोम्=हां ठीक है + शाकल्यः=शाकल्य ने उव।च≔पृङ्घा याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवस्क्य ! कति प्रच≕कितने उसके श्रम्तर्गत देवाः≔देवता हैं इति=ऐसा सुन कर याञ्चवल्क्यः=याज्ञवस्क्य ने ह=स्पष्ट उवाच≔क्हा द्यौ=दो हैं इति=ऐसा सुन कर + शाकल्यः=शाकल्य ने + आह=कहा श्रोम्=हां ठीक है + पुनः≕फिर + शाकल्यः=शाकस्य ने उवाच=पृद्धा + याञ्चव्यय=हे याज्ञवस्य ! कति एव=उसके अन्तर्गत कितने + देवाः=देवता हैं

+ याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ श्राह=कहा श्राध्यद्धीः=श्रध्यद्धे है शाकल्यः=शाकल्य विवन्ध ने उवाच≃कहा श्रोम्=हां ठीक है इति=ऐसा सुनकर + पुनः≕िकर + शाकल्यः=शाकल्य ने उवाच=पद्या याज्ञवल्यय=हे याज्ञवल्क्य ! + कतिएव≕उस के श्रन्तर्गत कितने देवाः=देवता हैं + याञ्चलक्यः=याज्ञवल्क्य ने उच(च=डत्तर दिया एकः≔एक है इति=इसपर + शाकल्यः≔शाकल्य ने + पुनः≕फिर

+ पप्रच्छ=पृद्धा याञ्चवल्क्यः=याज्ञवर उवाच=कहा ते≔वे त्रयः=तीन च=श्रीर श्री≔तीन च≕श्रौर त्री=तीन शता=सौ च≕घौर त्रयः=तीन सहस्र=हजार है + शाकल्यः=शाकल्य ने + पुनः≕फिर + पत्रच्छ=पृङ्ग कतमे एव= { उसके भ्रम्तर्गत्

भावार्थ ।

तिसके पीछे शाकल्यऋषि के पुत्र विदग्ध ने कहा है याज्ञवत्क्य ! मैं तुम से पूछता हूं, आप बताइये कि कितने देवता हैं, इसके उत्तर में याज्ञवक्चय कहते हैं, हे विदग्ध! जितने विश्वेदेवसम्बन्धी मन्त्रों में देवता जिस्से हैं, उतने ही हैं, और उनकी संस्था तीन और तीनसी और तीन और तीन हजार है. इस उत्तर को सुनकर विदग्ध ने कहा हां ठीक है, जितनी देवसंस्था आप कहते हैं उतनीही है. फिर शाकल्य ने पूछा हे याज्ञवल्क्य! उनके आन्तर्गत कितने देवता हैं, ऐसा सुन

कर याज्ञवल्क्य ने कहा, हे विदग्ध ! उनके अन्तर्गत तेतीस देवता हैं, ऐसा सुनकर शाकल्य विदम्ध ने कहा हां ठीक है, फिर शाकल्य विदम्ध ने पूछा हे याज्ञवरूक्य ! उन तेंतीसों के अपन्तर्गत कितने देवता है, ऐसा सुनकर याज्ञवहक्य ने कहा है विदुग्ध ! छः देवता हैं, इसको सुनकर शाकल्यने कहा हां ठीक है, फिर शाकल्य ने पूछा हे याज्ञ-वल्क्य ! उनके श्चन्तर्गत कितने देवता हैं, याज्ञवल्क्य ने कहा तीन हैं फिर शाकल्यने पुद्धा उन तीन के अन्तर्गत कितने देवता हैं, याज्ञवहन्य ने कहा दो हैं, फिर शाकल्यने पूछा हे याज्ञवल्क्य ! उन दो के अन्तर्गत कितने देवता हैं, याज्ञवल्क्य ने कहा, हे विद्राव ! उस दो के अपन्तर्गत श्चाध्यर्द्ध देवता है यानी वह सृक्ष्म वायुरूप सत्ता है जिसके रहने पर सब स्थावर जंगम पदार्थ परमवृद्धि को प्राप्त होते रहते हैं, स्त्रीर यही कारण है कि उस वायुदेव को अध्यर्द्ध कहते हैं, शाकल्यने कहा हां ठीक है, तदनन्तर विदग्ध ने पद्घा हे याज्ञबल्क्य ! उसके अन्तर्गत कितने देवता हैं, याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया एक है, शाकल्य ने फिर पूछा कि उसके श्चन्तर्गत कितने देवता हैं, याज्ञवल्क्य ने कहा वे तीन धौर तीनसौ श्रीर तीन हजार हैं, फिर विदग्ध पूछता है, हे याज्ञवल्क्य ! वे तीन भीर तीनसी भीर तीन श्रीर तीनसहस्र कीन देवता हैं।। १।।

मन्त्रः २

स होवाच महिमान एवैषामेते त्रयिस्निधंशाच्वेव देवा इति कतमे ते त्रयिस्निध्शदित्यष्टौ वसव एकादश रुद्रा द्वादशादित्यास्त एक-त्रिधंशदिन्द्रश्रेव प्रजापतिश्र त्रयस्निधंशाविति ॥

पदच्छेदः।

सः, ह, डवाच, महिमानः, एव, एषाम्, एते, त्रयिक्षशत्, तु, एव, देवाः, इति, कतमे, ते, त्रयिक्षशत्. इति, ऋष्टी, वसवः, एकादश, कहाः, द्वादश, क्यादित्याः, ते, एकत्रिंशत्, इन्द्रः, च, एव, प्रजापतिः, च, त्रयस्त्रिशौ, इति ॥

भ्रन्वयः

पद्यार्थाः

अन्वयः

पदार्थाः

सः=वह बाज्ञवरक्य ह=स्पष्ट उवाच=बोले कि एपाम्=इनमें से एव=निश्चय करके एत=थे त्रयांक्षशत्=तेतीस देवता महिमानः=महिमा के योग्य हैं + विद्युधः=विद्युध ने + पुट्छुति=पूछा कि त=वे

प्त=थ त्रयांक्षशत्-तेतीस देवता महिमानः=महिमा के य + विद्रुष्धः=विद्रुष ने + पुरुद्धति=पृद्धा कि ते=वे कतम=कोनसे त्रयांक्षशत्=तेतीस देवाः प्रव=देवता हैं इति=इस पर +याक्षवहक्यः=याज्ञवहक्य ने + आह्=उत्तर दिया श्रष्टी=श्राठ वसवः=वसु एकादश=ग्यारह रुद्राः=रुद द्वादश=बारह आदित्याः=सूर्य इति=इस प्रकार एकश्रिशत्=एक तीस इ

पक्तिश्रात्=एक तील हुये
स्व=श्रीर
इन्द्र:=इन्द्र
ख=श्रीर
प्रजापति:=प्रजापति
इति=लेकर
श्रयांक्रिशी=तेतीस हुये

भावार्थ ।

तब याज्ञद्दस्य बोल कि, हे बिद्ग्ध ! इन में से निश्चय करके केवल तेतीस देवता महिमा के योग्य हैं, विद्ग्ध ने फिर याज्ञव्दस्य से पृद्धा कि वे कौन तेतीस देवता हैं, यह सुन कर याज्ञवह्द्य ने उत्तर दिया, हे विद्ग्ध ! आठ बसु, ग्यारह रुद्ध, बारह सूर्य मिलाकर एकतीस हुये, बत्तीसवां इन्द्र है, तेतीसवां प्रजापति है।। २।।

मन्त्रः ३

कतमे वसव इत्यग्निश्च पृथिवी च वायुश्चान्तरिक्षं चादित्यश्च द्यौश्च चन्द्रमाश्च नक्षत्राणि चैते वसव पतेषु हीद्धं सर्वे छ हित-मिति तस्माद्दसव इति ॥ कतमे, वसवः, इति, श्रान्तः, च, पृथिवी, च, वायुः, च, श्रान्तरिक्षम्, च, श्रादित्यः, च, द्यौः, च, चन्द्रमाः, च, नक्षत्राणि, च, एते, वसवः, एतेषु, हि, इदम्, सर्वम्, हितम्, इति, तस्मात्, वसवः, इति ॥ श्रान्वयः पदार्थाः | श्रान्वयः पदार्थाः

श्चन्ययः प् + विद्ग्धः=विद्ग्धः + पृच्छिति≔पृछ्ता है कि ते≔वे कतमे≔कौन से चसवः=आठ वसु हैं + याझवरुक्यः=याजवरुक्यः + विक्क=कहते हैं कि श्चग्निः=श्चग्नः पृथिवी=पृथ्वीः चायुः=वायुः श्चन्तरिक्षम् च=श्चाकाशः श्चादित्यः च=स्पै चौः च=स्वर्गः चनद्रमाः=चन्द्रमा

श्चन्ययः पदार्थाः
च=श्चीर

नक्षत्राणि च=नक्षत्र

एते=ये

चसचः=श्चाठ वसु हैं

एतेषु=हन्हीं वसुश्चां में

इदम्=हरयमान

सर्वम्=स्थित है

तस्मात्=हस बिये

वसवः={ अपर् सब् का

कथ्यन्ते⇒कहे जाते हैं

इति=ऐसा

भावार्थ ।

विद्ग्ध फिर पूछते हैं, हे याज्ञवल्क्य ! वे आठ वसु कौन कौन हैं, याज्ञवल्क्य कहते हैं, हे विद्ग्ध ! सुनो आिन, पृथिवी, वायु, आकाश, सूर्य, स्वर्ग, चन्द्रमा, नक्षत्र यही आठ वसु हैं, इन्हीं आठ वसुओं में दश्यमान सव जगत् स्थित है, इस लिये वसु इस कारण कहलाते हैं कि वे आपने ऊपर जीवमात्र को वसाये हुये हैं ॥ ३ ॥

मन्त्रः ४

कतमे रुद्रा इति दशेमे पुरुषे प्राणा त्रात्मैकादशस्ते यदास्माच्छ-रीरान्मर्त्यादुत्कामन्त्यथ रोदयन्ति तद्यद्रोदयन्ति तस्माद्धद्रा इति ॥

पदच्छेदः ।

कतमे, रुद्राः, इति, दश, इमे, पुरुषे, प्रायाः, आत्या, एकादशः, ते, यदा, श्रास्मात्, शरीरात्, मर्त्यात्, उत्क्रामन्ति, श्राथ, रोदयन्ति, तन्, यत्, रोदयन्ति, तस्मात्, रुद्राः, इति ॥ श्रन्वयः

श्चन्वयः

पदार्थाः ।

पदार्थाः

+ विदग्धः=विदग्ध + पृच्छति=फिर पृक्ता है याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! + त≔वे ग्यारह

कतमे≔कौन से रुद्रा≔रुद्र हैं इति=इस पर

+ याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य + गदति=कहते हैं कि

पुरुषे=पुरुष के विषे इमे=ये

दश=दश प्राग्ाः≔पांच कर्मेंन्द्रिय श्रीर पांच ज्ञानेन्द्रिय

च=श्रौर एकाद्शः=ग्यारहवां

श्चात्मा=मन

+ एते=येही

रुद्राः=ग्यारह रुद्र हैं यदा=जब

ते=वे रुद्र श्रस्मात्=इस

मर्त्यात्=मरणधर्मवाले

शरीरात्=शरीर से उत्क्रामन्ति=निकवाते हैं

श्चाथ=तब

रोद्यन्ति=मरने वाले के सम्ब-

निधयों को रुजाते हैं यत्=चूंकि

तत्=मरण समय में

+ ते≔वे रोदयन्ति=रुवाते हैं तस्मात्=इस लिये

रुद्धाः≔वे रुद्र इति≔करके

कथ्यन्ते=कहे जाते हैं

भावार्थ ।

विदग्ध फिर पूछते हैं, हे याज्ञवल्क्य ! वे ग्यारह रुद्र कीन कौन हैं, इनके नाम स्नाप बतावें. याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं, हे विदग्ध ! जो पुरुप के विषय पांच कर्मेन्द्रिय, पांच ज्ञानेन्द्रिय, एक मन है येही ग्यारह रुद्र हैं. जब वह रुद्र इस मरगाधर्मवाको शरीर से निकक्षते हैं तब मरने वाले के सम्बन्धियों को रुलाते हैं चूंकि मरगासमय में वे रुलाते हैं इस कारणा वे रुद्र कहे जाते हैं ॥ ४ ॥

मन्त्रः ५

कतम त्र्रादित्या इति द्वादश वै मासाः संवत्सरस्येत त्र्रादित्या एते हीद् अर्वमाददाना यन्ति ते षदिद् अर्थमाददाना यन्ति तस्मादादित्या इति ॥

पदच्छेदः ।

कतमे, आदित्याः, इति, द्वादश, वै, मासाः, संवत्सगस्य, एते, आदित्याः, एते, हि, इदम्, सर्वम्, आददानाः, यन्ति, ते, यत्, इदम्, सर्वम्, आददानाः, यन्ति, तस्मात्, आदित्याः, इति ॥

श्चन्चयः + विद्रधः=विद्रध पुनः=फिर + ऋाह=पृछ्ता है कि याञ्चयन्त्रय=हे याज्ञवल्क्य ! कतमे≔वे कौन से श्चादित्याः=बारह सूर्य हैं ∔ याज्ञचल्क्यः=बाज्ञवल्क्य ने + उवाच=कहा कि संवत्सरस्य=वर्ष के द्वादश=बारह मासाः=मास वै=ही पते=ये + द्वादश=बारह **श्रा**दित्याः=सूर्य हें

पदार्थाः । श्रन्वयः पदार्थाः पते हि=येही इत्म्=इस सर्वम्≕सब को भ्राददानाः=लिये हुये यन्ति=गमन करते हैं यत्≕जव कि श्रादित्याः≔वे सुर्य इदम् सर्वम्=इस सब को श्चाददानाः=प्रहण करते हुये यन्ति=चत्तं जाते हैं तस्मात्=इसी से **ऋा**दित्याः=श्रादित्य इति=करके + कथ्यन्ते≔वे कहे जाते हैं

भावार्थ ।

विदम्भ फिर पूछते हैं, हे याझवल्क्य ! आप कपा करके बताइये वे बाग्ह सूर्य कीन कीन हैं इस पर याझवल्क्य कहते हैं, हे विदम्ध ! संवत्सर के यानी वर्ष के जो बारह मास होते हैं, वेही बारह सूर्य हैं,

वेही इस संपूर्ण जगत् को लिये हुए गमन करते हैं, चूंकि वे सूर्य इस सब को प्रहरा किये हुये चलते हैं, इसी काररा वे आदित्य कहे जाते हैं ॥ ४ ॥

मन्त्रः ६

कतम इन्द्रः कतमः प्रजापतिरिति स्तनयिन्तुरेवेन्द्रो यज्ञः प्रजाप-तिरिति कतमः स्तनयि जुरित्यशनिरिति कतमो यज्ञ इति पशव इति।। पदच्छेदः ।

कतमः, इन्द्रः, कतमः, प्रजापतिः, इति, स्तनयित्तुः, एव, इन्द्रः, यज्ञः, प्रजापतिः, इति, कतमः, स्तनियतुः, इति, श्रशनिः, इति, कतमः, यज्ञः, इति, पशवः, इति ॥

पदार्थाः श्चन्वयः

+ विदग्धः=विदग्ध + पुनः≕फिर + श्राह=पृद्धता है कि याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! द्वनद्रः=इन्द् कत्रमः=कौन है प्रजापति:=प्रजापति कतमः=कौन है इति=ऐसा + श्रुत्वा≔सुन कर याञ्चचल्क्यः=याज्ञवल्क्य + आह=बोले कि **स्तन**थित्नुः=स्तनधित्नु एव=ही इन्द्रः≔इन्द्र है + च=श्रीर यञ्चः=यज्ञ प्रजापति:=प्रजापति है

श्रन्वयः

पदार्थाः इति=ऐसा + श्रुत्वा=सुन कर + विदग्धः=विदग्ध पुनः=फिर पुरुञ्जति=पृद्धता है कि याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! कतमः=कौन स्तनयित्नुः=स्तनयित्नु है इति≕ऐसा प्रश्न + श्रुत्वा=सुन कर + याष्ट्रचल्क्यः=याज्ञवल्क्य + ग्राह=बोबे कि श्रशनिः=विजली स्तनयित्नुः=स्तनयित्नु है इति=ऐसा उत्तर पाने पर + पुनः≕िकर शाकल्यः=विदग्ध उवाच≕बोबे

यझः=यज्ञ कतमः=कौन है इति=इस पर

+ याञ्चवल्क्यः≔याज्ञवल्क्य ने

उवाच=कहा

पशवः≔पशु

यज्ञः=यज्ञ हैं

भावार्थ ।

विदग्ध फिर पूछते हैं, हे याज्ञवल्क्य ! इन्द्र कोन है, प्रजापित कौन है, ऐसा सुनकर याज्ञवल्क्य उत्तर देते हैं, हे विदग्ध ! मेघ इन्द्र हैं, झ्योर यज्ञ प्रजापित है, ऐसा सुनकर विदग्ध फिर पूछते हैं, हे याज्ञ-वल्क्य ! मेघ कोन हैं, याज्ञवल्क्य इस के उत्तर में कहते हैं विद्युत् मेघ हैं, ऐसा उत्तर पानेपर फिर विदग्ध पूछते हैं कि यज्ञ कौन हैं, इस पर याज्ञवल्क्य बोलते हैं पशु यज्ञ हैं ॥ ६ ॥

मन्त्रः ७

कतमे पडित्यग्निश्च पृथिवी च वायुथान्तरिक्षं चादित्यश्च द्यौर्थेते पडेते हीद्छ सर्वेछ पडिति ॥

पद्च्छेदः ।

कतमे, पट्, इति, स्राग्निः, च, पृथिवी, च, वायुः, च, झ्रान्तरि-क्षम्, च, झ्रादित्यः, च, द्योः, च, एते, पट्, एते, हि, इदम्, सर्थम्, षट्, इति ॥

पदार्थाः पदार्थाः श्चन्वयः त्रान्वयः अन्तरिक्षम् च=धाकाश + शाकल्यः=शाकल्य विदग्धने श्रादित्यः च=सूर्य + पप्रच्छ=पृद्धा कि द्योः च=स्वर्ग ते कतमे≔वे कौन एते=यही षट=छः देवता हैं षट्र=छः देवता हैं इति=इस पर एत=इन्हीं + याश्वयत्क्यः=याज्ञवल्क्य ने षट्र≕छः देवताश्रों के + उवाच=उत्तर दिया श्चधीन श्चितः च=श्रीन इदम्≕यह पृथिवी च=पृथ्वी सर्वम्≔सव हैं वायुः च=वायु

भावार्थ ।

शाकल्य विदग्ध याज्ञवल्क्य से पूछते हैं कि, हे याज्ञवल्क्य ! जो श्चापने छ: देवता गिनाये हैं वे कौन कौन हैं, याज्ञवल्क्य कहते हैं कि, हे विदग्ध ! अपिन, पृथिवी, वायु, आकाश, सूर्य, स्वर्ग ये ही छ: देवता हैं, इन्हीं के आधीन यह सब जगत् हैं ॥ ७ ॥

मन्त्रः ८

कतमे ते त्रयो देवा इतीम एव त्रयो लोका एपु हीमे सर्वे देवा इति कतमौ तौ द्वौ देवावित्यनं चैव पाणश्चेति कतमोऽध्यर्द्ध इति योऽयं पवत इति ॥

पदच्छेदः ।

कतमे, ते, त्रयः, देवाः, इति, इमे, एव, त्रयः, स्नोकाः, एपु, हि, इमे, सर्वे, देवाः, इति, कतमो, तो, द्वो, देवो, इति, श्रन्नम्, च, एव, प्राग्तः, च, इति, कतमः, श्रम्यर्द्धः, इति, यः, श्रयम्, पवते, इति ॥ श्रम्वयः पदार्थाः | श्रम्वयः पदार्थाः

ते=वे
प्रयः=तीन
देवाः=देवता
कतमे=काँन हैं
इति=ऐसा प्रश्न
+ श्रुत्वा=सुन कर
+ याझबल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने
+ श्राह=कहा कि
+ ते=वे
इसे=थे
एव=ही
न्रयः=तीनों
लोकाः=लोक हैं

हि≔क्योंकि

प्र्यु≔इनमें ही

इमे=थे
सर्वे=सव
देवाः=देवता
इति=मन्तर्गतहें
+ पुनः=फिर
शाकस्यः=विदग्ध
+ पप्रच्छ=पृष्ठते हें कि
ती=वे
द्वी=देवता
कतमें|=कीन हें
इति=इस पर
+ याइवल्क्यः=वाज्ञवल्क्य ने
श्वाह=डक्तर दिया
+ ती=वे दोनों देवता

एख=निश्चय करके
अक्षम्=भन्न
च=भौर
प्राणः=प्राण हैं
इति=इस उत्तर पर
+ पुनः=फिर
पप्रच्छ हि=प्छते हैं कि
धाञ्चवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य !
अध्यर्द्धः=अध्यर्द्ध
कतमः=कौन देवता है

इति=इसको + श्रुखा=श्रुन कर + याञ्चयस्यः=याज्ञवस्य ने + श्राह=कहा यः=जो श्रयम्=यह वायु इति=ऐसा पयत=चलता है सः=वही यह सध्यई है

भावार्थ ।

विदग्ध पूछते हैं कि, हे याज्ञवल्क्य ! आपने पहिले कहा था कि तीन देवता हैं, आप क्रम करके बताइये कि वे तीन देवता कीन कीन हैं, इस पर याज्ञवल्क्य कहते हैं, हे विदग्ध ! वे तीन देवता यही तीनों क्लोक हैं, क्योंकि वे सब देवता इन्हीं तीनों लोकों में रहते हैं. मतलब इसका यह है कि एक लोक पृथिवी है, उसमें श्राग्न देवता गहता है, दसरा लोक श्रन्तरिक्ष है, उसमें वायुद्वता रहता है, तीसरा लोक द्यलोक है, उसमें आदित्य देवता रहता है, यानी इन्हीं तीनों देवताओं में सबका अन्तर्भाव होता है, पहिले आठ देवताओं को छ: देवताओं में अन्तर्भाव किया, फिर उन छहों को तीन में अन्तर्भाव किया, फिर विदाध पुछते हैं, हे याज्ञवल्य ! वे दोनों देवता कीन कीन हैं. जिस को आप पहिले कह आये हैं, याज्ञवस्क्य कहते हैं उन दोनों में से एक देवता प्रागा है, दुसरा अन्न है, यहां पर प्रागा शब्द से नित्य पटार्थ का प्रहरा है, झौर स्त्रन्न से श्रनित्य पदार्थ का प्रहरा है, स्रथवा पहिला कारगुरूप है, दूसरा कार्यरूप है, इन्हीं दोनों में सब श्रोत-प्रोत हैं, इसके पश्चात् विदग्ध पूछ्ते हैं हे याज्ञवस्त्रय ! अध्यर्द्ध कीन है, याज्ञवल्क्य उत्तर देते हैं जो बहता है वह ऋध्यर्द्ध है, हे विदग्ध ! वाय को अध्यर्द्ध कहने हैं।। 🗆 ।।

मन्त्रः ६

तदाहुर्यदयमेक इवैंव पवतेऽथ कथमध्येर्द्ध इति यदस्मिन्निद्ध सर्वमध्याध्नोंत्रेनाध्यर्द इति कतम एको देव इति प्राण इति स ब्रह्म त्यंदित्याचक्षते ॥

पदच्छेदः ।

तत्, आहुः, यत्, अयम्, एकः, इव, एव, पवते, अरथ, कथम्, **ब्रा**ध्यर्द्धः, इति, यत्, श्रस्मिन्, इदम्, सर्वम्, श्राघि, श्राध्नोंत्, तेन, श्चाध्यर्द्धः, इति, कतमः, एकः, देवः, इति, प्राग्गः, इति, सः, ब्रह्म,स्यत्, इति, ग्राचक्षते ॥ पदार्थाः

द्यान्वयः

पदार्थाः तत्=तिस विषय में . स्राहुः≕विद्वान् कहते हैं कि यत्≕जव श्रयम्=यह वायु एकः≔एक होता द्रश्रा **एव**≕निश्चय करके पवते=बहता है श्चाथा=तो प्रश्न है कि सः=वह श्चाध्यर्द्धः=श्रध्यर्द्ध है इच≕ऐसा कथम्=क्यों श्चाहुः≔कहते हैं इति=इस पर + याञ्चवल्क्यः=याज्ञवरूश्य ने आह=कहा कि यत्=जिस कारण

श्चन्वयः

ग्रस्मिन्=इस वायु में ही इद्म्=यह दश्यमान सर्वम्=सब जगत् श्चाध्याधनीत्=त्रधिक वृद्धि को प्राप्त होता है तेन=तिस कारण +सः=वह श्राध्यर्जः=श्रध्यर्द इति=नाम करके + कथ्यते≕कहा जाता है

+ विद्ग्धः=विद्ग्ध ने + ऋाह=पद्धा कि + सः=वह एकः≔एक

+ पुनः≕िफर

देवः≔देव कतमः=कौन है

१ ग्रथ्याप्नोंति=प्रधि+ऋद्धि, श्रधि=श्रधिक, ऋद्धि=तृद्धि, जो श्रधिक वृद्धि की करे, वह अध्यर्द्ध कहलाता है २ त्यत् और तत् ये दोनों शब्द एकही अर्थ के बोधक हैं।

इति=इस पर याञ्चवल्क्यः=याञ्चवल्क्य ने श्चाह=कहा

स्राह=कहा सः=वह प्रागुः=प्रागु करके विख्यात है सः=सोई प्राय स्यत्=वह ब्रह्म=ब्रह्म है इति=ऐसा

na है। **आ**चक्षते=बोग कहते हैं भाषार्थ ।

तिस विषय में विदाय कहते हैं, हे याज्ञवल्क्य ! जब यह वायु एक होता हुआ बहता है तब उसको लोग अध्यर्द्ध क्यों कहते हैं. इसके उत्तर में याज्ञवल्क्य कहते हैं, हे विदाय ! जिस कारण इस वायु में ही यह सब दश्यमान जगन अधिक वृद्धि को प्राप्त होता है तिसी कारण उसको अध्यर्द्ध नाम करके कहते हैं. अध्यर्द्ध दो शब्दों से मिलकर बना है, अधि ऋदि=अधिका अर्थ आधिक्य है और ऋदि वायु का अर्थ शृद्धि है. चूंकि वायु करके सबकी वृद्धि होती है इसिलये वायु को अध्यर्द्ध नाम से कहा है. फिर विदाय पृद्धते हैं कि, हे याज्ञवल्क्य ! वह एक देवता कीन है जिसको आपने पहिले कहा था. उस पर याज्ञवल्क्य कहते हैं, हे विदाय ! वह एक देवता प्राग्ण है वही प्राग्ण बझ है ऐसा लोक कहते हैं. इस मन्त्र में त्यत् शब्द का अर्थ तत् है यानी जो तत् है वही त्यत् है ॥ १ ॥

मन्त्रः १०

पृथिव्येव यस्यायतनमिनलोंको मनो ज्योतियों वै तं पुरुषं विद्या-त्सर्वस्यात्मनः परायणां स वै वेदिता स्यात् । याज्ञवल्यय वेद वा अहं तं पुरुषा सर्वस्यात्मनः परायणां यमात्थ य एवायां शारीरः पुरुषः स एप वदैव शाकल्य तस्य का देवतेत्यमृतमिति होवाच ॥ पद्चहेदः ।

पृथिदी, एव, यस्य, आयततम्, अग्निः, लोकः, मनः, ज्योतिः, यः, वै, तम्, पुरुपम्, विद्यात्, सर्वस्य, आत्मनः, परायस्पम्, सः, वै, वेदिता, स्यात्, याज्ञवत्कय, वेद, वा, श्रहम्, तम्, पुरुपम्, सर्वस्य, **फ्रा**त्मनः, परायसाम्, यम्, द्यात्थ, यः, एव, श्रयम्, शारीरः, पुरुषः, सः, एषः, वद, एव, शाकल्य, तस्य, का, देवता, इति, श्रमृतम्, इति, ह, उवाच ॥

पदार्थाः ग्रन्वयः पदार्थाः

ऋन्वयः यस्य=जिस पुरुष का श्चायतनम्=शरीर एव=निरचय करके पृथिवी=पृथिवी है लोकः≔रूप श्रग्निः=श्रग्नि है मनः=मन ज्योतिः=प्रकाश है

यः=जो सर्वस्य≕सब

क्रात्मनः=जीवों का परायगम्=उत्तम श्राश्रय है

तम्≕ःस पुरुषम्=पुरुष को यः≕जो

विद्यात्≕जानता है सः=वह

वै=ग्रवश्य

याञ्चवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! वेदिता=ज्ञाता स्यात्=होता है

+ न श्चन्यः≔दूसरा नहीं

+ इति श्रुत्वा=ऐसा सुनकर

याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य कहते हैं कि

यः=जो सर्वस्य=सब के

श्रात्मनः=श्रात्मा का परायगम्=परम आश्रय है

तम्≕उस षुरुषम्=पुरुष को यम्≕जिसको

ऋात्थ≔तुम कहते हो श्रहम्≕में

वेद=जानता हूं

यः=जो श्चयम्=यह

ज्यारीरः=शरीरसम्बन्धी पुरुषः≔पुरुष है सः≔वही

एव=निश्चय करके

एषः चयह सबका भातमा है

श्चाकल्य≔हे शाकल्य ! एन≔श्रवरष

बद=तुम पृद्धो + पुनः≕फिर

शाकल्यः≔शाकल्य ने श्राह=पूछा कि तस्य≔उस पुरुष का

देवता=देवता (कार्य)

का≔कौन है

+ इति श्रुत्वा≔ऐसा सुन कर + य(ज्ञवल्क्यः=य।ज्ञवल्क्य ने

ह⊃स्पष्ट

उवाच=कहा कि अमृतम्=अमृत है यानी बीर्य है

भावार्थ ।

विदग्ध कहते हैं कि, हे याज्ञवल्क्य ! जिस पुरुष का शारीर पृथित्री है, रूप अग्नि है, मन प्रकाश है, जो सब जीवों का उत्तम आश्रय है, उस पुरुष को जो जानता है वह अवश्य हे याज्ञवल्क्य ! उस पुरुष का ज्ञाता होता है, दूसरा नहीं, क्या आप उस पुरुष को जानते हैं ? यदि आप जानते हैं तो मैं आपको अवश्य ब्रह्मवेत्ता मानूंगा. ऐसा सुन कर याज्ञवल्क्य कहते हैं, हे विदग्ध ! जो सब के आत्मा का परम आश्रय है, और जिसको तुम ऐसा कहते हो उस पुरुष का मैं जानता हूं, जो यह शारीरसम्बन्धी पुरुष है, वहीं निश्चय करके सब जीवमात्र का आश्रय है, हे विदग्ध ! तुम ठहरो मत, पूछते चले चलो, मैं तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर देता चलूंगा, इस पर विदग्ध ने पूछा, हे याज्ञवल्क्य ! उस पुरुष का कारण कोन है, याज्ञवल्क्य ने कहा उसका कारण अमृत यानी वीर्य है।। १०॥

मन्त्रः ११

काम एव यस्यायतन १० हृदयं लोको मनो ज्योतियों वै तं पुरुषं विद्यात्सर्वस्यात्मनः परायण्छं स वै वेदिता स्यात् । याज्ञवल्क्य वेद वा ऋहं तं पुरुष्छं सर्वस्यात्मनः परायणं यमात्थ य एवायं काममयः पुरुषः स एष वदैव शाकल्य तस्य का देवतेति स्त्रिय इति होवाच ॥

पदच्छेदः ।

कामः, एव, यस्य, आयतनम्, हृदयम्, कोकः, मनः, ज्योतिः, यः, वै, तम्, पुरुषम्, विद्यात्, सर्वस्य, आत्मनः, परायग्रम्, सः, वै, वेदिता, स्यात्, याज्ञवल्कय, वेद, वै, आहम्, तम्, पुरुषम्, सर्वस्य, आत्मनः, परायग्रम्, यम्, आत्थ, यः, एव, अयम्, काममयः,पुरुषः, सः, एषः, वद, एव, शाकल्य, तस्य, का, देवता, इति, स्त्रियः, इति, द्व, उवाच ॥

पदार्थाः श्चन्वयः यस्य≕जिस पुरुष का श्रायतनम्≔शरीर कामः=काम है हृद्यम्=हृद्य लोकः≔रहने की जगह है मनः=मन ज्योतिः=प्रकाश है यः=जो सर्वस्य=सब के आत्मनः=जीवात्मा का परायग्रम्≔परम भ्राश्रय है तम्=उस पुरुषम्=पुरुष को

याञ्चवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! यः≔जो विद्यात्=जानता है सः=वही

वै≕निरचय करके सर्वस्य=सब का

वेदिता=ज्ञाता स्यात्≔होता है

+इति श्रुत्वा≔ऐसा सुन कर याञ्चवत्क्यः=याज्ञवत्क्य ने

> उवाच≃कहा यः=जो सर्वस्य=सबके

श्रात्मनः=भाग्मा का परायग्रम्=उत्तम श्राश्रय है

अन्वयः

पदार्थाः

तम्=उस पुरुषम्=पुरुष को ग्रहम्≕में वेद्=जानता हूं यम्=जिसको

आत्थ≕तुम कइते हो

यः≕जो एव≕निश्चय करके

श्रयम्≔यह काममयः=कामसम्बन्धी पुरुषः=पुरुष है

सः एव≔वही

एपः≕यइ सब का श्रात्मा है शाकल्य=हे शाकल्य !

वद=तुम पृङ्घो + पुनः≕फिर

+ शाकल्यः=शाकल्य

+ आह≔बोबे कि याज्ञचल्क्य=हे याज्ञवल्क्य !

तस्य=उसका देवता=देवता यानी कारण

का=कौन है

इति=इस पर याञ्चवल्क्यः=याज्ञवहक्य ने

> ह्≕स्पष्ट उवाच=कहा कि

स्त्रियः≔कामका कारण वियां हैं

भावार्थ ।

विदग्ध पूछते हैं कि, हे याज्ञवल्क्य ! जिस पुरुष का शरीर काम

है, हृदय रहने की जगह है, मन प्रकाश है, जो सब जीवातमा का परम आश्रय है, जो उस पुरुष को जानता है, वह हे याज्ञवल्क्य! सब का ज्ञाता है, हे याज्ञवल्क्य! क्या तुम उस पुरुष को जानते हो? यदि आप जानते हैं, तो मैं आपको सब का ज्ञाता मानूंगा, इस पर याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि जो सब के आत्मा का उत्तम आश्रय है, उस पुरुष को मैं जानता हूं, जिसके निसवत आप पृद्धते हैं उसको हे विद्ग्य! सुनो, जो यह कामसम्बन्धी पुरुष है वही जीवमात्र का उत्तम आश्रय है, हे विद्ग्य! आगर को उत्तम आश्रय है, हे विद्ग्य! आगर को उत्तम आश्रय है, हे विद्ग्य! आगर जो उत्त पूछने की इच्छा हो पूछो, शाकल्य विद्ग्ध फिर पूछते हैं, हे याज्ञवल्क्य! उसका कारण कोन है, इस पर याज्ञवल्क्य जवाब देते हैं, हे विद्ग्ध! काम का कारण क्रियां हैं ॥ ११॥

मन्त्रः १२

रूपाएयेव यस्यायतनं चक्षुर्लोको मनो ज्योतियों वै तं पुरुषं विद्यात्सर्वस्यात्मनः परायएॐ स वै वेदिता स्यात्। याज्ञवल्क्य वेद वा ऋहं तं पुरुषॐ सर्वस्यात्मनः परायएां यमात्थय एवासावादित्ये पुरुषः स एप वदेव शाकल्य तस्य का देवतेति सत्यमिति होवाच॥

पदच्छेदः ।

रूपाणि, एव, यस्य, श्रायतनम्, चक्षुः, लोकः, मनः, ज्योतिः, यः, वै, तम्, पुरुषम्, विद्यात्, सर्वस्य, श्रात्मनः, परायणम्, सः, वै, वेदिता, स्यात्, याज्ञवल्क्य, वेद्, वै, श्रहम्, तम्, पुरुषम्, सर्वस्य, श्रात्मनः, परायणम्, यम्, श्रात्थ, यः, एव, श्रासो, श्रादित्ये, पुरुषः, सः, एपः, वद, एव, शाक्षस्य, तस्य, का, देवता, इति, सत्यम्, इति, ह, उवाच ॥

श्रन्वयः पदार्थाः श्रन्वयः

श्रायतनम्=त्राश्रय है चक्षुः≔नेत्रही पदार्थाः

यस्य=जिस पुरुष का रूपाणि एव=रूपही

लोकः=रहने की जगह है मनः≔मन ही ज्योतिः=प्रकाश है यः=जो सर्वस्य≔सब के **ग्रात्मनः**=श्रात्मा का परायग्रम्=उत्तम भ्राश्रय है . तम्=डस पुरुषम्=पुरुषको यः=जो वै=िनश्चय के साथ विद्यात्=जानता है सः=वह याञ्चवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य वेदिता≔वेता स्यात्=होता है **+ इति श्रुत्वा≔ऐसा सुनकर** याञ्चयल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने उवाच=कहा + शाकल्य=हे विदग्ध ! यः=जो सर्वस्य=सब के श्चात्मनः=श्रात्मा का परायग्रम्=परम ऋश्वव है च≔श्रांर यम्=जिसको त्वम्=तुम सर्वस्य≔सब

श्चात्मनः≕जीवों का परायग्रम्=परम श्राश्रय आःत्थ=कहते हो तम्≕उस पुरुष को श्चहम्=भैं चेद्≔जानता हं श्चस्त्रो=यही पुरुष श्चादित्य=सूर्य में है सः≔वही एषः=यह पुरुषः=पुरुष + श्रदित=हैं जो तुम्हारे विषे स्थित है शाकल्य=हे शाकल्य ! वद एव=तुम पृक्षो ठहरो मत इति=इस पर + शाकल्यः≕शाकल्य ने + पप्रच्छ=पृद्धा तस्य=उस पुरुष का देवता=देवता यानी कारण का=कौन है इति=शाकल्यके इस प्रश्क

पर

+ याझवरुक्यः=याज्ञवरुक्य ने इति=ऐमा ह=स्गष्ट उदाच=कहा कि तत्=वह सत्यम्=ब्रह्म है

भावार्थ ।

विदम्ध फिर प्रश्न करते हैं कि, हे याज्ञवल्क्य ! जिस पुरुष का रूप ही आश्रय है, नेत्रही रहने की जगह है, मन ही प्रकाश है, जो सवके आतमा का उत्तम आश्रय है, जो उस पुरुष को निश्चय के साथ जानता है, वह हे याझवरूक्य ! सवका वेत्ता होता है, क्या आप उस पुरुषको जानते हैं ? आगर आप जानते हैं तो मैं आपको सवका वेत्ता मानूंगा, ऐसा सुनंकर याझवरूक्य ने कहा हे विदग्ध ! जो सबके आत्मा का परम आश्रय है, और जिसको तुम सब जीवों का परम आश्रय कहते हो मैं उस पुरुषको जानता हूं वही पुरुष सूर्य है, वही पुरुष तुम्हारे विषे स्थित है, हे शाकरूय, विदग्ध ! पूछो और क्या पूछते हो, इसपर विदग्धने पूछा, उस पुरुष का कारणा कौन है, इसके उत्तर में याझवरूक्य कहते हैं कि इसका कारणा ब्रह्म है।। १२।।

मन्त्रः १३

त्राकाश एव यस्यायतनथ्ध श्रोत्रं लोको मनो ज्योतियों वै तं पुरुपं विद्यात्सर्वस्थात्मनः परायण्धः स वै वेदिता स्थात्। याज्ञवल्क्य वेद वा ऋहं तं पुरुपंधः सर्वस्थात्मनः परायणं यमात्थ य एवायधं श्रोत्रः पातिश्रुत्कः पुरुपः स एष वदेव शाकल्य तस्य का देवतेति दिश इति होवाच ॥

पदच्छेदः ।

आकाशः, एव, यस्य, आयतनम्, श्रोत्रम्, लोकः, मनः, ज्योतिः, यः, वै, तम्, पुरुषम्, विद्यात्, सर्वस्य, आतमनः, परायणम्, सः, वै, वेदिता, स्यात्, याज्ञवल्क्य, वेद, वै, आहम्, तम्, पुरुषम्, सर्वस्य, आत्मनः, परायणम्, यम्, आत्थ, यः, एव, अयम्, श्रोत्रः, प्रातिश्रुत्कः, पुरुषः, सः, एषः, वद, एव, शाकल्य, तस्य, का, देवता, इति, विशः, इति, ह, उवाच ॥

श्रन्वयः

पदार्थाः | का

ग्रन्वयः

यस्य=जिस पुरुप का आयतनम्=श्राश्रय एव=निश्चय करके आकाशः=श्राकाश है श्रोत्रम्≔कर्षे लोकः≔रहनेकी जगह है मनः≔मन ज्योतिः≔प्रकाश है

पदार्थाः

यः=जो सर्वस्य=सब के श्रात्मनः=श्रात्मा का परायण्म्≔परम श्राश्रय है तम्=उस पुरुषम्र्≃पुरुष को वै≕निश्चय करके विद्यात्=जानता है सः=वह याञ्चवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! वेदिता=सब का ज्ञाता स्यात्=होता है + इति श्रुत्वा=ऐसा सुन कर याञ्चवह्वयः=याज्ञवह्वय ने उवाच≂कहा शाकल्य=हे शाकल्य ! यः=जो सर्वस्य=सब के श्चात्मनः=श्रात्मा का परायग्रम्=परम श्राश्रय है च≃ग्रौर यम्=जिसको

त्वम्=तुम इति=ऐसा **ग्रा**त्थ=कहते हो तम्=उस पुरुषम्≔पुरुप को श्रहम्=मैं धै=निस्संदेह वेद्≔जानता हूं श्रयम्≃यह औन्नः=श्रोत्रसम्बन्धी प्रातिश्रतकः=श्रवण साक्षी पुरुषः=पुरुष है . एषः=यही तुम्हारा त्रात्मा है शाकल्य=हे शाकल्य ! वद एव≕तुम पूछो + शाकल्यः=ऋाकस्य ने + श्राह≃पूछा तस्य=डसका देवता=देवता यानी कास्य का=कौन है ? इति=इस पर उवाच ह=याज्ञवस्वय ने कहा

दिशः=दिशा हैं

भावार्थ ।

शाकल्य विदग्ध कहते हैं कि हे याज्ञवल्क्य ! जिस पुरुष का शरीर आकाश है, कर्मागोलक रहने की जगह है, मन प्रकाश है, और जो सब जीवों का परम आश्रय है, उस पुरुप को जो मली प्रकार जानता है वही ज्ञानी होसकता है, यदि आप उस पुरुप को जानते हैं तो आपही ज्ञानी और सबमें श्रेष्ठ हैं, यह सुन कर याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया, हे शाकल्य ! जिस पुरुप के बाबत आप कहते हैं और जो सब

जीवों का उत्तम आश्रय है और जो श्रोत्रसम्बन्धी पुरुष है उसकों मैं निस्संदेह जानता हूं, हे शाकल्य ! वही श्रोत्रसम्बन्धी पुरुष तुम्हारा भी आत्मा है, हे शाकल्य ! जो तुम्हारी इच्ह्या हो पूछो ? मैं उस का उत्तर अवश्य दूंगा ऐसा सुन कर शाकल्य ने प्रश्न किया श्रोत्रसम्बन्धी पुरुष का देवता यानी कारण कौन है ? याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि दिशा हैं ॥ १३ ॥

मन्त्रः १४

तम एव यस्यायतनथ्धं हृद्यं लोको मनो ज्योतियों वै तं पुरुषं विद्यात्सर्वस्यात्मनः परायर्ग्यथ्धं स वै वेदिता स्यात् । याज्ञवल्कय वेद् वा ऋहं तं पुरुषथ्धं सर्वस्यात्मनः परायर्ग्यं यमात्य य एवायं छाया-मयःपुरुषः स एप वदेव शाकल्य तस्य का देवतेति मृत्युरिति होवाच ॥ पदच्छेदः ।

तमः, एव, यस्य, आयतनम्, हृद्यम्, लोकः, मनः, ज्योतिः, यः, वै, तम्, पुरुषम्, विद्यात्, सर्वस्य, आत्मनः, परायस्म, सः, वै, वेदिता, स्यात्, याज्ञवल्कय, वेद, वे, आहम्, तम्, पुरुषम्, सर्वस्य, आत्मनः, परायस्म, यम्, आत्थ, यः, एव, अयम्, छायामयः, पुरुषः, सः, एषः, वद्, एव, शाकल्य, तस्य, का, देवता, इति, मृत्युः, इति, ह, ज्वाच ॥ अन्वयः पदार्थाः (अन्वयः पदार्थाः

यस्य=जित पुरुष का

यस्य=जित पुरुष का

श्रायतनम्=श्राश्रय

तमः=तम

एव=ही है

हृद्यम्=हृदय

लोकः=रहने की जगह है

मनः=मन

ज्यातिः=प्रकाश है

+ यः=जो

सर्वस्य=सब के

झाहमनः=श्रातमा का

वयः पद्श्या
परायण्म=परम श्राश्रव है
तम्=उस
पुरुषम्=पुरुष को
यः=जो
विद्यात्=जानता है
याज्ञवरुक्य =हे याज्ञवरुक्य !
सः=वह
वेदिता=सबका ज्ञाता
स्यात्=होता है
+ इति=देसा
+ श्रुत्वा=सुनकर

+ याज्ञवल्क्यः≔याज्ञवस्क्य ने छायामयः≖षज्ञानसम्बन्धी पुरुष है + आह=कहा यः≕जो सः≔वही सर्वस्य=सबके एषः=यह तुम्हारा पुरुष है त्रात्मनः=श्रात्मा का शाकल्य=हे शाकल्य ! परायग्रम्=परम श्राश्रय है एव≔घवश्य + च=श्रीर वद=पूछो यम्=जिसको + शाकल्यः≕शाकस्य ने त्वम्=तुम + ऋाइ⊐पृद्धा श्चात्थ=पूछते हो तस्य≔उसकी तम्≕उस देवता=देवता यानी कारण पुरुषम्≔पुरुष को का=कौन है वै=निस्सन्देह इति=इस पर श्चहम्≕में उवाच ह=याज्ञवस्क्य ने स्पष्ट वेद=जानता हूं उत्तर दिया कि श्चयम्=वह मृत्युः≔मृत्यु है पच≕ही

भावार्थ ।

जिस पुरुष का शरीर तम है, हृद्य रहने की जगह है, मन प्रकाश है, जो सब के आत्मा का परम आश्रय है, उस पुरुष को जो जानता है, वह सबका जाता होता है, क्या आप उस पुरुष को जानते हैं, अगर आप जानते हैं तो अवश्य आप श्रव्धवित् हैं, आर अगर नहीं जानते हैं तो अवश्य आप श्रव्धवित् हैं, आर अगर नहीं जानते हैं तो वृथा अहंकार करते हैं, याज्ञवरूव ने उत्तर दिया कि में उस पुरुष को जानता हूं जो सब के आत्मा का परम आश्रय है, और जिसके निसबत तुम पूळ्ते हो, हे शाकरूव ! वही पुरुष अज्ञान विषे स्थित है, वही तुम्हारे विषे स्थित है, हे शाकरूव ! यदि आप और कुळ पूळ्ना चाहो तो पूळो, में उसका उत्तर दूंगा इस पर शाकरूव पूछ्ते हैं हे याज्ञवरूवय ! ऐसे तमसम्बन्धी पुरुष का देवता कीन है ? याज्ञवरूवय ने उत्तर दिया कि हे शाकरूव ! वह मृत्यु है ॥ १४ ॥

मन्त्रः १४

रूपाएयेव यस्यायतनं चक्षुर्लोको मनो ज्योतियों वै तं पुरुषं विद्यात्सर्वस्यात्मनः परायर्ग्ण्थं स वै वेदिता स्यात्। यान्नवन्क्य वेद वा ऋहं तं पुरुषछं सर्वस्यात्मनः परायणं यमात्थ यएवायमादर्शे पुरुषः स एष वदैव शाकल्य तस्य का देवतेत्यसुरिति होवाच।।

पदच्छेदः ।

रूपाशि, एव, यस्य, आयतनम्, चक्षुः, खोकः, मनः, ज्योतिः, यः, वें, तम्, पुरूषम्, विद्यात्, सर्वस्य, झात्मनः, परायगाम्, सः, वै, वेदिता, स्यात्, याज्ञवत्क्य, वेद, वै, श्रहम्, तम्, पुरुषम्, सर्वस्य, श्चात्मनः, परायगाम्, यम्, त्र्यात्थ, यः, एव, श्चयम्, श्चादर्शे, पुरुषः, सः, एषः, वद, एव, शाकल्य, तस्य, का, देवता, इति, श्रासुः, इति, ह, उवाच ∦

श्रन्वयः

पदार्थाः

यस्य=जिस पुरुष का रूपाणि=रूप एक≔ही

श्राबतनम्≔शरीर है चश्चः≔नेत्रगोलक

लोकः=रहने की जगह है

मनः≕मन

ज्योतिः=प्रकाश है

सवस्य=सब के आत्मनः=श्रात्मा का

परायग्रम्=परम श्राभव है यः≕जो

तम्≃उस

पुरुषम्=पुरुष को

विद्यात्=जानता है

श्चन्वयः

पदार्थाः बाज्ञवल्क्य≔हे याज्ञवल्क्य ! सः वै=वह ही

वेदिता=सबका ज्ञाता स्यात्≔होता है

+ याञ्चवल्क्यः=गाज्ञवल्क्य ने

+ श्राह=कहा यः=जो

सर्वस्य=सब के

श्चात्मनः=धारमा का परायग्रम्=परम श्राश्रय है

+ च=धौर यम्≕जिसको

त्वम्≕तुम इति=ऐसा

आत्थ=कहते हो

तम्⇒उस

पुरुषम्=पुरुष को

वेद≕जानता हूं झयम्=वही पुरुषः=पुरुष झादरों=दर्पण विषे हैं सः=वही एषः=यह तुम्हारे विषे हैं +शाकल्य=हे शाकल्य !

ग्राकल्य≔हे शाकल्य ! प्व≔श्रवश्य वद≃तुम पृक्षो इति≕इस पर

+ शाकल्यः≔शाकल्य ने + पप्रच्छ्र=पृछा

तस्य=उस पुरुष का

देवता=देवता यानी कारण का=कीन है ?

जा-जाग व ग इति=यह सुन कर

इ।त=यह सुन कर उ**वाच ह**=याज्ञवल्क्य ने स्पष्ट

उत्तर दिया कि

भावार्थ ।

जिस पुरुष का रूपही शरीर है, नेत्रगोलक रहने की जगह है, मन प्रकाश है, जो सबके आत्मा का परम आश्रय है, ऐसे पुरुष को जो जानता है, वह सबका ज्ञाता होता है, याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि है शाकल्य ! जो सबके आत्मा का परम आश्रय है, और जिसको तुम ऐसा कहते हो उस पुरुष को में भली प्रकार जानता हूं, वही पुरुष दर्पण विषे है, वही पुरुष तुम्हारे विषे है, हे शाकल्य ! जो इन्द्र पूद्धना हो पूद्धते चलो, में उत्तर दूंगा ऐसा सुन कर शाकल्य पूद्धते हैं कि उसका देवता कौन है ? यह सुन कर याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि उसका देवता प्राण् है ॥ १४ ॥

मन्त्रः १६

त्राप एव यस्यायतनश्र हृदयं लोको मनो ज्योतियों वे तं पुरुषं विद्यात्सर्वस्थात्मनः परायणश्च स वे वेदिता स्थात्। याज्ञवल्क्य वेद वा ऋहं तं पुरुषश्च सर्वस्थात्मनः परायणं यमात्थ य एवायमप्सु पुरुष स एष वदैव शाकल्य तस्य का देवतेति वरुण इति होवाच।। पदच्छेदः।

श्चापः, एव, यस्य, झायतनम्, हृदयम्, लोकः, मनः, ज्योतिः, यः,

वै, तम्, पुरुषम्, विद्यात्, सर्वस्य, आत्मनः, परायग्णम्, सः, वै, वेदिता, स्यात्, याज्ञवत्क्य, वेद, वै, आहम्, तम्, पुरुषम्, सर्वस्य, आत्मनः, परायग्णम्, यम्, आत्थ, यः, एव, अयम्, आप्सु, पुरुषः, सः, एषः, वद, एव, शाकल्य, तस्य, का, देवता, इति, वरुग्णः, इति, ह, उवाच ॥

श्रन्वयः पदार्था श्रन्वयः पदार्थाः यस्य=जिस पुरुष का यः≕जो श्रापः=जन सर्वस्य=सबके एव≔ही श्रात्मनः=श्रात्मा का श्रायतनम्=रहने की जगह है परायगम्=परम श्राश्रय है हृद्यम्=हदय + च=श्रीर लोकः=मह है यम्=जिसको मनः=मन त्वम्=तुम ज्योतिः≔प्रकाश है इति≕ऐसा यः=जो आत्थ=कहते हो सर्वस्य=सबके तम्=उस **आत्मनः**=श्रात्मा का पुरुषम्=पुरुष को परायगम्≔पाम श्राश्रय है श्रहम्≕भैं तम्=उस चे≕भवश्य पुरुषम्≔पुरुष को वेद=जानता हूं यः≕जो श्रयम्=वही विद्यात्=जानता है पुरुषः≕पुरुष सः=वह श्रप्तु=जलविषे है याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! सः=वही वेदिता≔सबका ज्ञाता ष्पः=तुम्हारे विषे है स्यात्≕होता है शाकल्य=हे शाकल्य ! + इति=ऐसा एव≕श्रवश्य + श्रुत्वा=सुन कर वद=पृक्षो + याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य मे इति=इस पर + आह्=कहा + **शाक**ल्यः=शाकल्यने

+ श्चाह=पृद्धा कि
तस्य=उस पुरुष का
देवता=देवता यानी कारस
का=कीन है ?

इति=ऐसा सुन कर उदाच ह=याज्ञवल्क्य ने स्पष्ट उत्तर दिया कि बहुगाः=वहुया ।

भावार्थ ।

जिस पुरुप के रहने की जगह जल है, हृदय यह है, मन प्रकाश है, जो सबके आत्मा का परम आश्रय है, उस पुरुप को हे याज्ञवरूक्य ! जो जानता है वह सबका ज्ञाता होता है, यिंद आप उस पुरुप को जानते हैं तो वताइये, ऐसा सुन कर याज्ञवरूक्य कहते हैं कि हे शाकरूय ! जो सबके आत्मा का परम आश्रय है, और जिसको तुम ऐसा कहते हो, उसको में अवश्य जानता हूँ, वही पुरुप जलविषे है और वही पुरुप तुम्हारे बिषे है, हे शाकरूय ! और क्या पूछते हो, पृछो ? में उत्तर देने को तथ्यार हूं, इस पर शाकरूय पृछते हैं कि उसका देवता कीन है ? याज्ञवरूक्य उत्तर देते हैं उसका देवता वरुणा है ॥ १६ ॥

मन्त्रः १७

रेत एव यस्यायतन छ हृदयं लोको मनो ज्योतियों वै तं पुरुषं विद्यात्सर्वस्यात्मनः परायण्छं स वै वेदिता स्यात् । याज्ञवल्क्य वेद वा ब्यहं तं पुरुपछं सर्वस्यात्मनः परायणं यमात्थ य एवायं पुत्रमयः पुरुषः स एप वदैव शाकल्य तस्य का देवतेति प्रजापतिरिति होवाच ।।

पदच्छेदः ।

रेतः, एव, यस्य, आयतनम्, हृद्यम्, कोकः, मनः, ज्योतिः, यः, वै, तम्, पुरुपम्, विद्यात्, सर्वस्य, आत्मनः, परायण्म्, सः, वै, वेदिता, स्यात्, याज्ञवल्क्य, वेद, वै, आहम्, तम्, पुरुषम्, सर्वस्य, आत्मनः, परायण्म्, यम्, आत्थ, यः, एव, अयम्, पुत्रमयः, पुरुषः, सः, एषः, वद, एव, शाकस्य, तस्य, का, देवता, इति, प्रजापतिः, इति, ह, उवाच।।

श न्वयः	पदार्थाः	अ न्वयः	पदार्थाः
यस्य≕जिस पुर	ष का	श्चात्थ	ग=तुम कहते हो
रेतः≔वीर्य		तम	 ्डस
एव=ही		पुरुषम्	(=पुरुष को
श्चायतनम्=रहने की	जगह है	_	-
मनः≔मन		Ş	वे=भत्ती प्रकार
ज्योतिः=प्रकाश र	È	वेद	र्≕जानता हूं
यः=जो		श्रयम	म्≕वह
सर्वस्य=सबके		एड	ा =ही
श्चात्मनः =श्रात्मा व	ात	पुत्रमय	:=पुत्रसम्बन्धी
पराय णम्=परम श्र	।श्रय है	ु पुरुष	ः≕पुरुष है
तम्≔उस		स	:=वही
पुरुपम्=पुरुष को	Ī	एषः =तुम्हारे विषे है	
यः≕जो		शाकल्य	प≔हे शाकल्य !
विद्यात्≕जानता े	है	प्र	व=ग्रवश्य
सः =वह		वर	इ≔तुम पृङ्गो
याञ्चवल्क्य वै= हे याज्ञव	ल्क्य ! निश्चय	+ शाकल्य	:≕शाकल्य ने
करके		+ आह	[≕पृछाकि
वेदिता=सबका इ	ाता	तस्य	=उसका
∓यात्=होता है		क	[=कौन
+ याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्य	म्य ने	देवत	ा=देवता यानी कार ण है
+ श्राह= उत्तर दि	याकि	इति	न≕इस पर
यम्=जिसको		याञ्चवल्कय	ः≕याज्ञवल्क्यने
सर्वस्य=सबके		₹	इ=स्पष्ट
ञात्मनः =श्रात्माक	τ	उवाच	ा≕कहाकि

भावार्थ ।

परायग्रम्=परम श्राश्रय

प्रजापतिः=प्रजापति है

हे याज्ञवल्क्य ! जिस पुरुप के रहने की जगह वीर्य है, मन प्रकाश है, जो सबके आदमा का परम आश्रय है, उस पुरुष को जो जानता है, वह हे याज्ञवल्क्य ! निश्चय करके सबका ज्ञाता होता है, क्या आप उस पुरुष को जानते हैं ? याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया हे शाकल्य ! जिस

पुरुष को आप सबका परम आश्रय कहते हैं, उस पुरुष को मैं भली प्रकार जानता हूं, यह वहीं पुरुष जो तुम्हारे बिथे स्थित है, ख्रीर को पुत्र बिथे स्थित है, है शाकल्य ! ख्रीर जो पूछना हो पूछों, मैं उत्तर हैने को तैयार हूं, इस पर शाकल्य पूछते हैं कि उसका देवता कौन है ? आप कृपा कर बताइये, याज्ञवल्क्य ने कहा कि उसका देवता प्रजापति हैं।। १७॥

मन्त्रः १८

 शाकल्येति होवाच याज्ञवल्क्यस्त्वाध्त्र स्विदिमे ब्राह्मणा अङ्गारा-वक्षयणमकता ३ इति ॥

पदच्छेदः।

शाकल्य, इति, ह, उवाच, याज्ञवत्क्यः, त्वाम्, स्त्रित्, इमे, ब्राह्मणाः, श्रङ्गारावक्षयणम्, श्रक्रता, इति ॥

श्चन्वयः पद् याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

पदार्थाः | ऋन्वयः

पदार्थाः

ह=स्पष्ट इति=ऐसा

ब्राह्मशाः≔माह्मर्यो ने त्वाम्≔प्रापको सम्माराज्य रे

उवाच=कहा कि शाकल्य=हे शाकल्य!

श्रङ्गाराव- } = श्रगाठा स्रयणम् } = श्रगाठा श्रकता इति = बना रक्ला है

इमे≃इन

स्वित्=क्यों

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य ने स्पष्ट ऐसा कहा कि, हे शाकल्य ! क्यों इन ब्राह्माएों ने झापको झँगीठी बना रक्खा है, यानी मेरा उत्तररूपी जो बचन है वह झग्नि तुक्य है, झाँर झाप झँगीठी बने जा रहे हैं झाप इसको समम्मलें ॥ १८॥

मन्त्रः १६

याज्ञवल्क्येति होवाच शाकल्यो यदिदं कुरुपश्चालानां ब्राह्मणा-नत्यवादीः किं ब्रह्मविद्वानिति दिशो वेद सदेवाः सप्रतिष्ठा इति यदिशो वेत्थ सदेवाः सप्रतिष्ठाः ॥

पदच्छेदः ।

याज्ञवल्क्य, इति, ह, उवाच, शाकल्यः, यत्, इत्म्, कुरुपञ्चाला-नाम्, त्राह्मग्यान्, श्रत्यवादीः, किम्, ब्रह्म, विद्वान्, इति, दिशः, वेद, सदेवाः, सप्रतिष्ठाः, इति, यत्, दिशः, वेत्थ, सदेवाः, सप्रतिष्ठाः ॥

श्चन्वयः

म्रन्वयः पदार्थाः याञ्चवल्क्य≔हे याज्ञवल्क्य ! पदार्थाः

शक्षवल्क्य≔इ याज्ञवल्क्य ! इति=ऐसा सम्बोधन करके

ं + याज्ञवल्क्यः≔याज्ञवल्क्य ने कं + स्राह्=उत्तर दिया कि

शाकल्यः=शाकल्य ने

यत्≕जैसे

ह=स्पष्ट उवाच=कहा कि

+ त्वम्≕तुम

यत्≕जो **इदम्**≕यइ संदेवाः=देवता सहित सप्रतिष्ठाः=स्थान सहित

कुरुपञ्चा- } = कुरु श्रीर पञ्चाल के लानाम्

प्रतिष्ठाः=स्थान साहत दिशः=दिशाश्रों को

लानाम्) ब्राह्मणान्=ब्राह्मणां को श्रत्यवादीः=श्रापने कठोर वचन कहा है वेत्थ=ज्ञानते हो ताः≔उन्हीं

किम्=क्या विद्वान् इति=न्नापने जानते हुये

कहा है

दिशः=दिशाश्रों को सदेवाः=देवता सहित सप्रतिष्ठाः=स्थान सहित

+ श्रहम्=में वेद् इति=जानता हूं

भावार्थ ।

शाकल्य कहते हैं, हे याज्ञवस्क्य ! आपने कुरुपश्चाल के ब्रह्मवा-दियों को कहा है कि थे सब ब्राह्मण स्वयं डरकर तुमको श्रामीठी बना रक्ता है. यदि आप ब्रह्मवेत्ता हैं तो यह आपका निरादर सहनीय हैं, यदि आप ब्रह्मवेता नहीं हैं तो ऐसा निरादर असहनीय हैं, आपसे पूछता हूं क्या आप ब्रह्मको जानते हैं ? याज्ञवल्क्य उत्तर देते हैं, हे शाकल्य ! में नहीं कहसका हूं कि में ब्रह्मको जानता हूं, आपर न यह कहसका हूं कि ब्रह्मको नहीं जानता हूं क्योंकि जानना श्रीर न जानना बुद्धि के धर्म हैं, मुक्त श्रातमा के नहीं हैं, मैं ब्रह्मनिष्ठ
पुरुषों को बारंबार प्रस्माम करता हूं, में पूर्विदेशत श्रों को श्रीर उनके
देवता प्रतिष्ठा को जानता हूं जिनको श्राप भी जानते हैं, यदि उनके
बारे में कुछ पूछ्रना हो तो श्राप पूछें, शाकल्य कोध में श्राकर पूछते
हैं. हे याज्ञवल्क्य ! यदि श्राप देवता सहित प्रतिष्ठा सहित दिशाश्रों
को जानते हैं तो बताइये प्राची दिशा में कौन देवता है ॥ १६ ॥

मन्त्रः २०

किंदेवतोऽस्यां पाच्यां दिश्यसीत्यादित्यदेवत इति स श्रादित्यः किस्मिन्प्रतिष्टित इति चक्षपीति किस्मिन्न चक्षुः प्रतिष्टितमिति रूपेष्विति चक्षुषा हि रूपाणि पश्यति किस्मिन्न रूपाणि प्रतिष्टितानीति हृद्य इति होवाच हृदयेन हि रूपाणि जानाति हृदये क्षेव रूपाणि प्रतिष्टितानी प्रतिष्टितानी भवन्तीत्येवमेवैतद्याज्ञवल्भय ।।

पदच्छेदः ।

किंदेदतः, अस्याम्, प्राच्याम्, हिशि, श्रासि, इति, श्रादित्यदेवतः, इति, सः, श्रादित्यः, किस्मन्, प्रतिष्ठितः, इति, चक्षुपि, इति, किस्मन्, नु, चक्षुः, प्रतिष्ठितम्, इति, रूपेषु, इति, चक्षुपा, हि, रूपाणि, पश्यित, किस्मन्, नु, रूपाणि, प्रतिष्ठितानि, इति, हृद्ये, इति, ह, उवाच, हृद्येन, हि, रूपाणि, जानाति, हृद्ये, हि, एव, रूपाणि, प्रतिष्ठितानि, भवन्ति, इति, एवम्, एवम्, एव, एतत्, याज्ञवत्वय ॥

श्चन्यः पदार्थाः श्चन्ययः पदार्थाः + श्राकल्यः=शाकल्य ने किंदेवतः=कीन देवतावाते + श्चाह=कहा + याझवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! श्चस्याम्=इस श्चस्याम्=इस श्राच्याम्=पूर्व + याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्यः ने

+ आह≔कहा कि

विशि=दिशा में

भूमें पूर्व का सूर्यदेवता श्रादित्य-देवतः में सूर्यदेवता का प्र-्धाने मानता हुं + शाकल्यः=शाकल्य ने + आड=पूछा कि सः=व इ **श्चादि**त्यः=सूर्य कस्मिन्=किसमें प्रतिष्ठितः=स्थित है इति=इस पर + याञ्चल्यमः=पाज्ञवरूप ने + ऋाह=कहा कि चक्षुषि=नेत्र में स्थित है इति≔इस पर + शाकल्यः=शाकल्य ने ं + ऋाह=पूछा ।के चक्षुः≔नेत्र नु कस्मिन्≕िकेस में प्रतिष्ठितम्=स्थित है ? प्व=ही इति=इस पर रूपाशि=रूप + याञ्चवत्ययः=याज्ञवर्क्य ने + आह=कहा कि क्रपंखु=रूपमं है हि=क्योंकि + जनः=पुरुष चश्चषा=नेत्र करके एतत्=यह इति=ही रुपाणि=रूपें को श्रास्ति इति=है जैसा तुम कहते हो पश्यति=देखता है

+ पुनः≕िकर +शाकल्यः=शाकस्य ने + आह=कहा रूपाणि=रूप कस्मिन्=किसमें प्रतिष्ठितानि=स्थित है नु=यह मेरा प्रश्न है इति≕इस पर याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने ह≔स्पष्ट उवाच=कहा कि हृदये=हदय में हि=क्योंकि हृद्यन=हृदय करके ही रूपाणि=रूप को + जनः≔पुरुष जानाति=जानता है हि=कारण यह है कि हृदये≔हृदय में प्रतिष्ठितानि=स्थित भवन्ति=रहता है + शाकल्क्यः=शाकल्य ने + श्राह=कहा कि याञ्चवल्क्य≔हे याञ्चवल्क्य ! एवम् एव=ऐसा ही

भावार्थ ।

शाकल्य पुद्धते हैं हे याज्ञवल्क्य ! आप पूर्व दिशा में किस देवता

को प्रधान मानते हैं ? इस पर याज्ञवल्क्यने उत्तर दिया कि मैं सूर्य देवता को पूर्वदिशा का अधिपति मानता हूं, फिर शाकल्यने पूछा कि वह सूर्य किसमें स्थित है ? यह सुनकर याज्ञवल्क्य ने कहा वह सूर्य किसमें स्थित है, इस पर शाकल्य ने पूछा नेत्र किसमें स्थित है, याज्ञ-वल्क्य ने उत्तर दिया रूप में स्थित है, क्योंकि पुरुष रूप को नेत्र करके ही देखता है, फिर शाकल्य ने पूछा रूप किसमें स्थित है ? याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि रूप हृदय में स्थित है, क्योंकि पुरुष रूप को हृदय करके ही जानता है, कारगा इसका यह है कि रूप हृदय में ही रहता है, इस पर शाकल्य ने कहा कि हे याज्ञवल्क्य ! दुम सत्य कहते हो ॥ २०॥

मन्त्रः २१

किंदेवतोऽस्यां दक्षिणायां दिश्यसीति यमदेवत इति स यमः किंदमन्य्रतिष्ठित इति यज्ञ इति किंदमन्त्र यज्ञः अतिष्ठित इति दक्षिणाया-मिति किंदमन्त्र दक्षिणा मितिष्ठितेति अद्धायामिति यदा ह्येव अद्धन्तेऽथ दक्षिणां ददाति अद्धायां छे ह्येव दक्षिणा प्रतिष्ठितेति किंदमन्त्र अद्धा प्रतिष्ठितेति हृदय इति होवाच हृदयेन हि अद्धां जानाति हृदये ह्येव अद्धा प्रतिष्ठिता भवतीत्येवमेंवतवाज्ञवल्क्य ॥

पदच्छेदः ।

किंदेवत:, श्रस्याम्, दक्षिग्णायाम्, दिशि, श्रासि, इति, यमदेवत:, इति, सः, यमः, किस्मन्, प्रतिष्ठितः, इति, यद्यः, इति, किस्मन्, नु, यद्यः, प्रतिष्ठितः, इति, दक्षिग्णायाम्, इति, किस्मन्, नु, दक्षिणा, प्रतिष्ठिता, इति, श्रद्धायाम्, इति, यदा, हि, एव, श्रद्धत्ते, श्राथ, दक्षि-ग्णाम्, ददाति, श्रद्धायाम्, हि, एव, दक्षिग्णा, प्रतिष्ठिता, इति, किस्मन्, नु, श्रद्धा, प्रतिष्ठिता, इति, हृद्ये, इति, हृ, ज्वाच, हृद्येन , हि, श्रद्धाम्, ज्ञानाति, हृद्ये, हि, एव, श्रद्धा, प्रतिष्ठिता, भवति, इति, एवम्, एव, एतत्, याङ्गवल्क्य ॥

अन्वयः

पदार्थाः

श्रस्याम्=इस दक्षिणायाम्=दक्षिण दिशि=दिशा में

+ त्वम्=तुम

(किस देवतावाले यानी किस देवता को तुम दक्षिण दिशा का अधिपति मानते

श्रसि=हो इति=इस पर

+ याज्ञचल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ ऋाह=कहा कि

यमदेवतः= { यमदेवतावाज्ञा में हूं यानी यम को श्रिषिपति मानताहूं

+ शाकल्यः=शाकल्य ने

+ भ्राह=फिर पछ। कि

सः≔वह

यमः=यम देवता

कस्मिन्=िकसमें प्रतिष्ठितः=स्थित है

इति=इस पर

+याञ्चयत्कयः=याज्ञवस्कय ने

+ आह=कहा कि

यम देवता यज्ञ में यह्न= { स्थित है यानी यम यज्ञ में पृज्य है

इति=ऐसा

+ श्रुत्वा=सुन कर

+ शाकल्यः=शाकल्य ने

+ श्राह=पृद्धा कि

यज्ञ:=यज्ञ

श्रन्वयः

पदार्थाः

कस्मिन्=किसमें प्रतिष्ठितः=स्थित है

नु=यह मेरा प्रश्न है

इति=इस पर

+ याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ आह=कहा कि

दक्षिणायाम्=दक्षिणा में स्थित है

इति=इस पर

+ शाकल्यः=शाकल्य ने

+ ऋाह=पृद्धा कि

दक्षिणा=दक्षिणा कस्मिन्=किसमें

प्रतिष्ठिता=स्थित है

नु=यह मेरा प्रश्न है

+ याज्ञचल्क्यः=याज्ञचल्क्य ने

+ ऋाह≔कहा कि

श्रद्धायाम्=श्रद्धा में स्थित है

हि=क्योंकि

यदा=जब

पुरुष:=पुरुष श्रद्धत्तं=श्रद्धा करता है

श्रथ एव=तबही

दक्षिणाम्=दक्षिणा को

ददाति=देता है

हि=कारण यह है कि

अद्धायाम्=श्रद्धा में

दक्षिणा=दक्षिणा

एव=निश्चय करके

प्रतिष्ठिता=स्थित है

इति=इस पर

+ शाक्तस्यः=शाकस्य ने
+ माह=पृद्धा कि
श्रद्धा=श्रद्धा
कास्मिन=किसमें
प्रतिष्ठिता=स्थित है
नु=यह मेरा प्रश्न है
याज्ञवलक्यः=याज्ञवलक्य ने
उवाच ह=कहा कि
हृद्ये=श्रद्धा हृदय में स्थित
है
हि=क्योंकि
+ जनः=पुरुष
हृद्येन=हृद्य करके

श्रद्धामू=श्रद्धा को

जानाति=जानता है

हि=कारया यह है कि

हदये=हदय में

श्रदा=श्रदा
प्रतिष्ठिता=स्थित
भवति=रहती है

इति=इस पर
शाकल्य:=शक्लय ने
शाह=कहा
याज्ञवल्क्य=ह याज्ञवल्क्य !

एतत्=यह
एवम् एव=ऐसाही
श्रासित=है

हति=जैसा तुम कहते हो

भावार्थ ।

हे याज्ञवल्क्य ! इस दक्षिणा दिशा में किस देवताको प्रधान मानते हो ? याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि मैं यमदेवता को प्रधान मानता हूं, शाकल्य ने फिर पूछा कि वह यमदेवता किसनें स्थित है याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि वह यमदेवता किसनें स्थित है याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया वह यमदेवता यज्ञ में स्थित है यानी यज्ञ में उसका पूजन होता है फिर शाकल्य ने पूछा कि यज्ञ किसमें स्थित है याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि दक्षिणा में स्थित है क्योंकि दिना दक्षिणा के यज्ञ की पूर्ति नहीं होती है फिर शाकल्य ने पूछा कि दक्षिणा किसमें स्थित है, याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि अद्धा में स्थित है, क्योंकि जब पुरुष अद्धा करता है तभी दक्षिणा देता है, इसिलये दक्षिणा अद्धा में स्थित है फिर शाकल्य ने पूछा कि अद्धा किसमें स्थित है, याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि अद्धा कि स्था है, व्योंकि पुरुष हृद्य करके ही अद्धा को जानता है, इसिलये हृद्य में अद्धा स्थित है, इस पर शाकल्य ने कहा जैसा तुम कहते हो वैसाही है ॥ २१॥

मन्त्रः २२

किंदेवतोऽस्यां प्रतीच्यां दिश्यसीति वरुणदेवत इति स वरुणः किस्मिन्पतिष्ठित इत्यप्स्वित किस्मिन्न्वापः प्रतिष्ठिता इति रेतसीति किस्मिन्नु रेतः प्रतिष्ठितमिति हृदय इति तस्मादिष प्रतिरूपं जातमा- हुह्दयादिव स्प्तो हृदयादिव निर्मित इति हृदये होव रेतः प्रतिष्ठितं भवतीत्येवमेवैतद्याइवल्क्य ।।

पदच्छेदः ।

किंदेवतः, अस्याम्, प्रतीच्याम्, दिशि, श्रासः, इति, वरुगादेवतः, इति, सः, वरुगाः, कस्मिन्, प्रतिष्ठितः, इति, श्रासः, इति, कस्मिन्, नु, श्रापः, प्रतिष्ठितः, इति, देतः, प्रतिष्ठितम्, श्रापः, प्रतिष्ठितः, इति, रेतसि, इति, कस्मिन्, नु, रेतः, प्रतिष्ठितम्, इति, हृदये, इति, तस्मात्, श्रापः, प्रतिष्ठतम्, जातम्, श्राहुः, हृदयात्, इव, स्मः, हृदयान्, इव, निर्मितः, इति, हृदये, हि, एव, रेतः, प्रतिष्ठि-तम्, भवति, इति, एवम्, एव, एतत्, याज्ञवल्क्यः॥

अ न्वयः	पदार्थाः	श्रन्वयः	पदार्थाः
+ शाकल्यः=शाकल	य ने		(वरुण देवतावाला
+ पत्रच्छ=प्छा	कि	वरुणदेवतः≕	ु यानी वहता को
श्रस्याम्=इस			हु यानी वरुण को में श्रिधिपति मा- नता हूं
प्रतीच्याम्=पश्चिम		इति=इ	
दिशि=दिशारे	ŕ	+ शाकल्यः=ः	_
त्वम्=तुम		+ पप्रच्छ=पृद्धा कि	
किंस देवतावाजे हो यानी किस द्वारा च रेवता को तुम प- क्रास्ति श्विम दिशा का ग्राधिपति मानते ह	स देवतावाले	सः≕	।ह
	यानी किस	वरुणः≔व	रु ण
	ताकातुम् प- चमादिशाका	कस्मिन्≕	केसमें
	प्रधिपति मानते हो	प्रतिष्ठितः≕	स्थत है
इति=इस प	₹	नु≕	ाह मेरा प्रश्न है
+ याज्ञवल्क्यः=याज्ञव	ल्क्य ने	इति=	इस पर
+ श्राह्≕कहा र्	के	+ याञ्चवल्क्यः=	राज्ञवस्क्य ने

+ ग्राह=कहा कि श्चरसु=जल में स्थित है इति=ऐसा + श्रुत्वा≔सुन कर + शाकल्यः=शाकल्य ने + ऋाह≕पृद्धा कि श्चाप:=जल कस्मिन्=िकस में प्रतिष्ठिताः=स्थित है जु≔यह मेरा प्रश्न है इति=इस पर + याझवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + आह=उत्तर दिया कि रेतिस=वीर्य में स्थित है इति=इसके बाद + शाकल्यः=शाकल्य ने + श्राह≕पृद्धा कि रेतः=वीर्य कस्मिन्=िकस में प्रतिष्ठितम्=स्थित है जु≕यह मेरा प्रश्न है इति=इस पर + याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + श्राह=कहा कि हृद्धये इति=हृदय में स्थित है

अपि≕धौर तस्मात्≕उसी हदय से जातम्=पैदाहुये पुत्र को श्चनुरूपम्=पिता के सहश श्रादुः=कहते हैं हि=श्योंकि हृद्यात् इव=हरय से ही सृप्तः=पुत्र निकला है हृद्यात् इव=हृद्य से ही निर्मितः=निर्माण हुन्ना है + च=श्रीर हृदये=हदय में पव=ही रेतः≔वीर्य प्रतिष्ठितम्=स्थित भवति=रहता है इति=ऐसा श्रुत्वा=सुन कर शाकल्यः=शाकस्य ने **ट्या**ह=कहा याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! पतत्=यह एवम् एव=ऐसाही है जैसा तुम

कहते हो

भावार्थ ।

शाकल्य ने पूछा कि तुम पश्चिम दिशा में किस देवता को प्रधान मानते हो ? याज्ञवल्क्य ने कहा वरुगादेवता को प्रधान मानताहूं, शाकल्य ने पूछा वह वरुगादेवता किसमें स्थित हैं, इस पर याज्ञवल्क्य ने कहा वह जलविषे स्थित हैं, ऐसा सुनकर शाकल्य ने पूछा जल्ल किसमें स्थित है याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया वीर्य में स्थित है, फिर शाकस्य ने पूझा वीर्य किसमें स्थित है, याज्ञवल्क्य ने कहा वीर्य हृदय में स्थित है, झौर उसी हृदय से पैदाहुये पुत्र को पिता के सदश कहते हैं, क्योंकि हृदय से ही पुत्र उत्पन्न हुआ है, हृदय से ही पुत्र निर्माण हुआ है, झौर हृदय में ही वीर्य स्थित रहता है, यह सुन कर शाकल्य ने कहा हे याज्ञवल्क्य ! जैसा तुम कहते हो वैसाही है ॥ २२॥

मन्त्रः २३

किंदेवतोऽस्यामुदीच्यां दिश्यसीति सोमदेवत इति स सोमः किंदिनत्रिति इति दीक्षायामिति किंदिम हु दीक्षा पतिष्ठितेति सत्य इति तस्मादिष दीक्षात्रमाहुः सत्यं वदेति सत्ये क्षेव दीक्षा प्रतिष्ठितेति किंदमकु सत्यं प्रतिष्ठितेति किंदमकु सत्यं प्रतिष्ठितिनि हृदय इति होवाच हृदयेन हि सत्यं जानाति हृदये क्षेव सत्यं प्रतिष्ठितं भवतीत्येवमेवतद्या इवल्क्य ।।

पदच्छेदः ।

किंदेवतः, आस्याम्, उदीच्याम्, दिशि, आसि, इति, सोमदेवतः, इति, सः, सोमः, कस्मिन्, प्रतिष्ठितः, इति, दीक्षायाम्, इति, कस्मिन्, न्रु, दीक्षा, प्रतिष्ठिता, इति, सत्ये, इति, तस्मात्, आपि, दीक्षितम्, आहुः, सत्यम्, बद, इति, सत्ये, हि, एव, दीक्षा, प्रतिष्ठिता, इति, कस्मिन्, नु, सत्यम्, प्रतिष्ठितम्, इति, हृदये, इति, हृ, उवाच, हृदयेन, हि, सत्यम्, जानाति, हृदये, हि, एव, सत्यम्, प्रतिष्ठितम्, भवति, इति, एवम्, एव, एत्, एत्, याज्ञवक्त्य्य।

श्चन्वयः	पदार्थाः	श्रन्वयः	पदार्थाः
सस्याम्=इस उदीच्याम्=उत्तर दिशि=दिशा में स्वम्=तुम		~ ~ ~	(कीन देवतावाले हो यानी किस देवता (को तुम उत्तर दिशा का अधिपति मानते हो ?

इति=ऐसा

+ श्रुत्वा=सुनकर

+ याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ झाह्=उत्तर दिया कि

सोमदेवतः= { सोम देवतावाला हूं यानी चन्द्रमा को प्रधान मानता हूं

+ पुनः प्रश्नः≔िकत शाकल्य का प्रश्न हुन्ना कि

सु:=**वह**

स्रोमः≔चन्द्रसम्बन्धी सोमजता कस्मिन्=किस में प्रतिष्ठितः≕स्थित है ?

इति=इस पर

+याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ स्राह=उत्तर दिया कि दीक्षायाम्=दीक्षा में स्थित है

इति=इस पर

+ शाकल्यः=शाकल्य ने

+ ब्राह=पृद्धा

दीक्षा=दीक्षा

कस्मिन्=किसमें प्रतिष्ठिता=स्थित है १

. जु=यह मेरा प्रश्न है

इति⇒ऐसा

+ भृत्वा≕सुन कर +याञ्चयल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ आह≔कहा कि

सत्ये इति=सत्य में स्थित है

श्रपि≕श्रौर

तस्मात्=इसी कारव

दीक्षितम्=दीक्षित यानी दीक्षा खेनेवासे को

सत्यम्=सत्य

श्राहुः≔कहते हैं

त्वम्=तुम सत्यम्=सत्य

बद=कहो

हि=पर्योकि

दीक्षा=दीक्षा

सत्ये=सत्य में

एव≔ही

प्रतिष्ठिता=प्रतिष्ठित है

इति=ऐसा

+ श्रुत्वा=सुन कर + शाकल्यः=शाकल्य ने

श्राकल्यः=राकस्य

+ झाह=पूछा कि सत्यम्=सस्य

कस्मिन्=किस में

प्रतिष्ठितम्=स्थित है नु=यह मेरा प्रश्न है

इति=ऐसा

+ श्रुत्त्रा≔सुन कर

+ याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

ह उवाच=स्पष्ट डक्तर दिया हृद्ये=इदय में स्थित है

हि=क्योंकि

हृद्येन=हृदय करके

सत्यम्=सत्य को

+ पुरुषः=पुरुष जानाति=जानता है

जानात=जानता ह हि एव=इसी कारण

इद्ये=हृद्य में

सत्यम्=सत्य प्रतिष्ठितम्=स्थित + भवति=रहता है + शाकत्य श्राह=शाकस्य ने कहा याञ्चवल्क्य≔हे याज्ञवल्क्य !

पतत्≕यह बात

पत्रम् प्रच≕्रेसीही हे जैसा तुम्

कहते हो

भावार्थ।

शाकल्य पूछते हैं कि, हे याज्ञवल्क्य ! उत्तर दिशा में आप किस देवता को प्रधान मानते हैं ? यह सुन कर याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि चन्द्रमा देवता को प्रधान मानता हूं, फिर शाकल्य ने प्रश्न किया वह चन्द्रमासम्बन्धी सोमलता किसमें स्थित हैं ? याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि दीक्षा में स्थित हैं, शाकल्य ने पूछा दीक्षा किसमें स्थित हैं याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि दीक्षा में स्थित हैं, और यज्ञकर्म के आरम्भ में दीक्षा लेनेवाले को सत्य भी कहते हैं, और यज्ञकर्म के आरम्भ में दीक्षा लेनेवाले को कहते हैं कि तुम सत्य बोलो क्योंकि, दीक्षा सत्य में ही स्थित हैं, फिर शाकल्य ने पूछा सत्य किसमें स्थित हैं ? याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया सत्य हदय में स्थित हैं, क्योंर हत्य करकेही सत्य को पुरुष जानता है, और इसी कारगा हदय सत्य में स्थित है, इस पर शाकल्य ने कहा जो तुम कहते हो ठीक हैं ॥ २३॥

मन्त्रः २४

किंदेवतोऽस्यां ध्रुवायां दिश्यसीत्यग्निदेवत इति सोग्निः कस्मि-न्यतिष्ठित इति वाचीति कस्मिन्वाक्यतिष्ठितेति हृदय इति कस्मिन्नु हृदयं प्रतिष्ठितमिति ॥

पदच्छेदः ।

किंदेवतः, आस्याम्, भ्रुत्रायाम्, दिशि, श्रासि, इति, आग्निदेवतः, इति, सः, श्राग्निः, कस्मिन्, प्रतिष्ठितः, इति, वाचि, इति, कस्मिन्, वाक्, प्रतिष्ठिता, इति, हृदये, इति, कस्मिन्, नु, हृदयम्, प्रति-क्षितम्, इति ॥

भ्रन्धयः पदार्थाः	भ्र न्वयः	पदार्थाः
श्च स ्याम्=इस	+ श्रुत्वा≃सुन कर	·
ध्रुवायाम्=ध्रुव	+ याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्कः	य ने
दिशि=दिशा में	+ श्राह≕कहा कि	
+ त्वम्=तुम	वाचि इति=वाणी में	ग्रग्नि स्थितहै
(कौन देवतावाले हो	+ शाकल्यः=शाकस्य	ने
कीन देवतावाजे हो किंदेवतः={ यानी भुव दिशाधि- पति किसको मानते	+ पप्रच्छु≂पृद्धा कि	
र् पात क्सका मानत श्रसि=हो	वाक्=वाणी	
अ।स=६। + याज्ञचल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने	कस्मिन्≕िकस में	
म थाश्चलक्यः–यार्यस्ययः स्राह्≕कहा कि	प्रतिष्ठिता=स्थित है	
		कर
हं यानी ध्रवदिशा	याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क	
्रश्चित्त देवतावाला द्वाप्तिदेवतः≔्रहें यानी ध्रुवदिशा के स्वामी श्वप्ति को ्रमानता हुं	+ श्राह=उत्तर दिर	
	हृदये=वाणी हृदय में स्थित है	
इति=इस पर	द्धर्य=गर्या हर इति=इस पर	3 T T 1 (4 (1 Q
+ शाकल्यः≔शाकल्य ने	• •	
+ स्राह=पूद्धा	पुनः⊐िकर	
सः=वह	शा कल्यः=शाकल्य	र्न
श्चितः=श्रीन	उवाच=पृद्धा कि	
कस्मिन्=किस में	हृदयम्=हृदय	
प्रतिष्ठितः=स्थित है	कस्मिन्=किसमें	
इति=यइ	प्रतिष्ठितम्=स्थित है	

भावार्थे ।

शाकल्य ने पूछा ध्रुव दिशा में आप कीन देवता की प्रधान मानते हैं ? याज्ञवल्क्य ने कहा आग्निदेवता की, शाकल्य ने पूछा वह आग्नि किस में स्थित हैं ? यह सुन कर याज्ञवल्क्य ने कहा बाग्गी में स्थित है, फिर शाकल्य ने पूछा वाग्गी किस में स्थित है, याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया वाग्गी हृदय में स्थित है, इस पर शाकल्य ने पूछा हृदय किस में स्थित है। २४।।

मन्त्रः २५

अहिन्निकेति होवाच याज्ञवल्क्यो यत्रैतदन्यत्रास्मन्मन्यासै यद्धचे-तदन्यत्रास्मत्स्याच्छ्वानो वैनद्धुर्वयाश्रंसि वैनद्विमथ्नीरन्निति ॥

पदच्छेदः ।

धाहल्लिक, इति, ह, उवाच, याज्ञवल्क्य:, यत्र, एतत्, **धा**न्यत्र, अस्मत्, मन्यासे, यत्, हि, एतत्, अन्यत्र, अस्मत्, स्यात्, श्वानः, वा, एनत्, भ्रद्धः, वयांसि, वा, एनत्, विमध्नीरन्, इति ॥ पदार्थाः

श्चन्तयः इति=ऐसा सुन कर

याञ्चलक्यः=याज्ञवल्क्य ने

ह=स्पष्ट उवाच=कहा कि

ग्रहितक=ग्ररे निशाचर,

+ शाकल्य=शाकस्य ! यत्र=जब

इति=ऐसा

मन्यासै मन्यसे=मानोगे कि एतत्=यह भात्मा (हृदय)

श्चस्मत्≔इस हमारे देह से द्मन्यत्र≔पृथक् है तो

यत्≕जो

स्रन्वयः

पदार्थाः एतत्=यह श्रात्मा

श्रस्मत्=इस शरीर से

ऋन्यत्र≕पृथक् स्यात्≔हो तो

पनत्=इस शरीर को

श्वानः≔कुत्ते

श्रद्य:=सारार्के

वा=भीर वयांसि=पक्षी

पनत्≔इस शरीर को

वा≕धवश्य

श्रश्नीरन् इति≔खाडाखें

भावार्थ ।

ऐसा सुन कर याज्ञवल्क्य ने कहा खरे दुष्ट निशाचर, शाकस्य ! जब तुम ऐसा मानोंगे कि यह हृदय इस हमारे शरीर से पृथक् है तो जो यह हृदय इस शरीर से पृथक हो तो इस शरीर को कुत्ते आरीर पक्षी खाजायँ ॥ २४ ॥

मन्त्रः २६

कस्मिश्च त्वं चात्मा च प्रतिष्ठितौ स्थ इति प्राण इति कस्मिश्च

पाणः प्रतिष्ठित इत्यपान इति कस्मिन्न्वपानः प्रतिष्ठित इति व्यान इति कस्मिन्नु व्यानः प्रतिष्ठित इत्युदान इति कस्मिन्नुदानः प्रतिष्ठित इति कस्मिन्नुदानः प्रतिष्ठित इति समान इति स एष नेति नेत्यात्माऽगृद्धो न हि गृद्धतेऽशीर्यो न हि शीर्यतेऽसङ्गो न हि सञ्यतेऽसितो न व्यथते न रिष्यति । एतान्यष्टावा-यतनान्यष्टी लोका अष्टी देवा अष्टी पुरुषाः स यस्तान्पुरुषानिरुद्ध प्रत्युद्धात्यक्रामत्तं त्वीपनिषदं पुरुषं पृच्छामि तं चेन्मे न विवस्यसि मूर्धा ते विपतिष्यती।ते । तथं इ न मेने शाकल्यस्तस्य इ मूर्धा विपपातािष हास्य परिमोपिगोस्थीन्यपजहरन्यन्मन्यमानाः ॥

पदच्छेदः ।

कस्मिन्, नु, त्वम्, च, आत्मा, च, प्रतिष्ठितौ, स्थः, इति, प्राणः, इति, कस्मिन्, नु, प्राणः, प्रतिष्ठितः, इति, अपाने, इति, कस्मिन्, नु, अपानः, प्रतिष्ठितः, इति, कर्मिन्, नु, व्यानः, प्रतिष्ठितः, इति, व्याने, इति, कर्मिन्, नु, व्यानः, प्रतिष्ठितः, इति, व्याने, इति, व्यानः, प्रतिष्ठितः, इति, समाने, इति, सः, एषः, न, इति, न, इति, आत्मा, अगृह्यः, न, हि, गृह्यते, अशीर्यः, न, हि, शीर्यते, असङ्गः, न, हि, सव्यते, असितः, न, व्यथते, न, रिष्यति, एतानि, अष्टौ, आयतनानि, अष्टौ, लोकाः, अष्टौ, देवाः, अष्टौ, पुरुषाः, सः, यः, तान्, पुरुषान्, निरुद्धा, प्रत्युद्धा, अत्यकामन्, तम्, नु, औपनिषदम्, पुरुषम्, पुरुषाने, तम्, चेत्, मे, न, विवक्ष्यति, मूर्या, ते, विषति-व्यति, इति, तम्, ह, न, मेने, शाकल्यः, तस्य, ह, मूर्या, विपपात, अपि, ह, अस्य, परिमोषिगाः, अस्थीनि, अपजहः, अपन्यत्, मन्यमानाः ॥

झन्चयः पदार्थाः + शाकल्यः=शाकल्य ने + झाह=पृत्ता कि त्यम्=माप

> च=घोर भारमा च=घापका घारमा कस्मिन्=किस में

भन्वयः पदार्थाः प्रतिष्ठितौ≔स्थित स्थः=है जु=यह मेरा प्रश्न है इति=इस पर

+ याझवरुक्यः=याज्ञवरुक्य ने + श्लाह्=उत्तर दिषा

प्राग्रे=प्राग्य में है + पुनः≕फिर + पप्रच्छ=शाकस्य ने पूछा कि प्राग्ः=प्राग् क€िमन्=िकस में प्रतिष्ठितः=स्थित है . इति=इस पर + याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + आह=कहा कि श्रपाने=श्रपान में है इति=फिर + प्रश्नः=शाकल्य ने पृद्धा कि श्रपानः=श्रपान कस्मिन्=किस में प्रतिष्रितः=स्थित है नु=यह मेरा प्रश्न है इति=इस पर **याज्ञवल्क्यः**=याज्ञवल्क्य ने उवाच=उत्तर दिया व्याने=व्यान में + शाकल्यः=शाकल्य ने + उवाच=पृद्धा व्या**नः**=व्यान कस्मिन्=िकस में प्रतिष्ठितः=स्थित है ज्ञ=यह मेरा प्रश्न है इति=इस पर + याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य + उत्तरम्=उत्तर + ददाति=देते हैं कि उदाने=उदान में इति=इस पर

उदानः≕उदान कस्मिन्=िकस में प्रतिष्ठितः=स्थित है जु≕यह मेरा प्रश्न है इति≕इस पर याञ्चवल्क्यः=याञ्चवल्क्य ने उवाच=उत्तर दिया कि समाने=समान में यः=जो (वेद में) न इति≔नेति न इति=नेति इति≔करके + निर्दिष्टः≔कहा गया है सः=वही एषः=यह है श्चातमा=धारमा श्रगृह्यः=श्रयाद्य है हि=न्योंकि सः=वह भारमा **न**≔नहीं गृह्यते=प्रहण किया जा सक्राहै + सः≔वह श्रशीर्थः=क्षवरहित है हि=क्योंकि न शीर्यते=नहीं श्रीस किया जा सका है + सः=वह असङ्गः=सङ्गरहित है हि=क्योंकि सः≔वह न=नहीं सज्यते=संग किया जासका है

+ सः=वह श्रसितः=बन्धन रहित है हि=क्योंकि सः≔वह **न**=नहीं टयथते=पीड़ित हो सक्रा है च=ग्रौर न≐न रिष्यति=नष्ट होसक्रा है शाकल्य=हे शाकल्य ! ऋष्टो≔ग्राठ श्चायतनानि=स्थान प्रथ्वी द्यादि हैं श्रष्टौ=श्राट लोकाः=लोक अन्नि थादि हैं श्रष्टौ≕श्राठ देवाः≔देव श्रमृत श्रादि हैं श्रष्टौ=ग्राठ पुरुषाः≔पुरुष शरीर भ्रादि हैं सः≕सो यः≕जो कोई तान्=उन प्रुरुपान्=पुरुपों को निरुह्य=जानकर + च=श्रौर प्रत्युह्य=भ्रपने श्रन्तःकरखमें रखकर श्चत्यक्रामत्=मतिक्रमण करता है तम्≃उस ऋौपनिषदम् / _उपनिषत्सम्बन्धी पुरुषम् / तत्त्ववित्पुरुष को

जानादि≕जानता है पृच्छामि=मैं पृष्ठता हूं चेत्=धगर तम्≔उसको भे≕मुकसे न=न विवक्ष्यासि=कहेगा तू तो ते=तेरा मुर्घा≔मस्तक विपतिष्यति असमा में गिरजायगा **शाक**ल्यः=शाकल्य तम्≕स पुरुष को न=नहीं मेने=जानता भया + तस्मात्=इसिबये तस्य=उसका मूर्धा=मस्तक ह=सबके सामने विपपात=गिरपड़ा श्रापि ह≔श्रीर **श्र∓**य=उसकी श्रस्थोनि=हड्डियां यानी सृतक शरीर को श्रन्यत्=श्रौर कुछ मन्यमानाः=समकते हुवे परिमोषिगः=चोर श्रपजहुः≔लेकर भाग गये

ं भावार्थ । शाकरूयने फिर पृद्धा आप और आपका आत्मा यानी हृदय किस में स्थित है ? याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया प्रारा में, फिर शाकस्य ने पद्धा प्राचा किस में स्थित है ? याज्ञवल्क्यने कहा अपान में, शाकल्य ने पहा अपान किस में स्थित है ? याज्ञवल्क्यने कहा ज्यान में, फिर शाकल्यने प्रश्न किया व्यान किसमें स्थित है, इस पर याज्ञवरून्यने कहा उदान में, फिर शाकल्यने पूछा उदान किस में स्थित है ? याज्ञ-वरुक्यने कहा समान में, परन्त हे शाकरूय ! आत्मा जिसमें सब स्थित हैं भ्योर जो वेद में "नेति नेति" करके कहा गया है वही यह आतमा अप्राह्म है, क्योंकि वह प्रहरा नहीं किया जासका है, वही क्षयरहित है क्योंकि वह क्षीगा नहीं किया जासका है. वह संगरहित है क्योंकि वह संग नहीं किया जासक्ता है, वह बन्धनरहित है क्योंकि वह पीडित नहीं होसक्ता है, और न नष्ट होसक्ता है, हे शाकल्य ! सनो जो आठ स्थान प्रथ्वी आदि हैं, आठ लोक अग्नि आदि हैं. आठ देव अमृत आदि हैं, आठ पुरुष शरीर आदि हैं जो कोई उन परुषों को जानकर खीर अन्तः करगा में रख कर उत्क्रमगा करता है, यानी आरीर को त्यागता है तुम उस उपनिषदतत्त्ववित्पुरुष को जानते हो, मैं तुमसे प्रश्न करता हूं श्रागर तुम उसको मुक्त से नहीं कहोंगे, तो तुम्हारा मस्तक सभा में गिरजायगा, शाकल्य उस पुरुषको नहीं जानता भया इसिजिये उसका मस्तक सबके सामने गिरपडा, ऋौर चोरों ने उसके दाह के निमित्त उसको लेजाते हुये शरीर को देख कर क्रीर उसकी क्रीर कुछ समझ कर उस शरीर की लेकर भाग गये ॥ १६ ॥

मन्त्रः २७

श्रथ होवाच ब्राह्मणा भगवन्तो यो वः कामयते स मा पृच्छतु सर्वे वा मा पृच्छत यो वः कामयते तं वः पृच्छामि सर्वान्वा वः पृच्छामीति ते ह ब्राह्मणा न दघृषुः ॥

पदच्छेदः ।

द्याथ, ह, उवाच, ब्राह्मियाः, भगवन्तः, यः, वः, कामयते, सः, मा, पुच्छतु, सर्वे, वा, मा, पुच्छत्, यः, वः, कामयते, तम्, वः, पुच्छामि, सर्वान्, वा, वः, पुच्छामि, इति, ते, ह, ब्राह्मियाः, न, दधृषुः ॥

पदार्थाः श्चन्ययः पदार्थाः **श्चन्ययः** वः=चापलोगों में श्रथ ह=तत्पश्चात् यः=जो कोई उवाच=याज्ञवक्स्य बोले कि भगवन्तः } =हे पूज्य बाद्ययो ! ब्राह्मणाः } कामयते=चाहता हो तम्⇒डससे षः≔भापकोगों में प्रच्छामि=में प्रश्व करूं यः=जो कोई या≕या कामयते=चाहता है घ्:=धाप सः≔वह सर्वान्=सब जनों से मा≔मुक्ससे पृच्छामि≕में प्रश्न करूं पृच्छतु=प्रश्न करे इति=इस पर वा≔या ते≕उन सर्वे=सब कोई मिलकर ब्राह्मणाः=त्राह्मणों ने मा⊐मुक्ससे पृच्छुत=प्रश्न करें न=नहीं द्रभृषु:=पूछने का साहस किया + भ्रथवा⊐या

भावार्थ।

तत्परचात् याज्ञवक्क्य ने ब्राह्मियों को सम्बोधन करके कहा कि, हे पूज्य ब्राह्मियों ! आपकोगों में से जो कोई अकेजा प्रश्न करना चाहता है, वह अकेजा प्रश्न करे, या आप सबकोग मिलकर सुक्त से प्रश्न करें या आपकोगों में से जो अकेजा चाहता है उस अकेजे से मैं प्रश्न करूं, या आप सब कोगों से मैं प्रश्न करूं, मैं हर तहर से प्रश्नोत्तर करने को तैयार हूं, इसमें उन ब्राह्मियों में से उत्तर देने का किसी को साहस नहीं हुआ। । २७॥

मन्त्रः २७-१

यथा द्वक्षो वनस्पतिस्तथैव एुरुषोमृषा । तस्य लोमानि पर्णानि त्वगस्योत्पाटिका बहिः ॥

पदच्छेदः ।

यथा, बृक्षः, वनस्पतिः, तथा, एव, पुरुषः, श्रमृषा, तस्य, खोमानि, पर्गानि, त्वकु, श्रम्य, उत्पाटिका, बहिः ॥

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

+ याश्चल्क्यः=याश्चलक्य ने

+ पप्रचळ=कहा

यथा=ैसे

बस∓पतिभ=वनका पति युक्षः=वृक्ष है

तथैव=तैसे ही

पुरुषः≔सब प्राणियों में पुरुष

श्रमृपा=इसमें सन्देह नहीं है तथा एव=वैसही तस्य=उसपरूप के

लोमानि=रोवें पर्गानि=टक्षके पत्तों के तुल्य हैं

च≔धौर

श्चस्य=उस पुरुपका

इति=जैसे वहि:=बाह्य त्वक=चर्म है

उत्पाटिका=रक्ष का त्वचा है

भावार्थ ।

याज्ञदल्क्य ने कहा कि, हे ब्राह्मणों ! जैसे वन का पति ब्रक्ष है. वैसेहो सब प्रारिएयों का पति पुरुप है, इसमें सन्देह नहीं कि उस पुरुष के रोवें बुक्ष के पत्तों के तुस्य हैं, ऋोर पुरुष का बाह्यचर्म बुक्ष के त्वचा के समान है ॥ २७-१ ॥

मन्त्रः २७-२

त्वच एवास्य रुधिरं प्रस्यन्दि त्वच उत्पटः । तस्मात्तदातृएगा-त्मीति रसो द्यादिवाहतात ॥

पदच्छेदः।

त्वचः, एव, श्रस्य, रुधिरम् , प्रस्यन्दि, त्वचः, उत्पटः, बस्मात् , तदा, आतृरगात्, प्रेति, रसः, वृक्षात्, इव, आहतात् ॥

श्चन्यः

पदार्थाः स्रन्वयः

पदार्थाः

पपः पदायाः
श्रास्य=उसः पुरुष के
त्वचः=चर्मः सं
रुधिरम्=रुषिर
प्रस्यन्दि=निकलता है
प्व=वैसेही
त्वचः=वृक्षकी त्वचा से
उत्पटः=गोंद निकलता ं

इव=जैसे

ग्रुक्षात्=ग्रक्ष से रसः=रस निकत्तता है तस्मात्=उसी प्रकार

म्राहतात्=कटे हुये

यात्मात्=ज्या नकार ब्रातृएग्॥त्=कटे हुये पुरुष से तत्=वाद खून

तत्=व ६ लून श्रेति≕निकलता है

भावार्थ ।

जैंसे पुरुष के चर्म से रुधिर निकलता है वैसेही वृक्ष के त्वचा से गोंद निकलता है झौर जैंसे कटे हुये वृक्ष से रस निकलता है वैसेही कटे हुयं पुरुष से रक्त निकलता है ॥ २७-२॥

मन्त्रः २७-३

मार्थक्तान्यस्य शकराणि किनाटथ्ठं स्नाव तत्स्थरम् । श्रस्थी-न्यन्तरतो दारूणि मज्जा मज्जोपमा कृता ॥

पदच्छेदः ।

मांसानि, श्चस्य, शकराग्ति, किनाटम्, स्नाव, तत्, स्थिरम्, श्चस्थीनि, श्चन्तरतः, दारुग्ति, मज्जा, मज्जोपमा, कृता ॥

ग्रन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

इव=जैसे श्रास्य=इस पुरुप के मांसानि=मांस शकराणि=तह दरतह हैं तत्=वैसही किनाटम्=टक्षकी खाब स्नाय=पट्टकी तरह

(स्थरम्=स्थित है

इव=वैसे श्रम्थीनि } =पुरुप के सन्तर हाड़ हैं श्रन्तरतः

तथाएव=वैसेही
दाकाण=वृक्षके भीतर लकड़ी है
मजा=पुरुष का मजा
मजीएमा=मजा के तुक्य
छता=मानी गई है

भावार्थ ।

जैसे पुरुष के मांस तह दरतह (परतदार) हैं वैसेही वृक्षकी छाल पहें की तरह तह दरतह (परतदार) स्थित हैं और जैसे पुरुष के अन्तर हड़ी स्थित है वैसेही वृक्ष के भीतर लकड़ी स्थित है जैसे पुरुष के भीतर शरीर में मजा होताहै वैसेही वृक्ष में मजा होताहै ॥ २७-३॥

मन्त्रः २७-४

यदृष्टक्षो द्वन्यो रोहाति मृलान्नवतरः पुनः। मर्त्यः स्विन्मृत्युना द्वन्यः कस्मान्मूलात्मरोहति ॥

पव्च्छेदः।

यत्, दृक्षः, दृक्षाः, रोहति, मूलात्, नवतरः, पुनः, मर्त्यः, स्वित्, मृत्युना, दृक्षाः, कस्मात्, मूलात्, प्ररोहति ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

दस्=जो चुक्ष्णः=काटा हुद्या चुक्षः=दृक्ष है + तस्मात्=डसके मुलात्=जद से नवतरः=नवीन दृक्ष रोहति=डस्पन होता है ्वयः पद्। मृत्युना≔स्यु करके वृक्ष्युः≔काटा हुषा मत्येः=मनुष्य कस्मात्=किस मृतात्=मृत्र से प्ररोहति=व्यक्ष होता है स्वित्=यह मेरा प्रस्त है

भावार्थ।

हे ब्राझरारो ! जो कटा हुआ। वृक्ष है उसकी जड़ से नवीन वृक्ष स्त्पन्न होते हैं यह आपको विज्ञात है तब बताइये मृत्यु करके कटा हुआ। मनुष्य किस मूल यानी जड़ से उत्पन्न होता है यह मेरा प्रश्न है इसका स्तर आप लोग दें ।। २७-४ ।।

मन्त्रः २७-५

रेतस इति मा वोचत जीवतस्तत्त्रजायते । धानारुह इव वै दृश्लो-ज्ञसा प्रेत्य संभवः ॥

पदच्छेदः ।

रेतसः, इति, मा, वोचत्, जीवतः, तत्, प्रजायते, धानारुहः, इव, वै, वृक्षः, अञ्जसा, प्रेत्य, संभवः ॥

ध्यन्वयः पदार्थाः श्रन्ध्यः पदार्थाः रेतसः≔मरे हुये पुरुष के वार्यसे च≔ग्रीर + रोहति=पुरुष प्रादुर्भृत होता है धानारुहः≔बीज से उत्पन्न हुम्रा इति≕ऐसा वृक्षः इव=वृक्ष मा≔नहीं षोचत≔कह सक्ने हैं श्रञ्जसा=शीव हि≕क्योंकि प्रेत्य=नष्ट होकर तत्=वह वीर्य व=भी जीवतः=जीते हुये पुरुप से धानातः=बीज से मजायते=उत्पन्न होता है मरे से नहीं संभवः=उत्पन्न हो भाता है

भावार्थ ।

अपन वृक्ष और पुरुष की समानता दिखलाकर याज्ञवल्क्य प्रश्न करते हैं हे ब्राह्मणो ! जब जड़ छोड़ कर वृक्ष काटा जाता है तब पुनः मूलसे और नवीन वृक्ष उत्पन्न होता है यह आपलोग प्रत्यक्ष देखते हैं परन्तु जब मरण्यधर्मी पुरुष को मृत्यु मार लेता है तब फिर वह पुरुष किस मूल से उत्पन्न होता है यदि आप कहें कि वीर्य से मनुष्य उत्पन्न होता है तो यह बात ठीक नहीं है क्योंकि वीर्य तो जिंदा पुरुष में रहता है तो यह बात ठीक नहीं है क्योंकि वीर्य तो जिंदा पुरुष में रहता है तो यह बात ठीक नहीं रहता है परन्तु कटे वृक्ष की जड़ तो बनी रहता है अथवा उसका वीर्य बना रहता है उससे दूसरा वृक्ष उत्पन्न हो आता है पर मनुष्य के मरजाने पर उसका कोई मूल कारण नहीं दीखता है जिससे उसकी उत्पत्ति कही जाय इसकी उत्पत्ति का वृक्षवत् कोई कारणा होना चाहिये॥ २७-४॥

मन्त्रः २७-६

यत्समूलमाद्रहेर्प्रद्वेक्षं न पुनराभऋत् । मर्त्यः स्थिन्मृत्युना द्वक्रणः कस्मान्मूलात्त्रपरोहति ॥

परच्छेदः ।

यत्, समूलम्, श्रावृहेयुः, वृक्ष्म्, न, पुनः, श्राप्तवन्, मर्त्यः, स्वित्, मृत्युना, वृक्षाः, कस्मात्, मूलात्, प्रगेहति ॥

अन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

यत्=तो समूलम्=जड़ सहित वृक्षम्=बृक्षको स्नावृहेयुः≔नष्ट करहें तो पुनः=फिर न=नहीं वह

न=नहां वह श्राभवेत्=उत्पन्न होवे + परम्=परन्तु ष्टत्युना बुक्सः≔म्रत्यु करके छिन्न किया हुत्रा

> मर्त्यः=पुरुष कस्तात्=किस मृतात्=मृत से प्रशेहति=उत्पन्न होता है स्विन्=यह मेरा प्रश्न है

भावार्थ ।

याज्ञबल्क्य कहते हैं कि, हे ब्राग्नगो ! जो युक्ष जड़ सहित नष्ट कर दिया जाता है फिर उससे नबीन बृक्ष उत्पन्न नहीं होता है तब श्राप बताइये यह मृत्यु करके छित्र हुआ पुरुप किस मूल से उत्पन्न होता है ॥ २७–६॥

मन्त्रः २७-७

जात एव न जायते को न्वेनं जनयेत् पुनः । विज्ञानमानन्दं व्रक्ष रातिर्दातुः परायणं तिष्ठमानस्य तिद्वेद इति ॥

इति नवमं ब्राह्मणम् ॥ ६ ॥ इति श्रीबृहदारएयकोपनिपदि तृतीयोध्यायः ॥ ३ ॥ पदच्छेदः।

जातः, एव, न. जायते, कः, नु, एनम्, जनयेत्, पुनः, विज्ञानम्, श्रानन्दम्, त्रह्म, रातिः, दातुः, परायगाम्, तिष्ठमानस्य, तद्विदः, इति ॥ स्र

न्वयः	पदार्थाः	अ न्वयः	पदार्थाः
जातः≕जो ३	उत्पन्न हुन्ना है	चिक्रानम् ≛विद्याम	स्वरूप
	फिर जड़ काटे	श्चानन्दम्=श्चानन्द	स्बरूप
जाने	वाद	·	
एव=िनःस	• -	य:=जो	
न ≕नहीं		यः-ःः रातिः=धन के	
जायतं≕उत्प	च होता है		
न =त य	यह मेरा प्रश्न	दातुः≔देनेवाबे	हें यानी
है वि		यज्ञकर	र्ग हैं
पनम=इस	मृतक पुरुष को	यः≕जो	
पुनः=फिर		तिष्ठमानस्य≔कान में	दढ़ हैं
कः≔कौन		च=श्रीर	
رء	उत्पन्न करेगाज व केसी झाह्य या ने	त्रद्धिदः≕जो ब्रह	प्रके जानने
ं किसी म उत्तर नह तब याज्ञः स्वयं निष् उत्तर दिः	केसी बाह्य या ने	वाले हैं	उनका
	उत्तर नहा।दया	ब्रह्म=ब्रह्म	
	। यं निस्न प्रकार	परायणम्=परमग	ति है
	उत्तर दिया	इति=ऐसा उ	

भाषार्थ ।

याज्ञवरुक्य फिर पूळते हैं जो दृक्ष जड़से काटागया है वह फिर नहीं उत्पन्न होता है तब मृतक पुरुष कैसे उत्पन्न होगा यानी उसकी उत्पत्तिका कारगा कौन हो सका है. जब किसी ब्राह्मण ने इसका उत्तर नहीं दिया तब याज्ञवरुक्यने स्वतः कहा कि मरे हुये पुरुष की उत्पत्ति का कारणा ज्ञानश्वरूप प्रानन्दस्वरूप ब्रह्म है वह यज्ञ करने वालों का और ब्रह्मज्ञानियों का परम आध्यय है। । २७-७।

इति नवमं ब्राह्मशाम् ॥ ६ ॥

इति श्रीबृहदारगयकोपनिषदि भाषानुवादे तृतीयोऽध्यायः समाप्तः ॥ ३ ॥

श्रीगगोशाय नमः ॥

ऋथ चतुर्थोध्यायः।

श्रथ प्रथमं ब्राह्मग्रम्।

मन्त्रः १

जनको ह वैदेह त्रासांचक्रेऽथ ह याज्ञवल्क्य स्रावत्राज । तथ्ठ होवाच याज्ञवल्क्य किमर्थमचारीः पश्निच्छन्नएवन्तानिति । उभय-मेव सम्राडिति होवाच ॥

पदच्छेदः ।

जनकः, ह, वैदेहः, श्रासांचके, श्रथ, ह, याज्ञवल्क्यः, श्रावन्नाज, तम्, ह, उवाच, याज्ञवल्क्य, किमर्थम्, श्रचारीः, पश्न्, इच्छन्, श्रगवन्तान्, इति, जभयम्, एव, सम्राट्, इति, ह, उवाच ॥ श्रन्वयः पदार्थाः श्रन्वयः पदार्थाः

यदा=जब ह=प्रसिद्ध वैदेहः≔विदेहाधिपति जनकः=राजा जनक श्रासांचके=गदीपर बैटे थे श्रथ≔तब

ह=प्रसिद्ध थाञ्चवरुक्यः=विद्वान् याज्ञवरुक्य श्रावझाज=चाते भये + जनकः=राजा जनक ने तम्=उन याज्ञवरुक्य से

ह=स्पष्ट उवाच=प्रश्न किया कि + भगवन्तः=हे पूज्य ! म्राप किमर्थम्≕किस प्रर्थ चयः पदार्थाः श्रचारीः=त्राये हैं पग्र्न्=पशुत्रों की + त्रथवा=त्रथवा श्रग्वन्तान्=सृक्ष्म उपदेश देने के

द्यर्थ इच्छुन्≃इच्छा करते हुये + अचारीः≖ग्राये हैं ह=तव

याञ्चवहक्यः=याज्ञवहक्यः ने उवाच=कहा कि सम्राट्=हे जनकः! उभयम्=दोनों के लिये एच=निश्चयः करके + श्रगमम्=श्रायाः हुं

भावार्थ ।

जब प्रसिद्ध विद्वान विदेहपति राजा जनक गद्दी पर बैठे थे तब

प्रसिद्ध सर्व पूज्य विद्वान् याज्ञवल्क्य ध्याते भये, उनको देखकर ख्योर उनका विधिवत् पूजन करके उनको आसन पर बैठाला, ख्रोर प्रसन्न मुख से बोले कि हे महाराज, याज्ञवल्क्य ! आप किस निमित्त इस समय मेरे पास आये हैं, क्या पशु धन की इच्छा करके छाये हैं, या अत्यन्त सूक्ष्म गुह्य वस्तु के विचारार्थ आये हैं, अर्थात् जो कुछ अन्य आचार्यों ने मुक्तको उपरेश किया है वह यथार्थ किया है छोर मेंने उसको यथार्थ समका है इसके जानने के लिये आप पधार हैं, राजा के इस वचन को सुनकर याज्ञवल्क्य ने कहा मैं दोनों के आर्थ आया हूं। १॥ अर्थात् पशुमहराार्थ छोर तस्वनिर्ण्यार्थ दोनों के लिये आया हूं। १॥

मन्त्रः २

यसे कश्चिदब्रवीत्त्रच्छृग्णवामेत्यव्रवीनमे जित्वा शैलिनिर्वाग्वे ब्रह्मेति यथा मातृमान्पितृमानाचार्यवान्व्यात्तथा तच्छेलिनिर्व्ववीन्द्वाग्वे ब्रह्मेत्यवद्तो हि किछं स्यादित्यव्रवीत्तु ते तस्यायतनं प्रतिष्ठां न मेव्रवीदित्येकपाद्वा एतत्सम्राहिति स वे नो ब्र्हि याज्ञवल्क्य । वागेवायतनमाकाशः प्रतिष्ठा प्रक्षेत्येनदुपासीत । का प्रज्ञता याज्ञवल्क्य । वागेव सम्राहिति होवाच । वाचा वे सम्राद् वन्तुः प्रज्ञायत ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोथर्वाङ्गिरस इतिहासः पुराणं विद्या उपनिषदः रलोकाः स्त्राएयनुच्याख्यानानि व्याख्यानानीष्टछं हुतमाशितं पायितमयं च लोकः परश्च लोकः सर्वाणि च भूतानि वाचैव सम्राद् प्रज्ञायन्ते वाग्वे सम्राद् परमं ब्रह्म नैनं वाग्जहाति सर्वाण्येन भूतान्यभिक्षरन्ति देवो भूत्या देवानप्येति य एवं विद्वानेतदुपास्ते । हस्त्यृपभछ सहस्रं ददामीति होवाच जनको वैदेहः । स होवाच याज्ञवल्क्यः पिता मेमन्यत नाननुशिष्य हरेतेति ।।

पदच्छेदः ।

यत्, ते, कश्चित्, अप्रवीत्, तत्, शृः एवाम, इति, अप्रवीत्, मे, जित्वा, शैलिनिः, वाक्, वे, ब्रह्म, इति, यथा, मानुमार्, पिनुमान्,

आचार्यवार, श्रूयात्, तथा, तत्, शेक्तिनः, अववीत्, वाक्, वे, अक्ष, इति, अवद्तः, हि, किम्, स्यात्, इति, अववीत्, तु, ते, तस्य, आय-तनम्, प्रतिष्ठाम्, न, मे, अववीत्, इति, एकपाद्, वा, एतत्, सम्राट्, इति, सः, वे, नः, ब्र्हि, याज्ञवत्क्य, वाक्, एव, आयतनम्, आकाराः, प्रतिष्ठा, प्रज्ञा, इति, एनत्, उपास्रीत्, का, प्रज्ञता, याज्ञवत्क्य, वाक्, एव, सम्राट्, इति, ह, उवाच, वाचा, वे, सम्राट्, वन्षुः, प्रज्ञायते, ऋग्वेदः, यजुर्वेदः, सामवेदः, अथवांिक्षरसः, इतिहासः, पुरास्तम्, विद्या, उपान्पन्, स्त्रास्ति, अयन्वेदः, रक्षोकाः, स्त्रास्ति, अवन्याख्यानानि, व्याख्यानानि, इष्टम्, हतम्, आशितम्, पायितम्, अयम्, च, कोकः, परः, च, कोकः, सर्वास्ति, च, भूतानि, वाचा, एव, सम्राट्, प्रज्ञायन्ते, वाक्, वे, सम्राट्, प्रमम्, ब्रह्म, न, एनम्, वाक्, जहाति, सर्वास्ति, एनम्, भूतानि, आभिक्षरन्ति, देवः, भूत्वा, देवाच्, अपि, एति, यः, एवम्, विद्वान्, एतत्, उपास्ते, हस्त्युषभम्, सहस्रम्, ददामि, इति, ह, उवाच, जनकः, वेदेहः, सः, ह, उवाच, याज्ञवल्क्यः, पिता, मे, अमन्यत, न, अननु-शिष्य, हरेत, इति ॥

पदार्थाः पदार्थाः श्चन्वयः श्चन्वयः श्रव्रवीत्=कहा है कि + जतक≔हे जनक ! कशिन्त्रत्=जिस किसी ने वाक्≔वाणी ते=तुम्हारे लिये बै=ही यत्≕जो कुछ ब्रह्म=बद्ध है श्रव्रवीत्=कहा है इति=इस पर तत्=उसको + याझवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने श्युग्वाम=में सुनना चाहता हूं + उधाच=कहा जनकः≕जनक ने यथा≕जैसे उवाच=उत्तर दिया कि मात्मान् } = { माता, पिता श्रौर पितृमान् } = { गुरु करके सुशि-श्राचायवान् } शै।लिनिः≔शैकिनिका पुत्र जित्या≕जित्वा ने मे⊂मुभ स + शिष्याय≃श्रपने शिष्य के लिये

ब्यात्=उपदेश करता है तथा=वैसेही शोलिति:=शैविनि ने इति≕ऐसा अव्वीत्=श्रापसे कहा है कि वाक=वाणीही ब्रह्म=ब्रह्म है हि=क्योंकि श्रवद्तः≔गूंगे पुरुष से किम्≕क्या अर्थ स्यात्=निकल सका है तु=परन्तु तस्य=बह्य के **ञ्चा**यत**नम्**=श्राश्रय + च=श्रौर प्रतिष्टाम्=प्रतिष्टा को तु=भी श्रव्रवीत्=उसने कहा है + जनकः=जनक ने +श्चाह=उत्तर दिया मे=मुक्तसे + सः=उसने न=नहीं अव्रवीत्=कहा है इति=ऐसा + श्रुत्वा=सुन कर + याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + आह=कहा कि इति=तब + सम्राट्ट=हे सम्राट् ! वै=निस्संदेह पतत्=यह उपदेश

एकपात्=एक चरखवाला हे + तस्मात्=इस लिये तत्त्याज्यम्=वह त्याज्य है हि=च्यांकि

एतत्) उपासनम् (यह एक चरण एकम् (की उपासना है चरणम्)

इति=इस पर

+ जनकः=जनक ने

+ उवाच=कहा

इति=यदि ऐसा है तो याञ्चवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य!

> सः=वह श्राप नः=मेरे लिये

मा-मराखप बृहि=श्रायतन श्रीर

प्रतिष्ठाको कहें

+ याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ श्राह=कहा कि

वाक्≔वाखी

एच=निश्चय करके

श्रायतनम्=श्रीर है

+ च=श्रौर श्राकाशः=परमात्मा

प्रतिष्ठा≔वायी का बाश्रय है

इति=इस प्रकार

प्रज्ञा≔जाना हुन्ना

पनत्=उस बहा की उपासीत=उपासना करे

+ जनकः≕जनक ने

+ पप्रच्छ=कहा कि

याज्ञचल्क्य=हे याज्ञवल्क्य !

पतस्य≔इसका प्रज्ञता=शास्त्र का=कीन है + याञ्चवत्क्यः=याज्ञवत्क्य ने + उवाच ह=जगब दिया कि समार=हे जनक ! वाक्=वाणी एव=िश्चय करके **प्रज्ञता**=इसका शास्त्र है हि=वयोंकि सम्राट्ट=हे राजन् ! वन्धुः=सब सम्बन्धी वै=िनस्संदेह वाचा=वाणी करके ही प्रज्ञायते=जाने जाते हैं + च=ग्रौर **ऋ**ग्वेदः=ऋग्वेद यजुर्वेदः=यजुर्वेद सामवेदः=सामवेद श्रथवर्षि रसः=ग्रथर्वण्येद इतिहासः=इतिहास पुरागम्=पुराग चिद्याः≔पशुविद्या वृक्षविद्या उपनिपदः=ब्रह्मविद्या श्लोकाः=मन्त्र स्त्राशा=सृत्र श्रोर श्रमुब्याः (=उनके भाष्य ख्यानानि (व्याख्यानानि=छःप्रकार के व्याख्यान इष्टम्=यज्ञसम्बन्धी धर्म हुतम्=होमसम्बन्धी धर्भ आशितम्=अन्नसम्बन्धी दान

पायितम्=पान करने बोग्य जलदान श्चयम्=यह लोकः=बोक च=धौर परः=पर लोकः=लोक + ख=ग्रीर सर्वाणि च=संपूर्ण भूतानि=प्राची सम्राट्र≕हे जनक ! वाचा एव=वाणी करके ही प्रज्ञायन्ते≕जाने जाते हैं सम्राट्ट=हे जनक ! वाक्=वाणी वै=ही परमम्=श्रेष्ठ ब्रह्म=त्रहा है +यथोक्क- } ुजो जपर कहे हुये ब्रह्मवित् } प्रकारब्रह्मवेत्ता है प्तम्=उसको वाक्=वाक्शास न=नहीं जहाति≕यागता है च=श्रौर एनम्=उस ब्रह्मवेत्ता को सर्वाणि=सर भूतानि=प्राची श्राभिक्षरन्ति=रक्षा करते हैं यः=जो कोई एवम्=इस प्रकार एतत्=इस ब्रह्म को

विद्वान्=जानता हुआ उपासते⇒उसकी उपासना करता है सः≔वड देवः≕देवता भूत्वा=होकर देवान श्रापि=शरीर पात के बाद देवताश्रों कोही पति=प्राप्त होता है इति=ऐसा + श्रुत्वा=सन कर वैदेह:=विदेहाधिपति जनकः⇒राजा जनक उवाच ह=बोले कि याज्ञचल्क्य≔हे याज्ञवल्क्य । हरत्यूषभम्=हाथी के ऐसे सांड सहित

सहस्रम्=एक इजार गौथों को द्दामि=विद्या की दक्षिणा में मैं अर्पण करता हूं इति=इसके जवाब में

याञ्चव्दक्यः=याञ्चवहक्य महाराजने ह=स्पष्ट

> उवाच=क्हा कि सम्राट्र=हे राजन् ! मे=भेरे पिता≕पिता

श्रमन्यत=उपदेश कर गये हैं कि

श्राच्य को भर्ती-श्रान नुशिष्य= श्रीर कृतार्थ किये विना न हरेत≃दक्षिया न केना चाहिये

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि हे जनक ! जिस किसी ने तुम्हारे िक ये उपदेश किया है उसको मैं सुनना चाहता हूं, इस पर जनक महाराज ने जवाब दिया कि शिलिन ऋषि के पुत्र जित्वा ने सुमस्से कहा है कि वास्मीही ब्रह्म है, इस पर याज्ञवल्क्य ने कहा कि जित्वा ऋषि ने ठीक कहा है, जैसे माता पिता गुरू करके सुशिक्षित पुरूप अपने शिष्य को उपदेश करता है वैसेही जित्वा ने आपसे कहा है, निस्संदेह वास्मी ब्रह्म है, क्योंकि विना वास्मी के पुरूप गूंगा कहलाता है उससे लोगों का क्या आर्थ निकल सक्ता है परन्तु आप यह तो वताइये कि जित्वाने ब्रह्मके आश्रय और प्रतिष्ठा को भी बताया है, जनक महाराज ने उत्तर दिया कि इसका उपदेश तो सुमस्से नहीं किया है, तव याज्ञ-वल्क्य ने कहा है सम्लाट ! यह उपदेश एक चरसा के ब्रह्मका है, इस

क्षिये यह त्यागने योग्य है क्योंकि एक चरण की उपासना निष्फल है. यह सुनकर जनक ने कहा कि यदि यह ऐसा है तो आप कृपा करके बताइये कि वागाी की आयतन और प्रतिष्ठा क्या है, इसपर याज्ञवल्क्य ने कहा हे राजन् ! वाणीही वाणी का आश्रय है और परमात्मा वाणी की प्रतिष्ठा है, इसप्रकार जानता हुआ वाण्णीरूपी ब्रह्मकी उपासना करे. जनक राजाने कहा, हे याज्ञवल्क्य ! वाग्गी जानने के लिये कीन शास्त्र है, याज्ञवह्नय महाराजने उत्तर दियाः हे जनक ! वास्रीही इसका शास्त्र है, क्योंकि हे राजन् ! वागाी करकेही बंधु, मित्र, अपने पराये, सव जाने जाते हैं, वागाी करकेही भग्नेद, यजुर्वेद, सामवेद, श्रथर्वगा-वेद, इतिहास, पुगरा, पशुविद्या, वृक्षविद्या, भूगोकविद्या, श्रध्यातम-विद्या. रलोकवद्ध काव्य, श्रातिसंक्षिप्त सारवाले सूत्र त्यादि सब जाने जाते हैं, स्रोर विविवयागसम्बन्धी धर्म, स्त्रज्ञदान धर्म, पृथ्वीक्षोक, सूर्यलोक जो विद्यमान हैं, श्रौर उन लोकों के श्रन्दर श्राकाशादि महा-भूत, ऋौर उन महाभूतों में जो प्राणी श्रादि सृष्टि स्थित है, हे राजन ! सव वाग्गी करकेही जानेजाते हैं, हे सम्राट्! वाग्गीही परमन्नह्या है, जो कोई उपासक इसप्रकार जानते हुये वास्मीरूपी शास्त्र का ध्यान करता है, उसको वाक्शास्त्र नहीं त्यागता है, उस उपासक की सब प्रास्ती रक्षा करते हैं. आर वह उपासक अपूर्ववस्तुओं को पाता है, और फिर देवता होकर शरीर त्यागने के बाद देवरूप को प्राप्त होता है, ऐसा सुनकर विदेहपति राजा जनक बोले, हे याज्ञबल्क्य, महाराज ! हाथीके समान एक सांड सहित हजार गौत्रों को विद्या की दक्षिणा में अर्पण करताहूं, इसके उत्तर में याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजन ! मेरे पिता का उपदेश है कि शिष्यको भलीप्रकार बोध कराये और कृतार्थ किये विना दक्षिगान लेना चाहिये॥ २॥

मन्त्रः ३

यदेव ते कश्चिदव्रवीत्तच्छुणवामेत्यब्रवीन्म उदङ्कः शौल्बायनः

पाणो वै ब्रह्मेति यथा मातृमान थितृमानाचार्यवान्यूयात्तथा तच्छील्वायनोत्रत्रीत् पाणो वै ब्रह्मेत्यपाणतो हि किछ स्यादित्यव्रवीतु
ते तस्यायतनं प्रतिष्ठां न मेब्रश्नीदित्येकराद्वा एतत्सद्राहिति स वै
नो बूहि याज्ञवल्क्य पाण एवायतनमाकाशः प्रतिष्ठा भियमित्येतदुपासीत का मियता याज्ञवल्क्य पाण एव सम्राहिति होवाच पाणस्य
वै सम्राद् कामायायाज्यं याजयत्यप्रतिगृह्णस्य प्रतिगृह्णात्यिष
तत्र वत्राग्रः भवति यां दिशमेति प्राणस्यैव सम्राद्कामाय पाणो वै
सम्राद् परमं ब्रह्म नैनं पाणो जहाति सर्वाप्येनं भूतान्यभिक्षरन्ति
देवो देवानप्येति य एवं विद्वानेतदुपास्ते हस्त्यृषभछ सहस्रं ददामीति होवाच जनको वैदेहः स होवाच याज्ञवल्क्यः पिता मेमन्यत
नाननुशिष्य हरेतेति ॥

पदच्छेदः ।

यत्, एव, ते, कश्चित्, अन्नवीत्, तत्, श्र्यावाम, इति, अन्नवीत्, मे, उदङ्कः, शौल्वायनः, प्राग्गः, वै, न्रह्म, इति, यथा, मानृमान्, पितृ-मान्, आचार्यवान्, न्रूयात्, तथा, तत्, शौल्वायनः, अन्नवीत्, प्राग्गः, वे, न्रह्म, इति, अन्नवीत्, प्राग्गः, वे, न्रह्म, इति, अन्नवीत्, प्राग्गः, वे, तस्य, आयतनम्, प्रतिष्ठाम्, न, मे, अन्नवीत्, इति, एकपात्, वे, एतत्, सम्नाट्, इति, सः, वे, नः, न्रूहि, याज्ञवल्क्य, प्राग्गः, एव, आयतनम्, आकाशः, प्रतिष्ठा, प्रियम्, इति, एतत्, उपासीत, का, प्रियता, याज्ञवल्क्य, प्राग्गः, एव, सम्नाट्, इति, ह, उवाच, प्राग्गस्य, वे, सम्नाट्, कामाय, अयाज्यम्, याज्ञयति, अप्रतिगृह्मस्य, प्रतिगृह्णाति, अपि, तत्र, वधाशङ्कम्, भवति, याम्, दिशम्, एति, प्राग्गस्य, एव, सम्नाट्कामाय, प्राग्गः, वे, सम्नाट्, परमम्, न्रह्म, न, एनम्, प्राग्गः, जहाति, सर्वागि, एनम्, भूतानि, अभिक्षरन्ति, देवः, देवान्, अपि, परित, यः, एवम्, विद्वान्, एतत्, उपास्ते, हस्त्यूषभम्, सहस्तम्, ददामि,

इति, ह, उवाच, जनकः, वेदेहः, सः, ह, उवाच, याज्ञवत्क्यः, पिता, मे, अमन्यत, न, अननुशिष्य, हरेत, इति ॥

अन्वयः पदार्थाः । अन्वयः सम्राट्=हेराजराजेश्वरजनक!

न्वयः पदार्थाः यथा=जैसे

+ भवान्=भाप

+श्रोने काचा- । अनेक भाचायों के पितृमान् यसेवी | सेवाकरनेवालेहुयहैं स्नाचार्यवान् |

> + ग्रतः≔इसितये यत्=जो कुछ कष्टिचत=किसी श्राच

कश्चित्=िकसी भाचार्य ने ते=आपके लिये अव्रवीत्=उपदेश किया है

तत्=उसको श्रहम्=में

श्टुणवाम≕युनना चाहता हूं इति≕ऐसा

+ पृच्छामि=मेरा प्रश्न है + सम्राट=जनक ने

+ आह्≕जवाब दिया कि

+ याञ्चवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य !

शौल्बायनः=शुल्बका पुत्र उदङ्कः=उदङ्क् न

मे≔मुक्तसे अन्नवीत्≕कहा है कि

अथ्रवात्=कहा हाक वै=निश्चय करके

> प्राणः=प्राण वै=ही

> > ब्रह्म=ब्रह्म है इति=इसपर

+ याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ आह≔कहा कि

पातमान है ...

मातृमान् पितृमान् ज्ञाचार्यवान

> + शिष्याय=भ्रपने शिष्य से वृयात्=कहे

तथा=तैसेही

शौल्वायनः=शुल्बके पुत्र उदद्वने तत्=उस ब्रह्म को स्रव्रवीत्=त्रापसे कहा है कि

ात््=श्रापस कहा वै≕निस्संदेह

प्रागः=माग्

ब्रह्म=बद्ध है हि=क्योंकि

अप्राणतः=प्राणरहित पुरुष से

किम्=क्या लाभ स्यात्=होसक्रा है

स्यात्=हासका ह + याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ पत्रच्छ=फिर पूछा कि

तु=क्या सम्बद्धाः

तस्य=उस ब्रह्म के श्रायतनम्=माश्रय भौर

प्रतिष्ठाम्=प्रतिष्ठा को भी श्रव्यवीत्=उदङ्ग ने कहा है

+ सम्राट्≕राजा ने

+ श्राह≔कहा कि मे=मुक्तसे

म=मुक्तस न=नहीं

श्रव्रवीत्=कहा है इति=इसपर + याञ्चलक्यः=याज्ञवल्क्य + आह=बोले कि सम्राट्ट=हे जनक ! प्तत्=यह प्राणात्मक बह्य की उपासना एकपात्=एक चरणवाली + अब्रवीत्≂श्रापसे कही है **इ**ति=इसपर सः≖जनकने + आह=कहा नः=इमारे लिये याञ्चवल्क्य=हे ऋषे, याज्ञवल्क्य ! बृहि=उस ब्रह्मको भ्रापही +याञ्चलक्यः=याज्ञवल्क्य ने + आह=कहा प्राणः=प्राण पव≕ही श्चायतनम्=प्राण का श्वाश्रय है प्रतिष्ठाः≔प्रतिष्ठा आकाशः=बह्य है पतत्=इस प्रायरूप प्रियम्=प्रियको इति=ऐसा मानकर उपासीत=उपासना करे + पुनः≕फिर + जनकः=जनकने + आह≕पृञ्जाकि याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! प्रियता⇒िशय

का=क्या है + याञ्चवत्क्यः=याज्ञवस्क्य ने उद्याच=जवाब दिया कि समाद≔हे राजन् ! प्राणः एव≔प्राणही द्यै=निश्चय करके + प्रियता=प्रिय है + हि=क्योंकि सम्राट्=हे सम्राद ! प्राणस्य=प्राणके ही कामाय=श्रर्थ अयाज्यम्=पतितादिकों से भी याजयति=यज्ञ कराते हैं अप्रतिगृह्यस्य=श्रपति गृह्य पुरुष से प्रतिगृह्णाति=दान जेते हैं ऋषि=धौर याम्=जिस दिशम्=दिशा में वधाशङ्कम्=चोरादि करके अपने मस्ने का भय भवति=होता है तत्र=डस दिशामें भी सम्राटकामाय=सर्कारीकाम के जिये प्राणस्य पव=श्रपने प्राण के ही श्रियत्वे=निशित्त पति≕जाते हैं + श्रतः≔इसीसे सम्राट≔हे राजन् ! प्राणः=प्राणही वै=निश्चय करके **परमम्**=परम ब्रह्म= प्रेयवस्त् है

वेदेहः=वैदह एवम्=इसप्रकार य:=जो जनकः=जबक विद्वान्=विद्वान् उघाच=बोले कि पतत्≔इस ब्रह्मकी उपास्ते=उपासना करता है + याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! हस्त्यृषभम्=सहित **एक** सांड् **एनम्**≔उसको प्रागः=प्रा**ग** हाथी के समान न=नहीं सहस्रम्=सहस्र गौद्रों को जहाति=स्यागता है ददामि=आपको देता हूं एनम्=उसकी + तदा=तब सर्वाणि=सब ह=प्रसिद्ध भूतानि=प्राणी सः=वह श्रभिक्षरन्ति=रक्षा करते हैं याञ्चलक्यः=याज्ञवल्क्य + च≕ग्रीर उवाच ह=बोले कि + सः=वह म=हमारे देवः=देवरूप पिता=पिता + भूत्वा=होकर इति=ऐसा देवान श्रापि=मरनेबाद देवताश्री श्चमन्यत=डपदेश करगये हैं कि को डी श्चन नुशिष्य≔शिष्यको बोध कराये पति=पाप्त होता है + एतत्=यह

भावार्थ ।

+ श्रुत्वा=सुनकर

न हरेत≔नहीं धन क्षेना चाहिये

याज्ञवल्क्य महाराज द्वितीय बार राजा जनक से पूछते हैं, हे सम्राट्ट ! जो कुछ आपसे किसी ने कहा है उसको में सुनना चाहता हूं, इसका उत्तर जनक महाराज देते हैं. हे याज्ञवल्क्य, महाराज ! शुल्च के पुत्र उदङ्क ने सुक्तसे कहा है कि प्रागाही ब्रह्म है, ऐसा सुन कर याज्ञवल्क्य महाराज ने कहा कि हे राजन्! आपसे उदङ्क मृिप ने वैसेही कहा है जैसे कोई पुरुष माता पिता गुरु करके सुशिक्षित होता हुआ अपने शिष्य के लिये कहता है, निस्संदेह प्रागाही ब्रह्म है, क्योंकि प्रागारहित

पुरुष से क्या लाभ होसक्ता है, याज्ञवल्क्य महाराज ने फिर पूछा कि क्या उदङ्क आचार्य ने आपको प्रामा के आयतन और प्रतिष्ठा को बताया है, इस पर राजा ने कहा कि उन्होंने मुम्मसे नहीं कहा, तब याज्ञवह्नय महाराज वोले हे राजा जनक ! ये जो प्रागातमक ब्रह्मकी उपासना है, वह केवल एक चररावाली है, इस पर जनक महाराज ने कहा कि, हे हमारे पुज्य, आचार्य ! आपही कृपा करके ब्रह्म का उपदेश दें, इस पर याज्ञवल्क्य महाराज ने कहा, प्रागाही प्रागा का श्राश्रय है, श्रीर प्रतिष्ठा ब्रह्म है, इस प्राणरूपको प्रिय मान कर इसके गुर्गो का ध्यान करे, तब जनक महाराज ने पृछा, हे याज्ञबल्क्य, महाराज ! प्रिय क्या है, याज्ञवल्क्य महाराज ने उत्तर दिया प्रागाही प्रिय है, क्यों कि प्राणा के ही अपर्थ पतित आदिकों से ही लोक यज्ञ कराते हैं, श्रीर श्राप्रतिगृह्य पुरुष से दान लेते हैं, श्रीर जिस दिशा में चौरादिकों करके मारे जाने का भय होता है उस दिशा में भी सर्कारी काम के लिये प्राणा के ही निमित्त लोग जाते हैं इसी कारणा है राजन ! प्रासाही निश्चय करके परमप्रिय वस्त है, हे राजा जनक ! इस प्रकार जानता हुआ जो विद्वान् प्रागात्मक ब्रह्मकी उपासना करता है उसको प्रागा नहीं त्यागता है, यानी पूर्ण आयुतक जीता रहता है, और उसकी सब प्रांगी रक्षा करते हैं, स्त्रीर वह देवरूप होकर मरने के पीछे देवताओं को ही प्राप्त होता है, यह सुनकर वैदेह राजा जनक बोले, हे याज्ञवल्क्य, महाराज ! सहस्र गौध्रों को, सहित एक सांड हाथी के समान में आपको ब्रह्मविद्या की दक्षिगा में देता हूं, तब वह प्रसिद्ध याज्ञवल्क्य महाराज बोले कि हे राजा जनक ! हमारे पिता का उपदेश है कि शिष्य से विना बोध कराये हये धन न लेना चाहिये।। ३।।

मन्त्रः ४

यदेव ते कश्चिदब्रवीत्तच्छ्रणवामेत्यब्रवीन्मे बर्कुर्वार्ष्णश्चक्षुर्वै

ब्रह्मोति यथा मातृमान् पितृमानाचार्यवान् ब्रूयात्तथा तद्वाष्णों ब्रवी-च्रिष्ठुं ब्रह्मेत्यपश्यतो हि किछं स्यादित्यब्रवीचु ते तस्यायतनं मतिष्ठां न मेब्रवीदित्येकपादा एतत्सम्राहिति स व नो ब्रह्मे याक-वल्क्य च्रुप्तेवायतनमाकाशः प्रतिष्ठा सत्यमित्येनदुपासीत का सत्यता याज्ञवल्क्य च्रुप्तेव सम्राहिति होवाच च्रुपा व सम्राट् पश्यन्तमाहुरद्राभीतित स प्राहाद्राक्षमिति तत्सत्यं भवति च्रुप्तं सम्राट् परमं ब्रह्म नैनं च्रुप्तिहाति सर्वाष्येनं भूतान्यभिक्षरन्ति देवो भूत्वा देवानप्येति य एवं विद्वानेतदुपास्ते हस्त्यृषभछं सहस्रं ददा-मीति होवाच जनको वेदेहः स होवाच याज्ञवल्क्यः पिता मेमन्यत नाननुशिष्य हरेतेति ॥

पदच्छेदः ।

यत्, एव, ते, कश्चित्, अन्नवीत्, तत्, शृरावाम, इति, अन्नवीत्, मे, बर्कुः, वार्धाः, चक्षुः, वे, न्रह्म, इति, यथा, मातृमान्, पितृमान्, आचार्यवान्, न्रूयात्, तथा, तत्, वार्धाः, अन्नवीत्, चक्षुः, वे, न्रह्म, इति, अपश्यतः, हि, किम्, स्यात्, इति, अन्नवीत्, तु, ते, तस्य, आय-तनम्, प्रतिष्ठाम, न, मे, अन्नवीत, इति, एकपात्, वे, एतत्, सम्नाद्, इति, सः, वे, नः, न्रूहि, याज्ञवल्क्य, चन्नुः, एव, न्र्यायतनम्, आकाशः, प्रतिष्ठा, सत्यम्, इति, एतत्, उपासीत, का, सत्यता, याज्ञवल्क्य, चन्नुः, एव, सम्नाद्, इति, ह, उवाच, चन्नुपा, वे, सम्नाद्, पश्यन्तम्, आहुः, अन्नाक्षीः, इति, सः, आहु, अन्नाक्षीः, इति, सः, आहु, अन्नाक्षाः, चत्नुः, लव्न, सत्यम्, भवति, चन्नुः, वे, सम्नाद्, पश्मम्, न्नज्ञ, न, एनम्, चन्नुः, जहाति, सर्वािम्, एनम्, भृतािन, अभिक्षरन्ति, देवः, भूत्वा, देवान्, अपि, एति, यः, एवम्, विद्वान्, एतत्, उपास्ते, हस्त्यृपमम्, सहस्नम्,ददािम, इति, ह, उवाच, जनकः, वेदेहः, सः, ह, उवाच, याज्ञवल्क्यः, पिता, मे, अमन्यत, न, कन्नतुशिष्य, हरेत, इति।।

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

याज्ञधल्क्यः=गाज्ञवल्क्य ने पप्रच्छ=जनकसे पृद्धा कि यत्=जो कुछ कश्चित्=किसी श्राचार्थ ने ते=बाप से श्रव्रचीत्=कहा है तत्=उसको भ्राण्याम=में सुनना चाहता हूं + जनकः=जनक ने + आह=कहा व। ध्र्णः = बृष्णाचार्य के पुत्र बर्कुः=बर्भु श्राचार्यं न मे=म्भसे श्रव्रवीत्=कहा है कि चक्षुः≔नेत्र वै=ही ब्रह्म=ब्रह्म है इति=इस पर याञ्चवत्क्यः=याज्ञवल्क्य ने उवाच=कहा यथा=जैसे शिष्याय=शिष्य के लिये मात्मान्) माता, पिता, गुरु पितृमान्) =करके सुशिक्षित आचार्यवान्) पुरुष

ब्र्यात्=उपदेश करता है तथा=तैसेही वार्ष्यः=वर्त्तु ने अब्रवीत्=प्रापसे कहा कि तत्=वह ब्रक्स=ब्रष्ठ चश्चः=नेत्र वै=ही है हि=क्योंकि अपश्यतः=नेत्रहीन पुरुष को किम्=क्या स्यात्=जाभ होसद्रा है + याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य

।क्षयत्क्यः=याज्ञवत्क्यः
+ पुनः=किरः
+ पप्रच्छ=पृक्षते भये कि
ते=ज्ञापसे
तस्य=उस न्रहा के
आयतनम्=प्राथ्य को
+ च=प्रोर
प्रतिष्ठाम्=प्रतिष्ठा को
अञ्चवीत्=वर्कुने कहा है

+ जनकः=जनक ने + श्राह्=उत्तर दिया कि मे=मुक्त से न=नहीं श्रुवचीत्=कहा है

+ याज्ञवरुक्यः=याज्ञवरुक्य ने + श्राह=कहा सम्राट्=हे जनक ! एतत्=यह ब्रह्मकी उपास ना व=निस्संदेह

एकपात्=एक चरखवाली है इति=इस पर + जनकः=जनक ने + झाह=कहा

याज्ञचल्क्य≔हे याज्ञवक्त्य ! सः=प्रसिद्ध

+ त्वम्≕श्राप नः≔इमसे + तत्≕उस ब्रह्म को बृहि=उपदेश करो + याञ्चलक्यः≕याज्ञवल्क्य ने आह≔कहा कि चश्चः≔चक्षु इ।नेद्रय का एच≕निश्चय करके **त्रायतनम्=चक्षु इन्द्रिय गोलक** चायतन है

म्राकाशः≔श्रौर बद्य प्रतिष्ठा=प्रतिष्ठा है इति=इस प्रकार एनत्≔इस चक्षु ब्रह्म को

सत्यम्≕सस्य + मत्वा=मानकर उपासीत=उपासना करे + जनकः=जनक

+ श्राह=बोले कि याञ्चवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! सत्यता⊃सत्य

का=क्या है + याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ उवाच=कहा सम्राट्=हे जनक ! चक्षुः≔नेत्र एव≕ही

+ सत्यम्=सत्य है + हि≕क्योंकि

सम्राट्र=हे जनक ! चश्चषा=नेत्र करके ही

पश्यन्तम्=देखनेवाचे पुरुष से

आहुः≔लोग पूछते हैं कि + किम्=क्या

+ त्वम्=तुमने श्रद्राक्षीः=देखा है इति=इस पर

सः≔वह द्रष्टा श्राह=कहता है कि हां

+ ऋहम्=भैंने **श्रद्राक्षम्**=देखा है इति≔तवही तत्=उसका कथन

सत्यम्≔सच भवति=समभा जाता है सम्राट्≔हे राजन् !

यः≕जो विद्वान्-विद्वान् एवम्=इस प्रकार

पतत्=इस ब्रह्म की उपास्ते=उपासना करता है कि

चश्चः=नेत्रही परमम्≔परम

ब्रह्म=ब्रह्म है एनम्=उस ब्रह्मवेत्ता को

चञ्चः=नेत्र **न**=नहीं

जहाति=त्यागता है एनम्≔इस ब्रह्मवेत्ता को सर्वागि=सब

भूतानि=प्राची अभिक्षरन्ति=रक्षा करते हैं + च=घौर

सः≔वह

वेवः=देवता

+ भूत्वा=होकर
देवान्=देवताओं को
श्रद्भेति=मास होताहै
इति=ऐसा याझव चेदेहः=विदेहपति जनकः=जनक ने उपाच=कहा श्र हस्त्रृप्यमम्=हाथी के समान एक + शि साहस्रम्=एक हजार गीओं को न + त्वाम्=जापको

इदामि≃दक्षिया में देता हूं
ह=तव
सः=वह
याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य
उवाच=बोले कि
मे=मेरे
पिता=पिता
ऋमन्यत=ब्राज्ञा वे चुके हैं कि
+ शिष्यम्=शिष्य को
अनजुशिष्य=बोष कराये विना
न हेरेत=दक्षिया नहीं लेना
वाद्धिये

भावार्थ

याज्ञवह्न्य महाराज नृतीयवार पूळते हैं कि हे राजा जनक ! जो फुळ आपसे किसी ने कहा है उसकी में सुनना चाहता हूं, जनक महाराज कहते हैं कि, वृत्याचार्य के पुत्र वर्छनामक आचार्य ने सुक्तको उपदेश किया है कि नेत्रही बहा है, इस पर याज्ञवह्न्य महाराज कहते हैं कि बर्कु आचार्य ने वेसेही आपको उपदेश किया है जैसे कोई पुरुष माता पिता गुरु करके सुशिक्षित होता हुआ अपने शिष्य के लिये उपदेश देता है, निःसंदेह नेत्रही ब्रह्म है, क्योंकि चश्रुहीन पुरुष को क्या लाभ होसका है, किर याज्ञवह्न्य महाराज पूळते हैं कि, हे राजा जनक! क्या आपको बर्कु आचार्य ने ब्रह्म के आयतन और प्रतिष्ठा को भी बताया है ? इस पर जनक राजा ने उत्तर दिया कि यह तो सुक्तको नहीं बताया है, इस पर याज्ञवह्न्य महाराज कहते हैं कि, हे सम्राद्! यह उपासना एक चरण्य की है, अर्थात् तीन चरणों से हीन है, इसलिये निष्क्रक है, तब जनक महाराज ने कहा है हमारे पूज्य, याज्ञवन्न्य, महाराज! आपही हमको ब्रह्मकी उपासना का

उपदेश करें, तब याज्ञवल्क्य महाराज ने कहा, हे जनक ! चक्षइन्द्रिय का चक्षगोलकही आयतन यानी शरीर है, और अन्त में ब्रह्मही इसका आश्रय है, इस चक्षुरात्मक प्रिय वस्तु को सत्य मानकर इसके गुर्गों का ध्यान करे, इस पर जनक ने कहा, हे याज्ञवल्क्य, महाराज ! इसकी सत्यता क्या है, तब याज्ञवल्क्य महाराज बोले कि, हे जनक ! चक्षु इन्द्रिय की सत्यता चक्षुही है, क्योंकि जब एक द्रष्टा और एक श्रोता विवाद करते हुये किसी वस्तु के निर्णय के लिये मध्यस्थ के पास जाते हैं, तो जिसने नेत्र से देखा है उससे वह मध्यस्थ पृद्धता है कि क्या तूने अपने नेत्रों से देखा है, इस पर अगर वह कहता है कि हां मैंने अपनी आंखों से देखा है तब उसका बाक्य सत्य माना जाता है, क्योंकि आंखों से देखी हुई वस्तु में व्यभिचार नहीं होसक्ता है, श्रीर जो यह कहता है कि भैंने नेत्रों से नहीं देखा है, पर कानों से सुना है तो उसकी बात ठीक नहीं समभी जाती है, क्योंकि इसमें संभव है कि वह असत्य हो, इस कारण चक्षुही सत्य है, श्रीर उसको सत्य मानकर उसके गुर्गा का ध्यान चक्षुरात्मक में करे, हे राजन् ! चक्षुद्दी परम आदरस्तीय प्रिय वस्तु है, जो विद्वान् इस प्रकार जानता हत्रा नेजात्मक ब्रह्मकी उपासना करता है तो उस ब्रह्मवेत्ता को नेज नहीं त्यागता है यानी वह कभी श्रम्धा नहीं होता है, उसकी रक्षा सब प्रास्ती करते हैं, वह देवता होकर देवताओं को प्राप्त होता है. ऐसा सुनकर विदेहपति राजा अनक ने कहा मैं एक हजार गौश्रों को हस्ति तुल्य सांड सहित श्रापको दक्षिगा में देता हूं, तब वह याज्ञवल्क्य 🕈 महाराज बोले कि मेरे पिता की आजा है कि शिष्य से विना उसकी बोध कराये दक्षिगा न लेना चाहिये ॥ ४ ॥

मन्त्रः ५

यदेव ते कश्चिदब्रवीत्तच्छ्रणवामेत्यव्रवीन्मे गर्दभीविपीतो भार-द्वाजः श्रोत्रं वै ब्रह्मोति यथा माहमान् पिहमानाचार्यवान्द्र्यात्तथा तद्भारद्वाजोक्रवीच्छ्रोत्रं वे ब्रह्मेत्यशृणवतो हि किछ स्यादित्यव्रवीतु के तस्यायतनं पतिष्ठां न मेक्रवीदित्येकपाद्वा एतत्सप्राहिति स वे नो बूहि याक्रवल्क्य श्रोत्रमेवायतनमाकाशः प्रतिष्ठानन्त इत्येनदुपासीत कानन्तता याक्रवल्क्य दिश एव सम्राहिति होवाच तस्माद्दे सम्राहिप यां कां च दिशं गच्छिति नैवास्या अन्तं गच्छत्यनन्तता हि दिशो विशो वे सप्राद् श्रोत्रछे श्रोत्रं वे सप्राद् परमं ब्रह्म नैनछं श्रोत्रं जहाति सर्वाण्येनं भूतान्यभिक्षरन्ति देवो भूत्वा देवान्यभित्र य एवं विद्वानेतदुपास्ते इस्त्यृष्यं सहस्रं ददामीति होवाच जनको वेदेहः स होवाच याज्ञवल्क्यः पिता मेमन्यत नाननुशिष्य हरेतेति ।।

परच्छेदः ।

यत्, एव, ते, किरचत्, श्रव्रवीत्, तत्, शृरावाम, इति, श्रव्रवीत्, मे, गर्दभीविपीतः, भारद्वाजः, श्रोत्रम्, वै, ब्रह्म, इति, यथा, मातृमान्, पितृमान्, श्राचार्थवान्, श्रूयात्, तथा, तत्, भारद्वाजः, श्रव्रवीत्, श्रोत्रम्, वे, ब्रह्म, इति, श्रश्र्यवतः, हि, किम्, स्यात्, इति, श्रव्रवीत्, तु, ते, तस्य, श्रायतनम्, प्रतिष्ठाम्, न, मे, श्रव्रवीत्, इति, एकपाद्, वे, एतत्, सम्राट्, इति, सः, वे, नः, ब्रूहि, याज्ञवल्क्य, श्रोत्रम्, एव, श्रायतनम्, श्राकाशः, प्रतिष्ठा, श्रान्तः, इति, एनत्, उपासीत, का, श्रान्तता, याज्ञवक्व्य, दिशः, एव, सम्राट्, इति, ह, उवाच, तस्मात्, वे, सम्राट्, श्रपे, याम्, काम्, च, दिशम्, गच्छति, न, एव, श्रस्याः, श्रान्तम्, गच्छति, श्रान्तताः, हि, दिशः, दिशः, वे, सम्राट्, श्रोत्रम्, श्रोत्रम्, वे, सम्राट्, प्रमम्, ब्रह्म, न, एनम्, श्रोत्रम्, जहाति, सर्वाणि, एनम्, भूतानि, श्रामिक्षरन्ति, देवः, भूत्वा, देवान्, श्राप्ति, एति, यः, एवम्, विद्वान्, एतत्, उपारते, हस्त्युपभम्, सहस्रम्, ददामि, इति, ह, उवाच, जनकः, वेदेहः, सः, ह, उवाच, याज्ञद्वयः, पिता, मे, श्रान्त्यत्, न, श्रनतुशिष्य, हरेत, इति ॥

पदार्थाः श्चन्यः + राजन्=हे जनक ! यत्≕जो कुछ कश्चित्=िकसी आचार्य ने ते=ग्रापसे द्यव्रवीत्≃कहा है तत्⊏उसके। श्रृगाद्याम=में सुनना चाहता हूं इति=इस पर + जनकः=राजा जनक मे + झाह⊐कहा कि भारद्वाजः=भारद्वाज गोत्रवासा गर्दभीविपीतः=गर्दभीविपीत श्चाचार्य ने मे=मुक्तसे श्रव्यवीत्≔कहा कि श्रोत्रम्≃श्रोत्र वै=ही ब्रह्म=ब्रह्म है इति=इस पर + याञ्चयत्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + उवाच=कहा कि यथा≕जैसे मातृमान्) माता, पिता, गुरु पितृमान् > =करके सुशिक्षित

ब्राचार्यवान्) पुरुष + शिष्याय≕भपने शिष्य प्रति ब्र्यात्=उपदेश करता है . तथा=वैसेही तत्≕ उस ब्रह्म को भारद्वाजः=भारद्वानगोत्रवासा गर्दभीविपीत ने

पदार्थाः ग्रन्वयः अञ्जवीत्=श्रापसे कहा है कि

श्रोत्रम्=श्रोत्र ਕੈ=ਵੀ

हि=च्योंकि श्चश्टरावतः=न सुननेवाले पुरुषसे किम्=क्या लाभ

स्यात्=होसका है इति=इस पर

+ याञ्चवत्ययः=याज्ञवत्य ने

+ आह=पूछा कि + राजन्=हे जनक !

तु=क्या ते=तुमसे

तस्य≔उस ब्रह्म के श्रायतनम्=षाश्रय को प्रतिष्ठाम्=ग्रीर प्रतिष्ठा को अब्रवीत्=भारद्वाज ने कहा है

+ जनकः≔जनक ने + स्त्राह≕उत्तर दिया

+ याश्रवल्क्य=हे याजवल्क्य ! मे⇒मुक्ससे

स≕नहीं श्रव्रवीत्≔क्हा है इति=इस पर

+ याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ आह≕कहा सम्राट्=हे जनक ! एतत्=यह ब्रह्मकी उपासना पकपात्=एक चरण वाली है इति≔इस पर

+ जनकः=जनक ने + आह्≕कहा कि याज्ञवल्कय=हे याज्ञवल्क्य ! सः=प्रसिद्ध + त्वम्=श्राप नः≔हससे ब्रहि=ब्रह्मके द्यायतन और प्रतिष्ठा को उपदेश करें + याझवल्क्यः=याज्ञवस्क्य ने + आह≂कहा श्रोत्रम्=श्रोत्र इन्द्रिय एव=ही श्रायतनम्≔श्राश्रय है श्चाकाशः≔^{ब्रह्म} त्रतिष्ठा=प्रतिष्ठा है एनत्≔यह श्रोत्ररूप ब्रह्म=ब्रह्म अनन्तः=धनन्त है इति=ऐसा मत्वा=मानकर उपासीत=उपासना करे + जनकः≔राजा जनक ने + ऋह≕कहा याञ्चवल्क्य=हे याज्ञवस्क्य ! **ग्रनन्तता=धनन्तता** का=क्या है याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने उव।**च**=उत्तर दिया सम्राट्र=हे राजन् ! दिशः=दिशा पच≕ही अनन्तता=भगन्तता है

तस्मात्=इसीसे सम्राट्=हे राजन् ! याम्=जिस काम्=िकसी दिशम्=दिशाको गच्छति=ब्राइमी जाता है श्चस्याः≔उस विशा के अन्तम्=धन्त को न पच≔नहीं गच्छति=पहुँचता है हि=च्योंकि दिशः=दिशा श्रनन्ताः=त्रनन्त हैं सम्राट्ट=हे जनक ! दिश:=दिशा श्रोत्रम्=कर्य हैं सम्राट्=हे राजन ! श्रोत्रम्≕कर्ण ही परमम्≔परम ब्रह्म=बद्ध है इति=ऐसे एतम्≔बद्यवेत्ता को श्रोत्रम्=कर्ण न=नहीं जहाति≕यागता है एनम्=इस ब्रह्मवेत्ता को सर्वाशि=सब भूतानि=पाणी श्राभिक्षरन्ति=रक्षा करते हैं च=भौर यः=जो विद्वान्=विद्वान्

प्यम्=कहे हुवे प्रकार
प्रतन्=इस महाकी
उपास्ते=उपासना करता है
सः=वह
देयः=देवता
भूत्वा=होकर
या
देवान्=देवताश्रों को
ऋषि=ही मरने बाद
प्रति=प्राप्त होता है
थैदेहः=विदेहपति
जनकः=जनक ने
हति=ऐसा श्रा

हस्त्यृषभम्=हाथी के समान एक
वैक सहित
सहस्रम्=एक हजार गौकों को
दश्मि=दक्षिणा में भापको
देता हूं
याझवत्क्यः=याज्ञवल्य ने
उवाच=कहा कि
मे=मेरे
पिता=पिता
ग्रमस्यत=श्राज्ञा रेगये हैं कि
शिष्यम्=शिष्य को
श्रान्यशिष्य करो विना
न हरेत हति=दक्षिणा नहीं लेना

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज राजा जनक से फिर पूछते हैं कि, जिस किसी आचार्य ने आपसे जो कुछ कहा है उसको मैं सुनना चाहता हूं, इस पर जनक महाराज ने कहा कि, भारद्वाज गोत्रवाले गर्दभीविपीत आचार्य ने सुमसे कहा है कि श्रोत्रही ब्रह्म है, तब याज्ञवल्क्य महाराज ने कहा कि गर्दभीविपीत आचार्य ने वैसेही प्रेम के साथ आपको उपदेश किया है जैसे कोई पुरुष माता पिता गुरु करके सुशिक्षित होता हुआ अपने शिष्य प्रति उपदेश करता है, हे राजा जनक ! निस्सन्देह श्रोत्र इन्द्रिय ब्रह्म है, क्योंकि न सुननेवाले पुरुष को क्या लाम होसका है, फिर याज्ञवल्क्य महाराज पूछते हैं कि हे जनक ! क्या तुम से गर्दभीविपीत आचार्य ने श्रोत्रात्मक ब्रह्मकी उपासना का आयतन और प्रतिष्ठा भी कही है, इसके उत्तर में जनक महाराज कहते हैं कि, हे याज्ञवल्क्य, महाराज ! उन्होंने सुमसे यह नहीं कहा है, इस पर याज्ञवल्क्य ने कहा यह ब्रह्मकी उपासना एक चरणवाली

है, तब जनक महाराज ने कहा कि आप हमारे पूज्य आचार्य हैं, आप कुपा करके श्रोत्रश्रहा के स्नायतन स्रोर प्रतिष्ठा का उपदेश देवें, तव याङ्जबल्≆य महाराजने कहा कि श्रोत्र इन्द्रिय का श्रायतन श्रोत्र इन्द्रियही है, ख्रीर परमात्मा उसका आश्रय है इस श्रीत्र ब्रह्मको अनन्त मान कर उपासना करे, जनक महाराज ने पूछा कि इसकी अपन-न्तता क्या है, याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं, हे राजन ! इसकी अनन्तता दिशा हैं, क्योंकि जो कोई जिस किसी देश के जाता है उस देश का अन्त नहीं पाता है, इस किये दिशायें अनन्त हैं, हे जनक ! दिशा श्रीय है, श्रीर श्रीत्र परम ब्रह्म है, ऐसा जी जानता है उस ब्रह्मवेत्ता को श्रोत्र नहीं त्यागता है, उस ब्रह्मवेत्ता की सब प्राग्ती रक्षा करते हैं, श्रीर जो विद्वान इस कहे हुये प्रकार ब्रह्मकी उपासना करता है वह देवता होकर देवताओं कोही बाद मरने के प्राप्त होता है, ऐसा सनकर विटेहपति जनक ने कहा कि, हे याज्ञवल्क्य, महाराज ! मैं श्चापको एक सहस्त्र गौद्यों को हाथी के समान सांड सहित देता हूं. इस पर याज्ञ ३ लक्य महाराज ने कहा कि, हे अनक ! मेरे पिता आद्राजा दे गये हैं कि शिष्य को विना बोध कराये दक्षिणा न जेना चाहिये ॥ 🗴 ॥

मन्त्रः ६

यदेव ते कश्चिद बवी चच्छु एवा मेत्य बवीन्मे सत्य कामो जावालो मनो वै ब्रह्मेति यथा मातृमान् पितृमानाचार्यवान्य्याच्या तज्जावालो ब्रवीन्मनो वै ब्रह्मेत्यमनसो हि किछ स्यादित्य ब्रवीचु ते तस्यायतं प्रतिष्ठां न मेब्रशीदित्ये कपाद्वा एतत्स श्राहिति स वै नो ब्र्ह्मिया व्यवन्य मन एवायतनमाकाशः प्रतिष्ठानन्द इत्येन दुपासीत कानन्दता या व्यवन्य मन एव सम्राहिति होवाच मनसा वै सम्राद् स्थिमिभिहार्यते तस्यां प्रतिस्थाः पुत्रो जायते स ब्रानन्दो मनो वै सम्राद् परमं ब्रह्म नैनं मनो जहाति सर्वीष्येनं भूतान्यभिक्षरन्ति देवो भूत्वा देवानप्येति य एवं विद्वानेत दुपास्ते हस्त्यृषभछ सहस्रं

ददामीति होवाच जनको वैदेहः स होवाच याज्ञवल्क्यः ।पैता मेम-न्यत नाननुशिष्य हरेतेति ।।

पदच्छेदः ।

यत्, एव, ते, कश्चित्, अन्नवीत्, तत्, श्र्यावाम, इति, अन्नवीत्, मे, सत्यकामः, जाबाजुः, मनः, वे, न्रद्धा, इति, यथा, मानृमान्, पितृ-मान्, आवार्यवाम्, न्रूयात्, तथा, तत्, जावालः, अन्नवीत्, मनः, वे, न्रद्धा, इति, अन्नवीत्, तु, ते, तस्य, आयतनम्, प्रतिष्ठाम्, न, मे, अन्नवीत्, इति, एकपाद्, वा, एतत्, सम्राट्, इति, सः, वे, नः, त्रूहि, याज्ञवह्न्य, मनः, एव, आयतनम्, आकाशः, प्रतिष्ठा, आनन्दः, इति, एनत्, उपासीत, का, आनन्दता, याज्ञवह्न्य, मनः, एव, सम्राट्, इति, ह, उवाच, मनसा, वे, सम्नाट्, श्रियम्, अभिक्षयति, तस्याम्, प्रतिरूपः, पुत्रः, जायते, सः, आनन्दः, मनः, वे, सम्नाट्, एगमम्, न्रद्धा, न, एनम्, मनः, जहाति, सर्वािष्ण, एनम्, भूतानि, अभिक्षयन्ति, देवः, भूत्वा, देवान्, अपि, एति, यः एवम्, विद्वान्, एतत्, उपास्ते, हस्त्यूपभम्, सहस्रम्, ददािम, इति, ह, उवाच, जनकः, वेदेहः सः, ह, उवाच, याज्ञवल्क्यः, पिता, मे, अमन्यत, न, अननुशिष्य, हरेत, इति ॥

अन्वयः

पदार्थाः भ्रन्वयः

पदार्थाः

+ राजन्=हे राजा जनक !

यत्=जो कुछ
किश्चित्=िकसी सावार्षे ने
ते=सापसे
स्मववीत्=कहा है
तत्=उसको
ऋग्याम=मैं सुनना चाहता हूं
हित=इस पर
+ जनकः=राजा जनक ने

+ आह=कहा कि

जावालः≔जवल का पुत सत्यकामः≔सत्यकामने मे=मुक्तसे झब्रवीत्=कहा कि मनः वे=मनही ब्रह्म=ब्रह्म है इति=हस पर + याझवल्क्यः=वाबवल्क्य ने + उवाच=कहा कि यथा=जैसे

मातृमान् भाता, पिता, गुरु पितृमान् =करके सुक्षिक्षित श्राचार्यवान्) पुरुष

> शिष्याय=श्रपने शिष्य से ब्यात्=कहता है तत्=डस बद्यकी

उपासना को

जाबालः=सत्यकामने श्रापसे

श्रव्रवीत्=कहा है वै=निश्चय करके

मनः=मन

व्रह्म=ब्रह्म है

हि=क्योंकि

श्रमनसः=मनरहित पुरुष से

किम्=क्या लाभ

स्यात्≔होसका है

+ पुनः=फिर + याज्ञधल्क्यः=याज्ञधल्क्य ने

+ श्राह=कहा

+जनक=हे जनक!

तु=क्या

ते=श्रापसे

तस्य=उस ब्रह्म के आयतनम्=श्रायतन श्रीर

प्रतिष्ठाम्=प्रतिष्ठा को भी श्रव्रवीत्=सत्यकामने कहा है

+ जनकः=जनक ने

+ आह=कहा

+ याञ्चलक्य=हे याज्ञवल्क्य!

मे=मुक्तसे न≃नहीं

श्रववीत्=कहा है इति≔इस पर

+याझवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

+ ऋाह≃कहा सम्राट्≔हे जनक !

पतत्≔यह बहाकी उपासना पकपाद्=एक **च**रणवाली है

इति=ऐसा

श्रुत्वा=सुनकर + जनकः≕जनक ने

+ आह=कहा

याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य !

सः≃क

+ त्वम्=भाप

नः≔हमको

बहि≕विधिपूर्वक उपदेशकर + याज्ञचल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने

त्राह=कहा

+ मनः≔मन

+ एव≔ही

श्रायत**नम्**=बद्य का शरीर है

श्राकाशः≔त्राकाश ही

प्रतिष्ठा=श्राश्रय है मनः≕मन

पच=ही

श्रानन्दः=ग्रानन्द हे

इति=इसी बुद्धि से

पनत्≔इस बहा की

उपासीत≃डपासना करे

सम्राट्=राजा जनक ने उवाच≔पूछा

याभवल्कय=हे याजवल्क्य !

ग्रानन्द्ता=**मानन्द** का=क्या ह याञ्चवल्क्यः=याज्ञवहक्य ने उवाच=उत्तर दिया सम्राट्र=हे जनक ! मनः≔मन एव≕ही **ञ्चान**न्दः=श्रानन्द है + हि=क्योंकि सम्राट्=हे जनक ! मनसा=मन करके ही स्त्रियम्=स्त्री के पास श्रभिहार्यते=पुरुषलेजायाजाताहै तस्याम्=उसी स्नी में प्रतिरूपः=पिता के सहश पुत्रः=बदका जायते=पैदा होता है सः≔वह खड़का श्चानन्दः=धानन्द का कारण होता है सम्राट्ट=हे राजन् ! मन:=मन वै=ही परमम्=परम ब्रह्म=ब्रह्म है यः=जो पवम्=इस प्रकार विद्वान्=जानता हुन्ना पतत्≔इस बहा की उपास्त=उपासना करता है पनम्=उसको मनः=मन

न=नहीं जहाति=स्यागता है एनम्=उस बहावेत्ता को 'सर्वाणि=सब भूतानि=प्राणी श्रभिक्षरन्ति=रक्षा करते हैं च=घौर सः=वह देवः≔देव भूत्वा=होकर देवान् श्रपि=देवतात्रों को ही पति=प्राप्त होता है इति=ऐसा श्रुत्वा=सुनकर वैदेह:=विदेहपति जनकः=जनक उवाच=बोले कि हरत्यृषभम् रे_हाथीकेतुल्यएकसांद सहस्रम् 🕽 सहितहजारगौद्रोंको ददामि=में दक्षियामें श्रापको देता हं इति=इस पर सः≔वह ∔ याज्ञचल्क्यः=याज्ञवल्क्य + उवाच≔बोले कि + सम्राट्=हे राजन् ! मे=हमारे पिता=पिता श्रमन्यत=कह गये हैं कि + शिष्यम्=शिष्य को श्चननुशिष्यः बोध कराये विना दक्षिणामू=दक्षिया की

इति=कभी न=नहीं हरेत इति⇒केना चाहिये

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज छठी बार राजा जनक से पूछते हैं कि हे राजा जनक ! जिस किसी ऋाचार्य ने ऋापसे जो कुछ कहा है उसको मैं सुनना चाहता हूं, यह सुनकर राजा जनक ने कहा कि जाबाल के पुत्र सत्यकाम ने कहा है कि मनही ब्रह्म है, इस पर याज्ञवल्क्य ने कहा यह ठीक है, स्त्रापको सत्यकाम ने वैसेही उपदेश दिया है जैसे कोई पुरुष माता पिता गुरु करके सुशिक्षित हुआ। अपने शिष्य प्रति उपदेश करता है, निस्संदेह मनही ब्रह्म है, क्योंकि मनरहित पुरुष से क्या लाभ होसका है, फिर याज्ञवल्क्य महाराज ने कहा है सम्राट जनक ! क्या आपसे सत्यकाम ने उस ब्रह्म के आयतन और प्रतिष्ठा को भी कहा है, सम्राद् ने उत्तर दिया कि मुक्तसे उन्होंने नहीं कहा, इस पर याज्ञवत्क्य ने जनक से कहा कि हे राजन ! यह ब्रह्मकी उपासना एक चरणवाली है, पूरी नहीं है, ऐसा सुनकर जनक ने कहा हे प्रभो ! आपही हमको विधिपूर्वक उपदेश करें, याज्ञवल्क्य ने कहा सुनो कहता हूं मनही ब्रह्म का शरीर है, यानी रहने की जगह है, आकाश श्रथना परमात्मा उसका आश्रय है, मनही आनन्द है, ऐसा जानकर इस ब्रह्मकी उपासना करे, राजा जनक ने फिर पूछा कि हे याज्ञवल्क्य ! स्थानन्द क्या है, याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया हे राजन ! मनही आनन्द है, क्योंकि मनही की प्रेरणा करके पुरुष स्त्री के पास जाता है, उस स्त्री मेंही पिता के सदश जड़का पैदा होता है, हे राजन ! मनही परम ब्रह्म है, जो पुरुष इस प्रकार जानता हुन्या ब्रह्मकी उपासना करता है, उसको मन नहीं त्यागता है, उस ब्रह्मवेत्ता की सब प्राग्ती रक्षा करते हैं, वह देव होकर देवता को ही प्राप्त होता है, ऐसा सुनकर विदेहपति जनक बोले हाथी के तुल्य एक सांड सहित हजार गौक्रों को

अक्षाक्को दक्षिग्णामें देता हूं, इस पर याज्ञवरूक्य महाराजने कहा हे राजन् ! मेरे पिता कह गवे हैं कि विना शिष्य को बोध कराय दक्षिग्णा कमी न लेना अमहिये॥ ६॥

मन्त्रः ७

यदेव ते कश्चिद्ववीत् तच्छृणवामेत्यव्रवीन्मे विदग्धः शाकल्यो हृद्यं वै ब्रह्मेति यथा मातृमान् पितृमानाचार्यवान्त्र्यात्तथा तच्छा-कल्योव्रवीकृद्यं वै ब्रह्मेत्यहृदयस्य हि किछ स्यादित्यव्रवीत्तु ते तस्यायतनं प्रतिष्ठां न मेब्रवीदित्येकपाद्रा एतत्सम्राडिति स वै नो ब्रह्म याज्ञवल्क्य हृद्यमेवायतनमाकाशः प्रतिष्ठा स्थितिरित्येनदुपासीत का स्थितता याज्ञवल्क्य हृद्यमेव सम्राडिति होवाच हृद्यं वै सम्राद् सर्वेषां भूतानामायतनछ हृद्यं वै सम्राद् परमं ब्रह्म नैनछ हृद्यं जहाति सर्वाएयेनं भूतान्यभिक्षरन्ति देवो भूत्वा देवानप्येति य एवं विद्वानेतदुपास्ते हस्त्यृष-भछ सहस्तं ददाभीति होवाच जनको वैदेहः स होवाच याज्ञवल्क्यः पिता मेमन्यत नाननुश्ष्य हरेतेति ।।

इति प्रथमं ब्राह्मराम् ॥ १ ॥ पदच्छेदः।

यत्, एव, ते, कश्चित्, अन्नवंति, तत्, श्र्रावाम, इति, अन्नवीत्, मे, विदग्धः, शाकल्यः, हृदयम्, वे, न्नह्म, इति, सथा, मानृमान्, पितृ-मान्, आचार्यवान्, न्नूयात्, तथा, तत्, शाकल्यः, अन्नवीत्, हृदयम्, वे, न्नह्म, इति, अहृदयस्य, हि, किम्, स्थात्, इति, अन्नवीत्, तु, ते, तस्य, आयतनम्, प्रतिष्टाम्, न, मे, अन्नवीत्, इति, एकपाट्, ना, एतत्, सन्नाट्, इति, सः, वे, नः, न्नूहि, याज्ञवल्क्य, हृदयम्, एव, आयतनम्, आकाशः, प्रतिष्टा, स्थितः, इति, एनत्, उपासीत, का, याज्ञवल्क्य, हृदयम्, एव, सन्नाट्, इति, ह, उवाच, हृदयम्,

ाद्, सर्वेषाम्, भूतामाम्, आयतनम्, हृदयम्, वे, सम्राद्, सर्वे-

षाम्, भूतानाम्, प्रतिष्ठाः, इदये, हि, एव, सम्राट्, सर्वाचाः, भूतानि, प्रतिष्ठितानि, भवन्ति, इदयम्, वै, सम्राट्, परमम्, ब्रह्म, न, एनम्, इदयम्, जहाति, सर्वाचाः, एनम्, भूतानि, ष्ट्रामिस्, देवः, भूत्वा, देवन्त, प्रति, एति, यः, एतम्, विद्वान्, एतत्, उपास्ते, इस्त्यृषभम्, सहस्रम्, ददामि, इति, इ, उवाच, जनकः, वैदेहः, सः, इ, उवाच, याज्ञवल्कयः, पिता, मे, श्रमन्यत, न, श्रमनुशिष्य, इरत, इति ॥

पदार्थाः श्चन्वयः श्चन्वयः पदार्थाः + शिष्याय=श्रपने शिष्य से + राजन्=हे जनक ! यत्=जो कुछ ब्यात्=कहता है कश्चित्=किसी ग्राचार्य ने तथा=तैसही ते≂श्रापसे तत्=उसको यानी हृदयस्थ श्रव्रवीत्=कहा है बहाकी उपासना को तत्=उसको शाकल्यः=शकल के पृत्र श्ट्रणवाम=में सुनना चाहता हूं विदग्ध ने श्रव्रवीत्=श्रापसे कहा है इति=इस पर वै=निश्चय करके जनकः≕जनकने श्राह=कहा हृद्यम्=हृदय वै≕ही शाकल्यः=शकल के पुत्र ब्रह्म=ब्रह्म है विदग्धः=विदग्धने हि=क्योंकि मे=मुक्तसे श्रहृद्यस्य=हृदय रहित पुरुष को श्रव्रवीत्=कहा है कि किम्≕त्या लाभ हृद्यम् वै=हृद्यही स्यात्≔होसक्रा है ब्रह्म=ब्रह्म है पुनः≕िफर + इति श्रुत्वा=ऐसा सुनकर + याझवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + ऋाह≔कहा कि + उवाच=कहा + जनक≔हे जनक ! यथा≕जैसे तु≔क्या मातुमान्) माता, पिता, गुरु पितृमान् } =करकं सुशिक्षित आचार्यवान् } पुरुष ते=ग्रापसे तस्य≔ष्ठस ब्रह्म के

श्चायतनम्=ग्रायतन श्रीर प्रतिष्टाम्=प्रतिष्ठा को भी श्रव्रवीत्=विदग्ध ने कहा है + जनकः=जनक ने + आह=कहा याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! मे न=मुक्तभे नहीं श्चव्रवीत्=कहा है इति=इस पर + याज्ञवल्क्यः≔याज्ञवल्क्य ने श्राह=कहा सम्राट्=हे जनक ! एतत्=यह ब्रह्मकी उपासना एकपाद्=एक चरण वाली है इति=इस पर + जनकः≕जनक ने + ग्राह=कहा याञ्चवत्यय=हे याज्ञवत्वय ! सः + त्वम्=श्रापशी + तत्=उस उपासना को **नः**=हमसे बृहि≕कहें + याज्ञचल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + श्राह=कहा हृद्यम्=ह्रय । एव=ही श्रायतनम्=श्रायतन है आकाशः=परमात्माही प्रतिष्ठा=म्राश्रय है एनत्=यही ब्रह्म स्थिति:=स्थिति है यानी परम स्थान है

इति=ऐसी एनत्=इस हृदयस्य ब्रह्मकी उपासीत=उपासना करे सम्राट्ट=जनक ने उवाच=कहा याञ्चवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! स्थितता=स्थिति का=क्या वस्तु है याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने उव{च=कहा सम्राट्ट=हे राजन् ! हृद्यम्=हरय एव≕ही + एतस्य=इसकी + स्थितता=स्थिति है हि=क्यांकि सम्राट्र=हे राजन् ! सर्वेषाम्=सब भूतानाम्=प्राणियों का श्रायतसम्=स्थान हृदयम्=हृदय है सम्राट्=हे राजन् ! हृद्यम्=हृद्य वै=ही सर्वेषाम्=सब भूतानाम्=प्रावियों का प्रतिष्ठा=श्राश्रय है हि=क्योंकि सम्राट्=हे जनक ! सर्वाणि=सब भूतानि=प्राची

इद्ये=हृदय में

प्व≕ही प्रतिष्ठितानि=स्थित भवन्ति≕हैं सम्राट्≕हे जनक ! हृद्यम्=हृद्य वै=निस्सन्देह षरमम्=परम व्रह्म=बह्य है यः≕जो एवम्=इस प्रकार विद्वान्=जानता हुन्ना एतत्=इस ब्रह्म की उपास्ते=डपासना करता है **एनम्**=इसको हृदयम्=हृदयात्मक ब्रह्म न≕नहीं जहाति≈स्यागता है एनम्≔इस ब्रह्मवेत्ता को सर्वाणि≕सब भूतानि=प्राची श्रामिक्षरन्ति=रक्षा करते हैं + च=श्रीर + सः≔वह देवः≔देवता भृत्वा=हांकर

देवान्=देवताओं को श्चिप्⊐ही प्रति=प्राप्त होता है इति=इस पर वैदेह:=विदेहपति जनक:=जनक उवाच≔बोले कि याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! हस्त्यृषभम्=हाथी के समान एक सांड सहित सहस्रम्=हजार गौद्यों को द्दामि त्वाम्=दक्षिणा में श्रापको देता हूं स्य:=वह याज्ञधरकयः=याज्ञवरुक्य उवाच=बोले कि मे=हमारे पिता=पिता इति≔ऐसा श्रमन्यत=कह गये हैं कि + शिष्यम्=शिष्य को श्चन नुशिष्य=बोध कराये विना + दक्षिणाम्=दक्षिणा न∍नहीं

हरेत=प्रहण करना चाहिये

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज सातर्त्रीवार राजा जनक से कहते हैं कि, जो कुछ किसी झाचार्य ने झापसे कहा है उसको में सुनना चाहता हूं. इस पर राजा जनक ने कहा, शकल के पुत्र विदग्ध ने सुम्पसे कहा है कि हृदय ही ब्रह्म है, ऐसा सुनकर याज्ञवल्क्य ने कहा उन्हों ने ठीक

कहा है, जैसे कोई माता, पिता स्त्रीर गुरु करके सुशिक्षित पुरुप स्नपने प्रिय शिष्य प्रति उपदेश करता है वैसेही उन्होंने आपके प्रति कहा है, निस्सन्देह हृदयही ब्रह्म है, क्योंकि हृदयरहित पुरुष को क्या लाभ होसक्ता है, फिर याज्ञवल्क्य ने कहा कि है जनक ! क्या आपसे विद्रम्थ आचार्य ने उस इदय के आयतन और प्रतिष्ठा को भी कहा है ? जनक महाराज ने कहा, हे प्रभो ! उन्हों ने मुक्ससे यह नहीं कहा है, तब याज्ञबरूक्य ने कहा यह ब्रह्मकी उपासना एक चरणा वाली है, परी नहीं है, इस पर जनक ने कहा है हमारे पूज्य याज्ञवल्क्य, ब्रह्म-भूषि ! आपही हमको उपदेश करें, याज्ञवल्क्य महाराज ने कहा सनो. हृदयही उसका आयतन है, और आकाश अथवा परमात्माही उसका श्राश्रय है, यही ब्रह्मस्थिति है, यानी परम स्थान है, ऐसी बुद्धि करके इस हृदयस्थ ब्रह्मकी उपासना करे. ऐसा सनकर जनक महाराज ने कहा है याज्ञवल्क्य ! स्थिति क्या वस्तु है ? याज्ञवल्क्य ने कहा. हे राजन ! हृदयही इसकी स्थिति है, क्योंकि सब प्राणियों का स्थान हृदयही है, हे राजन ! हृदयही सब प्राणियों का आश्रय है, क्योंकि हे राजा जनक ! सब प्राणी हृदय में ही स्थित हैं, हे जनक ! हृदय निस्सन्देह परमब्रह्म है, जो विद्वान इस प्रकार जानता हुआ इस ब्रह्मकी उपासना करता है, उसको हृदयात्मक ब्रह्म नहीं त्यागता है, इस ब्रह्म-वेत्ता की सब प्राणी रक्षा करते हैं, वह देवताओं को प्राप्त होता है. इस पर विदेहपति जनक बोले कि में आपको हाथी के समान एक सांड सिहत एक हजार गौश्रों को दक्षिणा में देता हूं, याज्ञवहन्य महाराज ने कहा कि भेरे पिता कह गये हैं कि शिष्य को विना वौध कराये दक्षिगा नहीं प्रह्मा करना चाहिये ॥ ७ ॥

इति प्रथमं ब्राह्मराम् ॥ १ ॥

अथ द्वितीयं ब्राह्मणम्।

मन्त्रः १

जनको ह वैदेहः क्वीदुपावसर्पञ्चाच नमस्तेस्तु याज्ञवल्क्यानु-माशाधीति स होवाच यथा वै समाएमहान्तमध्वानमेष्यन्थं वा नावं वा समाददीतैवमेवैताभिरूपनिपद्भिः समाहितात्मास्येवं दृन्दारक श्राढचः सन्नधीतवेद उक्कोपनिपत्क इतो विमुच्यमानः क गमिष्यसीति नाहं तद्भगवन् वेद यत्र गमिष्यामीत्यथ वै तेहं तद्भथामि यत्र गमि-ष्यसीति ब्रवीतु भगवानिति ॥

पदच्छेदः ।

जनकः, ह, वैदेहः, कूर्चात्, उपावसर्पन्, उवाच, नमः, ते, अस्तु, याज्ञवल्क्य, अनुमाशाधि, इति, सः, ह, उवाच, यथा, वै, सम्राट्, महान्तम्, अध्वानम्, एध्यन्, रथम्, वा, नावम्, वा, समाददीत, एवम्, एव, एताभिः, उपनिषद्भः, समाहितात्मा, असि, एवम्, कृत्दा-रकः, आह्यः, सन्, अधीतवेदः, उक्तोपनिषत्कः, इतः, विमुच्यमानः, कः, गमिष्यसि, इति, न, अहम्, तत्, भगवन्, वेद, यत्र, गमिष्यामि, इति, अथः, वै, ते, अहम्, तत्, वक्ष्यामि, यत्र, गमिष्यसि, इति, अवीतु, भगवान्, इति ॥

श्रन्वयः

पदार्थाः ऋन्वयः वैदेहः≃विदेइपति पदार्थाः

जनकः≔राजा जनक
कूर्चात्=सिंहासन से उटकर
उपावसर्पन्=याज्ञवह्मय के पास
जाकर
उयाच=बोते कि
याज्ञवह्मय≔हे याज्ञवह्मय!
ते=श्रापके तिथे
नमः≔मेरा नमस्कार
अस्तु≔होते

मा=मुक्तको
+ त्वम्=भाग
श्रनुशाधि=उपदेश दें
श्रति=तव
सः=वह याज्ञवरुक्य
उवाच=बोले कि
सम्राट्=हे राजन्!
यथा=जैसे
महान्तम्=बहुत दूर
श्रष्वानम्=भागे का

+ जनकः=जनक ने ष्ट्यन्≕जानेवाला पुरुष रथम्≔रथ + श्राह=कहा भगवन्=हे पूज्य याज्ञवरुक्य! चा=या नाचम्=नाव को यम्र≕जहां गमिष्यामि=में जाऊंगा समाददीत=प्रहण करता है एवम् एव=उसी प्रकार तत्=उसको श्चहम्=में एताभिः=इन कहे हुये उपनिषद्भिः=ज्ञान विज्ञान करके न≕नहीं वद्=जानता हूं समाहितातमा=श्रापका श्रातमा श्रसि=संयुक्त है श्रथ=तब + च=धौर याञ्चवत्क्यः=याज्ञवत्क्य ने एवम्=वैसेही उवाच=जवाब दिया कि त्वम्=श्राप तत्=उसको बृत्दारकः=जोगोंकरकेपुज्यश्रीर ते=श्रापसे वै≕धवश्य श्चाख्यः=धनाव्य वश्यामि=भैं कहूंगा सन्=होने पर भी श्रधीतंबदः=वेदों को पढ़े हो यत्र=जहां उक्तोपनिषत्कः=उपनिषदों का ज्ञान गमिष्यासि=श्राप जायंगे श्चापसे कहा गयाहै इति=इस पर + बृहि=तुम कहो कि जनकः=जनक ने इतः=इस देह से श्राह=कहा मुच्यमानः≂मुक्र होते हुये भगवान्=हे भगवन् ! क्क=कहां को + त्वम्=श्राप गमिष्यसि=जावोगे इति=ऐसा श्रवश्य इति≔इस पर ब्रब्दिनु=कहें

भावाथे।

त्रिदेहपति राजा जनक महाराज सिदासन से उठकर याज्ञवल्क्य महाराज के पास जाकर बोले कि, हे याज्ञवल्क्य, महाराज ! आपको मेरा नमस्कार होवे, मुक्तको आप कृपा करके उपदेश देवें, इसके उत्तर में याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजन ! जैसे बहुत दूर मार्ग का चलने वाजा पुरुष रथ या नाव को प्रहुषा करता यानी आश्रय

लेता है उसी प्रकार इन कहे हुये ज्ञान विज्ञान करके आपका आत्मा संयुक्त है, और लोगों करके पूज्य और धनाढ्य होने पर भी वेदों को आपने पढ़ा है, और ऋषि लोगों ने उपनिषदों का ज्ञान आपसे कहा है, आप बताइये इस देह को त्यागते हुये कहां को जाओगे, इस पर राजा जनक ने कहा है पूज्य, याज्ञवल्क्य, महाराज ! जहां में जाऊंगा उसको में नहीं जानता हूं तब याज्ञवल्क्य महाराज ने कहा उसको में आपसे अवश्य कहूंगा जहां आप जायँगे. इसको सुनकर राजा जनक ने कहा, है भगवन ! आप उसको अवश्य कहें।। १॥

मन्त्रः २

इन्घो ह वै नामैप योयं दक्षिणेक्षन्पुरुपस्तं वा एतमिन्घछं सन्त-मिन्द्र इत्याचक्षते परोक्षेणिव परोक्षभिया इव हि देवाः प्रत्यक्षद्विषः ॥

पद्च्छेदः ।

इन्धः, ह, वे, नाम, एषः, यः, अयम्, दक्षिणे, अक्षन्, पुरुषः, तम्, वा, एतम्, इन्यम्, सन्तम्, इन्द्रः, इति, आचक्षते, परोक्षेणा, एव, परोक्षप्रियाः, इव, हि, देवाः, प्रत्यक्षद्विपः ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

यः=जो

श्रयम्=यह
दक्षिणे=दहिने
श्रक्षन्=श्रास में
पुरुषः=पुरुष है
एषः ह=यही
चै=निस्सन्देह
इन्धः नाम=इन्ध नाम से प्रसिद्धहे
तम्=उसी
चै=प्रसिद्ध
एतम=इस

सन्तम्=तत्य पुरुषम्=पुरुष इन्धम्=इन्ध को इन्द्र:=इन्द्र इति=करके परोक्षेण=परोक्ष नाम से एय=ही श्राहु:=पुकारते हैं हि=क्योंकि देवा:=देवगण परोक्षप्रियाः } =परोक्ष प्रिय इव } =परोक्ष प्रिय + सन्तः=होते हैं + च=मोर

प्रत्यक्षद्विषः=प्रत्यक्ष वस्तु से द्वेष करने वाले + भवन्ति=होते हैं

भावार्थ ।

याझवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे जनक ! जो यह दिहानी झांख में पुरुष बीखता है वह इन्य नामसे प्रसिद्ध है, इसी इन्धको परोक्ष नाम इन्द्र करके पुकारते हैं, क्योंकि देवगाए परोक्षप्रिय होते हैं, झोर प्रत्यक्षप्रिय नहीं होते हैं, जो गुप्त अथवा अव्यक्त है (स्पष्ट न हो उसको परोक्ष कहते हैं, झोर जो व्यक्त हो अथवा स्पष्ट हो अथवा प्रसिद्ध हो उसको प्रत्यक्ष कहते हैं) वेदों में इन्द्र नाम बहुधा आया है, इन्ध ऐसा नाम नहीं आया है, इन्ध गुप्त नाम है, इसीसे इसकी शोभा है, इसी प्रकार जीवात्मा भी शरीर में गुप्त व्यापक है, इसी कारण वह भी शोभायमान है, परमात्मा भी जगत्रू पी महाशरीर में गुप्त व्यापक है, इस जिथे वह भी बड़ी शोभा का देनेवाला है, इसी परमात्मा के निकट अप्रथक् जो आत्मा है झोर वह हृदयाकाश विषे स्थित है उसी के पास आपको जाना होगा ॥ २ ॥

मन्त्रः ३

श्रयैतद्वामेक्षणि पुरुषरूपमेपास्य पत्नी विरार् तयोरेष संश्रस्तावो य एषोन्तर्हृदय श्राक्षःशोथैनयोरेतदन्नं य एषोन्तर्हृदय लोहितपि-एडोथैनयोरेतत्मावरणं यदेतदन्तर्हृदये जालकिपवायेनयोरेषा स्रतिः संचरणी येपा हृदयादृर्ध्वा नाड्युखरित यथा केशः सहस्रधा भिन्न एवमस्येता हिता नाम नाड्योन्तर्हृदये प्रतिष्ठिता भवन्त्येताभिर्वा एत-दास्त्रवदास्त्रवित तस्मादेष प्रविविक्राहारतर इवैत्र भवत्यस्माच्छारीरा-दात्मनः ॥

पद्द्ञेदः ।

अथ, एतत्, वामे, अक्षिण, पुरुषरूपम्, एषा, अस्य, पत्नी, विराद्,

तयोः, एषः, संस्तावः, यः, एषः, आन्तर्हृदये, आकाशः, आथ, एनयोः, एतत्, आत्रम्, यः, एषः, आन्तर्हृदये, लोहितिपिग्रदः, आथ, एनयोः, एतत्, प्रावरग्रम्, यत्, एतत्, आन्तर्हृदये, जालकम्, इव, आथ, एनयोः, एवा, प्रावरग्रम्, यत्, एतत्, आन्तर्हृदये, जालकम्, इव, आथ, एनयोः, एषा, सृतिः, संचरग्री, या, एषा, हृदयात्, ऊर्ध्वा, नाड़ी, उचरित, यथा, केशः, सहस्रधा, भिन्नः, एवम्, आस्य, एताः, हिताः, नाम, नाड्यः, अन्तर्हृदये, प्रतिष्ठिताः, भवन्ति, एताभिः, वा, एतत्, आस्यत्, आस्यत्, आस्यति, तस्मात्, एषः, प्रविविक्ताहारतरः, इव, एव, भवति, आस्मात्, शारीरात्, आस्माः ॥

अस्मात्, शारीरात्, आत्मनः ॥ पदार्थाः श्चन्वयः ऋथ=इसके उपरान्त यत् एतत्=जो यह पुरुषरूपम्=पुरुषाकार वामे≂बायें श्रक्षशि,≕नेत्र में + श्रस्ति=प्रतीत होती है एपा≔यह ऋस्य=उस पुरुष की विराट्र=विराट् नामक पत्नी=ची है + च=भौर यः≕जो एष:=यह श्चन्तर्हृदये=हृदय के भीतर आकाशः=भाकाश है एषः=सोई तयोः=उन दोनों जी पुरुष के संस्तावः=मिलापकी जगह है यः=जो

> प्षः=यह अन्तर्ह्य्ये=हृद्य के भीतर

पदार्थाः श्रन्वयः लाहितपिएडः=बाब मांसपिएड है एतत्=यही एनयोः=इन दोनों का अन्नम्=मन है श्चथ=श्रीर यत्=जो एतत्=यह श्चन्तर्हदये=हृदय के भीतर जालकम् इव=जालकी तरह फैला चाद्र है एतत्=यही एनयोः=उनका प्रावरणम्=भोदना है + च=श्रोर या=जो एषा=यह हृदयात्=हृदय से ऊर्ध्वा≕ज्पर नाडी=नादी

उच्चरति=जाती है

एषा=यही

श्चनयोः≔इन दोनों के संचरणी=गमन का स्तिः=मार्ग है यथा≕त्रेसे केश:=एक केश सहस्रधा=सहस्र भिन्नः≔टुकड़ा किया हुआ + सृक्ष्मः=श्रति सृक्ष्म + भवति=होता है एवम्=इसी तरह श्रस्य=इस देह की हिताः नाम=हित नामवाली नाड्यः=श्रतिसक्ष्मनाहियां हैं श्चन्तर्हृदये=हृदय के भीतर प्रतिष्टिताः=स्थित भवन्ति=हैं

वै=निरवद करके

एताभिः=इन नादियों द्वारा

एतत्=यह सक्त रस

ग्रास्त्रवत्=जाता हुन्ना
आस्त्रवति=सवजगह पहुँचता है

तस्मात्=इसी कारण

एषः=यह जीवारमा

ग्रस्मात्=इस
शारीरात्=शारीरी

ग्रात्मनः=जारमा से न्रयोत्

स्थूल देह की अपेक्षा

इव एव≕िनस्सन्देह भवति=होता है

भावार्थ ।

इसके उपरान्त यह पुरुपाकार व्यक्ति जो बांये नेत्र में प्रतीत होती है यह उस पुरुप की विराट् नामक खी है, और जो हृदय के भीतर आकाश है सोई दोनों यानी इन्द्र इन्द्राणी के मिलने की जगह है, और जो हृदय के भीतर लाल मांसपिगढ़ है वही इन दोनों का अन है, और जो हृदय के मध्य में जाल के समान अनेक छिद्र युक्त चादर है यही उन दोनों के ओहने का वस्त्र है, और जो हृदय से ऊपर नाड़ी गई है वही इन दोनों के गमन का मार्ग है, और आगे अनेक नाड़ियों का हाल बताते हैं, जैसे एक केश सहस्र टुकड़ा किया हुआ अतिस्क्ष्म होता है उसी तरह इस देह की हिता नामवाली अति स्क्ष्म नाड़ियां हृदय के भीतर हैं, इन्हीं नाड़ियों के द्वारा अनरस को प्राण्य सब जगह पहुँचाता है, इसी कारण यह जीवातमा स्थूल देह की अपेक्षा अति शुद्धाहारी प्रतीत होता है।। ३।।

मन्त्रः ४

तस्य पाची दिक्पाश्चः पाणा दक्षिणा दिग्दक्षिणे पाणाः प्रतीची दिक्पत्यश्चः पाणा उदीची दिगुदश्चः पाणा उध्वी दिगु-ध्वीः पाणा श्रवाची दिगवाश्चः पाणाः सर्वा दिशः सर्वे पाणाः स एव नेति नेत्यात्मागृद्धो न हि गृद्धतेशीर्यो न हि शीर्यतेसङ्गो न हि सञ्यतेऽसितो न व्यथते न स्थित्यत्यभयं वै जनक पाप्तोसीति होवाच याज्ञवल्क्यः । स होवाच जनको वैदेहोभयं त्वा गच्छता-धाज्ञवल्क्य यो नो भगवन्नभयं वेदयसे नमस्तेस्त्विमे विदेहा श्रय-महमस्मि॥

इति द्वितीयं ब्राह्मग्रम् ॥ २ ॥ पदच्छेदः ।

तस्य, प्राची, दिक्, प्राच्च:, प्राग्गाः, दक्षिगा, दिक्, दक्षिगो, प्राग्गाः, प्रतीची, दिक्, प्रत्यच्च:, प्राग्गाः, उदीची, दिक्, उदच्चः, प्राग्गाः, उध्वां, दिक्, उदचः, प्राग्गाः, उध्वां, दिक्, उध्वाः, प्राग्गाः, अवाची, दिक्, अवाच्चः, प्राग्गाः, सर्वाः, दिक्, अवाच्चः, प्राग्गाः, स्वांः, दिशः, सर्वे, प्राग्गाः, सः, एपः, न, इति, न, इति, आसम्रान्, अगुद्धः, न, हि, गृद्धते, अशीर्यः, न, हि, शीर्यते, असङ्गः, न, हि, सज्यते, असितः न, व्यथते, न, रिष्यति, अभयम्, वे, जनक, प्राप्तः, असितः न, व्यथते, न, रिष्यति, अभयम्, वे, जनक, प्राप्तः, अस्त, इति, ह, उवाच, प्राञ्चत्वरूक्यः, सः, ह, उवाच, जनकः, वेदेदः, अभयम्, त्वा, गच्छतात्, याज्ञवरूक्यः, यः, नः, भगवन्, अभयम्, वेद्यसे, नमः, ते, अस्तु, इमे, विदेहाः, अयम्, अहम्, अहम्, अस्म ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

तस्य=इस जीवातमा के प्राची=पूर्व दिकू=दिशा में प्राञ्चः=पूर्वगत प्राशाः=पाण हैं + तस्य=इस जीवातमा के दक्षिणे=दक्षिण दिशा में ाः पदार्थाः दक्षिणाः=दक्षिण दिशा गत प्राणाः=प्राण हैं + तस्य=इस जीवात्मा के प्रतीची=पश्चिम विक्=दिशा में प्रत्यञ्चः=पश्चिम गत प्राणाः=प्राण हैं

+ तस्य=इसके गृह्यते=महयकियाजासकार्डे उदीची=उत्तर + सः≔वडी दिक=दिशा में अशीर्यः=अक्षय है उद्भः=उत्तर गत हि=क्योंकि प्राणाः=प्राण हैं + सः≔वह + तस्य=इसके न≕कभी नहीं ऊध्वी=जपर की शीर्यते=श्रीण होता है दिशा=दिशा में + सः≔वह ऊध्वी=अपर गत श्रसङ्गः≔सङ्ग रहित है प्राणाः=प्राण हैं हि=क्योंकि तस्य=इस जीवात्मा के सः=वह श्रवाची=नीचे की न=कडीं नहीं दिकु≕दिशा में सज्यते=श्रासक होता है श्रवाअः=नीचे गत + सः≔वह प्राणाः=प्राण हैं श्रसितः=बन्धन रहित है तस्य≔इसके + हि=क्योंकि सर्वाः≃सब न=न दिशः=दिशाओं में सः=वह सर्वे≕सब गत व्यथते=पीडित होता है प्राणाः=प्राण हैं न रिष्यति=न हिंसित होता है सः=वही जनक≔हे जनक ! एषः≔यह बै=निश्चय करके आत्मा=श्रात्मा श्रभयम्=श्रभय पद को नेति≕नेति प्राप्तः=तुम प्राप्त नेति=नेति श्रसि=हो चुके हो + इति=करके इति=ऐसा + उक्तः≔कहा गया है याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने + सः=वही उवाच ह=कहा अगृह्यः=अमाद्य है ह=तब हि=क्योंकि वैदेह:=विदेहपति + सः=वह जनकः=जनक न=महीं उवाच=बोले कि

याञ्चवत्कय=हे याज्ञवत्कय !
त्वा=ज्ञातका भी
श्राभयम्=ज्ञमय पद
गच्छतात्=मास होवे
भगवन्=हे पृज्य !
यः=जो ज्ञाप
नः=हमको
श्राभयम्=ज्ञभय महा
वेदयसे=सिखलाते ईं
ते=ज्ञापके ज्ञिये

नमः=नमस्कार
अस्तु=होवे
अपूषे=हे ऋषे !
हमे=पह
विदेहाः=कुल विदेह देश
तयप्रति=धापके लिये हैं
अयम्=यह
अहम्=मैं
अस्म=आपका दास हं

भाबार्थ ।

इस जीवात्मा की पूर्व दिशा में जो प्रारा है वह पूर्व की स्प्रोर जाता है. और जो दक्षिण दिशा में प्राण है वह दक्षिण की आयोर जाता है, अपीर जो पश्चिम दिशा में प्रागा है वह पश्चिम की आपोर जाता है, इसके ऊर्ध दिशा में जो प्राण है वह ऊपर को जाता है, इसके नीचे की दिशा में जो प्रागा है वह नीचे को जाता है, जो सब दिशास्त्रों में प्रामा है वह सब तरफ जाता है. ऐसी दशा में वह आतमा वाणी करके नहीं कहा जा सक्ता है, यह आत्मा अगृह्य है, क्योंकि इसका प्रहणा नहीं हो सक्ता है, यह आतमा अक्षय है, क्योंकि इसका नाश नहीं होता है. यह आतमा श्रासङ्ग है, क्योंकि इसका संग नहीं होता है, यह आतमा बन्धरहित है, क्योंकि यह न व्यथित होता है न हिंसित होता है, ऐसा उपदेश देते हुये याज्ञवल्क्य बोले कि, हे राजा जनक ! आप निर्भयता को प्राप्त होगये हैं, जहां जाना था वहां पहुँच गये हैं अपन आप क्या चाहते हैं ? इस पर राजा जनक ने कहा. हे याज्ञवल्क्य ! आपको भी श्रामय पद प्राप्त होवे, हे परम पूज्य ! जो आप हमको अभय ब्रह्म का उपदेश देते हैं. आपको हमारा नमस्कार हो, हे अपने ! में संपूर्ण विदेह देश को आपके चरण कमल में अपर्य

करता हूं, मैं आपका दास उपस्थित हूं, आप जो आज्ञा दें, उसकी करने को तैयार हुं॥ ४॥

इति द्वितीयं ब्राह्मग्रम् ॥ २ ॥

श्रथ तृतीयं बाह्मणम्।

मन्त्रः १

जनकछं ह वैदेहं याज्ञवल्क्यो जगाम स मेने न वदिष्य इत्यव ह यज्जनकश्च वैदेही याज्ञवल्क्यश्चाग्निहीत्रे समुदाते तस्मै ह याज्ञ-वल्क्यो वरं ददौ स ह कामपरनमेव वन्ने तछ हास्मै ददौ तछ ह सम्राडेव पूर्व पशच्छ ॥

पदच्छेदः ।

जनकम्, ह, वैदेहम्, याज्ञवल्क्यः, जगाम, सः, मेने, न, वदिष्ये, इति, श्रथ, ह, यत्, जनकः, च, वैदेहः, याज्ञवस्त्रयः, च, श्रग्निहोत्रे, समृदाते, तस्मै, ह, याज्ञवल्क्यः, वरम्, द्दौ, सः, ह, कामप्रश्नम्, एव, वन्ने, तम्, ह, झास्मे, ददौ, तम्, ह, सम्राट्, एव, पूर्वम्, पप्रच्छ ॥

पदार्थाः श्चन्वयः + कदाचित्≔एक समय याज्ञवरुक्यः=याज्ञवरुक्य वैदेहम्=विदेहपति जनकम्=राजा जनक के पास जगाम=गये इति=ऐसा मेन=विचार करते हुये

कि आज

+ किंचित्=कुछ न=नहीं वदिष्ये=कहंगा **अथ=**पर पहुँचने पर

पदार्थाः अन्वयः यत्≕नो कुछ

बैदेह:=विदेहपति जनकः≔राजा जनक ह=श्रद्धापूर्वक + पप्रच्छ=पूछते थे

+ तत्व्≡उसको

+ याञ्चवत्कयः=याज्ञवस्क्य + प्रतिपेदे=कहते थे + कदाचित्=िकसी समय पाइले

श्चारनहोत्रे न्य्रानहोत्र के विषय में समृदाते=संवाद करते समय

ह=निश्चय करके

याञ्चवल्क्यः च्याञ्चवल्क्य महाराज के वरदान द्दौ=जनक को दिया ह=तक सः=उस राजा जनक ने कामप्रश्नम्=इच्छानुसार प्रश्न करने का व्ये=वरदान मांगा तदा=तब

श्चर्मै=उसके जिये
तम्=उस कामग्रश वर को
द्दी=याज्ञवल्क्य महाराज
देते भये
ह=इसी कारण
सम्राट्=जनक ने
पूर्वम् एव=पिश्लेही
पप्रचल्लामा आजा पृष्का

भावार्थ ।

एक समय याज्ञवहक्य महाराज यह श्रपने मनमें ठानकर जनक महाराज के निकट चले कि आज मैं राजा को कुछ भी उपदेश नहीं दुंगा, केवल चुपचाप बैठा हुआ जो छुछ वह कहेंगे उसको सुनता रहुंगा, जब याज्ञवरूक्य महाराज राजा जनक के पास पहुँचे तब जनक ने जीवात्मा के बारे में प्रश्न किया, उसका उत्तर महाराज ने दिया इस पर शंका होती है कि जब याज्ञवल्क्य ने ठान लिया था कि मैं कुछ न कहुँगातो फिर जनक के प्रश्न का उत्तर क्यों दिया इस शंका का समायान यों करते हैं कि एक समय जब कर्मकागड में सब कोई प्रवृत्त थे उस समय अग्निहोत्र के विषय में राजा जनक और अन्य राजा याज्ञवत्क्य महाराज श्रीर श्रन्य मुनिगगा श्रापस में संवाद करने लगे, उस समय राजा जनक की निपुगाता देख संतुष्ट हो याज्ञवल्क्य मुनि ने राजा से पूछा कि क्या तुम वर मांगते हो, राजा ने काम-प्रश्त रूप वर मांगा अर्थात् जब भैं चाहूं तब आपसे प्रश्त करूं, चाहे श्चाप किसी दशा में हों, यह वर चाहता हूं, इस वरको याज्ञवत्क्य महाराज ने दिया, यह कहते हुये कि हे राजा जनक ! जब तुम चाही मुक्तसं प्रश्न कर सक्ते हो, इसी कारण याज्ञवल्क्य महाराज को अपनी इच्छात्रिरुद्ध बोलना पड़ा ॥ १ ॥

मन्त्रः २

याज्ञवल्क्य किंज्योतिर्थं पुरुष इति । श्रादित्यज्योतिः सम्रा-डिति होवाचादित्येनैवायं ज्योतिषास्ते पल्ययते कर्म कुरुते विपल्ये-तीत्येवमेवैतद्याज्ञवल्क्य ॥

पर्च्छेदः ।

याज्ञवरुक्य, किंज्योतिः, श्रायम्, पुरुषः, इति, श्रादित्यज्योतिः, सम्राट्, इति, ह, जवाच, श्रादित्येन, एव, श्रायम्, ज्योतिषा, श्रास्ते, परुययते, कर्म, कुरुते, थिपल्येति, इति, एवम्, एव, एतत्, याज्ञवरुक्य ॥ श्राम्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः याज्ञवरुक्य=हे मुने ! श्रायम्=यह पुरुष

श्रयम्=यह पुह्यः=पुरुष यानी यह जीवारमा

किंज्योतिः = { किस ज्योति वाला हे यानी उसको इति | ज्योति कहां से ग्राती है

+ याज्ञबल्क्यः=याश्रवल्क्य ने उदाच=जवाब दिया कि सम्राट=हे जनक !

्राह पुरुष सूर्य के

प्रकाश करके प्रकाश
आतिहरय
च वाजा है यानी हुसको

सूर्य से प्रकाश

मिलता है

हि=क्योंकि

श्चयम्=यह पुरुष श्चादित्येन } सूर्य के प्रकाश ज्योतिषा } करके ही श्चास्ते=बैठता है

अस्त=बठता ह पत्ययते=इधर उधर फिरता है

कर्म=कर्म कुरुते≕करता है

विपल्येति= { कर्म करके फिर श्रिपने स्थान पर वापस श्राता है

इति=इसपर + जनकः=गनक ने

+ भ्राह=कहा याझवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! पतस्⇒यह

एवम् एव=ऐसेही है यानी ठीक है

भाषार्थ ।

राजा जनक प्रश्न करते हैं कि, हे मुने ! जो जीवात्मा शरीर विषे हिथत है, उसको प्रकाश कहां से मिलता है, यानी किसके प्रकाश करके वह प्रकाशित होता है ? इसके उत्तर में याज्ञवहक्य महाराज कहते हैं कि, हे जनक ! यह जीवात्मा सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित होता है, यानी सूर्य के प्रकाश करके यह पुरुष अपना सारा काम करता है, इधर उधर बैठता है, और फिरता है, और कम करके फिर अपने स्थान को वापस आ जाता है, जनक महाराज ने ऐसा सुनकर कहा कि, यह ऐसाही है जैसा आपने कहा है।। २।।

मन्त्रः ३

श्रस्तमित श्रादित्ये याइवल्क्य किंज्योतिरेवायं पुरुष इति चन्द्रमा एवास्य ज्योतिर्भवतीति चन्द्रमसैवायं ज्योतिषास्ते पल्ययते कर्म कुरुते विपल्येतीत्येवमेवैतचाइवल्क्य ॥

पदच्छेदः ।

अस्तिमिते, आदित्ये, याज्ञवत्क्य, किंज्योतिः, एव, अयम्, पुरुषः, इति, चन्द्रमाः, एव, अस्य, ज्योतिः, भवति, इति, चन्द्रमसा, एव, अयम्, ज्योतिषा, आस्ते, पत्ययते, कर्म, कुरुते, विपत्येति, इति, एवम्, एव, एतत्, याज्ञवल्क्य ॥

पदार्थाः पदार्थाः । श्रन्वयः श्चन्वयः एव≕ही याज्ञवल्क्य≔हे याज्ञवल्क्य ! ज्योतिः≔प्रकाश वाला द्यादित्ये⇒सूर्य के श्चस्त्रमिते=इबने पर श्रयम्=यह पुरुषः=पुरु**ष** इति=श्योंकि प्रच=निश्चय करके श्रयम्=यह पुरुष चन्द्रमसा एव=चन्द्रमा ही के ज्योतिषा=प्रकाश करके श्चास्ते=बैठता है पल्ययते≔इधर उधर घृमता है -याज्ञवलक्यः=याज्ञवल्क्य बोत्ते कर्म=कर्म ग्रस्य=इस पुरुष को कुरुते≔करता है खन्द्रमाः≔चन्द्रमा

विपल्येति= { कर्म करके अपने स्थान को लौट श्राता है इति=इस पर

३।त−३ल पर **जनकः**=जनक श्राह≕वोजे याझवल्क्य≔हे याजवल्क्य ! एतत्≕यह बात एवम् एव≕ऐसीही है यानी ठीक है

भावार्थ ।

जनक महाराज प्रश्न करते हैं कि, हे मुने ! जब सूर्य ध्यस्त होजाता है, तब यह पुरुष किस के प्रकाश करके ध्यपना व्यवहार करता है. याज्ञवत्क्य महाराज ने उत्तर दिया कि यह पुरुष चन्द्रमा के प्रकाश से प्रकाश वाला होता है, क्योंकि यह जीवात्मा चन्द्रमा के ही प्रकाश करके बैठता है, इधर उधर फिरता है, कर्म करता है, ध्यौर कर्म करके ध्यपने स्थान को लौट आता है. यह सुनकर जनक महाराज बोले, हे याज्ञवत्क्य ! यह ऐसाही है जैसा ध्यापने कहा है ॥ ३ ॥

मन्त्रः ४

अस्तिमत आदित्ये याज्ञवल्क्य चन्द्रमस्यस्तिमते किंज्योतिरेवायं पुरुष इत्यग्निरेवास्य ज्योतिर्भवतीत्यग्निनेवायं ज्योतिपास्ते पल्ययते कर्म कुस्ते थिपल्येतीत्येवमेवेतचाज्ञवल्क्य ॥

पदच्छेदः ।

अस्तिमिते, आदित्ये, याझवल्क्य, चन्द्रमसि, अस्तिमिते, किंज्योतिः, एव, अयम, पुरुपः, इति, अग्निः, एव, अस्य, ज्योतिः, भवति, इति, अग्निना, एव, अयम्, ज्योतिषा, आस्ते, परूययते, कर्म, कुरुते, विपरूयेति, इति, एवम्, एव, एतत्, याझवत्क्य ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

याज्ञयहरूय=हे याज्ञवहरूय ! श्रादित्ये=सूर्य के श्रास्तमिते=सस्त होने पर सन्द्रमसि=सन्द्रमा के श्रास्तमिते=सस्त होने पर द्ययम्=यह पुरुषः=पुरुष प्य=निश्चय करके किंउयोतिः=किस प्रकाश वासा

+ भवति= { होताहै यानी किस के प्रकाशसे प्रकाश-मान होता है एव≕ही श्रास्ते≔बैठता है प्रत्ययते =इधर उधर चलता इति=इस पर फिरता है + याज्ञवल्क्यः=याज्ञवरूक्य कर्भ=कर्म + श्राह=बोक्रे कुरुते=करता है विपल्यंति= { कर्म करके श्रपनी जगह पर जौट ग्राता है श्चास्य=इस पुरुष की ज्योतिः=ज्योति आरिन:=ग्रीन + इति श्रुत्वा=यह सुन कर पच≔ही जनकः=जनक ने भवति≕होती है श्राह⇒कहा हि=वयोंकि याज्ञचल्क्य=हे याज्ञचल्क्य ! श्रयम्=यह पुरुष प्तत्=यह आग्निना । ज्योतिषा (=श्रामि के प्रकाश करके पवम् पव=ऐसेही है

भावार्थ ।

जनक महाराज ने प्रश्न किया कि, हे मुने ! जब सूर्य श्रीर चन्द्रमा होनों श्रस्त होजाते हैं तब यह पुरुष किस के प्रकाश करके श्रपना व्यवहार करता है ? याज्ञवल्क्य महाराज ने उत्तर दिया कि यह पुरुष सूर्य श्रीर चन्द्रमा के श्रस्त होने पर श्रम्नि की ज्योति करके प्रकाश-मान होता है यानी काम करन के योग्य होता है क्योंकि यह पुरुष श्रम्नि के प्रकाश करके बैठता है, इधर उधर फिरता है, कर्म करता है, श्रीर कर्म करके श्रपने स्थान पर वापस श्रा जाता है, ऐसा सुनकर जनक महाराज ने कहा, हे मुने ! यह ऐसाही है जैसा श्रापने कहा है ॥ ४ ॥

मन्त्रः ५

अस्तामित आदित्ये याज्ञवल्क्य चन्द्रमस्यस्तमिते शान्तेग्नौ किं-ज्योतिरेवायं पुरुष इति वागेवास्य ज्योतिर्भवतीति वाचैवायं ज्योति-षास्ते पल्ययते कर्म कुरुते विपल्येतीति तस्माद्वै सम्राडपि यत्र स्वः पाणिर्न विनिर्कायतेथ यत्र वागुचरत्युपैव तत्र न्येतीत्येवमेवैतद्या-इवल्क्य ॥

आस्तमिते, आदित्ये, याज्ञवहक्य, चन्द्रमित, अस्तिमिते, शान्ते, आन्ते, अन्ती, किंज्योतिः, एव, आयम्, पुरुषः, इति, वाक्, एव, आस्य, ज्योतिः, भवित, इति, वाचा, एव, आयम्, ज्योतिषा, आस्ते, पह्न्ययते, कर्म, कुरुते, विपह्नयेति, इति, तस्मात्, वे, सम्राद्, आपि, यत्र, स्वः, पाणिः, न, विनिर्ज्ञायते, आथ, यत्र, वाक्, ज्वरति, उप, एव, तत्र, न्येति, इति, एवम्, एव, एतत्, याज्ञवह्नय ॥

पदार्थाः त्रात्वयः त्रादिस्ये=सृर्व **के** श्चस्तमित=ग्रस्त होने पर चन्द्रमसि=चन्द्रमा के अस्तमिते=ग्रस्त होने पर अन्ती=अन्ति के शान्ते=ग्रस्त होने पर याज्ञवल्क्य=हे ऋषे ! श्रयम्=यह पुरुषः=^{पुरुष} यदा≕जब इति=ऐसा + जनकः=जनक ने + भाह=पूछा हु≕तब याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य ने उवाच=कहा कि

पदार्थाः श्रन्वयः झस्य=इस पुरुष का ज्योति:=प्रकाश एच≕निश्चय करके वाक=वासी है हि=क्योंकि श्चयम्≕यह पुरुष वाखा=वासी करके प्य≔ही श्चास्ते=बेठता है पत्ययते≕गमन करता है कर्म=कर्म कुरुते=करता है विपल्येति=कर्म करके श्रपने स्थान पर खोटता है सम्राट्=हे जनक ! तस्मात् वै=इस छिये यत्र=जहां स्वः=श्रपना पाणिः≔हाथ भी

न≔नहीं विनिर्क्षायते=जाना जाता है यानी नहीं दीखता है अथ=पर यत्र=जहां चाक्=वायी उच्चरति=उच्चरित होती है तत्र=वहां यानी उस उपन्येति=पुरुष बाखी करके
पहुँचता है

इति शुत्वा=ऐसा सुन कर
जनकः=जनक ने
प्राह=कहा
याझवल्क्य=हे याझवल्क्य !
एतत्=यह
एवम् एव=ऐसाही हे जैसा
झापने कहा है

भावार्थ ।

राजा जनक प्रश्न करते हैं, हे मुने ! जय सूर्य झारत है, चन्द्रमा झारत है, आग्नि भी नहीं है, तब यह पुरुप किस प्रकाश से प्रकाशवाला होताहे ? इस पर याज्ञवर्लस्य महाराज कहते हैं कि, इस पुरुष का प्रकाश वागाी करके होता है, क्योंकि यह जीवात्मा वागाी करके ही बैठता है, इधर उधर फिरता है, कर्म करता है, कर्म करके झपने स्थान को वापस झाता है, इसिलये हे जनक ! जहां झपना हाथ भी नहीं दिखाई देता है, परन्तु जहां वागाी उचरित होती है वहां यानी उस झन्धेरे में पुरुष वागाी करके पहुँचता है, यह सुनकर राजा जनक ने कहा यह ऐसाही है जैसा झापने कहा है ॥ १ ॥

मन्त्रः ६

श्रस्तिभत श्रादित्ये याज्ञवल्क्य चन्द्रमस्यस्तिभिते शान्तेग्नौ शान्तायां वाचि किंज्योतिरेवायं पुरुष इत्यात्मैवास्य ज्योतिभवतीत्यात्मनैवायं ज्योतिपास्ते पल्ययते कर्म कुरुते विपल्येतीति ॥

पदच्छेदः ।

आस्तमिते, आदित्थे, याज्ञवत्कय, चन्द्रमसि, अस्तमिते, शान्ते, अग्नौ, शान्तायाम्, वाचि, किंज्योतिः, एव, अयम्, पुरुषः, इति, आत्मा, एव, अस्य, ज्योतिः, भवति, इति, आत्मना, एव, अयम्, ज्योतिषा, आस्ते, पक्ययते, कर्म, कुरुते, विपक्षेति, इति ॥ श्रम्बयः

पदार्थाः ऋन्वयः

पदार्थाः

प्याञ्चयदक्य = हे याजवरक्य !

श्चादित्ये = सूर्य के
श्चास्तामिते = अस्त होने पर
चन्द्रमसि = चन्द्रमा के
अस्तामिते = अस्त होने पर
श्चानी = अग्नि के
शान्त = शान्त होने पर
वाचि = वाची के
शान्तायाम् = बन्द होने पर
श्चाम्वयह
पुरुषः = पुरुषः
प्रच = निरुषय करके

िकस प्रकाशवाला किंज्योतिः= { होताहै यानी किसके प्रकाश करके प्रकाश वाला होता है

इति≃इस पर शाझचटक्यः=पाजवल्क्य ने उवाच=कहा कि श्रास्य=इस पुरुष का श्रास्मा=भास्मा पश्च=ही
ज्योतिः=ज्योतिवासा
भवित=होताहै
हि=क्योंकि
अयम्=यह पुरुष
आत्मना=अपने ही
ज्योतिपा=प्रकाश करके
आस्ते=बैठता है
पल्ययते=इधर उधर किरता है
कर्म=कर्म
कुरुते=करता है

ग्राता है इति≕ऐसा + थ्रत्घा≕सुन करके

+ जनकः=जनक ने + उवाच=कहा + याज्ञवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य !

+ एतत्=यह + एवम् } _ ऐसाही है जैसा + एव } जाप कहते हैं

भावार्थ।

राजा जनक प्रश्न करते हैं कि, हे मुने ! सूर्य के आस्त होने पर, चन्द्रमा के आस्त होने पर, अग्नि के शान्त होने पर, वाग्गी के बन्द होने पर यह पुरुप किसक प्रकाश करके प्रकाशवाला होता है ? इसके उत्तर में याह्ववल्य महाराज कहते हैं कि, इस पुरुप का आत्माही ज्योतिवाला है, क्योंकि यह पुरुप आपने ही प्रकाश करके बैठता है, इधर उपर फिरता है, कर्म करता है, और कर्म करके आपने स्थान को लौट आता है, ऐसा सुनकर जनक राजा ने कहा, हे सुने ! यह ऐसाही है।। ह।।

पदार्थाः

मन्त्रः ७

कतम श्रात्मेति योयं विज्ञानमयः प्राग्गेषु ह्व्चन्तरूयोंतिः पुरुषः समानः सञ्जभौ लोकावनुसंचरति ध्यायतीव लेलायतीय स हि स्वमो भूत्वेमं लोकमतिक्रामति मृत्यो रूपािण ॥

पदच्छेदः ।

कतमः, आत्मा, इति, यः, अयम्, विज्ञानमयः, प्राग्तेषु, हृदि, अन्तर्ज्योतिः, पुरुषः, समानः, सन्, उभो, लोको, अनुसंचरति, ध्यायित, इव, लेलायित, इव, सः, हि, स्त्रप्रः, भूत्वा, इमम्, लोकम्, अति-क्रामित, मृत्योः, रूपािग् ॥

पदार्थाः ग्रन्वयः त्रान्वयः + जनकः=राजा जनक + पृच्छति=पृद्धते हैं + याञ्चवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य कतमः=कौनसा सः=वह त्रातमा=श्रात्मा है याञ्चवत्क्यः=याज्ञवल्क्य ने उवाच=कहा यः≕जो श्चयम्=यइ प्रागेषु=इन्द्रियों विषे विज्ञानम्यः=विज्ञानस्वरूप है यः=जो हृदि=बुद्धि विषे श्चन्तउयोतिः=धन्तर् प्रकाशवासा पुरुषः=पुरुष है सः हि=वही

समानः=बुद्धि रूप सन्=होता हुन्ना उमी=दोनों लोकौ=जोकों में संचरति=फिरता है ध्यायति इव=धर्म श्रधर्म का ध्यान करता है लेलायति इव=श्रति श्रमिकाषा करता है -सः=वही स्वप्नः=स्वप्न श्रवस्था में भूत्वा=होकर इमम्=इस लोकम्=बोक को मृत्योः=मृत्यु के रूपाणि=रूप को यानी दुःख को

अतिकामति=उजहन करता है

भावार्थ ।

राजा जनक पूछते हैं कि, हे याज्ञवल्क्य, महाराज ! आपने कहा है

इस पुरुष का आत्माही ज्योतिवाला है, यानी वह स्वयं ज्योतिःस्वरूप है, पर इस शरीर में इन्द्रिय झीर झन्तःकरणा भी स्थित हैं, तो क्या वह ज्योति:स्वरूप पुरुष उन इन्द्रियों ख्रीर झन्त:करण से उत्पन्न हुझा है, या इनसे वह कोई अतिरिक्त पुरुष है, आप क्रपाकरके मुक्ते समस्राकर कहें, कि क्या इन्द्रिय श्रथवा श्रन्त:करगा श्रथवा इन्द्रियसहित शरीर-समुदाय आत्मा है, या इनसे वह भिन्न है, इसके जवाब में याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं. जो इन्द्रियों बिषे विज्ञानरूप से स्थित है स्पीर जो बद्धि बिष अन्त: प्रकाशवाला पुरुष है, वही आतमा है, अथवा जो मनके द्वारा सब इन्द्रियों के निकट जाकर उन सबको सजीवित कर प्रज्वित करता है, श्रीर जैसे राजा श्रपने सहचारियों को लेकर इधर उधर बिचरता है तद्वतु जो इन्द्रियों के साथ विचरनेवाला है वह श्चात्मा है, श्चथवा जो हृदय में रहता है श्चीर जिसके श्रभ्यन्तर सूर्यवत् स्वयं ज्योतिःस्वरूप सत्र शरीरों में रमगा करता है वह आदमा है, फिर शंका होती है कि वह जीवात्मा टीपक के समान यहांही लयभाव को प्राप्त हो जाता है खीर इसका कोई अन्य फोक नहीं है, इस शंका का समाधान याज्ञवल्क्य महाराज करते हैं कि, वह जीवात्मा सामान्य रूप से दोनों लोकों में गमन करता है, अर्थात् देहादि से भिन्न कोई कर्त्ता भोक्ता है जो मरकर दसरे जन्म में श्रापने कर्मफल को भोगता है. क्योंकि जिस समय यह जीवात्मा मुर्च्छित होकर ख्रीर वेखबर होकर शरीर को त्यागने लगता है तो निज उपार्जित धर्म अधर्म को याद करने लगता है, यह सोचते हुये कि इन सबको मैं त्यागूंगा क्या ये सब मुम्मको फिर मिलेंगे ? ये कैसे जाना जाता है इस बात के जानने के लिये स्वप्न का दृष्टान्त आगे कहते हैं, ह राजन् ! जब पुरुष स्वप्न श्रवस्था को प्राप्त होता है तभी वह स्वप्न में देखता है कि मैं सुखी हूं, मुक्तमें किंचित् भी दुःख नहीं है, इसी तरह इस जोक में भी परलोक के सुख का अनुभव करता है, और समभता है कि परलोक कोई भिन्न

वस्तु है, याज्ञवस्कय महाराज कहते हैं कि, जो जागरण और स्वप्ना-वस्था में सामान्यरूप से विचरण करता है वही आत्मा है, और जिसे जागरणावस्था में और स्वप्नावस्था में कुछ भेद नहीं है वैसेही इस लोक और परलेक में भी कोई भेद नहीं है जो कुछ यहां कमाता है इसका फल वहां भोगता है ॥ ७॥

मन्त्रः द

स वा त्रयं पुरुषो जायमानः शरीरमिसंपद्यमानः पाप्पभिः संध्र सुज्यते स उत्क्रामन्द्रियमागाः पाष्मनो विजहाति ॥

पद्च्छेदः ।

सः, वै, श्रयम् , पुरुषः, जायमानः, शरीरम् , श्रमिसंपद्यमानः, पाप्मभिः, संसृज्यते, सः, उत्क्रामन् , म्नियमागाः, पाप्मनः, विजहाति ॥ श्रन्वयः पदार्थाः । श्रन्वयः पदार्थाः

सः=सो चै=निश्चय करके श्रयम्=यह पुरुषः=पुरुष जायमानः=उश्पन्न होता हुन्ना शर्रारम्=शरीर को श्राभसं- } =पाप्त होता है पद्यमानः }

च=धौर

पाप्मभिः=श्रशुभ कर्मजन्य श्रथमों से संसुज्यते=संगत करता है च=श्रीर स:=वही म्रियमाग्;=मरता हुश्रा उत्क्रामन्=जपर को जाता हुश्रा पाप्मनः=सब पापों को विजहाति=श्रोह देता है

भावार्थ ।

यहां किसी पुरायशाली पुरुष का न्याख्यान है, बहुत से पुरायशाली पुरुष पूर्व पापजन्य दुःखों के भोगने के लियेही शरीर धारण करते हैं, ऐसे पुरुष जब एक शरीर को त्यागकर दूसरे शरीर में उत्पन्न होते हैं, तो अधुभकर्मजन्य श्रावमों से संयुक्त होते हैं परन्तु जब मरने को प्राप्त होते हैं तो ज्ञान से संपन्न होने के कारण सब पापों को इसी लोक में तप्ट कर देते हैं ॥ ८॥

मन्त्रः ६

तस्य वा एतस्य पुरुषस्य द्वे एव स्थाने भवत इदं च परलोकस्थानं च संध्यं तृतीयछ स्वप्तस्थानं तिस्मिन्संध्ये स्थाने तिष्ठकोते उभे स्थाने पश्यतीदं च परलोकस्थानं च । अथ यथाक्रमोऽयं परलोकस्थाने भवति तपाक्रममाक्रम्योभयान्पाप्मन आनन्दाछंश्रच पश्यति स यत्र प्रस्तिपित्यस्य लोकस्य सर्वोवतो मात्रामपादाय स्वयं विद्वत्य स्वयं निर्माय स्वेन भासा स्वेन ज्योतिषा प्रस्विपत्यत्राऽयं पुरुषः स्वयं ज्योतिर्भवति ॥

पदच्छेदः ।

तस्य, वै, एतस्य, पुरुषस्य, द्वे, एव, स्थाने, भवतः, इद्म्, च, पर्ने लोकस्थानम्, च, संध्यम्, नृतीयम्, स्वप्रस्थानम्, तस्मिन्, संध्ये, स्थाने, तिष्ठम्, एते, उभे, स्थाने, पश्यति, इद्म्, च, परलोकस्थानम्, च, अथ्य, यथाक्रमः, अयम्, परलोकस्थाने, भवति, तम्, आक्रमम्, आक्रम्य, उभयान्, पाप्तनः, आनन्दान्, च, पश्यति, सः, यत्र, प्रस्व-पिति, अस्य, लोकस्य, सर्वावतः, मात्राम्, अपादाय, स्वयम्, विह्त्य, स्वयम्, निर्माय, स्वेन, भासा, स्वेन, उयोतिपा, प्रस्विपिति, अत्र, अयम्, पुरुषः, स्वयम्, ज्योतिः, भवति ॥

श्रन्वयः	पदार्थाः	श्चन्वयः	पदार्थाः
तस्य=उस	,	इदम्=ए	कतो यह लोक यानी
प्तस्य=इस		জ	ायत् श्र वस्था
पुरुषस्य= पुरुष यानीः	जीवात्मा के	परलाक	दूसरा परलोक यानी सुषुप्ति श्रवस्था
द्धे=दो		स्थानम्	श्रवस्था
प्व≕ईा		च=धार	
स् थाने=स्थान		तृतीयम्=त	
व=भवरय			(इन दोनों लोकों या अवस्थाओं को मिलानेवाला
भवतः=हैं		(1-41)	भिलानेवाला

स्वप्रस्थानम्=स्वप्रस्थान है तस्मिन्=तिस संध्ये=बीच के स्थाने=स्थान में यानी स्वप्न में जाकर एते=यह जीवाश्मा उभे≕दोनों स्थाने=स्थानोंको यानी इद्म्≔इस जन्म च=श्रीर परलोक-) = धानेवाले जन्मसहित स्थानम्) = कर्मफलको पश्यति=देखताहै यानी भोगता च=श्रीर श्रयम्≕यही जीव परस्रोकस्थाने=परस्रोक में यथाक्रमः=कर्मानुसार फलाश्रय भवति=होता है + पुनः≕िकर तम्=उसी श्चाश्चयम्=ग्राश्चय को श्राक्रम्य≔प्रहण करके उभयान्≔दोनों यानी पाप्मनः=ग्रधर्मजन्य दुःखोंको च≕मौर म्रानन्दान्=धर्मअन्य सुर्खो को ्स्वयम् ज्योतिः=स्वयंप्रकाश **वाजा** पश्यति=भोगता है

+ पुनः≕िकर सः=वह जीवात्मा धत्र≕जब मस्विपिति=सोता है + तत्र=तव सर्वावतः=सब वासनासे युक्त श्रस्य≖इस लोकस्य=जाप्रत् लोक के मात्राम्=ग्रंशको श्रपादाय≕केकर + च पुनः≔भौर फिर ₹वयम्=स्वतः विहत्य=उसको मिटाकर स्वयम्=भपने से ही निर्माय=उसे निर्माणकर स्वेन=श्रपने निज भासा=प्रकाशकरके + च=धीर स्वेन=श्रपने निज ज्यो।तिषा=तेजकरके प्रस्वपिति=बहुप्रकार स्वप्तकी कीड़ा को करता है श्रत्र=इस घवस्था में श्रयम्=यह पुरुष:=जीवात्मा भवति=होता है

भावार्थे।

पूर्व में जो कुछ कहागया है उसी को स्वप्न के दृष्टान्त से कहते हैं, इस जीवात्मा के रहने के दोही स्थान हैं, एक तो यह जोक आर दूसरा परलोक है अथवां एक जाप्रतस्थान है, ओर दूसरा सुष्प्रिस्थान है, भौर इन दोनों की संधि तृतीय स्वप्रस्थान है, इस तृतीय स्थान में स्थित होकर यह जीवात्मा दोनों स्थानों को देखता है, श्रीर जैसे जन्म के अप्रतन्तर मरुगा और मरुगा के अनन्तर जन्म होता है, वेंसेही जाग-र्गा के श्रानन्तर स्वप्न श्रीर स्वप्न के श्रानन्तर जागरगा होता है, श्रीर जैसे जागरगा के छोर स्वप्न के मध्य में एक अवस्था होती है, वैसेही क्षोक ऋरेर परलोक के मध्य एक संधि होती है, वही स्वप्रश्रवस्था है, उसीमें जीवारमा इस जन्म और अग्रिम जन्म के कर्मफल को देखता है. श्रीर वहीं जीव परलोक में कर्मानुसार फलाश्रयवाला होता है, श्रीर फिर उसी आश्रय को प्रहरा करके दोनों यानी अधर्मजन्य दु:खों को श्रीर धर्मजन्य सुखों को भोगता है, श्रीर अब वह जीवात्मा सो जाता है तब सब वासनार्थ्यों से मुक्त होताहुत्रमा जाप्रतुत्रवस्था के श्रंश को प्रहरा कर झीर फिर उसको मिटाकर अपने से ही निर्माण कर अपने निज प्रकाश करके बहुत प्रकार स्वप्नकी कीड़ा को करता है, इस अवस्था में यह जीवात्मा स्वयं प्रकाशवाला होता है, सर्याहि ज्योतिकी श्रपेक्षा नहीं रखता है, श्रपनीही ज्योतिकी सहायता करके श्रनेक कीड़ा को करता है।। १।।

मन्त्रः १०

न तत्र रथा न रथयोगा न पन्थानो भवन्त्यथ रथान्ययोगा-न्पथः सजते न तत्रानन्दा मुदः प्रमुदो भवन्त्यथानन्दान्मुदः प्रमुदः सजते न तत्र वेशान्ताः पुष्करिष्यः। स्रवन्त्यो भवन्त्यथः वेशान्तान्पुष्करिग्गीः स्रवन्तीः सजते स हि कर्ता।।

पदच्छेदः ।

न, तत्र, रथाः, न, रथयोगाः, न, पन्थानः, भवन्ति, श्रथ, रथान्, रथयोगान्, पथः, सृजते, न, तत्र, श्रानन्दाः, सुदः, प्रसुदः, भवन्ति, श्रथ, श्रानन्दान्, सुदः, प्रसुदः, सृजते, न, नत्र, वेशान्ताः, पुष्करिगयः,

स्रवन्त्यः, भवन्ति, अथ, वेशान्तान्, पुष्किरिग्गीः, स्रवन्तीः, सृजते, सः, हि, कर्त्ता ॥

अन्वयः

पवार्थाः अन्वयः पदार्थाः

तत्र=उस स्वमावस्था में न≕न

रथाः=स्थादिक भवन्ति=होते हैं

न=न

रथयोगाः=बोड़े म्रादिक होते हैं

च=श्रीर

न=न पन्थानः=रास्ते होते हैं

श्रथ=परम्त

सः≔वह जीवात्मा रधान्⇒रथोंको

रथयोगान्=घोदों को पथः=मार्गी को

+ स्वकीडार्थम्=श्रपनी क्रीड़ा के लिये

स्रजते=रचलेता है

तत्र=उस स्वमावस्था में श्चानन्द्ाः=पुगयजन्य भानन्द

सुद्ः=हर्ष

प्रमुदः=ग्रतिहर्ष

स=नहीं भवन्ति=होते हैं

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजन्! स्वप्रश्चवस्था में न रथादिक होते हैं, न घोड़े आदिक होते हैं, और न मार्ग होते हैं, पग्नतु स्वप्नद्रष्टा रथोंको, घोडों को, मार्गी को अपनी कीड़ा के लिये रच लेता है, उसीतरह सामान्य सुख, पुत्रादिसम्बन्धी हर्प, झतिहर्ष, स्वप्ना-

श्रथ=परन्तु श्चानन्दान्=श्चानन्द मुदः≔मोद प्रमुदः=प्रमोद को सुजते=पैदा करलेता है

तत्र=उस स्वप्नावस्था में

वेशान्ताः=सरोवर पुष्करिएय:=तासाब

स्रवन्त्यः≔नदियां न=नहीं

भवन्ति=होती हैं

श्रथ=परन्त वेशान्तान्=सरोवरॉ

+ च=श्रोर पुष्करिगीः=तालावीं

> + च=श्रोर स्त्रवन्तीः=नदियां को

स्जते=बनालेता है हि=क्योंकि

सः=वह

+ स्वप्ने=स्वप्नावस्था में कर्ता≃कर्ताधर्ता है

वस्था में नहीं होते हैं, परन्तु यह जीवात्मा आनन्द और मोद और प्रमोद को रच लेता है, भ्योर इसीप्रकार स्नान अथवा जलकीड़ा के लिये सरोवर, तालाब, नदियों को जो स्त्रप्रश्चवस्था में नहीं होती हैं यह जीवात्मा रचलेता है, क्योंकि स्वप्नश्रवस्था में वह पुरुष कर्त्ता धर्त्ता होता है ॥ १० ॥

मन्त्रः ११

तदेते श्लोका भवन्ति । स्वमेन शारीरमभिषहत्यासुप्तः सुप्ता-नभिचाकशीति । शुक्रमादाय पुनरेति स्थानथं हिरएमयः पुरुष एकदृष्ठंसः ॥

पदच्छेदः।

तत्, एते, रलोकाः, भवन्ति, स्वप्नेन, शारीरम्, श्रभिप्रहत्य, श्रसुप्तः, सुप्तान, श्रभिचाकशीति, शुक्रम्, श्रादाय, पुनः, एति, स्थानम्, हिर-यमयः, पुरुषः, एकहंसः ॥

श्चन्ययः

पदार्थाः

अन्वयः

पदार्थाः

पुनः=फिर शुक्रम् =सब इन्द्रियों की तेज

मात्रा को

श्रादाय=लेकर

स्थानम् =जागरित स्थान को पति=जाता है

+सः=वही

हिरएमयः=प्रकाशमान

पुरुषः=सब पुरियों में रहने-वाला है

सः एव=वही

एक हुंसः= { श्रकेबा बोकों में गमनागमन करने-बाजा के

तत्=उस पूर्वोक्न विषय में धते=ये आगेवाले श्लोकाः=मन्त्र प्रमाणाः=प्रमाण भवन्ति=हैं स्वप्नेन=स्वप्न के द्वारा **शारीरम्=पाद्यभौ**तिक शरीर को अभिप्रहत्य=इन्द्रियों के सहित चेष्टारहित करके श्रसुप्तः=स्वयम् जागताहुत्रा

सुप्तान्= { श्रन्तःकरण की वृत्तिके श्राश्रित सब पदार्थों को श्रभिचाकशीति=देखता है

+ च=भीर

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं, हे राजा जनक ! यह जीवातमा स्वप्न के द्वारा स्थल पाञ्चभौतिक शरीर को अपीर इन्द्रियों को चेष्टारहित करके स्वयं जागता हुआ। अन्तःकरणा की वृत्ति के सब पदार्थों को देखता है, यानी उसका साक्षी बनता है, इतना स्वप्नश्रवस्था का वर्गान करके याज्ञवल्क्य महाराज फिर कहते हैं कि. हे जनक राजा! यह जीवात्मा इन्द्रियों के तेज को िलये हुये स्वप्नस्थान से जामत्स्थान को आता है, यही प्रकाशमान होता हुआ सब पुरियों में रहनेवाला है. यही अकेला लोकों में गमनागमन करनेवाला है ॥ ११ ॥

मन्त्रः १२

पाणेन रक्षत्रवरं कुलायं बहिष्कुलायादमृतश्चिरत्वा । स ईयते-मृतो यत्र कामछं हिरएमयः पुरुष एकहछंसः ॥

पवच्छेदः ।

प्राग्णेन, रक्षन्, अवरम्, कुलायम्, बहिः, कुलायात्. अमृतः. चरित्वा, सः, ईयते, अमृतः, यत्र, कामम्, हिरयमयः, पुरुषः, एकहंसः ॥ पदार्थाः श्रन्वयः पदार्थाः **अ**न्वयः बहिश्चरित्वा=बाहर विचरता हुमा

प्रातान=प्राण करके

श्वरम्=श्रुद कुकायम्=शरीर को

रक्षन्≕रक्षा करता हुम्रा असृतः≔मरण धर्म से रहित

होता हम्रा हिरएमयः=स्वयं ज्यातिःस्वरूप पुरुषः=सबशरीरों मेंरहनेवाला

एकहँसः=अकेला लोकों में मगन

करनेवासा जीवातमा

भावार्थ ।

अमृतः=अमृतरूप होता हुआ यत्र≃जिस जिस विषय में

कामम्=कामना की

ईयते=इच्छा करता है

तत्र≔उसी उसी में

+ सः≔वह पति=पाप्त होता है

याज्ञवहन्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! प्रांगा करके

अध्युद्ध शरीर की रक्षा करता हुआ, मरगाधर्म से रहित होता हुआ, स्वयं क्योति:स्वरूप, सब शरीरों में रहनेवाला, अकेला जो लोकों में गमन करनेवाला जीवात्मा है वह बाहर विचरता हुआ और अध्यत-रूप होता हुआ जिस जिस विषय की कामना करता है उसी उसी को वह प्राप्त होता है।। १२॥

मन्त्रः १३

स्वमान्त उच्चावचमीयमानो रूपाणि देवः कुरुते बहूनि । उतेव स्त्रीभिः सह मोदमानो जक्षदुतेवापि भयानि पश्यन् ॥

पदच्छेदः ।

स्वप्रान्ते, उश्वावचम्, ईयमानः, रूपाणि, देवः, कुरुते, बहूनि, उत, इव, स्त्रीभिः, सह, मोदमानः, जक्षत्, उत, इव, स्र्रापि, भयानि, पश्यन् ॥ स्नन्वयः पदार्थाः स्नन्वयः पदार्थाः

उद्यावचम्=भनेक ऊंच नीच

योतियों को

जक्षत् इव= { बन्धु मित्रादिकों के साथ ईसता हुआ या और कभी

ईयमानः=प्राप्त होता हुआ

देवः≕दिष्य गुणवाला

जीवास्मा

बहुनि=बहुत से रूपाशि=रूपों को

कुरुते=वासनावश उत्पन्न

करता है

उत=घोर कभी इव=मानो स्त्रीभिः≔िश्वयों के सह=साथ मोदमानः⇒रमण करता हुन्ना

+ श्रथवा=श्रथवा भयानि=भयजनक व्याव्रसिंह

आदिको

पश्यम्=देखता हुन्ना स्वप्रान्ते=स्वप्रस्थान में

+क्रीडमानः } =कीड्रा करता है + भवति }

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! यह दिव्य गुरा-वाका जीवात्मा ऊंच नीच योनियों को प्राप्त होता हुआ अनेक रूपों को वासनावश उत्पन्न करता है, और उनके साथ विहार करता है, कभी विद्वान होकर शिष्य को पढ़ाता है, और कभी शिष्य बनकर पहता है, कभी बन्धु मित्र आदिकों के साथ हैंसता है, और कभी स्त्रियों के साथ रमगा करता है, श्रीर कभी भयानक ज्याघ्र विंह श्रादि जीवों को देखता है, इस प्रकार यह स्वप्न में श्रमेक कीड़ा करता है।। १३।।

भ्याराममस्य पश्यन्ति न तं पश्यति कश्चनेति । तं नायतं बोध-येदित्याहुः । दुर्भिषज्य छं हास्मै भवति यमेष न प्रतिपद्यते । अयो खब्बाहुर्जागरितदेश एवा उस्यैष इति यानि होव जाग्रत्पश्यति तानि सुप्त इत्यत्राऽयं पुरुषः स्वयं ज्योतिर्भवति सोऽहं भगवते सहस्रं ददा-म्यत ऊर्ध्व विमोक्षाय ब्रहीति ॥

पदच्छेदः ।

आरामम्, अस्य, पश्यन्ति, न, तम्, पश्यति, कश्चन, इति, तम्, न, आयतम्, बोधयेत्, इति, आहुः, दुर्भिषज्यम्, ह, अस्मै, भवति, यम्, एषः, न, प्रतिपद्यते, श्रयो, खलु, श्राहुः, जागरितदेशे, एव, श्रास्य, एषः, इति, यानि, हि, एव, जाप्रत्, पश्यति, तानि, सुप्तः, इति, अत्र, श्रायम्, पुरुषः, स्वयम्, ज्योतिः, भवति, सः, श्राहम्, भगवते, सहस्रम्, ददामि, श्रातः, ऊर्ध्वम्, विमोक्षाय, ब्रहि, इति ॥

पदार्थाः श्चन्ययः पदार्थाः

+ जनाः=सब खोग श्रस्य=इस जीवात्मा के आरामम् =कीड्रस्थान को तो पश्यन्ति=देखते हैं + परन्तु=परन्तु कश्चन=कोई भी

तम्=उस जीवात्मा को + त्रातिसृक्ष्मात्=त्रतिसृक्ष्म दोने के

न=नहीं

पश्यति=रेखता है

+ यथा=जैसे

+ शिशः≔बातक

+ऋोडया रे ≕कीड़ा की समाप्ति पर

+ उदास्ते=उदास भ्रमसन्त होजाता है

+ तथा एवम्=वैसेही

+ सुप्तात्=स्वम से

+ पुरुषः उत्थाय=पुरुष उठ कर

+ उदास्ते=मसप्रज होजाता है + अतः=इस जिये श्रायतम्=सोये हुवे पुरुष को न=महीं बोधयेत्⇒जगाना चाहिये इति=ऐसा आहुः≔कोई माचार्य कहते हैं + हि=क्येंकि यम्=िनस देश में एषः=यह पुरुष न≔नहीं प्रतिपद्यते=जा सका है ह≕निश्चय करके ऋस्मै=उस देश के ब्रिये दुर्भिषज्यम् } ्विकित्सा दुष्कर भवति } होजाती है अधो=कोई माचार्य खलु≕निश्चय करके झाडुः≔कहते हैं कि श्चस्य=इस सोये पुरुष की एषः=यह दशा एव≕निस्सन्देह जागारितदेशे=जाप्रत् भवस्था की ऐसी है हि=क्योंकि यानि=जिनको

जाप्रत्=जागताहुमा पश्यति=देखता है तानि=उन्हीं को सुप्तः=सोताहुवा सम्राट=हे राजन् ! श्चत्र=इस स्वप्नावस्था से पश्यति=रेखता है श्रयम्≕यह पुरुषः=पुरुष स्वयम्=स्वयम् ज्योतिः=प्रकाशस्वरूप भवति=होता है इति≕ऐसा + श्रुत्वा=मुनकर जनकः=राजा जनक उवाच=बोले कि सः=वही श्रहम्≔में बोधित हुआ भगवते=भाप पुज्य के किये सहस्रम्=हजार गौद्रों को ददामि=देताई श्रतः≔इसके अर्ध्वम् =द्यागे विमोक्षाय=मोक्ष विषयक ब्रहि=भाष उपदेश करें

भावार्थ ।

याज्ञवस्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! सब लोग जीवात्माकी क्रीड़ा को तो देखते हैं, पर कोई जीवात्मा को अतिसूक्ष्म होनेके कारणा नहीं देखता है, जैसे शिशु क्रीड़ा करते करते जब निवा- रगा होजाता है, तब वह अप्रसन्न या उदासीन प्रतीत होता है, इसी प्रकार स्वप्न में क्रीड़ा करनेवाले जीवात्मा को जब कोई जगाता है तब श्चगर वह झच्छा स्वप्न देखता है तो जागने पर श्रप्रसन्न प्रतीत होता है, क्योंकि जो झ्रानन्द उसको उस स्वप्न में मिल रहा था वह दूर होगया इस ख्याल से कोई कोई स्त्राचार्य कहते हैं कि सुपुप्त पुरुष को विशेष करके जब वह गाढ़ निद्रा में रहता है एकाएक न जगाना चाहिये, क्योंकि ऐसा करने से उसके शरीर को हानि पहुँचती है, श्रीर दूसरा पुरुष **उसके पास उस श्र**वस्था में न पहुँचने के कारण इस सोयेहुये पुरुष की दवाई नहीं करसक्ता है, कोई स्त्राचार्य ऐसा कहते हैं कि, जाप्रत् स्त्रोर स्वप्न में कोई भेद नहीं है, जिस पदार्थ को पुरुष जाग्रत में देखता है, उसीको स्वप्न में भी देखता है, न जीवात्मा कहीं जाता है, न कहीं श्राता है, इसलिये सुपूत पुरुष के सहसा जगाने में कोई क्षति नहीं है, हेराजा जनक ! स्वप्नद्भावस्था में यह पुरुष स्वयं प्रकाशरूप होता है, ऐसा सुनकर राजा जनक बोले हे मुने ! मैं बोधित होताहुआ। आप पूज्यपाद के लिये एक सहस्र गौद्यों को देताहूं, हे भगवन् ! आप कृपा करके मुक्तिविषयक उपदेश मुक्तको करें।। १४ ॥

मन्त्रः १५

स वा एष एतस्मिन्संप्रसादे रत्वा चरित्वा दृष्ट्वैव पुएयं च पापं च पुनः प्रतिन्यायं प्रतियोन्याद्रवति स्वमायेव स यत्तत्र किंचित्प-रुयत्यनन्वागतस्तेन भवत्यसङ्गो ह्ययं पुरुष इत्येवमेवैतद्याइवल्क्य सोऽहं भगवते सहस्रं ददाम्यत ऊर्ध्व विमोक्षायेव ब्रूहीति ॥

पदच्छेदः ।

सः, वा, एषः, एतस्मिन्, संप्रसादे, रस्त्रा, चरित्वा, दृष्ट्वा, एव, पुरायम्, च, पापम्, च, पुनः, प्रतिन्यायम्, प्रतियोनि, आद्रवित, स्त्रप्राय, एव, सः, यत्, तत्र, किंचित्, पश्यित, आनन्वागतः, तेन, भवित, आसङ्गः, हि, आयम्, पुरुषः, इति, एवम्, एव, एतत्, याज्ञवल्नय,

सः, श्रहम्, भगवते, सहस्रम्, ददामि, श्रतः, ऊर्ध्यम्, विमोक्षाय, एव, ब्रुहि, इति ॥

भ्रान्वयः सः वै≔वही पदार्थाः श्रम्बयः

पदार्थाः तेन=स्वप्नपदार्थ से

एषः=यह जीवास्मा

रत्त्रा=बन्धु स्त्री श्रादिकों से

क्रीड़ा करके

चरित्वा=इथर उधर विचरकरके पुरायम्=पुरयजन्य सुखको

च≕ग्रौर

पापम् च=पापजन्य दुःख को

एच=श्रवश्य

ष्ट्या=देखकर

एतस्मिन् रे इस सुषुप्ति श्रवस्था संप्रसादे ५ में

+ याति=जाता है

पुनः≕फिर

प्रतिन्यायम्=जिस शहसे गयाथा उसके

प्रतियोनि=प्रतिकृत मार्गकरके स्वप्नाय एव=स्वमस्थान के वास्ते आद्रवति=जोट त्राता है

हि≔क्योंकि

यत=जो

किंचित्⇒कुष

सः=वह जीवास्मा

तत्र=स्वप्त मे

पश्यति=देखता है

श्चनन्धागतः=श्रनुबद्ध नहीं

भवति=होता है

+ हि=क्योंकि

श्रयम्≔यह

पुरुषः=पुरुष

+ वस्तुतः=वास्तव करके त्रसङ्गः=त्रसङ्ग है

+ जनकः=जनक ने

+ श्राह=कहा

याञ्चवल्क्य≔हे याज्ञबरु∓य महा-

राज!

पतत्=यह पवम् पय=ऐसाही है जैसा भाप कइते हैं

सः=वही

श्रहम्=में

भगवते=भाप प्रमके लिये सहस्रम्=हजार गौधों को

ददामि=दक्षिणा में देताहूं

श्रतः≔इससे

ऊर्ध्वम्≕शगे

विमोक्षाय=मुक्ति के लिये मृहि इति=उपदेश दीजिये

भावार्थ।

याज्ञवरूक्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! यह जीवात्मा

स्वप्रधावस्था में बन्धु, मित्र, की धादिकों के साथ कीड़ा करके इधर उधर बिचर करके पुरायजन्य सुख को, पापजन्य दु:ख को भोग करके सुप्रिधावस्था में जिसको संप्रसाद ध्यवस्था भी कहते हैं प्रवेश करता है वहांपर जाग्रत धौर स्वप्र में देखी वस्तु को भूजजाता है, धौर इस्त्र काल रहकर जिस मार्ग से गया था उसके प्रतिकूल मार्ग करके स्वप्रावस्था के लिये लौट धाता है, क्योंकि जो इन्द्र वह स्वप्रात्मा स्वप्र में देखता है उस स्वप्रपदार्थ से वह नहीं वद्ध होता है, क्योंकि वह पुरुष वास्तव करके ध्यसङ्ग है, इसपर जनक महाराज कहते हैं कि, हे याज्ञवल्क्य, महाराज ! यह ऐसाही है जैसा धापने कहा है, वहीं में धाप पूज्य के लिये सहस्न गौओं को दक्षिणा में देताहूं, धाप कृपा करके मुक्ति के लिये उपदेश दीजिये ॥ १५ ॥

मन्त्रः १६

स वा एष एतिस्मन्स्वमे रत्वा चिरत्वा दृष्ट्वेव पुएयं च पापं च पुनः प्रतिन्यायं प्रतियोन्याद्रवति बुद्धान्तायैव स यत्तत्र किंचित्पश्य-त्यनन्त्रागतस्तेन भवत्यसङ्गो श्चयं पुरुष इत्येवमेवैतद्याङ्गवल्क्य सोऽहं भगवते सद्द्सं द्दाम्यत ऊर्ध्व विमोक्षायैव बृहीति ॥

पदच्छेदः ।

सः, वै, एषः, एतस्मिन्, स्वप्ने, रत्वा, चरित्वा, दृष्ट्वा, एव, पुरायम्, च, पापम्, च, पुनः, प्रतिन्यायम्, प्रतियोनि, झाद्रवति, बुद्धान्ताय, एव, सः, यत्, तत्र, किंचित्, पश्यित, झान्वागतः, तेन, भवित, झासङ्गः, हि, झायम्, पुरुषः, इति, एवम्, एव, एतत्, याज्ञवत्क्य, सः, झाह्म्, भगवते, सहस्रम्, दृदामि, झातः, ऊथ्वर्म्, विमोक्षाय, एव, शृहि, इति ॥

श्रस्वयः प्रदाश

पदार्थाः | अन्वयः

पदार्थाः

सः वै=वही एषः=यह जीवात्मा पतस्मिन्=इस स्वप्रे=स्वम में

रत्वा=मित्रों से रमण करके चरित्वा=बहुत जगह विचर करके पुरायम् च=पुरायजन्य सुखको च=श्रीर पापम्=पापजन्य दुःख को एव≔श्रवश्य ह्या=भोग करके पुनः=िकर पीछे प्रतिन्यायम्=जिस कम से गया था उससे उद्धरा प्रतियोनि=अपने स्थान के प्रति बुद्धान्ताय=जाप्रदवस्था के लिये **आद्र**चति=दौड़ता है सः≔वह जाव्रत् श्रातमा यत्≔जो किंचित्=कुछ €वप्र≃स्वप्र में पश्यति=देखता है तेन≕तिंस करके सः=वह अनन्वागतः=बद्ध नहीं भवति=होता है

हि=क्योंकि श्रयम्=यह पुरुषः=पुरुष हि=निस्सन्देह श्रसङ्गः=श्रसङ्ग है इति=इस पर जनकः=राजा जनक ने आह=कहा + याञ्चवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य! एतत्=यह एव=निश्चय करके एवम्=ऐसाही है याज्ञवल्क्य≔हे ऋषे ! सः=बोधित हुन्ना वही श्रहम्=में भगवते=आप पुज्य के लिये सहस्रम्=हजार गौत्रों को ददामि=त्रापके लिये ऋपंग करता हं श्रतः≔इससे ऊर्ध्वम्=श्रागे विमोक्षायैव=मुक्ति के लिये ही बृहि=उपदेश करिये

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! यह जीवात्मा स्वप्न में मित्रों से रमण् करके बहुत जगह विचर करके छोर पुरायजन्य सुखको, पापजन्य दु:ख को भोग करके स्वप्न के दूर होजाने पर जिस मार्ग से यह गया था उसके प्रतिकूल मार्ग से अपने जाप्नत् स्थान के लिये दौड़ खाता है, छोर जो कुछ कि स्वप्न में देखा है उस करके बद्ध नहीं होता है, क्योंकि यह पुरुप असङ्ग है, इस पर राजा जनक कहते हैं कि, हे मुने, याज्ञवल्क्य ! निस्सन्देह यह ऐसाही है जैसा आपने कहा है, मैं आप पूज्य के लिये एक सहस्र गौओं को आपकी सेवा में आपींग् करता हूं, इसके आगे मुक्ति के प्रकरण को उठाइये, और उपदेश की जिये ॥ १६ ॥

मन्त्रः १७

स वा एष एतिस्मिन्बुद्धान्ते रत्वा चरित्वा दृष्ट्वेव पुरायं च पापं च पुनः प्रतिन्यायं प्रतियोन्याद्रवति स्वप्नान्तायेव ॥

पदच्छेदः ।

सः, वै, एषः, एतस्मिन्, बुद्धान्ते, रत्वा, चरित्वा, दृष्ट्वा, एव, पुरायम्, च, पापम्, च,पुनः, प्रतिन्यायम्, प्रतियोनि, श्वाद्भवति, स्वप्नान्ताय, एव ॥ श्वन्वयः पदार्थाः श्रन्वयः पदार्थाः

सः वै=वही प्षः≔यह जीवात्मा षतस्मिन्=इस बुद्धान्ते=जाप्रत् श्रवस्था में रत्वा=मित्रों सेरमण करके चरित्वा=बहुत जगह विचर

पुरायम् च=पुराय को

ह्यू =देख करके पुनः=फिर प्रतिन्यायम्=प्रत्यागमन से प्रतियोनि=अपने प्रतिकृत स्थान स्वप्नान्ताथेव=स्वमग्रवस्था के बियेद्री श्राद्ववति=शैक्ता है

च≕श्रौर

षापम्=पाप को

भावार्थ ।

याज्ञवत्क्य महाराज कहते हैं कि, हे सम्राट्! जाप्रत् अवस्था में मित्रों से रमगा करके वहुत जगह विचर करके पुरायजन्य सुख को और पापजन्य दुःख को भोग करके यह जीवात्मा फिर प्रत्यागमन से अपने स्थान स्वप्नावस्था के लिये दौड़ता है।। १७॥

मन्त्रः १८

तचथा महामत्स्य उभे कूले श्रनुसंचरति पूर्व चाऽपरं चैवमेवाऽयं पुरुष एताबुभावन्तावनुसंचरति स्वमान्तं च बुद्धान्तं च ॥

बृहदारययकोपनिषद् स०।

पदच्छेदः ।

तत्, यथा, महामत्स्यः, उभे, कूले, अनुसंचरति, पूर्वम्, च, अपरम्, च, एवम्, एव, अयम्, पुरुषः, एतौ, उभौ, अन्तौ, अनुसंचरति, स्वप्नान्तम्, च, बुद्धान्तम्, च ॥

श्रन्वयः

पदार्थाः अञ्चयः

पदार्थाः

तत्≕कपर कहे हुथे विषय में + दृष्टान्तः≔दृष्टाम्त है कि यथा≕जैसे

महामत्स्यः=बड़ी मछ्जी पूर्वम्=नदी के पूर्व

च=धौर

अपरम्=श्रपर उभे=दोनों तीरों में

श्रनुसंचरित=िकरती रहती है

एवम्=इसी प्रकार

एच=िनरचय करके

पुरुषः=पुरुष प्रच=निरुचय करके

अयम् एव=यह

प्य≕गरचय करक पतौ=उन दोनों यानी

स्वप्नान्तम्

च्य स्वप्न के भीर बुद्धान्तम् जागरण के अन्त

उभी=होनों स्थानों को श्रनुसंचरति=धाता जाता रहता है

भावार्थ ।

हे राजा जनक ! उत्पर जो विषय कहा गया है, उस विषय में नीचे एक दृष्टान्त है उसको सुनो, मैं कहता हूं; जैसे मत्स्यराज नदी के दोनों तटों के बीच घूमा फिरा करता है कभी इस पार और कभी उस पार इसी प्रकार यह जीवात्मा कभी जागरण से स्वप्न को जाता है और कभी स्वप्न से जागरण को आता है ॥ १८॥

मन्त्रः १६

तचथास्मित्राकारो स्येनो वा सुपर्णो वा विपरिपत्य श्रान्तः सर्धः इत्य पक्षौ संलयायैव ध्रियत एवमेवाऽयं पुरुष एतस्मा अन्ताय धावति यत्र सुप्तो न कंचन कामं कामयते न कंचन स्वमं पश्यति ॥

पदच्छेदः ।

तत्, यथा, भ्रास्मिन्, श्राकाशे, श्येनः, वा, सुपर्गाः, वा, विपरि-

पत्य, श्रान्तः, संहत्य, पक्षी, संलयाय, एव, ब्रियते, एवम्, एव, श्रायम्, पुरुषः, एतस्मै, श्रन्ताय, धावति, यत्र, सुप्तः, न, कंचन, कामम्, काम-यते, न, कंचन, स्वप्नम्, पश्यति ॥

ग्रन्वयः

पदार्थाः श्चन्त्रयः पदार्थाः

यह पुरुष स्वमान्त श्रीर बुद्धान्त स्थानों तत्= को छोड़ सुपुप्ति / श्रवस्था को चाहता

+ इप्रान्तः=दृष्टान्त दिया जाता

एवम् एव=इसी प्रकार श्रयम्=यह पुरुष:=जीवात्मा पतस्मै=इस

श्रन्ताय=सुषुप्ति स्थान के **क्षिये**

यथा≔जैसे श्चाकाशे≕श्राकाश में

श्येनः≔वाज वा≃त्रथवा

सुपर्गः≔गरङ्

विपरिपत्य=उड़ कर आन्तः=थका हुम्रा

संलयाय=विश्राम के लिये पक्षी=श्रपने दोनों पक्षों को

संहत्य=फैलाकर

भ्रियते=श्रपने घोंसले जाकर बैठता है

धावति=दौड़ता है यत्र≈जिसमें

सुप्तः≔वह सोया हुआ

कंचन=किसी

कामम्=विषय की

न=नहीं कामयते=इच्छा करता है

+ च≃धौर न कंचन≕न किसी

स्वप्नम्=स्वप्न को पश्यति=देखता है

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! जैसे पुरुष स्वप्न अवस्था से जाप्रत्अवस्था में जाता है, या जैसे जाप्रत्अवस्था से स्वप्न अवस्था को जाता है, या जैसे स्वप्न से सुपुप्ति में जाता है, इसके विषय में नीचे दृष्टान्त दियाजाता है, श्राप सुनें, मैं कहताहूं, हे राजन् ! जैसे आकाश में श्येन (बाज) नामक पक्षी अध्यवा गरुड़ जीविकार्थ या केवल कीड़ार्थ उड़ते उड़ते थक जाता है झौर विश्राम के लिये झपने दोनों पश्चों को पसारेहुये अपने घोंसले में जाकर बैठ जाता है, उसी प्रकार यह जीवात्मा जाग्रत् और स्वप्रअवस्था में अनेक कार्य करता हुआ जब विश्राम नहीं पाता है, तब वह इस प्रसिद्ध सुपुपिअवस्था के लिये दौड़ता है, जिसमें पहुँचकर न किसी बस्तु की इच्छा करता है, और न स्वप्र को देखता है, यह अवस्था उसको अतिसुखदायी होती है। १९॥

मन्त्रः २०

ता वा अस्येता हिता नाम नाड्यो यथा केशः सहस्रधा भिन्न-स्तावतािश्रातिष्ठन्ति शुक्रस्य नीलस्य पिङ्गलस्य हरितस्य लोहि-तस्य पूर्णा अथ यत्रेनं घ्रन्तीव जिनन्तीव हस्तीव विच्छाययति गर्तिमिव पतिति यदेव जाग्रद्धयं पश्यित तदत्राऽविद्यया मन्यतेऽथ यत्र देव इव राजेवाऽहमेवेद्धं सर्वोऽस्मीति मन्यते सोऽस्य परमो लोकः॥

पदच्छेदः ।

ताः, वा, श्रस्य, एताः, हिताः, नाम, नाडवः, यथा, केशः, सह-स्राधा, भिन्नः, तावता, श्रागिन्ना, तिप्टन्ति, शुक्तस्य, नीस्तस्य, पिङ्गस्तस्य, हरितस्य, स्रोहितस्य, पूर्णाः, श्रथ, यत्र, एनम्, प्रन्ति, इव, जिनन्ति, इव, हस्ती, इव, विन्छाययति, गर्तम्, इव, पति, यत्, एव, जाप्रत्, भयम्, पश्यति, तत्, अत्र, श्रविद्या, मन्यते, श्रथ, यत्र, देवः, इव, राजा, इव, श्रहम्, एव, इदम्, सर्वः, श्रास्म, इति, मन्यते, सः, श्रस्य, परमः, लोकः ॥

श्चान्वयः

पदाधोः अन्वयः

पदार्थाः

प्रन्वयः पदार्थाः स्रस्य=इस स्वप्रद्रष्ट पुरुपकी ताः=वे पताः=वे नाम=प्रसिद्ध हितानाड्यः=हितानामक नाहियां हें

च=धौर यथा=जैसे केशः=एक वालके सहस्राधा=इजार टुकड़े भिन्नः=भिन्न भिन्न प्रतिसुक्त

+ भवति=होते हैं तथा=तैसेही तावता≔उसीतरह + एताः=ये नाहियां भी श्रागिद्धा=श्रीतसृक्ष्मता के साथ तिष्ठन्ति=शरीर में स्थित हैं च=धौर ताः≔वे शुक्कस्य=सफेद नीलस्य=नीबे पिङ्गलस्य=पीबे हरितस्य=हरे बोहितस्य=लालरङ्गांके रसोंकरके पुर्णाः=परिपूर्ण हैं হ্যথ=শ্বৰ यत्र=जिस स्वप्नावस्था में श्चविद्या- } =श्चविद्या के कारण कारणात् + प्रतीतिः } =यह प्रतीत होता है भवति } =िक एनम्=इस स्वप्नद्रष्टा को इव=मानो + चोराः=चोर झन्ति=मार रहे हैं इव=मानो जिनन्ति=कोई भ्रपने वश में कर रहे हैं इव≔मानो हस्ती=हाथी विच्छाययति=भगाये वियेजाता है इच≕मानो + एषः=यह

गर्तम्=िकसी गडे में पतति=गिर रहा है + सम्राट्ट=हे राजन् ! जाग्रत्=जाग्रत् श्रवस्था में यत्≕जो जो वस्तु पव≕निश्चय सहित पश्यति=देखता है तत्≕उसी उसी को श्रत्र=स्वप्तमें भी स्वम को कहते हैं श्चाथ≕ग्रीर यत्र=जिस समय + स्वप्रद्र्ष्टा=स्वम का देखनेवाला मन्यते=मानता है कि श्रहम् इच=मैं विद्वान् के ऐसा हं देवः इव=देव के समान हं श्रहम्=में राजा=राजा हं इदम्=यह सब दश्यमाञ्र श्रहम् एव≕में ही हं तदा=तष ग्रस्य≔इस जीवात्मा का सः=वह परमः≔श्रेष्ठ

लोकः=भवस्था है

भावार्थ ।

याज्ञबल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! जीवारमा की क्रीड़ा के जिये इस शरीर में बहुत सी प्रसिद्ध नाड़ियां हैं, वे हितानाम करके कही जाती हैं, क्योंकि वे हित करनेवाली हैं, ये नाडियां एक बाल के सहस्र टुकड़ों के एक टुकड़े के बराबर श्रातिसूक्ष्म हैं, श्रीर ये नाड़ियां नीले, पीले, श्वेत, हरित ऋौर छोहित रंगकी हैं, हे जनक ! जिस स्वप्न अवस्था में अविद्या के कारगा स्वप्नद्रष्टा को ऐसा प्रतीत होता है कि मानो कोई उसको मार रहा है, मानो कोई उसको अपने वश में कर रहा है, मानो हाथी उसको भगा रहा है, हे राजन ! यह जीवात्मा जागता हुआ जो जो भयादिक देखता है उसी उसी को स्वप्न अवस्था में भी देखता है, श्रीर श्रज्ञानता के कारणा उसको उस अप्रवस्था में सत्य मानता है, हे जनक ! यह निकृष्ट स्वप्न का वर्णान है, आगे उत्तम स्वप्न को सुनो मैं कहता हूं. हे राजा जनक ! जिस स्वप्न में स्वप्नद्रष्टा देखता है कि मैं विद्वान् हूं, मैं राजा हूं, मेरे पास सव प्रजा निर्माय के लिये आती है, मैं नियह अनुयह करने में समर्थ हूं, जब वह इस प्रकार स्वप्ने में देखता है, तब वडे स्थानन्द को प्राप्त होता है, आरे यह फल जाप्रत अवस्था में शुभ विचार का है, जिसकी वह स्वप्ने में देखता है।। २०॥

मन्त्रः २१

तद्वा अस्थैतद्तिच्छन्दा अपहतपाप्पाऽभयथं रूपम् । तचथा त्रियया स्त्रिया संपरिष्वक्षो न वाह्यं किंचन वेद नान्तरमेवमेवाऽयं पुरुषः प्राक्षेनात्मना संपरिष्वक्षो न वाह्यं किंचन वेद नान्तरं तद्वा अस्यैतदाप्तकाममात्मकाममकामथं रूपथं शोकान्तरम् ॥

पदच्छेदः ।

तत्, वा, भ्रस्य, एतत्, श्रातिच्छन्दाः, श्रपहतपाप्म, श्रामयम्, रूपम्, तत्, यथा, प्रियया, स्त्रिया, संपरिष्वक्तः, न, बाह्यम्, किंचन,

वेद, न, अन्तरम्, एवम्, एव, अयम्, पुरुषः, प्राझेन, आत्मना, संप-रिष्वकः, न, बाह्यम्, किंचन, वेद, न, अन्तरम्, तत्, वा, अस्य, एतत्, आप्तकामम्, आत्मकामम्, अकामम्, रूपम्, शोकान्तरम् ॥

श्चन्द्यः	पदार्थाः	ग्र न्वयः	पदार्थाः
श्चस्य=इस सुरु		पुरुषः≕	वुषुप्त पुरुष
∙ तत्=वही	_	श्चात्मना=	
प्तत्=यह			विज्ञान श्रानन्द से
रूपम्=रूप		संपरिष्वक्रः रे	गाविका सेवा स्वा
श्चतिच्छन्दाः=कामराह	त	+ सन् ∫ ं	ब्रालिङ्गित होता हुन्ना
श्रपहतपाष्म=पाप पुर	यरहित	==	
श्रभयम्=भयरहिः		किंचन=	
+ श्र€त=है			बाहरी वस्तुको
तत्,=इस विष	य में		ज्ञानता है
+ द्रष्टान्तः≔द्रष्टान्तः		च='	श्रीर
र्वे		न≕	
यथा=जैसे			ब्रान्तरिक वस्तुको
+ €वप्रियया=निज प्य	ारी		तानता है
क्त्रिया=खीके स		तत् वै≕ः	सी कारण
संपरिष्वक्रः=ग्रालिहि	त हुन्ना	ग्रस्य=ध	स्य पुरुष का
+ पुरुषः≔पुरुष		पतत्≕	रह
बाह्यम्=बाहरी ।	इस्तुको		नुपुप्तावस्था रूप
किंचन=बुद्ध भी		वे=(नेश्चय करके
न=नहीं			(प्राप्तकाम है यानी
धेद्≕जानता	\$	श्राप्तकामम्=	(प्राप्तकाम है यानी इस प्रवस्था में सब कामना प्राप्त हैं
च=ग्रीर			
न =न		पतत्≕य	
श्चन्तरम्≕श्चन्तरिः	क वस्तुको		श्चात्मकाभ हथाना टिस्सों केवल बहाकी
+ घेद्≕जानता	È	श्रात्मकामम्=-	श्चारमकाप है यानी इसमें केवल बहाकी प्राप्तिकी कामना बाकी है
एवम् एव≔इसी प्रव	rie		[बाकी है
श्रयम्=षद्द		श्रकामम्≕	तमरहित है

+ स्र≓पीर | शोकान्तरम्=शोकरहित भी है भावार्थ ।

याज्ञवरूक्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक! इस सुपुत पुरुष का यह वक्ष्यमाण रूप कामरहित, पापरहित, भयरहित है, इसी विषय में एक दृष्टान्त देते हैं, उसको सुनो, जैसे कोई पुरुष स्विप्रया भार्या से आलिङ्गित होता हुआ किसी बाहरी वस्तु को नहीं जानता है, इसी के अनुसार सुपृति अवस्था में सुखमोक्ता पुरुष ज्ञान और आनन्द से युक्त होता हुआ न वह बाहरी किसी वस्तु को उस अपनी अवस्था में जानता है, न आन्तरिक किसी वस्तु को जानता है, इसी कारण इस पुरुष का सुपृति अवस्थासम्बन्धी रूप निश्चय करके आप्त-काम है, यानी इसमें सब कामनायें प्राप्त हैं, अकाम भी वह है यानी ब्रह्मिको कामना से इतर और कोई उसको कामना नहीं है, और वह शोकान्त भी है, क्योंकि वह शोकरहित है।। २१।।

मन्त्रः २२

श्रत्र पितापिता भवति मातामाता लोका श्रलोका देवा श्रदेव। वेदा श्रवेदाः । श्रत्र स्तेनोऽस्तेनो भवति श्र्णहाऽश्रूणहा चाएडा-लोऽचाएडालः पोल्कसोऽपोल्कसः श्रमणोऽश्रमणस्तापसोऽतापसो-नम्वागतं पुण्येनान्वागतं पापेन तीर्णो हि तदा सर्वाऽच्छोकान्ह-दयस्य भवति ॥

पदच्छेदः ।

श्रत्र, पिता, श्रिपता, भवति, माता, श्रमाता, लोकाः, श्रालोकाः, देवाः, श्रदेवाः, वेदाः, श्रवेदाः, श्रत्र, स्तेनः, श्रदेनः, भवति, श्रूग्रहा, श्रश्र्म्णहा, चाएडालः, श्रवाएडालः, पौल्कसः, श्रपौल्कसः, श्रमणः, श्रश्रमणः, तापसः, श्रतापसः, श्रतन्वाणतम्, पुरायेन, श्रनन्वाश्वतम्, पापेन, तीर्णः, हि, तदा, सर्वान्, शोकान्, हृदयस्य, भवति ॥

पौल्कसः=शृद्धसे क्षत्रियक्षेत्र में

मुक्त + भवति=होजाता है श्रमण्:=संन्यासी

श्रश्रमणः=ग्रसंन्यासी

+ भवति=होजाता है तापसः=तपस्वी अतापसः=श्रतपस्वी

भवति=होजाता है

पुरायेन=पुषय करके

पापेन=पाप करके

हि=क्योंकि तदा=उस भवस्था में

एतत्=इस सुवुत पुरुष का

उत्पन्न पुरुष

पदार्थाः श्चन्यः श्चयः श्रचाग्**डालः=श्रचा**ग्डाब म्रत्र=गादी सुषुप्ति में + भवति=होजाता है पिता=पिता श्रापिता भवति=पितृसम्बन्ध से सुक्र होता है अधौल्कस≔अपने जातिदोष से माता=माता श्रमाता } मातृसम्बन्ध से मुक + भवति } होती है लोकाः=भ्रभितवित लोक अलोकाः = +भवन्ति | अलोक होजाते हैं यानी किसी स्वर्गा-दिलोक की हच्छा नहीं रहती है देवाः=देवता श्चदेवता होजाते हैं गानी किसी देवता का आश्चय नहीं (रहता है श्रनन्वागतम्=मसंबद्ध है वेदाः=वेद श्चवेदाः = र्श्ववेद होजाते हैं श्चवेदाः = र्थानी वेद पढ़ने की भवन्ति हुच्छा नहीं रहती है श्रनन्दागतम्=श्रसंबद्ध है द्यात्र=इस ग्रवस्था में स्तेन:=चोर श्चस्तेन:=श्रचोर भवति=होजाता है भृणहा≔गर्भपातकी

चागडालः=महानीच पतिस चा-ग्डान भी

+ पुरुषः=पुरुष हृद्यस्य=हृद्य के सर्वान्=सब शोकान्=शोकीं को अञ्जूणहा } = अगभेपातकी हो जाता है + भवति } तीर्ग्य;≔पार करनेवाला भवति= { होता है यानी उसके पास कोई शोक नहीं घाता है

भावार्थ । याज्ञवल्क्य कहते हैं कि, हे राजा जनक ! गाढ़ सुपुप्ति अवस्था में

जीवातमा को किसी पदार्थ का बोध नहीं रहता है, इसीको विस्तार पर्वक दिखकाते हैं, पिता पितृसम्बन्ध से रहित होजाता है यानी जो पिता पुत्र का घनिष्ठसम्बन्ध है उसका ज्ञान सुपुत्रपुरुप को नहीं रहता है, न पुत्रको पिता का, न पिताको पुत्र का कुछ अनुभन होता है इसी प्रकार माता मात्रसम्बन्ध से रहित होती है यानी न माता को पत्र का झान श्रीर न पुत्र को माता का ज्ञान रहता है. पुरुष को जाप्रत्श्रवस्था में बाद मरने के अब्बे लोकों को यानी स्वर्गादि लोकों को प्राप्त होऊं ऐसी इन्ह्या रहती है पर इस अवस्था में यहभी इन्ह्या नहीं रहती है. देवता श्रदेवता होजाते हैं यानी किसी देवता का आश्रय नहीं रहता है, बेद अप्रवेद होजाता है यानी वेद पढ़ने की इच्छा नहीं रहती है इस अवस्था में चौर अवोर होजाता है यानी चोर की चोरी करने का जान किंचितमात्र भी नहीं रहता है. गर्भपातकी को श्रपने गर्भपातक श्राधर्म का ज्ञान नहीं होता है, महानीच, पतित, चाएडाल भी श्रवाएडाल होजाता है, शुद्र के बीजकरके क्षत्रियक्षेत्र में उत्पन्न हुत्र्या पुरुष श्रपने जातिदोष से मुक्त हुआ रहता है, संन्यासी भी असंन्यासी हुआ दीखता है, तपस्वी श्चतपस्वी हुआ दीखता है, पुराय करके असम्बद्ध और पाप करके श्चस-म्बद्ध होता है. क्योंकि उस अवस्था में पुरुष हृदय के सब शोकों को पार करजाता है यानी उसके पास कोई शोक नहीं श्राता है ॥ २२ ॥

मन्त्रः २३

यद्वै तन्न पश्यति पश्यन् वै तन्न पश्यति न हि द्रप्रुद्देष्टेविपरि-लोपो विद्यतेऽविनाशित्वात् । न तु तद्वितीयमस्ति ततोऽन्यद्विभक्नं यत्पश्येत् ॥

पदच्छेदः ।

यत्, वै, तत्, न, पश्यति, पश्यन्, वै, तत्, न, पश्यति, न, हि, द्रष्टुः, हष्टेः, विपरिलोपः, विद्यते, श्रविनाशित्वात्, न, तु, तत्, द्विती-यम्, श्रस्ति, ततः, श्रन्यत्, विभक्तम्, यत्, पश्येत् ॥

प्रन्वयः	पदार्थाः	श्रन्वयः	पर	रार्थाः
+ सः≔वह जी	वात्मा		हि=क्योंकि	
तत्=उस सुषुप्तावस्था में		द्रष्टुः=देखनेवाले जीवात्मा		
न=नहीं			की	
पश्यति≔देखता	है	द्योः≔दर्शनशक्तिका		
यत्≕जो		विपरिका	पः=नाश	
इति=ऐसा		श्रविनाशित	प्रात्=श्रविनाशी	होनेके
+ मन्यसे=श्राप	मानते हैं		कारश्	
तत्=सो			न ≕नहीं	
+ न≔नहीं		वि	द्यते≔होता है	
+ यथार्थः=ठीक है			तु=परन्तु	
+ यथायः=शक ध + सः=वह जी		;	तत्व्=डस सुषुप्तिश्र	वस्था में
+ स्तः=वह जा स्रे=निश्च		7	ातः=डससे	
•		श्चन	यत्=भौर कोई	
पश्यन् =देखता	દુઆ	विभा	कम्=प्रथक्	
म=नहीं		. द्विती	यम्=दूसरी वस्तु	
्रदेखता है यानी वह अपने को धार पश्यांत= यपने साथियों को देखता है औरों को नहीं देखता है	ताहै यानी वह	1	न ≕नहीं है	
	न का धार जेसाकियों को		यत्=जिसको	
	न लगवयाक। ताहै झौरों को		सः≔वह	
	ं पश्	येत्=देखे		

भावाथे।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे जनक! आप ऐसा मानते हैं कि जीवात्मा सुपुित अवस्था में नहीं देखता है सो ठीक नहीं है, यह आत्मा उस अवस्था में भी देखता हुआ विद्यमान है, यानी जो उसका स्वरूप आनन्द है, और आज्ञान जिस करके वह आहत है दोनों को अनुभव करता है, क्योंकि जब सोकरके पुरुष उठता है तब पूछ्नेपर कहता है कि ऐसा आनन्द से सोया कि खबर न रही, यदि उसको आनन्द और अज्ञान का अनुभव सुपुष्ति में न होता तो जाप्रत्होनेपर उसको स्मृतिज्ञान न होता, स्मृतिज्ञान करकेही जाना जाता है कि जीवात्मा सुपुष्ति अवस्था में जो वस्तु वहां स्थित रहतीं हैं उनको वह

देखता है, और जो नहीं रहती हैं उनको वह नहीं देखता है, दर्शन-राित तो उसको उस अवस्था में भी अवश्य है, क्योंकि द्रष्टा अवि-नाशी है इसिलेय उसकी दर्शनशिक्त भी सदा विद्यमान रहती है, ऐसा होनेपर प्रश्न उठता है कि अन्य वस्तु को क्यों नहीं देखता है इसका उत्तर यही है कि उस आत्मा से अतिरिक्त कोई अन्य वस्तु नहीं है, जिसको वह सुपुप्ति अवस्था में देखे ॥ २३॥

मन्त्रः २४

यद्दै तम जिघति जिघन्यै तम जिघति न हि घातुर्घातेर्विपरि-लोपो विचतेऽविनाशित्वात्रतु तहितीयमस्ति ततोऽन्यद्विभक्तं यज्जिघेत् ।।

पदच्छेदः ।

यत्, वै, तत्, न, जिझित्, जिझन्, वै, तत्, न, जिझित्, न, हि, झातुः, झातेः, विपरिलोपः, विद्यते, श्चविनाशित्वात्, न, तु, तद्, द्वितीयम्, श्चस्ति, ततः, श्चन्यत्, विभक्तम्, यत्, जिझेत् ॥

पदार्थाः ऋन्वयः ग्रन्वयः +सः=वह जीवास्मा तत्=डस सुषुधि भवस्था में ≕नहीं जिन्नति=संघता है यत्≕जो इति=ऐसा + मन्यसे=भाष मानते हैं तत्त्≕सो + त≕नहीं +यथार्थः=ठिक है + सः≔वह जीवात्मा वै=निरचय करके जिञ्जन्≕सूंचता हुमा न=नहीं

ान्वयः पदार्थाः
जिन्नति=स्रृंघता है
हि=क्योंकि
न्रातु:=स्रृंघनेवाले जीवासमाकी
न्राते:=न्रायशिक का
विपरिकोपः=नाश
श्रविना- } = भावेनाशि होनेके
शिरवात् } कारय
न=नहीं
विद्यते=होता है
तु=यरन्तु
तत्=उस सुयुसिश्रवस्था में
ततः=उससे
श्रान्यत्=भीर कोई
विभक्षम्=ष्टथक्

हितीयम्=दूसरी बस्तु न=नहीं है यत्त=जिसको + सः=वह पश्यत्=देखे

भाषार्थ ।

याज्ञवह्नय महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! जो छाप ऐसा मानते हैं कि सुषुप्ति अवस्था में जीवात्मा नहीं सूंघता है सो ठीक नहीं है, यह जीवात्मा उस अवस्था में भी विद्यमान है, और उसकी बार्ग्यशिक भी विद्यमान है, चूंकि वह जीवात्मा अविनाशी है, इसिलिये उस की बाग्यशिक भी नाशरहित है परन्तु वह उस प्रवस्था में क्यों नहीं सूंघता है इसका कारगा यह है कि उससे पृथक् कोई दूसरी वस्तु सूंघने के लिये वहा स्थित नहीं है जिसको वह सुंघे ॥ २४॥

मन्त्रः २५

यद्वे तन्न रसयते रसयन्वे तन्न रसयते न हि रसयित् रसयते-र्विपरिलोपो विद्यतेऽविनाशित्वान्न तु तहितीयमस्ति ततोऽन्यद्विभक्तं यद्रसयेत् ॥

पदच्छेदः ।

यत्, वै, तत्, न, रसयते, रसयन्, वै, तत्, न, रसयते, न, हि, रसयितुः, रसयतेः, विपरिकोपः, विद्यते, श्रविनाशित्वात्, न, तु, तत्, द्वितीयम्, श्रह्ति, ततः, श्रव्यत्, विभक्तम्, यत्, रसयेत् ॥

पदार्थाः पदार्थाः । श्रन्वयः श्चन्वयः + सः≔वह जीवात्मा + न=नहीं + यथार्थः≔ठीक है तत्=उस सुप्रावस्था में + सः≔बह जीवात्मा **न**=नहीं रसयते=स्वाद लेता है वै⇒निश्चय करके यत्=जो रसयन्=स्वाद लेता हुन्ना इति=ऐसा न≕नहीं + मन्यसे=चाप मानते हैं

यसे=चाप मानते हैं रसयते=स्ब≱द बेता है तत्=सो ं हि=क्योंकि रसयितुः=रस बेनेवाबे जीवासा के रसयतेः=रसज्ञानशक्ति का विपरिलोपः=नाश अविनाशि- } ॄ्षासा के प्रविनाशी त्वात् ∫ होनेके कारय न=नहीं विद्यते=होता है त=यरन्त

तत्=इस सुषुप्तावस्था में
ततः=उससे
ग्रन्यत्=ग्रीर कोई
विभक्तम्=पृथक्
द्वितीयम्=दूसरी वस्तु
न=नहीं है
यत्=जिसको
+ सः=वह
रस्वयेत्=स्वाद केवे

भावार्थ ।

याज्ञवरूक्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! आगर आप ऐसा मानते हैं कि जीवातमा सुपुनिअवस्था में नहीं स्वाद लेता है सो ठीक नहीं है, यह जीवातमा उस अवस्था में भी विद्यमान रहता है, और उसकी स्वादग्रहण्शिक्त भी विद्यमान रहती है, और जीवातमा के अविनाशी होने के कारण उसकी स्वादग्रहण्शिक्त भी नाशरहित होती है, इसिलिये वह स्वाद लेसका है परन्तु जब कोई स्वाद लेने का विषय वहां नहीं है, तो फिर किसका स्वाद वह जीवातमा लेवे ॥ २४॥

मन्त्रः २६

यद्वै तम्न बद्दित वदन्वै तम्न बद्दित न हि वक्कुर्वक्रेविंपरिलोपो विद्यतेऽविनाशित्वाम्न तु तद्वितीयमस्ति ततोऽन्यद्विभक्तं यद्रदेत् ॥

पदच्छेदः ।

यत्, वे, तत्, न, वद्ति, वद्न, वे, तत्, न, वद्ति, न, हि, वक्तुः, वक्तः, विपरिकोपः, विद्यते, श्रविनाशित्वात्, न, तु, तद्, द्वितीयम्, श्रक्ति, ततः, श्रन्यत्, विभक्तम्, कत्, वदेन् ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

+ सः≔वह जीवास्मा तत्=उस सुषुप्तावस्था में न=नहीं

वद् ति=बोलता है यत्=जो इति=ऐसा

+ मन्यसे=भाष मानते हैं श्राविनाशि- } अश्रात्मा के श्रविनाशी त्वात रें होने के कारण तत्त्र≕सो न≔नहीं + न=नहीं विद्यते=होता है + यथार्थः≔शेक है तु=परन्तु + सः=वह जीवास्मा तत्=उस सुषुप्तावस्था में वै≕िनश्चय करके ततः≔उससे श्रन्यत्≔श्रीर कोई घद्न्=बंलता हुन्ना चिभक्कम्=एथक् न≕नहीं घदति=बोलता है द्वितीयम्=दूसरी वस्तु हि≕क्योंकि न=नहीं है यत्=जिसको खकः≕जीवान्माकी घक्रः=वचनशक्ति का + सः≔वह विपरिलोप:=नाश वदेत=कहे

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! आगर आप ऐसा मानते हैं कि जीवातमा सुपुतिश्ववस्था में नहीं बोजता है सो ठीक नहीं है, यह जीवात्मा उस अवस्था में भी विद्यमान रहता है, और उसकी वचनशिक्त भी विद्यमान रहती है, और जीवात्मा के अविनाशी होने के कारण उसकी वचनशिक्त भी नाशरहित रहती है इस जिये वह बोज सक्ता है, परन्तु जब बचन का कोई विषय वहां नहीं है तो किससे वह जीवात्मा बोले ॥ २६॥

मन्त्रः २७

यद्वै तत्र शृर्णोति शृष्यन्त्रै तत्र शृर्णोनि न हि श्रोतुः श्रुतेर्वि-परिलोपो विचतेऽविनाशित्वात्र तु तहितीयमस्ति ततोऽन्यद्विभक्तं यच्छ्रगुयात् ॥

पर्च्छेदः ।

यत्, ते, तत्, न, शृशोति, शृशवन्, ते, तत्, न, शृशोति, न, हि, श्रोतुः, श्रुतेः, विपरिक्तोपः, विद्यते, श्रविनाशित्वात्, न, तु, तत्,

द्वितीयम्, श्रस्ति, ततः, श्रन्यत्, विभक्तम्, यत्, शृखुयात् ॥ पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः श्चन्धयः + सः=वह जीवात्मा श्रुतेः=श्रवगशक्ति का तत्≔डस सुषुप्तावस्था में विपरित्तोप:=नाश न=नहीं श्रविमा- } = श्रात्मा के श्रविनाशी शित्वात् } होने के कारण श्युगोति=सुनता है यत्≕जो ल≃नहीं इति≕ऐसा विद्यते=होता है + मन्यसे≃श्राप मानते हैं त=परन्तु तत्≂सो तत्=उस सुषुप्तावस्था में + न=नहीं + यथार्थः≔ठीक है ततः=उसमे अन्यत्=भौर कोई +सः=वह जीवातमा वै=िन:सन्देह विभक्तम्=पृथक् द्वितीयम्=दूसरी वस्तु श्ट्रग्वन्≔सुनता हुन्ना न=नहीं है **न**=नहीं यत्=जिसको श्युणोति=सुनता है

भावार्थ ।

+ सः≔वह

श्युयात्=सुने

हि=क्योंकि

श्रोतः=श्रोता जीवात्मा के

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! आगर आप ऐसा मानते हैं कि जीवातमा सुपुप्तिअवस्था में नहीं सुनता है सो ठीक नहीं है, यह जीवात्मा उस अवस्था में भी विद्यमान रहता है, और उसकी अवस्पाशिक भी विद्यमान रहती है, और जीवात्मा के अवि-नाशी होने के कारमा उसकी अवस्पाशिक भी नाशरहित होती है, इस लिये वह सुन सक्ता है प्रन्तु जब कोई अवस्प का वहां विषय नहीं है तो किसको वह जीवात्मा अवस्प करे।। २७॥

मन्त्रः २८ यद्वै तत्र मनुते मन्यानो वै तत्र मनुते न हि मन्तुर्मतेर्विपरिलोपो

विद्यतेऽविनाशित्वाच तु तद्वितीयमस्ति ततोऽन्यद्विभक्तं यन्मन्वीत ।। पदच्छेदः ।

यत्, वै, तत्, न, मनुते, मन्वानः, वै, तत्, न, मनुते, न, हि, मन्तुः, मतेः, विपरिकोपः, विद्यते, श्रविनाशित्वात्, न, तु, तत्, द्विती-यम्, श्रस्ति, ततः, श्रन्यत्, विभक्तम्, यत्, मन्वीत ॥

ग्रन्वयः पदार्थाः + सः≔बह जीवात्मा

तत्=उस सुषुप्तावस्था में न=नहीं

मनुते=मानता है यत्=जो

इति=ऐसा

+ मन्यसे=भाष मानते हैं तत्=सो

+ न≕नहीं

+ यथार्थः=ठीक है

+ सः=वह जीवात्मा वै=निश्चय करके

मन्वानः=मनन करता हुचा न=नहीं

मनुते=मनन करता है

हि=वर्योकि

मन्तुः=मन्ता जीवास्मा की

श्रन्वयः

ः पदार्थाः मतेः=मननशक्तिका

विपरिलोपः=नाश

श्रविना- रें =श्रात्मा के भविनाशी. शित्वात् रें होने के कास्य

न=नहीं

विद्यते=होता है

तु=परन्त्

तत्=डस सुषुप्तावस्था में

ततः=डससे ग्रन्यत्≕श्रीर कोई

विभक्तम्=एथक् द्वितीयम्=दूसरी वस्तु

> न≕नहीं है (क-क्रिक्ट)

यत्≕जिसकोः + सः≔वड

मन्वीत=मनन करे

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! अगर आप ऐसा मानते हैं कि जीवातमा सुषुति अवस्था में नहीं मनन करता है सो ठीक नहीं हैं, यह जीवात्मा उस अवस्था में भी विद्यमान रहता है, और उसकी मननशक्ति भी विद्यमान रहती है, और जीवात्मा के अविनाशी होने के कारणा उसकी मननशक्ति भी नौशरहित होती है, इस जिये वह मनन कर सक्ता है, परन्तु जब कोई मन्तव्य विषय वहां नहीं है तो वह किसको मनन करे।। २८॥

मन्त्रः २६

यद्दै तम स्पृशति स्पृशन्वै तम स्पृशाति न हि स्पृष्टः स्पृष्टेर्वि-परिलोपो विचतेऽविनाशित्वान तु तद्वितीयमस्ति ततोऽन्यद्विभक्नं यत्स्प्रशेत ॥

पदच्छेदः।

यत्, वै, तत्, न, रपृशति, स्पृशन्, वै, तत्, न, स्पृशति, न, हि, स्प्रष्टुः, स्पृष्टेः, विपरिक्षोपः, विद्यते, श्रविनाशित्वात्, न, तु, तत्, द्विती-यम्, स्रास्ति, ततः, श्रान्यत्, विभक्तम्, यत्, स्पृशेत् ॥

पदार्थाः श्चान्चयः + सः=वह जीवात्मा तत्= सुपुति धवस्था में न=नहीं

स्प्रशति=स्पर्श करता है यत्र्≕जो इति≕ऐसा

+ मन्यसे=न्नाप मानते हैं तत्⇒सो

+ न=नहीं

+ यथार्थः=डीक है

+ सः≔वह जीवात्मा वै=निश्चय करके

स्पृश्नन्≔स्पर्श करता हुन्ना न=नहीं

स्प्रशति=स्पर्श करता है हि≔क्योंकि

स्प्रष्टुः=स्पर्श करने वाले जीवासमा की

श्रन्वयः

पदार्थाः

स्प्रष्टेः=स्परीशक्ति का विपरिलोपः≕नाश

श्रविना- रे बारमा के सविनाशी शित्वात् रे होने के कारण

न≕नहीं

विद्यते≂होता है

मु=परन्तु

तत्=उस सुषुप्तावस्था में

सतः⇒उससे

अन्यत्≔श्रौर कोई

विभक्तम्=**प्रथक्**

द्वितीयम्=दूसरी वस्त न=नहीं है

यत्=जिसको

+ सः≔वह स्पृशेत्=स्पर्श करे

भावार्थ।

याज्ञवरूक्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक! अगर आप ऐसा मानते हैं कि जीवात्मा सुषुप्तिअवस्था में नहीं स्पर्श करता है सो ठीक नहीं है, यह जीवात्मा उस अवस्था में भी विद्यमान रहता है, और उसकी स्पर्शशिक्त भी विद्यमान रहती है, और जीवात्मा के अविनाशी होने के कारणा उसकी स्पर्शशिक्त भी नाशरहित है, इसिजये वह स्पर्श करसका है, परन्तु जब कोई स्पर्शशिक्त का विषय वहां नहीं है तो वह जीवात्मा किसको स्पर्श करे।। २६॥

मन्त्रः ३०

यद्दै तन्न विजानाति विजानन्वे तन्न विजानाति न हि विज्ञातु-विज्ञातेर्विपरिलोपो विद्यतेऽविनाशित्वान्न तु तहितीयमस्ति ततोऽन्य-द्विभक्तं यद्विजानीयात् ॥

पदच्छेदः।

यत्, वै, तत्, न, विज्ञानाति, विज्ञानन्, वै, तत्, न, विज्ञानाति, न, हि, विज्ञातुः, विज्ञातेः, विपरिकोपः, विद्यते, स्वविनाशित्वात्, न, तु, तत्, द्वितीयम्, स्रस्ति, ततः, स्रन्यत्, विभक्तम्, यत्, विज्ञानीयात्।। स्रन्ययः पदार्थाः स्रन्ययः पदार्थाः

+ सः≔वह जीवात्मा तत्=उस सुषुप्तावस्था में न=नहीं विज्ञानाति=जानता है

> यत्≕जो इति≕ऐसा प=रने-चारा सार्च

+ मन्यसे=भाप मानते हैं तत्=सो

+ न=नहीं + यथार्थः=ठीक **है**

+ सः≔वह जीवात्मा

वै=िनस्संदेह

विजानन्=जानता हुमा

म≕नहीं

विज्ञानाति≕जानता है हि≔क्योंकि

> विज्ञातुः=ज्ञाता जीवात्मा की विज्ञातेः=ज्ञानशक्ति का

विपरिलोप:=नाश

श्रविनाशि । श्रासाके श्रविनाशी त्वात् । होनेके कारण

न=गैहीं

विद्यशे≔होता है तु=परन्तु

तत्≔उस सुषुप्तावस्था में ततः=उससे

श्रन्यत्=भौर कोई विभक्तम्=एथक्

द्वितीयम्=दूसरी वस्तु

न≕नहीं है

यत्=जिसको + सः≔वह

विजानीयात्=जाने

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हेराजा जनक ! आरार ऐसा आप मानते हैं कि जीवात्मा सुषुप्ति अवस्था में नहीं जानता है, सो ठीक नहीं है. यह जीवात्मा उस अवस्था में भी विद्यमान रहता है. और उसकी ज्ञानशिक्त भी विद्यमान रहती है, अप्रैर जीवात्मा के अविनाशी होनेके कारण उसकी ज्ञानशिक्त भी नाशारहित होती है. इसिक्ये वह जान सक्ता है परन्तु जब कोई ज्ञेयविषय वहां नहीं है तो किस वस्तु को वह जीवात्मा जाने ॥ ३०॥

मन्त्रः ३१

यत्र वा अन्यदिव स्यात्तत्रान्योऽन्यत्पश्येदन्योऽन्यक्तिघ्रेदन्योऽन्य-द्रसयेदन्योऽन्यद्वदेदन्योऽन्यच्छृ गुयादन्योऽन्यन्मन्वीतान्योऽन्यत्स्पृशे-दन्योऽन्यद्विजानीयात् ॥

पदच्छेदः ।

यत्र, वा, अन्यत्, इव, स्यात्, तत्र, अन्यः, अन्यत्, परेयत्, अन्यः, अन्यत्, जिघेत्, अन्यः, अन्यत्, रसयेत्, अन्यः, अन्यत्, बदेत्, अन्यः, अन्यत्, शृणुयात्, अन्यः, अन्यत्, मन्वीत, अन्यः, अन्यत्, स्पृशेत्, श्रन्यः, श्रन्यत्, विज्ञानीयात् ॥

द्यन्वयः

पदार्थाः अन्वयः यत्र वै=जिस जागरित और

पदार्थाः अन्यत् इव=मतिरिक्न भौर कोई

स्वमधवस्था में

वस्तु

+ सारमनः=श्रारमा से

स्यात्=होवे तो

तत्र=उत श्ववस्था में
श्वान्य:=श्वन्य पुरुष
श्वान्यत्=श्वे
श्वान्य:=श्वन्य पुरुष
श्वान्यत्=श्वे
श्वान्य:=श्वन्य पुरुष
श्वान्य:=श्वन्य पुरुष
श्वान्य:=श्वन्य पुरुष
श्वान्यत्=श्वन्य वस्तु का
रस्येत्=श्वान्य वस्तु का
रस्येत्=श्वान्य वस्तु का
श्वान्यत्=श्वन्य पुरुष
श्वान्यत्=श्वन्य पुरुष
श्वान्यत्=श्वन्य पुरुष
श्वान्यत्=श्वन्य पुरुष
श्वान्यत्=श्वन्य को
वदेत्=कह

अन्यः=अन्य पुरुष
अन्यत्=अन्य को
श्टरणुयात्=धुने
अन्यत्=अन्य पुरुष
अन्यत्=अन्य को
सन्वीत=माने
अन्यः=अन्य पुरुष
अन्यत्=अन्य को
स्पृशेत्=स्पर्श करे
अन्यः=अन्य पुरुष
अन्यत्=अन्य पुरुष
अन्यत्=अन्य को
विज्ञानीय।त्=जाने

भावार्थ।

जिस जाप्रत् और स्वप्न अवस्था में आतमा से अतिरिक्त और कोई वस्तु होवे तो उस अवस्था में अन्य पुरुष अन्य वस्तु को देखे, अन्य पुरुष आपने से अन्य वस्तु को सूंचे, अन्य पुरुष अन्य वस्तु का स्वाद क्षेवे, अन्य पुरुष अन्य वस्तु को कहे, अन्य पुरुष अन्य वस्तु को सुने, अन्य पुरुष अन्य वस्तु को माने, अन्य पुरुष अन्य वस्तु को स्पर्श करे, अन्य पुरुष अन्य वस्तु को माने, अन्य पुरुष अन्य वस्तु को स्पर्श करे,

मन्त्रः ३२

सित्तत एको दृष्टाऽद्वैतो भवत्येष ब्रह्मलोकः सम्राडिति हैनम-नुशशास याज्ञवल्क्य एषाऽस्य परमा गितरेषाऽस्य परमा संपदेषो-ऽस्य परमो लोक एषोऽस्य परम श्रानन्द एतस्यैवानन्दस्याऽन्यानि भूतानि मात्रामुपजीवन्ति ॥

पदच्छेदः ।

सलिलः, एकः, द्रष्टा, झद्दैतः, भवति, एषः, ब्रह्मलोकः, सम्राट्, इति, ह, एनम्, झनुशशास, याज्ञवल्क्य, एषा, अस्य, परमा, गतिः, एवा, आस्य, परमा, संपत्, एवः, आस्य, परमः, लोकः, एवः, आस्य, परमः आतन्दः, एतस्य, एव, आनन्दस्य, अन्यानि, भूतानि, मात्राम्, उपजीवन्ति ॥

श्चन्वयः पदार्थाः सम्राद्=हे जनक! + श्चात्मा=त्रात्मा सर्तिलः≔पानीकी तरह साफहै

पकः=श्रकेला है द्रष्टा≔देखनेवाला है ऋद्वैतः=श्रद्वितीय है प्रषः=यही

ब्रह्मलोकः=ब्रह्मलोक भवति=है

इति≕इसप्रकार **याञ्च**चल्क्यः≕याञ्चवल्क्य ने

पनम्≔इस राजा जनक को अनुशशास≕उपदेश किया सम्राट≕हे राजन् !

तम्राष्ट्र–७ राजर्ग झस्य≕इस जीवात्मा का एषा≕यही

परमा=परम गतिः=गति है

श्चस्य=इसकी

. **अ**न्वयः

परमा=यही श्रेष्ठ संपत्=संपत्ति है पदार्थाः

श्चस्य=इसका एषः=यही

परमः=परम स्रोकः=जोक है

श्चस्य=इसका एषः=यही

परमः=परम स्नानन्दः=श्रानन्द है

राजन्=हे राजन् ! श्रन्यानि=सब भूतानि=प्राखी

प्तस्य≔इस प्व≔ही

श्रानन्दस्य=ब्रह्मानन्द की मात्राम् } श्रादाय } =एक मात्रा को लेकर

श्रादाय) = पुरु भागा का जरूर उपजीवन्ति=श्रानन्दपूर्वक जीते हैं

भावार्थ ।

याज्ञवरुक्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! आत्मा जलकी तरह शुद्ध है, एक है, द्रष्टा है, अद्वितीय है, यही ब्रह्मजोक है, इससे भिन्न और कोई ब्रह्मजोक नहीं है, इसप्रकार याज्ञवरुक्य महाराज ने उस राजा जनक को उपदेश किया, याज्ञवरुक्य महाराज कहते हैं कि, इस जीवात्मा की ब्रह्मप्राप्तिही परमगित है, इस जीवात्मा की यही श्रेष्ठ संपत्ति है, इसका यही परम कानन्द है,

हेराजन् ! इसी ब्रह्मानन्द के एक क्षेशमात्र से सब प्रायाी जीते हैं क्योर क्यानन्द करते हैं।। ३२।।

मन्त्रः ३३

स यो मनुष्याणा श्र राद्धः समृद्धो भवत्यन्येषामधिपतिः सर्वेर्मानुष्यकैभेगिः संपन्नतमः स मनुष्याणां परम भ्रानन्दोऽथ ये शतं मनुष्याणामानन्दाः स एकः पिठृणां जितलोकानामानन्दोऽथ ये शतं पिठृणां जितलोकानामानन्दाः स एको गन्धर्वलोक भ्रानन्दोऽथ ये शतं गन्धर्वलोक भ्रानन्दाः स एकः कर्मदेवानामानन्दो ये कर्मणा देवत्वमिसंपद्यन्तेऽथ ये शतं कर्म देवानामानन्दाः स एक भ्राजान-देवानामानन्दो यश्च श्रोत्रियोऽद्यजिनोऽकामहतोऽथ ये शतमानान-देवानामानन्दाः स एकः प्रजापतिलोक भ्रानन्दो यश्च श्रोत्रियोऽद्यजिनोऽकामहतोऽथ ये शतं प्रजापतिलोक भ्रानन्दो स्व श्रोत्रियोऽद्यजिनोऽकामहतोऽथेष एव परम भ्रानन्दो यश्च भ्रोत्रियोऽद्यजिनोऽकामहतोऽथेष एव परम भ्रानन्द एष भ्रक्षलोकः सम्राद्धित होवाच याज्ञवल्क्यः सोऽहं भगवते सहस्रं ददाम्यत उर्ध्व विशेष्ठायैत्र ब्रहीत्यत्र ह याज्ञवल्क्यो विभयांचकार मेधावी राजा सर्वेभ्यो मान्तेभ्य उद्देशितिति ॥

पद्च्छेदः ।

सः, यः, मनुष्याग्याम्, राद्धः, समृद्धः, भवति, अन्येषाम्, अधि-पतिः, सर्वैः, मानुष्यकैः, भोगैः, संपन्नतमः, सः, मनुष्याग्याम्, परमः, आनन्दः, अथ, थे, रातम्, मनुष्याग्याम्, आनन्दाः, सः, एकः, पितृ-ग्याम्, जितलोकानाम्, आनन्दः, अथ, ये, रातम्, पितृग्याम्, जित-लोकानाम्, आनन्दाः, सः, एकः, गन्धर्वकोके, आनन्दः, अथ, ये, रातम्, गन्धर्वलोके, आनन्दाः, सः, एकः, कर्भदेनानाम्, आनन्दः, ये, कर्मग्या, देनस्वम्, अभिसंपद्यन्ते, अथ, ये, रातम्, कर्मदेवानाम्, आनन्दाः, सः, एकः, आजानदेवानाम्, आनन्दः, यः, च, श्रोत्रियः, अनुजिनः, अकामहतः, अथ, ये, रातम्, आनन्दः, आनुनदः, सः, एकः, प्रजापतिस्रोके, श्रानन्दः, यः, च, श्रोत्रियः, श्रवृजिनः, श्रकामह्तः, श्रथ, ये, शतम्, प्रजापतिलोके, श्रानन्दाः, सः, एकः, ब्रह्मलोके, आनन्दः, यः, च, श्रोत्रियः, अवृजिनः, अकामहतः, अथ, एषः, एव, परमः, आनन्दः, एपः, ब्रह्मलोकः, सम्राट्, इति, ह, उवाच, याज्ञवल्क्यः, सः, श्राहम्, भगवते, सहस्रम्, ददामि, श्रातः, उर्ध्वम्, विमोक्षाय, एव, ब्रृहि, इति, अत्र, ह, याज्ञवल्क्यः, विभयांचकार, मेधावी, राजा, सर्वेभ्यः, मा, श्रन्तेभ्यः, उद्रौत्सीत्, इति ॥

श्चान्ययः

पदार्थाः । श्रन्वयः

पदार्थाः

मनुष्याणाम्=मनुष्यों में यः=जो पुरुष राद्धः=तन्दुरुस्त है समृद्धः=सुख करके संपन्न है श्चन्येषाम्≔सब मनुष्यों का श्रधिपति:=श्रधिपति है च=ग्रीर मानुष्यकैः=मनुष्यसम्बन्धी सर्वेः≔सब भोगैः=सुखों करके

सः=वह मनुष्याग्राम्=मनुष्यें। में परमः=परम श्चानन्दः=श्चानन्द है

संपन्नतमः≔भरा पुरा

भवति=है

श्रथ=धौर ये=जो ऐसे

मनुष्यागाम्=मनुष्यों का शतम्≕सीगुना श्चानन्दाः=ग्रानन्द है

सः=वह

जितलोकानाम्=लोकविजयी पितृगाम्=पितरीं का

एकः=एक श्रानन्दः=श्रानन्द है श्रथ=ग्रौर

जितले कानाम्=लोकविजयी पिनृशाम्=िवतरीं का ये=जो

शतम्≕सौगुना श्रानन्दाः=श्रानन्द है

सः≔वह गन्धर्वलोके=गन्धर्वलोक में एकः=एक

> आनन्दः=आनन्द के बराबर है श्चाथ=श्राँ।र

ये=जो शतम्=सौगुना ञ्चानन्दाः=त्रानन्द गन्धर्वलोके=गन्धर्वलोक में

+ श्रस्त=है सः=वह

कर्मदेवानाम्=कर्मदेवता का

एकः=एक श्चानन्दः=श्चानन्द है ये≔जो कर्मगा=यज्ञ करके देवत्वम्=देवपद को श्रमिसंपद्यन्ते=प्राप्त होते हैं ते=वे कर्मदेवाः=कर्मदेव हैं श्रध=श्रोर य=जो शतम्≕संगुना श्चानन्दः=ग्रानन्द कर्मदेवानाम्=कर्मदेवों का है श्चाजानदे- } =जन्मदेवतावों का वानाम् } एक आनन्दः=एक आनन्द है च=धौर अवृजिनः=वैदिक कर्मों के अनु-ष्टानसे पापरहित हुन्ना च=ग्रीर श्रकामहतः=कामनारहित होता हुमा श्रोत्रियः=जो वेद का पढ़ने वाला है तस्य=उपका एकः=एक श्रानन्दः=श्रानन्द श्राजान- } =जन्मदेवतायों के देवानाम् } श्चानन्दः=ग्रानन्द के बराबर है श्रथ=श्रीर

शतम्≕सौगुना श्राजानदे- रे =जन्मदेवीं का वानाम् रे श्रानन्दाः=भ्रानन्द है सः=वह प्रजापतिलोके=प्रजापतिलोक में एकः=एक ऋ(नन्द्ः=ग्रानन्द के बराबर है च=श्रीर यः च=जो श्रोत्रियः=वेद के पढ़ने वाले श्चवृजिनः=पापरहित श्रकामहतः=कामनारहितों के श्रानन्दाः=श्रानन्द हैं श्रथ=थार ये=जो शतम्=सौगुना प्रजापतिलोके=प्रजापति लोक में श्चानन्दाः=श्चानन्द हैं सः≔वह ब्रह्मलोके=ब्रह्मजोक में एकः=एक श्चानन्दः=श्चानन्द के बराबर है च≕श्रोर यः=जो श्रोश्रियः=वेदको पढ़ा है श्रवृज्ञिनः=पापरहित है अकामहतः=इच्छारहित है + तस्य=उसका + श्रानन्दः=श्रानन्द + ब्रह्मलोकेन=त्रज्ञालोक के समानहै

श्रथ=इसके बाद श्चतः=इसके ऊर्ध्वमू=म्रागे याष्ट्रवास्त्रवरूप उवाच=कइते भये कि विमोक्षाय=मोक्ष के लिये सम्राट्र=हे जनक ! प•=घवश्य पषः≕यही बृहि=उपदेश करें परमः≕श्रेष्ठ इति≕इस पर ञ्चानस्दः=श्रानस्द है श्चाच=यहां प्रषः=यही याञ्चयस्यः=याज्ञवस्क्य ब्रह्मलोकः=ब्रह्मजोक है बिभयांचकार=हरगये इतिहि=ऐसा निश्चय करके जातकः=जनक द्याह=बो ले मेधावी=बुद्धिमान् सः≔वही राजा≔राजा ने श्रहम् औ मा=मुक्तको भगवने=ग्रापके विये सर्वेभ्यः=सब सहस्रम्=इजार गौवों को श्चन्तेभ्यः=ज्ञानतस्य से ददामि=देता हुं उद्रोत्सीत्=शून्य कर दिया है भावार्थ ।

याज्ञवल्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! जीवात्मा के आनन्द की सीमा को में कहता हूं सुनो. जो पुरुष हृष्ट पुष्ट बिजिष्ट हैं; धन, धान्य, पुत्र, पौत्र से भरा पुरा है, पृश्वी के सब मनुष्य-मात्र का अधिपति है, स्वतन्त्र राजा है, मनुष्यसम्बन्धी सब भौग उसको प्राप्त हैं उसका सौगुना जो आनन्द है वह पितरों के एक आनन्द के बराबर है, पितरों का सौगुना आनन्द गन्धविलोक के एक आनन्द के बराबर है, जो गन्धविलोक में सौगुना आनन्द है वह कमेदेवों के एक आनन्द के बराबर है, जो गन्धविलोक में सौगुना आनन्द है वह कमेदेवों के एक आनन्द के बराबर है, जो कमे करके देवपदवी को प्राप्त होते हैं वह कमेदेव कहलाते हैं ऐसे कमेदेवों का सौगुना जो आनन्द है वह वह वेद के पढ़ने वालों और निष्काम कमों के करने वालों के एक आनन्द के बराबर है और इन्हीं के

बराबर जन्मदेवों का भी आनन्द है, जन्मदेव उसकी कहते हैं जो

जन्मही से देवता है. जन्मदेवता का जो सौगुना आनन्द है वह प्रजापतिलोक में एक आनन्द के बराबर है इसी आनन्द के बराबर वेद पढने वालों, पापरहित निष्कामियों का भी है यानी इनका आनन्द प्रजापति के आनन्द के बरावर है, प्रजापति लोक का सौगुना आनन्द ब्रह्मलोक के एक आनन्द के बराबर है और जो श्रोत्रिय, ब्रह्मनिष्ठ, पापरहित, निष्कामी हैं उनका भी आनन्द ब्रह्मानन्द के बरावरही है ऐसा कहकर याज्ञवल्क्य बोले हे राजा जनक ! यही परम आनन्द है, यही ब्रह्मकोक है, यह सुनकर राजा जनक बोले हे पृष्यपाद भगवन् ! मैं आपको एक सहस्र गौ देताहूं आप कुपा करके इसके आगे मोक्ष के जिये सम्यक् ज्ञानको मेरे प्रति उपदेश करें, यह सुनकर याज्ञवल्क्य महाराज डरगये । क्यों डरगये ? इसका समाधान यों करते हैं, याज्ञवल्क्य महाराज ने विचार किया कि यह राजा परम ज्ञानी है, संपूर्ण धनको सुमे देने को तैयार है, सहस्रों गौ देचुका है श्रीर देताजाता है, क्या सब मुम्तको देकर वह निर्धनी हो बैठेगा इस बातसे डरे अथवा इस बात से डरे कि यह परमज्ञानी राजा मुक्तसे पूछ पूछ्रकर ज्ञानतत्त्वरूपी धन मुक्तसे लेकर मुक्तको उस धनसे शून्य किये देता है, श्राव श्रागे इसको मैं क्या उपदेश करूंगा, पर पहिला अर्थ ठीक मालूम होता है दूसरा अर्थ ठीक नहीं मालूम होताहै।।३३॥

मन्त्रः ३४

स वा एष एतस्मिन्स्वमान्ते रत्वा चरित्वा दृष्ट्वेव पुएवं च पापं च पुनः प्रतिन्यायं प्रतियोन्याद्रवति बुद्धान्तायैव ॥

पदच्छेदः ।

सः, वा, एषः, एतस्मिन्, स्वप्नान्ते, रत्वा, चरित्वा,, दृष्ट्वा, एव, पुरायम्, च, पापम्, च, पुनः, प्रतिन्यायम्, प्रतिग्रोनि, आद्रवित, बुद्धान्ताय, एव ॥

अन्वयः

पदार्थाः श्रन्वयः पदार्थाः

सः≔सोई प्यः=यह जीवात्मा **एतस्मिन्=इ**स स्वप्नान्ते=स्वप्नस्थान में रत्वा=धनेक पदार्थों के साथ क्रीड़ा करके चरित्वा=बाहर घूम फिर करके पुरायं च=पुरय

पापं च≃पापको द्यष्ट्रा=भोगकरके पुनः≔पुनःपुनः प्रतिन्यायम्=उत्तरे मार्ग से प्रतियोशन=अनंक योनियोप्रति बुद्धान्तायेव=जाप्रत् श्रवस्था के निये ही

श्चाद्रवति=दौइता है भावार्थे।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! यह जीवात्मा स्वप्रस्थान में अनेक पदार्थों के साथ कीड़ा करके, बाहर भीतर घूमं करके. पुराय पाप को भोग करके पुनः पुनः उलटे मार्ग से अनेक योनियाँ प्रति जाप्रत् श्रवस्था के लिये ही दौड़ता है ॥ ३४ ॥

मन्त्र: ३५

तद्यथानः सुसमाहितसुत्सर्जवायादेवमेवाऽयछं शारीर श्रात्मा प्राज्ञेनाऽऽत्मनाऽन्वारूढ उत्सर्जन्याति यत्रैतदृध्वीच्छ्वासी भवति ॥ पदच्छेदः ।

तत्, यथा, श्रनः, सुसमाहितम्, उत्सर्जत्, यायात्, एवम्, एव, अयम्, शारीरः, आत्मा, प्राज्ञेन, श्रात्मना, अन्वारुढः, उत्सर्जन्, याति, यत्र, एतत् , अर्ध्वोच्छ्वासी, भवति ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः उत्सर्जेत्=चींचीं शब्द करतीहुई

तत्=शरीर त्यागने के विषय में + दृष्टान्तः=यह दृष्टान्त है कि एवम् एव=उसीप्रकार यथा=जैसे सुसमाहितम्=प्रवादिक बोम से

यायात्=जाती है शारीर:=शरीरसम्बन्धी श्चात्मा=जीवात्मा

जदी हुई द्यानः=गादी

प्राज्ञेन }=अपने ज्ञान से आत्मना

धन्वारुढः≃संयुक्र

पतत्=वह उत्सर्जन्=देहको छे। इता हुन्ना ऊध्यों चळ्ळासी=अर्ध्वश्वासी भवति=होता है

याति≕जाता है यश्र≖नव

भावार्थ ।

याज्ञवरस्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! शरीर के स्यागने के विषय में लोक यह दृष्टान्त देते हैं कि जैसे अन्नादिक के बोम्मसे लदीहई गाड़ी मार्ग में चींची शब्द करतीहई जाती है उसी प्रकार शरीरसम्बन्धी जीवात्मा ज्ञानस्वरूप श्रपने ग्रुभ श्रयुभ कर्म के भारसे संयुक्त होताहुआ वियोगकाल में रोताहुआ जाता है ॥ ३४ ॥

मन्त्रः ३६

स यत्राऽयमितामानं न्येति जस्या वोपतपता वाऽितामानं निग-च्छति तद्यथाम्रं बोदुम्बरं वा पिष्पलं वा वन्धनात प्रमुच्यत एव-मेवाऽयं पुरुष एभ्योङ्गेभ्यः संप्रमुच्य पुनः प्रतिन्यायं प्रतियोन्या-दवति प्राणायैव ॥

पदच्छेदः ।

सः, यत्र, श्रयम्, श्रम्मिमानम्, न्येति, जरया, वा, उपतपता, वा, द्माशिमानम्, निगच्छति, तत्, यथा, द्याम्रम्, वा, उदुम्बरम्, वा, पिष्पलम् , वा, बन्धनात् , प्रमुच्यते, एवम् , एव, श्रवम् , पुरुषः, एभ्यः. श्रद्धेभ्यः, संप्रमुच्य, पुनः, प्रतिन्यायम्, प्रतियोनि, श्राद्धवति. प्राक्षाय, एव ॥

श्रन्चयः

पदार्थाः । श्रन्वयः

पदार्थाः

यत्र ऋषि=जिससमय स्मः=वह श्रयम्=यह पुरुष श्चिमानम्=दुर्वजता को जरया=बुढ़ापा करके न्येति=प्रस होता है

च = प्रथवा उपतपता=ज्वरादि करके श्राणिमानम्=दुर्बवता को निगच्छति=मास होता है तत्=उस समय यथा≕जैसे

श्राद्रम्≕मामंका पकाफल पुरुष:=पुरुष ए≆यः=इन धा=या उदुम्बरम्=गूलर का पका फल श्रद्भेभ्यः=हस्तपादादि श्रद-ववों से बा=पा पिष्पत्तम्=पीपत का पका फन प्रमुच्य=छ्टकर पुनः≕िकर बन्धनात्≔बन्धन से प्रमुख्यते=वायुके वेग करके गिर प्रतिन्यायम्=डलटे मार्ग से प्रतियोनि=भौर भौर शरीर की पड़ता है **एवम् एव**≐डसीपकार प्राणायैय=भोगार्थ श्चाद्रवति=जाता है श्रयम्=यह

भावार्थ ।

याज्ञवरूक्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! जिससमय जीवास्मा बुढ़ापा करके दुर्बलता को प्राप्त होता है, अथवा ज्वरादिक करके दुर्बलता को प्राप्त होता है, तो उस समय (जैसे आम का पक्का फल या गूलर का पक्का फल, अथवा पीपल का पक्का फल, वायुके वेग करके अपने डंठे से गिर पड़ता है उसीप्रकार) यह जीवास्मा अपने हस्त पादादिक अवयवों से छूटकर और दूसरे शरीर निमित्त कर्मफल भोगार्थ जाता है।। ३६॥

मन्त्रः ३७

तवथा राजानपायान्तमुग्राः प्रत्येनसः सूत्रग्रामएयोऽन्नैः पानै-रावसयैः प्रतिकल्पन्तेयमायात्ययमागच्छतीत्येवथः हैवंविद्धः सर्वीणि भूतानि प्रतिकल्पन्त इदं ब्रह्मायातीदमागच्छतीति ॥

पदच्छेदः ।

तत्, यथा, राजानम्, आयान्तम्, उपाः, प्रत्येनसः, सृतप्रामएयः, अञ्जेः, पानैः, आवसर्थः, प्रतिकल्पन्ते, अयम्, आयाति, अयम्, आग-च्छति, इति, एवम्, ह, एवंविदम्, सर्वािग्, भूतानि, प्रतिकल्पन्ते, इदम्, ब्रह्म, आयाति, इदम्, आगम्छति, इति ॥ पदार्थाः । ऋन्वयः

पदार्थाः

तत्=जपर कहे विषय में
+ द्द्यान्तः=द्द्यान्त है कि
यथा=जैसे
उग्राः=भयंकर कर्म करनेवाले
पुर्वेस श्रादिक
प्रत्येनसः=पाप के द्रुष्ड देनेवाले
मजिस्ट्रेट लोग
स्त्रामग्यः=गांव गांव के मुल्या
लोग
श्राष्ट्रेः=चावल, गेहूं, चनादि
श्रल से
पानः=पीने के योग्य दूध,
द्दी, घृत से
(रहनेके योग्य मकान,
स्रावसथैः=
आवसथैः=
पाने इन सब को
हकट्ठा करके

द्यायान्तम्≕याते हुये राजानम्≕राजा की मतिकलपन्ते≕राह देखते हैं च≕थोर इति≕ऐसा घदन्ति⊐कहते हैं कि श्चायाति=मा रहा है
श्चयम्=यह
हति=श्यव
श्चागच्छति=मा पहुँचता है
एवम् एच=हसी प्रकार
सर्वाणि=सव
भूतानि=प्रायी यानी सूर्यादि
हेनता
ह=निरचय करके

श्चयम्≔षह राजा

प्यम्चिदम्= { इस प्रकार जानने प्यम्चिदम्= { वाले के लिये यानी ज्ञानी पुरुष के लिये प्रतिकल्पन्ते=सह देखते रहते हैं + च=च्योर इति=ऐसा घदन्ति=कहते हैं कि

इदम्=यह ब्रह्म=न्रज्ञवित्पुरुप श्रागाति=श्राता है इदम्=यह ब्रह्म पुरुप श्रागच्छति=श्रा रहा है

भावार्थ ।

याज्ञवत्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! ऊपर कहे हुये विषय में यह दृष्टान्त है कि जैसे भयंकर कम करनेदाले पुलिसआदिक आपेर पापकर्म के द्रगढ देनेवाले हाकिम और गांव गांव के मुख्यि लोग अज्ञादि और दूध जल आदि और रहने के लिये मकान, खेमा, सम्बू आदि एकत्र करके आते हुये राजा की राह देखें हैं ऐसा कहते हुये कि हमारा राजा आ रहा है, यह आ पहुँचा है. इसी प्रकार सब

प्राग्री यानी सूर्य आदि देवता निश्चय करके इस ज्ञानी के लिये राह देखा करते हैं ऐसा कहते हुये कि देखो वह ब्रह्मवित् आता है वह आ रहा है ॥ ३७॥

मन्त्रः ३८

तद्यथा राजानं पृथियासन्तमुद्राः पृत्येनसः सूत्रप्रामएयोऽभिस-मायन्त्येवमेनेममात्मानमन्तकालो सर्वे पाणा श्रभिसमायन्ति यत्रैतद्-ध्वीच्छ्वासी भवति ॥

इति तृतीयं ब्राह्मणम् ॥ ३ ॥ पदच्छेदः।

तत्, यथा, राजानम्, प्रथियासन्तम्, उप्राः, प्रत्येनसः, सूनमा-मययः, स्रभिसमायन्ति, एवम्, एव, इसम्, स्रात्मानम्, झन्तकाले, सर्वे, प्राग्गाः, श्रभिसप्रायन्ति, यत्र, एतत्, ऊर्ध्वोच्छ्वासी, भवति ॥ झन्वयः पदार्थाः | झन्वयः पदार्थाः जीवस्य रे _ मरणकाल में जी- पवम् एव=इसी प्रकार

जीवस्य रे मुगरणकाल में जी- प्रवम् एव=इसी प्रकार भ्रान्तकाल रे वात्मा के साथ के चीन कीन संवें=सब भारणाः=प्राण चक्कर

क=कान कान ग्राच्छन्ति=जाते हैं प्रात्माः=प्रात्म चक्षुसादि इन्द्रिय तत्=इस विषय में यम=जब + दृष्टान्तः=दृष्टान्त देते हैं कि श्रान्तकाले=मरण समय

यथा=ैसे एतत्≍यह जीवास्मा उद्राः प्रत्यनसः≕पुलिस के लोग और जध्योंच्छःसी≔ऊर्ध्वरवासी

मिजिर्ट्र त्रादिक कथ्याच्छ्वासा=अध्ययसासा + च=त्रीर भवति=होता है स्तत्रप्रामग्यः=गांव के मुखिया खोग + तद्रा=तब प्रयियासन्तम्=विस्त जाने वाले पनम्=इस

राजानम्=राजा के श्रात्मानम्=श्रात्मा के श्रात्मानम्=श्रात्मा के श्रामस- रे संमुख विना बुजाये श्रामसमायन्ति=सामने उपस्थित मार्यान्त रे श्रात हैं होती हैं

भावाधे मरती बेला में जीवारमा के साथ कीन कौन जाते हैं, इस विषय में दृष्टान्त देते हैं कि, जैसे पुलिस के लोग, गांव के मुस्तिया लोग वापिस जानेवाले राजा के सन्मुख विना बुलाये झाते हैं उसी प्रकार सब चक्कुरादि इन्द्रियां जब यह जीवात्मा उर्ध्वरवासी होता है तब उसके सामने उसके साथ चलने के लिये उपस्थित होजाती हैं।। ३८॥ इति तृतीयं ब्राह्मगुम् ॥ ३॥

श्रथ चतुर्थं बाह्मग्रम्।

मन्त्रः १

स यत्रायमात्मावर्षं न्येत्य संमोहिभव न्येत्यथैनमेते पारणा श्रभिसमायन्ति स एतास्तेजोमात्राः समभ्यादद्वानो हृदयमेवान्वव-क्रामिति स यत्रैष चाक्षुपः पुरुषः पराङ् पर्योवर्त्ततेऽथारूपज्ञो भवति ॥ पदच्छेवः।

सः, यत्र, श्रायम्, श्रातमा, श्रावक्यम्, न्येत्य, संमोहम्, इव, न्येति, श्राथ, एनम्, एते, प्राग्ताः, श्रामिसमायन्ति, सः, एताः, तेजोमात्राः, समभ्याददानः, हृदयम्, एर, श्रान्ववकामति, सः, यत्र, एपः, चाक्षपः,

पुरुषः, पराङ्, पर्यावर्त्तते, स्रथ, स्रारूपझः, भवति ॥

श्चन्वयः पदार्थाः
यत्र=जिस समय
सः=वही
श्चयम्=यह
श्चात्मा=जीवात्मा
इच=मानो
श्चवत्यम्=दुर्वजता को
न्येत्य=पास होकर
संमोहम्=मृच्छी को
न्येति=पास होता है
श्चथ=तव

श्रन्यः पदार्थाः
+ वागादयः=वागादि
प्राणाः=इन्द्रियां
पनम्=इस पुरुष के
श्रिभिसमा- } सामने स्थित
यन्ति } होजाती हैं
+ च तदा=भौर तबही
सः=जीवात्मा
पताः=इन
तेजोमात्राः=तैजस श्रंशों को
समभ्याददानः=श्रम्होतरह शरीर के
संब थोर से जेताहुआ

हृद्यम् एव≔हृदय के ही तरफ अन्वयकामति≕जाता है अथ=स्रोर यत्र=जिस समय सः=वह एषः=यह स्राधुपः=नेत्रस्थ पुरुषः≕जीवारमा

पराक्=बाद्ध विषय विमुख होता हुआ पर्यावक्तेते=अन्तर्मुख होता है अथ≔तव सः≔वह कर्त्ता भोक्ना पुरुष अफ्रपक्कः≕रूप का पहिचानने बाजा नहीं होता है

भावार्थ ।

इस शरीर से जीवात्मा कैसे निकलता है उसको कहते हैं. हे राजा जनक ! जिस काल में यह जीवात्मा दुर्वलता को प्राप्त होकर मूच्छा को प्राप्त होता है तथ बागादि सब इन्द्रियां इस पुरुष के सामने उपस्थित होजाती हैं, ख्रोर उस समय वह जीवात्मा तेजस ख्रंश को भली प्रकार शरीर के सय खड़ों से लेता हुद्या हृद्य के तरफ जाता है, ख्रोर जब वह नेत्रस्थ पुरुष बाह्य विषयों से विमुख होता हुआ झन्तर्मुख होता है तब वह कर्त्ता भोक्ता पुरुषस्प का पहिचाननेवाला नहीं होता है ॥ १ ॥

मन्त्रः २

एकीभवित न पश्यतित्याहुरेकीभवित न जिन्नतीत्याहुरेकीभवित न रसयत इत्याहुरेकीभवित न वदतीत्याहुरेकीभवित न शृणोती-त्याहुरेकीभवित न मनुत इत्याहुरेकीभवित न स्पृशतीत्याहुरेकीभवित न मनुत इत्याहुरेकीभवित न स्पृशतीत्याहुरेकीभवित न विज्ञानातीत्याहुरेतस्य हैतस्य हृदयस्याग्रं प्रद्योतते तेन प्रद्योन्तनेनेष आत्मा निष्कामित चछुष्टो वा सूर्जोवाऽन्येभ्यो वा शरीरदेशेभ्यस्तमुत्कामन्तं प्राणोऽन्त्कामिति पाणमन्त्कामन्तंथ सर्वे प्राणा अन्त्कामिन सविज्ञानो भवित सविज्ञानमेवान्ववकामित । तं विद्याकर्मणी समन्वारभेते पूर्वपक्षा च ॥

पदच्छेदः ।

एकीभवित, न, पश्यित, इति, आहुः, एकीभवित, न, जिल्लीत, इति, आहुः, एकीभवित, न, वद्ति, इति, आहुः, एकीभवित, न, वद्ति, इति, आहुः, एकीभवित, न, वद्ति, इति, आहुः, एकीभवित, न, शृर्णोति, इति, आहुः, एकीभवित, न, मनुते, इति, आहुः, एकीभवित, न, मनुते, इति, आहुः, एकीभवित, न, विज्ञानाित, इति, आहुः, तस्य, ह, एतस्य, हृद्यस्य, अश्म, प्रयोन्तेते, तेन, प्रयोतनेन, एपः, आत्मा, निष्कामित, चक्षुष्टः, वा, मूर्गः, वा, अन्देभयः, वा, शरीरदेशेभ्यः, तम्, उत्कामन्तम्, प्राणः, अनुत्कामित, प्राण्म, अनुत्कामित, प्राण्म, अनुत्कामित, प्राण्म, अनुत्कामित, सर्वे, प्राण्माः, अनु, उत्कामित्त, सविज्ञानः, भवित, सविज्ञानम्, एव, अनु, अवकामिति, तम्, विद्याकर्मण्णी, समन्वारभेते, पूर्वप्रज्ञा, च॥

श्रन्वयः

पदार्थाः श्चन्य यः + मरणकाले=मरणकाल विषे + वन्धुमि- } =वन्धु मित्रादिक त्रादयः } + इति≔ऐसा + ऋाहुः≔कहते हैं कि + ग्रस्य=इसके + नयनेन्द्रियः=नेत्रइन्द्रिय पकीभवति=हृदय श्रात्मा के साथ एक होरहा है + ऋतः≔इस विये + सः=वह + नः≔इम लोगों को **न**≔नहीं पश्यति=देखता है + यदा=जब + ब्राणशक्रिः≔ब्राणशक्रि न=नहीं

पदार्थाः जिन्नति=संघती है + तदा≔तब इति=ऐसा श्राहः=वे लोग कहते हैं कि श्रस्य=इसकी घाणेन्द्रियः≔घाणेन्द्रिय पकीभवति=श्रात्मा के साथ एक होगई है श्चतः=इसी कारण सः=वह न जिघ्रति≕नहीं सूंघता है + यद्ा=जब रसेन्द्रियः=स्वाद लेनेवाली इन्द्रिय एकीभवति=ग्रात्मा के साथ एक होती है

+ तदा≔तर्व

न रसयते=वह किसी वस्तृ का आहु:=लोग कहते हैं कि स्वाद नहीं केता है सः≔बह + यदा=जब न≔नहीं प्रकीभवति=वागिन्द्रिय प्रात्मा के स्प्रशति=स्पर्श करता है साथ एक होती है + यदा=जब + तदा=तब प्कीभवति= { बुद्धि श्रात्मा के साथ एकभाव को प्राप्त होती है इति=ऐसा श्चाहुः=कहते हैं कि + तदा=तब सः=वह इति≔ऐसा न वदति=नर्धे बोखता है श्चाद्वः=लोग कहते हैं कि + यदा=जब एकीभवति=श्रोत्रेन्द्रिय त्रात्मा के + सः≔वह न≃नहीं साथ एक होती है विज्ञानाति=नानता है + तदा≔तब ह≕तब इति=ऐसा श्चाहुः=लोग कहते हैं कि त∓य≃डस एतस्य=इस ग्रात्मा के सः=वह हृद्यस्य=हृदयं का न श्रुखोति=नहीं सुनता है श्चय्रम्≈श्वयभाग + यदा=जब प्रद्योतते=प्रकाश करने लगता है पकीभवति=मन भारमा के साथ तेन≃उसी एक होता है प्रद्योतनेन=हृदयाप्र प्रकाश करके + तदा≔तब + निष्क्रममाणः=निक्वता हुन्ना इति=ऐसा आदुः=लोग कहते हैं कि एषः=यह श्चातमा=श्रन्तरात्मा + सः≔वह चक्षुष्टः=नेत्रसे न=नहीं वा=या मनुते=मनन करता है मूर्भः=मस्तक से + यदा=जब वा≔या पकीभवति=विगिन्दिय जिङ्गातमा श्चन्येभ्यः } =श्चीरइन्द्रियोंकी राहसे शरारदेशेभ्यः } के साथ एक होता है + तदा=तव इति≕ऐसा निष्कामति=निकलता है

उत्कामन्तम्=निकलते हुये
े तम्=उस जीवात्मा के
अनु=पीछे
े प्राणः=प्राय
उत्कामित=अपर जाता है यानी
निकलने लगता है
अनुस्कामन्तम्≕जीवात्माके पीछे जाने
वाले

्कामन्तम्⇒जीवात्माके पीछे जाने वाजे प्राणम्⇒प्राण के श्रमु=पं∗छे सर्भे=सब प्राणाः=वागादि इन्द्रियां उत्कामन्ति=अपर को जाती हैं + तदा=तब याने जाते समय श्रयम्=यह जीवातमा
सिविद्यानः=पूर्ववत् ज्ञानवाजा
भवति=होता है
च=श्रीर
+ सः=वह जीवातमा
सिविज्ञानम्=विज्ञानस्थान को
प्य=ही
श्रम्ववक्रामिति=जाता है
तम्=जोनवाले श्रासमा के
श्रमु=पीछे
विद्याकर्मणां=विया श्रीर कर्म
+ च=श्रोर
पूर्वप्रका=पूर्व का ज्ञान
समन्यारमत=सम्बक् प्रकार जातेहें

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! पुरुप के मरते समय उसके भाई बन्धु निवादि उसके पास बेठकर ऐसा कहते हैं कि इस पुरुप की नेत्रेन्द्रिय हृदयात्मा के साथ एक होरही है इसलिये वह हमको नहीं देखते हैं, जब उस नी ब्राग्एशिक को नहीं देखते हैं, तब ऐसा कहते हैं कि इसकी ब्राग्एइन्द्रिय हृदयात्मा के साथ एक होरही है, इसीकारग्ए वह किसी वस्तु के सूँपने में असमर्थ है, जब स्वाद लेने बाली इन्द्रिय हृदयात्मा के साथ एक होजाती है तब वह किसी वस्तु का स्वाद नहीं लेता है, जब वािगन्द्रिय हृदयात्मा के साथ एक होजाती है तब बेठेडुये लोग कहते हैं कि वह नहीं बोलता है, जब श्रोत्रेन्द्रिय हृदयात्मा के साथ एक होजाती है तब लोग कहते हैं कि यह नहीं सुनता है, जब मन हृदयात्मा के साथ एक होजाता है, जब मन हृदयात्मा के साथ एक होजाता है, जब स्वाय एक होजाती है तब लोग कहते हैं कि यह नहीं सुनता है, जब मन हृदयात्मा के साथ एक होजाता है, जब स्वाय एक होजाता है, जब स्वाय एक होजाती है तब लोग ऐसा कहते हैं कि यह नहीं स्वयं करता है, जब स्विप्त हुद्यात्मा के साथ एक होजाती है तब लोग ऐसा कहते हैं कि यह नहीं स्वयं करता है, जब स्विप्त हुद्यात्मा के साथ एक होजाता है, जब लोग ऐसा कहते हैं कि यह नहीं स्वयं करता है, जब लोग ऐसा कहते हैं कि यह नहीं स्वयं करता है, जब लोग ऐसा कहते हैं कि यह नहीं स्वयं करता है, जब

ख़द्धि हृदयात्मा के साथ एक होजाती है तब लोग कहते हैं कि यह नहीं पहिचानता है, श्रीर तभी इस जीवात्मा के हृदय का श्रप्रभाग चमकने लगता है, उसी हृदय के अप्रभाग के प्रकाश करके यह जीवारमा नेत्र से अथवा मस्तक से अथवा और इन्द्रियों की राह से निकल जाता है, ध्योर उसके निकलने पर उसीके पीछे पीछे प्रारा भी चल देता है. श्रीर प्रासाके पीछे सब इन्द्रियां चलदेती हैं, तब यह जीवात्मा ज्ञानी होता हुन्ना विज्ञानस्थान को जाता है, स्त्रीर उसके पीछे विद्या, कर्म, ज्ञान सव चलदेते हैं ॥ २ ॥

मन्त्रः ३

तद्यथा तृराजलायुका तृरास्यान्तं गत्वान्यमाक्रममाक्रम्यात्मा-ं नमुपसछहरत्येवमेवायमात्मेदछ शरीरं निष्टत्याविद्यां गम्यित्वा-न्यमाक्रममाक्रम्यात्मानमुपसछहरति ॥

पदच्छेदः ।

तत्, यथा, तृगाजलायुका, तृगास्य, अन्तम्, गत्वा, अन्यम्, श्चाकमम्, त्राक्रम्य, त्रात्मानम्, उपसंहरति, एवम्, एव, श्रायम्, श्चारमा, इदम्, शरीरम्, निहत्य, अविद्याम्, गमयित्वा, अन्यम. श्चाकमम्, आक्रम्य, आस्मानम्, उपसंहरति ॥

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

श्चन्ययः तत्=पुनर्देह के आरम्भ मं आत्मानम्=अपने को + ह्यान्तः=ह्यान्त है कि यथ।=जैसे तृ्गजलायुका=तृगजलायुका कीडा तृण्स्य=तृण के श्चन्तम्=श्चन्तम भाग को गत्या=पहुँच कर श्रन्यम्=दृशरे श्राक्रमम्=तृष के ध्याऋस्य=ब्राश्रय को पकड

उपसंहरति=संकोच कर श्रगते तृगा पर जाता है एवम् एव=उसी प्रकार श्रयम्=यह श्चारमा=जीवारमा इदम्=इस शरीरम्=जर्जर शरीर को निहत्य=श्रचेतन बनाकर

+ च=भीर

श्रविद्याम् = { स्त्रीपुत्रादिक वियोग जन्य शोक को गमयित्वा | दूर करके

श्राक्रमम्=शरीर को श्राक्रम्य=श्राक्षय करके । श्राक्रमानम्=श्रपनं वत्तमान देह को

श्चन्यमू=धौर दूसरे

उपसंहरति=छोडता है

भावार्थ ।

याज्ञवत्कय महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! यह जीवात्मा किस तरह एक शरीर से दूसरे शरीर को प्राप्त होता है, इस विषय में जो दृष्टान्त लोग देते हैं उसको सुनो में कहता हूं, हे राजन् ! जैसे तृगाजलीका कीड़ा उस तृगा के उपर जिसके उपर वह चढ़ा रहता है जब उसके अन्तिम भाग को पहुँचता है तय दूसरे तृगा को जो उसके सामने रहता है पकड़ कर अपने शरीर को सेकोचकर उस अगले तृगा पर जाता है उसी प्रकार यह जीवात्मा अपने जर्जर शरीर को अचेतन बनाकर और स्त्री पुत्रादिक वियोगजन्य शोक को दूर करके दूसरे शरीर को आश्रय लेता हुआ अपने वर्तमान देह को छोडता है।। ३।।

मन्त्रः ४

तद्यथा पेशस्कारी पेशसो मात्रामपादायान्यज्ञवतरं कल्यारणतर्थं रूपं तनुत एवमेवायमात्मेद्धं शरीरं निहत्याविद्यां गमधित्वान्यज्ञ-वतरं कल्यारणतर्थं रूपं कुरुते पित्र्यं वा गान्वर्वे वा देवं वा प्राजा-पत्यं वा बाह्यं वाऽन्येषां वा भृतानाम् ॥

पदच्छेदः।

तत्, यथा, पेशस्कारी, पेशसः, मात्राम्, श्रापादाय, श्रान्यत्, नव-तरम्, कल्यागातरम्, रूपम्, तनुने, एवम्, एव , श्रायम्, श्रात्मा, इदम्, शरीरम्, निहत्य, श्राविद्याम्, गमियत्वा, श्रान्यत्, नवतरम्, कल्याण-तरम्, रूपम्, कुरुते, पित्र्यम्, वा, गान्धर्वम्, वा, दैवम्, वा, प्राज्ञा-पत्यम्, वा, श्राह्मम्, वा, श्रान्थेपाम्, वा, भूतानाम्॥'

पदार्थाः पदार्थाः श्चन्तयः द्यास्वयः तत=देहान्तरारम्भ के उपा अन्यत्=दूसरा द्दान कारण विषे नघतरम्≔नवीन कल्यागतरम्=श्रेष्टतर ष्ट्रशन्तः=रष्टान्त है कि रूपम्=देह यथा=जैसे कुरुते=धारण करता है **पेशस्कारी**=सुनार वा≔चाहे पेशसः=सोने का तत्=वह देह मात्राम्=एक टुकड़ा पित्र्यम्=पितरत्नोकों के श्रपादाय=केकर योग्य हो श्रन्यत्=दूसरा नवतरम्=पहिले भूषण की वा≖ग्रथवा गान्धर्वम्=गन्धर्वजोकके योग्यहो अपेक्षा अधिक नृतन वा=घथवा कल्य। गतरम् = अच्छा दैवम्=देवलोक के योग्य हो रूपम्≕गहना तनुते=बनाता है वा=ग्रथवा प्राजापत्यम्=प्रजापतिबोक के एवम् एव=इसी प्रकार योग्य हो श्रयम्≔यह श्चात्मा=जीवारमा वा≕ग्रथवा ब्राह्मम्=बद्यातोक के योग्य हो इदम्=इस शरीरम्=जर्जर शरीर को चा≔श्रथवा श्चन्येषाम्=जपरवालों से विरुद्ध निहत्य=स्याग करके भूतानाम्=पशु पक्षी बादिकीं

भावार्थ ।

का हो

श्रविद्याम् । = श्रज्ञानजन्य शोक गमयित्वा । = को नाशकर

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, शास्त्रतत्त्ववित् पुरुषों का विचार है कि कोई जीव उर्ध्व को जाता है, कोई मध्य को जाता है, कोई नीचे को जाता है, एक हास्त्रत पर कभी नहीं रहता है, इस विषय में यह दृष्टान्त है कि, जैसे सुनार सुवर्ण के एक दुकड़े को लेकर पहिले भूपण की अप्वेक्षा दूसरे भूषण को अधिक नृतन और अच्छा बनाता है, इसी प्रकार यह विद्यायुक्त

जीवातमा इस अपने जर्जर शरीर को त्याग करके और अज्ञानजन्य शोक को नाश करके दूसरे नवीन उमदा देह को धारणा करता है चाहे वह देह पितरलोक के योग्य हो, चाहे वह देह गन्धर्वलोक के योग्य हो, अथवा देवलोक के योग्य हो, अथवा प्रजापतिलोक के योग्य हो, चाहे ब्रह्मलोक के योग्य हो. अथवा अपविद्यासंयुक्त जीवारमा उत्पर कहे हुये के विरुद्ध पशु पक्षियों की योनि के योग्य हो ॥ ४ ॥

मन्त्रः ५

स वा श्रयमात्मा ब्रह्म विज्ञानमयो मनोमयः पाणमयश्चश्चर्षयः श्रोत्रमयः पृथिवीमय श्रापोमयो वायुमय श्राकाशमयस्ते जोमयोऽतेजोमयः काममयोऽकाममयः क्रोधमयोऽक्रोधमयो धर्ममयोऽधर्ममयः सर्वमयस्तव्यदेतिदिदंमयोऽदोमय इति यथाकारी यथाचारी तथा भवति साधुकारी साधुर्भवति पापकारी पापो भवति पुष्यः पुष्येन कर्मणा भवति पापः पापेन । श्रयो खल्वाहुः काममय प्वायं पुष्य इति स यथाकामो भवति तत्क्रतुर्भवति यत्क्रतुर्भवति तत्क्रम् कुरुते यत्क्रतुर्भवति तद्क्रम्

पदच्छेदः ।

सः, वा, अयम्, आत्मा, ब्रह्म, विज्ञानमयः, मनोमयः, प्राण्मयः, चक्षुर्मयः, श्रोत्रमयः, पृथिवीमयः, आपोमयः, वायुमयः, आकाशमयः, केनोमयः, अतेनोमयः, काममयः, अकाममयः, कोन्यमयः, अकोन्ययः, धर्ममयः, अविन्यः, सर्वमयः, वत्, यत्, एतत्, इदंमयः, अदोमयः, इति, यथाकारी, यथाचारी, तथा, भवति, साधुकारी, साधुः, भवति, पापकारी, पापः, भवति, पुर्येन, कर्मगा, भवति, पापः, पापेन, आयो, खल्ल, आहुः, काममयः, एव, अयम्, पुरुषः, इति, सः, यथाकामः, भवति, तत्कुः, भवति, यत्कलुः, भवति, तत्, कर्म, कुरुते, यत्, कर्म, कुरुते, तत्, अभिसंपद्यो ॥

श्चन्ययः

श्चन्वयः

पदार्थाः

पदार्थाः सः वै अयम्=वही यह आतमा=जीवात्मा ब्रह्म=ब्रह्मरूप है विज्ञानमयः=विज्ञानमय है मनोमयः=मनके श्रन्दर रहने से मनोमय है प्राणमयः=श्राणादिक में रहने से प्राणमय है चक्षुर्मयः=चक्षुविशिष्ट होने के कारण चक्षमय है श्रोत्रमयः=श्रोत्रविशिष्ट होने के कारण श्रोत्रमय है पृथिचीमयः=गन्धज्ञान होने के कारण घाणमय है श्चापोमय:=जलविशिष्ट होने के कारण ऋषोमय है वायुमयः=वायुविशिष्ट होने के कारण वायुमय है श्चाकाशमय:=श्चाकाश में रहने के कारण ग्रावाशमय है तेजोमयः=तेजविशिष्ट होने के कारण तेजमय है श्रतेजोमयः=तेजरहित है काममयः=कामना से पूर्ण है श्रकाममयः=कामनारहित है ऋोधमयः=क्रोध से भरा है श्रकोधमयः=क्रोधरहित है धर्ममयः=धर्म से भरा है अधर्भमयः=धर्मरहित है सर्वमयः=सर्वमय है यानी जो कुछ है सब इसीम ह

यत्≕ित्रस कारग एतत्=यह जीवात्मा इदंमयः= { इस लोक की सब दंमयः= { वासनाओं करके वासित है श्रदोमयः≔परलोक की वासनाश्रों करके वासित है तत्=इस लिये इति=ऐसा यानी सर्वमय है यथाकारी=जिस प्रकार के कर्मों को करता है यथाचारी=जिस प्रकार आचरणों को करता है तथा भवति=वैसेही होता है साधुकारी=श्रव्छे कर्म का करनेवाला साधुः≔साधु है पापकार्ग≔पापकर्म का करनेवाला पापः=पापी भवति=होता है पुरायेन=पुरुष कर्म करके प्*रायः*=पुरयवान्

भवति=होता है

कर्मणा=कर्म करके

पापः=पानी

भवति=होता है

श्चथो=इसके घनन्तर

खलु=निश्चय करके

श्राहुः=कोई श्राचार्य कहते हैं कि

पापेन≔पाप

श्रयम् एव=यही
पुरुषः=पुरुष
काममयः=काममय है
हति=हसी कारण
सः=वह
यथाकामः=जिस इच्छावाजा
भवति=होता है
तत्कतुः=वैसाही उसका
भवति=होता है

यत्कतुः=जैसा परिश्रमवाला भवति=होता है तन्=वैसाही कर्म=कर्म को कुरुते=करता है यन्=जैसा कर्म=कर्म कुरुते=करता है तन्=वैसा फल अभिसंपद्यंत=पाता है

भावार्थ ।

याज्ञवरूक्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! वही यह जीवात्मा ब्रह्मस्वरूप है, वही विज्ञानस्वरूप है, वही मन के अन्दर रहने से मनोमय है, प्राम्मादिकों में रहने से प्राम्मय है, चक्षविशिष्ट होने के कारमा चलमय है, श्रोत्रविशिष्ट होने के कारमा श्रोत्रमय है, गन्ध-विशिष्ट होने के कारण आण्मय है, जलविशिष्ट होने के कारण आपो-मय है, वायुविशिष्ट होने के कारगा वायुमय है, आकाश में रहने के कारण आकाशमय है, तेज में रहने के कारण तेजमय है, वही तेज-रहित भी है, क्रोध से भग है, क्रोबरहित भी है, धर्म से पूर्ण है, धर्म-रहित भी है, वही सर्वमय है यानी जो कुछ है वह उसी में है, जिस कारमा यह जीवात्मा इस लोक की सब वासनाओं करके वासित है. श्रीर परलोक की वासनाश्रों करके वासिन है, इसी कारण यह श्राहमा सर्वमय है, जिस प्रकार यह जीवात्मा कमाँ को करता है, ख्रीर जिस प्रकार आचर्गों को करता है, वैसेही वह होता है यानी अच्छे कर्मों का करनेत्राला साधु होजाता है, ख्रोर पाप कमी का करनेवाला पापी हो जाता है. प्रायकक्त प्रायवान बनता है. पापकर्क्ता पापी बनता है. कोई आचार्य ऐसा भी कहते हैं कि यह जीवात्मा काममय है, इसी कारण वह जैसी इच्छावाला होता है वैसाही उसका श्रम होता है, श्रोर जैसाही श्रमवाला होता है वैसाही कर्म करता है, श्रीर जैसा कर्म करता है वैसा फल पाता है।। प्रा

मन्त्रः ६

तदेष श्लोको भवति । तदेव सक्तः सह कर्मणैति लिक्नं मनो यत्र निपक्कमस्य । पाप्यान्तं कर्मणस्तस्य यतिकचेष्ठ करोत्ययम् । तस्माल्लोकात्पुनरेत्यस्मै लोकाय कर्मण इति तु कामयमानोऽथा-कामयमानो योऽकामो निष्काम श्राप्तकाम श्रात्मकामो न तस्य प्राणा उत्क्रामन्ति ब्रह्मेव सन्ब्रह्माप्येति ॥

परच्छेदः ।

तत्, एष:, रक्षोक:, भवति, तत्, एव, सक्तः, सह, कर्मग्रा, एति, किङ्गम्, मनः, यत्र, निपक्तम्, श्रास्य, प्राप्य, श्रान्तम्, कर्मगाः, तस्य, यत्, किंच, इह, करोति, अयम्, तस्मात्, लोकात्, पुनः, एति, अस्मे, क्लोकाय, कर्मणे, इति, नु, कामयमानः, अथ, अकामयमानः, यः, श्चकामः, निष्कामः, श्राप्तकामः, श्चात्मकामः, न, तस्य, प्राग्गाः, उत्का-मन्ति, ब्रह्म, एव, सन् , ब्रह्म, श्रप्येति ॥

श्चन्त्रयः

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

तत=उपर कहे हथे विषय में एषः=यह इलोकः=मन्त्र प्रमाण भवति=है यञ्च=जिस पानेवाले फल में श्चस्य≔इस पुरुष का त्तिङ्गम् मनः≔ितङ्गशरीर संयुक्त मन निपक्तम्=श्रातशय श्रासक रहता है तत् पव=उसी फल को कर्मणा=कर्म के

सह=साथ सक्रः≔ग्रासक्र होता हुआ पति≔पुरुष प्राप्त होता है + किंच≂श्रौर यर्तिकच≕जो कुछ श्रयम्≔यह पुरुक इह=यहां करोति=करता है तस्य≔उस कर्मणः≔कर्मके

श्चन्तम्=फल को

प्राप्य=भोग कर है

निक्कामः=जिसमें कोई वासना तस्मात्=इस नहीं है लोकात्=जोक से त्रास्मै≔इस जिसको सब पदार्थ लोकाय=लोक में कर्मरां⊐कर्म करने के लिये पुनः≕िकर पति=भाता है इति=इस प्रकार न=निरचय करके कामयमानः=कामना करनेवासा तस्य=उस पुरुष की प्राशाः≔वागादि इन्द्रियां जीव संसरति=संसारको प्राप्त होता है न उस्कामन्ति=देह से बाहर नहीं श्रथ=परन्तु जाती हैं यः=जो + सः≔वह पुरुष श्रकामयमानः=श्रक्तित्वं प्च⊐यहांही ब्रह्म=ब्रह्मवित् सः≔वह न=महीं सन्=होता हुन्रा पति=कडीं जाता है ब्रह्म=ब्रह्म को + सम्राट≔हे राजन ! श्चिप⊐ही श्रकामः=बाह्य सुख स्पर्शादिक | प्रति≔प्राप्त होता है यानी से रहित है जो मुक्त होजाता है

भावार्थ ।

हे राजा जनक ! मरते समय जीवात्मा का मन जहां और जिस विषय में श्रासक होता है वहांही यह जीवात्मा श्रासक होता हुआ उसी विषय की प्राप्ति के लिये जाता है, और जो कुछ यह जीवात्मा यहां करता है उस कर्म के फल को परलोक में भोग कर उस लोक से इस लोक में फिर कर्म करने को श्राता है, इस प्रकार कामनावाला पुरुष संसार को वारंवार प्राप्त होता है, हे राजन् ! जो गित काम-रहित पुरुषों की है उसको भी सुनो, जो पुरुष सब कामना से रहित है, वह कहीं नहीं जाता है, हे राजन् ! वह पुरुष जो बाह्य सुख स्पर्शादिक से रहित है, श्रीर उसमें कोई वासना नहीं है, श्रीर जिसको सब पदार्थ प्राप्त हैं, किसी वस्तु की कमी नहीं है, श्रथवा जिसमें श्रयने श्रात्मा के सिवाय श्रीर किसी वस्तु की इच्छा नहीं है, उस पुरुष की वासी श्रादि इन्द्रियां देह से बाहर नहीं जाती हैं, वह पुरुष यहांही ब्रह्मवित् होता हुश्रा ब्रह्म कोही प्राप्त हो जाता है। है।।

मन्त्रः ७

तदेष रलोको भवति । यदा सर्वे प्रमुच्यन्ते कामा थेऽस्य हृदि श्रिताः । श्रथ मत्योऽमृतो भवत्यत्र ब्रह्म समरनुत इति । तद्यथाऽहि-निर्वयनी वन्मीके मृता प्रत्यस्ता श्यीतैवमेवेद् छ शरीरछ शेतेऽथा-यमशरीरोऽमृतः प्राणो ब्रह्मेव तेज एव सोऽहं भगवते सहस्रं ददामीति होवाच जनको वैदेहः ॥

पदच्छेदः ।

तत्, एषः, श्लोकः, भवित, यदा, सर्वे, प्रमुच्यन्ते, कामाः, ये, अस्य, हृदि, श्रिताः, अथ, मर्त्यः, अमृतः, भवित, अत्र, ब्रह्म, समश्तुते, इति, तत्, यथा, अहिनिरुर्वयनी, वरुमीके, मृता, प्रत्यस्ता, शयीत, एवम्, एव, इदम्, शरीरम्, रोते, अथ, अयम्, अशरीरः, अमृतः, प्राग्तः, वहा, एव, तेजः, एव, सः, अहम्, भगवते, सहस्रम्, ददामि, इति, ह, उवाच, जनकः, वेदहः ॥

श्चन्वयः पदार्थाः श्रन्वयः वच−कप्रकटेट्टेरोविष्यमें शिवाः-

पदार्थाः

तत्=जपर कहे हुये विषय में श्रिताः=स्थित हैं + च=श्रीर एषः=यह इलोकः≕मन्त्र यदा=जब भवति=प्रमाण है + ते≂वे श्चस्य=इस पुरुष के सर्वे≕सब हृदि=हृदय में कामाः=कामनायें ये≕जो जो प्रमुच्यन्ते=निकल जाती हैं कामाः≔कामनायें श्रध=तब

अर्त्यः⇒भरख पर्भवाता परुष श्रमृतः≔ममर भवति=होजाता है च≕धौर श्रात्र≕यहांही ब्रह्म≔ब्रह्म को समञ्जूते=शास होता है तत्=इसी विषय में इति=ऐसा + द्रष्टान्तः=द्रष्टान्त है ।के यथा=जैसे श्चाहिनिल्वेयनी=सर्प की खबा मृता=निर्जीवित प्रत्यस्ता=स्थागी हुई वलमीके=बामी के जपर शयीत=पदी रहे पवम् पव=इसी प्रकार इदम्=यह श्ररीरम्=शनी का शरीर + मृतः इव=मुर्रे की तरह शेते=पड़ा रहता है श्रथ=इसी कारण

श्रयम्≖बह प्रात्तः=पुरुष . अशरीर:=शरीररहित श्रमृतः=मरण धर्मरहित + भवति=होता है अयम् एव=यही भुरुष ब्रह्म=ब्रह्मस्वरूप + च=श्रीर तेजः≔ज्ञानस्यरूप एव≕ही है + इति=ऐसा + श्रुत्वा⊃सुनकर जनकः=राजा जनक वैदेहः=विदेह ने ह=स्पष्ट उवाच=कहा कि भगवते=भाषके सिवे याझवल्क्य=हे याज्ञवल्क्य ! स्नः=वह त्रहम्≕में सहस्रम्=एक हजार गौधों को ददामि=रंता हं

भावाधे

हे राजा जनक ! इस पुरुष के हृदय में जो जो कामनायें स्थित हैं जब वे सब निकल जाती हैं तब वह पुरुष अमर होजाता है, और वह यहांही ब्रह्मको प्राप्त होजाता है, इस विषय में यह ट्रष्टान्त है, जैसे सर्प जब अपनी निर्जीवित त्वचा को त्याग देता है, और वह किसी बामी के उपर पड़ी रहती है, तब वह सर्प न उसकी रक्षा का यक्ष करता है, और न उसे फिर लेना चाहता है, उसी प्रकार झानी का शरीर सर्प की त्यागी हुई त्वचा की तरह जीते जी भी निर्जीवित

पड़ा रहता है, यानी उस शरीर से असंबद्ध रहता है, आरेर इसी कारण यह ज्ञानी पुरुष शरीररहित और मरणधर्मरहित होता है, यही पुरुष श्रद्धास्त्ररूप, ज्ञानस्त्ररूप होता है, ऐसा सुनकर राजा जनक विदेह ने सविनय कहा, हे परमपूज्य, भगवन् ! मैं एक हजार गौओं को आपके प्रति दक्षिणा में देता हूं।। ७।।

मन्त्रः द

सदेते श्लोका भवन्ति । अग्गुः पन्था विततः पुरागो माध्य स्पृष्टोऽनुवित्तो मयैव । तेन धीरा अपियन्ति ब्रह्मविदः स्वर्गे लोक-मित ऊर्ध्व विमुक्ताः ॥

पदच्छेदः ।

तत्, एते, रलोकाः, भवन्ति, आगुः, पन्थाः, विततः, पुर'गाः, माम्, सृष्टः, आनुवित्तः, मया, एव, तेन, धीराः, आपियन्ति, ब्रह्मविदः, स्वर्गम्, लोकम्, इतः, ऊर्ध्वम्, विभुक्ताः ॥ अन्वयः पदार्थाः श्रन्वयः पदार्थाः

तत्=जपर कहे हुये मोक्ष

एते=ये

श्लोकाः=मन्त्र भवन्ति=प्रमाण हैं + जनक=हे जनक !

पुरागाः=पुरातन श्रागुः=दुर्विज्ञेय श्रातिसृक्षम विततः=विस्तीर्ग

पन्थाः=ज्ञानमार्गे मया=मैंने

मया-सः एव=श्रवश्य श्रन्वयः श्रनुवित्तः≔जाना है

+ च=घौर मामू=मुक्तको

स्पृष्टः=प्राप्त हुन्ना है तेन=उस मार्ग करकेडी

र्धाराः=धीर

ब्रह्मविद्ः=ब्रह्मज्ञानी इतः=मरने बाद

विमुक्ताः=मुक्त होते हुये स्वर्गम् लोकम्=स्वर्गजोक को यानी

मोक्ष को

श्रिपियन्ति=प्राप्त होते हैं

भावार्थ ।

याइवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! जो कुछ मैं

ऊपर कह आया हूं उस विषय में ये मन्त्र प्रमासा हैं. यह ब्रह्मविद्या मार्ग अतिसूक्ष्म है चारों तरफ फेल रहा है और पुरातन है कि-को शंका नहीं कि यह नवीन मार्ग है, यह वेदविदित मार्ग एता-चला आता है, इस मार्ग को में बड़े परिश्रम के बाद प्राप्त हुन्ते है यानी इसके लिये मैंने श्रवण, मनन, निद्धियासन किया है, इं ,, ब्रह्मवित् परमज्ञानी पुरुष इस सृक्ष्म मार्ग को ग्रहण करेंगे वे भी सुखमय धाम को प्राप्त होंगे. कब होंगे, जब वे स्थूल शरीर के छोड़ के पहिलंही सन्न सम्बन्धों से मुक्त होजायँगे, अथवा जीवनमुक्त होकर श्रावागमन से रहित हो जायँगे ॥ 🗲 ॥

मन्त्रः ६

तस्मिञ्छुद्भमुत नीलमाहुः पिङ्गलथं हरितं लोहितं च। एष पन्था ब्रह्मणा हानुवित्तस्तेनैति ब्रह्मवित्पुएयकुतैजसश्च ॥

पदच्छेदः ।

तस्मिन, शुक्तम्, उत, नीलम्, आहुः, पिङ्गलम्, हरितम्, लोहि-तम्, च, एषः, पन्थाः, ब्रह्माा, ह, अनुवित्तः, तेन, एति, ब्रह्मवित्, पुरवकृत्, तैजसः, च ॥

श्चन्ययः

पदार्थाः श्चन्ययः

पदार्थाः पिङ्गलम्=सूर्य के पीले रूप को + श्राहु:=मृक्तिमार्ग कहते हैं +केचित्=कोई हरितम्=सूर्य के हरे रूप को

+ आहु:=पुक्तिमार्ग कहते हैं च=श्रौर

+ केचित्=कोई लोहितम्=सूर्य के लालरूप को

+ आहु:=मुक्तिमार्ग कहते हैं एष:*≔यह पन्थाः=मार्ग

+ केचित्=कोई

श्रादुः=मुक्तिमार्ग कहते हैं उत≃ग्रौर + केचित्=कोई नीलम्≔सूर्य के नील रूप को

शुक्कम्≔सूर्य के शुक्क रूप को

ति€मन्≔उस मोक्षसाधन

+ विवादः=विवाद है

+ केचित्=कोई आचार्य

मार्ग के विषय में

+ श्राहु:=मुक्ति मार्ग कहते हैं

ब्रह्मगा=ब्रह्मवेत्ताओं करके ब्रानुधित्तः=जाना गया है क्रेन एव≔इसी मार्ग करके पुरयकृत्=पुषय करनेवाला तैजसः≔तेजस्वीस्त्ररूप ब्रह्मचित्=त्रझवेत्ता + सूर्यलोकम्=सूर्यकोक को पति=जाता है

भावार्थ ।

हे अनक! सूर्य में पांच तत्वों के पांच रंग स्थित हैं, उन रंगों की उपासना आचार्यों ने अपने अपने मत के अनुसार की हैं. किसी आचार्य ने सूर्य के शुक्त रूप को मुक्तिमार्ग कहा है, किसी ने सूर्य के नील रूप को मुक्तिमार्ग कहा है, किसी ने सूर्य के पीले रूप को मुक्तिमार्ग कहा है और किसी ने सूर्य के हरे रूप को मुक्तिमार्ग कहा है, किसी ने सूर्य के लाल रूप को मुक्तिमार्ग कहा है, ये कहे हुये मार्ग अझवेत्ताओं करके जाने गये हैं, इन्हीं मार्गों करके पुषय करने वाले बेनस्वी अझवेता पुरुप सूर्यकों क को जाने हैं।। ह ।।

' मन्त्रः १०

अन्धं तमः प्रविशन्ति येऽविद्यासुपासते । ततो भूय इव ते तमो य उ विद्यायाळ रताः ॥

पदच्छेदः ।

्रमुष्यम्, तमः, प्रविशन्ति, भे, श्रविद्याम्, उपासते, तत., भूयः, इत्, त्रे, तमः, ये, उ, विद्यायाम्, रताः ॥ श्रन्वयः पदार्थाः । श्रन्थयः पदार्थाः

श्चन्ययः पद ये⇒जो ' श्रविद्याम्=पज्ञादि कर्म उपासते⇒करते हैं + ते⇒वे श्चन्यम् तमः=श्चन्यतम में श्रावश्,न्त=श्रीतष्ट होते हैं ख=श्रीर ये⇒जो प्रभवसः प्रदार्थाः

{ कर्मविषा ही मे
विद्यायाम् उ= { श्राती शिक्त, रख्न
श्रादिक विद्यार्थों में
रताः=श्रीभरत हैं
ते⇒वे
ततः=उस श्राध्यतम से
भूषः इव⇒बढे घन
तमः=श्राध्यतम में
प्रविश्रान्ति=प्रविष्ट होते हैं

भावार्ध ।

हे राजा जनक ! जो पुरुष श्राविद्या की उपासना करते हैं वे श्रान्थ-तम को प्राप्त होते हैं और जो विद्या की यानी श्राप्ता विद्या की उपा-सना साहंकार करते हैं वे उससे भी श्राधिक श्रान्थतम को प्राप्त होते हैं क्योंकि इस विद्या करके विशेष रागद्वेष में श्रासक्त होते हैं ॥ १०॥

मन्त्रः ११

श्रनन्दानाम ते लोका अन्धेन तमसाहताः । तार्छस्ते मेत्या-भिगच्छन्त्यविद्वाछसोऽबुधो जनाः ॥

पदच्छेदः ।

अनन्दाः, नाम, ते, लोकाः, अन्धेन, तमसा, आवृताः, तान् , ते, प्रेत्य, अभिगच्छन्ति, अविद्वांसः, अबुधः, जनाः ॥

श्चन्ययः ते=वे पदार्थोः श्रन्वयः श्रावृताः=श्रावृत हैं पदार्थाः

सोकाः≔लोक

तान्=उन्हीं लोकों को

श्चनन्दाः नाम=धनन्द नाम से प्रसिख हैं

त=व श्रविद्वांसः=साधारण श्रविद्वान्

ये=जो श्रे=जो श्रद्धिन=महा श्रद्धकार श्राबुधः जनाः=श्रज्ञानी पुरुष भेत्य=मरकर

अन्धन=नहा अन्वक तमसा=तम करके

श्रभिगच्छ्रन्ति=प्राप्त होते हैं

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक! वे योनि अनन्द नाम करके प्रसिद्ध हैं जो अन्धकार तम करके आवृत हैं, उन्हीं लोकों को वे साधारण अविद्वान् अज्ञानी मरकर प्राप्त होते हैं ॥ ११ ॥

मन्त्रः १२

अात्मानं चेदिजानीयादयमस्मीति पूरुषः । किमिच्छन्कस्य कामाय शरीरमनुसंज्वरेत् ॥

।दच्छेदः।

आ्रात्मानम्, चेत्, विजानीयात्, अयम्, अस्मि, इति, पृरुषः, किम्, इच्छन्, कस्य, कामाय, शरीरम्, अनुसंज्वरेत् ॥ अन्वयः

पदार्थाः । श्रम्वयः

पदार्थाः

श्चयम्=यह श्रेष्ठ पृरुषः=यात्मा श्रहम्=में

श्रहम्=म श्रस्मि=ह्रं इति=इस प्रकार

श्चातमानम्=उस श्चातमा को चेत्=श्रगर

+ कश्चित्=कोई

विजानीयात्=जान क्षेवे तो

किम्=क्या

इच्छन्=इच्छा करता हुन्ना

च=श्रीर

कस्य=िकस पदार्थ की कामाय=कामना के लिये

शरीरम्=शरीर के विद्ये श्रनुसंज्यरेत्=दुःखित होगा

भावार्थ ।

याज्ञवल्क महाराज कहते हैं कि, हे जनक ! सब पुरुषों को यह ज्ञात है कि में हूं पर अपने रूप का यथार्थ ज्ञान उनको नहीं है, यि अपने स्वरूप का यथार्थ ज्ञान उनको नहीं है, यि अपने स्वरूप का यथार्थ ज्ञान हो कि मेही ब्रह्म हूं, तब वह ब्रह्म बिन् पुरुप किस पदार्थ की कामना के लिये शरीर के पीछे दुःखित होगा यानी जब उसने अपने को ब्रह्म समस्त लिया है और उनकी सब कामनायें दग्ध होगई हैं तो फिर किस कामना के लिये शरीर को धारण करेगा क्योंकि इस्त्रा की पूर्ति के लिये ही शरीर धारण किया जाता है। १२॥

मन्त्रः १३

यस्यानुवित्तः प्रतिबुद्धः श्रात्मास्मिन्संदेश्चे गहने प्रविष्टः । स विश्वकृत्स हि सर्वस्य कर्ता तस्य लोकः स उ लोक एव ॥

पद्च्छेदः ।

यस्य, श्रमुवित्तः, प्रतिबुद्धः, श्रात्मा, श्रस्मिन्, संदेह्रो, गहने, प्रविष्टः, सः, विश्दकृत्, सः, हि, सर्वस्य, कर्त्ता, तस्य, लोकः, सः, उ, लोकः, एव ॥

श्चन्त्रयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

यस्य=जिसका स्नात्मा=जीवात्मा श्रस्मिन्=इसी संदेह्य=संदिग्ध शहने=कठिन शरीर में
प्रविष्टः=झन्तर्गत होता हुन्रा
अनुवित्तः=श्रवण मननादि करके
ज्ञानी है
च=और
प्रतिवुद्धः=विचारवान् है
सः=वही
विश्वकृत्=सब कार्य का करने

वाला है

सः=वहीं सर्वस्य=सबकां कर्त्ता=कर्ता है तस्य=उसी का लोकः=यह लोक है उ=ग्रीर सः एच=वहीं

लोकः=लोकरूप है

भावार्थ ।

याज्ञवत्क्य महाराज कहते हैं कि, हे जनक ! जिसका जीवात्मा इसी कठिन शरीर में अन्तर्गत होता हुआ अवरा मनन निदिष्यासन के द्वारा विचारवान हुआ है वही सब कार्यों का करनेवाला है और वही सबका कर्त्ता है उसी का यह लोक है और वही लोकस्वरूप भी है जो कुछ दृश्यमान है सब उसी का रूप है।। १३।।

मन्त्रः १४

इहैंव सन्तोऽथ विझस्तद्वयं न चेदवेदिर्महती विनष्टिः । ये तद्वि-दुरमृतास्ते भवन्त्यथेतरे दुःखमेवापियन्ति ॥

पदच्छेदः ।

इह, एव, सन्तः, झथ, विघः, तत्, वयम्, न, चेत्, अवेदिः, महती, विनष्टिः, ये, तत्, विदुः, अमृताः, ते, भवन्ति, झथ, इतरे, दुःखम्, एव, आपियन्ति ॥

श्रन्वयः पदार्थाः + याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य महाराज

> + वद्ति=कहते हैं + यदि=श्रगर इह=इसी

एव=शरीर में वयम्=हम लोग श्चन्दयः सन्तः=रहते हये

सन्तः=रहत हुय तत्=उस ब्रह्म को विद्यः=जानलेवें श्रथ=तो

पदार्थाः

सत्यम्=द्शक है **खेत**≕श्रगर

तत्⇒उस बद्धा को ये⇒जो कोग घयम्≔हम् लोग तत्=उस बद्ध को विदुः=जानते हैं विद्यः≔जानें ऋथ≕तो श्रमृताः } भवन्ति }=श्रमर होजाते हैं अवेदिः=हम लोग धजानी श्रथ=भौर रहेंगे इतरे=उनसे प्रथक् मज्ञानी + तदा=तव श्रा€मन्≔इसमें दुःखम्=दुःख को महती=बदी एव=ही

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे राजा जनक ! आगर इसी शरीर में रहते हुये हम लोग उस ब्रह्म को जानलेवें तो बहुतही अच्छ्यी बात है और अगर उस ब्रह्म को हम लोग न जान पावें तो हमारी आज्ञानता है, और बड़ी हानि है, जो लोग उस ब्रह्म को जानते हैं वे अमर होजाते हैं, और उनसे जो पृथक् आज्ञानी हैं वह दु:ख उठाते हैं ॥ १४॥

मन्त्रः १५

यदैतमनुपश्यत्यात्मानं देवमञ्जसा । ईशानं भूतभव्यस्य न ततो विजुगुप्सते ॥

पदच्छेदः ।

यदा, एतम्, अनुपरयति, आत्मानम्, देवम्, अजसा, ईशानम्, भूतभव्यस्य, न, ततः, विजुगुप्सते ॥

शन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

यदा श्रामु=जब श्राचार्य के उप-देश के पश्चात्

विनष्टिः≔हानि होगी

पतम्=इस भूतभव्यस्य=तीनीं कास के

+ साधकः≔साधक श्राथसा=साक्षात् ईशानम्=स्वामी आत्मानम्=भारमा

आपियन्ति=शास होते हैं

देखम्=देव को पश्यति⇒देखता है ततः≔तो + कस्यचित् } जीवात् } =िकसी के अभि के जीवात् न=नहीं विज्ञगुप्सते=शृक्षा करता है

मावार्थ।

हे राजा कनक ! जब साधक आचार्य के उपदेश के परचात् इस तीनों काल के स्वामी अपने आत्मदेव को देख लेता है यानी साक्षात् कर लेता है तब वह किसी जीव से घृग्णा नहीं करता है ॥ १४ ॥

मन्त्रः १६

यस्मादर्वाक्संवत्सरोऽहोभिः परिवर्त्तते । तद्देवा ज्योतिषां ज्योति-राष्ट्रर्शेपासतेऽमृतम् ।।

पदच्छेदः ।

यस्मात्, अर्वाक्, संवत्सरः, अहोभिः, परिवर्त्तते, तत्, देवाः, ज्योतिषाम्, ज्योतिः, आयुः, ह, उपासते, अमृतम् ॥

श्रन्वयः पदार्थाः यस्मात्=जिस घारमा के अयोक्=पीखे ब्रह्मोभिः≔दिन रात से संयुक्त संवरसरः=संवरसर परिवर्त्तते=फिरा करता दें + यः≕जो

ज्योतिषाम्=ज्योतियां का

श्वन्वयः पदार्थाः ज्योतिः=ज्योति है श्रमृतम्=मरणधर्म रहित है श्रागुः=प्रार्थामात्र को श्रागु का देनेवाका है तत्र्रति=डस पेसे ब्रह्मकी देवाः=विद्वान् उपासते=डपासना करते हैं

भावार्थ ।

हे राजा जनक ! जिस आत्मा के पीछे पीछे दिन रात संयुक्त संवत्सर फिरा करता है, और जो ज्योतियों का ज्योति है, और मरण धर्मरहित है और जो प्राणीमात्र को आयु देनेवाला है, उसी ऐसे ब्रह्म की उपासना विद्वान लोग करते हैं ॥ १६ ॥

मन्त्रः १७

यस्मिन्पञ्च पञ्चजना आकाशश्च प्रतिष्ठितः । तमेव मन्य आत्मानं विद्वान्बद्यामृतोऽमृतम् ॥

पदच्छेदः ।

यस्मिन्, पञ्च, पञ्चजनाः, आकाशः, च, प्रतिष्ठितः, तम्, एव, मन्ये. आत्मानम्, विद्वान्, ब्रह्म, अमृतः, श्रमृतम् ॥

द्यान्वयः

पदार्थाः सन्वयः

पदार्थाः

+ जनक=हे जनक ! यस्मिन्=जिस बह्य में पञ्च=पांच प्रकार के

मनुष्य यानी गन्धर्व, पञ्च याना गन्धव, अल्लास्त मनुष्य याना गन्धव, वितर, देव, असुर, आत्मानम्=अपना आत्मा और राक्षस, अथवा मन्ये=मानता हूं मैं नाम्य अप्रिय, श्रीप्रय, + च=और निषय, श्रीप्रय + स्थतः=इसी ज्ञान से ज्योति, प्राया, चक्षु, + स्रहम्=मैं अोत्र, और मन विद्वान्=विद्वान्

च=भीर ग्राकाशः=व्यकाश प्रतिष्ठितः≔स्थित हैं तम् एव=उसी **श्रमृतम्**=श्रमृतरूप

ब्रह्म=ब्रह्मको

वि**द्वान्**=विद्वान् श्रमृतः=धमर

+ आसम्=भया हूं

भावार्थ।

हेराजा जनक ! जिस में पांच प्रकार के प्राग्ती यानी मनुष्य, गन्धर्व, श्रापुर, देव, राक्षस, श्राथवा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, श्रीर निषाद, अथवा ज्योति, प्राग्ण, चक्षु, श्रोत्र श्रौर मन श्रौर श्राकाश ≺ स्थित हैं, उसी श्रमृतरूप ब्रह्म को मैं श्रपना श्रात्मा मानता हं, और में उसी ज्ञान से विद्वान हो कर अमर भया हूं।। १७॥

मन्त्रः १८

प्राग्यस्य प्राग्यमुत चक्षुपश्चक्षुरुत श्रोत्रस्य श्रोत्रं मनसो ये मनो बिदुः । ते निचिक्युर्बस पुराणमप्रचम् ॥

पदच्छेदः ।

प्राग्गस्य, प्राग्गम्, डत, चक्षुपः, चक्षुः, उत, स्रोत्रस्य, स्रोत्रम्, मनसः, ये, मनः, विदुः, ते, निचिक्युः, ब्रह्म, पुरासाम्, झपयम् ॥ पदार्थाः पदार्थाः । श्रम्वयः श्चन्धयः श्रोत्रम्=^{श्रोत्र} है ये=जो लोग

विदुः=जानते हैं कि सः=वह जीवास्मा प्राग्रस्य=प्राय का प्राणम्=प्राण है

चक्ष्रुषः≔नेत्र का चञ्चः=नेत्र है उत≕श्रीर

श्रोत्रस्य=श्रोत्र का

उत=भीर

मनसः=मन का मनः=मनम करनेवाबा है

ते=वे पुराणम्≕सनातन श्रग्रधम्=सब के बादि ब्रह्म=ब्रह्म को

निचिक्युः=निरचय कर चुके हैं

भावार्थ ।

जो जानते हैं कि यह अध्यमा जीवात्मा प्राग्ण का प्राग्ण है, नेत्र कानेत्र हैं, क्योर श्रोत्र काश्रोत्र हें, क्योर मन का मनन करनेवाला हैं, वेही सनातन सब के आदि ब्रह्मको निश्चय कर चुके हैं ॥ १⊏ ॥

मन्त्रः १६

मनसैवानु द्रष्टुर्व्यं नेह नानास्ति किंचन । मृत्योः स मृत्युगा-मोति य इह नानेव पश्यति ॥

पवच्छेदः ।

मनसा, एव, इप्रतु, द्रष्टन्यम् , न, इह, नाना, श्रम्स्त, किंचन, मृत्योः, सः, मृत्युम् , झाप्नोति, यः, इह, नाना, इव, पश्यति ।। पदार्थाः पदार्थाः ं श्रन्वयः श्चन्ययः

इह=इस संसार में मनसा एव=एकाम शुद्ध मन करके ही

द्मानु≔गुरूपदेश के पीछे

+ सः≔वह भाग्मा

द्रष्टव्यम्=देखने योग्य है + यस्मिन्=उस भारमा ब्रह्म में किंचन=क्ष मा

नाना=प्रनेकस्व नास्ति=नहीं है

यः=जो पुरुष इह=इस संसार में न}ना इव=पुरुत्व को क्वोड़ कर अनेकस्य को

पश्यति=देखता है

सः=वह मृत्योः=मृत्यु से मृत्युम्=मृत्यु को श्राप्नोति=पास होता है

भावार्थ ।

वह आदमा ब्रह्म हे जनक ! गुरू के उपदेश के पीछे एकाप्र शुद्ध मन करकेही जानने योग्य होता है, उस ब्रह्म में इन्छ भी अनेकत्व नहीं है. जो पुरुष इस संसार में एकत्व को छोड़कर अनेकत्व को देखता है वह मृत्यु से मृत्यु को प्राप्त होता है।। १६ ॥

मन्त्रः २०

प्कपैवानु द्रष्टच्यमेतद्यमयं ध्रुत्रम् । विरजः पर श्राकाशादज श्रात्मा महान्ध्रुवः ॥

पदच्छेदः ।

एकधा, एव, अनु, द्रष्टव्यम्, एतत्, अप्रमयम्, ध्रुवम्, विरजः, परः, आकाशात्, अजः, आत्मा, महान्, ध्रुवः ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पतार्थाः

पतत्=यह जीवात्मा श्चप्रमयम्=श्चममय है श्वस्=िनश्चन है विरजः=रजोग्ण रहित है श्चाकाशात्=श्चाकाश से भी परः=परे है, यानी प्रति

सृक्ष्म है अजः≔श्रजन्मा है

आत्म(≕वापक है

ः पदार्थाः महान्≕सवसे बड़ा है

ध्रवः=श्रविनाशी है

+ इति=ऐसा एव=निस्सन्देह

अनु एकधा= { एक प्रकार से यानी अवग्र, मनन श्रीर निद्धियासन करके

द्रष्टव्यम्≔देखने योग्य है

भाषाथे ।

हे जनक ! यह जीवात्मा अध्रप्रमेय है, श्रम्बल है, गुर्गो से रहित है, आस्त्राश से भी परे है, यानी श्र्मतिसूक्ष्म है, अप्रजन्मा है, ब्यापक है, सबसे बड़ा है, श्रविनाशी है, सोई निश्चय करके श्रवण, मनन, निदिध्यासन द्वारा देखने योग्य है।। २०॥

मन्त्रः २१

तमेव धीरो विज्ञाय प्रज्ञां कुर्वति ब्राह्मणः। नानुध्यायादबहुड्च्छ-ब्हान्वाचो विग्लापनधं हि तदिति ॥

पदच्छेदः ।

तम्, एव, धीरः, विज्ञाय, प्रज्ञाम्, कुर्वीत, त्राह्मग्ः, न, स्रानुध्या-यात्, बहून्, शब्दान्, वाचः, विज्ञापनम्, हि, तत्, इति ॥

पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः श्चन्धयः

धीर:=बुद्धिमान् व्राह्मगुः=ब्रह्मजिज्ञासु तम् एव≔उसही स्रात्मा को विज्ञाय≕जानकर

प्रज्ञाम्=श्रपनी बुद्धि को

बहुन्=बहुत श्रव्दान्=प्रन्थों को

त=न

श्रनुध्यायात्=चिन्तन करे हि=क्योंकि

तत्=शब्दांचारण वाचः≔वाणी का

प्रज्ञाम्=श्रपनी बुद्धि को कुर्चीत्=मोक्षसपादिका बनावे विग्लापनम्= सन्न-बहुत

इति=ऐसा + आहु:=लोग कहते हैं

भावार्थ ।

हे जनक ! विद्वान ब्रह्म जिज्ञास उसी आतमा को जानकर अपनी बुद्धि को मोक्षसंपादिका बनावे, श्रीर बहुत प्रन्थों को न चिन्तन करे, क्योंकि वह यानी शब्दों का उचारण वाणी को निष्कल श्रम देनेवाला है अध्यवा भ्रम में डाजनेवाला है।। २१।।

मन्त्रः २२

स वा एष महानज श्रात्मा योऽयं विज्ञानमयः मार्गेषु य एषोऽन्तर्हृदय श्राकाशस्तस्मिञ्च्छेते सर्वस्य वशी सर्वस्येशानः सर्व-स्याधिपतिः स न साधुना कर्मणा भूयात्रो एवासाधुना कनीयानेष सर्वेश्वर एष भूताधिपातिरेष भूतपाल एष सेतुर्विचरण एषां लोका- नामसंभेदाय तमेतं वेदानुवचनेन ब्राह्मणा विविदिष्ति यहेन दानेन तपसाऽनाशकेनैतमेव विदित्वा मुनिर्भवति । एतमेव प्रवा-जिनो लोकभिच्छन्तः प्रव्रजन्ति । एतद्ध स्म वै तत्पूर्वे विद्वाध्यसः प्रजां न कामयन्ते किं प्रजया करिष्यामो येषां नोऽयमात्माऽयं लोक इति ते ह स्म पुत्रैपणायाश्च वित्तेषणायाश्च लोकेषणा-याश्च च्युत्थायाथ भिक्षाचर्यं चरन्ति या ह्येव पुत्रैपणा सा वित्तेषणा या वित्तेषणा सा लोकेषणोभे ह्येते एषणे एव भवतः । स एष नेतिनत्यात्माऽमृह्यो न हि मृह्यतेऽशीर्यो न हि शीर्यतेऽसङ्गो न हि सञ्यतेऽसितो न व्यथते न रिष्यत्येतमु हैवैते न तरत इत्यतः पापमकरवमित्यतः कल्याणमकरवमित्युभे उ हैवैष एते तरित नैनं कृताकृते तपतः ॥

पदच्छेदः।

सः, वा, एषः, महान्, श्रजः, श्रात्मा, यः, श्रयम्, विज्ञानमयः, प्रारोषु, यः, एषः, श्रन्तर्ह्दये, श्राकाशः, तिसन्, शेते, सर्वस्य, वशी, सर्वस्य, ईशानः, सर्वस्य, श्रिष्ठितः, सः, न, साधुना, कर्मग्रा, भूयान्, नो, एव, श्रसाधुना, कनीयान्, एपः, सर्वेश्वरः, एपः, भूताधिपितः, एषः, भूतपाजः, एषः, सेतुः, विधरग्राः, एषाम्, जोकानाम्, श्रसंभेदाय, तम्, एतम्, वेदानुवचनेन, श्राह्मग्राः, विविदिषन्ति, यह्मन, दानेन, तपसा, श्रमाशकेन, एतम्, एव, विदित्वा, मुनिः, भवति, एतम्, एव, प्रश्राज्ञनः, जोकम्, इच्छन्तः, प्रज्ञजित, एतत्, ह, स्म, वे, तत्, पूर्वे, विद्वासः, प्रज्ञाम्, न, कामयन्ते, किम्, प्रज्ञया, करिष्यामः, येषाम्, नः, श्रयम्, श्रात्मा, श्रयम्, जोकः, इति, ते, ह, स्म, पुत्रेषग्रायाः, च, वित्तेषग्रायाः, च, वोक्षेषग्रायाः, च, व्यत्थाय, श्रथः, भिक्षाचर्यम्, चरन्ति, या, हि, एव, पुत्रेषग्रायाः, च, व्यत्थाय, श्रथः, भिक्षाचर्यम्, जोकः, इति, ते, ह, स्म, पुत्रेषग्रामः, सा, क्रोकेषग्राः, च, हि, एव, पुत्रेषग्राः, सा, वित्तेषग्राः, या, वित्तेषग्राः, सा, क्रोकेषग्राः, उभे, हि, एते, एषग्रे, एव, भवतः, सः, एषः, न, इति, न, इति, श्रात्मा, श्रग्रुद्धः, न, हि, ग्राद्येत, श्रश्रीरंः, न, हि, श्रीर्थते,

आसङ्गः, न, हि, सज्यते, आस्ततः, न, व्यथते, न, रिच्यति, एतम्, उ, ह, एव, एते, न, तरतः, इति, अतः, पापम्, अकरवम्, इति, अतः, कल्यासाम्, अकरवम्, इति, उभे, उ, ह, एव, एषः, एते, तरित, न, एनम्, कृताकृते, तपतः ॥

पदार्थाः श्चन्वयः सः वै≔वही एषः=यष्ट आत्मा=जीवात्मा महान्=श्रति बड़ा है श्चजः=धजन्मा है यः=जो श्रयम्=यह भारमा प्रागोषु=चक्षुरादिक इन्द्रियों में से विज्ञानमयः=चैतन्यरूप स्थित है च=भीर यः=जो एषः≕यह **ग्रन्तर्ह**द्ये=हृदय के भीतर आकाशः=धाकश है तस्मिन्=उसमें शेत=शयन करता है + सः=वही सर्वस्य=सबको वशी=श्रपने वश में रखने हास है + सः≔वही सर्वस्य⇒सबका ईशानः=शासन करनेवाला है + सः≔वहो सर्वस्य≈सबका

पदार्थाः श्चन्वयः श्रिधिपतिः=धिषपति है सः≔वह साधुना=श्रद्धे कर्मणा=कर्म करके न≕न भूयान्=पृज्य भवति=होता है च=घौर नो=न श्रसाधुना=बुरे कर्मगा=कर्म करके कनीयान्=श्रपुज्य + भवति=होता है + सः=वही एषः=यह श्रात्मा सर्वेश्वरः=सबका ईश्वर है + सः=वही एषः=यह श्रात्मा भूताधिपतिः=सबका मालिक है +सः≔वही एषः=यह भ्रात्मा भूतपालः≔सवका पालक है + सः=वही एषः=यह ऋत्मा सबका पार खगानवाला

सेतः≕सेतु है

+ सः≔वही पषाम्=इन लोकानाम्=भूर्भवर्लोकों की श्चासंभेदाय=स्था के विये विधर्णः=उनका धारण करने वाला है तम्=इसी एतम्=इस भारमा को ब्राह्मणाः≔ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य वेदानुवचनेन=वेदाध्ययन करके यक्षेन=यज्ञ करके दानेन=शन करके तपसा=तप करके श्रनाशकेन=धनशन वत करके विविदिषन्ति=जानने की इच्छा करते हैं च=भौर एतम्=इसी को **ए**च=निस्संदे**इ** विदित्वा=जानकर पुरुषः≔पुरुष मुनिः≕मुनि भवति=होता है + स्वम्=ध्रभीष्ट लोकम्=लोक की यानी ब्रह्म-लोक की इच्छन्तः≔इच्छा करते हुये प्रव्यक्तिनः=संन्यासी कोग पतम् पव=इसी भारमा का + उद्दिश्य=उपदेश पा करके तत्=उसी प्रवस्था में

प्रवजान्त=सर्व को त्याग देते हैं

एतत्र्≔यही तत्व=वह ह स्म बे≕िनश्चय करके + कारणम्≔कारण है यानी इसी संन्यस्त धर्मके लियेही पूर्वे=पूर्वकाल के विद्वांसः=विद्वान् प्रजाम्=संतान की **न**=नहीं कामयन्ते =कामना करते थे प्तम्वि-) = इस प्रकार विचार चारघन्तः) करते हुये कि प्रजया≕संतान करके किम्=क्या करिष्यामः=इम करेंगे येषाम्=जिन नः≔हम लोगों का सहायकः≔सहायक श्रयम्≕यह आत्मा=धात्मा है च=श्रीर इति=इसी कारण ते=वे संन्यासी ह स्म=निश्चय करके पुत्रेषणायाः=पुत्र की इच्छा से वित्तेषणायाः } = द्रव्य की इच्छा से लोकैषणायाः } = जोकों की इच्छा से ब्युत्थाय=विरक्र होकर भिक्षाचर्यम्=भिक्षानिमित्त चरन्ति=किरते हैं

या≐जो पुत्रेषणा=पुत्र की कामना है सा≔वधी हि एव=निस्सन्देइ विसेषणा=धन की कामना है सा⊐वही स्तोकेषणा≔लोक की कामना है पते=ये हि=ही उभे≕दो ष्यले≔इच्छार्थे प्व≔निस्सन्देह भवतः≔होती हैं सः=वही प्रसिद्ध एषः≔वह श्चातमा=श्रात्मा नेति=नेति नेति≂नेति इति=शब्द करके भ्रगृह्यः=धप्राद्य है हि=वयों कि सः≃वह न=नहीं गृह्यते≔प्रहण किया जा सका सः≔वह श्वाशीर्थः=श्रहिसनीय है हि=क्यों कि + सः≔वह न=नहीं शीर्यते≔मारा जा सका है ग्रसङ्गः=वह शसङ्ग है

हि=क्वोंकि सः न≔षड नडीं सज्यते≕किसी में भासक है द्यसितः=वह बन्धनरहित है हि=क्योंकि स्तः न=षड् नहीं ध्यथते=पीड़ित होता है च≃षार न=न + सः≔वह रिष्यति≔इत होता है उ≕धौर पापम्=पाप श्रकरवम्=मेंने किया था द्यतः≔इस लिये दुःख भोगूंगा कल्यागम्≔पुरव मैंने किया था **ग्र**तः=इसिंबये सुख भोगृंगा इति=ऐसे पते⇒थे उभे=दोनों इच्छार्थे पतम्≔इस भारमा को न एच=नहीं तरतः ह=बगती हैं एषः उ ह=यह भारमा प्व≔भवश्य तरति=इन दोनों इच्छाओं को पार कर जाता है एनम्=इस बद्यावित को कृताकृते=इताकृत कर्म न=नहीं त्रपतः≕सताते हैं

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, जो आतमा चक्षुरादि इन्द्रियों में चैतन्यरूप से स्थित है झौर जो हृद्य के आकाश विषे शयन किये है वही अति वड़ा है, अजनमा है, सबको अपने वशमें रखनेवाला है, वही सबका शासन करनेवाला है, वही सबका ऋधिपति है, वही न अन्छे करके पूज्य होता है, न बुरे कर्म करके ऋपूज्य होता है, वही सबका ईरवर है, वही सब भूतों का मालिक है, वही सबका पालक है, वही यह आतमा सबका पार लगानेबाला सेतृ है, वही लोकों की रक्षा के लिये उनका धारणा करनेवाला है उसी आतमा की ब्राह्मणा. अत्रिय. वैश्य वेदाध्ययन करके, यज्ञ करके, दान करके, तप करके, अनशन वत करके जानने की इन्छ। करते हैं झौर जो उसको जान जाता है वह मुनि कहलाता है, वही ब्रह्मलोक को प्राप्त होता है, संन्यासी लोग इसी आतमा के उपदेश को पाकर सबका त्याग कर देते हैं और इसी संन्यस्त धर्म के लियेही पूर्वकाल के विद्वान लोग संतान की इच्छा नहीं करते थे यह कहते हुये कि हम संतान लेकर क्या करेंगे, जब हम लोगों का सहायक अपनाही आतमा है और यही कारणा था कि वे लोग पुत्र की इच्छा नहीं करते थे. द्रव्य की इच्छा से, पुत्र की इच्छा से, लोकों की इच्छा से विरक्त होकर केवल भिक्षानिमित्त विचरा करते थे. हे राजा जनक ! जो पुत्र की कामना है वही धन की कामना है, वही लोक की कामना है इन तीनों कामनाओं से यह आत्मा पृथक है, नेति नेति शब्द करके अप्राह्य है क्योंकि यह प्रहरा नहीं किया जा सका है, यह अहिंसनीय है क्योंकि मारा नहीं जा सक्ता है, यह असङ है क्यों कि यह किसी वस्तु में आसक्त नहीं है, यह बन्धनरहित है क्योंकि वह पीडित नहीं होता है, न हत होता है, यह वृत्ति कि मैंने पाप किया था इस लिये मैं दुःख भोगूंगा, मैंने पुराय किया था मैं सुख भोगूंगा इस आतमा को नहीं लगती है. यह आतमा अवस्य इन

दोनों इच्छाओं को पार कर जाता है और ब्रह्मवित् पुरुष को क्रताकृत कर्म नहीं सताता है ॥ २२ ॥

मन्त्रः २३

तदेतहचाभ्युक्कम् । एष नित्यो मिहमा ब्राह्मणस्यं न वर्धते कर्मणा नो कनीयान् । तस्यैव स्यात्पद्वित्तं विदित्वा न लिप्यते कर्मणा पापकेनेति । तस्यादेवंविच्छान्तो दान्त उपरतिस्तितिष्ठुः समाहितो भूत्वात्मन्येवात्मानं पश्यति सर्वमात्मानं पश्यति नैनं पाप्मा तपति सर्वे पाप्मानं तरित नैनं पाप्मा तपति सर्वे पाप्मानं तपति विपापो विरजोऽविचिकित्सो ब्राह्मणो भवत्येष ब्रह्मलोकः सम्राहेनं प्रापितोऽसीति होवाच याज्ञवल्कयः सोऽहं भगवते विदे-

पदच्छेदः ।

तत्, एतत्, मृचा, अभ्युक्तम्, एपः, नित्यः, महिमा, ब्राह्मग्स्य, न, वर्धते, कर्मग्रा, नो, कतीयान्, तस्य, एव, स्यात्, पद्वित्, तम्, विदित्वा, न, क्रिप्यते, कर्मग्रा, पापकेन, इति, तस्मात्, एवंवित्, शान्तः, दान्तः, उपग्तः, तितिश्चः, समाहितः, भूत्वा, आदमिन, एव, आत्मानम्, पश्यित, सर्वम्, आत्मानम्, पश्यित, न, एनम्, पाप्मा, तरित, सर्वम्, पाप्मानम्, तपित, सर्वम्, पाप्मानम्, तपित, विपापः, विरजः, अविचिकित्सः, श्राह्मग्रः, भवित, एवः, ब्रह्मक्रोकः, सम्राद्, एनम्, प्रापितः, अस्त, इति, ह, उवाच, याज्ञवक्त्यः, सः, अहम्, भगवते, विदेहान्, ददामि, मां, च, अपि, सह, दास्याय, इति ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः

श्रन्वयः

पदार्थाः

तत्≔वही एतत्≕यह संन्यस्त धर्म भ्रमुचा≕मन्त्र करके भी अभ्युक्तम्≕कहा गया है ब्राह्मण्स्य=नन्नावित् पुरुष की

एषः=यह

नित्यः=स्वाभाविक

महिमा⇒महिमा दे

न=न + सः≔वह कर्मग्रा=कर्म करके वर्धते=बदता है च=धौर स=म कनीयान्=छोटा + भवति=होता है + यदा=जब तस्य एव=उस ब्रह्म के महस्व का सः≔वह पद्चित्=श्राता स्यात्=होता है तदा=तब तम्=उस महिमा को विदित्वा=जान कर **पापकेन**≔पाप कर्मणा=कर्म करके न=नहीं लिप्यते=बिस होता है तस्मात्=इस सिये **एखं**चित्=ऐसा जाननेवासा शान्तः=शान्त दान्तः=दान्त **स्प**रतः=उपरत तितिश्चः=तितिश्च समाहितः=सावधान एवंवित्=समाहित चित्त भूत्वा=होकर आतमनि एव=अपनेही में आत्मानम्=परमात्मा को पश्यति=रेखता है

यदा=जब सर्घम्=सब जगत् को श्चात्मानम्=ग्रारमरूपदी पश्यति=रेखता है तदा=तब एनम्=इस ज्ञानी को पाप्मा=पाप न=नहीं प्राप्नोति=सगता है + किन्तु≔किन्तु + सः=वइ ज्ञानी सर्वम्=सब पाप्मानम्=पाप को तरति=तरता जाता है एनम्=इस ज्ञानी को पाटमा=वाव न=नहीं तपति=तपाता है + किन्तु=किन्तु + सः≔वह ज्ञानी सर्वम्=सब **पा**ष्मानम्=पाप को तपति=नष्ट कर देता है ब्राह्मगु:=ब्रह्मवित् विपापः=पापरहित विरजः=धर्माधर्म रहित श्रविचिकित्सः=निस्सन्देह भवति=होता है सम्राट्=हे जनक ! एषः=यही अद्यत्वोकः=बद्यत्वोक है

+ च=घोर

धनम्=इसी लोक को
+ त्वम्=चाप
प्रापितः=पहुँचाये गये
प्रापितः=हैँ
यदा=जब
इति=इस तरह
याञ्चलस्यः=याज्ञवलस्य ने
उवाच ह=कहा तब
+ जनकः=जनक

+ ब्राह्=बोले
सः=वही बोधित
श्रहम्=मैं
भगवते=बापके लिये
विदेहान्=विदेह देशों को
सह=सायही
माम् च श्रापि=साथ बपने बापको भी
दास्याय=सेवा के लिये
ददामि=देता हुं

भावार्थ।

हे राजा जनक ! जिस संन्यासी का जैसा वर्णन हो चुका है उसी को मन्त्र भी कहता है, हे राजन् ! ब्रह्मवित् पुरुष की पूर्वोक्त महिमा स्वाभाविक है वह महिमा कर्म से न बढ़ती है न अपल्प होती है, वह ब्रह्मवेत्ता पापकर्म से लिप्त नहीं होता है, वह शान्त, दान्त, उपरत, वितिश्च और समाहित चित्त होकर अपनेही में अपने आत्मा को देखता है और जब सब जगत् को अपनाही आत्मारूप देखता है तब वह ज्ञानी सब पापको पार कर जाता है उस ज्ञानी को पाप नहीं तपाता है किन्तु वह ज्ञानी सब पाप को नष्ट कर देता है, वह ब्रह्मवित् पुरुष पापरहित, धर्मरहित होजाता है. हे जनक ! यही ब्रह्मलोक है, इसी लोक को आप पहुँचाये गये हैं, ऐसा सुनकर जनक महाराज बोले कि, हे प्रभो ! मैं आप के लिये कुल विदेह देशों को और साथही साथ अपने को भी सेवा के लिये अर्थण करता हूं ॥ २३ ॥

मन्त्रः २४

स वा एष महानज त्रात्मान्नादो वसुदानो विन्दते वसु य एवं वेद ॥

पदच्छेदः ।

सः, वा, एषः, महान्, अजः, आत्मा, अन्नादः, वसुदानः, विन्दते, बसु, यः, एवम्, वेद ॥

पदार्थाः श्चन्ययः श्चन्ययः पदार्थाः

सः≔वही

एषः=यह धाल्मा महान्=सर्वोस्ऋष्ट

द्याजः≔श्रजन्मा द्यादाः=प्रज्ञभोक्रा

बसुदानः≔कर्मफल दाता है

एवम्≔इस प्रकार यः≕जो

वेद≔जानता है + स्वः≔वइ ज्ञानी

वसु=धन को विनदते=प्राप्त होता है

भावार्थ।

हे राजा जनक ! यह आतमा सर्वोत्क्रष्ट, अजन्मा, अन्नभोक्ता, कर्मफल का दाता है जो इस प्रकार आपत्मा को जानता है वह अपनेक प्रकार के धनको प्राप्त होता है।। २४।।

मन्त्रः २५

स वा एष महानज श्रात्माजरोऽमरोऽमृतोऽभयो ब्रह्माभयं वै ब्रह्माभय छं हि वै ब्रह्म भवति य एवं वेद ॥

इति चतुर्थे ब्राह्मणम् ॥ ४ ॥

सः, वा, एषः, महान्, अञः, आत्मा, अजरः, अमरः, अमृतः, आभयः, ब्रह्म, अभयम्, वै, ब्रह्म, अभयम्, हि, वै, ब्रह्म, भवति, यः,

एवम्, वेद् ॥ **भ**न्वयः

पदार्थाः ग्रन्वयः

पदार्थाः श्रभयम् ब्रह्म वै=यही श्रभय ब्रह्म है

सः वे≔वही एषः≕यह

धाभयम् ब्रह्म हि=यडी श्रभय ब्रह्म है

श्चात्मा=बात्मा महान्=बदा है

एवम्=इस प्रकार

श्रमरः=श्रमर है

यः≕जो वेद=जानता है

श्रजः=धजन्मा है श्चात्र:=जरारहित है

सः≔वह

श्चामृतः≔मरण्धर्मरहित है

ब्रह्म=ब्रह्मस्वरूप भवति=होता है

श्रभयः=भयराहित है

भावार्ध ।

हे राजा जनक ! यह आतमा सब से बड़ा है, अमर है, अजन्मा

है, जरारहित है, मरगाधर्मरहित है, यही द्याभय है, यही द्याभय ब्रह्म है, जो पुरुष इस प्रकार जानता है वह ब्रह्मस्वरूप होता है ॥ २४ ॥ इति चतुर्थे ब्राह्मग्रम् ॥ ४ ॥

श्रथ पञ्चमं बाह्मगम् ।

मन्त्रः १

श्रथ इ याज्ञवल्क्यस्य दे भार्षे बभूवतुर्भेत्रेयी च कात्यायनी च त्तयोई मैत्रेयी ब्रह्मवादिनी बभूत स्त्रीपज्ञैन तर्हि कात्यायन्यथ ह याज्ञवल्क्योऽन्यदृष्टत्तमुपाकरिष्यन् ॥

पदच्छेदः ।

क्राथ, ह, याज्ञवस्क्यस्य, द्वे, भार्ये, बभूःतुः, मैत्रेयी, च, कात्यायनी, च, तयो:, ह, मैत्रेयी, ब्रह्मवादिनी, बभूव, स्त्रीप्रज्ञा, एव, तर्हि, कात्या-यनी, श्रथ, ह, याज्ञवल्क्यः, श्रन्यत्, वृत्तम्, उपाकरिष्यन् ॥ ्र दार्थाः प्रस्वयः े कि पदार्थाः श्चन्वयः

ह=निश्चय करके याज्ञवल्क्यस्य=याज्ञवल्क्य के

> द्वे≔दो भार्ये=िबरा

बभूवतुः=थीं तयोः=डनमें से मैत्रेयी=एक मैत्रेयी

च=भ्रौर

मैत्रेयी=मैत्रेयी

ब्रह्मवादिनी:=ब्रह्मवादिनी

कात्यायनी=ग्रीर कात्यायनी

स्त्रीप्रशा=स्त्रीप्रज्ञा यानी गृहस्थ धर्मिणी

बभूच=थी त्राध ह=भौर जब

याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य श्रन्यत=दूसरे

वृत्तम्=श्राश्रम यानी संन्यास को

कात्यायनी=दूसरी कात्यायनी उपाकरिष्यन्=धारण करने की इच्छावाले

+ ब्रासीत=हये

भावार्थ ।

क्लीग कहते हैं कि, याज्ञवह्नय महाराज के दो क्लियां थीं, उनमें से एक मैत्रेयी थी, दूसरी कात्यायनी थी, मैत्रेयी ब्रह्मवादिनी थी, धौर कात्यायनी स्त्रीप्रज्ञा यानी गृहस्थधर्मिणी थी, जब याज्ञदल्क्य महाराज ने गृहस्थाश्रम को त्याग कर संन्यास लेने का विचार किया ॥ १ ॥

मन्त्रः २

मैत्रेयीति होवाच याज्ञवस्त्रयः प्रव्रजिष्यन्वा श्ररेऽहमस्मत्स्थाना-दस्मि हन्त तेऽनया कात्यायन्यान्तं करवाणीति ॥

परच्छेटः ।

मैत्रेयि, इति, ह, उवाच, याज्ञवल्क्यः, प्रविज्ञिष्यम्, वा, ध्रारे, श्राहम्, श्रासमात्, स्थानात्, श्रास्मि, हन्ते, ते, श्रानया, कात्यायन्या, श्रान्तम्, करवाणि, इति ॥

श्चन्ययः

पदार्थाः

श्चन्वयः

पदार्थाः

इ=तब मैत्रेयि=हे मैत्रेयि ! इति=ऐसा

१।त-५ला + सम्बोध्य=सम्बोधन करके याज्ञवल्क्यः=याज्ञवल्क्य

> उवाच≔बोक्ने कि स्रारे=मरे मैत्रेयि !

श्रहम्=में श्रस्मात्=इस स्थानात्=गृहस्थाश्रम से प्रव्रजिष्यन्=गमन करनेवाला

श्रस्मि≔हूं

ह्रन्त⊐यदि तुम्हारी इच्छा

ફો લો

श्रनया≔इस

कात्यायन्या=कात्यायनी के साथ ते=तुम्हारे

श्चन्तम्=धनविभाग को करवाणि इति≕ष्टथक् करदं

भावार्थ ।

तब मैत्रेयी को सम्बोधन करके कहा कि कारे मैत्रेयि ! मैं इस गृहस्थाश्रम से गमन करनेवाला हूं, यदि तुम्हारी इच्छा हो तो इस कात्यायनी के साथ तुम्हारे धन के भाग को पृथक् कर हूं॥ २ ॥

मन्त्रः ३

सा होवाच मैत्रेयी यन्नु म इयं भगोः सर्वा पृथिवी वित्तेन पूर्णा स्यात्स्यां न्वहं तेनामृताऽहो ३ नेति नेति होवाच याज्ञवल्क्यो यथैवो-पकरणवतां जीवितं तथैव ते जीवितछं स्यादमृतत्वस्य तु नाशास्ति वित्तेनेति ॥

पदच्छेदः ।

सा, ह, उवाच, मैत्रेयी, यत्, तु, मे इयम्, भगोः, सर्वा, पृथिवी, वित्तेन, पूर्णा, स्यात्, स्याम्, नु, श्रहम्, तेन, श्रमृता, श्राहो, न, इति, न, इति, ह, उवाच, याज्ञवल्क्यः, यथा, एव, उपकरण्यतताम्, जीवि-तम्, तथा, एव, ते, जीवितम्, स्यात्, श्रमृतत्वस्य, तु, न, श्राशा, श्रमृत, वित्तेन, इति ॥

शन्वयः

पदार्थाः | श्रन्वयः

पदार्थाः

ह=तब मैत्रेयी=मैत्रेयी उवाच=बोली कि यत् नु=यदि भगोः=हे भगवन् ! इयम्=यह सर्वा=सब पृथिची=पृथिवी वित्तन=धन धान्यादि करके पूर्गा=पूरित होती हुई म=मेरे ही स्यात्≔होजाय तो तेन=उस करके + श्रहम्≕भें कथम्=किसी तरह श्रमृता=मुक्र स्याम्=होजाऊंगी + इति श्रुत्वा=ऐसा सुनकर

याञ्चलक्यः=याज्ञवल्क्य ने

उवाच=कहा कि इति≕ऐसा

न≔नहीं इोसका है

यथा=जैसे

उपकरणः } =धनाद्य का

जीवितम्=जीवन भवति=होता है

> तथैव=उसी प्रकार ते=तुम्हारा भी

जीवितम्=जीवन स्यात्=होगा

तु=मगर

श्चमृतत्वस्य=मुक्ति की श्चाशा=श्चाशा

श्राशा=श्राशा वित्तेन=धन करके

न=नहीं

श्रास्ति=होसक्री है

भावार्थ ।

यह सुनकर मैंत्रेयी बोली कि, हे भगवन् ! आप कृपा करके बतावें कि यदि सब पृथिवी धन धान्यादि करके पृरित होती हुई मेरेही हो जाय तो क्या उस करके मैं सुक्त हो जाऊंगी ? यह सुनकर याज्ञवरुक्य महाराज ने कहा कि तुम धन आदिके पाने से मुक्त नहीं हो सक्ती हों, हां जैसे धनाट्यादि अपना जीवन करते हैं उसी प्रकार तुम्हारा भी जीवन होगा परन्तु मुक्ति की आशा धन करके नहीं होसक्ती है।। है।।

मन्त्रः ४

सा होवाच मैत्रेथी येनाई नामृता स्यां किपई तेन कुर्यी यदेव भगवान्वेद तदेव मे बूहाति ॥

पदच्छेदः ।

सा, ह, उवाच, मैंत्रेयी, येन, अहम्, न, अमृता, स्याम्, किम्, अहम्, तेन, कुर्याम्, यत्, एव, भगवान्, वेद, तत्, एव, मे, ब्रूहि, इति ॥ अन्वयः पदार्थाः । अन्वयः पदार्थाः

श्रहम्=भैं ह≕तब कि.म्=क्या सा=वह मैत्रेयी=मैत्रेथी कुर्यामु=करूंगी उवाच=बोली कि भगवान्=श्राप थेन≕जिस धन से यत्=जिस वस्तु को श्रहम्≕भें पच=भली प्रकार वेद=जानते हैं श्रमृता=मुक तत् एव=उसही को न=नहा स्याम्=होसक्षी हं मे=मेरे लिये तेन=उस धन को बृहि इति=उपदेश करें

भावार्थ ।

उस पर मैंत्रेयी वोली कि जब धन कनके मुक्त नहीं होसक्ती हूंतो उस धन को मैं क्या करूंगी, हे प्रभो ! जिस वस्तु को आराप भली प्रकार जानते हैं उसी को मेरे लिथे उपदेश करें॥ ४ ॥

मन्त्रः ५

स होवाच याझवल्क्यः प्रिया वै खलु नो भवती सती पियम-दृधद्धन्त तर्हि भवत्येसदृचाख्यास्यामि ते व्याचक्षाणस्य तु मे निदि-ध्यासस्वेति ॥

पदच्छेदः।

सः, इ, उवाच, याज्ञवरूक्यः, प्रिया, वै, खल्लु, नः, भवती, सती, प्रियम्, श्रवृत्रत्, हन्त, तर्हि, भवति, एतत्, ज्याख्यास्यामि, ते, ज्याचक्षागास्य, तु, मे, निदिष्यासस्य, इति ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य उवाच वै=बोने कि

ह्र≕तब

भवती=तू सः=मेरी बडी

नः=मरा बड़ा प्रिया=प्यारी सर्ता=होकर प्रियम्=प्रिय कोही

श्रवृधत्=चाहती है हन्त तर्हि=ग्रच्छा तो भवति=हे मेत्रेयि ! ते=तुम्हारे लिये

एतत्≕इस मोक्ष को

व्याख्यास्यामि≕में कहूंगा

तु=खेकिन

व्याचक्षाणस्य =बयान करते हुये भ=मेरे

निदिध्या- } _वातों के मनलब पर सस्य इति } ध्यान रक्खो

भावार्थ ।

यह सुनकर याज्ञवरक्य महाराज बोले कि, हे मैंत्रेयि ! तू पहिले भी मुम्मको झितिप्रिय थी झौर झब भी तू झितिप्यारी है झौर प्रिय बस्तु को चाहनेवाली है, हे मैंत्रेयि ! मैं तुम्हारे लिथे इस मोक्षमार्ग को बड़ी खुशी से कहूंगा तुम मेरे बचर्नो को खुत्र थ्यान देकर सुनो ॥ ४॥

मन्त्रः ६

स होवाच न वा अरे पत्यः कामाय पतिः पियो भवत्यात्मनस्तु कामाय पतिः पियो भवति । न वा अरे जायाये कामाय जाया पिया भवत्यात्मनस्तु कामाय जाया पिया भवति । न वा अरे पुत्राणां कामाय पुत्राः पिया भवन्त्यात्मनस्तु कामाय पुत्राः पिया भवन्त्यात्मनस्तु कामाय पुत्राः पिया भवन्ति । न वा अरे वित्तस्य कामाय वित्तं भियं भवत्यात्मनस्तु कामाय वित्तं भियं भवति । न वा अरे पश्नां कामाय पशवः पिया भवन्त्यात्मनस्तु कामाय पशवः पिया भवन्ति । न वा अरे

ब्रह्मणः कामाय ब्रह्म भियं भवत्यात्मनस्तु कामाय ब्रह्म भियं भवति । न वा द्यरे क्षत्रस्य कामाय क्षत्रं भियं भवत्यात्मनस्तु कामाय क्षत्रं भियं भवति । न वा द्यरे लोकानां कामाय लोकाः भिया भवन्त्यात्मनस्तु कामाय लोकाः भिया भवन्ति । न वा द्यरे देवानां कामाय देवाः भिया भवन्त्यात्मनस्तु कामाय देवाः भिया भवन्ति । न वा द्यरे देवानां कामाय देवाः भिया भवन्ति । न वा द्यरे भूतानां कामाय भूतानि भियाणि भवन्त्यात्मनस्तु कामाय भूतानि भियाणि भवन्त्यात्मनस्तु कामाय भूतानि भियाणि भवन्त्यात्मनस्तु कामाय भूतानि भियाणि भवन्ति । न वा द्यरे सर्वस्य कामाय सर्वे भियं भवति । द्यात्मनस्तु कामाय सर्वे भियं भवति । द्यात्मन वा द्यरे दृष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यो मेत्रेय्यात्मनि खल्लरे दृष्टे श्रुते मते विज्ञात इद्ष्यं सर्वे विदितम् ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, उवाच, न, वा, ऋरे, पत्युः, कामाय, पितः, प्रियः, भवित, आत्मनः, तु, कामाय, पितः, प्रियः, भवित, न, वा, ऋरे, जायाये, कामाय, जाया, प्रिया, भवित, झात्मनः, तु, कामाय, जाया, प्रिया, भवित, न, वा, ऋरे, पुत्राणाम्, कामाय, पुत्राः, प्रियाः, भवित्त, झात्मनः, तु, कामाय, पुत्राः, प्रियाः, भवित्त, कामाय, वित्तम्, प्रियम्, भवित, आत्मनः, तु, कामाय, वित्तम्, प्रियम्, भवित, आत्मनः, तु, कामाय, वित्तम्, प्रियम्, भवित, जात्माय, पश्वः, प्रियाः, भवित्त, कामाय, वित्तम्, प्रियम्, भवित, न, वा, ऋरे, पश्चाम्, कामाय, पश्वः, प्रियाः, भवित्त, कामाय, श्रद्ध, प्रियम्, भवित, आत्मनः, तु, कामाय, श्रद्ध, श्रद्धम्, प्रियम्, भवित, न, वा, ऋरे, लोकानाम्, कामाय, लोकाः, प्रियाः, भवित्त, कात्मनः, तु, कामाय, कोकाः, प्रियाः, भवित्त, आत्मनः, तु, कामाय, लोकाः, प्रियाः, भवित्त, काल्यनः, तु, कामाय, होवाःम्, श्रद्धनः, तु, कामाय, होवाःम्, होवाःम्, होवाःम्, होवःनाम्, होवःनाम्नाम्, होवःनाम्, होवःनाम्, होवःनाम्, होवःनाम्, होवःनाम्, होवःनाम्नाम्, होवःनाम्, होवःनाम्नाम्, होवःनाम्नाम्, होवःनाम्नाम्, होवःनाम्, होवःनाम्नाम्, होवःनाम्नाम्नाम्, होवःनाम्नाम्, होवःनाम्नाम्, ह

कामाय, वेदाः, प्रियाः, भवन्ति, आत्मनः, तु, कामाय, वेदाः, प्रियाः, भवन्ति, न, वा, आरे, भूतानाम्, कामाय, भूतानि, प्रियाणि, भवन्ति, आत्मनः, तु, कामाय, भूतानि, प्रियाणि, भवन्ति, आत्मनः, तु, कामाय, भूतानि, प्रियाणि, भवन्ति, न वा, आरे, सर्वस्य, कामाय, सर्वम्, प्रियम्, भवति, आत्मनः, तु, कामाय, सर्वम्, प्रियम्, भवति, आत्मनः, तु, कामाय, सर्वम्, प्रियम्, भवति, आत्माः, वा, आरे, द्रष्टव्यः, श्रोतव्यः, मन्तव्यः, निद्ध्यासिन्तव्यः, मैत्रेयि, आत्मिन, खलु, अरे, हंष्ट, श्रुते, मते, विज्ञाते, इदम्, सर्वम्, विदितम् ॥

श्चन्चयः

पदार्थाः

ह≔प्रसिद्ध स्त:=वह याज्ञवल्क्य उवाच=कहते भये कि ऋरे=हे भैत्रेयि! पत्युः≔पति की काम।य=कामना के लिये +भार्याम्≕भार्याको पतिः=पति द्रिय:=प्यारा न=नहीं भवति=होता है तु=परन्त् श्चातमनः=श्रपने जीवातमा की कामाय=कामना के लिये प्रतिः=पति + भार्याम्=भार्या को प्रिय:=प्यारा भवति=होता है अरे≔हे मैत्रेयि! जायायै=पत्नी की कामाय≔कामना के लिये जाया=पत्नी

पदार्थाः श्चन्ययः प्रिया=पीत को प्यारी न=नहीं भवति=होती है **त्**=परन्त् श्चात्मतः≔ध्यपेन जीवात्माकी काम।य=कामना के जिये जाया=पत्नी प्रिया=पति को प्यारी भवति=होती है ऋरे=हे मेत्रेयि! पुत्रागाम्=लडकों के कामाय=मतलव के त्रिये पुत्राः=लड्के त्रियाः≕माता विता को प्यारे न≕नहीं भवन्ति=होते हैं तु≔परन्त् श्चात्मनः=श्रपने कामाय=मतलब के लिये पुत्राः=लड्के प्रियाः≔माता पिता को प्याहे भवन्ति=होते हैं

श्चरे=हे मैत्रेथि ! वित्तस्य=धन के कामाय≕भर्थ वित्तम्≕धनीको धन व्रिय**म्**=प्यारा चे न=नहीं भवति=होता है तु=परन्तु श्चात्मनः=अपने जीवात्मा की कामाय=कामना कालिये वित्तम्=धन प्रयम्=प्यारा भवति=होता हे श्चारे=हे मैत्रिय ! ब्रह्मणः=बाह्मण के कामाय=मतलब के लिये व्रह्म=ष्राह्मण् प्रियम्=कोगों को प्यारा वै न=नहीं भवति=होता है तु=परन्त् श्चात्मनः=श्चपने जीवात्मा के कामाय=मतजब के जिये व्रह्म=ब्राह्मण थ्रियम्=प्यारा भवति=होता है श्चरे=हे मैत्रेवि! क्षत्रस्य=क्षत्रिय के कामाय≕मतत्त्वव के लिये क्षत्रम्=र्कात्रय प्रियम्=लोगों को प्या**रा** स=नहीं

भवति=होता है तु=परन्त् श्चात्मनः=ग्रपने जीवात्मा के कामाय=मतजब के लिये क्षत्रम्≕क्षत्रिय वियम्=प्यारा भवति=होता है त्र्यर=हे मैत्रेयि ! लोकानाम्=कांकों क कामाय=मतलब के लिये लाकाः=लोक व्रियाः=प्यारे त्तं चं≔नहीं भवस्ति=होते हैं तु=परन्त् श्चात्मनः=श्चपने जीवात्मा के कमाय=मतलव के लिये लोकाः=जोक प्रियाः=प्यारे भवन्ति=होते हैं ऋरे≔हे मैत्रेयि ! देवानाम्=देवताश्रों के कामाय=मतलब के लिये देवाः=देवता प्रियाः=बोगों को प्यारे न बै≃नहीं भवन्ति=होते हैं तु=परन्तु श्चातमनः=श्चपने जीवातमा **के** कामाय=मतलब के लिये देवाः=देवता प्रियाः=प्वा**रे**

भवान्त=होते हैं आरो≔हे सैत्रियि ! भूतानाम्=प्राणियों के कामाय=मतलब के लिये भूतानि=श्रीर प्राणी प्रियाशि≕िप्रय ज्ञ चै≕नहीं भवन्ति=होते हैं तु=परन्त् श्चात्मनः=श्चपने जीवात्मा की कामाय=कामना के लिये भृतानि=प्राणी प्रियाशि=**प्यारे** भवन्ति=होते हैं ऋरे⇒हे मेत्रेयि ! सर्वस्य=सब के कामाय=मतलव के लिये सर्वमू≔सब प्रियम=**प्यारे** न वै=नहीं भवति=होते हैं तु=परन्तु

झात्मनः≔श्रपने श्रीवास्मा के कामाय=मतलब के लिये सर्वम्=यब प्रियम्=प्यारे भवति=होते हैं

श्चातमा=यह श्रपना जीवासमा
द्रष्टवयः=देखने योग्य है
मन्तदयः=मनन के योग्य है
श्रोतदयः=सुनने के योग्य है
लिदिध्या- }=ध्यान के योग्य है
स्रितद्यः }
श्चातमा=जीवासमा के
ह्रिण्डेले जाने पर
श्वत=सुने जाने पर
मत=मनन किये जाने पर
विज्ञाते=जाने जाने पर
दम्=यह
सर्वम्=सारा श्रह्माण्ड
विदितम्=माल्म
+ भवनि=होजाता है

भावार्थ ।

याज्ञवहक्य महाराज कहते हैं कि, हे मेंत्रेयि ! पित की कामना के लिये भार्या को पित प्यारा नहीं होता है परन्तु निज जीवातमा की कामना के लिये पित भार्या को प्यारा होता है, हे मेंत्रेयि ! पत्नी की कामना के लिये पित भार्या को प्यारी नहीं होती है परन्तु अपने जीवातमा की कामना के लिये पित को प्यारी नहीं होती है, हे मेंत्रेयि ! लड़कों की कामना के लिये लड़के माता पिता को प्यारे नहीं होते हैं, परन्तु अपने जीवातमा के लिये लड़के माता पिता को प्यारे होते हैं,

हे मेत्रेयि ! धनके अर्थ धनी को धन प्यारा नहीं होता है, परन्त अपने जीवात्मा की कामना के लिये धन धनी को प्यारा होता है, हे मेत्रेयि ! ब्राह्मरा की कामना के लिये लोगों को ब्राह्मरा प्यारा नहीं होता है. परन्त अपने जीवात्मा की कामना के लिये ब्राह्मण लोगों को प्यारा होता है. हे मैत्रेयि ! क्षत्रिय की कामना के लिये क्षित्राय लोगों को त्यारा नहीं होता है परन्त श्रापने जीवात्मा के लिये लोगों को क्षिश्चय प्यारा होता है, लोकों की कामना के लिये लोक प्रिय नहीं होते हैं परन्त अपने जीवात्मा के लिये लोगों को लोक प्यारे होते हैं, हे मैत्रेयि ! देवताच्यों की कामना के लिये लोगों को देवता प्यारे नहीं होते हैं. परन्त अपने जीवात्मा के लिये देवता लोगों को प्यारे होते हैं, हे मैत्रेयि ! प्राणियों की कामना के लिये प्राणी प्यारे नहीं होते हैं परन्तु अपने जीवात्मा की कामना के लिये लोगों को प्राग्ती प्रिय होते हैं. हे मैंत्रेयि ! सबकी कामना के लिये सबको सब प्यारे नहीं होते हैं परन्त अपने जीवातमा की कामना के लिये सबको सब प्यारे होते हैं, अरे हे मेत्रेयि ! यही अपना जीवात्मा देखने योग्य है, मनन करने योग्य है, श्रवगा करने योग्य है, ध्यान करने योग्य है, हे मैत्रेयि ! जीवात्मा के देखे जाने पर, सने जाने पर, मनन किये जाने पर यह सारा ब्रह्मागड मालूम होजाता है।। ६।।

मन्त्रः ७

ब्रह्म तं परादाचोऽन्यत्रात्मनो ब्रह्म वेद क्षत्रं तं परादाचोऽन्यत्रात्मनः क्षत्रं वेद लोकास्तं परादुर्योऽन्यत्रात्मनो लोकान्वेद देवास्तं परादुर्योऽन्यत्रात्मनो देवान्वेद वेदास्तं परादुर्योऽन्यत्रात्मनो वेदान्वेद भूतानि तं परादुर्योऽन्यत्रात्मनो भूतानि वेद सर्वे तं परादाचोऽन्यत्रात्मनः सर्वे वेदेदं ब्रह्मेदं क्षत्रमिमे लोका इमे देवा इमे वेदा इमानि भूतानीद असर्वे यदयमात्मा ।।

पदच्छेदः।

ह्रास, तम्, परादात्, यः, झन्यत्र, झात्मनः, ह्रास, वेद, क्षच्यम्, तं, परादात्, यः, झन्यत्र, झात्मनः, क्षच्यम्, वेद, लोकाः, तम्, परादुः, यः, झन्यत्र, झात्मनः, लोकान्, वेद, देवाः, तम्, परादुः, यः, झन्यत्र, झात्मनः, देवान्, वेद, वेदाः, तम्, परादुः, यः, झन्यत्र, झात्मनः, वेदान्, वेद, भूतानि, तम्, परादुः, यः, झन्यत्र, झात्मनः, भूतानि, वेद, सर्वम्, तम्, परादात्, यः, झन्यत्र, झात्मनः, सर्वम्, वेद, इदम्, ह्रास्, क्षच्यम्, इमे, लोकाः, इमे, देवाः, इमे, वेदाः, इमानि, भूतानि, इटम्, सर्वम्, यत्, झयम्, झात्मा ॥

श्चरे≔हे मैत्रेयि ! ब्रह्म=ब्रह्मत्व शक्रि तम्=उस पुरुष को परादात्=त्याग देती है यः≕जो श्चात्मनः=श्चपने जीवात्मा से श्चान्यत्र=पृथक् ब्रह्म=ब्रह्मःव को घेद=जानता है क्षत्रम्=क्षियत्व शक्ति तम्=उस पुरुष को परादात्=स्याग देती है यः=जो **झात्मनः=भपने** जीवात्मा से **अ**न्यत्र=पृथक् क्षञ्जम्=क्षत्रियत्व को वेद्≔जानता है स्तोकाः=स्वर्गादिकोक तम्≕उस पुरुष को परादुः=त्याग देते हैं

यः≕जो श्चात्मनः=श्चपने जीवात्मा से श्चान्यत्र=पृथक् स्रोकान्=स्वर्गादिसोकों को घेद्=जानता है देवाः=देवता तम्=डसको परादुः≕स्याग देते हैं यः=जो श्चारमनः=ग्रपने जीवात्मा से श्चन्यत्र=पृथक् देवान्≖देवसाधों को घेद=जानता है घेदाः≔वेद तम्=उसको परादुः=स्याग देते हैं य:=जो श्चात्मनः=श्चपने जीवात्मा से ग्रान्यत्र=पृथक् वेदान्≖वेदों को

वेद्=जानता है भूतानि=प्राची तम्≂उसको परादुः=त्याग देतें हैं यः=जो आत्मनः=श्रपने जीवात्मा से श्चन्यत्र=पृथक् भूतानि=प्राणियों को वेद=जानता है सर्वम्≕सब तम्=उसको परादात्≕याग देते हैं य :=जो श्चात्मनः=श्रपने जीवात्मा से ऋन्येत्र≃पृथक् सर्वम्=सर को वेद=जानता है

इदम्=यह व्रह्म=बाह्यग इदम्≔यह क्षत्रम्=क्षत्रिय इमे=ये लोकाः=कोक इमे=ये देवाः=देव इमे=ये वेदाः=वेद इमानि=ये भूतानि=सब ग्राणी इदम्=यह यत्=जो कुछ है श्चयम्=यही सर्वम्=सब श्चारमा=घारमा है

भावार्थ ।

याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं कि, हे प्रिय मैंत्रेयि ! ब्रह्मत्व शिक्त उस पुरुप को त्याग देती है जो ब्रह्मत्व को ब्रापने ब्रात्मा से पृथक् जानता है, क्षित्र्यत्व शिक्त उस पुरुप को त्याग देती है जो अपने आत्मा से धृशक् आत्मा से क्षित्रयत्व को पृथक् सममता है, स्वर्गादिलोक उस पुरुप को त्याग देते हैं जो अपने आत्मा से स्वर्गादिलोकों को पृथक् जानता है, देवता उस पुरुप को त्याग देते हैं जो अपने आत्मा से देवता को पृथक् जानता है, वेद उस पुरुप को त्याग देते हैं जो अपने आत्मा से पृथक् जानता है, स्व प्राची उस पुरुप को त्याग देते हैं जो अपने आत्मा से पृथक् जानता है, स्व कोई उस पुरुप को त्याग देते हैं जो अपने आत्मा से सवको पृथक् जानता है स्व कोई उस पुरुप को त्याग देते हैं जो अपने आत्मा से सवको पृथक् जानता है स्व कोई उस पुरुप को त्याग देते हैं जो अपने आत्मा से सवको पृथक् जानता है यह ब्राह्मण है, यह क्षित्वय है, यह क्षोक है, यह देवता है, यह क्षेत्र है, यह क्षोक है, यह देवता है, यह क्षेत्र है, यह को क है, यह देवता है, यह वेद है,

यह प्राग्ती है, जो छुछ है वह सब अपना आतमा है आतमा से अति-रिक्क कुछ भी नहीं है।। ७॥

मन्त्रः द

स यथा दुन्दुभेईन्यमानस्य न बाह्याञ्ज्ञब्दाञ्ज्ञक्तुयाद्ब्रहणाय दुन्दुभेस्तु ब्रह्ग्णेन दुन्दुभ्याघातस्य वा शब्दो गृहीतः ॥

पदच्छेदः ।

सः, यथा, दुन्दुभेः, हन्यमानस्य, न, बाह्यान्, शब्दान्, शक्तुयात्, प्रहत्ताय, दुन्दुभेः, तुः, प्रहत्तेन, दुन्दुभ्याघातस्य, वा, शब्दः, गृहीतः ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

यथा=जैसे हन्यमानस्य=बजते हुये दुन्दुभेः=ढोल के तु=परन्तु दुन्दुभेः ग्रह्गोन=दोल के पकदलेने से दा=स्रथवा

बाझान्=बाहर निकले हुये श्राब्दान्=शब्दों के श्रह्माय=प्रहण यानी पकदने के लिये

दुन्दुभ्या- } _दोल के बनानेवाले घातस्य } को पकद खेने से शब्दः=शब्द का प्रहण

के जिये + जनः=कोई पुरुष न=नहीं शक्त्यात्=समर्थ होसक्षा है भचति=होता है + तथा=वैक्षेही + सः=वह द्यारमा गृहीतः=प्रहुख किया जाता है

भावार्थ ।

हे मैत्रेयि ! जैसे बजते हुये ढोल के शब्द को कोई पकड़ नहीं सक्ता है यानी बन्द नहीं कर सक्ता है परन्तु ढोल के पकड़ लेने से अथवा ढोल के बजानेवाले को पकड़ लेने से शब्द का प्रह्मा होजाता है यानी बन्द होजाता है उसी प्रकार यह अपना आत्मा जो इस शरीर बिषे स्थित है उसका प्रहमा जभी होसक्ता है जब शरीर आत्मा से पृथक् जान लिया जाय या शरीर का चलानेवाला जीवात्मा शरीर से पृथक् जान लिया जाय ॥ = ॥

मन्त्रः ६

स यथा शंखस्य ध्मायमानस्य न बाह्याञ्जब्दाञ्जकनुयाद्प्रह-णाय शंखस्यतु प्रहणेन शंखध्मस्य वा शब्दो गृहीतः ॥

पदच्छेदः ।

सः, यथा, शंखस्य, ध्मायमानस्य, न, वाह्यान्, शब्दान्, शक्तु-यात्, प्रहत्ताय, शंखस्य, तु, प्रहत्तोन, शंखध्मस्य, वा, शब्दः, गृहीतः ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

यथाः कैसे

%मायमानस्य=बजाये हुये

शासस्य=शंस के

याह्मान्=बाहर निकले हुये
शब्दान्=शब्दों के

प्रहणाय=पक्कने के जिये

+ जनः=कोई पुरुष

न=नहीं

शक्नुयान्=समर्थ दोसक्रा है

न=परन्तु
शंसकस्य=शंस के

ग्रह**णेन**=प्रहण करने से

बा≔ग्रथवा

शंखध्मस्य=शंख के बजानेवाते के
प्रहरोन=पक्ड जेने से
प्रहरा=शब्द का
गृहीत:=प्रहय होजाता है
+ तथैच=डसी प्रकार
+ सः=वह प्रास्मा
+ गृहीत:=प्रहय
+ भवति=होजाता है

भावार्थ ।

हे मेंत्रेय ! जैसे बजाये हुये शंख के बाहर निकले हुये शब्दों के पकड़ने के लिये कोई पुरुष समर्थ नहीं होता है परन्तु जब शंख को पकड़ जेता है या शंख के बजानेवाले को पकड़लेता है तब शब्द को जो उसके अन्दर स्थित है पकड़ लेता है उसी प्रकार इस जीवात्मा का महुगा जभी होसका है जब शरीर से पृथक् करके देखा जाता है या शरीर इससे पृथक् करके देखा जाता है ॥ ह ॥

मन्त्रः १०

स यथा वीगाये वाचमानाये न बाह्यान्द्रव्दान्द्रक्तुयाद्प्रहृणाय बीगाये तु प्रहणेन वीगावादस्य वा शब्दो गृहीतः ॥

पर्च्छेदः ।

सः, यथा, वीगाये, वाद्यमानाये, न, बाह्यान् , शब्दान् , शक्तुयात्, प्रहत्याय, वीगाये, तु, प्रहत्तेन, वीगावादस्य, वा, शब्दः, गृहीतः ॥ पदार्थाः पदार्थाः भ्रन्वयः श्चन्वयः यथा≕जैसे वीगायै=वीगा के वाद्यमानायै=बजाई हुई प्रहरोन=प्रहण करने से र्घाणायै≔वीणा के खा≔त्रथवा बाह्यान्=बाहर निकले हुये वीशावादस्य=बीशा के बजानेवालेके शब्दान्=शब्दों के प्रहरोन=पक्द सेने से

झह्णाय≔प्रहण करने के क्षिये जनः≔कोई पुरुष न≔नहीं

ग=गर। शक्तुयात्=समर्थ होसक्ना है

तु=परम्तु

शब्दः गृहीतः≔शब्द प्रहण दोजाता**दे** + तथैच=उसी तरह + सः≔वह प्रातमा

+ सः≔वह भारमा +गृहीतः=घहण + भवति=होजाता है

भावार्थ ।

हे मेंत्रेयि ! जैसे वीगा से बाहर निकले शब्द पकड़े नहीं जा सकते हैं परन्तु वीगा के पकड़ लेने से या वीगा के बजाने वाले के पकड़ लेने से शब्द का प्रह्मा होजाता है उसी तरह शरीर से आत्मा को पृथक् करके और आत्मा से शरीर को पृथक् करने से आत्मा का प्रहमा होता है।। १०।।

मन्त्रः ११

स यथाद्वैधाग्नेरभ्याहितस्य पृथग्यूमा विनिश्चरन्त्वेवं वाश्चरेऽस्य महतो भूतस्य निश्वसितमेतद्यदग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वाङ्गिरस इतिहासः पुराणं विद्या उपनिषदः श्लोकाः सूत्राण्यनुष्याख्या-नानि व्याख्यानानीष्टथ्ध हुतमाशितं पाथितमयं च लोकः प्रश्च लोकः सर्वाणि च भूतान्यस्यैवैतानि सर्वाणि निश्वसितानि ॥

पद्च्छेदः ।

सः, यथा, आर्द्धेधारनेः, अभ्याहितस्य, प्रथक्, धूमाः, विनिश्च-

रन्ति, एवम्, वा, श्ररे, श्रस्य, महतः, भूतस्य, निश्वसितम्, एतत्, यत्, भ्राग्वेदः, यजुर्वेदः, सामवेदः, श्रथविश्वरसः, इतिहासः, पुरागाम्, विद्या, उपनिषदः, रलोकाः, सूत्राणि, अनुव्याख्यानानि, व्याख्यानानि, इष्टम्, हुतम्, आशितम्, पायितम्, अयम्, च, क्रोकः, परः, च, लोकः, सर्वाणि, च, भूतानि, अस्य, एव, एतानि, सर्वाणि, निश्वसितानि ॥

श्चन्यः

पदार्थाः

श्चभ्याहितस्य=स्थापित की हुई श्चार्टेंघाग्नेः≕गीवी लक्डी की

यथा=जैसे

चारित में से

धूमाः=धूमावत्नी पृथक्=पृथक् पृथक्

विनिश्चरन्ति=चारां तरफ फैलती हैं एवम्=इसी प्रकार

श्चरे=हे मैत्रेवि ! वा=निश्चय करके

श्रस्य=इस भूतस्य=जीवात्मा का

पतत्≕यइ निश्वसितम्=श्वास है

> यत्=जो **ऋ**ग्वेदः=ऋग्वेद यजुर्वेदः=यजुर्वेद

सामवेदः=सामवेद

श्रधवीङ्किरसः=ग्रथर्वण वेद

· इतिहासः=इतिहास

ऋस्वयः

पदार्थाः

पुरागम्=पुराग

विद्या=गानविद्या उपनिषदः=उपनिपद्

इलोकाः≔मन्त्र

सूत्राशि=मृत्र

श्चनुब्या- } स्यानानि }=भाष्य

द्याख्यानानि=ध्याख्यान

इष्टम्≃यज्ञ

हुतम्≔होम

ग्राशितम्=त्रन्नदान

पायितम्≔जबदान

ग्रयम् च=यह लोकः≕लोक

परः च=पर

लोकः≔बोक

सर्वाणि≕सब

च=श्रौर

पतानि=थे

सर्वाणि=सब

भूतानि=प्राची

अस्य एव=इसी जीवात्मा के निश्वसितानि=स्वामाविक श्वास हैं

भावार्थ।

हे मैत्रेचि ! जैसे श्रानि में गीली लकड़ी के डालने से धूम श्रोर चिन्गारी श्रादिक चारों तरफ फेलती हैं उसी प्रकार है मैत्रेचि ! गुर्णों में सबसे बड़ा श्रोर स्वरूप में सबसे श्रात सृक्ष्म जीवात्मा का ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, श्राथर्वण्यवेद, इतिहास, पुराण, गानविद्या, श्रात्मविद्या, मन्त्र, सूत्र, भाष्य, ज्याख्यान, होम, श्रात्मदान, जलदान, यह लोक, परलोक श्रोर सब प्राणी स्वाभाविक स्वास हैं ॥ ११ ॥

मन्त्रः १२

स यथा सर्वासामपां समुद्र एकायनमेव छ सर्वेषाछ स्पर्शानां स्वगेकायनमेव छ सर्वेषां गन्यानां नासिके एकायनमेव छ सर्वेषाछ स्सानां जिह्नैकायनमेव छ सर्वेषाछ रूपाणां च छुरेकायनमेव छ सर्वेषाछ रूपाणां च छुरेकायनमेव छ सर्वेषाछ रूपाणां च छुरेकायनमेव छ सर्वेषाछ श्रव्याना छ श्रव्याना छ सर्वेषां छ संकल्पानां मन एकायनमेव छ सर्वेषां विद्याना छ ह्रद्यमेकायनमेव छ सर्वेषां कर्मणाछ हस्तावेकायनमेव छ सर्वेषां निस्पाणां पायुरेकायनमेव छ सर्वेषामध्यनां पादावेकायनमेव छ सर्वेषां वेदानां वागेकायनम् ॥

पदच्छेदः ।

सः, यथा, सर्वासाम्, श्रापम्, सनुद्रः, एकायनम्, एवम्, सर्वे-पाम्, स्पर्शानाम्, त्वक्, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्, गन्धानाम्, नासिके, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्, रसानाम्, जिह्वा, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्, रूपाणाम्, चक्षुः, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्, शब्दा-नाम्, श्रोत्रम्, एकायनम्, एदम्, सर्वेषाम्, संकल्पानाम्, मनः, एकायनम्, एवम्, सर्वासाम्, विद्यानाम्, हृदयम्, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्, कर्भणाम्, हृस्तौ, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्, श्रानन्दानाम्, ष्पस्थः, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्, विसर्गाणाम्, पायुः, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्, अध्वनाम्, पादौ, एकायनम्, एवम्, सर्वेषाम्, वेदा-नाम्, वाग्, एकायनम् ॥

भ्रास्वयः

पदार्थाः | ऋग्वयः

पदार्थाः

यथा=जैसे सर्वासाम्=सब श्रापाम्≕जलों का पकायनम्≂एक स्थान समुद्रः≔समुद्र है एवम्=इसी तरह सर्वेषाम्≕सब स्पर्शानाम्=स्पर्शे का **एक**।यनम्≔एक स्थान त्वक्=त्वचा है प्वम्⇒इसी तरह सर्वेषाम्=सब शन्धानाम्=गन्धों का एकायनम्=एक स्थान नासिक=बार्यन्दिय है एवम्=इसी तरह **स**र्वेषाम्=स**य** रसानाम्≔स्वादों का एकायनम्≔एक स्थान जिह्या=जिह्या है प्चम्≕उसा प्रकार सर्वेषाम्≕सब इराग्राम्=रूपें का **एकायमम्**≔एक स्थान

एवम्=इसी तरह सर्वेषाम्=सब शब्दानाम्=शब्दों का

एकायनम्=एक स्थान श्रोत्रम्=श्रोत्र है एवम्=इसी प्रकार सर्वेष।म्≔सब संकल्पानाम्⇒संकल्पों का **पकायनम्**=एक स्थान मनः≔मन है पवम्=इसी तरह सर्वासाम्=सब विद्यानाम्=विद्यात्रीं का **एकायनम्**=एक स्थान इदयम्≔हदय है प्धम्=इसी तरह सर्वेषाम्=सब कर्मगाम्≂कर्मीका एकायनम्=एक स्थान हस्ती=हाथ हैं . एघम्≔इसी तरह सर्वेषाम्=सब ग्रानन्दानाम्=श्रानन्दीं का **एकायनम्**≕एक स्थान डपस्थः=डपस्थ है ष्वम्≔इसी तरह सर्वेषाम्≕सब विसर्गाणाम्=विसर्जनीं का एकायनम्=एक स्थान पायुः≕गुदा है एवम्≔इसी प्रकार

सर्वेषाम्=सव ऋध्वनाम्=मागें का पकायनम्=एक स्थान पादौ=पाद हैं प्वम्=इसी तरह सर्वेषाम्=सव वेदानाम्=वेदों का

पकायनम्=एक स्थान बाक्=वार्खा है + तथा प्रच=तिसी प्रकार + सः=वह बास्मा + सर्वेषाम्=सब + झानानाम्=ज्ञानां का + पकायनम्=एक स्थान है

भावार्थ ।

हे मैंत्रेयि! जैसे सब जजों का एक स्थान समुद्र है, जैसे सब स्पर्शों का एक स्थान त्वचा है, जैसे सब गन्धों का एक स्थान प्राण्य इन्द्रिय है, जैसे सब स्वादों का एक स्थान जिह्ना है, जैसे सब रूपों का एक स्थान नेत्र हैं, जैसे सब शन्दों का एक स्थान प्रोत्र हैं, जैसे सब संकल्पों का एक स्थान मन हैं, जैसे सब विद्याखीं का एक स्थान हृद्य है, जसे सब कमों का एक स्थान हस्त हैं, जैसे सब खानन्दों का एक स्थान उपाय है, जैसे सब विसर्जनों का एक स्थान गुदा है, जैसे सब मार्गों का एक स्थान पाद हैं, जैसे सब वेदों का एक स्थान वास्पी है, इसी प्रकार यह अपना खात्मा सब हानों का एक स्थान है ॥ १२ ॥

मन्त्रः १३

स यथा सैन्पराघनोऽनन्तरोऽवाद्यः कृत्स्नो रसायन एवैवं वा श्चरेऽयमात्मानन्तरोऽवाद्यः कृत्स्नः प्रज्ञानयन एवैतेभ्यो भूतेभ्यः समुत्थाय तान्येवानुविनश्यति न भेत्य संज्ञास्तीत्यरे ब्रवीमीति होवाच याज्ञवरुक्यः ॥

पद्च्छेदः ।

सः, यथा, सैन्धवधनः, अनन्तरः, अवाह्यः, कृत्स्नः, रसधनः, एव, एवम्, वा, अरे, अयम्, आत्मा, अनन्तरः, अवाह्यः, कृत्स्नः, प्रज्ञान्धनः, एव, एतेभ्यः, मूतेभ्यः, समुत्थाय, तानि, एव, अनुदिनश्यित, न, प्रेत्य, संज्ञा, अस्ति, इति, अरे, व्यीमि, इति, इ, उवाच, याज्ञवक्क्यः ॥ श्रन्वयः

पदार्थाः श्रन्दयः पदार्थाः

यथा=जैसे सः=वह

सैन्धव्यतः=ग्रैन्धवनोन का हला श्चनन्तर:=भीतर

श्रवाद्यः≔बाहर से

रसञ्जः=रसवाता

कृत्स्नः=पूर्ण है

एवम् एव≔इसी प्रकार

श्चरे=हे मैत्रेवि!

श्रयम्=यह श्चातमा=श्चारमा

द्मनन्तरः=श्रन्दर

श्रवाह्यः=बाहर से

इति वा=निश्चय करके प्रज्ञानधनः=ज्ञानस्वरूप है

+ सः=यही श्रात्मा

प्तेभ्यः=इन

एव=ही

भूतेभ्यः=पञ्चमहाभूतों से

समुत्थाय≕निकत कर तानि=उन

एच≔ही के

श्रमु=श्रभ्यन्तर

चिनश्यति=लीन रहता है

ऋारे≕हे मैत्रेयि !

ब्रवीमि=में सत्य कहता हूं

प्रत्य=देह छोड़ने के पीछे

श्रस्य=इस ग्रास्मा की संज्ञा=विशेष संज्ञा

न=नहीं

श्रा€त=रहती है इति=ऐसा

|याज्ञवत्कयः } =याज्ञवत्कय ने कहा

भावार्थ ।

हे मैत्रेयि ! जैसे सैन्यवनोन का डला भीतर वाहर रस करके पूर्ण है, उसी प्रकार यह जीवात्मा बाहर भीतर से सत् चित् ऋानन्द करके पूर्गा है, यह आत्मा इन्हीं पञ्चतत्त्वों में से प्रकट होकर इन्हीं के अभ्यन्तर लय होजाता है, हे मेन्नेयि ! मैं सत्य कहता हूं देहत्याग के पीछे इस आत्मा की विशेष संज्ञा कुछ नहीं रहती ॥ १३ ॥

मन्त्रः १४

सा होवाच मैत्रेयपत्रैव मा भगवान्मोहान्तमापीपिपत्र वा अह-मिमं विजानामीति स होवाच न वा ऋरेऽहं मोहं ब्रवीम्यविनाशी वा अरेऽयमात्मानुच्छित्तिधर्मा ॥

पदच्छेदः ।

सा, ह, उवाच, मैंत्रेयि, अत्रत, एव, मा, भगवान्, मोहान्तम्, आपीपिपत्, न, वा, अहस्, इमम्, विज्ञानामि, इति, सः, ह, उवाच, न, वा, आररे, आरहम्, मोहम्, ब्रवीमि, आस्त्रिनाशी, वा, आररे, आरयम्, श्चात्मा, श्चनुच्छित्तिधर्मा ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः । श्रन्वयः

पदार्थाः

ह≔तब सा=वह मैत्रेयी उवाच=बांबी कि भगवन्=हे भगवन् ! श्रत्रैव=इस विज्ञानघन धात्मा विषे मा=मुके स्वम्=ग्रापने मोहान्तम्=मोहित श्रपीपिपत्=िकया है इति=ऐसा + उक्त्वा=कह कर कि श्चहम्=मैं वा=निस्सन्देह इमम्=इस भ्रात्मा को

न=नहीं विज्ञानामि=जानता हूं

सः≔वह याज्ञवल्क्य उवाच ह=बोले कि स्रोरे=हे मैत्रेवि! श्रहम्=भैं मोहम्=ग्रज्ञान की बात को न वा=नहीं व्रवीमि=कहता हूं द्यारे=हे मैत्रेयि ! श्चयम्=यह **छात्मा**=श्रात्मा श्चविनाशी=विकारराहेत है वा=ग्रौर

ह≕तब

वाशरहित है यानी जो धर्भरहित है अनुविद्यत्तिधर्मा= उसको कोई कैसे जान सक्रा है

भावार्थ।

यह सुनकर मेत्रेयी कहती है कि, हे प्रमी ! आपने इस विज्ञान-घन आत्मा विषे मुक्तको मोहित किया है ऐसा कहकर कि मैं आत्मा को नहीं जानता हूं, इस पर याज्ञवल्क्य महाराज कहते हैं, हे मैत्रेयि ! में तुमको मोह में नहीं डालता हूं, ऋौर न कोई ऋज्ञान की बात कही है, अरे मैत्रेयि ! यह अपना आत्मा निकाररहित है, और नाशरहित है, यह आ्रात्मा बुद्धि का विषय नहीं है, जब बुद्धि का विषय नहीं तब कैसे मैं कह सक्ता हूं कि में इस ख्रात्मा को जानता हूं, अगर यह बुद्धि करके जाना जाय तो विकारवाला होजायगा, ख्रौर जो विकारवाला होता है वह नाशवर्मवाला होता है, तुम ख्रपने सन्देह को दूर करो ख्रौर मेरे कहे हुवे पर विचार करो ॥ १४॥

मन्त्रः १५

यत्र हि द्वैतिभव भवति तिदितर इतरं पश्यित तिदितर इतरं जिघ्नित तिदितर इतरं एसयते तिदितर इतरं भ्रुगोति तिदितर इतरं थ्रुगोति तिदितर इतरं थ्रुगोति तिदितर इतरं थ्रिगोति तिदितर इतरं थ्रिगोति तिदितर इतरं थ्रिगोति तिदेन के प्रिगोति तिदेन के प्रिगोति के प्रिगेति के प्रिगोति के प्रिगेति के प

इति पश्चमं ब्राह्मसम् ॥ ४ ॥ इति श्रीबृहदारएयकोपनिपदि चतुर्थोऽध्यायः॥ ४ ॥ पदच्छेदः।

यत्र, हि, द्वैतम्, इव, भवति, तत्, इतरः, इतरम्, पश्यति, तत्, इतरः, इतरम्, जिन्नति, तत्, इतरः, इतरम्, रसयते, तत्, इतरः, इतरम्, अभिवदित, तत्, इतरः, इतरम्, श्र्योति, तत्, इतरः, इतरम्, श्रामेवद्दित, तत्, इतरः, इतरम्, श्र्योति, तत्, इतरः, इतरम्, मन्तेते, तत्, इतरः, इतरम्, स्पृशति, तत्, इतरः, इतरम्, विजानाति, यत्र, तु, अस्य, सर्वम्, आत्मा, एव, अभ्तूत, तत्, केन, कम्, पश्येत, तत्, केन, कम्, जिन्नत, तत्, केन, कम्, रसयत्, तत्, केन, कम्, प्रयोत्, तत्, केन, कम्, प्रयोत्, तत्, केन, कम्, जिन्नत, कम्, श्र्यायात्, तत्, केन, कम्, मन्वीत, तत्, केन, कम्, स्पृशत्, तत्, केन, कम्, विजानीयात्, येन, इदम्, सर्वम्, विजानाति, तत्, केन, विजानीयात्, सः, एषः, न, इति, न,

इति, झात्मा, झगृह्यः, न, हि, गृह्यते, झशीर्यः, न, हि, शीर्यते, झसङ्गः, न, हि, सज्यते, झसितः, न, व्यथते, न, रिप्यति, विज्ञातारम्, झरे, केन, विज्ञानीयात्, इति, उक्तानुशासना, झसि, मैंत्रेयि, एतावत्, झरे, खल्लु, झमृतत्वम्, इति, ह, उक्त्वा, याज्ञवत्क्यः, विज्ञहार ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः

यन्न=जहां पर द्वैतम् इव=दैत की तरह श्रयम्≔यह ऋात्मा भवति=श्राभास होता है तत् हि=तहां ही इतरः=दूसरा इतरम्=दूसरे को पश्यति=देखता है तत्=वहां ही इतरः≔दूसरा इतरम्=दूसरे को जिन्नति=सृंघता है तत्=वहां ही इतर:=दूसरा इतरम्≔दूसरे को रसयतं=स्वाद जेता है तत्=वहां ही इतर:=श्रम्य इतरम्=श्रन्य से श्रमिवदति=कहता है तत्=वहां ही इतर:=ग्रन्य इतरम्=श्रन्य का श्वगोति=सुनता है तत्=वहां

श्चन्यः

पदार्थाः

इतरः≔दृसरा इतरम्=दृसरे को मञ्जे=मानता है तत्=वहां ही इतर:=श्रीर इतरम्=श्रीर को **∓**प्रशति=स्पर्श करता है तत्=वहां ही इतर:=श्रोर इतरम्=श्रीर को विज्ञानाति=जानता है तु=परन्त् यत्र≕जहां श्रस्य=इस पुरुप को सर्वम्≕सब जगत् श्चातमा एव=श्रात्मा ही श्रभूत्=होरहा है तत्=वहां श्चयम्=यह श्वात्मा केन=किस करके कम्=िकसको पश्यंत्=देखे तत्=वहां केन=किस करके कम्=किसको

जिघ्रेत्=सृषे तत्=वहां केन=किस करके कम्≕िकस का रसयत=स्वाद बेवे तत्=वहां केन=किस करके कम्=िकसको श्चभिवदेत्=कहे तत्=वहां केन=किस करके कम्=िकसको श्युयात्=सुने तत्=वहां केन≔किस करके कम्=िकसको भन्धीत=माने तत्=वहां केत=किस करके कम्=किसको स्पृशेत्=स्पर्श करे तन्=वहां केन=किस करके कम्≕िकसको विज्ञानीयात्=जाने यन=जिस करके + पुरुषः≃पुरुष इदम्=इस सर्वम्=सबको विजानीयात्=जानता है तम्=उसको केन≔किस करके

विजानीयात्=कोई जाने सः≔वही एषः≕यही श्चात्मा=श्रात्मा नेति≔नेति नेति=नेति इति=करके श्चगृह्यः=श्रयाह्य है हि=क्योंकि + सः=वह न=नहीं गृह्यते=प्रहण किया जा सक्ना है श्रशीर्यः=जीर्शतारहित है हि=क्योंकि सः=वह न=नहीं शीर्यते⇒जीर्थ किया जा सक्ना है श्रसङ्गः≔वह श्रसङ्ग है हि=क्योंकि स्न:=वह न सउयते≕िकसी में भासक नहीं श्रसितः=वह भवद्ध है हि=क्यों कि सः=वह न व्यथते=पीड़ित नहीं होता है च≃शौर स=न रिष्यति=इत होता है श्चरे=हे मैत्रेयि ! विज्ञातारम्=उस ज्ञानस्वरूप श्राप्ता

केन=किस के द्वारा विज्ञानीयात्=कोई जाने मैत्रेयि=हे मैत्रेयि ! तू इति=इस प्रकार उक्कानुशासना=उपदेश कीगई श्रासे=हे श्रोर=हे मैत्रेयि ! पतावत् खलु=इतना ही
श्रभृतत्वम्=मुक्षि है
इति ह=ऐसा
उक्त्वा=कहकर
याञ्चवल्क्यः=याज्ञवल्क्य
विज्ञहार=विहार करते भये

भावार्थ ।

हे मैत्रेयि ! जहां पर यह आदमा देत भासता है, तहां ही दूसरा दूसरे को देखता है, दूसरा दूसरे को सूंघता है, दूसरा दूसरे का स्वाद केता है, दूसरा दूसरे से कहता है, दूसरा दूसरे का सुनता है, दूसरा दूसरे का मनन करता है, दूसरा दूसरे का स्पर्श करता है, दूसरा दूसरे को जानता है, परन्तु जहां इस पुरुष को सब जगत श्रपना श्रात्मा ही हो रहा है, वहां यह श्रात्म। किस करके किसको देखे, किस करके किसको संघे, किस करके किसका स्वाद लेवे, किस करके किससे कहे, किस करके किसको सुने, किस करके किसका मनन करे, किस करके किसको स्पर्श करे, किस करके किसको जाने, जिस करके यह पुरुष सबको जानता है उसको किस करके कोई जाने, वही यह आत्मा नेति नेति शब्द करके श्रप्राह्य है, जीग्रीतागहित है, वही श्रमङ है, वही श्रवद्ध है. क्योंकि किसी करके वह प्रहण् नहीं किया जा सक्ता है, न जीर्ग किया जा सक्ता है, न वह किसीमें आसक है. न उसको कोई पीड़ा दे सकता है, न वह इत हो सकता है, हे मैत्रेयि ! यह आतमा ज्ञानस्वरूप है, हे मैत्रेयि ! त इस प्रकार उपदेश कीगई है, अ्रौर तू श्रपने स्वरूप में स्थित है, यही मुक्ति है, श्रव मैं जाता हूं, ऐसा कहकर याज्ञवल्क्य महाराज चल दिये ॥ १४ ॥

इति पश्चमं ब्राह्मग्रम् ॥ ४ ॥ इति श्रीवृहदारगयकोपनिषदि भाषानुवादे चतुर्थोध्यायः ॥ ४ ॥

अथ पञ्चमोध्यायः॥ श्रथ प्रथमं वाह्मग्रम्।

अं पूर्णीमदः पूर्णीमदं पूर्णीत्यूर्णीमुदच्यते । पूर्णीस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्वते । अं खं ब्रह्म । खं पुरागं वायुरं खिमति इ स्माइ कौरन्यायणीपुत्रो वेदोऽयं ब्राह्मणा विदुर्वेदैनेन यदेदितन्यम् ॥

इति प्रथमं ब्राह्मणम् ॥ १ ॥ पदच्छदः । ॐ, पूर्णम्, झदः, पूर्णम्, इदम्, पूर्णात्, पूर्णम्, उदच्यते, पूर्णस्य, पूर्णम्, श्रादाय, पूर्णम्, एव, श्रवशिष्यते, 🕹, खम्, ब्रह्म, खम्, . पुरासाम्, वायुरम्, खं, इति, ह, स्म, ऋाह, कौरव्यायसापुत्रः, वेदः, श्चयम्, ब्राह्मस्साः, विदुः, वेद, श्रनेन, यन्, वेदितव्यम् ॥ पदार्थाः पदार्थाः श्रन्वयः श्चन्वयः

ॐ=ॐकाररूप

श्रादः≔यह परोक्ष ब्रह्म पूर्णम्=त्राकाशवत् पूर्ण है अवशिष्यते=बच रहता है इद्म्=यह दश्यमान नाम रूपात्मक जगत् भी पूर्णम्≔पूर्थ है + हि=क्योंकि पूर्णात्=पूर्णकारणात्मक ब्रह्म

+ इद्य=यह पूर्णम्=पूर्ण जगत्रूप कार्य उद्च्यते=निकला है + च=श्रौर पूर्णस्य=कार्यात्मक पूर्ण बहा-रूप जगत् की

पूर्णम्=पूर्णता को म्रादाय=पृथक् करने पर

एच≕केवल पूर्णम्=प्रज्ञानयन बहारूप

खम्=श्राकाश

+ एव≕ी ब्रह्म=त्रञ्च है

+ ब्रह्म } =ब्रह्म ही

ॐ=ॐकार है + तत्≔सोई

खम्=ग्राकाशरूप परमातमा

पुरागाम्=निरालम्ब है यत्=जो कुछ वेदितव्यम्=संसार में जानने

योग्य है

+ तत्=उस को श्रनेन=इस

+ ग्रंकारेश=ॐकार करके चेद=पुरुष जानता है + श्रतः=इस लिये

+ ग्रतः=इस लिये ग्रयम्=यह ॐकार

वेदः≔वेदरूप है + इति=एसा ब्राह्मणाः=ऋषिजोग विदुः=जानते भवे

+ परन्तु=परन्तु

कौरव्यावणी है =कौरव्यायणी का पुत्र

इति=ऐसा

ह=िनरचय करके श्राह स्म=कहा है कि

धायुरम्= { जितने झाकाश बिये सूत्रात्मा वायु व्यापक हो रहा है

+ तत्=डसी खम्=श्राकाश को + खाह=कहते हैं

भावार्थ ।

यह परोक्ष ब्रह्म आकाशवत् व्यापक है, यही द्रश्यमान नाम रूपा-त्मक जगत् भी है, यदि जगत् अपने अधिष्ठान चेतन ब्रह्म से अलग करके देखा जाय तो केवल प्रज्ञानघन ब्रह्मही पूर्ण बच रहता है, सोई ब्रह्म आकाशरूप है वही ॐकाररूप है, और वही आकाशरूप प्रमात्मा है, हे शिष्य! जो छुळ संसार विषे जानने योग्य है वह इसी ॐकार करके जाना जाता है, इसिलये यह ॐकार वेद है, ऐसा अनृषि जोगों का अनुभव है, और कौरठ्यायग्गी के पुत्र ने ऐसा कहा है कि जितने आकाश विषे सूत्रात्मा वायु व्यापक होरहा है, वही आकाशरूप ब्रह्म है, वही ॐकार करके जानने योग्य है ॥ १ ॥

इति प्रथमं ब्राह्मग्राम् ॥ १ ॥

श्रथ द्वितीयं ब्राह्मण्म्। मन्त्रः १

त्रयाः माजापत्याः मजापतौ पितिर ब्रह्मचर्यमूषुर्देवा मनुष्या श्रमुरा उपित्वा ब्रह्मचर्य देवा छचुर्बवीतु नो भवानि तेभ्यो है-तदक्षरमुवाच द इति व्यज्ञासिष्टा ३ इति व्यज्ञासिष्मेति होचुर्दाम्यते-ति न श्रात्थेत्योमिति होवाच व्यज्ञासिष्टेति ॥

पदच्छेदः ।

त्रयाः, प्राजापत्याः, प्रजापतौ, पितिरि, ब्रह्मचर्यम्, ऊषुः, देवाः, मनुष्याः, श्रमुराः, उषित्वा, ब्रह्मचर्यम्, देवाः, ऊचुः, व्रवीतु, नः, भवान, इति, तेभ्यः, ह, एतत्, अक्षरम्, उवाच, द, इति, व्यक्षासिष्टाः, इति, क्यक्षासिष्मा, इति, ह, ऊचुः, दाम्यत, इति, नः, आत्थ, इति, ॐ, इति, ह, उवाच, व्यक्षासिष्ट, इति ॥

पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः श्चन्वयः प्रजापतौ=प्रजापति इति=इस प्रकार पितरि=पिता के पास तेभ्यः ⇒देवों के निमित्त देचाः=देव पतत्=इस मनुष्याः=मनुष्य द≕द श्रसुराः=श्रसुर श्रक्षरम्=श्रक्षर को त्रयाः≕तीनों ह=स्पष्ट प्राजापत्याः=प्रजापति के पुत्र उवाच=प्रजापति कहता भया ब्रह्मचर्यम्=ब्रह्मचर्यं व्रतके तिये + च=श्रोर ह=निश्चयकरके + पुनः≕फिर ऊषुः=वास करते भये इति≕ऐसा देवाः=रेवता लोग + उक्त्वा=कहकर ब्रह्मचर्यम्=ब्रह्मचर्य त्रत को + पप्रच्छ=पूछता भया कि उषित्वा=करके यूयम्=तुम कोगों ने + प्रजापतिम्=प्रजापति से व्यज्ञासिष्टाः=इसका श्रर्थ जान ह=स्पष्ट ब्रिया इति=ऐसा इति=ऐसा सनकर ऊचुः=कहा कि + देवाः≔देवतों ने भवान्=श्राप ऊचु:=कहा कि नः=हम लोगों को व्यज्ञासिष्म } हम लोग ऐसा समक इति } गये कि **धनुशासनम्**=श्रनुशासन ब्रचीतु=देवैं दाम्यत=इन्द्रियोंको दमन करो इति=ऐसा इति नः=एसा हमसे भुत्वा=सुन कर आत्थ≃बाप कहते हैं

इति=ऐसा + श्रुत्वा=सुन कर + प्रजापतिः=मजापति उवाच≕बोले ॐ=ठीक

व्यक्तासिष्ट=तुम सब सममे

भावार्थ ।

प्रजापित के तीन पुत्र देवता, मनुष्य धौर असुर हैं, तीनों प्रजापित के पास ब्रह्मचर्य व्रत के निमित्त वास करते रहे, इनमें से प्रथम देवता प्रजापित के पास जाकर बोले कि हे भगवन ! आप हम लोगों को कुछ उपदेश देवें, प्रजापित ने उनको "द" अक्षर का उपदेश दिया, अभीर फिर उनसे पृष्णा कि क्या तुम लोगों ने "द" इस अक्षर का अर्थ समम्म लिया है ? देवताओं ने कहा हां हमलोग समम्म गये हैं, आप हमसे कहते हैं कि तुम सब लोग इन्दियों का दमन किया करो, इस पर प्रजापित बोले कि हां तुम लोगों ने इस "द" अक्षर का अर्थ ठीक समम्म लिया है, इसका भाव ऐसाही है जैसा तुम लोगों ने समम्मा है ॥ १॥

मन्त्रः २

श्रथ हैनं मनुष्या ऊचुर्ब्रवीतु नो भवानिति तेभ्यो हैतदेवाक्षर-मुवाच द इति व्यझासिष्टा ३ इति व्यझासिष्मेति होचुर्दचेति न श्रात्थेत्योमिति होवाच व्यझासिष्टेति ॥

पहच्छेदः ।

डाथ, ह, एतम्, मनुष्याः, ऊचुः, ब्रवीतु, नः, भवान्, इति, तेभ्यः, ह, एतत्, एव, झक्षरम्, च्याच, द, इति, व्यक्षासिष्टाः, इति, व्यक्षा-सिष्म, इति, ह, ऊचुः, दत्त, इति, नः, झात्थ, इति, ॐ, इति, ह, खवाच, व्यक्षासिष्ट, इति ॥

द्यान्वयः

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

ष्मथ ह=इसके उपरान्त मनुष्याः=मनुष्य एनम्=इस प्रजापति से इति=ऐसा ऊचुः=कहते भये कि भवान्=भाष

नः≔डम खोगों को व्यञ्चासिष्टाः≔क्या तुम सब समक गये हो ब्रवीतु=मनुशासन करें इति≕तब इति=ऐसा ऊचुः≔मनुष्य बोले कि + धृत्वा≔सुन कर ं व्यक्कासिष्म } =हम सब ऐसासममे कि इति ते भ्यः=मनुष्यों के खिये भी पतत् पव=पशी वत्त इति=दान करो ऐसा नः≔हम से र=इ श्चात्थ=आप कहते हैं श्रक्षरम्=श्रक्षर इति=करके ह=तब उपदेश उचाच=प्रजापति इति=ऐसा + प्रजापतिः=प्रजापति करता भया + च=श्रीर उवाच=मनुष्यों से कहता पुनः=किर भया कि + पप्रच्छ इति≔मनुष्यों से ऐसा पृंख्ता ॐ=ठीक व्यज्ञासिष्ट=तुम सब समक गये हो भया कि

भावार्थ ।

देवताओं के परचात् मनुष्यगण्य प्रजापित के पास पहुँचे श्रीर कहा है भगवन् ! हमको भी श्राप उपदेश दें, इनको भी इसी श्रक्षर "द' का उपदेश प्रजापित ने दिया, श्रीर फिर उनसे पूंछा कि क्या तुमने "द" श्रक्षर का अर्थ समस्त लिया है, इस पर मनुष्यों ने कहा है पितामह ! जो श्रापने "द" श्रक्षर का उपदेश किया है उससे श्रापने हमलोगों से कहा है कि तुम सब कोई दान किया करो, ऐसा हमारे समक्त में श्राया है, सो ठीक है या नहीं इस पर प्रजापित ने कहा कि तुम सब लोगों ने हमारे श्राशय को भली प्रकार समक्त लिया है, जाव ऐसाही किया करो ॥ २॥

मन्त्रः ३

श्रथ हैनमसुरा ऊचुर्ब्रवीतु नो भवानिति तेभ्यो हैतदेवाक्षरमु-वाच द इति व्यज्ञासिष्टा इति व्यज्ञासिष्मोति होचुर्दयध्वमिति न श्रात्थेत्योमिति होवाच व्यज्ञासिष्टेति तदेतदेवैषा दैवी वागनुवदति स्तनिथित्नुर्देदद इति दाम्यत दत्त दयध्वभिति तदेतत्रयर्थः शिक्षेदमं दानं दयामिति ॥

इति द्वितीयं ब्राह्मणम् ॥ २ ॥ पदच्छेदः।

श्रथ, ह, एनम्, श्रम्भुराः, ऊचुः, श्रवीतु, नः, भवान्, इति, तेभ्यः, ह, एतत्, एव, श्रक्षरम्, उवाच, द, इति, व्यज्ञासिष्टाः, इति, व्यज्ञासिक्षाः, इति, क्यं, दिक्षः, इति, ह, उचुः, दयध्यम्, इति, नः, श्रात्थ, इति, क्यं, इति, ह, उवाच, व्यज्ञासिष्ट, इति, तत्, एतत्, एव, एपा, देवी, वाह्, श्रमु-वदित, स्तनयित्तुः, ददद, इति, दाम्यत, दत्त, दयध्यम्, इति, तत्, एतत्, त्रयम्, शिक्षेत्, दमम्, दानम्, दयाम्, इति ॥

श्रन्वयः पद्याः श्रथ ह=मनुष्याय के पीं के पनम्=प्रजापति से श्रसुराः=दैत्यलोग इति=ऐसा ऊचुः=बोलते भये कि नः=हमारे लिये भी भवान्=हे भगवन् ! धाप

भवान्= सगवन् ! आप
+श्रनुशासनम्=उपदेश

व्यतिन्देवें

इति=ऐसा
+ श्रुत्वा=सुन कर

द=द

इति=ऐसे

एतन् एच=इस

ग्राक्ष्मरम्=एक सक्षर को

तेभ्यः=असुरों के जिये मी

उवाच=प्रजापति कहता भया

+ च=श्रोर

इति=ऐसा पप्रच्छ=पूछता भया कि व्यज्ञासिष्ठाः=क्या तुम सब समक्ष गये इति=इस पर ऊचुः इति=ध्रसुर ऐसा बोले कि नः=इम से ग्रात्थ=ब्राप कहते हैं कि द्यध्वम्=दया करो

+ पुनः≕िकर

द्यस्य स्वाप्त करा इति=ऐसा व्यक्कासिस्म=इम कोग समके हैं + प्रजापतिः=प्रजापति इति=तव उवाच ह=गोले कि व्यक्कासिष्ट≕तुम सब ठीक समक्क गये हो तदेव≔वही

एतत्≕यह प्रजापति का दस्त=शन करोः श्रनुशासन है द्यभ्वम्=दया करो तत्=इसी को इति=इस प्रकार एषा=यह एतत्=यह त्रयम्=तीन प्रकार का दैवी=देवसम्बन्धी भनुशासन है **स्तन**यित्नुः=मेघस्थ + ग्रतः≔इसलिये वाकु=वाणी द्दद्=दद्द शब्द मनुष्यमात्रम्=मनुष्यमात्र द्मम्=इन्द्रियद्मन इति=करके श्चानुवद्ति=मनुवाद करती है दानम्=दान दयाम्=दया को शिक्षेत्=सीखे यानी करे टाम्यत=इन्द्रियों को दमन करो भावार्थ ।

मनुष्यग्या के पीछे असुर्ग्या भी प्रजापित के पास गये, और उनसे इच्छा प्रकट की कि आप हम लोगों को यथाउचित उपदेश करें, उनको भी प्रजापित ने "द" अक्षर का उपदेश किया और फिर उनसे पूंछा कि क्या तुम सममेहो, असुरों ने कहा है भगवन् ! आपने कहा है कि तुम सब लोग सब जीवों पर दया किया करों, प्रजापित ने कहा हां तुमने हमारे अर्थ को ठीक समम लिया है, संसार में आकर ऐसाही किया करों, इसी उपदेश को दैवी मेघस्थ वाणी भी अनुवादित करती है, यानी जो मेघ में गर्जना ददद की होती है, वह भी तीन दकारों के भाव को बताती है यानी इन्द्रियदमन करों, दान दो और दया करों, आज कलभी सबको उचित है कि इन तीनों शिक्षा को, यानी इन्द्रियदमन, दान, और दया को भलीप्रकार स्वीकार करें॥ ३॥ शानी इन्द्रियदमन, दान, और दया को भलीप्रकार स्वीकार करें॥ ३॥

श्रथ तृतीयं बाह्मणम्। मन्त्रः १

एष प्रजापतिर्येद्धृदयमेतद्ब्रह्मैतत्सर्व तदेतझ्यक्षरॐ हृदयमिति हृ इत्येकमक्षरमभिइरन्त्यस्मै स्वाश्चान्ये च य एवं वेद द इत्येकमक्षरं ददत्यस्मै स्वारचान्ये च य एवं वेद यमित्येकमक्षरमेति स्वर्ग ब्बोकं य एवं वेद ॥

इति तृतीयं ब्राह्मणम् ॥ ३ ॥

पदच्छेदः ।

एषः, प्रजापतिः, यत्, हृदयम्, एतत्, ब्रह्म, एतत्, सर्वम्, तत्, एतत् , त्र्यक्षरम् , हृदयम् , इति, हृ, इति, एकम् , अक्षरम् , अभिहरन्ति,~ श्चास्मे, स्वाः, च, अपन्ये, च, यः, एवम्, वेद, द, इति, एकम्, श्चक्षरम्, ददति, ग्रस्मे, स्वा:, च, श्रन्ये, च, यः, एवम्, वेद, यम्, इति, एकम्, श्चक्षरम्, एति, स्वर्गम्, लोकम्, यः, एवम्, वेद् ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः । श्रन्वयः

पदार्थाः

यत्≕जो

ह इति एकं } = 'ह' ऐसे एक श्रक्षरको श्रक्षरम्

एषः≕यही प्रजापतिः=प्रजापति है एतत्=यही

वेद=जानता है श्रास्मै=उस पुरुष के जिये स्वाः≔इन्द्रिय च=धौर

एतत्≔यहो सर्वम्=सर कुछ है तत्≕सोई ऽयक्षरम्=तीन श्रक्षरवाता एतत्=यह

श्चन्ये=शब्दादि विषय श्रपने श्रपने कार्य को

हृद्यम्=हृद्यबद्ध

करतेहें याना इन्द्रियां श्रमिहरन्ति विषय ग्रहण करती हैं एवम् जार विषय ग्रपने को अर्पण करते हैं इसी प्रकार

+ उपास्यम्=सेवनीय है यः≕जो एवम्=इस प्रकार

ख=भौर द इति=द ऐसे षकम्=एक

अक्षरम्=श्रक्षर की
यः=जो
वेद=जानता है
अस्मै=उस पुरुष के विषे
स्वाः=श्रपने ज्ञाति
च=शौर
अस्ये=ौर ज्ञाति के लोग
द्दति=सेवा सरकार करते हैं
च=शौर
प्वम्=इसी प्रकार

यम्=य द्दि=ऐसे एकम्=एक शक्षरम्=शक्षर को यः=जो वेद=जानता है सः=वह पुरुष स्वर्गम्=स्वर्ग लोकम्=जोक को प्रित=प्राप्त होता है

भावार्थ ।

हे शिष्य ! हृदय प्रजापित है, श्रीर कोई श्रन्य पुरुष प्रजापित नहीं है, यही हृदय महान् अनन्त त्रह्म है, जो कुछ ब्रग्नागड विषे स्थित है, वह यही ब्रह्म है, हृदय में तीन श्रक्षर हैं, उनमें से एक श्रक्षर 'हूं' है, जो 'हुन्' धातु से बना है, क्यों कि इसमें सब विषयों का भोग इन्द्रिय द्वारा प्राप्त होता है, श्रीर इसीमें इन्द्रियगण श्रीर शब्डाडि विषय अपने अपने कार्य को करते हैं, यानी इन्द्रिय विषयों को प्रहण करती हैं ख्रीर शब्द, स्पर्श, रूपादि विषय ख्रयने को अर्पणा करते हैं. जो उपासक इस हृदय ब्रह्मको ऐसा जानता है उसके बान्धव ऋौर अपन्य पुरुष उसकी सेवा सत्कार करते हैं, और जो हृदय में दसरा अक्षर " द " है, वह दा घातु से निकला है, जिसका अर्थ दयन करना है. यानी इन्द्रियों ऋौर विषयों को दमन करना चाहिये जो उपासक ऐसा "द" का द्रार्थ समभता है, उसको भी निज ज्ञाति स्रौर पर जाति के लोग धन आदि समर्पण करते हैं, और प्रतिष्ठा देते हैं, हृदय में तीसरा अक्षर "य" है जो इसा धात से निकला है, जिसके माने गमन के हैं, जो उपासक हृदय में य श्रक्षर को ऐसा जानता है वह हृदय द्वारा स्वर्ग को प्राप्त होता है, इसी हृदय की श्रोर ज्ञानी पुरुष जाते हैं, सब कार्य के करने में हृदयही मुख्य है, जिसका हृदय दुर्बल है, वह पुरुषार्थ के करने में असमर्थ है, सोई यह हृदय निश्चय करके प्रजापित है, हृदय में तीन अक्षर है, हृ., द., य., हृ—का अर्थ प्रदृष्ण करने में आता है, यानी जो कुछ प्रहृष्ण करने में आता है वह सब ब्रह्मही है, 'द'' का अर्थ दान का देना है, इन्द्रियों का दमन करना है और जीवों पर दया करना है, जिस शक्ति करके जीवमात्र पर दया की जाती है, या इन्द्रियों का या शत्रुओं का दमन किया जाता है, या कुछ जिस किसी को दिया जाता है वह सब ब्रह्म है. जो उपासक हृदय को ऐसा गुग्गवाला भावना करता है, वह देह त्यागानन्तर ब्रह्म कोही प्राप्त होता है, और यावत् संसार विषे जीता है बड़ा पराक्रमी, तेजस्वी, वलवान्, सबका नियामक होता है। १॥

इति तृतीयं ब्राह्मणम् ॥ ३ ॥

श्रथ चतुर्थं बाह्मगम्।

मन्त्रः १

तद्वै तदेतदेव तदास सत्यमेव स यो हैतं महचक्षं प्रथमजं वेद सत्यं ब्रह्मेति जयतीमाल्लोकाञ्जित इन्वसावसच एवमेतन्महचक्षं प्रथमजं वेद सत्यं ब्रह्मेति सत्यांश्र होव ब्रह्म ॥

इति चतुर्थे ब्राह्मग्रम् ॥ ४ ॥ परच्छदः।

तत्, वे, तत्, एतत्, एव, तत्, आस, सत्यम्, एव, सः, यः, ह, एतम्, महत्, यक्षम्, प्रथमजम्, वेद, सत्यम्, ब्रह्म, इति, जयित, इमान्, कोकान्, जितः, इनु, असौ, असत्, यः, एवम्, एतत्, महत्, यक्षम्, प्रथमजम्, वेद, सत्यम्, ब्रह्म, इति, सत्यम्, हि, एव, ब्रह्म।। अन्वयः पदार्थोः अन्वयः पदार्थोः

नयः पदायाः अन्वयः पदायाः तत् वै=वही पूर्वोक्र हृदय पतत् एव=यही तत्=ग्रन्य प्रकार से + तत्=वह ब्रह्म + कथ्यते=वर्धन किया जाता है सत्यम् ध्व=सत्य निश्चय करके

ग्रास=होता भवा यः≕जो यः=जो कोई एवम्=जपर कहे हुये प्रकार प्रथमजम्=पहिले उत्पन्न <u>ह</u>ये पतत्=इस महत्=बड़े महत्=बड़े यक्षम्=पूज्य **एतम्=इ**स हृदयरूवी ब्रह्मको यक्षम्=पृज्य ह=स्पष्ट प्रथमजम्=प्रथम उत्पन्न हुये एव≕निश्चय करके ब्रह्मको वेद=जानता है श्चसत्=श्रसत् + सः=वही पुरुष घेद=जानता है यः=जो कोई उपासक सत्यम्≔सत्य व्रह्म=ब्रह्म + एवम्≔इस प्रकार + भवति=होता है एतत्=इस हृदय को + च=श्रीर महत्=महान् इति=इसी कारय यक्षम्=पृज्य प्रथमजम्=श्रयज सः≃वह सत्यम्≈सत्य इमान्=इन सब लोकान्=कोकों को ब्रह्म=ब्रह्म जयति=जीतता है इति≔करके इनु=इसके विपरीत बेद्=जानता है श्रसौ=वह + सः≔वह + श्रज्ञानी } =श्रज्ञानी पुरुष + पुरुषः } + विजयी=विजयी + भवति=होता है श्चानिना=ज्ञानी पुरुष करके हि=क्योंकि जितः=पराजित ब्रह्म=ब्रह्म + भवति=होता है सत्यम्=सत्य है

भावार्थ ।

हे शिष्य ! इस हृदय को घ्यन्य प्रकार से वर्णन करते हैं, यही सत्यरूप है, यह सदा घ्यात्मा के साथ विद्यमान रहता है, जो कोई इस हृदय को महान् पुत्र्य प्रथमज ग्रोर क्यत्यन्त सत्य मानता है, वह इन सत्र लोकों को जीतता है, झौर इसके विपरीत इस हृदय को जो असस्य मानता है, वह अज्ञानी पुरुष ज्ञानी करके सदा जीता जाता है, अर्थात् जो हृदय को असस्य माननेवाला है वह बारवार मृत्यु भगवान् के मुख में गिरा करता है. आशय इस मन्त्र का यह है कि यह हृदय सत्य है, और अतिशय महान् है, इस हृदय के स्वरूप का ज्ञान न होने से पुरुष अज्ञानी बना रहता है, इसिलये अपृषि कहते हैं हे शिष्यो ! इस हृदय कोही सत्य पूज्य महान् समम्मो, इसीसे तुम्हारा कल्यास होगा ॥ १॥

इति चतुर्थं ब्राह्मण्म् ॥ ४ ॥

श्रथ पञ्चमं बाह्मग्रम्।

मन्त्रः१

त्राप एवेदमग्रे आसुस्ता आपः सत्यमस्रजन्त सत्यं ब्रह्म पजा-पति पजापतिर्देवाध्यते देवाः सत्यमेवोपासते तदेतअक्षत्थ सत्य-मिति स इत्येकमक्षरं तीत्येकमक्षरं यमित्येकमक्षरं प्रथमोत्तमे अक्षरे सत्यं मध्यतोऽनृतं तदेतदन्तसुभयतः सत्यंन परिगृहीतथं सत्यभूयमेव भवति नैवं विद्वाथसमन्तर्थं हिनस्ति ॥

पदच्छेदः।

श्रापः, एव, इद्म्, अप्ने, श्रामुः, ताः, श्रापः, सत्यम्, श्रम्भुजन्त, सत्यम्, श्रम्भ, प्रजापितः, देवान्, ते, देवाः, सत्यम्, एव, उपासते, तत्, एतत्, ज्यक्षरम्, सत्यम्, इति, सः, इति, एकम्, अक्षरम्, वम्, इति, एकम्, अक्षरम्, यम्, इति, एकम्, अक्षरम्, प्रथमोत्तमे, अक्षरे, सत्यम्, मध्यतः, अनृतम्, तत्, एतत्, अनृतम्, उभयतः, सत्येन, परिगृहीतम्, सत्यभूयम्, एव, भवति, न, एवम्, विद्वांसम्, अनृतम्, हिनस्ति ॥

अन्वयः

पदार्थाः

आपः=यज्ञादिकर्म एव=ही

इद्मू=यह नाम रूपात्मक

जगत्

श्रश्रे=पहिले

श्चासुः≔होता भया ताः≔वे

श्रापः≔कर्म

सत्यम्⇒सत्य ज्ञान को

श्चार्यज्ञन्त=उत्पन्न करते भये

+ तत्≔वही

सत्यम्≔सस्य

त्रह्म=ब्रह्म

प्रजापितम्=प्रजापित विराट् को + श्रसृजत=उत्पन्न करता भवा

प्रजापति:=प्रजापति

देवान्=देवों को

+ श्रस्जत=उत्पन्न करता भया तत्=इस त्रिये

न=वे

देवाः=देवता

सत्यम्≔सस्य की

पच=ही

उपासते=उपासना करते हैं

पतत्≕यही

सत्यम्=सत्य

घ्यक्षरम्=तीन श्रक्षर

इति=करके

विरूपातम्≕विरूपात है

+ तेषु=तिनमें

सः≃स

श्रन्वयः

पदार्थाः

इति≕ऐसा

पकम्≕एक श्रक्षरम्=बक्षर है

ति=त

इति≕ऐसा

एकम्=एक

श्रक्षरम्=श्रक्षर है

यम्=य इति=ऐसा

पकम्=एक

श्रक्षरम्=श्रक्षर है

+ तत्र=तिनमें

प्रथमोत्तमे=पहिना श्रीर तीसरा

ग्रक्षर=यक्षर

सत्यम्=सत्य है

मध्यतः=बीचवाला

श्रनृतम्=तकार श्रसत् है

तत्=वही

एतत्=यह

श्चनृतम्=तकार

उभयतः=दोनों तरफ से

सत्येन=सकार यकार करके

परिगृहीतम्=ज्याप्त है

+ श्रतः=इसी से

+ तत्=बह

+ श्रनृतम्=तकार

सत्यभूयम्=सत्य के त्रगभग

एव=ही

भवति=होता है

पवम्=ऐसे

विद्वांसम्=विद्वान् को श्रनृतम्=श्रसत्य न एव=कभी नहीं हिनस्ति=संसार में गिराता है

भावार्थ ।

हे शिष्य ! यहादि जो कर्म हैं वही यह नामरूपात्मक जगत् है, उसी यहादि कर्म करके सत्यहान की उत्पत्ति होती भई. वही सत्य- हात से विराट्ष्प प्रजापित उत्पन्न होताभया, और प्रजापित से देवता लोग उत्पन्न होते भये, इसीलिये देवता लोग सत्यन्नहाकी ही उपासना करते हैं, यह सत्य तीन अक्षरवाला संसार में विख्यात है, इस सत्य राज्द में एक पहिला अक्षर "स" है, दूसरा अक्षर मध्य का "त" हे अौर तीसरा अक्षर अन्त का "य" है. पिहला और तीसरा अक्षर सत्य है, क्यों के सा में "अ दे पहिला और तीसरा अक्षर सत्य है, क्यों के सा में "अ दे पहिला और तीसरा अक्षर सत्य है, क्यों के सा में "अ दे पहिला और तीसरा अक्षर सत्य है, क्यों के सा में "अ दे अौर या में "अ " स्वरहोने के कारण विना सहायता के बोले जाते हैं, और दोनों के मध्य में जो "त" अक्षर है वह व्यञ्जन है, वह वगेर सहायता स्वर के नहीं बोला जाता है, इस कारण "स—य" सत्य हैं. और "त" असत्य हैं. "स" अक्षर से मतलव नहासे हैं, और " य" से मतलव जीव से हैं, और "त" से मतलव नाया से हैं, यानी जीव और नहा के मध्य में सत् असत् से विलक्षण माया स्थित है, सोई आगे पीछे नहा करके व्याप्त हैं, जो विद्वान ऐसा जानता है उसको माया नहीं सताती हैं ॥ १ ॥

मन्त्रः २

तच तत्सत्यमसौ स ब्रादित्यो य एव एतस्मिन्मएडले पुरुषो यश्चायं दक्षिगोक्षनपुरुषस्तावेतावन्योन्यस्मिन्मतिष्ठिनौ रश्मिभिरेषो-स्मिन्मतिष्ठितः पाणैरयममुष्मिन्स यदोत्क्रमिष्यन्भवति शुद्धमेवैत-न्मएडलं पश्यति नैनमेते रश्मयः मत्यायन्ति !!

पदच्छेदः ।

तत्, यत्, तत्, सत्यम्, असौ, सः, आदित्यः, यः, एपः, एत-रिमन्, मगडले, पुरुषः, यः, च, अयम्, दक्षिगो, अक्षन्, पुरुषः, तौ, एतौ, अन्योन्यस्मिन्, प्रतिष्ठितौ, रश्मिभः, एषः, आस्मिन्, प्रतिष्ठितः, प्रागौः, अयम्, अमुन्मिन्, सः, यदा, उत्क्रमिन्यन्, भवति, शुद्धम्, एव, एतत्,मगडजम्,पश्यति, न,एनम्, एते,रश्मयः,प्रति, स्रायन्ति ॥

पदार्थाः

श्चन्वयः पदार्थाः श्रन्वयः यत्=जो रश्मिभः=िकरणों करके तत्=वह श्रस्मिन्=नेत्र में सत्यम्=सत्य है प्रतिष्ठितः=स्थित है तत्≕वही + च=ग्रौर ग्रसौ=यह अयम्=यह नेत्रस्थ पुरुष श्चादित्यः=श्रादित्य है प्राणः=प्राणीं करके य:=जो श्रमुष्मिन्=सूर्व विषे एपः=यह + प्रतिष्ठितः=स्थित है पुरुषः=पुरुष सः=वह ऐसा विज्ञानमय पतस्मिन्=इस पुरुष मगडले=सूर्यमण्डल में यदा=जब + श्रास्त=ह उत्क्रमिष्यन्=मरने पर च=श्रौर भवति=होता है यः=जो +तदा=तब वह श्चयम्=यह शुद्धम् एव=किरग्राहित यानी + पुरुषः≃पुरुष तापरहित दक्षिण=दहिने श्रक्षन्≔नेत्र में पतत्=इस मगडलम्=सूर्यमग्डल को + ग्रास्त=है पश्यति=देखता ह सः=वही सत्यम्=सत्यबद्य है + च=श्रौर ततः=इस विये पंत≔ये तें।=वही रश्मयः=किरणें पतेः=ये दोनों सूर्यस्थ पुरुष एनम्=चक्षुविवे स्थित पुरुष के श्रीर नेत्रस्थ परुप प्रति=पास श्चन्योन्यस्मिन्=एक दूसरे में **न**=नहीं प्रतिष्ठितौ=स्थित हैं श्रायन्ति=श्राती हैं यानी उसको प्रषः=यह सूर्यस्थ पुरुष नहीं सताती हैं

भावार्ध ।

जो सत्य है वही आदित्य है, जो पुरुष सूर्यमगडल विषे स्थित है, वही पुरुष मनुष्य के दिहने नेत्र विषे हैं, सोई सत्य ब्रह्म हैं, इस लिये वे दोनों यानी सूर्यस्थ पुरुष फ्रोर नेत्रस्थ पुरुष एक दूसरे में स्थित हैं, यह सूर्यस्थ पुरुष किरगों करके नेत्र में स्थित हैं झोर नेत्रस्थ पुरुष प्रागों करके सूर्यविषे स्थित हैं, जब ऐसा वह विज्ञानमय पुरुष शारीर त्यागने पर होता है तब वह किरगारिहत यानी तापरिहत इस सूर्यमगडल को देखता है, और ये किरगों चक्रविषे स्थित पुरुष के पास नहीं आती हैं, यानी उसको नहीं सताती हैं, अथवा वे किरगों चन्द्रमा के किरगों की तरह सुखदायी होती हैं।। २।।

मन्त्रः ३

य एप एतस्मिन्मएडले पुरुपस्तस्य भूसिति शिर एकछ शिर एकमेतदक्षरं भुव इति बाहू द्वी बाहू द्वे एते अक्षरे स्वरिति मतिष्टा द्वे प्रतिष्टे द्वे एते अक्षरे तस्योपनिपदहरिति हन्ति पाप्मानं जहाति च य एवं वेद ॥

पदच्छेदः।

य:, एषः, एतस्मिन्, मगडले, पुरुषः, तस्य, मू:, इति, शिरः, एकम्, शिरः, एकम्, एतत्, अक्ष्यम्, सुवः, इति, बाहू, द्वौ, बाहू, द्वे, एते, अक्ष्ये, तस्य, उपिषद्, अहः, इति, हित, पाप्मानम्, जहाति, च, यः, एवम्, वेद् ॥ अस्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

प्तिःस्मन्=इस मगडले=सृथंभगडल में प्पः=यह यः=जो सत्य यानी व्यापक पुरुषः=पुरुष है तस्य=उसका

शिरः≔शिर भूः इति=यह पृथ्वी है + यथा=जैसे एकम्=एक संख्यावाद्धा शिरः≕शिर है + तथा=तैसेही

एकम्≔एक संख्यावाला एतत्=यह-भू द्मक्षरम्=श्रक्षर भी है तस्य=उस सत्यपुरुष का बाह्=बाह् इति=यह भुवः=भुवः हैं यथा≔तेसे ह्याँ=दो संख्यावाला बाहू=बाहु हैं + तथा=वैसेही द्वे=दो संख्यावाला प्ते=यह " भुवः " श्रक्षरे≃ग्रक्षर हैं। च=और तस्य=उस पुरुप का प्रतिष्ठा=पैर इति=यह स्वः=स्वः हैं + यथा=जैसे

द्वे=दो संख्यावाला प्रतिष्ठे≕पैर हैं + तथा=तैसेही द्वे=दो संख्यावाला एते=यह श्रक्षर=''स्वः'' श्रक्षर भी हैं तस्य=उस सःयव्यापक पुरुष + श्रभिश्रानम्=नाम उपनिषद्=उपनिषद् है यः≕जो पतत्≕सको श्रहः इति=ग्रहः करके एवम्=इस प्रकार वेद=जानता है + सः≔वह + पाप्मानम्=पाप को हान्त=नष्ट करता है + च=ग्रौर जह।ति=स्यागता है

भावार्थ ।

हे शिष्य! इस सूर्यमण्डल विषे जो पुरुष स्थित है उसका शिर पृथिवी है, जैसे शिर एक होता है वेसेही ये "मू" एक प्रश्लरवाला है, उस सत्यपुरुष का वाहु ये "मुवः" हैं, जैसे दो मुजा होते हैं वेसेही मुवः में दो प्रश्लर हैं, श्रौर उस सत्यपुरुष का पाद "स्वः" हैं जैसे पैर दो संख्यावाजा होता है वैसे "स्वः" भी दो प्रश्लरवाला हे, उस सत्यव्यापक पुरुष का नाम उपनिषद् है यानी ज्ञान है, जो उपासक उसको "श्रहः करके" यानी प्रकाशस्वरूप करके जानता है, बहु पाप को नष्ट श्रौर त्याग करता है। ३॥

मन्त्रः ४

योऽयं दक्षिणेऽक्षन्पुरुषस्तस्य भूरिति शिरएकछ शिरएकमेतदक्षरं भुव इति बाहू द्वे बाहू दे एते अक्षरे स्वरिति प्रतिष्ठा द्वे प्रतिष्ठे दे एते अक्षरे तस्योपनिषदहमिति हन्ति पाप्मानं जहाति य एवं वेद ॥

इति पैंचमं ब्राह्मणम् ॥ ४ ॥ पदच्छेदः।

यः, अयम्, दक्षियो, अक्षन्, पुरुषः, तस्य, भूः, इति, शिरः, एकम्, शिरः, एकम्, एतत्, अक्षरम्, भुवः, इति, बाहू, द्वौ, बाहू, द्वै, एते, अक्षरे, स्वः, इति, प्रतिष्ठा, द्वे, प्रतिष्ठे, द्वे, एते, अक्षरे, तस्य, धपनिषद्, अहम्, इति, हन्ति, पाप्मानम्, जहाति, यः, एवम्, वेद् ॥ अन्वयः पदार्थाः । अन्वयः पदार्थाः

यः=जो श्रयम्=यह **प्रधः**=पुरुप दक्षिगो=दहिने अक्षन्≕नेत्र में + दृश्यत=दिखाई देता है तस्य≔डसका शिर:=सिर भू:=भू इति=ऐसा प्रसिद्ध है + हि=म्योंकि + यथा≕जैसे एकम्=एक संख्यावाला शिरः≕सिर है + तथा=वैसाही प्तत्=यह "भू" **ग्रक्षरम्**=ग्रक्षर भी एकम्=एक संख्यावाला है तस्य≃उसका वाह्याह .

भुवः=भुवः इति=ऐसा प्रसिद्ध है + हि=क्योंकि + यथा≕जैसे बाहु≔बाहु हो=दो हैं तथा=वैसेही पते⇒यह "भुवः" भी द्वे=दो श्रक्षरे=श्रक्षरवाला है तस्य=उसका प्रतिष्ठा=पैर स्वः=स्वः इति=ऐसा प्रसिद्ध है + हि=क्योंकि + यथा=जैसे द्वे=दो संख्यावाला प्रतिष्ठे=पैर है + तथा≔वैसेही

पते=यइ स्वः यानी सुवः

द्वे=दो श्रक्षरे=श्रक्षरवाला है तस्य=उस सत्यट्यापक पुरुष का + नाम=गाम उपनिपद्=ज्ञान है यः=जो प्तत्=इस को

ग्रहः इति=ग्रहः करके इस रूप को एसम्=इस प्रकार बेद्=जानता है + सः=वह पाप्मानम्=पाप को हन्ति=नष्ट करता है च=ग्रीर जहाति⇒स्याग देता है

भावाथे।

जो पुरुष प्रारागिमात्र के दिहने नेत्र में दिखाई देता है, इसका सिर "भू" है क्योंकि जैसे सिर एक होता है वैसेही यह भू अक्षर एक संख्यावाला है, उस व्यापक पुरुष का बाहु भुवः है जैसे बाहु दो संख्यावाला होता है वैसेही भुवः भी दो अक्षरवाला है, उसका पाद स्वः (सुवः) है क्योंकि जैसे पाद दो संख्यावाला है वैसेही स्वः दो अक्षरवाला है, उस सत्य व्यापक पुरुष का नाम उपनिषद् यानी झान है, जो उपासक उस व्यापक परमात्मा को अहः * करके यानी प्रकाश-स्वरूप करके जानता है, वह पापको नष्ट और त्याग देता है।। ४।।

इति पञ्चमं ब्राह्मरणम् ॥ ५ ॥

श्रथ षष्ठं ब्राह्मग्रम् । मन्त्रः १

मनोमयोऽयं पुरुषो भाःसत्यस्तस्मिन्नन्तर्हृद्ये यथा व्रीहिर्ना यवो वा स एष सर्वस्येशानः सर्वस्याविपतिः सर्वमिदं प्रशास्ति यदिदं किंच ॥

इति पष्टं ब्राह्मणम् ॥ ६ ॥

अहः दो शब्दों से याना 'हन्' खोर 'हा' स निकल सकता है, इन् का अर्थ नाश करना है और हा—का अर्थ छाड़ना है, तात्पर्य इसका यह है कि उपासक पाप को नाश कर देता है, और त्यागता है।

पदच्छेदः।

मनोमय:, श्रायम्, पुरुषः, भाःसत्यः, तस्मिन, श्रान्तर्हृदये, यथा. ब्रीहिः, वा, यवः, वा, सः, एषः, सर्वस्य, ईशानः, सर्वस्य, श्रश्चिपतिः. सर्वम्, इदम्, प्रशास्ति, यत्, इदम्, किंच ॥

श्चन्ययः

पदार्थाः ऋन्वयः

पदार्थाः

श्रयम्=यह महान् पुरुषः=परमात्मा पुरुष मनोमयः=मनोमय है यानी ज्ञान ईशानः=ईश्वर है विज्ञानमय है

भाःसत्यः=प्रकाश सत्य स्वरूप है अधिपतिः=स्वतन्त्र पातक है

सः=वही पुरुष

तस्मिन् } =उस हृदय विषे अन्तर्हृद्ये } यथा त्रीहि:=धान के समान

वा≕श्रथवा

यवो वा=यव के समान स्थित है एषः=यही

सः=वह सर्वस्य=सब का सर्वस्य=सब का

> यत्=जो किंच=कुछ है इद्म्=यह

सर्वम्=सब है तत्≔उस सब को

प्रशास्ति=वह अपनी आज्ञा मं रखता है

भावार्थ ।

यह महान् परमात्मा पुरुष ज्ञानविज्ञानप्रकाशस्वरूप है, वही प्राग्ती के हृदय विषे धान झ्रोर यव के बराबर स्थित है, यही सब का ईश्वर है, सब का ऋथिपति है, सब का पालन करनेवाला है, सब को अपनी आज्ञा में नियमबद्ध रखता है, स्त्रौर जो कुछ स्थावर जङ्गम संसार भासता है उन सब का वह कर्त्ता, धर्ता स्त्रीर हर्त्ता है।। १।।

इति षष्ठं ब्राह्मग्रम् ॥ ६ ॥

श्रथ सप्तमं ब्राह्मग्रम् ।

मन्त्रः १

विद्युद्रहोत्याहुर्विदानाद्विद्युद्विद्यत्येनं पाप्मनो य एवं वेद विद्युद्ध-ह्मेति विद्युद्धचेव ब्रह्म ॥

इति सप्तमं ब्राह्मणम् ॥ ७ ॥

पदच्छेदः ।

विद्युत्, ब्रह्म, इति, स्राहुः, विदानात्, विद्युत्, विद्यति, एनम्, पाप्मनः, यः, एवम्, वेद, विद्युत्, ब्रह्म, इति, विद्युत्, हि, एव, ब्रह्म ॥ पदार्थाः श्चन्वयः पदार्थाः श्चन्धयः

ब्रह्म=ब्रह्म विद्युत्=विद्युत् है इति=ऐसा श्राद्धः=जोग कहते हैं विद्युत्≕विद्युत् ब्रह्म=ब्रह्म है इति एवम्=ऐसा इस प्रकार

यः=जो

वेद=जानता है

+ सः≔वह

एनम्=उसके बानी अपने

पाप्मनः=पापीं को

विद्यति=नाश करदेता है

हि≕क्योंकि पव≕निश्चय करके

व्रह्म=ब्रह्म

विद्युत्=विद्युत् है यानी पाप-विदारक है

भावार्थ ।

हे शिष्य ! सत्यस्वरूप ब्रह्म का वर्णन फिर करते हैं, ब्रह्मको विद्वान कोग विद्युत् कहते हैं, कारण इसका यह है कि वह पाप झौर झन्ध-कार को नाश करता है, जो उपासक ऐसा जानता है वह अपने पापों को नाश करता है, क्योंकि ब्रह्म निश्चय करके पापविदारक है ॥ १ ॥

इति सप्तमं ब्राह्मग्राम् ॥ ७ ॥

श्रथ श्रष्टमं ब्राह्मगुम्।

मन्त्रः १

वाचं घेनुमुपासीत तस्याश्चत्वारः स्तनाः स्वाहाकारो वषद्का-रो इन्तकारः स्वधाकारस्तस्यै द्वौ स्तनौ देवा उपजीवन्ति स्वाहाकारं च वषर्कारं च इन्तकारं मनुष्याः स्वधाकारं वितरस्तस्याः प्राण ऋषभो मनो वत्सः ॥

इत्यष्टमं ब्राह्मणम् ॥ = ॥

पदार्थाः

पदच्छेदः ।

वाचम्, धेनुम्, खपासीत, तस्याः, चत्वारः, स्तनाः, स्वाहाकारः, वषट्कारः, हन्तकारः, स्वधाकारः, तस्यै, द्वौ, स्तनौ, देवाः, उपजीवन्ति, स्वाहाकारम्, च, वषट्कारम्, च, इन्तकारम्, मनुष्याः, स्वधाकारम्, पितरः, तस्याः, प्रागाः, भृषभः, मनः, वत्सः ॥

पदार्थाः | श्रन्वयः श्रन्वयः वाचम्=वेदवाणी को धनुम्=कामधेनु के समान उपासीत=उपासना करे तस्याः=उस गौके चत्वारः≔चार स्तनाः=स्तन स्वाहाकारः=स्वाहाकार वषट्कारः≔वपट्कार ह्रन्तकारः=हन्तकार स्वधाकारः=स्वधाकार हैं तस्याः=उस घेनु के द्वौ=दो स्तनी=स्तन स्वाहाकारम्=स्वाहाकार च=धौर वषट्कारम्=वषर्कार के आश्रय

देवाः≔देवता

उपजीचन्ति=जीते हैं

ग्रमुष्याः=मनुष्य
इन्तकारम्=इन्तकार स्तन के
श्राश्रय
+ उपजीवन्ति=जीते हैं
च=ग्रीर
पितरः=पितर जोग
स्वधाकारम्=स्वधाकार स्तन के

षाश्रय उपजीवन्ति=जीते हैं तस्याः=उस गी का ऋषमः=वेस यानी स्वामी प्राणः=प्राण है + च=षीर वत्सः=वचा मनः=मन है

भावार्थ ।

हे शिष्य ! सत्यव्रह्म की प्राप्ति का उपाय दिखलाते हैं, सो सावधान होकर सुनो, पुरुष वेदवास्मी की कामधेतु गो के समान उपासना करें, जैसे गौके चार स्तन होते हैं वैसेही वेदरूपी गौके चार स्तन स्वाहाकार, वपट्कार, हंतकार ख्रोर स्वधाकार हैं, उनमें से दो स्तन स्वाहाकार झोर वपट्कार के आश्रय देवता जीते हैं, मनुष्य हंतकार के आश्रय

जीते हैं, श्रीर पितरलोग स्वधाकार स्तन के आश्रय जीते हैं, ऐसे गौ का पति प्राण है, ऋौर बचा मन है।। १।। इति श्रष्टमं ब्राह्मग्राम् ॥ ८ ॥

श्रथ नवमं ब्राह्मग्रम्।

श्रयमग्निर्वेश्वानरो योऽयमन्तः पुरुषे येनेदमन्नं पच्यते यदिद-मचते तस्यैष घोषो भवति यमेतत्कर्णाविपयाय शृणोति स यदो-त्क्रमिष्यनभवति नैनं घोषं शृगोति ॥

इति नत्रमं ब्राह्मणुम् ॥ ६ ॥

पदच्छेदः ।

श्रायम् , श्राग्निः, वैश्वानरः, यः, श्रायम् , श्रान्तःपुरुषे, येन, इदम् , श्चन्नम्, पच्यते, यत्, इदम्, श्चयते, तस्य, एषः, घोषः, भवति. यम्. एतत्,कर्गो, श्रापिधाय, शृग्गोति, सः, यदा, उत्क्रमिध्यन्, भवति, न. एनम्, घोषम्, शृशोति ॥

श्चरवयः

श्रन्वयः

पदार्थाः

पदार्थाः श्रयम्=यह ऋग्निः=जठर श्राग्नि बैश्वानरः=वैश्वानर श्राग्न है यः=जो श्रयम्=यह श्चन्तःपुरुषे=पुरुष के भीतर + स्थितः=।स्थित है + च=ग्रीर येन=जिस करके तत्=जो इदम्=यह अञ्चम्=श्रन श्रद्यते≕खायाजाता है + च=श्रौर

पच्यते=पचजाता है तस्य=इस अग्निका एषः≃यह घोषः=शब्द +तस्मिन्=उस + शरीरे=शरीर में भवति=होता है यम्=जिस पतत्=इसको कर्णों } =कानों के दांकने पर श्रापिधाय } श्युगोति=पुरुष सुनता है यदा=जब

सः≔वह उपासक

उत्क्रमिध्यन्=मरनेपर भवति=होता है + तदा=तब पनम्=इस घोषम्=शब्द को न=नहीं श्वयोति=सुनता है

मावार्थ।

हे शिष्य ! जो जठगिन सब शरीरों के भीतर विद्यमान है, सोई वैश्वानरनामक अग्नि है, उभीकी सहायता करके भिक्षत अन्न पच जाता है, उस वैश्वानर अग्नि का घोरशब्द शरीर में हुआ करता है, जब पुरुष हाथ जगाकर दोनों कानों को ढकता है, तब उसके अन्तर के शब्द को सुनता है, और जब वह मरनेपर होता है तब नहीं सुनता है, वैश्वानर अग्नि एक प्रकार का सामर्थ्य है, जिस करके शरीर की स्थित बनी रहती है, जैसे इस शरीर में वैश्वानर अग्नि रहता है, वैसेही इस ब्रह्मायडरूपी महान् शरीर विषे वैश्वानर सर्वन्यापी परमात्मा होकर संपूर्ण जगात् की स्थित का कारण होता है।। १।।

इति नवमं ब्राह्मशाम् ॥ ६ ॥

श्रथ दशमं ब्राह्मणम् । सन्त्रः १

यदा वे पुरुषोऽस्माञ्जोकात्मैति स वागुमागच्छति तस्मै स तत्र विजिहीते यथा रथचकस्य खं तेन स ऊर्ध्वमाक्रमते स आदित्य-मागच्छति तस्मै स तत्र विजिहीते यथा लम्बरस्य खं तेन स ऊर्ध्व-माक्रमते स चन्द्रमसमागच्छति तस्मै स तत्र विजिहीते यथा दुन्दुभेः खं तेन स ऊर्ध्वमाक्रमते स लोकमागच्छत्यशोकमहिमं तस्मिन्य-सति शाश्वतीः समाः ॥

इति दशमं ब्राह्मग्रम् ॥ १० ॥ पदच्छेदः ।

यदा, वै, पुरुषः, श्चस्मात्, लोकात्, प्रैति, सः, वायुम्, श्चागच्छति, तस्मै, सः, तत्र, विजिहीते, यथा, रथचक्रस्य, खम्, तेन, सः, ऊर्ध्स्, आक्रमते, सः, आदित्यम्, आगच्छिति, तस्मै, सः, तत्र, विजिहीते, यथा, जम्बरस्य, खम्, तेन, सः, उध्वम्, आक्रमते, सः, चन्द्रमसम्, आग-च्छिति, तस्मै, सः, तत्र, विजिहीते, यथा, दुन्दुभेः, खम्, तेन, सः, उध्वम्, आक्रमते, सः, लोकम्, आगच्छिति, अशोकम्, आहिमम्, तिस्मन्, वसति, शाश्वतीः, समाः ॥

अन्वयः

पदार्थाः ऋन्वयः

पदार्थाः

यदा=जब

वै=निश्चय करके
पुरुषः=पुरुष
श्रस्मात्=इस
लोकात्=लोक से
प्रेति=मरकर चला जाता है
+ तदा=तब
सः=वह पुरुष
घागुम्=वायु लोक को
श्रागञ्ज्ञति=प्राप्त होता है
तत्र=वहां
सः=वह वायु
तस्मै=उस पुरुष को
चकस्य } =पहियाके ज्ञिद्रके समान
म् यथा }
विजिहीत=मार्ग देता है
तेन=उस ज्ञिद्र करके
सः=वह पुरुष

तस्मै=उस पुरुष को
रथचकस्य } =पहियाके छिद्रके समान|
खम् यथा } =पहियाके छिद्रके समान|
विजिद्दीत=मार्ग देता है
तेन=उस छिद्र करके
सः=वह पुरुष
ऊर्ध्वम्=ज्यर को
झाक्रमते=जाता है
+ च=धौर फिर
सः=वह
आदित्यम्=सृथैलोक को
झागच्छिति=प्राप्त होता है
तस्मै=उस पुरुष के किये

सः≔वह सूर्य तत्र=उस घवस्था में लम्बरस्य=बाजे के खम्=छिद्र की यथा=तरह ऋतिसुक्ष्म विजिहीते=मार्ग देता है तेन=उस छेद के द्वारा सः=वह पुरुष ऊर्ध्वम्=जपर को श्राक्रमत=जाता है + पुनः≕िकर सः≔वह पुरुष चन्द्रमसम्=चन्द्रमा को श्रागच्छति=प्राप्त होता है तस्मै≕इस पुरुष के लिये सः≔वह चन्द्र तत्र=इस श्रवस्था में दुन्दुभेः=डमरू बाजे के खम्=छिद्र के यथा≔समान विजिहीते=मार्ग देता है +पुनः≕किर . तेन=उस छिद्र के द्वारा सः=वह पुरुष ऊर्ध्वम्=जपर को

झाक्रमते=जाता है + च=चौर झशोकम्=शोकरहित झाहिमम्=मानसिक दुःबरहित स्रोकम्=नहाा के बोक को

आगच्छ्रति=पास होता है तस्मिन्=वहां शाश्वतीः=निरम्तर समाः=वर्षोतक चस्ति=वास करता है

भावार्थ ।

जब पुरुष इस लोक से मर कर चला जाता है, तब वह प्रथम बायुलोक में जाता है, वहां पर वायु उस पुरुष को उस अवस्था में पिहेंचे के छिद्र के समान मार्ग देता है, उस छिद्र के हारा वह पुरुष ऊपर को जाता है, और सूर्यकोक में पहुँचता है, वहां पर उस पुरुष के लिये वाजे के छिद्र की तरह मार्ग देता है, उस मार्ग के द्वारा फिर ऊपर को जाता है, और चन्द्रलोक में पहुँचता है, वहां पर उस पुरुष को चन्द्रमा उमरू वाजे के छिद्र के समान मार्ग देता है, और फिर उस मार्ग दारा वह पुरुष उपर को जाता है, और अन्त में शोकरहित मानसिक दुःखरहित प्रजापित के लोक को प्राप्त होता है, वहां पर वरसों तक निरन्तर वास करता है।। १।।

इति दशमं ब्राह्मग्राम् ॥ १० ॥

श्रथ एकादशं ब्राह्मण्म् । मन्त्रः १

एतद्वे परमं तपो यद्वचाहितस्तप्यते परमछं हैव लोकं जयित य एवं वेदैतद्वे परमं तपो यं प्रेतमरएयछं हरन्ति परमछं हैव लोकं जयित य एवं वेदैतद्वे परमं तपो यं प्रेतमग्नावभ्याद्वति परमछं हैव लोकं जयित य एवं वेद ॥

इत्येकादशं ब्राह्मणम् ॥ ११ ॥ पटच्छेदः ।

एतत्, वे, परमम्, तपः, यत्, व्याहितः, तप्यते, परमम्, ह, एव, क्षोकम्, जयति, यः, एवम्, वेद, एतत्, वे, परमम्, तपः, यम्, प्रेतम्,

श्रन्वयः

अरययम्, हरन्ति, परमम्, ह, एव, लोकम्, जयति, यः, एवम्, वेद, एतत्, वे, परमम्, तपः, यम्, प्रेतम्, अग्नौ, अभ्याद्धति, परमम्, ह, एव, लोकम्, जयति, यः, एवम्, वेद ॥

पदार्थाः

पतत्=वही बै=निस्सन्देह परमम्=श्रेष्ठ तपः=तप है यत्≕जब व्याहितः=रोगश्रसित पुरुष तप्यते=ईश्वरसम्बन्धी विचार करता है यः=जो **प**वम्=इस प्रकार वेद=जानता है + सः एव=वही प्रमम्≂श्रेष्ठ लोकम्=बोक को जयति=जीतता है यानी प्राप्त होता है एतत्=यही

परमम्=परम तपः=तप है + यदा=जब + ड्याहितः=रोगशसित पुरुष + तप्यते=ईश्डरविचार में परा-यख है + च=चौर

वै=निरचय करके

+ च=म्रोर + तस्यैवं } इसको ऐसा स्याज विचारः } भी है कि अन्वयः

पदार्थाः

+ यम्=जिस

+ माम्=मुक
प्रेतम्=मरे हुये की
श्वरत्यम्=प्ररत्य में

+ दीपनार्थम्=ज्ञाने के जिये
हरन्ति=जोग जे जायँगे
यः=जो
प्यम्=इस प्रकार
वेद=जानता है

+ सः=वह

पर्=गाना क् + सः=वह परमम्=श्रेष्ठ लोकम्=बोक को ह एव=निश्चय करके जयति=जीतता है वानी प्राप्त होता है

प्तत्=यही वै=िनसम्देह परमम्=परम तपः=तप है

+ यदा≔िजस काल में + ज्याहितः≔रोगप्रसित पुरुष + तप्यतें=ईश्वर के विचार में

तत्पर है च=श्रीर

+ तस्यैवं } = उसका ख्याक्ष है कि विचारः }

माम्=मुक

प्रेसम्=मरे हुये को स्रानी=स्रिन में स्रभ्याद्धति=रक्सेंगे यः=जो एवम्=इस प्रकार बेट=जानता है

सः एव=वही

परमम्=श्रेष्ठ
स्रोकम्=बोक को

जयति=जीतता है यानी प्राप्त
होता है

भावार्थ ।

जो पुरुष रोगप्रसित ह, और मृत्यु उसके निकट खडा है, पर उसका चित्त ईश्वर में लगा है, और इस अपने विचाररूपी तप को भलीप्रकार जानता है, वह देह त्यागने के पश्चात् श्रेष्ठ लोकों को प्राप्त होता है, उस पुरुष का भी यह श्रेष्ट तप है जो रोगों से तो प्रसित है, ध्रौर मृत्यु जिसके समीप आन पहुचा है परन्तु वह अपने विचार में तत्पर है, श्रीर यहभी उसको ख्याल होरहा है कि मुस्तको मेरे मरने के पीछे मेरे ज्ञाति के लोग अपराय में मेरे मृतक शरीर को जलाने के लिये ले जायें। ऐसा ज्ञानी पुरुष श्रेष्ठ लोकों को प्राप्त होता है यह उस ज्ञानी का भी श्रेष्ठ तप है जो रोग से तो प्रसित है और जिसके निकट मृत्य आपहुँचा है, परन्तु उस हालत में भी वह ईश्वरके विचार से शून्य नहीं है, ऋोर उस हालत में उसको चिन्ता होरही है कि मेरे मृतक शरीर को लोग थोड़े काल पीछे अपनि में रक्खेंगे, ऐसा दृढ़ ज्ञानी पुरुष ध्ववश्य श्रेष्ठ लोकों को जीतता है, जैसे श्रेष्ठकर्मी पुरुष जब गृहस्थाश्रम को त्याग कर वानप्रस्थ आवस्था को भारता कर आरयय को जाता है और उसी अवस्था में शरीर को त्याग करता है तो जिन श्रेष्ठ कोकों को वह प्राप्त होता है वैसेही उन्हीं उन्हीं लोकों को ज्ञानी घरमें ही मरने के पश्चात ईश्वरसम्बन्धी विचार करने के कारण प्राप्त होता है, श्रीर जैसे श्रभकर्मी शरीरत्यागानन्तर श्राग्न में प्रवेश करके पापों से निर्मल होकर जिन जिन लोकों को प्राप्त होता है वैसेही उन्हीं जोकों को वह ज्ञानी भी अपने घरमें ही शरीर त्याग

के पश्चात् प्राप्त होता है, जो रोगप्रसित है और जिसको सृत्यु ने आनकर घेर जिया है, परन्तु अपने दृढ़विचार से हृदा नहीं है और यहभी उसको मालूम है कि थोड़ेही काज पीछे मेरे सृतक शरीर को मेरे सम्बन्धी अग्नि में दाह करेंगे।। १।।

इति एकादशं ब्राह्मग्राम् ॥ ११ ॥

त्र्रथ द्वादशं बाह्मसम्। मन्त्रः १

श्रमं श्रमेत्वेक त्याहुस्तन तथा पृथित वा श्रममृते प्राणात्प्राणो श्रम्भेत्वेक श्राहुस्तन तथा शृष्यित वै प्राण ऋतेऽनादेते ह त्वेव देवते एकधामृयं भूत्वा परमतां गच्छतस्त द्धस्माऽऽह पातृदः पितरं किछेस्विवेवें विदुषे साधु कुर्यो किमेवास्मा श्रमाधु कुर्यामिति स ह स्माऽऽह पाणिना मा पातृद कस्त्वनयोरेकधाभूयं भूत्वा परमतां गच्छतीति तस्माउ हैतदुवाच वीत्यन्नं वै व्यन्ने हीमानि सर्वाणि भूतानि विष्टानि रिमिति प्राणो वै रं प्राणे हीमानि सर्वाणि भूतानि रमन्ते सर्वाणि ह वा श्रसिन-भूतानि विश्नानि सर्वाणि भूतानि रमन्ते य एवं वेद ।।

इति द्वादशं ब्राह्मणम् ॥ १२ ॥

डाज़म्, जहा, इति, एके, डाहुः, तत्, न, तथा, प्यति, वा, डाज़म्, ज्ञृते, प्राग्धात्, प्राग्धः, जहा, इति, एके, डाहुः, तत्, न, तथा, ग्रुष्यति, वे, प्राग्धः, ज्ञृते, डाज्ञात्, एते, ह, तु, एव, देवते, एकधा मूयम्, भूत्वा, परमताम्, गच्छतः, तत्, ह, सम, डाह, प्रातृदः, पितरम्, किम्, स्वित्, एव, एवम्, विदुषे, साधु, कुर्याम्, किम्, एव, डास्मै, डासाधु, कुर्याम्, इति, सः, ह, सम, डाह, पाग्याना, मा, प्रातृत, कः, तु, डानयोः, एकधा-मूयम्, भूत्वा, परमताम्, गच्छति, इति, तस्मै, च, ह, एतत्, चवाच, वि, इति, डाज़म्, वे, व्यन्ने, हि, इमानि, सर्वािश्वा, भूतानि, विष्टािन, सम्, इति, प्राग्धः, वे, रम्, प्राग्वे, हि, इमानि, सर्वािश, भूतानि, रमन्ते,

सर्वाग्यि, इ, वा, झस्मिन्, भूतानि, विशन्ति, सर्वाग्यि, भूतानि, रमन्ते, यः, एवम्, वेद् ॥

श्चास्त्रयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

ग्रजम्≕अस ब्रह्म=ब्रह्म है इति≕ऐसा एके=कोई भाचार्य ह=स्पष्ट श्राहुः≔कहते हैं किन्तु=किन्तु तत्≔वइ तथा=ऐसा न=नहीं है + हि=क्योंकि श्रन्नम्=श्रन ऋ्रोत=विना प्राणात्=प्राण पूर्वात=दुर्गन्ध को प्राप्त होताहै एके=कोई भाचार्य इति=ऐसा श्राहुः≔कहते हैं कि ∙ प्रागः=प्राय ही ह≕निश्चय करके ब्रह्म≔बद्य है + किन्तु≔किन्तु तत्≔वह तथा=ऐसा न=नहीं है + हि=क्योंकि प्राणः=प्राण . अज्ञात्=अक

भ्राते≕विना शुष्यति=सृख जाता है ह तु पव=इस पर + एके=कोई भाषार्थ ह इति=ऐसा निरंचय करके आह=कहता है कि देवते=ये दोनों देवता यानी सस और प्राय **ए**कधाभूयम्=एक भूत्वा=होकर परमताम्=बडे महत्त्व को गच्छुतः=प्राप्त होते हैं या प्राप्त करते हैं तत् ह=इस पर प्रातृदः=प्रातृद ऋषि पितरम्=अपने पिता से आह स्म=पूछता है कि एवम्=ऐसे माननेवाबे विदुष=विद्वान् के बिये किं स्वित्≔क्या साधु=सत्कार कुर्याम्=में कहं च≕मोर क्रिमेव≕ग्या अस्मै=इस विद्वान् के किये **श्र**साधु=तिरस्कार कुर्याम्=करूं

ह=तब

सः=वड पिता इमानि=यह पाणिना=हाथ से सर्वाणि=सब + वारयन्=निषेध करता हमा भृतानि≕प्राची इति=ऐसा विष्टानि=प्रविष्ट हैं रम्≔र रूपी आह स्म≔कहता भया कि प्रातृद≔हे प्रातृद ! इति=निश्चय करके प्राणः=प्राच है मा=मत वोचः=ऐसा कहो वे हि=क्योंकि अनयोः=अन्न और प्राण में रम्=र रूपी एकध(भूयम्=एकताभाव प्राग्=प्राग में ही इमानि=ये भूत्वा=मान कर कः=कौन पुरुष सर्वाणि≕सब परमताम्=श्रेष्ठता को भूतानि=प्राची गच्छति=प्राप्त होता है अर्थात् रमन्ते=रमण करते हैं कोई नहीं यः=जो + पुनः≕फिर भ्रपने एवम्=ऐसा तस्मै=डस पुत्र से वेद=जानता है उ ह=स्पष्ट श्रस्मिन्=उसमें इति=ऐसा सर्वाशि≕सब जीव उह एतत्≔यह बात ह वा≕िनश्चय करके उवाच=कहा कि विशान्ति=प्रवेश करते हैं + च=श्रौर श्रद्मम्=त्रक्ष इति≕ही श्रस्मिन्=इसी में चि=वि है सर्वाग्रि=सब वै=निश्चय करके भूतानि=प्राणी हि=क्योंकि रमन्ते=रमण करते हैं यानी व्यक्षे≔विरूप अन्न में ही वह ब्रह्मरूप होजाता है

भावार्थ ।

प्रातृद ऋषि अपने पिता से कहता है कि कोई आचार्य कहते हैं कि अन्नही ब्रह्म है, यानी ब्रह्म की तरह यह भी पूज्य है, सो ऐसा नहीं है, क्योंकि प्राया के विना अन्न सड़जाता है, और उसमें दुर्गन्य

आने जगती है, ब्रह्म न सदता है और न उसमें दुर्गन्थ आती है, कोई आचार्य कहते हैं कि प्राग्ति ब्रह्म है, सो भी ठीक नहीं कहते हैं, क्यों कि अन्न के विना प्राण् सूख जाता है, ब्रह्म सूखता नहीं है, इस लिये न केवल अपन ब्रह्म करके मन्तव्य है, न केवल प्रांगा ब्रह्म करके मन्तन्य है, पर जब ये दोनों एकता को प्राप्त होते हैं तब दोनों मिल कर ब्रह्मभाव को प्राप्त होते हैं, जो कोई अन और प्राग्त को इस प्रकार जानता है उस विद्वान के लिये न कोई सत्कार है, न कोई असरकार है, क्यों कि ऐसे पुरुष नित्यतम श्रीर कुतकृत्य होते हैं. पुत्र के इस सिद्धान्त को जान कर हाथ से निपेध करता हुआ पिता कहने लगा कि हे पुत्र, प्रातृद ! तुम ऐसा मत कहो कौन पुरुष अत्र और प्रागा को एक मानकर महत्त्व को प्राप्त होता है, यानी कोई नहीं प्राप्त होता है किर पुत्र से पिता ने कहा कि हे पुत्र ! निश्चय करके अप्रज्ञही "वि" है, क्योंकि "वि" का अर्थ वेश यानी प्रवेश है. इस लिये "वि" अपन्न को कहते हैं कारण इसका यह है कि अन्न में ही सब प्राणी प्रविष्ट हैं. हे पुत्र ! "र" को प्राण कहते हैं क्योंकि सब प्राणियों का रमण प्राणा में ही होता है. जो विद्वान पुरुष ऐसा जानता है उसी में सब जीव रमगा करते हैं यानी वह ब्रह्मभाव को प्राप्त होता है।। १।।

इति द्वादशं ब्राह्मग्रम् ॥ १२ ॥

श्रथ त्रयोदशं बाह्मग्रम्।

मन्त्रः १

जन्थं प्राणो वा जन्थं प्राणो हीदॐ सर्वमुत्थापयत्युद्धास्मादु-क्थविद्वीरस्तिष्ठस्युक्थस्य सायुज्यछं सलोकतां जयति य एवं वेद् ॥ पवच्छेदः।

जक्थम्, प्राग्तः, वा, जक्थम्, प्राग्तः, हि, इदम्, सर्वम्, उत्थाप-यति, उत्, ह, झ्रस्मात्, उक्थवित्, वीरः, तिष्ठति, जक्थस्य, सायु-ज्यम्, सलोकताम्, जयति, यः, एवम्, वेद् ॥ सम्बयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

प्राणः=माण
वै=ही

छक्थम्=उक्थ है

+ इति=इस मकार

उक्थम्=उक्थ की

+ उपासीत=उपासना करे

हि=क्याँकि

प्राणः=प्राण

इदम्=इस

सर्वम्=सकको

उत्थापयति=उठाता है

श्रस्मात् } पेसे उक्थ के जानने
+उपासकात् } वाले पुरुष से

उक्थिवत्=प्राण का जाननेवाला

वीरः≔वीर + पुत्रः=पुत उत्तिष्ठति=डस्पन्न होता है यः≕जो प्रचम्=इस प्रकार इसको ह=स्पष्ट चेद्≕जानता है सः≔वह

उक्थस्य=डक्थ के सायुज्यम्=सायुज्यता को + च=श्रीर

सालोक्यताम्=सालोक्यता को जयति=प्राप्त होता है

भावार्थ ।

हे शिष्य ! प्राग्रही उक्थ है, उक्थशब्द उत् श्रोर स्था से बना है, जिसका श्रर्थ उठना है, यह में उक्थ शस्त्र पढ़ने से भृत्विज् उठ बैठते हैं, श्रोर श्रपना श्रपना कार्य करने लगते हैं, इसी प्रकार शरीर में प्राग्र जवतक चला करता है तवतक ऋत्विज्रू सम इन्द्रियां श्रपना श्रपना कार्य किया करती हैं, यह उक्थ श्रोर प्राग्र की सादश्यता है, यानी जैसे प्राग्र के सहारे से सब इन्द्रियां श्रथना प्राग्रीमात्र श्रपना श्रपना कार्य करते हैं तैसेही उक्थशस्त्र के यहा में पढ़ने से सब ऋत्विज् उठकर श्रपना श्रपना कार्य करने जगते हैं, इस प्रकार उक्थोपासना कर्तव्य है, क्योंकि प्राग्राही सब को उठाता है, जो उक्थ का श्रर्थ ऐसा समस्तता है, वह वीर पुत्र को उत्पन्न करता है, इस कारग्र उक्थ प्राग्र कहा गया है, श्रोर जो इसको जानता है, वह उक्थ सायुज्यता श्रोर सालोकता को पाता है ॥ १ ॥

मन्त्रः २

षज्ञः माणो वै यज्ञः प्राणे शिमानि सर्वाणि यूतानि युज्यन्ते युज्यन्ते हास्मै सर्वाणि भूतानि श्रेष्टचाय यज्जुषः सायुज्यण्धं सलोकतां जयति य एवं वेद ॥

पदच्छेदः ।

यजुः, प्राग्यः, वै, यजुः, प्राग्ये, हि, इमानि, सर्वाग्यि, भूतानि, युज्यन्ते, युज्यन्ते, ह, अस्मै, सर्वाग्यि, भूतानि, श्रेष्ठयाय, यजुषः, सायु-ध्यम्, सलोकताम्, जयति, यः, एवम्, वेद् ॥

सन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

प्राणः=प्राण वि=ही यजुः=यजु है + प्राणम्=प्राण को हित=हस प्रकार + उपासीत=उपासना करे हि=क्योंकि हमानि=ये सर्वाणि=सब भूतानि=प्राणी प्राणे=प्राण मेही युज्यम्ते=संमेबन करते हैं

> + ग्रतः=इसी से ग्रस्मै=इस पुरुष के निमित्त

भूतानि=प्राची
श्रेष्ठधाय=भेद्रता के वास्ते
युज्यन्ते=डचत होते हैं
यः=जो पुरुष
प्रवम्=ऐसा
वेद=जानता है
+ सः=ष्ष्ठ
यज्ञषः=यज्ञ के
सायुज्यम्=सायुज्यता को
च=चीर
सस्नोकताम्=संद्योकता को

जयति=प्राप्त होता है

सर्घाणि≕सब

भाषार्थ ।

हे शिष्य ! प्रागाही यजु है, यानी देह संघात से सम्बन्ध करने बाजा है, यजुसे मतजब यहां यजुवेंद से नहीं है, किन्तु इसका आर्थ 'युजिर योगे' धातु से है, क्योंकि शरीर और इन्द्रिय में कार्य करने की शक्ति जभी होती है जब प्रागा का सम्बन्ध इनके साथ होता है ऐसा समसकर पुरुष प्राण् की उपासना करे, क्योंकि सब प्राणीमात्र प्राण् में ही संमेलन करते हैं, झौर इसी कारण इस पुरुष को श्रेष्ठ पदवी देने के लिये तथ्यार होते हैं, जो ऐसा जानता है, वह यजु यानी प्राण् के सायुज्यता झौर सलोकता को प्राप्त होता है।। २।।

मन्त्रः ह

साप पाणो वै साम पाणे हीमानि सर्वाणि भूतानि सम्यश्चि सम्यश्चि हास्मै सर्वाणि भूतानि श्रेष्ठचाय कल्पन्ते साम्नः सायुज्यछे सलोकतां जयति य एवं वेद ॥

. पदच्छेदः ।

साम, प्राशाः, वै, साम, प्राशोः, हि, इमानि, सर्वाशाः, भूतानि, सम्यि सम्यि सम्यि ह, इसमै, सर्वाशाः, भूतानि, छैष्टवाय, कल्पन्ते, साम्तः, सायुज्यम्, सल्लोकताम्, जयित, यः, एवम्, वेद् ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

हि=क्योंकि
इमानि=ये
सर्वाणि=सव
मृतानि=प्राणी
चै=निश्चय करके
प्राण=प्राण्य मेंही
सम्यञ्चि=सयुक्त होते हैं
+ श्वतः=इसी कारण
प्राणः=पाणृही
साम=साम हे
साम=साम का
यः=जो
उपासीत=उपासना प्राण्य जान

यः=जा

+ उपासीत=उपासना प्राय जान

कर करे

श्रस्मै=उस उपासक की सेवा
के जिये
सर्वाणि=सब

वयः पदायाः
भूतानि=प्रायी
सम्यञ्चि=उचत होते हैं

+ च=धौर
ह=निश्चय करके

+ तस्य=उस उपासक की
श्रेष्ठद्याय=श्रेष्ठता के विये
करुपन्ते=तस्यार होते हैं
यः=जो उपासक
पदाम्=ऐसा
वेद=जानता है
सः=वह
साम्नः=साम के
सायुज्यम्=सायुज्यता को

+ च=धौर

सलोकताम्=साबोक्यता को जयति=माप्त होता है

भावार्थ ।

प्राग्ताही साम है, सामपद का ऋर्य सामवेद नहीं है, किन्तु सामका आर्थ संमेलन या सम्बन्ध से है, क्येंकि सब प्राग्ती प्राग्त में प्रविष्ट होते हैं, जो सामरूपी प्राग्त की उपासना इस प्रकार करता है उस उपासक को महत्त्व पदवी देने के लिये प्राग्तीमात्र उदात होते हैं।। ३॥

मन्त्रः ४

क्षत्त्रं प्राणो वै क्षत्त्रं प्राणो हि वै क्षत्त्रं त्रायते हुनं प्राणः क्षिणितोः पक्षत्रमत्रमामोति क्षत्रस्य सायुज्यक्ष्य सलोकतां जयति य एवं वेद ॥

इति त्रयोदशं ब्राह्मणम् ॥ १३ ॥ पदच्छेदः।

क्षत्त्रम्, प्राणः, वै, क्षत्त्रम्, प्राणः, हि, वै, क्षत्त्रम्, त्रायते, ह, एनम्, प्राणः, क्षणितोः, प्र, क्षत्रम्, स्थात्रोति, क्षत्रस्य, साथु-च्यम्, सलोकताम्, जयित, यः, एवम्, वेद् ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः श्रन्वयः

यः पदार्थाः प्राप्नोति≔प्राप्त होता है यानी जीवन योग्य होता है इति=इस प्रकार

क्षत्रम्=क्षत्र को ज्ञात्वा=जान कर + उपासीत=उपासना करे

> यः=जो प्वम्=इस तरह

वेद्=जानता है + सः=वह क्षञ्जस्य=क्षत्र के

सायुज्यम्=सायुज्यता को ।

सले।कताम्=सालोक्यता को जयति=माप्त होता है

प्राणः=प्राण च=ही सत्त्रम्=क्षत्र है हि=क्गोंकि प्राणः=प्राण चे=ही प्रमम्=इस वेह की ह=निश्चय करके श्वाणितोः=अस्त्र के घाव से बचाता है अतः=इसी कारण अत्रम्=औरों करके नहीं रक्षा किया हुआ सत्रम्=क्षीत्रय

भावार्थ ।

प्राग्राही क्षत्र है, क्योंकि प्राग्राही देह को शक्त के घाव से बचाता है, यानी जब कोई शक्त किसी के शरीर में जगजाता है झौर उससे घाव पैदा होजाता है तब प्राग्रा के होने के कारणा झौषधी करके घाव भर जाता है, झौर पुरुष अच्छा होजाता है, प्राग्रा को क्षज्ञ इस कारणा कहा है कि जैसे क्षित्रय किसी का सहारा न करके अपने वीर्य पराक्रम से अपनी झौर दूसरे की रक्षा करता है, उसी तरह प्राग्रा भी किसी इन्द्रिय का सहारा न लेकर अपनी झौर दूसरे की रक्षा करता है, इस प्रकार प्राग्रा को क्षज्ञ जानकर प्राग्रा की उपासना करें, जो पुरुष ऐसा जानता है, वह क्षज्ञरूपी प्राग्रा के सायुज्यता झौर सालोक्यता को प्राप्त होता है ॥ ४ ॥

इति त्रयोदशं ब्राह्मग्रम् ॥ १३ ॥

श्रथ चतुर्दशं बाह्मग्म्।

मन्त्रः १

भूमिरन्तरिक्षं घौरित्यष्टावक्षराष्यष्टाक्षरॐ ह वा एकं गायज्ञे पद-मेतदु हैवास्या एतत्स यावदेषु त्रिषु लोकेषु तावद्ध जयति योऽस्या एतदेवं पदं वेद ॥

पदच्छेदः ।

भूमिः, अन्तरिक्षम्, चौः, इति, अष्टौ, अक्षराग्ति, अष्टाक्षरम्, ह, बा, एकम्, गायभ्ये, पदम्, एतत्, च, ह, एव, अस्याः, एतत्, सः, यावत्, एषु, त्रिषु, जोकेषु, तावत्, ह, जयति, यः, अस्याः, एतत्, एवम्, पदम्, वेद ॥

भ्रन्वयः पदार्थाः भ्रन्वयः पदार्थाः

भूमिः=भू, मि, इति=इस प्रकार झन्तरिक्षम्≔म, न्त, रि, झ, ग्रष्टी=माठ स्रोः=दि, सो, स्वस्रराश्चि=सक्षर हैं उ=मीर यतत्≕सोई श्रष्टाक्षरम्≕ग्राट मक्षर वासा

गायभ्ये=गायभी का

एक यानी "तत्, स, वि,तु,र्व, रे,(ययम्) खि, यम्" ‡ पाद् है

यः≕जो

श्रस्याः=इसके यानी गायश्री के

पतत्=इस एक पाद को ह=भन्नी प्रकार

घेद्=जानता है यः≕जो

द्यां:≔इस गायत्री के

पतत्≔इस

पदम्= एक पाद को एवम् = कहे हुने प्रकार

ह≕मखी प्रकार

धेद्⇒जानता है

सः≔वह

पखु≕इन

त्रिषु=तीनों

स्रोकेषु=कोकों में यावत्=जितना

यावत्≕जतना प्राप्तव्यम्=प्राप्तव्य है

तावत् ह=उतने सब को

जयति=जीतता है यानी पाताहै

भावार्थ ।

हे शिष्य ! भूमि में दो आक्षर भू, सि, और अन्तरिक्ष में चार आक्षर आ, न्त, रि, क्ष, और चौ में दो आक्षर दि, और औ, इस प्रकार सब मिलाकर आठ अक्षर होते हैं, और गायत्री के प्रथम पद में भी आठ अक्षर ''तत्, स, बि, तु, वं, रे, (ययम्) रिए, यम् '' होते हैं, इस लिये गायत्री का प्रथम चरण आठ अक्षर वाला आठ अक्षर वाले भूमि (पृथिवी) अन्तरिक्ष (आकाश) और चौ (स्वर्ग) के बराबर है. अब आगे इस पद की उपासना के फल को कहते हैं, जो कोई उपासक गायत्री के इस एक पद को इस प्रकार उपासना करता है, वह तीनों लोक में जो इक्क प्राप्तन्य है उसको जीतता है। १ ।।

मन्त्रः २

ऋचो यज्ंि सामानीत्यष्टावक्षराययष्टाक्षरं ह वा एकं गायज्ये पदमेतदु हैवास्या एतत्स यावतीयं त्रयी विद्या तावद्ध जयित योऽस्या एतदेवं पदं वेद ॥

[🙏] बरेएयं विरत्तं क्वर्याद्वायज्ञीजपमाचरेदित्यापस्तम्बः ॥

पदच्छेदः ।

भृचः, यज्ंपि, सामानि, इति, श्रष्टो, श्रक्षगणि, श्रष्टाक्षरम्, ह, वा, एकम्, गायक्वेषे, पदम्, एतत्, उ, ह, एव, श्रस्याः, एतत्, सः, यावती, इयम्, त्रयी, विद्या, तावत्, ह, जयति, यः, श्रस्याः, एतत्, एवम्, पदम्, वेद् ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः भ्रन्वयः

पदार्थाः

य जूं वि=य, जूं, वि, सामानि= सा, मा, नि, इति=इस प्रकार श्रष्टो=श्रःठ श्रक्षरागि=अक्षर हैं पतत् उ≕सोई गायद्र्ये≕गायद्री का श्रष्टाक्षरम्=बाठ अक्षर वाला एकम्=एक पद्म="भ,गों,दे,व,स्य,धी, म. हि" पाद है य:=जो श्चस्याः=इस गायत्री के पदम्=इस एक पाद को ह=भली प्रकार चेद्≔जानता है यः=जो

ऋवः=ऋ, च,

श्रस्याः=इस गायश्री के

एतत्=इस

एदम्=पाद को

ह=भजी प्रकार

एवम्=कहे हुये प्रकार
वेद=जानता है यानी उपासना करता है

सः=षह

यावती=जितनी

ह्यम्=यह

प्रया=तीनों
विद्या=विद्या हैं
तावत् ह=उतनी हन विद्याश्रों

के फल को

पाता है यानी जो

तीनोंवेंदों करकेप्राह्म
जयति=

होने योग्य है उस

सनको वह उपासक

भावार्थ ।

त्रमुचः में दो अक्षर त्रमु, च, यजूंपि में तीन अक्षर य, जूं, षि, सामानि में तीन अक्षर सा, मा, नि, इस प्रकार ये आठ अक्षर बरावर हैं गायत्री के दूसरे पाद आठ अक्षर वाले "भ, गों, दे, व, स्य, धी, म, हिं" के और इसी कारणा दोनों की समता है, यानी गायत्री का दूसरा पाद तीनों वेद के बरावर है. अब आगो गायत्री के दूसरे पाद की

उपासना का फल दिखलाते हैं. जो उपासक गायत्री के इस एक पाद को ऐसा समस्तकर उपासना करता है तो वह उन सब वस्तुओं को पाता है जो तीन वेदों की उपासना करक पाया जाता है।। २।।

मन्त्रः ३

प्राणो अपानो व्यान इत्यष्टावक्षराष्यष्टाक्षरं ह वा एकं गायश्ये पदमेतदु हैंवास्या एतत्स यावदिदं पाणि तावद्ध जयति योऽस्या एतदेवं पदं वेदाथास्य एतदेव तुरीयं दर्शतं पदं परोरजा य एष तपाति यद्धे चतुर्थं तत्तुरीयं दर्शतं पद्मिति दृदश इव होष परोरजा इति सर्वमु होवेष रज उपर्युपरि तपत्येवॐ हैंव श्रिया यशसा तपति योऽस्या एतदेवं पदं वेद ॥

पदच्छेदः ।

प्राग्गः, ऋपानः, व्यानः, इति, झष्टो, झक्षराग्गि, झष्टाक्षरम्, ह, वा, एकम्, गायव्ये, पदम्, एतत्, उ, ह, एव, ऋस्याः, एतत्, सः, यावत्, इदम्, प्राग्गि, तावत्, ह, जयति, यः, ऋस्याः, एतत्, एवम्, पदम्, वेद, ऋथं, ऋस्यः, एतत्, एव, तुरीयम्, दर्शतम्, पदम्, परो-रज्ञाः, यः, एवः, तपति, यत्, वे, चतुर्थम्, तत्, तुरीयम्, दर्शतम्, पदम्, इति, दटरो, इव, हि, एवः, परोरज्ञाः, इति, सर्वम्, उ, हि, एव, एवः, रज्ञः, उपरि, उपरि, तपति, एवम्, ह, एव , श्रिया, यशसा, तपति, यः, श्रस्याः, एतत्, एवम्, पदम्, वेद ।।

पदार्थाः पदार्थाः अम्बयः श्चन्यः पतत् उ≔सोई प्राणः=प्रा, स. गाय इये=गायच्ची का श्रपानः≃श्र, पा. न. ट्यानः≔वि, था, न, श्रष्टा**क्षरम्**=श्राउद्यक्षरवाला'धि,यो, थो,नः, प्र,चो,द,यात्" इति=इस प्रकार श्रष्टी=आठ एकम=एक श्रक्षराणि=श्रक्षर हैं पदम्=पाइ है

षः=जो

इास्याः=इस गायच्ची के पतत्चइस पाद को घेद्=जानता है यः=जो श्रस्याः=इस गायञ्जी के पतत्=इस पदम्≔एक पाद को प्वम्≔कहे हुये प्रकार वेद=जानता है सः≔वह यावत्=जितने इदम्≔यह सब प्राणी=जीवमात्र हैं तावत् ह=उन सब को जयति=जीतता है यानी भ्रपने वश में करता है अथ=इसके उपरान्त श्चस्य=इस गायञ्जी मन्त्र का पतत् पव=यह निरचय करके तुरीयम्≕वौथा पदम्≔पाद दर्शतम्=दर्शत नामवाला है यः≕जो एषः≕यह परोरजाः=परोरजा है बानी मकृति से परे है पषः=सोई तपति=सबको प्रकाश करता है यत् तत्,≕जो यह वै=निश्चय काके चतुर्थम्=चौथा

तुरी म्=तुरीया द्शितम्=दर्शत नामबाक्षा पद्म् इति≕गायञ्जी का पाद प्रसिद्ध है च≃घौर + यः≕जो एषः≔यह पुरुष सूर्यमगडले=सूर्यमगडल विवे हि=निश्चय करके दृहरो इव=देखा सा योगिना=योगियों करके प्रतीत होता है सः=वही परोरजाः इति=परोरजा है एषः एवड्डि=यही सूर्यमग्डलस्थ पुरुष सर्वम्≕सब रजः=लोकों को उपरि उपरि=उत्तरोत्तर तपात=प्रकाशता है यः≕जो पुरुष्र अस्याः≔इस गायं की के पतत्=इस चतुर्थ पाद को पवम्≔इस प्रकार वेद्=जानता है सः≔वह एवम्=सूर्यमग्डलस्य पुरुष की तरह ह एव=भवरव श्रिया≔संपत्ति करके यशसा≔यश करके तपति=मकाशवान् होता है

भावार्थ ।

प्रारा में दो श्रक्षर प्रा, रा, अपान में तीन श्रक्षर श्र, पा, न, ध्यान में वि. आन, ये सब मिलाकर आठ अक्षर होते हैं, और गायक्की के तीसरे पाद में भी आठ अक्षर (धियो यो नः प्रचोदयात् ,) होते हैं इस लिये प्रारा, अपान, ज्यान की समता गायत्री के तीसरे पाद से है, अब गायत्री के तीसरे पाद की उपासना का फल आगे कहते हैं, जो कोई उपासक गायञ्जी के तीसरे पाद को प्राण्-ध्रापान-च्यान समक्त कर उपासना करता है, वह सब प्राशायों को जीतता है. यानी अपने वश में रखता है, हे शिष्य ! इस गायश्ची का चौथा पाद दर्शत नामवाला है, यही परोरजा है, दर्शत का अर्थ है, जो ऋषियों करके सुक्ष्म विचार द्वारा देखा गया है, श्रीर परोरजा का श्रर्थ सब से परे है यानी जो प्रकृति के परे होकर सबको सूर्यवत प्रकाशता है, यही परोर्जा है, अथवा दर्शत तुरीय है, जो पुरुष सूर्यमगडल विषे योगियों को दिखाई देता है वही परोरजा है, यही सूर्यमगडलस्थ पुरुष सब उत्तरोत्तर लोकों को प्रकाशता है, जो पुरुष इस गायन्नी के चतुर्थपाद को इस प्रकार जानता है वह सूर्यमगडलस्थ पुरुष की तरह अवश्य सब संपत्तियों करके और यश करके प्रकाशमान होता है।। 3 ।।

मन्त्रः १

सैषा गायश्येतिस्मर्थंश्तुरीय दर्शते पदे परोरजिस प्रतिष्ठिता तद्दैतत्त्तत्ये प्रतिष्ठितं चसुर्वे सत्यं चसुर्हि वै सत्यं तस्माचिदिदानीं द्दौ विवदमानावेयातामहमदर्शमहमश्रीपमिति य एवं मूयादहमदर्श-मिति तस्मा एव श्रद्धयाम तद्दै तत्सत्यं बले प्रतिष्ठितं माणो वे बलं तत्माणे प्रतिष्ठितं तस्मादाहुर्बलाधं सत्यादोगीय इत्येवं वेषा गायश्य-ध्यात्मं प्रतिष्ठिता सा हेपा गयाधंश्वतत्रे पाणा वे गयास्तत्माणाध्यस्तत्रे तचन्नयाधंश्वतत्रे तस्मादायश्ची नाम स यामेवामुं सावित्रीमन्वा-हेवेष सा स यस्मा अन्वाह तस्य प्राणाध्यस्त्रायते।।

पदच्छेदः ।

सा, एषा, गायच्ची, एतस्मिन, तुरीये, दर्शते, पदे, परोरजसि, प्रतिष्ठिता, तत्, वा, एतत्, सत्ये, प्रतिष्ठितम्, चक्षुः, वे, सत्यम्, चक्षुः, हि, वे, सत्यम्, तस्मात्, यत्, इदानीम्, हो, विवदमानो, एयाताम्, अहम्, अदर्शम्, अहम्, अहम्, अर्थोषम्, इति, यः, एवम्, श्रूयात्, अहम्, अदर्शम्, इति, तस्मे, एव, अह्म्याम, तत्, वा, एतत्, सत्यम्, वले, प्रतिष्ठितम्, प्रायाः, वे, वलम्, तत्, प्राये, प्रतिष्ठितम्, तस्मात्, आग्रीयः, इति, एवम्, उ, एषा, गायञ्जी, अध्यात्मम्, प्रतिष्ठिता, सा, ह, एषा, गयान्, तत्ने, प्रायाः, वे, गयाः, तत्, प्रायाः, त्रायाः, त्रायः, प्रायाः, त्रायाः, त्रायः, प्रायाः, त्रायः, प्रायाः, त्रायाः, त्रायाः, त्रायः, प्रायाः, त्रायः, प्रायाः, त्रायः, प्रायाः, त्रायः, प्रायः, प्रायः, प्रायः, प्रायः, प्रायः, प्रायः, त्रायः, प्रायः, प्रायः, प्रायः, प्रायः, प्रायः, प्रायः, त्रायः, प्रायः, प्रा

श्चन्वयः

पदार्थाः

सा≔वही एषा≔यह गायब्री=गायब्री पतस्मिन्=इस तुरीये=तुरीय परोरजसि=मकृति से परे दर्शते पदे=दर्शत पाद में प्रतिष्ठिता=स्थित है तत् वै=सोई दर्शत पाद सत्ये=सत्य में प्रतिष्ठितम्=स्थित है तत्=सोई सत्यम्≕सत्य वै=निश्चय करके चक्षुः=चक्षु है हि=क्योंकि

अन्वयः

Чā

चक्षुः=चक्ष सत्यम्⇒सत्य थै=मसिद है तस्मात्=इस निये यत्=जो कुछ इदानीम्≔इस काक में श्रहम्=में श्चदर्शम्=देख चुका हूं ग्रहम्≕में श्रश्रीषम्=सुन चुका हूं इति=े,सा विवदमानी=वाद करनेवासे द्वी=दो पुरुष एयाताम्≔षावं तो + तयोः=डनमें से यः=जो

ध्वम्=ऐसा न्यात्=कहे कि श्रहम्≕में श्चदरीम् इति=देख चुका <u>इं</u> तस्मै एव=डसी को अद्ध्याम=इम सत्य मानेंगे तत्=तिसी कारय तत्=वह सस्य + चक्षुषि=चक्षु में + प्रतिष्ठितम्=स्थित है + तत्=सोई सत्यम्≔सत्य बल=बल विषे प्रतिष्ठितम्=स्थित है हि=क्योंकि प्रागाः=प्राग वै=ही बलम्=बल है तस्मात्=इस विये प्रागु=प्राग में तत्च्वइ सत्य प्रतिष्ठितम्=स्थित है तस्मात्=इसी बिये ्बलम्=प्राय को सत्यात्≔सत्य से श्रोगीयः=धधिक बलवाला आहुः=कहते हैं एवम्=इस प्रकार प्रा**ग वस**-वान् होने के कारख एषा उ≔यह गायश्री=गायश्री श्रध्यात्मम्=प्राच में

प्रतिष्ठिता=स्थित है सा ह=वही एवा=यह गायश्री शयान्= { गान करने वालों की यानी जप करने वालों की तंत्र=रक्षा करती है प्राणाः=प्राण यानी वागादि इन्द्रियां वै≔घवरय गयाः=गान करने वासे हैं तत्=इसी क्षिये तान्=उन वागादिकों की त्रायते=गायत्री रक्षा करती है तत्≕घौर यत्=जिस कारव गयान्=जपने वार्तो की तत्रे=रक्षा करती है तस्मात्≕तिसी कारख गायश्री=गायश्री नाम=नाम करके प्रसिद्ध है याम्=जिस श्रमूम्=इस सावित्रीम्=गायत्री को ग्रन्वाह्≕शिष्य से श्राचार्य कहता है सा=वडी एख=निरचय करके एवा=यइ गायक्री है यस्मै=जिस शिष्य के विषे सः≔बह माचार्य श्रम्बाह=कहता है

तस्य=उसके प्राणान्=प्राची की + एषा=षइ त्रायते=रक्षा करती है

भावार्थ ।

हे शिष्य ! गायत्री का चौथा पाद दर्शत है, यही परोरजा है, क्योंकि यह प्रक्रित के परे है, और प्रकृति और उसके कार्य का प्रका-शक है, इसके आअय गायत्री है, यही दर्शतपाद सत्य विषे स्थित हैं. सोई सत्य निश्चय करके चक्ष है. क्यों कि ख्रीर इन्द्रियों की श्रपेक्षा चक्ष सत्य प्रसिद्ध है. कारगा यह है कि यह बली है, जैसे दो पुरुष एक ही काल विषे आकर उपस्थित हों और उनमें से एक कहे मैंने देखा है झौर दुसरा कहे कि मैंने सुना है तो द्रष्टा का वाक्य श्रोता. के वाक्य की श्रपेक्षा सत्य माना जायगा यानी देखने वाले का वाक्य सत्य सममा जायगा, सुनने वाले का वाक्य सचा नहीं सममा जायगा, इस कारण सत्य चक्ष बिषे स्थित है, सोई सत्य बल बिषे स्थित है, क्योंकि आंख से देखी हुई वस्तु का प्रमाण बजी होता है, क्यों कि प्रासाही बला है स्प्रीर उसी करके चक्ष विषयों को देखती है. इस लिये प्रागामें ही सत्य स्थित है, श्रीर यही कारण है कि प्रागा को सत्य से श्राधिक बलवान माना है, श्रीर प्रामा बलवान होने के कारमा यह गायच्ची भी बलवान है, क्योंकि प्राणा के आश्रय है, धीर इस जिये यह गायत्री गायत्री जपने वालों की रक्षा करती है, झौर गायत्री के गान करने वाले वागादि इन्द्रियां है, इस लिये उनकी भी रक्षा गायञ्जी करती है, श्रौर जिस कारण यह गायञ्जी जपने वालों की रश्चा करती है, तिसी कारण इसका नाम गायत्री पडा है।। ४॥

मन्त्रः ५

तार्थः हैतामेके सावित्रीमनुष्टुभयन्वाहुर्वागनुष्टुवेतद्वाचमनुबूम इति न तथा कुर्याह्मयत्र्वामेवथः सावित्रीमनुबूयाचदि ह वा अप्येवंविद्व-द्विव प्रतिष्टकाति न हैव तहायत्र्या एकं चन पदं प्रति ॥

पदच्छेदः ।

ताम्, ह, एताम्, एके, सावित्रीम्, अनुष्टुभम्, अन्वाहुः, वाक्, झानुष्टुब्, एतत्, वाचम्, झानुब्रूमः, इति, न, तथा, कुर्यात्, गायत्रीम्, एवं, सावित्रीम्, अनुब्रूयात्, यदि, ह, वा, अपि, एवंवित्, बहु, इव, प्रतिगृह्वाति, न, ह, एव, तत्, गायद्याः, एकम्, चन, पदम्, प्रति ॥ पदार्थाः श्रन्वयः श्चन्वयः श्चनुत्र्यात्=उपनयन के समय एके≔कोई भाचार्थ शिष्य से कहे ताम्=उसी इति≕ऐसा प्ताम्=इस अनुबूमः=हम लोग कहते हैं अनुष्टुमम् = { अनुष्टुप्छन्द वासी आनुष्टुमम् = { गायश्री ''तत्सिवे-यदि≕श्रगर सावित्रीम् (तुर्हणीमह " को पवंविद्≕ऐसा ज्ञाता पुरुष अञ्चाहुः=उपनयन के समय बहु इव=बहुतसा उपदेश करते हैं प्रतिगृह्णाति=भोग्य वस्तु को प्रहत्य पतत्=ऐसा करता है +वद्न्ता=कहते हुये कि + तु≔तो इ्यम्≕यह अनुष्टुप्छन्दवासी तत् हवाअपि=उस भोग्य वस्तु का गायष्ठी बेना निःसंदेह वाक्=सरस्वतीरूप है

तथा=बस प्रकार गायक्याः⇒गायक्षी के

न=न प्रकम्=एक
कुर्यात्=उपदेश करे चन=भी
किंतु=किंतु पदम्=पाद के |

एतत्=इस इ एव≕निरचय करके|
सावित्रीम्=सावित्रीरूप + समम्=बरावर

गायच्चीम्=गायची (तत्सवितुः)के न=नहीं है

भावार्थ ।

हे शिष्य ! कोई कोई झाचार्य ऐसा कहते हैं कि झनुष्टुप्छन्द बाकी गायञ्जी (तत् सिवेतुर्वृग्तीमहे बयं देवस्य मोजनम् । श्रेष्ठं सर्वधातमं तुरं भगस्य धीमहि) को उपनयन के समय पढ़ना चाहिये क्यों कि ये झनुष्टुप् छन्दवाली गायत्री सरस्वतीरूप है, ऐसा उनका कहना ठीक नहीं है, और न उनको ऐसा उपदेश करना चाहिये, सबको इसी सावित्री-रूप गायत्री छन्द "अ तत् सनितुर्वरेगयं भगोदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ¹⁷ का उपनयन के समय उपदेश करना चाहिये आब आगे इसी के फल को ऐसा कहते हैं अगर इस गायन्नी का ज्ञाता पुरुष ध्यगितात भोग वस्तुआं को परिप्रह में प्रहत्ता करता है तो वह कुल भोग वस्त उसको किसी प्रकार की हानि नहीं देसकते हैं, क्योंकि जो गायत्री के एक पद के उपासना करने से फल होता है उस फल के बराबर प्राप्त हुये कुल भोगवस्तु होते हैं ॥ 🗴 ॥

मन्त्रः ६

स य इमाँ ब्लोकान्यू गीन्यति गृह्वी यात्सो अस्या एतत्प्रथमं पदमाप्तु-यादथ यावतीयं त्रयी विचा यस्तावत्मतिगृह्वीयात्सोऽस्या एतद्द्वि-तीयं पदमाप्नुयादथ यावदिदं प्राणी यस्तावत्प्रतिगृह्णीयात्सोऽस्या एतकृतीयं पदमाप्नुयादथास्या एतदेव तुरीयं पदं दर्शतं परोरजाः य एष तपति नैव केन चनाप्यं कुत उ एतावत्प्रतिगृह्णीयात !।

पदच्छेदः ।

सः, यः, इमान्, लोकान्, पूर्णान्, प्रतिगृह्वीयात्, सः, श्रास्याः, एतत्, प्रथमम्, पदम्, आप्नुयात्, अथ, यावती, इयम्, त्रयी, विद्या, यः, तावत्, प्रतिगृह्णीयात्, सः, श्रस्याः, एतत्, द्वितीयम्, पदम्, आप्नुयात्, अथ, यावत्, इदम्, प्राग्गी, यः, तावत्, प्रतिगृह्णीयात्, सः. अस्याः, एतत्, तृतीयम्, पदम्, आप्नुयात्, अथ, अस्याः, एतत्, एव, तुरीयम्, पदम्, दर्शतम्, परोरजाः, यः, एषः, तपति, न, एव, केन, चन, श्राप्यम्, कुतः, उ, एतावत्, प्रतिगृह्वीयात् ॥

द्यान्वयः

पदार्थाः झन्वयः

पदार्थाः

सः=वह विद्वान यः≕जो

इमान=इन पूर्वाज्ञ=धन-धान्यसम्पद्म

श्रीन्≕तीर्<u>नो</u> लोकान्=बोकों को प्रतिगृह्णीयात्=प्रहण करे तो उसका प्रतिगृह्णीयात्=प्रहण करे यानी सः=वह लेना श्रस्याः≔इस गायञ्जी के एतत्=इस प्रथमम्=पहिंबे पदम } =पादके फलके बराबर + समम् म्राप्तुयात्=पावे भ्रथ=ग्रौर यावती=जितनी त्रयी=तीनों विद्या=विधा हैं तत्=उनके फल को तावत्=पूर्णरीति से यः=जो विद्वान् प्रतिगृह्णीयात्=पावे सः=वह फल श्चस्याः=इस गाय**न्र**िके पतत्=इस द्वितीयम्=दूसरे पदम् } =पादके फलके बराबर + समम् आप्नुयात्≕पावे म्रथ=भौर याधत्=जितना इदम्≔यह

प्राणी=प्राणीमात्र है

तावत्=श्न सक्को यः≕जो विद्वान् श्रपने वश में करे सः=उसका वह वश करना श्रस्याः=गायञ्जी के पतत्=इस **तृ**तीयम्=तीसरे पदम्=पाद के फल को श्चाप्नुयात्=प्राप्त हो**वे** म्रथ=म्रीर यः=जो परोरजाः=लोकोत्तरवर्ती एषः=सूर्यस्थ पुरुष तपति=प्रकाशता है एतत् एव=वही तुरीयम्=चौथा द्शतम्=दर्शत नामवाला पद्म्=गायञ्जी का पाद है + इदम्=यह पाद केन चन=किसी प्रतिप्रह करके न एव=नहीं श्चाप्यम्=प्राप्य है, यानी उसके बराबर कोई वस्तु नहीं है + पुनः≔तब उ=इतना बढ़ा पतावत्≕फब

कुतः≔कहां से

प्रतिगृहीयात्=कोई पावे

भावार्थ ।

हे शिष्य ! वह विद्वान जो धनधान्य से सम्पन्न हुये इन तीर्नो

लोकों को प्रतिप्रह में प्रहरण करता है, तो उसको उन सबका लेगा उसके योग्यता से अधिक नहीं है, यानी वह किसी प्रकार से भी ऐसा प्रतिप्रह लेने पर दूषित नहीं होता है, क्यों कि उसका लिया हुआ प्रतिप्रह इस गायञ्ची यानी (तन् सिवतुर्वरे ययम्) के प्रथम पद के फल के बराबर होता है, और जो इन्ज फल तीनों वेदों यानी अनुग्-यनु:-साम के जानने और उपासना करने से फल होता है, सोई प्रतिप्रह इस मन्त्र के द्वितीयपाद (भर्गों देवस्य धीमहि) की उपासना के फल के बराबर होता है, और जितने प्राणीसमृह हैं यानी जितने प्राणी हैं, उनको अपने वरामें करने का जो प्रतिप्रह में मिले तो वह सब इस गायञ्जी के तृतीय पाद (धियो योन: प्रचोदयात्) की उपासना के फल के बराबर है, और जो इस गायञ्जी का चौथा पाद दर्शत परोरजा है, और जो सर्वत्र प्रकाशित होरहा है इस चतुर्थपाद की उपासना के फल के बराबर कौन दान संसार में होसकता है। है।

मन्त्रः ७

तस्या उपस्थानं गायत्र्यस्येकपदी द्विपदी त्रिपदी, चतुष्पचपदिस न हि पद्यसे । नमस्ते तुरीयाय दर्शताय पदाय परोरजसेऽसावदो मा भापदिति यं द्विष्यादसावस्यै कामो मा समृद्धीतिवा न हैवास्यै स कामः समृध्यते यस्मा एवमुपितष्ठतेऽहमदः भापमिति वा ॥

पदच्छेदः ।

तस्याः, उपस्थानम्, गायन्त्रि, श्रस्ति, एकपदी, द्विपदी, त्रिपदी, चतुरपदी, श्रपत्, श्रस्ति, न, हि, पद्यसे, नमः, ने, तुरीयाय, दर्शताय, पदाय,
परोरजसे, श्रस्तौ, श्रदः, मा, प्रापत्, इति, यम्, द्विष्यात्, श्रस्तौ,
श्रस्तै, कामः, मा, समृद्धी, इति, वा, न, ह, एव, श्रस्तै, सः, कामः,
समृध्यते, यस्तै, एवम्, उपतिष्ठते, श्रहम्, श्रदः, प्रापम्, इति, वा ॥
श्रन्त्यः पदार्थाः श्रन्त्यः पदार्थाः
तस्याः=इस गायन्त्री का उपस्थानस=उपस्थान यानी प्रशंसा

इति⇒ऐसी + 8121=94 + कथ्यते =कही जाती है गायश्रि=हे गायश्रि ! एकपदी=त्रैजोक्यरूप एक चर्यावाली असि=तू है यानी तीनों लोक तेरा प्रथमपाद है द्विपदी=त्रैविद्यारूप द्वितीय चरग्यवा सी + असि=तृ है यानी तीनों बेद त्रिपदी=प्रायादिरूप तीन चरणवासी + असि=तु है यानी प्राणीमात्र तेरा तृतियचरण है चतुरपदी=दर्शतरूप चौथी चरणवाली : + असि= { तृ है यानी सबका प्रकाशक तेरा चतुर्थ वस्या है +यद्यपि) + पत्रम् / =यद्यपि तृ ऐसी है + परन्तु=परन्तु श्चपद्=वास्तव में तू पदरहित + ग्रसि=है + हि=क्योंकि त्वम् न=त् नहीं | किसी करके जानी जाती है यानी तेरा ज्ञान किसी को नहीं होता है

ते=वेरे

तुरीयाय≕चीवे परोर् जसे=प्रकाशमान द्शताय=दर्शत नामवासे पद्।य≃पाद के क्रिये न्मः=नमस्कार ग्रस्तु=होवे + यः≕जो असी=यह मेरा पाटमा=पाविष्ठ शश्रु है + श्रस्य=उसका + अद्ः=श्रभिलाषा तेरा द्वितीय चरण है समृद्धि इति न=पूर्वता को न प्राप्त होने वा=इस कारण झस्मै=डस पापी की सः≔वह कामः=कामना ह एव न=िक्सी तरह नहीं समुध्यते=प्री होती है यस्मै≕जिसके विवे एवम्=इस प्रकार उपतिष्ठते=ज्ञानी शाप देवा है वा=घौर + शत्रोः≔शत्रुके श्चदः=उत्तम सभी**ष्ट को** श्रहम्=में प्रापम्=प्राप्त होकं इति=ऐसा + यः≕जो उपासक उपतिष्ठते=कहता है + तस्य=उसके कामाः=सब मनोरथ

समूध्यन्ते≕सिद्ध होते हैं

भावार्थ ।

हे शिष्य ! अब गायश्ची के उपस्थान यानी प्रशंसा को कहते हैं है गायित्र ! त्रैलोक्यरूप तेरा प्रथम चरण है, त्रेलिचारूप तेरा द्वितीय चरण है, प्राणादिरूप तेरा तृतीय चरण है, आर दर्शतरूप सबका प्रकाश करने वाला तेरा चतुर्थ चरण है, यद्यि तू इन सब गुणों करके परिपूर्ण है, तथापि वास्तव में तू पदरहित यानी निर्मुण है, क्योंकि तू किसी करके नहीं जानी जाती है, तेरे चौथे दर्शन प्रकाशमान पाद के लिये मेरा नमस्कार है, जो कोई मेरा पापिष्ठ शत्रु है उसकी अभिलापा पूर्ण नहों किसी तरह से उसकी कामना पूर्ण न हो इस गायत्री के उपासक के शाप देने से शत्रुकी कामना सिद्ध नहीं होती है, और जब उपासक कहता है कि शत्रु के उत्तम अभीष्ट फल उसकी न मिलकर मुक्तको मिलें तद उस उपासक के वे सब मनोरथ इच्छानुसार सिद्ध होते हैं ॥ ७ ॥

मन्त्रः ८

एतद्ध वै तज्जनको वैदेहो बुङ्किमाश्वतराश्विमुवाच यन्नु हो तद्वायत्रीविदव्र्था अथ कथछ हस्तिभूतो वहसीति मुखछब्रस्या स-म्नाएन विदांचकारेति होवाच तस्या अग्निरेव मुखं यदि हवा अपि बिह्वाग्नावभ्याद्धति सर्वमेव तत्संदहत्येवछ हैवैवं विद्ययपि बहिव पापं कुरुते सर्वमेव तत्संप्साय शुद्धः पूतोऽनरोऽमृतः संभवति ॥

इति चतुर्दशं ब्राह्मणम् ॥१४॥

पदच्छेदः ।

एतत्, ह, वे, तत्, जनकः, वेदेहः, बुडिलम्, आर्थतराश्वम्, डवाच, यत्, नु, हो, तत्, गायश्चीविद्, अन्नथाः, अथ, कथम्, हस्ति-भृतः, वहसि, इति, मुखम्, हि, अस्याः, सम्नाट्, न, विदांचकार, इति, ह, उवाच, तस्याः, अग्निः, एव, मुखम्, यदि, ह, वा, अपि, बहु, इव, अग्नी, अभ्याद्धति, सर्वम्, एव, तत्, संदहति, एवम्, ह, एव, एवं, विद्, यश्चि, बहु, इव, पापम्, कुरुते, सर्वम्, एव, तत्, संप्साय, शुद्धः, पूतः, आगरः, अस्तः, संभवति ॥

ग्रन्वयः

पदार्थाः

अन्वयः

पदार्थाः

बैदेहः≕विदेह देश का राजा

+ जनकः=जनक

श्राश्वतः } =श्रारवतरास्य का पुत्र

बुडिलम्=बुडिब से

एतत्=इस

तत्=गायच्ची विषय में ह वै=निश्चय करके

जुहो≔म्राश्चर्य के साथ प्रश्न

उवाच=कहता भया

यत्=गो त्वम्=तृ

गायत्रीविद्=गायत्री जाननेवाला है इति=ऐसा

श्रवृथा=श्रवने को कहता है

श्रथ=तो कथम्=कैसे

इस्तिभूतः=इस्ती होता हुन्ना

वहसि= { प्रतिग्रह के दोष क्एभार को जिये हुये फिरता है

इति≕ऐसा सुन कर सः≔वह बुद्धित

ह=स्पष्ट

उवाच=कहता भया कि

सम्राट्र=हे राजा जनक !

श्चस्याः=इस गायञ्ची के मुखम्≔मुख को

हि=निश्चय करके

न विदांचकार=मैं नहीं जानता हूं

्र इति=इस पर

+ जनकः≔राजा जनक ने

श्राह=कहा बुडिल=हे बुडिल !

+ श्रृशु=युन

तस्याः=गावश्रीका

मुखम्=मुख

श्राग्नः=श्राग्न

एव=निश्चय करके है

इव=जैसे

यदि ह=जब लोकाः=लोग

अग्नी=धग्नि में

बहु=बहुत इन्धन

श्रभ्यादधति=डावते हैं

वा द्यांपे=तब

तत्=डस

सर्वम्=सबको

संद्हाति एव≔ग्रग्नि श्रवश्य जला

देता है

एवम्विद्=तैसे गायबी का ज्ञाता

यद्यपि=यद्यपि

बहु=बहुत

पापम् इव=पाप को भी

कुरुते=करता है

+ तथापि=तो भी

तत्=उस

सर्वम्=सबको

एव=ग्रवश्य

संदलाय=नाश करके

शुद्धः=शुद्ध

पूतः=पापरहित अजरः=जरारहित ्श्रमृतः=मुक्र संभवति=होजाता है

भावार्थ ।

हे शिष्य ! किसी समय विदेह देश का राजा जनक आश्वतराश्वि के पुत्र बुडिल से बड़े आश्चर्य के साथ इस गायञ्जी के विषय में प्रश्न किया ऐसा कहता हुआ कि है बुडिल ! तू कहता है कि मैं गायञ्जी का झाता हूं पर मैं तुम्नको देखता हूं कि तू हस्ती के ऐसा बल रखता हुआ भी प्रतिग्रह के भार को लिये हुये फिरा करता है इसका क्या कारणा है ? इस प्रश्न को सुनकर बुडिल ने कहा हे राजा जनक ! मैं इस गायञ्जी के मुखको नहीं जानता हूं और यही कारणा है कि मैं हस्ती के सहश प्रतिग्रहरूप भार को लिये हुये फिरता रहता हूं इस पर राजा जनक ने कहा हे बुडिल ! सुन गायञ्जी का मुख अगिन है, जैसे लकड़ी अगिन में डालने से भस्म होजाती है बैसेही गायञ्जी के झाता पुरुष के सब पाप नष्ट होजाते हैं और वह शुद्ध पापरहित जरारहित सुक्क होजाता है।।

।

इति चतुर्दशं ब्राह्मराम् ॥ १४ ॥

श्रथ पञ्चदशं बाह्मग्रम् ।

मन्त्रः १

हिरएमयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुलं तत्त्वं पूपन्नपाद्यणु सत्यधर्माय दृष्ट्ये पूपन्नेकर्षे यम सूर्य माजापत्य च्यूह रश्मीन् समूह तेजो यत्ते रूपं कल्याणतमं तत्ते पश्यामि योऽसावसी पुरुषः सोऽहमस्मि। बायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्त्र शरीरम् ॐक्रतो स्मर कृतछं स्मर क्रतो स्मर कृतछं स्मर अपने नय सुपथा राये श्रस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् युयोध्यसमञ्जुहराणमेनो भूयिद्वां ते नमजक्रं विधेम ॥

इति पश्चदशं ब्राह्मएम् ॥ १४ ॥ इति श्रीबृहदारएयकोप।नेपदि पश्चमोऽध्यायः ॥ ४ ॥

हिररामयेन, पात्रेसा, सत्यस्य, अपिहितम्, मुखम्, तत्, त्वम्, पूषन्, आपावृत्ता, सत्यधर्माय, दृष्टये, पूषन, एकर्षे, यम्, सूर्य, प्राजापत्य, व्यूह्, रश्मीन, समूह, तेजः, यत्, ते, रूपम्, कल्यास्तमम्, तत्, ते, पश्यामि, यः, असौ, असौ, पुरुषः, सः, श्रहम्, अस्मि, वायुः, अनि-लम्, ब्रामृतम्, ब्राथ, इदम्, भस्मान्तम्, शरीरम्, 🕉, क्रतो, स्मर्, कतम्, स्मर, क्रतो, स्मर, क्रतम्, स्मर, श्चग्ने, नय, सुपथा, राये, अस्मान्, विश्वानि, देव, वयुनानि, विद्वान्, युयोधि, अस्मत्, जुहूरा-गाम्, एनः, भूयिष्ठाम्, ते, नमःकितम्, विधेम ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः श्चन्वयः पदार्थाः

+ श्रादित्य- रे =सूर्य की प्रार्थना है प्रार्थना रे हिरएमयेन=सोने की तरह प्रका-

श्मान

पात्रेग्ा≕पात्र करके सत्यस्य=तुभ सस्य का

मुखम्=द्वार श्रपिहितम्=दका है पूषन्≔हे सूर्य !

तत्=उस दकन को

त्वम्=तू

सत्यधर्माय } = { मुक्तसत्यधर्मावतः -द्रश्चनाय } = { म्बीके दर्शनके बिये

श्रपावृगु=इटारे

पूषन्=हे पोषणकर्त्तां सूर्व ! एकर्षे=हे श्रकेला चलनेवाला!

यम≔हे जगत्नियम्ता ! सूर्य=हे बाकाशचारी !

प्राजापत्य=हे प्रजापति के पुत्र !

रश्मीन्=अपने किरखों को

व्यूह=**ह**टाबे

तेजः=अपने तेज को समृह=कम करते ताकि

यत्≕जो ते=तेरा

कल्याणतमम्=प्रत्यन्त करपाच

क्पम्=रूप है तत्=उस

ते=तेरे

+ रूपम्=रूप को

पश्यामि=में देख्ं

झसी=वह तेरे विषे यः≕जो

पुरुषः=पुरुष है

ग्रसो=सोई सः≔वह पुरुष

श्रहम्≕में श्र€म≕इूं

अमृतम्=मुक्त सत्यधर्मावसम्बी

₩.

वायुः=प्रायवायु अस्मान्=हम लोगों को श्रानिलम्=बाह्यवायुको राये=कर्मफल भोगार्थ प्रतिगच्छुतु=मिले यानी प्राप्त होवे सुपधा=अच्झे रास्ते से श्रथ=श्रौर नय=जेचन इद्म्=यह + हि=क्योंकि भस्मान्तम्=दग्ध देव≔हे धािनदेव ! श्ररीरम्=मेरा देह विश्वानि } =सब कर्म को वयुनानि } + पृथ्वीम्=पृथ्वी को + गच्छुतु=प्राप्त होवे विद्वान्=तृ जानने वाला है ॐ=हे ॐकार ! यानी साक्षी है क्रतो=हे कतो, हे मन ! श्रस्मत्≔हमसे कृतम्=श्रपने किये हुये कर्म को जुहू राग्मम्=कुटिब स्मर=याद कर पनः≔पाप को स्मर=याद कर युयोधि } =श्रवण करदे अपनय } =श्रवण करदे कतो=हेकतो! कृतम्=अपने किये हुये कर्मको ते=तेरे स्मर=याद कर भूयिष्ठाम्≔बहुतसा €मर=याद कर नमउक्तिम्=नमस्कार श्रग्ने≔हे श्रग्निदेव ! विधेम=इम करते हैं

भावार्थ ।

कोई सूर्य श्रोर श्राग्न का उपासक सूर्य श्रोर श्राग्न की प्रार्थना नीचे लिखे प्रकार करता है, हे सूर्य, भगवन ! सोने की तरह प्रकाश-मान पात्र करके तुम्स सत्य का द्वार ढका हुआ है, हे भगवन ! उस ढका को तू मुक्त सत्य का द्वार ढका हुआ है, हे भगवन ! उस ढका को तू मुक्त सत्यधर्मावलम्बी के लिये हटाहे, हे जगत् का पाजन पोपण्य कर्ता सूर्य, हे श्रकेला चजनेवाला, हे जगत्नियन्ता, हे प्रजापित के पुत्र ! तू श्रपने किरणों को हटाले, श्रथवा श्रपने तेज को कम करहे ताकि मैं तेरे श्रत्यन्त कल्याग्यरूप को देखूं, हे भगवन ! जो पुरुष तेरे विषे दिखाई देता है सोई मैं हूं, जब मैं तेरे विषे स्थित पुरुष को प्राप्त हो जाऊं तब सुक्त सत्यधर्मावलम्बी का प्राण्वायु

समिष्ठि बाह्य बायु को प्राप्त होवे, क्योर यह मेरा देह दग्ध होकर पृथिवी को प्राप्त होवे, हे ॐकार, हे कतो, हे मन! अपने किये हुये कमों को यादकर, हे मन! अपने किये हुये कमों को यादकर, हे अनिनदेवता! हम लोगों को कर्मफल भोगार्थ अञ्चे रास्ते से ले चल, हे अगिनदेवता! देवता! तू हमारे सब कर्गों को जानता है, यानी उनका साक्षी है, हमारे कुटिल पापों को दूर करदे, हम तेरे लिये बहुतसा नमस्कार करते हैं।। १।।

इति पञ्चदशं त्राह्मग्राम् ॥ १४ ॥ इति श्रीवृहद्दारययकोपनिषदि भाषानुदादे पञ्चमोऽध्यायः ॥ ४ ॥

ऋथ षष्ठोध्यायः।

श्रथ प्रथमं ब्राह्मग्रम्।

मन्त्रः १

ॐ यो ह वै ज्येष्ठं च श्रेष्ठं च वेद ज्येष्टश्च श्रेष्टश्च स्वानां भवित प्राणो वै ज्येष्टश्च श्रेष्टश्च ज्येष्टश्च श्रेष्टश्च स्वानां भवत्य-पि च येषां बुभूषित य एवं वेद ॥

पदच्छेदः ।

कुँ, यः, ह, तै, ज्येष्टम्, च, श्रेष्टम्, च, तेद, ज्येष्टः, च, श्रेष्टः, च, श्रेष्टः, च, श्रेष्टः, च, श्रेष्टः, च, श्रेष्टः, च, श्रेष्टः, च, ज्येष्टः, च, श्रेष्टः, च, श्रेष्टः, च, श्रेष्टः, च, श्रेष्टः, च, स्वानाम्, भवति, श्रापि, च, येपां, बुभूपति, यः, एवम्, वेद् ॥ श्रम्बयः पदार्थाः श्रम्बयः पदार्थाः

यः=जो कोई ज्येष्टम्=ज्येष्टको च=षीर त्र=श्रेष्टको वेद्=जानता है

ह=ही वै च=निरवय करके ज्येष्ठः=ज्येष्ठ च=ग्रोर

+ सः=बह

स्वानाम्=अपने भाई बन्धुवीं में

भवति=होता है प्राणः=शरीरस्थ प्राख

+ इन्द्रियाणाम्=इन्द्रियां में ज्येष्ठः=ज्येष्ठ च=धोर श्रेष्ठः च=श्रेष्ठ है + श्रतः=इसी कारण + उपासकः=प्राण का उपासक स्वानाम्=श्रपनी ज्ञातिके बीच में ज्येष्ठः=ज्येष्ठ च=धोर श्रेष्ठः च=श्रेष्ठ भवति=इता है च=धीर
श्रिप=इसके सिवाय
यः=जो पुरुष
एचम्=कहे हुये प्रकार
चेद्=जानता है
+ सः=वह
येषाम्=जिस किसी कोगों
के मध्य में
बुभूषति=अयेष्ठ श्रेष्ठ होने की
हच्छा करता है

सः≔वह + तेषाम्=उनमें भवति≃ज्येष्ठ श्रेष्ठ होजाता **है**

भावार्थ ।

जो कोई पुरुष ज्येष्ठ और श्रेष्ठ को जानता है, यानी उपासना करता है, वह भी निश्चय करके अपने भाई बन्धुवों में ज्येष्ठ और श्रेष्ठ होता है, शरीरस्थ प्राग् अवश्यही इन्द्रियों बिषे ज्येष्ठ और श्रेष्ठ है, इस कारगा प्राग्त का उपासक अपनी जाति में ज्येष्ठ और श्रेष्ठ होता है, और इनके सिवाय जो पुरुष कहे हुये प्रकार प्राग्त की उपासना करता है वह जिस किसी लोगों में ज्येष्ठ और श्रेष्ठ होने की इच्छा करता है, वह उनके मध्य में भी ज्येष्ठ श्रेष्ठ होता है।। १॥

मन्त्रः २

यो ह वै विसिष्ठां वेद विसिष्ठः स्वानां भवति वाग् वै विसिष्ठा विसिष्ठः स्वानां भवत्यिप च येषां बुभूषति य एवं वेद ॥

यः, ह, वै, विसष्ठाम्, वेद, विसष्ठः, स्वानाम्, भवित, वाक्, वै, विसष्ठा, विसष्ठः, स्वानाम्, भवित, आपि, च, येषाम्, बुभूवित, यः, एवम्, वेद ॥

धान्ययः

पदार्थाः ग्रन्वयः

पदार्थाः

यः≕जो पुरुष वेद≕जानता है वसिष्टामू=रहनेवालों में से सः≔वह पुरुष . अतिश्रेष्ठ को स्वानाम्=श्रपने सम्बान्धयों में घेद≕जानता है बसिष्ठः=श्रेष्ठ सः≔वह भवति=होता है स्वानाम्=श्रपने सम्बन्धियों के च≕श्रोर बीच में श्रापि=सिवाय इसके वसिष्टः=श्रतिश्रेष्ठ येषाम्=श्रीर जिन स्रोगों के भवति=होता है सध्य में वाकु=वाणी + सः=वह पुरुष च=निस्सन्देष्ठ ब्रभूपति=श्रेष्ठ होने की इच्छा वसिष्ठा= { शरीर के श्रन्दर रहनेवाली हन्द्रियों में से श्रतिश्रेष्ठ हैं करता है + तेषाम्=उन लोगोंके मध्यमें भी + भ्रतः=इस लिये + सः=वह पुरुष यः=जो पुरुष + वसिष्ठः=श्रेष्ठ भवति=होता है प्वम्=इस प्रकार

भावार्थ ।

जो पुरुष रहनेवालों में से श्रेष्ठ को जानता है वह अपन सम्ब-निधर्यों के विषे ज्येष्ठ श्रेष्ठ होता है, वास्मी शरीर के अन्दर रहनेवाली इन्द्रियों में से अपति श्रेष्ठ है, इस लिये जो पुरुष वास्मी को इस प्रकार जानता है वह भी अपने सम्बन्धियों में अप्रतिश्रेष्ठ होता है, इतनाही , नहीं किन्तु इसके सिवाय जिन लोगों के मध्य में वह पुरुष श्रेष्ठ होने की इच्छा करता है उन लोगों के मध्य में भी श्रातिश्रेष्ठ होता है।। २ ॥

मन्त्रः ३

यो ह वै मिल्छां वेद मितिवृति समे मितिवृति दुर्गे चक्षुंवें मितिष्ठा चक्षुषा हि समे च दुर्गे च मितिवृति मितिवृति समे मितिवृति दुर्गे य एवं वेद ॥

बृहदारगयकोपनिषद् स०। इ२६

पवच्छेदः ।

यः, ह, वै, प्रतिष्ठाम्, वेद, प्रतितिष्ठति, समे, प्रतितिष्ठति, दुर्गे, चक्षुः, चै, प्रतिष्ठा, चक्षुपा, हि, समे, च, दुर्गे, च,प्रतितिष्ठति,प्रतीति-छति, समे, प्रतितिष्ठति, दुर्गे, यः, एवम्, वेद् ॥ पदार्थाः पदार्थाः ' स्रन्वयः श्चन्वयः

यः≕जो पुरुष ह-वै≕िनश्चय के साथ प्रतिष्ठाम्=प्रतिष्ठा को वेद=जानता है सः=वह समे=समभूमि में

वै=ग्रच्छी तरह

प्रतितिष्टति=प्रतिष्ठित होता है च=ग्रौर

दुरों≕तीच ऊंच भृमि में भी प्रतितिष्ठति=प्रतिष्ठित होता है

+ प्रश्नः=प्रश्न

+ प्रतिष्ठा=प्रतिष्ठा + का=क्या वस्तु है

+ उत्तरम्=उत्तर

च्रशुः=नेत्रही प्रतिष्ठा=प्रतिष्ठा है

हि=क्योंकि चश्चुषा=नेत्र करके भी समे=समभूमि में च=थोर दुरो=नीच ऊंच भूमि में च=भी प्रतितिष्ठति=पुरुष स्थित होता है

यः≔जो

एवम्≔इस प्रकार वेद्=जानता है

+ सः=वह

समे=समभूमि पर प्रतितिष्ठति=स्थित होता है

+ च=श्रीर

दुर्गे=नीच ऊंच भूमि पर

+ श्रपि=भी

प्रतितिष्ठति=ब्हरता है

भावार्थ । जो पुरुष प्रतिष्ठा को जानता है वह समभूमि झौर विषमभूमि दोनों में प्रतिष्ठित होता है. प्रश्न–प्रतिष्ठा क्या वस्तु है ?. उत्तर–नेत्रही प्रतिष्ठा है, क्योंकि नेत्र करकेही पुरुष समभूमि झ्रोर विषमभूमि में स्थित होता है, जो पुरुष इस प्रकार जानता है वह समभूमि झौर विषमभूमि में स्थित होता है।। ३।।

मन्त्रः ४

यो ह वे संपदं वेद संश्रहास्मे पद्यते यं कामं कामयते श्रोत्रं वै

संपद्धोत्रे हीमे सर्वे वेदा अभिसंपन्नाः सछहास्मै पद्यते यं कामं कामयते य एवं वेद ॥

पदच्छेदः ।

यः, ह, वै, संपद्म, वेदं, सम्, ह, अस्मै, पद्यते, यम्, कामम्, कामयते, श्रोत्रम्, वै, संपत्, श्रोत्रे, हि, इमे, सर्वे, वेदाः, श्रमिसंपन्नाः, सम्, ह, अस्मै, पद्यते, यम्, कामम्, कामयते, यः, एवम्, वेद ॥ पदार्थाः पदार्थाः श्चान्वयः

श्चन्वयः

यः ह≕जो पुरुष

बै≕निश्चय करके **संपद्म्**=संपदा को

वेद≔जानता है

+ सः≔वह यम्=जिस

काममू=मनोरथ कों ह=निश्चय करके

कामयते⇒चाहता है

श्चरमे=उसके लिये

संपद्यते ह=वह मनोरथ श्रवश्य

प्राप्त होता है

+ प्रश्नः=प्रश्न

+ संपत्=संपदा

का=क्या वस्त् है १ + उत्तरम्=उत्तर

श्रोत्रम्≕श्रोत्रेन्द्रिय

वै=ही संपत्=संपदा है हि=क्योंकि श्रोत्रे=श्रोत्रमेंही सर्वे≕सब वेदाः≔वेद श्रभिसंपन्नाः=संपन्न रहते हैं यः=जो

एवम्=कहे हुये प्रकार चेद=जानता है

श्चरमै≕उसके लिये संपद्यत=वह मनोरथ प्राष्ट

होता है यम्=जिस कामम्≕मनोरथ को

+ सः≔वह कामयते=चाहता है

मावार्थ । जो पुरुष भलीप्रकार संपदा को जानता है वह जिस मनोर्थ की चाहता है वह मनोरथ उसको प्राप्त होता है. प्रश्न-संपत् क्या वस्तु है ?. **उत्तर-श्रोत्र इन्द्रियही संपत् है, क्योंकि श्रोत्रमेंही सब वेद संपन्न** होते हैं जो पुरुष कहे हुये प्रकार जानता है उसके िहाये वह मनोस्थ प्राप्त होता है जिसको वह चाहता है।। ४ ॥

सन्त्रः ५

यो हवा भायतनं वेदाऽऽयतनश्च स्वानां भवत्यायतनं जनानां मनो वा आयतनमायतनश्च स्वानां भवत्यायतनं जनानां य एवं वेद ॥

यः, ह, वा, ध्रायतनम्, वेद, श्रायतनम्, स्वानास्, भवति, ध्राय-तनम्, जनानाम्, मनः, वा, श्रायतनम्, श्रायतनम्, स्वानाम्, भवति, श्रायतनम्, जनाचाम्, यः, एवम्, वेद ॥

शम्बयः

पदार्थाः ऋन्वयः

पदार्थाः

यः ह=जो

श्रायतमय्=श्राश्रय का

वै=िनश्चय करके
वेद=जानता है

+ सः=वह
स्वानाम् }

श्रायतनय्=श्राश्य

भवति=होता है

नानाम् } ज्यानाम् क्रायतनम्≕श्राश्य भवति≔होता है + प्रश्नः≔प्रश्न झायतनम्≕श्राश्य +किम्≕स्यावस्तु है ? + उत्तरम्=उत्तर मनः≔मन वै=ही

श्रायतनम्=श्राश्रय है एवम्=इस प्रकार यः=जो पुरुष वेद्=जानता है

+ सः=वह स्वानाम्=घपने जनानाम्=ज्ञातियों का आयतनम्=घाश्रय भवति=होता है

भावार्थे ।

जो पुरुष आश्रय को श्रम्ब्हीतरह जानता है वह अपने ज्ञातियों का आश्रयभूत होता है, प्रश्न-श्राश्रय क्या वस्तु है ?. उत्तर-मनही आश्रय है. इस प्रकार जो पुरुष जानता है वह अपने ज्ञातियों का आश्रय होता है ॥ ४ ॥

मन्त्रः ६

यो ह वै मजाति वेद मजायते ह मजया पशुभी रेतो वै मजा-तिः मजायते ह मजया पशुभिर्य एवं वेद ॥

पद्च्छेदः।

यः, ह, वै, प्रजातिम्, वेद, प्रजायते, ह, प्रजया, पशुभिः, रतः, वै, प्रजातिः, प्रजायते, ह, प्रजया, पशुभिः, यः, एवम्, वेद ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

यः ह≕जो पुरुष

वै=निश्चय करके

प्रजातिम्=प्रजाति को ह=भन्नीप्रकार

वेद्=जानता है

+ सः≔वह पुरुष ह=भ्रवश्य

प्रजया=संतान करके

पशुभिः=पशुश्रों करके + संपन्नः=संपत्तिवाता

म लपका≔लपालपाल प्रजायते≕होता है

+ प्रश्नः=प्रश्न

+ प्रजातिः=प्रजाति

+ का≔क्या वस्तु है ?

उत्तरम्=उत्तर

रेतः=वीर्य प्रजातिः=प्रजाति है

यः≕जो पुरुष

एवम्=इस प्रकार वेद=जानता है

+ सः≔वह

प्रजया=संतान करके पश्चभिः=पशुश्री करके

पशुामः=पशुश्रा करक + संपन्नः=संपत्तिवाला प्रजायते=होता है

भावार्थ ।

ं जो पुरुष प्रजाति को अन्द्धीतरह जानता है वह संतान करके, पशुओं करके संपत्तिवाजा यानी धनाट्य होता है. प्रश्न-प्रजाति क्या वस्तु हैं?. उत्तर-वीर्य प्रजाति हैं. जो पुरुष इस प्रकार जानता है वह संतान करके, पशुओं करके संपत्तिवाला होता है ॥ ६ ॥

मन्त्रः ७

ते हेमे पाणा अहर् अथयसे विवदमाना ब्रह्मजग्मुस्तद्धोचुः कोनो वसिष्ठ इति तद्धोवाच यस्मिन्वउत्क्रान्ते इद् छ शरीरं पापीयो मन्यते स वोवसिष्ठ इति ॥

पदच्छेदः ।

ते, ह, इमे, प्राणाः, श्राहं, श्रेयसे, विवदमानाः, श्रह्म, जग्मुः, तत्, ह, ऊचुः, कः, नः, वसिष्ठः, इति, तत्, ह, उवाच, वस्मिन्, नः,

क्तान्ते, इदम्, शरीरम्, पापीयः, मन्यते, सः, वः, वसिष्ठः, इति 🔢 पढार्थाः पदार्थाः श्चन्यः श्रन्वयः कः≔कौन ते ह=वे वाखी श्रोत्र सन बसिष्ठः इति=श्रेष्ठ है इस पर चादि इन्द्रियां + च=ग्रीर तत्=वह प्रजापात इमे प्राणाः=ये पांची प्राण 夏二年7世 उवाच=कहता भवा कि श्चार्य में कहने श्चहंश्रेयसे= हैं हमही श्रेष्ठ हैं' घः=तुम खोगों के मध्य में यस्मिन्=जिसके उत्कानते } =निकल जाने पर + सति } विवदमानाः । ऐसा वाद विवाद + सन्तः }=करते हुये ब्रह्म=बद्या के पास इदम्≔इस जग्मुः≔गये शरीरम्=शरीर को ह≔श्रीर पापीयः=पापिष्ठ + गत्य(=जाकर + लोक≔लोक तत्=उस ब्रह्मा से यानी मन्यते≈मानै प्रजापति से सः≔वहडी ऊचुः=कहा कि वः=तुम लोगों म नः=हम खोगों में वसिष्टः इति=श्रेष्ठ है

भावार्थ ।

हे सौम्य ! इन्द्रियों में कौन श्रेष्ठ है ? इस बात के जानने के जिये आगे कहते हैं कि किसी समय में वाणी, श्रोत्र, नेत्र, मन, प्राया आदि इन्द्रियों में मगड़ा पैदा हुआ, और आपस में एक दूसरे से कहने जोगे कि हमी श्रेष्ठ हैं, हमी श्रेष्ठ हैं ऐसा बाद विवाद करते हुये ब्रह्माजी के पास गये और वहां जाकर कहा कि आप निर्णाय करदें कि हम जोगों में कौन श्रेष्ठ हैं ? इस पर प्रजापित ने कहा कि तुम जोगों के मध्य में वही श्रेष्ठ हैं जिसके निकलजाने पर यह शरीर पापिष्ठ कहलाता है।। ७।।

वाग्घोचकाम सा संवत्सरं प्रोष्याऽऽगत्योवाच कथमशकत महते

षीिवतुमिति ते होचुर्यथाऽकला अवदन्तो वाचा मार्यन्तः मार्येन पश्चन्तश्चक्षुषा शृएवन्तः । श्रोत्रेश विद्वांसो मनसा मजायमाना रेतसैवमजीविष्मेति मविवेश ह वाक् ॥

पद्च्छेदः ।

वाक्, ह, उचकाम, सा, संबत्सरं, प्रोच्य, आगत्य, उवाच, कथम्, आशकत, मत्, ऋते, जीवितुम्, इति, ते, ह, ऊचुः, यथा, आकलाः, श्चवदन्तः, वाचा, प्राग्णन्तः, प्राग्णेन, पश्यन्तः, चक्षुषा, श्यवन्तः, श्चोत्रेग्ण, विद्वांसः, मनसा, प्रजायमानाः, रेतसा, एवम्, आजीविष्म, इति, प्रविवेश, ह, वाक् ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः

श्रन्वयः

पदार्थाः

वाक् ह=तिसके पीछे वाणी उज्जाकाम=शरीर से निकली + च=भौर तत्=वह संवत्सरम्=एक वर्षतक प्रोध्य=बाहर रहकर श्चागत्य=फिर वापस भाकर उवाच=इन्द्रियों से बोली कि मत्=मेरे ऋते=विना जीवितुम्=तुम सब जीवन में कथम्=कैसे द्यशकत=समर्थ होते भये ? इति=पेसा + श्रुत्वा=सुनकर ते=वे सब इन्द्रियां ह=स्पष्टवाखी से ऊचुः=कहने सगीं कि

यथा=जैसे

श्रकलाः≔गूंगे पुरुष

वाचा=वाणी करके
अवद्ग्तः=न बोलते हुये
प्राण्न=भाष करके
प्राण्ग्नः=जीते हुये
चश्चुषा=नेत्र करके
पश्यन्तः=देखते हुये
ओञ्ज्य=कान करके
श्रुण्व=तः=सुनते हुये
मनसा=मन करके
विद्वांसः=जानते हुये
रेतसा=वीर्य करके

हुये + जीवन्ति=जीते हैं प्रवम्=वैसेही त्वाम्ऋते=तेरे विना + वयम्=इमलोग अजीविष्म=जीते रहे हैं इति=इस प्रकार + श्रुखा=डत्तर सुनकर वाणी=वाणी ह=भी प्रविवेश=शरीर में प्रवेश करती भई

भावार्थ ।

तिसके पश्चात् वाग्गी शरीर से निकली, श्रीर एक वर्षतक बाहर रहकर फिर वापस आई, श्रीर श्रपने साथी इन्द्रियों से बोली कि तुम बग्रेर मेरे कैसे जीते रहे, इस पर सब इन्द्रियों ने उस वाग्गी से कहा कि जैसे गूंगे पुरुष वाग्गी से न वोलते हुथे, नेत्र से देखते हुथे, कानसे सुनते हुथे, मन से जानते हुथे, वीर्थ से संतान उत्पन्न करते हुथे, प्राग्ग करके जीते हैं वैसेही हमलोग विना तेरे प्राग्ग करके जीते रहे, ऐसा सुनकर वाग्गी हार मानकर शरीर में फिर प्रवेश करती भई।। 🗆 ॥

मन्त्रः ६

चक्षुर्होचकाम तत्संवत्सरं मोष्याऽऽगत्योवाच कथमशकत महते जीवितुमिति ते होचुर्यथान्था अपश्यन्तश्चक्षुषा प्राणन्तः प्राणेन बदन्तो वाचा शृएवन्तः श्रोत्रेण विद्वाष्ट्रसो मनसा प्रजायमाना रेतसै-वमजीविष्मेति प्रविवेश ह चक्षुः ॥

पदच्छेदः ।

चक्षुः, ह, उद्यक्ताम, तत्, संवत्सरम्, प्रोध्य, श्रागत्य, उवाच, कथम्, श्राशकत, मत्, ऋते, जीवितुम्, इति, ते, ह, ऊचुः, यथा, श्रान्धाः, श्रपश्यन्तः, चक्षुषा, प्राण्टनः, प्राण्येन, वदन्तः, वाचा, श्र्यवन्तः, श्रोत्रेण्, विद्वांसः, मनसा, प्रजायमानाः, रेतसा, एवम्, श्रजीविष्म, इति, प्रविवेश, ह, चक्षुः ॥

श्रम्बयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

ह=इसके पीक्षे चश्चः=नेत्रेन्द्रिय उच्चक्राम=शरीर से निकली + च=भौर तत्=वह संवत्सरम्=एक वर्षतक

प्रोप्य=बाहर रह करके + च=धार श्रागत्य=फिर वापस धाकर उवाच=कहती भई कि + यूयम्=तुम खोग मत=भेरे

ऋते=विना जीवितुम्=जीने में कथम्≕कैसे श्चाशकत=समर्थ होते भवे ? इति=पेसा + श्रुत्वा=सुन कर ते=वे सबवागादि इन्द्रियां ह≔स्पष्ट ऊ चुः≔क इती भई कि यथा=जैसे द्यस्थाः≔ब्रन्धेलोग चश्चप(=नेत्र करके द्यपङ्यन्तः≔न देखते हुये प्रागोन=मास करके प्राग्निः=जीते हुये वाचा=वाकी करके बदन्तः ≔कहते हुये

श्रोत्रेण=कान करके

>२१एवन्तः=सुनते हुये

मनसा=मन करके
विद्वांसः=जानते हुये

रेतसा=वीर्य से

प्रजायमानाः=सतान उपव करतेहुये

+ जीवन्ति=जीते हैं

एवम्=वैसेही

+ वयम्=हमलोग

+ त्वाम्त्रुते=विना तरे

श्रजीविष्म=जीते रहे

हित=ऐसा

+ श्रत्वा=उत्तर सुनकर

चश्रुः=नेवांन्द्रय

प्रविवेश ह=शरीर में किर प्रवेश

करती भई

भावार्थ ।

तत्पश्चात् नेत्रेन्द्रिय शरीर से निककी, आरे एक वर्षतक बाहर रह कर फिर वापस आकर बोकी कि, हे मनादि इन्द्रियों ! विना मेरे उमलोग कैसे जीते रहे ? ऐसा सुनकर वागादि इन्द्रियों ने कहा कि जैसे अपनेश नेत्र से न देखते हुये, वागा से बोकते हुये, कान से सुनते हुये, मनसे ज्ञानते हुये, बीर्य से संतान उत्पन्न करते हुये जीते हैं, बेसेही हमलोग तुम्हारे विना प्राग्तों करके जीते रहे, ऐसा उत्तर पाकर चक्ष इन्द्रिय हार मानकर शरीर में फिर प्रवेश करती भई ॥ ६ ॥

मन्त्रः १०

श्रोत्रक होस्रकाम तत्संवत्सरं प्रोष्याऽऽगत्योवाच कथमशकत महते जीवितुमिति ते होचुर्यथा विधरा अशृएवन्तः श्रोत्रेण प्राणन्तः प्राणेन बदन्तो वाचा पश्यन्तश्चक्षुषा विद्वार्थसो

मनसा प्रजायमानाः रेतसैवमजीविष्मेति प्रविवेश ह श्रोप्रम् ॥ पदच्छेदः ।

श्रोत्रम्, इ, उचकाम, तत्, संवत्सरम्, प्रोष्य, आगत्य, खवाच, कथम्, आशकत, मत्, ऋते, जीवितुम्, इति, ते, इ, ऊचुः, यथा, बिद्याः, अश्रयवन्तः, श्रोत्रेग्या, प्राग्यन्तः, प्राग्येन, वदन्तः, वाचा, प्रयन्तः, चक्षुषा, विद्वांसः, मनसा, प्रजायमानाः, रेतसा, एवम्, आजी-विद्म, इति, प्रविवेश, इ, श्रोत्रम् ॥

पदार्थाः

श्चन्ययः

उचकाम=शरीर से निकली

+ च=भौर

तत्=वह
संबत्सरम्=एक सालतक
प्रोध्य=बाहर रहकर
आगत्य=वापस भानकर
उचाच=बोली कि

मत्=भैरे

भूते=बिना
जीवितुम्=जीने को
कथम्=कैसे

प्रशकत≕तुम सब समर्थ <u>इ</u>ये

इति≔ऐसा

ह=तरपश्चात्

श्रोत्रम्=कर्षेन्द्रिय

+ श्रुत्वा=सुनकर ते=वे वागादि इन्द्रियां इ=स्पड ऊक्षुः=वोडीं कि यथा=जैसे

बधिराः≔बहिरे ओज़ेश्च=कान से भ्रन्वयः

पदार्थाः

श्रश्र्याचन्तः=न सुनते हुये प्राग्ति=प्राय करके प्रात्त्र≑तः=जीवन निर्वाह करते हुये वाचा=वाणी से घदन्तः=कहते हुये चक्षुषा=नेत्र से पश्यन्तः=देखते हुये मनसा≔मन से विद्वांसः=जानते हुये रेतसा=वीर्य से प्रजायमानाः=संतान उत्पन्न करते हुवे + जीवन्ति=जीते हैं एवम्=वैसंही + वयम्=हमसोग + त्वाम्ऋते=तेरे विना **अजीविष्म**=जीते रहे इति=ऐसा + शुत्वा=सुनकर श्रोत्रम्=कर्षेन्द्रय प्रविवेश ह=फिर शरीर में प्रवेश

करती मई

भावार्थ ।

इसके पीछे कर्या इन्द्रिय शरीर से निकली, और वह एक सालतक बाहर रहकर और वापस आनकर बोली कि है बागादि इन्द्रियो ! मेरे विना तुम कैसे जीते रहे ? इस पर सबों ने कहा कि जैसे बहिरे कानसे न सुनते हुये, नेत्रसे देखते हुये, मनसे जानते हुये, वाश्री से कहते हुये, बीर्य से संतान पैदा करते हुये जीते हैं, वैसेही इमलोग भी तुम्हारे विना प्राणा करके जीते हैं, ऐसा सुनकर कर्या इन्द्रिय अपने को हारी मानकर शरीर में फिर प्रवेश होती भई ॥ १०॥

मन्त्रः ११

मनो होचक्राम तत्संवत्सरं पोष्याऽऽगत्योवाच कथमशकत मद्देत जीवितुमिति ते होचुर्यथा मुग्धा भविद्वांसो मनसा पार्यान्तः पार्यान वदन्तो वाचा पश्यन्तश्चश्चषा शृष्यन्तः श्रोत्रेग्य प्रजायमानाः रेत-सैवमजीविष्मेति प्रविवेश ह मनः ॥

पदच्छेदः ।

मनः, इ, उचकाम, तत्, संवत्सरम्, प्रोष्य, आगत्य, उवाच, कथम्, अशकत, मत्, ऋते, जीवितुम्, इति, ते, इ, ऊचुः, यथा, मुग्धाः, अविद्वांसः, मनसा, प्रास्तः, प्रास्तेन, वदन्तः, वाचा, पश्यन्तः, चक्कुषा, श्रयवन्तः, ओत्रेस, प्रजायमानाः, रेतसा, एवम्, आजीविष्म, इति, प्रविवेश, इ, मनः ॥

पदार्थाः पदार्थाः श्चन्धयः श्चान्वयः ह=तिसके पीबे उवाच=कहता भवः कि मत्≕मेरे ग्रनः=मन ऋते=विना उश्वकाम=शरीरसे निकसा + च=श्रौर जीवितुम्=जीने में कथम्=कैसे तत्=वह **अशकत**⇒तुम सब समर्थ होते संवत्सरम्=एक वर्षतक प्रोध्य≔बाहर रहकर असे १

इति=ऐसा

श्चागत्य≔फिर वापस श्चानकर

+ श्रुत्वा=सुनकर
ते चे वागादि इन्द्रियां
ह =स्पष्ट
ऊ खुः=कहने सर्गा कि
यथा=अैसे
सुग्धाः=मृद्रलोग
सनसा=मन करके
अविद्वांसः=न जानते हुये
प्राण्न=प्राण्य करके
प्राण्न=द्र्यों करके
वदन्तः=चोत्तते हुये
खश्चुषा=नेत्र करके
प्रयुषा=नेत्र करके

श्रोत्रेश्=कान करके

> अत्रय्वन्तः = सुनते हुये

देसता = वीर्षं करके

प्रजायमानाः = स्तान वरपञ्च करते हुये

+ जीवन्ति = जीते हैं

एवम् = वैसे ही

+ वयम् = हमकोग

श्रजीविष्म = जीते रहे

हित = हस प्रकार

+ श्रत्या = वस्तर सुनकर

मनः = मन

ह = भी

प्रिष्ठिश = श्ररीर में प्रवेश करता

भया

भाषार्थ ।

इसके पीछे मन शरीर से निकला, झौर एक वर्ष पर्यन्त बाहर रहा, झौर फिर वापस झानकर कहने लगा कि तुम सब मुक्त विना केंसे जीते रहे ? यह सुनकर वे सब बागादि इन्द्रियां कहने लगीं कि, जैसे मृह पुरुष मन करके न जानते हुये, पर बागाी करके बोलते हुये, नेत्र करके देखते हुये, कान करके सुनते हुये, वीर्य करके संतान को उत्पन्न करते हुये जीते हैं, बेसेही हम सब प्राग्ण करके जीते रहे हैं, ऐसा सुनकर मन भी आपने को हारी मानकर शरीर में प्राग्ण करगया।। ११॥

मन्त्रः १२

रेतो होचकाम तत्संवत्सरं पोष्याऽऽगत्योवाच कथमशकत महते जीवितुमिति ते होचुर्यथा क्रीवा श्रमजायमाना रेतसा प्राग्णन्तः पा-ग्णेन वदन्तो वाचा पश्यन्तश्चक्षुषा शृपवन्तः श्रोत्रेण विद्वार्थसो मनसैवमजीविष्मेति मिववेश ह रेतः ॥

पदार्थाः

पद्च्छेदः।

पदार्थाः ध्रास्वराः श्रन्वयः + ऋथ=इसके पीछे रेतः=वीर्य ह=भी उच्चक्राम=शरीर से निकलगया + च=श्रौर तत्≔वह संवत्सरम्=एक वर्षतक प्रोध्य=बाहर रहकर श्चागत्य=िकर वापस श्चानकर उवाच=कहता भया कि + यूयम्=तुमस्रोग मत्=मेरे ऋते≕विना जीवितुम्=जीने में कथम्=कैसे अशकत=समर्थ होते भये ? इति=ऐसा + श्रुत्वा=सुनकर ते≕वेसब ह=स्पष्ट ऊचुः=कहते भये कि यथा=जैने क्रीबाः=नपुंसक लोग

रेतसा=वीर्य करके श्रप्रजायमानाः=संतान न बत्पन्न करते प्रारोन=प्राय करके प्राणन्तः=जीते हुये वाचा=वाणी करके वदन्तः≔कहते हुये चक्षुषा=नेत्र करके पश्यन्तः=देखते हुये श्रोत्रेग=कान करके श्यग्वन्तः=सुनते हुये मनसा=मन करके विद्वांसः≔जानते हुये + जीवन्ति=जीते हैं एवम्=इसी तरह + वयम्≔इमलोग श्रजीविष्म=जीते हैं इति=ऐसा + श्रुत्वा=उत्तर सुनकर रेतः≔चीर्य ह=भी प्रविवेश=शरीर में प्रवेश करता भया

बृहदार्ययकोपनिषद् स०।

भाबार्थ ।

इसके पीछे बीर्य शरीर से निकला, और वह एक वर्षतक बाहर रहा, फिर वापस आनकर पूछता भया कि है वागादि इन्द्रियो ! तुम कोग मेरे विना कैसे जीते रहे ? उन सबों ने उत्तर दिया कि जैसे नपुंसक पुरुष वीर्य करके संतान न उत्पन्न करते हुये वागाि से कहते हुये, नेत्र से देखते हुये, कानसे सुनते हुये, मनसे जानते हुये जीते हैं, वैसेही इमलोग भी प्राग्ण करके जीते रहे, ऐसा सुनकर वीर्य भी अपने को हारी मानकर शरीर में प्रवेश करता भया ॥ १२ ॥

मन्त्रः १३

श्रथ ह माण उत्क्रिमिष्यन्यथा महासुहयः सैन्धवः पद्गीशशंक्-न्संद्रहेदेवछ हैवेमान्याणान्संववर्ह ते होचुर्मा भगव उत्क्रमीने वै शक्ष्यामस्त्वहते जीवितुमिति तस्यो मे बर्लि कुरुतेति तथेति ॥ पदच्छेदः।

भ्राथ, ह, प्राग्यः, उत्क्रमिन्ध्यन्, यथा, महासुह्यः, सैन्धवः, पङ्गीश-शंकून्, संबृहेत्, एत्रम्, ह, एत्र, इमान्, प्राग्यान्, संववर्ह, ते, ह, ऊचुः, मा, भगवः, उत्क्रमीः, न, तै, शक्ष्यामः, त्वत्, ऋते, जीवितुम्, इति, तस्य, उ, मे, बिलम्, कुरुत, इति, तथा, इति ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

श्रम्बयः पदार्थाः
श्रम्थ ह=तिसके पीछे
यथा=जैसे
सैन्धवः=सिन्धुदेश का
महासुहयः=महाबिष्ठ सुन्दर घोड़
पङ्गाशशकून्=मपने मेकों को
संबृहेत्=उलाड़ डाखे
पदाम्=तैसेशी
प्राणान्=गगादि हिन्दगों को
ह वै=निरवय करके
प्राणः=माखावा

भग्वयः प्रायाः
संवयर्द=उनके उनके स्थानों से
उत्तादकर
उत्कामिध्यन्=संग सेचलने सगा
ह=तव
ते=वे बागादि इन्द्रियां
ऊचुः=कहनेसगों कि
भगवः=हे पूज्यमाख !
मा=मत तू
उत्कामीः=चरीर से बाहर निकल

प्राते≕विना मे=मेरे को जीवितुम्=जीने के विये वितम्=पवि न वै=कभी नहीं कुरुत=दो शुक्यामः=इम सब समर्थ होंगे इति=ऐसा + श्रुत्वा=सुनकर + तदा=तब + ते=वे बागादि इन्द्रियां + प्राताः=प्राया ने + उवाच=उत्तर दिया कि तथा=वैसाही ः स्वार्थः + श्रकुर्वन्⇒करती भई भावार्थः। तस्य≕तिस

सबके पीछे जैसे सित्धुदेश का महाबिल छुन्दर घोड़ा अपने मेखों को उखाड़ डाले तैसेही बागादि इन्द्रियों को प्राग्यवायु उनके उनके स्थानों से उखाड़कर अपने संग के चलने लगा तब वे बागादि इन्द्रियां कहने लगी कि हे पूज्यप्राग् ! तू शरीर से बाहर मत निकल तुम्म विना हमलोग जीने में असमर्थ होंगे तब प्राग्यने उत्तर दिया कि मेरे को तुम सब बिल दो ऐसा सुनकर बागादि इन्द्रियां वेसेही करती मई ॥ १३॥

मन्त्रः १४

सा इ वागुवाच यद्वा अइं विसिष्ठास्मि त्वं तद्दिसिष्ठोऽसीति यद्वा अइं मित्रष्ठाऽस्मि त्वं तत्मितिष्ठोऽसीति चक्षुर्यद्वा अइछं संपद्स्मि त्वं तत्सं-पद्सीति भोत्रं यद्वा अइमायतनमस्मि त्वं तदायतनमसीति मनो यद्वा अई प्रजातिरस्मि त्वं तत्प्रजातिरसीति रेतस्तस्यो मे किमकं किं वास इति यदिदं किंचाऽऽश्वभ्य आकृमिभ्य आकीटपतक्रेभ्यस्तत्तेऽस्मा-पोवास इति न इ वा अस्यानसं जग्धं भवति नानसं प्रतिग्रहीतं य एवमेतदनस्यासं वेद तदिद्वाछसः श्रोत्रिया अशिष्यन्त आचाम-न्त्यतामन्त्येतमेव तदनग्नं कुर्वन्तो मन्यन्ते ॥

इति मथमं ब्राह्मणम् ॥ १॥ पदच्छेवः।

स, इ, वाग्, ख्वाच, यत्, वे, आहम्, विसष्ठा, आस्मि, त्वम्, तत्, विसष्ठः, आसि, इति, यत्, वे, आहम्, प्रतिष्ठा, आस्मि, त्वम्, तत्, प्रतिष्ठः, ग्रान्वराः

ष्ठासि, इति, चक्षुः, यत्, वे, श्रहम्, संपत्, ब्रास्मि, स्वम्, तत्संपत्, क्रासि, इति, श्रोश्रम्, यत्, वे, ब्रहम्, श्रायतनम्, श्रास्मि, त्वम्, तदा-यतनम्, श्रासि, इति, मनः, यत्, वे, श्रहम्, प्रजातिः, श्रास्मि, त्वम्, तदा-यतनम्, श्रासि, इति, रेतः, तस्य, च, मे, किम्, श्राश्रम्, किम्, वासः, इति, यत्, इदम्, किंच, श्रा, श्वभ्यः, श्रा, क्रामिभ्यः, श्रा, कीटपत-क्रेभ्यः, तत्, ते, श्रक्षम्, श्रापः, वासः, इति, न, ह, वा, श्रास्य, श्रान्तम्, ज्यवम्, भवति, न, श्रन्तमम्, प्रतिगृहीतम्, यः, एवम्, एतत्, श्रानस्य, श्रास्य, श्रात्मानम्, क्रवन्तः, श्राचा-मन्ति, श्राशित्वा, श्राचामन्ति, एतम्, एव, तत्, श्रनग्नम्, क्रवन्तः, मन्यन्ते।।

पदार्थाः

+ तेषु=उन सब में से

+ बिलदानाय=बिल देने के लिये

+ प्रथमम्=सब के पहिले
सा=वह
वाक्=वाणी
ह=स्पष्ट
उवाच=बोली कि
यत् वै=यणि
श्रहम्=में
विसिष्ठा=शेरों से शेष्ठ
श्रहम=हं

+ तथापि=पर

+ प्राण=हे प्राया !
त्वम्=त्
तद्वसिष्ठः=उससे बानी मेरे से

भी श्रेष्ठ

श्रसि=है इति=इसी प्रकार

पदार्थाः श्रन्वयः + चश्चः≔नेत्र ने + उवाच=कहा यत् चा=यद्यपि श्रहम्=में चश्चः≔नेत्र प्रतिष्ठा=श्रीरों की प्रतिष्ठा श्र€म=इं + तथापि≕पर + प्राण=हे प्राच ! त्वम्=तू तत्प्रतिष्ठः=उसकी यानी मेरी भी प्रतिष्ठा श्रासि=है इति=इस प्रकार + श्रोत्रम् } = कर्य बोला कि उवाच यत् वै=यद्यपि

ऑत्रम्≐कर्ण

संपत्रूप हुं यामी संपत्= विद्यहण करने की शक्ति देनेवासा

ग्रस्मि≕हं

+ तथावि=पर

+ प्राण=हे प्राण !

त्वम्≕तृ

तत्संपत्=स्वतः वेद प्रहतः शक्तिवासा

श्चासि≕है

इति=इसी प्रकार

+ मनः=मन

+ उत्ताच=बोका कि यत् वै=यवि

श्रहम्≕में

सनः=मन

भायतनम् } =सबका भाभवं हूं अस्मि

+ तथापि=पर

+ प्राण=हे प्राण !

त्बम्⇒तू

तदायतनम्=उसका बानी मेरा भी

भायतन

ग्रसि≔है इति=ेसेही

+ रेतः=वीर्थ

+ उवाच≔बोबा कि

यत् वै=यद्यवि

शहम्=में

रेतः=धीर्यं

प्रजातिः=प्रजनन शक्रिवाका

द्यस्मि=इं

+ तथापि=पर

+ प्राण=हे माख ! त्वम्=तृ

तत्प्रजातिः=डसका वानी मेरा भी प्रजनन शक्तिवाला

म्रासि इति=है

+ प्रायः=प्राय

+ उद्याच=बोला कि

+ यदि=यदि

+ पवम्=तुम्हारा पेसा कहना

+ साधू=डीक है तो

+ बृत=तुम लोग कहा कि

तस्य उ≖उस

मे≔मुक्त प्राया का

श्रद्गम्=भोजन

किम्=च्या है ? + च=भीर

सासः=वस

किम्=क्या है ?

इति=यह सुनकर ते=वे सब बागादि

+ झाडुः≔बोक्षे कि

+ लेंके=कोक में यत्≕मो

किच=कु

इद्म्=यह यानी

श्राएवभ्यः=कुतों तक

धाक्तिभ्यः≔कृमियों तफ

ग्राकीटप- } ⇒कीट पतंगीं तक तंगेभ्यः }

+ शस्ति≕है तत्=वह सर्व ते भोगः=तेराही भोग + अस्ति≔है + ख=ब्रौर श्चापः=जन्न वौसः=तेरा वस्र है यः≕जो उपासक एवम्≔इस प्रकार श्चनस्य=प्राख के पतस्≔इस द्याक्रम्=चन्न यानी भोग को वेद=जानता है + तस्य=उसको प्रतिगृहीतम्=प्रतिमह यानी गजा-दि दान अनन्नम्=धन्नसे भिन्न यानी भोग वस्तु से पृथक् न≕नहीं है यानी उस में कोई दोष नहीं है + च=भौर तत्=वैसेही श्चस्य=इस प्राण का जग्धमू⇒खाया हुमा

अनक्रम्=प्रवसे मिस्र वानी भोज्य वस्तु से भिन न ह थै= { निश्चयं करके नहीं न ह थै= { है यानी सब अन्न-रूपही है + तस्मात्≔इस विवे श्रो।त्रियाः=वेदपाठी विद्वांसः=बाह्यय भोजन करने की इच्छा करते हुये यानी भोजन करने श्राचामन्ति=जन्नसे श्राचमन करते हैं + च=श्रीर श्रशित्वा=भोजन करके श्चाचामन्ति=जबसे श्राचमन करतेहैं तत्=ऐसा करने में विद्वांसः=विद्वान् स्रोग मन्यन्ते=समभते हैं कि + वयम्=हम लोग एतम्=इस

श्चनम्=प्राय को

श्रनग्नम्=वस्रसहित कुर्वन्तः=करते हुए

मन्यामहे=समकते हैं

भावार्थ ।

हे सौम्य ! तिसके पीछे, वागा बोली कि, हे प्रागा ! यद्यपि मैं झौरों से श्रेष्ठ हूं परन्तु आप मेरे भी झायतन हैं किर नेत्र बोला कि यद्यपि मैं झौरों के लिये प्रतिष्ठा हूं परन्तु हे प्रागा ! तू मेरी भी प्रतिष्ठा है, तेरेही कृपा करके मैं प्रतिष्ठा-संगन्न हूं इसके पीछे मन बोला कि हे प्रागा ! यद्यपि मैं

औरों के िलये आयतन हूं परन्तु तूही मेरा आयतन है, कर्ण ने भी ऐसाही कहा यद्यपि मैं झौरों के लिये संपत्तिरूप हूं यानी झौर पुरुषों को वेदमहुण करने की शक्ति देनेवाजा हूं, पर हे प्राणा ! तु स्वतः वेदप्रहस्स शक्तित्राला है, मनने कहा हे प्रारा ! यद्यपि में सबको श्राश्रय देता हूं पर तू मेरा भी श्राश्रय है, ऐसंही वीर्य ने कहा यद्यपि में प्रजनन शक्तिवाला हूं पर तू हे प्रासा ! मेरा भी उत्पादक है, इस प्रकार सब इन्द्रियों की बिनतियां सुनकर प्रश्या ने कहा हे इन्द्रियगगा ! बताबो मेरा अन्न और बस्न क्या होगा ? तब इन्द्रियों ने उत्तर दिया कि हे प्रारा ! हे स्वामिन ! कुत्तों से, कुमियों से, कीट-पतंगों से लेकर जो कुछ इस पृथ्वी पर प्रार्गीमात्र हैं उनका जो भोग हैं वही भोग तुन्हारा भी होगा, श्रीर जल तुन्हारा वस होगा जो उपासक इस प्रकार प्रारा की महिमा को जानता है वह कभी अन्न से शुन्य नहीं होता है, श्रीर न प्रतिप्रह का कोई दोष उसको जगता है ऐसे जानते हुये श्रोत्रियगण भोजन करने के पहिले और पीछे, जल का आचमन करते हैं, ऐसा उनका करना मानी प्राण्यको अन्न जल देना है, और नम्न नहीं करते: हैं यानी सेवा सत्कार करते हैं।। १४॥

इति प्रथमं ब्राह्मग्रम् ॥ १ ॥

ऋथ द्वितीयं बाह्यग्म।

मन्त्रः १

स्वेतकेतुई वा आरुणेयः पश्चालानां परिषद्माजगाम स आज-गाम जैवलि नवाइएं परिचारयमाएं तमुद्दीक्याभ्युवाद कुमारा ३ इति स भो ३ इति मतिशुश्रावानुशिष्टोन्वसि पित्रेत्योमिति होवाच ॥ पवच्छेवः।

श्वेतकेतुः, ह, वा, आरुणेयः, पञ्चालानाम्, परिषद्म्, आजगाम सः, आजगाम, जैवलिम्, प्रवाहण्यम्, परिचारयमाण्यम्, तम्, उदीक्ष्म, अभ्युवाद, कुमारा, इति, सः, भोः, इति, प्रतिशुत्राव, अनुशिष्टः, श्चन्वसि, पित्रा, इति, 🛶, इति, ह, उवाच ॥

श्चान्सयः

पदार्थाः श्राम्बयः श्चारुरोयः=भारुविका पुत्र

श्वेतकेतुः=श्वेतकेतु

ह वै=निरचय करके

पञ्चासानाम् १ पञ्चासदेश के विद्वानीं परिषद्म् ऽ =की सभा में

श्राजगाम=जाता भया

+ तत्र≔वहां

+ जित्वा=समाको जीतकर फिर सः≔वह श्वेतकेत

जैबलिम्⇒जीवलके दुत्र परिचार- । अपने नौकरीं करके

यमाण्यम् 🕽 ⁼सेष्यमान

प्रवाह्याम्=प्रवाह्य राजा के पास धाजगाम=जाता भया

+ तदा≔तव

+ सः=वह राजा

तम्=इसको उदीक्ष्य=देखकर

कुमाराः≔दे कुमार !

भावार्ध ।

इति=ऐसा **अ**भ्युचाद=कहता भया + **श्व**≃श्रीर सः≔बह श्वेतकेत् भोः≔हे भगवन ! इति=ऐसा सम्बोधनकरके प्रतिशुश्राव=उत्तर दिया इति=तिस पर + प्रवाह्याः=प्रवाह्य राजा उवाच=पूछता भया + जु≔क्या वित्रा=तृ विता करके श्रनुशिष्टः } =शिक्षित किया गयाहै?

पदार्थाः

ह=तब + श्वेतकेतुः=श्वेतकेतु ने इति=ऐसा सुनकर खबाख=उत्तर दिया कि ð:=₹İ

हे सौम्य ! किसी समय आकृतिशका पुत्र रवेतकेतु पञ्चालदेश के विद्वानों की सभा में जाता भया भीर उस सभा को जीतकर वह जैबलि के पुत्र राजा प्रवाहगा के पास भी गया जो अपनेक सेवकों करके सेवित होरहा था, राजकुमार रवेतकेतु को एक तुच्छ दृष्टि से देखकर सम्बोधन किया, धारे लडके ! इसके जवाब में श्वेतकेतु ने तन्जन कहा है भगवन् ! इस पर राजा प्रवाहरा ने पूछा हे श्वेतकेतु ! क्या तू पिता करके राशिधित राष्ट्रा है ? उसने उत्तर दिया हां हुआ हूं पृद्धिये ।। १ ।।

मन्त्रः २

वेत्थ यथेमाः प्रजाः प्रयत्यो विप्रतिपद्यन्ता ३ इति नेति नेति होवाच वेत्थो यथेमं लोकं पुनरापद्यन्ता हित नेति हैवोवाच वेत्थो यथाऽसौ लोक एवं बहुभिः पुनः पुनः प्रयद्भिनं संपूर्यता ३ इति नेति हैवोवाच वेत्थोयितित्थ्यामाहुत्याछं हुतायामापः पुरुषवाचो भूत्वा समुत्याय वदन्ती १ इति नेति हैवोवाच वेत्थो देवयानस्य वा पयः प्रतिपदं पितृयाणस्य वा यत्कृत्वा देवयानं वा पन्थानं प्रतिपद्यन्ते पितृयाणं वाऽपि हि न ऋषेर्वचः श्रुतं देस्रती अष्टृणवं पितृ-णामहं देवानामुत मर्त्यानां ताभ्यामिदं विश्वमेजत्समेति यदन्तरा पितरं मातरं चेति नाहमत एकं च न वेदोति होवाच ।।

पदच्छेदः ।

वेतथ, यथा, इमा:, प्रजाः, प्रयत्यः, विप्रतिपद्यन्ते, इति, न, इति, न, इति, ह, उवाच, वेत्थ, उ, यथा, इमम्, जोकम्, पुनः, आपद्यन्ते, इति, न, इति, ह, एव, उवाच, वेत्थ, उ, यथा, असौ, जोकः, एवम्, बहुभिः, पुनः, पुनः, प्रयद्भिः, न, संपूर्यते, इति, न, इति, ह, एव, उवाच, वेत्थ, उ, यतिथ्याम्, आहुत्याम्, हुतायाम्, आपः, पुरुषवाचः, भूत्वा, समुत्थाय, वदन्ती, इति, न, इति, ह, एव, उवाच, वेत्थ, उ, देवयानस्य, वा, पथः, प्रतिपद्दम्, पितृयाग्यास्य, वा, यत्, कृत्वा, देवयानम्, वा, पत्थानम्, प्रतिपद्दम्, पितृयाग्याम्, वा, आपि, हि, न, ऋषः, वचः, श्रुतम्, हे, सुती, अश्युग्वम्, पितृयाग्याम्, असम्, देवानाम्, जत, मर्त्यानाम्, ताभ्याम्, इदम्, विश्वम्, एअत्, समेति, यदन्तरा, पितरम्, मातरम्, च, इति, न, आहम्, अतः, एकम्, चन, वेद, इति, ह, चवाच ॥

द्मन्तयः पदार्थाः मन्त्रयः पदार्थाः + प्रवाह्यः=प्रवाह्य राजा + यदि=पदि + उदाच=रवेतकेतुसे पृक्ताहै कि वेश्य=तृ जानता है तो

यथा=जिस प्रकार . इमाः≔ये प्रजाः≔प्रजार्थे प्रयत्यः=मरकर जानेवासी विप्रतिपद्यन्ते= { भिन्न भिन्न कोकों को अपने कर्मानु-सार जाती हैं + ब्रवीतु=कह + सः उवाच=उसने उत्तर दिया कि न इति=नहीं ऐसा न इति=नहीं ऐसा + वेद्मि=जानता हूं मैं + पुनः≕फिर + प्रवाह्णः=प्रवाह्ण राजा + उवाच=पूड्ता भवा कि यथा=स्यों प्रजाः=ये प्रजा इमम्=इस लोकम्=लोक को पुनः=िफर आपद्यन्ते इति=जीट वाती हैं ख=₹या वेत्थ≖त् जानता है ह=त**व** + श्वेतकेतुः=स्वेतकेतु ह=स्पष्ट + उदाच=बोबा कि एव न≔नहीं इति=ऐसा + विद्या=जानता हुं मैं पुनः≕फिर + प्रवाह्यः=प्रवाह्य राजा

+ पप्रच्छ=पूज्ता भया कि यथा=म्यॉ न=नहीं असौ=वह लोकः=लोक बहुभिः=बहुतसी पुनः पुनः≔बार बार एवम्=इस प्रकार प्रयद्भिः=मरनेवाली प्रजा करके संपूर्यते=पूर्ण होता है उ≔क्या वेत्थ≕तू जानता है ? + श्वेतकेतुः=श्वेतकेतु ने ह=स्बष्ट उवाच=उत्तर दिया कि इति=ऐसा न≕नहीं + वेश्वि≔जानता हूं मैं + प्रवाह्यः=प्रवाह्य राजा ने पुनः≕फिर + उवाच=पूछा कि यतिथ्याम्=कितनी **ब्रा**हुत्याम्=ब्राहुतियों के हुतायाम्≔देने पर आपः=जलरूपी जीव पुरुषवाचः=पुरुषवाचक भूत्वा=होकर + च=घौर समुत्थाय=उठकर वदन्ति=योकने क्रगता है ड≕गा

इति=पेसा घेत्थ=त् जानता है इति=इस पर + श्वेतकेतुः=स्वेतकेतु उवाच=बोबा कि ह एव≕निश्चय करके इति=ऐसा न≕नहीं + वेद्मि≕जानता हुं मैं + प्रवाहगः=प्रवाहग राजा + पप्रच्छ=ितर पृष्ठता भया कि उ≕क्या देवयानस्य=देवयान पथः=मार्गके प्रतिपद्म्=साधन को वा≔प्रथवा पितृयानस्य=पितृयान पथः=मार्ग के + प्रतिपद्म्=साधन को यत्=जिसको कृत्वा=प्रहण करके देवयानम्≔देवयान पन्थानम्=मार्ग को वा=ष्रथवा पितृयाग्रम्=पितृयान पन्थानम्=मार्ग को प्रतिपद्यन्ते=जोक प्राप्त होते हैं घेत्थ=तृ जानता है + अत्र≔इस विषय में द्यापे वा≕क्या त्वम्=तुमने

प्रावेः≔ऋषि के द्यसः≔वाक्य को स=नडीं भृतम्≔सुना हुचा है श्रहम्≕भें इति≕ऐसे द्धे=दो सर्ता=मार्गी को श्रश्यावम्=सुन चुका हूं + एका=एक मार्ग पितृगाम्=पितरीं का + अस्ति=है यानी उस मार्ग से पितरलोक को जाते हैं च=श्रीर द्वितीया=वृसरी मार्ग देवानाम्=दंनें का + अस्ति=है यानी इस मार्ग से देवलोक को जाते हैं उत≕परन्तु + इमे≔ये सृती=दोनों मार्ग मर्त्यानाम्=जीवां के हैं ताभ्याम्=इन्हीं करके इदम्≔यह विश्वम्≕सारा संसार समेति=जाता है + ते≕ये द्वे=दोनों स्ती=मार्ग मातरम्≔माता यानी पृथ्वी

पितरम्=पिता यानी स्वर्ग

€85

यदन्तरा=बोक के मध्य में है इति=इस पर ष्वेतकेतुः=श्वेतकेतु ने ह=स्पष्ट उवाच⊐कहा

ब्रहम्=मैं श्रतः≔इन प्रश्नों में से पकम् चन≐एकको भी वेद=जानता हं

भाषार्थ ।

हे सौम्य ! राजा प्रवाहण स्वेतकेतु से पृद्धते हैं कि, हे कुमार ! जहां से प्रजा मरकर अध्यपने कर्मानुसार भिन्न भिन्न जीकों को जाती हैं क्या तू जानता है ? श्वेतकेतु ने उत्तर दिया में नहीं जानता हूं फिर राजा प्रवाहरण पूछते हैं कि जिस तरह से ये जीव इस क्लोक को फिर स्त्रीट आते हैं क्या तू जानता है ? श्वेतकेतु ने उत्तर दिया मैं नहीं ज्ञानता हूं, फिर राजा पृद्धते हैं कि हे कुमार ! जरा मरगा दुःखीं से मर कर परलोक को जीव जाते हैं झौर वहां रहते हैं तो वह लोक क्यों नहीं जीवों करके भर जाता है ? श्वेतकेतु ने उत्तर दिया मैं नहीं जानता हूं, फिर राजा में पूछा हे कुमार! कितनी बार इस्रीन में आहुति देने से जल से लिपटा हुआ जीव उठकर बोलने लगता है यानी पुरुष होजाता है, क्या तू जानता है ? श्वेतकेतु ने उत्तर दिया मैं नहीं जानता हूं, फिर राजा ने पूछा हे श्वेतकेतु, हे इत्मार ! देवयान श्रीर पितृयान मार्ग का साधन कौनसा है ? तू जानता है जिस करके विधिपूर्वक देवयान या पितृयान मार्ग को जीव जाते हैं यदि कोई शङ्का करे कि ऐसे मार्ग हैं नहीं तो इसपर राजा वेद का प्रमागा देता है झौर कहता है कि क्या आपने वेद के उस वचन को नहीं सुना है ? जो इन दोनों मार्गों को बताता है. मैंने तो सुना है एक वह मार्ग है जो जीवों को पितृलोक में लेजाता है, और दूसरा वह मार्ग है जो जीवों को देवजोक में क्षेजाता है. यही दो मार्ग हैं जिन करके जीव जी जाते हैं, पितारूपी बुलोक है, मातारूपी पृथिवीकोक है, इन्हीं दो कोकों के सध्य में ये दोनों मार्ग विद्यमान है, क्या तू इन सब बातों को जानता है ? स्वेतकेतु ने उत्तर दिया इनमें से मैं किसीको नहीं जानता हूं ॥ २ ॥

मन्त्रः ३

श्रयेनं वसत्योपमन्त्रयाश्वकेऽनाहत्य वसति कुमारः परुद्राव स भाजगाम पितरं तथ्य होवाचेति वाव किल नो भवान्पुरानुशिष्टान-बोचतेति कथथ्य सुमेष इति पश्च मा प्रश्नान् राजन्यबन्धुरप्राक्षीचतो नैकंचन वेदेति कतमे तहतीम इति ह मतीकान्युदाजहार ॥

पदच्छेदः ।

अथ, एनम्, वसत्या, उपमन्त्रयाभ्वके, अनाद्दय, वसितं, कुमारः, प्रदु-द्राव, सः, आजगाम, पितरम्, तम्, ह, उवाच, इति, वाव, किल, नः, भवान्, पुरा, अनुशिष्टान्, अवीचत, इति, कथम्, सुमेधः, इति, पश्व, मा, प्रश्नान्, राजन्यवन्धुः, अप्राक्षीत्, ततः, न, एकम्, चन, वेद, इति, कतमे, ते, इति, इमे, इति, ह, प्रतीकानि, उदाजहार ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

श्चन्यः पदार्था
श्चर्थ=इसके उपरान्त
पनम्=रवेतकेतु से
घसत्या=श्चरो निकट बास
करने के लिये
+ प्रवाहणः=राजा प्रवहण ने
उपमन्त्रयाश्चके=कहा
+ परन्तु=परन्तु
सः=वह
कुमारः=कुमार रवेतकेतु
चस्तिम्=वास को
श्चराड्य=निरादर करके
प्रदुद्वाव=अपने घरको चला
गया

पितरम्=पिता के पास
श्राजगाम=पहुचा
+ च=श्रोर
ह=स्पष्ट
तम्=उस भपने पिता से
इति=ऐसा
उचा हने बगा कि
पुरा=पहिसे
भवान्=भापने
नः=मुक्को
अञ्जीचत=कहा था
वावकिल=स्या यह बात नहीं है
+ पिता=पिताने

बृहदारययकोपनिषद् स०।

+ उवाच=कहा चन≃भी प्रश्न की स्रमेघः=हे मेरे बुद्धिमानू **भ**हम्=मेंने पुत्र ! न≕नहीं **कथम्=कै**से चेद्≕जान पाया इति=ऐसा तु कहता है + पिता≕पिता + पुत्रः=पुत्र त्रवास=बोबा ते=चे प्रश्न + उचाच=बोला कतमे≔कौनसे हैं राजन्यबन्धुः=प्रवाह्य राजा मा≔मुकसे +तदा≔तब | + पुत्रः उवाच≔पुत्र कहता भवा **पञ्च**=पांच प्रश्नान्=प्रश्नों को ते≔वे प्रश्न अप्राक्षीत्=पृष्ठता मया इमे≕ये हैं इति=ऐसा कहकर + परन्तु≔परन्तु ततः≔डनमें से प्रतीकानि=सब प्रश्नों को एकम्=एक उदाजहार=कहता भया

भावार्थ ।

हे सौम्य ! इसके पश्चात् राजा प्रवाहता ने श्वेतकेतु से अपने निकट रहने के जिये कहा, परन्तु वह कुमार राजा के वचन को निरादर करके अपने घर चलागया, और अपने पिता के पास जाकर ऐसा कहने लगा कि आपने पहिले कहा था कि तू भलीप्रकार शिक्षित हुआ है, यानी सब विद्या का ज्ञाता होगया है, क्या यह बात ऐसी नहीं है, पिताने कहा हे मेरे प्रिंय, पुत्र ! तेरे ऐसे कहनेका क्या कारण है ? पुत्र ने उत्तर दिया कि प्रवाहण राजाने मुक्ससे पांच प्रश्न किये, पर मैंने एकका भी उत्तर न जान पाया इस पर पिताने पूछा वे प्रश्न कीन से हैं, तब पुत्र ने कहा वे प्रश्न ये हैं, ऐसा कहकर प्रश्नों को कहता भया ॥ ३॥

मन्त्रः ४

स होवाच तथा नस्त्वं तात जानीथा यथा यदहं किंचन वेद

सर्वमइं त्युभ्यमवोचं मेहि तु तत्र प्रतीत्य ब्रह्मचर्य वत्स्याव इति भवानेव गच्छत्विति स भाजगाम गौतमो यत्र प्रवाहणस्य जैवले रास तस्मा भासनमाहृत्योदकमाहारयाश्वकाराथ हास्मा भर्घ्य च-कार तथ्र होवाच वरं भगवते गौतमाय दश्च इति ॥

सः, ह, जवाच, तथा, नः, त्वम्, तात, जानीथाः, यथा, यत्, आहम्, किंचन, वेद, सर्वम्, अहम्, तत्, तुभ्यम्, अवोचम्, प्रेहि, तु, तत्, प्रतीत्य, ब्रह्मचर्यम्, वत्त्यावः, इति, भवान्, एव, गच्छतु, इति, सः, आजगाम, गौतमः, यत्र, प्रवाहगास्य, जैवलेः, आस, तस्म, आस्तम्, आह्त्य, उद्कम्, आहारयाञ्चकार, अथ, ह, अस्म, अर्घम्, प्रकार, तम्, ह, जवाच, वरम्, भगवते, गौतमाय, द्दा, इति ॥ अस्वयः पदाथोः । अन्वयः पदाथो

ह≔तब सः=वह पिता उवाच=बोला कि तात≔हे पुत्र ! यथा=जैसा यत्=जो कि चन=कुछ ग्रहम्=मै वेद=जानता हूं तथा=वैसाही तत्=उस सर्वम्=सबको श्रहम्≕रें तुभ्यम्=तेरे बिये श्रवोचम्=कह चुकाहूं नः=हमको त्वम्=तुम

इति≂ऐसा जानीधाः=समको तु≔श्रव प्रेहि=भावो तत्र≔इस राजा के पास प्रतीत्य≔चस कर ब्रह्मचर्यम्=ब्रह्मचर्य वतको धारण कर 🕳 वत्स्यावः≔वहां बास करगे + इति=ऐसा सुन कर + सः≔वह पुत्र + आह≔बोलां कि भवान् एव≕प्राप ही गच्छृतु=जार्ये इति≕तव गीतमः≔गीतम

तत्र≔वडां द्याजगाम=जाता भया यश्र≔जहां जीवलाः=जीवल का पुत्र प्रवाहणस्य=प्रवाहण राजा की + सभा श्रास=सभा थी राजा=राजा तस्मै=उस गौतम उदालक के लिये **श्रासनम्**=श्रासन **आह**त्य=देकर उदकम्=जल

आहारयां- } नौकरों से मँगवाता चकार } = भया

श्रथ ह्≕तिसके पश्चात्

के जिये श्रदयम्= पर्म्य चकार, चेता भवा ह≔घौर तम्=उससे उवाच=बोला कि भगवते=हे प्डय, गौतमाय=गौतम ! +तुभ्यम्=तेरे विये वरम्=श्रेष्टवर श्रहम्≕में द्दाः=देताहूं वानी देने को तैयार हं

इति-ऐसा

+ उवाच=कहा

अस्मै=उस गीतम आख्या

भाषार्थ । हे सौम्य ! उदालक भृषि पुत्र के वचनको सुनकर कहने लगे कि हे पुत्र ! जिस प्रकार भ्योर जो कुछ ज्ञान में जानता था उन सबको तुम से मैं कह चुकाहूं तुमसे बढ़कर मुम्त को कौन प्रिय है जिसके लिये मैं विद्या को छिपा रखता राजाने जो जो प्रश्न तुम से पूछे हैं और तुमने मुक्त से कहा है उन्हें मैं नहीं जानता हूं यदि तुम उनको जा-नना चाहते हो तो मेरे साथ चलो राजा के निकट ब्रह्मचर्य वत धारगा करते हुये बास करेंगे झौर उससे विद्याको प्रहुण करेंगे सहके ने कहा आपही जाइये, में तो राजाके निकट नहीं जाऊंगा, तब आहिशा का पुत्र गौतम यानी उद्दालक जीवलके पुत्र प्रवाहण राजाकी सभा में पहुँचा राजाने उसको आतिथि सत्कार करके आसन दिया और फिर नौकरों से जल मैंगवाकर मृषि को आर्च दिया और देकर प्रछा कि हे भगवन ! आप जो वर चाहें माँगकों में देनेको तैयार हूं ॥ ४ ॥

मन्त्रः ५

स होवाच मतिकातो म एप वरो यां तु कुमारस्थान्ते वाचम-भाषथास्तां मे बूडीति ॥

पदच्छेदः ।

सः, ह, ख्वाच, प्रतिज्ञातः, मे, एषः, वरः, याम्,तु, कुमारस्य, अन्ते, वाचम्, अभाषथाः, ताम्, मे, ब्रूहि, इति ॥

श्रास्त्रयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

ह=तब सः=वह गौतम

+ राजानम्=राजा से

उवाच=कहा कि मे=मुक्तसे एषः=यह

वरः=वर + त्वया=माप करके

प्रतिज्ञातः=प्रतिज्ञात किया गयाहै त्र=श्रव याम्=जिस वाचम्=बात को

+ स्वम्=बापने कुमारस्य ब्रन्ते=मेरे बड्के से

त्रभाषधाः=पूडा था

ताम् } = उसी बात को वाचम् } मे=मेरे, विषे

बृहि≔कहिये इति=ऐसा कहा

भावार्थ ।

हे सौम्य ! प्रवाहण राजा के बचन को सुन कर गौतम उदालक भृषि बोके कि, जो जो प्रश्न आपने मेरे कड़के से किये थे छन्हीं को सुम्त से कहिये और उन्हीं के बारे में उपदेश दीजिये यह मैं मांगता हूं !! १ !!

मन्त्रः ६

स होवाच देवेषु वै गीतम तद्वेषु मानुषाणां मूहीति ॥ पदच्छेषः।

सः, ह, उवाच, दैवेषु, बै, गौतम, तत्, वरेषु, मानुषाग्राम्, ब्रूहि, इति ॥ श्चान्य :

पदार्थाः श्चान्सय:

पदार्थाः

इति=इस पर

त्वम्=तू स्तः=वह प्रवाहवा राजा

मानुषागाम्=मनुष्यसम्बन्धी वरी

+ गौतमम्=गौतम से

उवाच=बोबा कि गौतम≔हे गौतम !

> तत्=यह वर देवेषु=देवसम्बन्धी

वरेष=वरोंमें से है

में से

+ अन्यतमम्=कोई + घरम्≔वर

ह≕स्पष्ट

ब्रहि=मांग ले

भावार्थ ।

इस पर राजाने कहा कि, हे गौतम ! सब देववरों में से यह वर अपतिश्रेष्ठ है इस क्रिये उस वर को छोड़ कर मनुष्यसम्बन्धी वर जो आप चाहें मांगर्ले ॥ ६ ॥

मन्त्रः ७

स होवाच विद्वायते हास्ति हिरएयस्यापात्तं गोन्नश्वानां दा-सीनां प्रवाराणां परिदानस्य मा नोभवान्बहोरनन्तरस्यापर्यन्तस्या-भ्यवदान्योभृदिति स वै गौतम तीर्थेनेच्छासा इत्युपैम्यहं भवन्त-मिति वाचाइसमैव पूर्व उपयन्ति सहोपायनकीत्योवास ॥

पदच्छेदः।

सः, ह, ख्वाच, विज्ञायते, ह, श्रस्ति, हिरगयस्य, श्रपात्तम्, गोश्रा-श्वानाम्, दासीनाम् , प्रवाराग्गाम् , परिदानस्य, मा, नः, भवान् , बहोः, अनन्तरस्य, अपर्यन्तस्य, अभ्यवदान्यः, अभूत्, इति, सः, वै, गौतम, तीर्थेन, इच्छासे, इति, उपैमि, अहम्, भवन्तम्, इति, वाचा, ह, स्म, वै, पूर्वे, उपयन्ति, सः, ह, उपायनकीत्र्यां, उवास ॥

अन्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

ह्र≔तव सः≔वह गीतम उवाच=बोधा कि

+ त्वया=चापको विज्ञायते=विज्ञात है कि + सस=मेरे को

+ विद्याम्=विद्या की हिरएयस्य=सोना इच्छासै=इच्छा करते हैं ? गाम्रश्वानाम्=गौ घोदे द्वासीनाम्=दासियां इति≕इस पर प्रवाराणाम्=नौकर चाकर + गौतम≕गैतम ने च≃ग्रीर + आह=कहा कि ग्रहम्=में परिधानस्य=वस्र की श्रपात्तम्=प्राप्ति भवन्तम्=विधिपूर्वक श्रापके निकट + अस्ति=है डपैमि=प्राप्तहुन्ना हूं भवान्=श्राप हि=क्योंकि नः≔मेरे स्म=पूर्वकाल में श्राभ=प्रति एव=भी बहोः≔बहुत पूर्वे=बाह्यस श्चनन्तस्य=श्रनन्तफलपाल म्रापर्थन्तस्य=समाप्तिरहित धन का क्षत्रियान=क्षत्रियों के पास ब्रह्म-अवदान्यः=ग्रदाता विद्या के जिथे मा भूत्=मत हो वाचा=वाणी करके इति=इस पर उपयन्ति=नम्र होकर सः=वह प्रवाहण राजा + स्म=पास होते भवे हैं + ऋ ह=बोला कि ह सः≔वह गौतम गौतम=हे गीतम ! उपायन कीत्यी=केवल मुख्य से से वा जु≔क्या श्राप वात्रय काके ती थेंन=शास्त्रविधिपूर्वक उवास=राजाके पास विधा के + मत्तः≔मुक्त से निमित्त रहता भया

भावार्थ ।

तव गौतम ने कहा कि, आपको मालूम है कि मेरे यहां गाय, घोड़े, दास, दासियां, वस्त्र आदिक बहुत हैं आप मुस्तको अवि-नाशी अनन्तभन दीजिये राजा ने कहा हे गौतम ! क्या आप विधि-पूर्वक विचारूपी धनके प्रह्मा की इच्छा करते हैं ? गौतमने कहा कि मैं आपके निकट शिष्यभाव से उपस्थित हुआ हूं है राजन् ! पूर्वकाल में भी अनेक बाह्ममा बचनमात्र से सेवा और नम्नता करते हुये क्षञ्जिय ६५६ बृहदारगयकोपनिषद् स०। के निकट विद्या के लिये उपस्थित हुये हैं, झौर ऐसा कहकर वह बास करने लगे॥ ७॥

मन्त्रः ८

स होवाच तथा नस्त्वं गौतम मापराधास्तव च पितामहा यथेयं विद्येतः पूर्वे न कस्मिध्ध्श्चन ब्राह्मण उवास तां त्वहं तुभ्यं वक्ष्यामि को हि त्वैवं ब्रुवन्तमहीति पत्याख्यातुमिति ॥

पदच्छेदः ।

सः, इ, ख्वाच, तथा, नः, त्वम्, गौतम, मा, अपराधाः, तव, च, पितामहाः,यथा, इयम्, विद्या, इतः, पूर्वम्, न, कस्मिन्, चन, ब्राह्मग्रो, खवास, ताम्, तु, अहम्, तुभ्यम्, वक्ष्यामि, कः, हि, तु, एवम्, ब्रुव-न्तम्, अर्हति, प्रत्याख्यातुम्, इति ॥

भ्रन्वयः

पदार्थाः

अन्वयः

पदार्थाः

सः≔वह प्रवाहण राजा
उवाच≃कहने लगा कि
गौतम≔हे गौतम !
त्वम्≕लाप
तथा≔वैसेही
नः मा } इमारे अपराध को
अपराधाः } क्षमा करें
यथा≕जैसे
+ तब≔लापके
पितामहाः≔पूर्वजलोग
+ पितामहो≔हमारे पूर्वजलोगों को
+ समायन्ते } =क्षमा करते आये हैं

गौतम=हे गौतम !

इतः=इससे

ह=तब

पूर्वम्=पहि**ले इयम्**=यह विद्या=विद्या कस्मिन्=किसी चन=भी ब्राह्मग्रे=बाह्मग्र में **न**≕नहीं उवास=बास करती थी तु=परन्तु श्रहम्⊐सैं तुभ्यम्=तुम्हारे क्रिये + ह=श्रवश्य ताम्=इस विद्या को वस्यामि=कहूंगा हि=क्योंकि पवमू=ऐसे कोमस वचन मुवन्तम्=क**इने**वाले

त्या≔ग्राप नाहास को कः≔कोन पुरुष प्रत्याख्यातुम्=निरादर करना ऋर्दति इति=योग्य समभेगा

भावार्थ ।

हे साँम्य ! तब राजा प्रवाहणा कहने लगा कि हे गाँतम ! जो मैंने आपसे पहिले कहा था कि आप देववर मांगते हैं उस वरको छोड़कर और कोई मनुष्यसम्बन्धी वर मांग लीजिये यदि आपको भेरे इस कहे हुये से क्षेत्र हुआ है तो मेरे अपराध को आप वेसेही क्षमा करें जैसे आपके पिता पितामहादि हमारे पितामहादि के अपराध को क्षमा करते आये हैं. हे गौतम ! यह ब्रह्मविद्या वास्तव में पहिले क्षृत्रिय के कुल में रही है किसी ब्राह्मणा के घर नहीं रही थी इस बातको आप भी जानते हैं. यह प्रथम बार है कि क्षित्रय से ब्राह्मण के पास जायगी उस विद्या को जिसको आप चाहते हैं, मैं अवश्य दूंगा. कौन पुरुष है जो ऐसे कोमल बचन बोलनेवाले ब्राह्मण को इस विद्या के देने से इनकार करेगा। आप इसके पात्र हैं, आपके जिये इस विद्या को अवश्य दूंगा। को आप

मन्त्रः ६

श्रसौ वै लोकोऽग्निगींतम तस्यादित्य एव समिद्रश्मयो धूमोऽ हरचिंदिशोऽङ्गारा श्रवान्तरदिशो विस्फुलिङ्गास्तस्मिश्रेतस्मिश्चनौ देवाः श्रद्धां जुहति तस्या श्राहुत्यै सोमो राजा संभवति ॥

पदच्छेदः।

असी, वे, लोकः, अग्निः, गौतम, तस्य, आदित्यः, एव, समित्, रहमयः, धूमः, अहः, अर्थिः, दिशः, अङ्गाराः, अवान्तरदिशः, विस्फु- तिङ्गाः, तस्मिन्, एतस्मिन्, अग्नी, देवाः, अद्धाम्, जुह्नति, तस्याः, आहुत्ये, सोमः, राजा, संभवति ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

गीतम्=हे गीतम ! लाकः

बसौ=वह

बै=निश्चय करके

श्वाग्निः=प्रथम श्रानिकुष्ड है|
तस्य=उस भ्रानि का
समित्=इन्धन
श्वादित्यः=सूर्य है
ध्वमः=ध्वम
रश्मयः=किरया हैं
श्वाचिः=उसकी ज्वाला
श्वहः=दिन है
श्वादाः=भंगार
दिशः=दिशार्य हैं
विस्फुलिङ्गाः=उसकी विनगारियां

तस्मन्=उसी

एतस्मन्=इस

ग्रानी=ग्रानि में
देवा:=इन्द्रादि देवता
श्रद्धाम्=श्रद्धारूपी इवि को
जुद्धति=देते हैं
तस्या:=उस दिये हुये
श्राहुत्य=ग्राहृति करके
सोम:=सोम
राजा=राजा

एव=निरचय करके
संभवति=उत्पन्न होता है

भावार्थ

हे सौम्य ! राजा प्रवाहरण पश्चारिनविद्या का उपदेश उदालक अपृषि से निम्न प्रकार करता है—हे गौतम ! स्वर्गलोकही ध्रारिनकुराड है, उसका इन्यन सूर्य है, उसका धूम किरग्ण हैं। उसकी ज्वाला दिन है, उसके अंगार दिशायें हैं, उसकी चिनगारियां उपदिशायें हैं, उसी अमिनकुराड में इन्द्रादि देवता श्रद्धारूपी हिव को देते हैं, और उस दिये हुये आदुति से सोमराजा उत्पन्न होता है।। ह ।।

मन्त्रः १०

पर्जन्यो वा अग्निगीतिम तस्य संवत्सर एव सिमदश्राणि धूमो विद्युद्धिरशनिरङ्गारा हादुनयो विस्फुलिङ्गास्तस्मिन्नेतस्मिन्नग्नौ देवाः सोमर्थः राजानं जुद्दति तस्या आहुत्यै दृष्टिः संभवति ।।

पदच्छेदः ।

पर्जन्यः, वा, अग्निः, गौतम, तस्य, संवत्सरः, एव, समित्, अश्रािण्, धूमः, विद्युत, अर्थिः, अश्रािनः, अङ्गाराः, हादुनयः, विस्फुन्किङ्गाः, तस्मिन्, एतस्मिन्, अग्नी, देवाः, सोमम्, राजानम्, जुह्नति, तस्याः, आहुत्यै, दृष्टिः, संभवति ॥

पदार्थाः

पदार्थाः

गौतम=हे गौतम !

पर्जन्य:=पर्जन्य

विस्कृतिङ्गाः=उसकी विगगारियां हादुनयः=गर्जनशब्द हैं तस्मिन्≕ढस

श्चारिनः=द्वितीयश्चरिनक्यह है तस्य=उस श्राग्निका समित्=समिध् यानी इन्धन

पतस्मिन्=इस अग्नौ=अग्नि में

पच≕ही संचत्सरः=संवत्सर है देखाः=देवतास्रोग

धूमः=धूम उसके श्रभागि=बादत हैं

सोमम् }=सोम राजा का राजानम् } जुड़ाति=होम करते हैं

श्रार्चिः=उसकी ज्वाला विद्युत्=बिजली है

तस्याः=तिस आहुत्यै=बाहुति करके

श्रद्धाराः=उसके श्रङ्गार श्रश्निः≔वज्र हैं

वृष्टिः≔वृष्टि संभवति≔होती है

भावार्थ ।

हे गौतम ! पर्जन्यही द्वितीय अग्निकुगड है, ऐसे अग्निकुगड का ईंधन संबत्सर है, उसका धूम बादल है, उसकी ज्वाला विजली है, उसका श्रंगार वज है, उसकी चिनगारियां गर्जना है, ऐसी श्राग्न में होतालोग सोमराजा का हवन करते हैं, उस दिये हुये आहुति करके वृष्टि होती है ॥ १० ॥

मन्त्रः ११

श्रयं वे लोकोऽग्निगीतम तस्य पृथिच्येव समिद्गिनर्धुमोरात्रि-र्रचिश्चन्द्रमा श्रङ्गारा नक्षत्राणि विस्फुलिङ्गास्तस्मिन्नेतस्मिन्नमी देवा दृष्टिं जुह्नति तस्या श्राहुत्या श्रश्यं संभवति ॥

पवच्छेदः ।

अयम्, वे, लोकः, अग्निः, गौतम, तस्य, पृथिवी, एव, समित्, अन्ति:, धूमः, रात्रि:, अर्चिः, चन्द्रमाः, अङ्गाराः, नक्षत्राणि, विस्कु- क्तिङ्गाः, तस्मिन्, एतस्मिन्, अग्नौ, देवाः, वृष्टिम्, जुद्धति, तस्याः, आहुत्ये, अन्नम्, संभवति ॥

ध्यन्वयः

पदार्थाः गौतम=हे गौतम !

श्रयम्=यह दश्यमान

स्रोकः=स्रोक

वै=निश्चय करके

ग्राग्निः=तृतीय ग्राग्निक्एड है

तस्य≔उसका

समित्=इन्धन प्रथिवी=पृथ्वी

एव=ही है

धूमः≔उसका धूम

श्चारेनः=श्रीन है श्रार्चिः=उसकी ज्वाला

रात्रिः=रात्रि है

श्रद्धाराः=उसका श्रद्धार भावार्थ ।

श्चान्सयः चन्द्रमाः=चन्द्रमा है

विस्फुलिङ्गाः=उसकी चिनगारियां

पदार्थाः

नक्षत्राशि=नक्षत्र हैं

तस्मिन्=उसी

पतस्मिन्=इस

श्चानी=श्चानि में देवाः=देवता कोग

वृष्टिम्=रुष्टिरूप आहु-

तियों को

जुह्वति=देते हैं तस्याः=उस

म्राहुत्यै=म्राहुति से

श्रन्नम्=अन्न संभवति=उत्पन्न होता है

हे गौतम ! यह भूकोक तृतीय अग्निकुगड है, इसकी समिधा पृथिवी है, घूम अमिन है, ज्वासा रात्रि है, अंगार चन्द्रमा है, चिनगा-रियां नक्षत्र हैं, जब इस अपिन में देवतालोग दृष्टिरूपी आहुति को देते हैं, तब उस आहुति से अन्न उत्पन्न होता है ॥ ११ ॥

मन्त्रः १२

पुरुषो वा अग्निर्गीतम तस्य व्यात्तमेव समित्नाराो धूमो वाग-र्चिश्चक्षुरङ्गाराः श्रोत्रं विस्फुलिङ्गास्तस्मिन्नेतस्मिन्नग्नौ देवा असं जुहति तस्या आहुत्ये रेतः संभवति ॥

पदच्छेतः ।

पुरुषः, वा, श्राग्निः ह गौतम, तस्य, व्यात्तम्, एव, समित्, प्रागाः, धूमः, वाक्, अर्चिः, चक्षुः, अङ्गाराः, अोत्रम्, विस्फुलिङ्गाः, तस्मिन्,

एतस्मिन्, अग्नो, देवाः, श्रन्नम्, जुह्नति, तस्याः, आहृत्ये, रेतः, संभवति ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः श्चन्वयः पदार्थाः

गौतम=हे गौतम ! पुरुषः=पुरुष

वा=ही

श्चितः≔चतुर्थ अग्निक्यद है तस्य=उसका

स्रामित्≔इन्धन व्यात्तम्⊃मुख

पव=हीं है

धूमः=धूम प्राणः=उसका प्राण है

श्चर्चिः=ज्वाला वाकु=उसकी वासी है

ग्रङ्काराः=पङ्गार

चश्चः≔उस के नेत्र हैं

विस्फुलिङ्गाः=चिनगारियां श्रोत्रम्=उसके कान हैं

तिसम्बद्धाः पतस्मिन्=इस

अग्नी=प्रग्नि में देवाः=देवतागया

अञ्जम्=सञ्जरूपी बाहुतिः

ज्रह्मति=देते हैं तस्याः=उस

आहुत्यै=बाहुति से रेतः≔वीर्य

संभवति=उलक होता है

भावार्थ ।

हे गीतम ! पुरुषही चतुर्थ अग्निकुगड है, उसका इन्धन मुख है, धूम उसका प्रासा है, ज्वाला उसकी वासी है, अंगार उसके नेत्र हैं. चिनगारियां उसके कान हैं, ऐसी इस अग्नि में देवता अन्नरूपी आ-हुतिको देते हैं, उस म्राहुति से वीर्य उत्पन्न होता है ॥ १२ ॥

मन्त्रः १३

योषा वा अग्निगीतम तस्या उपस्थ एव समिल्लोमानि धूमो योनिर्रार्चियदन्तः करोति तेऽङ्गारा श्रीभनन्दा विस्फुलिङ्गास्तस्मिन्ने-तस्मित्रग्नी देवा रेतो जुहति तस्या त्राहुत्ये पुरुषः संभवति स जीवति यावज्जीवत्यथ यदा म्रियते ॥

पदच्छेदः ।

योषा, वा, अग्निः, गौतम, तस्याः, उपस्थः, एव, समित्,

कोमानि, धूमः, योनिः, अर्विः, यत्, अन्तः, करोति, ते, अङ्गाराः, अभिनन्दाः, विस्फुलिङ्गाः, तस्मिन्, एतस्मिन्, अग्नौ, देवाः, रेतः, जुह्वति, तस्याः, आहुत्यै, पुरुषः, संभवति, सः, जीवति, यावत्, जीवति, अथ, यदा, म्रियते ॥

श्चान्वयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

गीतम=हे गीतम ! योषा=द्यी चा=ही आरिनः≔पांचवीं ऋग्निक्एडहैं तस्याः=उसका समित्=इन्धन प्व=ही उपस्थः=उपस्थ इन्द्रिय है धूमः=धूम उसके लोमानि=लोम हैं श्रिचिः≕ज्वाला उसकी योनिः=योनि है यत्चजो अन्तःकरोति=मेथुन करना है ते=वही श्रङ्गाराः=श्रङ्गार हैं विस्फुलिङ्गाः=उनकी चिनगारियां श्रभिनन्दाः=सुख हैं तस्मिन्=उसी

श्रानी=श्रीन में
देवा:=देवतागय
रेत:=वीर्य को
जुहृति=श्राहुति देते हैं
तस्या:=उस
श्राहुत्ये=श्राहुति से
पुरुष:=पुरुष
संभवति=उत्पन्न होता है
सः=वह पुरुष
+ तावत्=तवतक
जीवति=जीता रहता है
यावत्=जवतक
+ तस्य=उसका
+ श्रागु:=श्रागुष्य
जीवति=वना रहता है

अथ यदा=तत्परचात्

चियते=मरजाता है

+ सः≔वह

पतस्मिन्=**इ**स

भावार्थ ।

हे गौतम ! स्त्री पांचवीं अभिनकुगड है, उसका इन्धन उपस्थ इन्द्रिय है, धूम उसके लोम हैं, ज्वाला उसकी योनि है, जो मैथुन करना है वहीं उसके अंगार हैं, इसकी चिनगारियां सुख है, जब उसी इस अभिन में देवता लोग विश्वेरूपी आहुति देते हैं, तब उस आहुति से पुरुष उरपक्र होता है, झ्रोर वह पुरुष तबतक जीता रहता है जबतक उसकी झायु बनी रहती है, झ्रोर झायु नष्ट होने पर वह मरजाता है ॥ १३ ॥

मन्त्रः १४

श्रथैनमम्बर्धे हरन्ति तस्याग्निरेवाग्निर्भवति समित्समिद्ध्गो धूमो-ऽर्चिरचिरङ्गारा श्रङ्गारा विरफुलिङ्गा विरफुलिङ्गास्तरिमन्नेनौ देवाः पुरुषं जुद्दति तस्या श्राहुत्यै पुरुषो भास्वरवर्णाः संभवति ॥ पवच्छेवः।

अथ, एनम्, अग्नये, हरन्ति, तस्य, अग्निः, एव, अग्निः, भवति, समित्, समित्, धूमः, धूमः, अर्चिः, अर्चिः, अङ्गासः, अङ्गाराः, विस्फु-लिङ्गाः, विस्फुलिङ्गाः, तस्मिन्, एतस्मिन्, अग्नो, देवाः, पुरुषम्, जुह्वति, तस्याः, आहुस्ये, पुरुषः, भास्वरवर्णाः, संभवति ॥

श्चार ।

पदार्थाः

अन्वयः

पदार्थाः

श्रथ=इसके उपरान्त

+ श्वृत्विजः=वन्यु श्वत्विजादि

एनम्=सृतक शरीर को

श्वान्नये=दाहके निये

हरन्ति=स्मरान को नेजाते हैं

+ तत्र=वहां पर

तस्य=उस श्रान का

श्वारेनः=श्वारेन

एव=ही

श्वारिनः=श्वारेन होता

+ भवति=होता है

समित्=उसका इन्थन

समित्=प्रसिद्ध इन्थन है

धूमः=उसका थूम

ग्राचिं:=उसकी ज्वाला ग्राचिं:=प्रसिद्ध ज्वाला है श्रङ्गाराः=उसके श्रङ्गार श्रङ्गाराः=प्रसिद्ध श्रङ्गार हैं विस्फुलिङ्गाः=उसकी चिनगारियां विस्फुलिङ्गाः=प्रसिद्ध चिनगारियां हैं तस्मिन्=उसी

तासम्=डसा एतस्मिन्=इस अग्नी=धान्न में देवाः=देवता यांनी बान्धद-

गया
पुरुषम्=मृतक पुरुष को
जुद्धति=होम करते हैं
तस्याः=डस
झाहुन्यै=झाहुति करके
पुरुषः=पुरुष
भास्यरवर्षः=हीसमान्
संभवति=होता है

द्यान्सयः

भावार्थ ।

हेगौतम ! मरने के पश्चात् बान्धव द्यौर ऋत्विज् आदि सृतक पुरुष को श्मरान में दाह के लिये ले जाते हैं, इसका जलानेवाला अपिन होता होता है, जलाने की लकड़ी समिया होती है, धूमही प्रत्यक्ष धूम है, ज्वालाही प्रत्यक्ष ज्वाला है, श्रङ्गारही प्रत्यक्ष श्रङ्गार हैं, चिन-गारियांही प्रत्यक्ष चिनगारियां हैं, श्मशानवाली स्त्रग्नि में बान्धवगणा मृतक पुरुष को आहुति रूप से डालते हैं, ऐसी आहुति से वह पुरुष जो शरीर से प्रथमही निकलगया है, श्रातिशय दीप्तिमान् होजाताहै।। १४॥

मन्त्रः १५

ते य एवमेतद्वविदुर्ये चामी अरएये श्रद्धांक सत्यमुपासते तेऽ-. चिरिभसंभवन्त्यर्चिषोऽहरह श्रापूर्यमाखपक्षमापूर्यमाखपक्षाचान्य-यमासानुदङ्ङादित्य एति मासेभ्यो देवलोकं देवलोकादादित्य-मादित्याद्वेयुतं तान्वेयुतान् पुरुषो मानस एत्य ब्रह्मलोकान् गमयति ते तेषु ब्रह्मलोकेषु पराः परावतो वसन्ति तेषां न पुनराष्ट्रतिः ॥

पदच्छेदः।

ते, ये, एवम्, एतत्, विदुः, ये, च, अभी, अपराये, अद्धाम्, सस्यम्, उपासते, ते, श्राचिः, श्रामि संभवन्ति, श्राचिषः, श्राहः, श्राहः, श्रापूर्यमारापक्षम्, श्रापूर्यमारापक्षात्, यान्, षट्, मासान्, उदङ्, श्रादित्यः, एति, मासेभ्यः, देवलोकम्, देवलोकात्, श्रादित्यम्, आदित्यात्, वैद्युतम्, तान्, वैद्युतान्, पुरुषः, मानसः, एत्य, ब्रह्म-क्लोकान्, गमर्यति,ते, तेषु, ब्रह्मलोकेषु, पराः, परावतः, वसन्ति, तेषाम्, न, पुनः, श्रावृत्तिः ॥

श्चन्य यः

पदार्थाः

पदार्थाः बे⇒जो विद्वान् **स**≕चीर एचम्≔इस मकार श्रमी=वे

पतत्≔इस पञ्चानिविधाको ये≕जो विदुः=जानते हैं द्याराये≈वन में

श्रद्धाम्=श्रद्धासहित सत्यम्≔सत्यवद्य की उपासते=डपासना करवे हैं ते=ये दोनों अर्चिः=प्रचि धनिमानी वेवता को ् ग्राभिसंभवन्ति=प्राप्त होते हैं + ख=फिर अर्चिषः=अर्वि अभिमानी देवता से श्रहः=दिन श्रभिमानी देवता को + पति=प्राप्त होते हैं श्रहः=दिन श्रमिमानी वेवता से आपूर्यमाग्- रे _गुक्रपक्षामिमानी पक्षम् र् देवता को + पति=पाप्त होते हैं श्चापूर्यमागा- } शुक्रपक्षाभिमानी प्रक्षात् ∫ वेवता से + तान् रे उन छड महीनाभि-+ मासान् रे मानी देवता को + पति=पास होते हैं यान्=जिनमें षट्=ष्ट मासान्=महीना तक आदित्यः=सूर्य उद्ङ्⇒डत्तरायख पति=रहता है मासेभ्यः=उस इह महीनाभि-मानी देवता से देवलोकम्=देवलोक को + पति=आस होते हैं

देवलोकात्=देवकोक से आदित्यम्=सुर्वकोक को + पति=मास होते हैं आदित्यात्=सूर्यकोक से वैयुतम्=वियुत् सभिमानी देवता को + पति=आस होते हैं + तद्ा≔तव तान्=उन वैद्युतान्=विद्युत् स्रभिमानी देवताको प्राप्त पुरुषाँको मानसः=मनसे सम्बन्ध रखने पुरुषः=कोई पुरुष पत्य=बाकर + तम्≕उसको व्रह्मलोकान्=व्रह्मकोक को गमयति=केजाता है ते≔वे पराः=श्रेष्टकोग तेषु≕उन ब्रह्मलोकेषु=ब्रह्मबोकी में परावतः=शनेकवर्षी तक वसन्ति=वास करते हैं + च=धीर पुनः≕फर तेषाम्=रनकी आवृत्तिः=प्रावृत्ति + संसारे=इस संसार में न=गडीं + भवति≔होती है

भावार्थ ।

हे गौतम ! जो बिद्वान इस प्रकार इस पश्वाग्निविद्या को जानते हैं और जो बन में श्रद्धासहित सत्य ब्रह्म की उपासना करते हैं, ये दोनों अर्चि अभिमानी देवता को प्राप्त होते हैं, और अर्चि अभिमानी देवता को प्राप्त होते हैं, दिन अभिमानी देवता से युक्लपश्च अभिमानी देवता को प्राप्त होते हैं, युक्लपश्च अभिमानी देवता को प्राप्त होते हैं, युक्लपश्च अभिमानी देवता से उन छह महीना अभिमानी देवता को प्राप्त होते हैं, जिसमें छह महीना तक सूर्य उत्तरायण रहता है, उस छह महीना अभिमानी देवता से देवलोक को प्राप्त होते हैं, देवलोक से सूर्यलोक को प्राप्त होते हैं, देवलोक से सूर्यलोक को प्राप्त होते हैं, सूर्यलोक से विद्युत्लोक के अभिमानी देवता को प्राप्त होते हैं, तब उन विद्युत् प्राप्तहुये पुरुषों को मनसे सम्बन्ध रखने-वाला कोई पुरुष आकर उनको ब्रह्मलोक में लेजाता है, वे ब्रह्मलोक को प्राप्तहुये श्रेष्ठ पुरुष उन उनको ब्रह्मलोक वास करते हैं, और फिर उनकी आद्युत संसार में नहीं होती है।। १५।।

मन्त्रः १६

भय ये यक्नेन दानेन तपसा लोकाञ्जयन्ति ते घूममिभसंभवन्ति धूमाद्रात्रिश्च रात्रेरपसीयमाणपक्षमपक्षीयमाणपक्षाचान् पएमासान्द-क्षिणाऽऽदित्य एति मासेभ्यः पितृलोकं पितृलोकं चन्द्रं ते चन्द्रं प्राप्याकं भवन्ति ताश्चस्तत्र देवा यथा सोमश्च राजानमाप्यायस्वा-पक्षीयस्वेत्येवमेनाश्चस्तत्र भक्षयन्ति तेषां यदा तत्पर्यवैत्ययेममेवाऽऽ काशमभिनिष्पचन्त श्चाकाशाद् वायुं वायोर्द्दृष्टिं दृष्टेः पृथिवीं ते पृथिवीं प्राप्याकं भवन्ति ते पुनः पुरुषाग्नी ह्यन्ते ततो योषाग्नी जायन्ते लोकान् प्रस्तुत्थायिनस्त एवमेवानुपरिवर्चन्तेऽय य एती पन्यानी न विदुस्ते कीटाः पतङ्गा यदीदं दन्दश्क्कः ॥

इति द्वितीयं ब्राह्मणम् ॥२॥

डाथ, ये, यहोन, दानेन, तपसा, जोकान्, जयन्ति, ते, धूमम्,

झिभसंभवन्ति, धूमात, रात्रिम्, रात्रेः, झपक्षित्यमाण्पक्षम्, झपक्षी-यमाण्यक्षात्, यान्, षट्मासान्, दक्षिग्णा, झादित्वः, एति, मासेभ्यः, पितृकोकम्, पितृकोकात्, चन्द्रम्, ते, चन्द्रम्, प्राप्य, अञ्चम्, भवन्ति, तान्, तत्र, देवाः, यथा, सोमम्, राजानम्, झाप्यायस्व, झपक्षीयस्व, इति, एवम्, एनान्, तत्र, भक्षयन्ति, तेषाम्, यदा, तत्, पर्यवेति, झथ, इमम्, एव, आकाशम्, झभिनिष्पद्यन्ते, झाकाशात्, वायुम्, वायोः, वृष्टिम्, वृष्टेः, पृथिवीम्, ते, पृथिवीम्, प्राप्य, झन्नम्, भवन्ति, ते, पुनः, पुरुषाग्नौ, हूयन्ते, ततः, योषाग्नौ, जायन्ते, लोकान्, प्रति, उत्थायिनः, ते, एवम्, एव, झनुपरिवर्त्तन्ते, झथ, ये, एतौ, पन्थानौ, न, विदुः, ते, कीटाः, पतङ्गाः, यत्, इदम्, दन्दश्कम् ॥

पदार्थाः श्चन्वयः ग्रन्वयः पदार्थाः + ग्रभिसं· }=प्राप्त होते हैं भवन्ति } श्रथ=इसके उपरान्त ये⇒जो पुरुष राश्रः=राष्याभमानी देवता यञ्जेन=यज्ञ करके के स्रोक से अपक्षीय- } _कृष्यपद्याभिमानी माणपक्षम् ऽ देवता के बोक को द्वानेन=दान करके तपसा=तप करके + श्रमिसं- }=जाते हैं लोकान=बोकों को जयन्ति=जीतते हैं यानी प्राप्त | अपक्षीयमा- } कृष्णपक्षामिमानी गुपक्षात् ∫ देवताके बोक से होते हैं ते≔वे + तान्=डन + प्रथमम्=पहिबे + षट≔इइ महीना श्रभि-धूमम्=धूमामिमानी देवता मानी देवताके खोकको के सोक को + प्रति=शास होते हैं यान्=जिनमें श्रभिसंभवन्ति=आते हैं धूमात्=धूमामिमानी देवता ञादित्यः≔सूर्य के खोक से दक्षिणा=रक्षिणायन रात्रिम्=रात्रिष्यभिमानी देवता पति=रहता है के बोक की + ख≕किर

मासेभ्यः=इइ महीनाभिमानी वेषता से पितृलोकम्=पितृलोक को + अभिसं- } =मास होते हैं महान्ति } पितृलोकात्=पितृजोक से चन्द्रम्=चन्द्रकोक को + ग्राभिसं- } =शास होते हैं भवन्ति } + च≔गौर ते≕वे **चन्द्रम्=चन्द्रकोक** को प्राप्य=शास होकर **श्रन्नम्**≕भोग्य भवन्ति=होते हैं तत्र=उनकी उस ग्रवस्था में वेचाः=देवतालोग + एवम्=वैसेही तत्र≕डस सोमबोक में एनान्=उनके साथ उपभोग करते हैं यथा=जैसे + भ्रात्विजः=ऋत्विज् सोमम् रे राजानम 🕽

+ यज्ञे⇒सोमयह में

⊦ झाप्याय } ⊦ झाप्याय } =पी पी कर

+ स=मोर

+ अपक्षयम्≕शीय कर कर + परस्परम्=भावस में इ.ति≕ऐसा + वद्न्तः=कइते हुये **ग्रा**प्यायस्व=पियो पियो अपश्रीयस्व=जनतक समाप्त न होजाय भक्षयन्ति=इपभोग करते हैं + यदा=जब तेषाम्=डन कर्मियों का तत्=वह सोमजोकप्रापक पर्यवैति=क्षीय होजाता है श्रथ=तब + ते≔वे इमम्=इस एव≃दश्यमान आकाशम्=षाकाश को श्रमिनिष्पद्यन्ते=प्राप्त होते हैं आकाशात्≕भाकाश से षायुम्=वायुको वायोः=वायु से वृष्टिम्=वृष्टि को वृष्टेः=वृष्टि से पृथिवीम्=पृथिवी को + अभिनि- } = बाते हैं + च=चौर फिर ते≔वे पृश्चिनीम्=पृथिवी को

प्राप्य=प्राप्त होकर

पबम् पव=इसी तरह श्रद्धम्=घद्य + ते≔वे भवन्ति=होते हैं पुनः=किर अनुपरिवर्त्तन्ते=बार बार खोकों में या योनियों में प्राप्त होते हैं ते≔वे झथ=घौर + **अजभूताः=**चन्नभृत होते <u>ह</u>ये पुरुषान्नी=पुरुषरूपी प्रान्त में शे=जो ह्रयन्ते=बाहुतिरूप से विषे पतौ पन्थानौ=इन दक्षिय उत्तर जाते हैं मार्ग को न≕नहीं + पुनः≕फिर ततः=उस पुरुष में से विदुः≔जानते हैं यानी उपा-योषारनी=सीरूपी प्राप्त में सना नहीं करते हैं + ते≔वे ते≔वे + ह्यन्ते=ब्राहुतिरूप से दिये कीटा:=कीबे जाते हैं पतङ्गाः=पतिङ्गे + च≕फेर + भवन्ति=होते हैं लोकम् प्रति=लोकमें भोगने के प्रति + च=धौर उत्थायिनः=श्रनुरागी होते हुये यत्=जो क्छ जायन्ते=उत्पन्न होते हैं इदम्=यह + च=धौर दन्दश्कम्=मच्छरादियोनि है + कर्भ≃कर्भ को ते≃वे + अनुतिष्ठन्ते=करते हैं + भवस्ति≔होते हैं

भावार्थ ।

हे सीम्य! जो कोई पुरुष यज्ञ करके, दान करके, तप करके पितृ-लोकादिकों को प्राप्त करते हैं, वे प्रथम धूमामिमानी देवता के लोक को प्राप्त होते हैं, और धूमामिमानी देवता के लोक से रात्रिआमिमानी देवताके लोकको प्राप्त होते हैं, और रात्रिआमिमानी देवता के लोक से कुच्चापक्षामिमानी देवता के लोक को प्राप्त होते हैं, कुच्चापक्षअमिमानी देवता के लोक से उन छह महीनाआमिमानी देवताके लोक को प्राप्त होते हैं. जिनमें सूर्य दक्षियायन रहता है, फिर छह महीनाआमिमानी

देवता के लोक से पितृलोक को प्राप्त होते हैं. पितृलोक से चन्द्रलोक को प्राप्त होते हैं, और चन्द्रलोकको प्राप्त होकर अन यानी भोग बनते हैं उनके उस अवस्था में वैसेही चन्द्रलोक में उनके साथ देवता उपभोग करते हैं, यानी उनको उनके कर्मात्सार फल देते हैं जिसको उनकी इच्छा होती है, जैसे इस पृथिवीक्षोक में भ्रात्वजुकोग सोमयज्ञ में सोमजता के रस को पी पीकर झोर क्षीशा कर कर आपस में यह कहते हुये कि पीते चलो पीते चलो जब तक इसकी समाप्ति न हो-जाय, उपभोग करते हैं, जब चन्द्रलोक में प्राप्त हुये कर्मियों का फल क्षीता हो जाता है तब वे कर्मी जोग इस दृश्यमान आकाश की प्राप्त होते हैं, और आकाश से वायु को, वायु से वृष्टि को, वृष्टि से पृथिवी को आते हैं, और पृथिवी में आकर अन होते हैं, और फिर वह अन पुरुषहरी अग्नि में आहुतिहर से दिये जाते हैं तब उस अन्न से वीर्य उत्पन्न होता है, वह वीर्य स्त्रीरूपी अग्नि में आहुतिरूप से दिया जाता है. तब वह लोकों में भोगने के लिये अनुरागी होकर उत्पन्न होते हैं, क्योर फिर पहिले की तरह कार्य करते हैं. इस प्रकार वे पुरुष वारवार योनियों में प्राप्तद्वश्चा करते हैं, श्रीर जो पुरुष दक्षिणायन श्रीर उत्त-रायसा मार्ग को नहीं जानते हैं यानी उनकी उपासना नहीं करते हैं. वे की डे व पति कों की यो निकों प्राप्त होते हैं ॥ १६ ॥

इति द्वितीयं ब्राह्मणम् ॥ २ ॥

श्रथ तृतीयं बाह्यगम्

स यः कामयेत महत्माप्नुयामित्युदगयन आपूर्यमाणपक्षस्य पुष्याहे द्वादशाहमुपसद्वती भूत्वौदुम्बरे कछंसे चमसे वा सर्वो- षघं फलानीति संप्रत्य परिसमुग्न परिलिप्याग्निमुपसमाधाय परि-स्तीर्याऽङ्गाऽऽक्वछं संधस्कृत्य पुछंसा नक्षत्रेण मन्यछं संनीय

जुहोति यावन्तो देवास्त्विय जातवेदिस्तर्यश्चो व्रति पुरुषस्य कामान्। तेभ्योऽहं भागषेयं जुहोमि ते मा तृप्ताः, सर्वैः कामैस्तर्पयन्तु स्वाहा। यातिरश्ची निपद्यतेऽहं विषरणी इति तां त्वा घृतस्य धारया यजे सर्छराधनीमहर्छस्वाहा।।

पदच्छेदः।

सः, यः, कामयेत, महत्, प्राप्तुयाम्, इति, ख्रायने, आपूर्यमाया-पक्षस्य, प्रायाहे, द्वादशाहम्, उपसद्वती, भूत्वा, औदुम्बरे, कंसे, चमसे, वा, सर्वेषभम्, फलानि, इति, संभृत्य, परिसमुद्धा, परिलिप्य, आग्निम्, उपसमाधाय, परिस्तीर्य, आष्ट्रताज्यम्, संस्कृत्य, पुंसा, नक्ष-त्रेया, मन्थम्, संनीय, जुहोति, यावन्तः, देवाः, त्वयि, जातवेदः, तिर्यञ्वः, प्रन्ति, पुरुषस्य, कामान्, तेभ्यः, आहम्, भागधेयम्, जुहोमि, ते, मा, तृप्ताः, सर्वेः, कामैः, तर्पयन्तु, स्वाहा, या, तिरश्ची, निपचते, आहम्, विधरस्यी, इति, ताम्, त्वा, घृतस्य, धारया, यजे, संराधनीम्, श्रहम्, स्वाहा।

ग्रस्वयः

पदार्थाः , अन्वयः

पदार्थाः

न्वयः पद्ाथाः महत्=वहाई को प्राप्तुयाम्=में मास होकं इति=ऐसा यः=जो कामथेत=इच्छा करता है सः=वह + प्राक्=यज्ञ से पहिसे द्वादशाहम्=वारह दिनतक उपसद्वती=उपसद्वत करने

भूत्वा=होकर भौदुम्बरे=गूबर के कंसे=पात्र में वा=भथवा
चमसे=गूजर के चमस सदश
बर्तन में
सर्वोषधम्=सव कोषधियों को
च=भीर
फलानि=फर्बों को
संभृत्य=इकट्ठा करके
परिसमुद्धा=भूमिको कार पाँक
कर भीर
परिजिप्य=शीप कर
श्रानिम्=भिन को

उपसमाधाय=स्यापन कर

परिस्तीर्थं⇒कुशा विदाहर

श्रावृताज्यम्=दके हुवे **घी** को संस्कृत्य=संस्कार करके पुंसा=पुरुषनामक नक्षत्रेगा=नक्षत्र के उदय होने पर

> मन्धम्=सब छोषधियों से मरीहई मन्थ की संनीय=सामने रखकर उद्गयने=सूर्य के उत्तरायण

मार्ग विवे

आपूर्यमाण- } =शुक्रपक्ष के पक्षस्य }

पुरायाहे=शुभ दिन में जुहोति=होम करे + एवम्=ऐसा + ब्रुवतः=कहता हुआ कि जातवेदः=हे जातवेद, श्राग्नि ! यावन्तः=जितने देवाः=ऋर देवता त्वयि=तेरं विषे + स्थिताः=स्थित हैं +च≔ष्रोर पुरुषस्य=पुरुष के कामान्=मनोरथों में

तिर्यञ्चः=विष्नरूप होकर झान्त=प्रतिबान्धित होते हैं तेश्यः=उनके विये

श्रहम्≕में भागधेयम्=ची का भाग

जुड़ोसि=देता हं

ते=वे

तृप्ताः=तृस होते हुये मा=मुभको

सर्वैः=सब कामैः=कामनाओं से

|पैयन्तु स्वाहा=तृप्त करें ऐसा कहकर स्वाहा शब्द का उचा-

रख करे + च=घौर

या=जो तिरश्ची=कुटिसगतिवाक्षी + देवी=देवी

+ त्वयि=तेरे विषे निपद्यते=स्थित है

+ च=भीर इति=इस तरह या=जो

ताम्=ऐसी

+ स्मर्ति=ख्याल करती है कि ग्रहम्=में ही

विधरणी=सबको निग्रह करने वासी हूं

त्वा=तुक संराधनीम्=सिद्धकरनेवासी को ग्रहम्=में मृतस्य=घी की

धारया=धारा करके यजे=पूजन करता इं

स्वाहा=यह मन्त्र पदकरस्वाहा शब्द का उचारण करे

भाषार्थ ।

हे सौम्य ! अब कर्मकाएड का वर्शन किया जाता है-जो कोई उपासक ऐसी इच्छा करे कि मैं संसार में वढी पदवी को प्राप्त हो के तो उसको चाहिये कि यज्ञ से पहिले बारह दिनतक उपसद्वत का करनेवाला हो, फिर गूलर के पात्र में आथवा गूखर की जकड़ी के बने हुये चमस सदश वर्तन में, भात में उत्पन्न हुई सब झोषधियों की और फर्लो को इकट्टा करके रक्खे, और सूमि को कार पोंछ कर और क्रीप पोत कर उसमें अगिन को स्थापन कर वहीं कुशा विद्वा कर उके हये घी का संस्कार करके जिस समय पुरुषनामक नक्षत्र उदय हुआ। हो, सब ओविवयों से भरी हुई मन्थ को झन्नि के सामने रखकर सुर्व के उत्तरायसाकाल में और शक्लपक्ष के शमदिन में हवन करे, ऐसा कहता हुआ कि हे जातवेदा, आगिन ! तेरे विषे जितने कुर देवता हैं श्रीर पुरुषों के मनोरथ सिद्ध होने में हानि करनेवाले हैं, उनके किये में घी का भाग देकर पूजन करता हूं, वे सब देक्ता मेरी दी हुई आ-हति से तम होकर सुक्तको सब कामनाओं से तम करें, ऐसा कह कर स्वाहा शब्द का उच्चारसा करे झौर फिर हे जातवेदा ! तेरे विषे जी देवियां स्थित हैं और जो कुटिल गतिवाली हैं और जिनको यह ख्याल है कि मैं ही सब कामनाश्चों का निप्रह करनेवाली हूं, ऐसे विश्व करनेवाली और काम को सिद्ध करनेवाली को मैं नमस्कार करता हक्या घी की धारा दे करके पूजन करता हूं, यह मनत्र पढ़ कर स्वाहा शब्द का चबारमा करे ॥ १ ॥

मन्त्रः २

ज्येष्ठाय स्वाहा श्रेष्ठाय स्वाहेत्यग्नी हुत्वा मन्ये सक्षस्वमवन-यति प्रार्णाय स्वाहा वसिष्ठाये स्वाहेत्यग्नी हुत्वा मन्ये सक्षस्रव-मवनयति वाचे स्वाहा प्रतिष्ठाये स्वाहेत्यग्नी हुत्वा मन्ये सक्षस्रव-मक्तम्वति चक्षुपे स्वाहः संपदे स्वाहेत्यग्नी हुत्वा मन्ये सक्षस्रव- मवनयति श्रोत्राय स्वाहाऽऽयतनाय स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सर्छ-स्रवमवनयति मनसे स्वाहा प्रजात्ये स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सर्छ-स्रवमवनयति रेतसे स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सर्छस्रवमवनयति ॥

पदच्छेदः ।

ज्येष्ठाय, स्वाहा, श्रेष्ठाय, स्वाहा, इति, आग्नौ, हुत्वा, मन्थे, संस्नवम्, अवनयति, प्राग्णाय, स्वाहा, विसष्ठाये, स्वाहा, इति, अग्नौ, हुत्वा, मन्थे, संस्नवम्, अवनयति, वाचे, स्वाहा, प्रतिष्ठाये, स्वाहा, इति, अग्नौ, हुत्वा, मन्थे, संस्नवम्, अवनयति, चक्षुपे, स्वाहा, संपदे, स्वाहा, इति, अग्नौ, हुत्वा, मन्थे, संस्नवम्, अवनयति, श्रोत्राय, स्वाहा, आयतनाय, स्वाहा, इति, अग्नौ, हुत्वा, मन्थे, संस्नवम्, अवनयति, मनसे, स्वाहा, प्रजात्ये, स्वाहा, इति अग्नौ, हुत्वा, मन्थे, संस्नवम्, अवनयति, रेतसे, स्वाहा, इति, अग्नौ, हुत्वा, मन्थे, संस्नवम्, अवनयति।।

श्रन्वयः

श्रन्थयः पदार्थाः

प्रेष्ठाय स्वाहा=ज्येष्ठ के लिये श्राहुति
देता हूं

श्रेष्ठाय स्वाहा=श्रेष्ठ के लिये श्राहुति
देता हूं

इति=इस प्रकार
श्रम्नी=श्रीम में
दुत्वा=।
मन्ये=मन्य में
संस्रवम्=वने खुने घृत को
श्रावनयति=होइता जाय

प्राणाय स्वाहा≔पाण के लिये बाहुति देता हू बसिष्ठाये }्विसष्ठकेलिये बाहुति स्वाहा }्देता हूं इति=इसी तरह भ्राग्नो=बग्नि में हुत्वा=होम करके
मन्थे=मन्य में
संस्रवम्=वर्च खुचे घृत को
श्रवनयति=छोदता जाय
वाचे स्वाहा=वाथी के लिये बाहुति
देता हूं
प्रतिष्ठाये } प्रतिष्ठा के लिये बाहुति
स्वाहा ऽ देता हूं
हति=इस तरह
हुत्वा=होम करके
मन्थे=मन्य में
संस्रवम्=वर्ष खुचे घृत को

पदार्थाः

श्रवनयति=डाबता जाय चश्चुषे स्वाद्या=नेत्र के जिये बाहुति देता हुं

संपदे स्वाहा⇒संपद् के विषे बाहुति.

देता हूं इति=इस तरह अन्ती=अन्ति में द्वत्वा≔होम करके ग्रस्थे≃मन्थ में संस्ववम्=बचे खुचे वृत को श्चवनयति=हालता जाय श्रोत्राय स्वाहा=श्रोत्र के निये बाहुति देता हूं. आयतनाय } = श्रायतन के लिये स्वाहा } = श्राहुति देता हूं इति=इस तरह श्चानी=श्रमि में हुत्वा=होम करके मन्थे≔मन्थ में संस्रवम्≔बचे खुचे घृत को श्रवनयति=डालता जाय

मनसे स्वाहा=मनके किये भाइति प्रजात्ये स्वाहा=प्रजाति के लिये चाहुति देता हं इति≃इसं तरह श्राग्नी=श्राग्न में हुत्वा=होम करके मन्धे=मन्ध में संस्रवम्=बचे खुचे घृत को श्रवनयति=डाबता जाय रेतसे स्वाहा=वीर्य के निये भाइति देता हुं इति=इस तरह अग्नौ=अग्नि में हुत्वा=होम करके मन्थे=मन्थ मं संस्रवम्=बचे खुचे घृत को श्चवनयति=हालता जाय

भावार्थ ।

हे प्रिय ! नीचे लिखे हुये मन्त्रों को यानी "ज्येष्ठाय स्वाहा, श्रेष्ठाय स्वाहा, प्रात्ताय स्वाहा, विस्तिष्ठाये स्वाहा, वाचे स्वाहा, प्रतिष्ठाये स्वाहा, चाचुं स्वाहा, संपदे स्वाहा, श्रोत्राय स्वाहा, श्रायतनाय स्वाहा, प्रज्ञास्य स्वाहा, मनसे स्वाहा, रेतसे स्वाहा" इन मन्त्रों को पढ़ कर श्राम्त में घृत की श्राहुति देता जाय श्रोर हर बार वचे खुचे घी को मन्ध में डालता जाय ॥ २ ॥

मन्त्रः ३

अग्नये स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्थे सश्चस्वयवनयति सोमायः स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्थे सश्चस्वयवनयति भूः स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा वन्ते संश्रंसवमवनयितं सुवः स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सश्क्षवमवन्यिति स्वः स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सश्क्षवमवनयित यूर्भवः स्वः स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सश्च्ष्यवमवनयित श्रह्माये स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सश्च्ष्यवमवनयित श्रद्धाय स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सश्च्यवमवनयित श्रद्धाय स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सश्च्यवमवनयित भविष्यते स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सश्च्यवमवनयित विश्वाय स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सश्च्यवमवनयित सर्वोय स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सश्च्यवमवनयित प्रजायत्ये स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सश्च्यवमवनयित प्रजायत्ये स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा मन्ये सश्च्यवमवनयित ।।

पदच्छेदः ।

आग्नये, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, सोमाय, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, मूः, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, भुवः, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, स्वः, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, मूः, सुवः, स्वः, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, श्रद्धाय, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, भूताय, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, भूताय, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, भ्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, सर्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति, प्रजापत्वे, स्वाहा, इति, आग्नो, हुत्वा, मन्थे, संस्रवम्, आवनयति।।

पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः अभ्यये क्वाहा≔गण्डिके किवे बाहुति इति≔ऐसा रेता इं + डक्स्वा≔कह कर श्वान्त्री=श्वीन में
हुत्वा=होन करके
मन्धे=शब्ध में
संस्वयम्=वचे हुवे वृत को
श्रवनयति=हासता जाय
सोमाय स्वाहा=सोम के विषे शाहुति
देता हुं
हृति=ऐसा
+ उक्त्वा=कह कर
श्रामी=श्वीन में
हुत्वा=होम करके
मन्धे=मन्ध में
संस्वयम्=वचे हुथे वृत को
श्रवनयति=हासता जाय

इति=ऐसा + उक्त्वा=कह कर झग्नी=झग्नि में हुत्वा=होग करके झग्धे=मन्थ में संस्नयम्=बचे हुवे घृत को झवनयति=डाबता जाय भुवः स्वाहा=भुवर्लोक के क्षिये झाहुति देताहूं

भूः स्वाहा=पृथिवी के बिये श्रा-हुति देताहूं

बाहुति देताहूं इति=ऐसा + उक्त्वा=कह कर झग्नी=ब्राग्न में हुत्वा=होम करके संस्वसम्=को हुवे वृत को मन्ये=मन्य में
अवनयति=डाकता जाव
स्वः स्वाहा=स्वः के क्षिये आहुति
देताहूं
इति=ऐसा
+ उक्त्या=कह कर
अग्गी=धीन्न में
हुत्वा=होम करके
मन्ये=मन्य में
संस्रवम्=वचे हुये घृत को
अवनयति=छोदता जाव
भू:भुवःस्वः { इन तीनों के लिये
स्वाहा { आहुति देता हूं

इति=पेता + उक्त्या=कह कर श्रम्नौ=श्रम्भि में द्वुत्वा=होम करके मन्ये=मन्थ में संस्रवम्=बचे हुये घृत को श्रवनयति=डाबता जाय

ब्रह्मणे स्वाहा=मझ के किये आहुति देताहुं इति=ऐसा + उक्त्वा=कह कर अग्नों=अग्नि मॅ हुत्वा=होम करके मन्थे=मन्य में संस्रवम्=बचे हुये पृत को अवनयति=डाजता जाय क्षञ्चाय स्वाहा=क्षञ्च के किये बाहुति देताहुं

इति≕ऐसा + उक्त्या=कह कर अग्नी≔श्रीन में हुत्वा=होम करके मन्धे=मन्धविषे संस्रवम्≔बचे हुये घृत को श्रवनयति≔दाबता जाय भूताय स्वाहा=भूत के विवे श्राहृति देताहूं इति≔ऐसा +उक्त्वा=कह कर श्चानी=श्वरिन में हुत्वा=होम करके मन्धे≈मन्थ में संस्रवम्=बचे हुये घृत को श्चवनयति≔डालता जाय भविष्यते=भविष्य के लिये श्राहुति देता हूं इति≕ऐसा + उक्त्वा=कह कर श्चारनी=श्चरिन में ं हुत्वा=होम करके मन्थे=मन्थ में संस्रवम्=बचे हुये घृत को **श्रवनयति=**हात्तता जाय विश्वाय स्वाहा=विश्व के विषे ग्राहति

देता हू

इति=ऐसा + उक्त्वा=कइ कर ऋग्नी=किन में द्वृत्वा=होम करके मन्धे=मन्य में संस्रवम्=बचे दुवे वृत को ऋवनयति=डाबता जाय सर्वाय स्वाहा≔सब के बिये श्राहुति

देता हूं
हित=ऐसा
+ उफ्त्वा=कह कर
श्रागौ=श्राग्न में
हुत्वा=होम करके
संस्रवम्=बचे हुये घृत को
मन्थ=मन्थ में
श्रवनयति=हासता जाय
प्रजापतये } प्रजापति के सिक्रं
स्वाहा } श्राहित देता हूं

+ उक्त्वा=कह कर अग्नी=ग्रग्नि में हुत्वा=होम करके मन्थे=मन्थ में संस्रवम्=बचे हुये पृत को अयनयति=ढाखता जाब

भावार्थ ।

हे प्रिय ! इन नीचे लिखे हुये मन्त्रों को यानी " झग्नये स्वाहा, सोमाय स्वाहा, भूःस्वाहा, भुवःस्वाहा, स्वःस्वाहा, मूर्भुवः स्वः स्वाहा, ब्रह्मस्यो स्वाहा, श्रद्धाय स्वाहा, भूवाय स्वाहा, भविष्यते स्वाहा, विश्वाय स्वाहा, सर्वीय स्वाहा, प्रजापतये स्वाहा" पढ़ कर श्राग्नि में हवन करके बचे हुये घत को मन्थ में डालता जाय ॥ ३ ॥

मन्त्रः ४

अधैनमभिमृशति भ्रमदसि ज्वलदसि पूर्णमसि पस्तब्धमस्ये-कसभगसि हिंकुतगसि हिंकियमाणमस्युद्गीथमस्युद्गीयमानमसि आ-वितमसि प्रत्याश्रावितमस्यार्द्रे संदीप्तमसि विभुरसि प्रभुरस्यव्यमसि ज्योतिरसि निधनमसि संवर्गोऽसीति ॥

पदच्छेदः ।

अथ, एनम्, अभिमृशति, भ्रमद्, असि, ज्वलद्, असि, पूर्णम्, श्रसि, प्रस्तब्धम्, श्रसि, एकसभम्, श्रसि, हिंकृतम्, श्रसि, हिंक्रिय-माण्म्, श्रसि, उद्गीथम् , श्रसि, उद्गीयमानम्, श्रसि, श्रावितम्, श्रसि, प्रत्याश्रावितम्, श्रसि, श्राद्रें, संदीप्तम्, श्रसि, विभु:, श्रसि, प्रभुः, श्रम्, श्रनम्, श्रम्, ज्योतिः, श्रम्, निधनम्, श्रम्, संवर्गः, श्रमि, इति ॥

पदार्थाः श्चान्वयः द्यथ=इसके उपरान्त एनम्=इस मन्थ को श्रभिमृशति=स्पर्श करे + च=घौर + आह=कहे + सन्ध=हे मन्थं ! भ्रमव्=जगत् को भ्रमानेवाला + त्वम् श्रासि=तृ ही है श्रसि≔तू ही है उवलद=हे मन्थ ! ब्रह्माएरका प्रकाश करनेवाखा + त्वम् झासि=त् ही है पूर्णम्=हे मन्थ ! इस ब्रह्मा-यह का ब्यापक

पदार्थाः श्चन्वयः + त्वम् आसि=त् ही है प्रस्तब्धम्=हे मन्थ ! श्राकाश की तरह निष्कस्प + त्वम् असि=त् ही है एकसभम्=इस जगत्रूपी सभा

का सभापति हिंकुतम्=हे मन्थ ! यज्ञमें हिंकार + त्वम् आसि=तृ ही है हिंकिय- } _हे मन्थ ! हिंकार का

मायम् } विषय भी + त्वम् असि=त् ही है + मन्ध=हे मन्ध !

उद्गीधम्=ॐकार + त्वम् ऋसि≔तृ ही है +त्वम् श्रसि=तृ ही है विभः≔हे मन्य ! विभुरूप उद्गीयमानम्=हे मन्य ! ॐकार का +त्वम् ऋसि=तृ ही है विषय भी प्रभः≔हे मन्थ ! सर्वशिक्त-+ त्यम् असि=तृ ही है आवितम्=हे मन्थ ! अ।वित यानी यज्ञविषे प्रशंसा + त्वम् आसि=त् ही है म्रान्नम्≔हे मन्थ ! भन्न किया गया + त्वम् असि=त् ही है + त्वम् आस=त् हा है हे मन्य ! जिस ज्योतिः=हे मन्य की प्रशंसा ऋत्विः + त्वम् श्रसि=त् ही है जादि यहा विषे निधनम्=हे मन्य सुनाते हैं सोई + स्वम् कार्यिक्य की के ज्योतिः=डे मन्थ ! ज्योतिरूप निधनम्=हे मन्ध ! बय स्थान + त्वम् श्रासि=तृ ही है + त्वम् असि=त् ही है संबर्गः=हे मन्ध ! संहार-आर्डे=हे मन्थ ! मेघों के भीतर + त्वम् } =तृ ही है। झसि इति }=तृ ही है। संदीतम्=प्रकाशरूप

भावार्थ ।

हे सीम्य ! इसके उपरान्त अध्वर्धु मन्य को स्पर्श करे और कहे कि हे मन्य ! त्र जात् का आमक है, तू ही हे मन्य ! ब्रह्मायङ का प्रकाश करनेवाजा है, तू ही हे मन्य ! इस ब्रह्मायङ में ज्यापक है, हे मन्य ! तू ही आकाशवत् निष्कम्य है, हे मन्य ! तू ही जगत्रूपी सभा का सभापित है, हे मन्य ! तू ही यज्ञ विवे हिंकार है, हे मन्य ! तू ही यज्ञ विवे हिंकार है, हे मन्य ! तू ही यज्ञ में हिंकार का विवय भी है, हे मन्य ! अक्काररूप तू ही है, हे मन्य ! अक्कार सभा पक्ष विवे ब्रह्मिजादि सुनाते हैं सो तू ही है, हे मन्य ! मेघों के अभ्यन्तर प्रकाशरूप तू ही है, हे मन्य ! तू ही सर्वश हिं मन्य ! तू ही सर्वश हिं मन्य ! इसकर तू ही है, हे मन्य ! ज्योतिरूप

तू ही है, हे मन्थ ! लयस्थान तू ही है, हे मन्थ ! संहारकर्ता तू ही है।। ४॥

मन्त्रः ५

श्रयेनमुचच्छत्यामछस्यामछ हि ते महि स हि राजेशानोऽधि-पतिः स मार्थः राजेशानोऽधिपतिं करोत्विति ॥

पटच्छेटः ।

श्रथ, एनम्, उद्यच्छति, श्रामंसि, श्रामंहि, ते, महि, सः, हि, राजा, ईशानः, अधिपतिः, सः, मां, राजा, ईशानः, अधिपतिम्, करोतु, इति ॥

श्रथ=इसके उपरान्त एनम्=इस मन्थ को + ऋध्वर्युः=ऋध्वर्यु + मन्थम्=मन्थ को + हस्ते=हाथ में उद्यच्छति=लेता है

द्यान्वयः

+ च=श्रीर + आह≖कहता है कि

+ मन्ध=हे मन्ध !

+ त्वम्=त्

+ सर्वम्=सब श्चामंसि=जानता है

+ वयम्=हम स्रोग

ते=तेरे

पदार्थाः ग्रत्वयः

पदार्थाः महि=महिमा को ग्रामंहि=मानते हैं

स्यः=वही स्राप हि≕भवश्य

राजा=राजा है

ईशानः=सबका नियन्ता श्रधिपतिः=सब के पालक हैं

सः=श्राप सब के

राजा=मालिक हैं

ईशानः=सबके शासन करने-

डारे हैं

माम्=मुक्को

श्रधिपतिम्=सबका प्राधिपति करोतु इति=करं

भावार्थ ।

हे सौन्य ! पूर्वोक्त प्रार्थना के पश्चात् मन्थसहित पात्र को हाथ में उठा लेता है और उससे प्रार्थना करता है. हे ब्रह्मन् ! हे मन्थ ! तू सबका जानने बाला है हम तेरे महत्त्व को अच्छीतरह जानते हैं. त् ही सब का राजा है, तृ ही सबका शासन करनेहारा है. इसिलये तृ ही सबका अधिपति है, वहीं तृ राजा सबका मालिक मुसको भी स्रोक में सब का अधिपति बना ॥ ४॥

मन्त्रः ६

अथैनमाचामित तत्सिविदुर्वरेण्यम् मधुवाता ऋतायते मधु क्षर्रान्त सिन्धवः माध्वीनीः सन्त्वोषधीः । भूः स्वाहा भगीं देवस्य धीमिह मधु नक्षमुतोषसो मधुमत्पार्थिवछ रजः मधु द्यारस्तु नः पिता । भुवः स्वाहा थियो यो नः मचोदयात् । मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमाछ अस्तु सूर्यः माध्वीर्गावो भवन्तु नः स्वः स्वाहेति । सर्वा च सावित्री-मन्वाह सर्वाश्च मपुमतीरहमेरेदछ सर्व भूयासं भूधुवः स्वः स्वाहेत्यन्तत आचम्य पाणी प्रक्षाल्य जघनेनाग्नि पाक्शिराः संविशति प्रातरादित्यमुपतिष्ठते दिशामेकपुण्डरीकमस्यहं मनुष्याणामेकपुण्डरितं भूयासमिति यथेतमेत्य जघनेनाग्निमासीनो वछंशं जपित ॥

पद्च्छेदः।

अथ, एनम्, आचामित, तत्, सिन्तुः, वरेगयम्, मधु, वाताः, झृतायते, मधु, क्षरिन्त, सिन्धवः, माध्वीः, नः, सन्तु, आपधीः, भूः, स्वःहा, भर्गः, देवस्य, धीमिहि, मधु, नक्षम्, चत, उषसः, मधुमत्, पार्थवम्, रजः, मधु, चौः, अस्तु, नः, पिता, भुवः, स्वाहा, धियः, यः, नः, प्रचोदयात्, मधुमान्, नः, वनस्पितः, मधुमान्, अस्तु, सूर्यः, माध्वीः, गावः, भवन्तु, नः, स्वः, स्वाहा, इति, सर्वाम्, च, सावित्रीम्, अन्वाह, सर्वाः, च, मधुमतीः, आहम्, एव, इत्म्, सर्वम्, भूयासम्, भूः, भुवः, स्वः, स्वाहा, इति, अन्ततः, आचम्य, पाणी, प्रक्षाच्य, जधनेन, अग्निम्, प्रक्षुग्रदरीकम्, भूयासम्, एकपुग्रदरीकम्, भूयासम्, इति, यथेतम्, एकपुग्रदरीकम्, भूयासम्, इति, यथेतम्, एकपुग्रदरीकम्, भूयासम्, इति, यथेतम्, एत्य, जघनेन, आग्निम्, आसीनः, वशम्, अपितः।।

पदार्थाः द्यम्बयः झथ=तिस के डपरान्त एनम्=इस मन्थ को ग्राचामति=सावे + तस्य=तिस मन्ध भक्षण का + प्रकार:=प्रकार + इत्थम्=ऐसा है बरेएयम हे ई्रवर! भ्रापकी अनुप्रह से वायुगण मधुकी तरह सुख-कारी होतेहुये मेरी रह मधु वाता नदियां मधुर रस न्रातायते से पूर्ण हो कर इ-मधु श्ररन्ति मारी तरफ चलती सिन्धवः रहें इस जीवों के माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः

भृः

+ एनम्≃इस म्बाहति को

स्वाहा

धीमहि मत् पार्थिवं पिता भुवः स्वाद्या कल्याण ुके लिये भादि **ब्रोपधियां** मधुर + उक्त्वा=कह कर हे पर-+ ग्रासम्=श्रास को कृपा करते ऊपर रहो धियः

पदार्थाः

+ उक्त्वा≔पढ़ कर

+ प्रथमम्=पहिला + प्रासम्=प्रास

श्चाचामति=खाता है + पुनः≔िकर

भर्गः 🕽 देवस्य

> हे परमात्मन् ! रात्रि और दिन मा-बियों को मधु होय हमारे कल्याया के विये यह पालन करनेष्टारा गुलोक मधु होय नभचर

+ एनम्=इस ब्याह्नति को

+ द्वतीयम्≕मन्थ के दूसरे

द्याचामति=बाता है

प्रचोदया

मधुमाष्ट्रो घन स्पतिर्म-धुमां अस्त सुर्यः माध्वी-र्गाषो भव-न्तुनः स्वः स्वाहा इति

हे परमात्मन् ! ह-मारेबिये वनस्पति मधुर होवें सूर्य मः धुर होवे क्षिये गौवें दुग्धदेनेवासी होवें भक्षोक और भुव-लोंक को सुख पहुँ-

+ एनम्=इस व्याहति को + उक्त्वा=कह कर + तृतीयम्=मन्थ के तीसरे + ब्रासम्=ब्रास को +म्राचामति=खाता है

+ च=िकर

सर्वाम् सा-वित्रीम् च मधुमतीःइ-दम् सर्वम् श्रहम् एव भूयासम् भूःभुवःस्वः स्वाद्या इति

हे परमास्मन् !यह सब हम होजावें हे जगन्निवास, पर-मात्मन् ! आपके उस वर्षानीय तेज काध्यान हम सब में कर जो हमारे सब शुभकर्मी भौर भूयासम् इति=होऊ बुद्धिकी पवित्रता

+ इति≕ऐसा

+ अवशिष्टम्=वचे हुये सन्थ को + भक्षयत्≕कावे अन्ततः=अन्त में यानी चारों प्राप्त के बाद श्राचम्य=श्राचमन कर पाणी=हाथ प्रक्षाल्य=धो कर अशिनम्=श्रीन के जघनेन=पीचे प्राक्शिराः=पूर्व की तरफ शिर संविशति=सोवे प्रातः=दूसरे दिन प्रातःकाल आदित्यम्=सूर्व का उपतिष्ठते=उपस्थान यानी प्रार्थना करे + द्यादित्य=हे सूर्य ! त्वम्≕त् दिशाम्=दिशाश्रों में ऐसी आप कृपा करें एकपुराडरीकम्=श्रखयह श्रेष्ठ कमल-ग्रसि=स्थित है ऋह्म्≕में भी मनुष्यागाम्=मनुष्यां में चपने चन्तःकरखप्कपुएडरीकम्=चखराद श्रेष्ठ कमज-वत् त्रिय ततः≔डपस्थान के उपरान्त

> यथेतम्=जिस मार्ग से गया था उसी मार्ग से एत्य=यज्ञमण्डप में श्राकर

श्रारितम्=श्रानि के

क्राध्याय ६ त्राह्मणा ३

जघनेन=पी®े द्यासीनः=वैठा हुमा वंशम्=वंश ब्राह्मण का जपति=जण करे

भावार्थ ।

हे सौम्य ! जिस मन्थ को ऋत्त्रिज्लोग हाथ में लिये रहें उसको चारग्रास करके नीचे लिखे हुये मन्त्रों को पढ़ कर भक्षरा करें, पहिला ग्रास इस मन्त्र करके भक्षगा करें, ''तत्सवितुर्वरेगयं मधु वाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्थवः माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः भूः स्वाहा^{११} दूसरा प्रास दूसरे इस लिखे हुये मन्त्र करके भक्ष्मा करें, ''भर्गो देवस्य धीमहि मधुनक्त-मुतोपसो मधुमत्**पार्थिवंरजः मधुद्योरस्तु नः पिता**सुवः स्वाह्य ⁷⁷ तीसरा प्रास इस नीचे लिखे हुये मन्त्र करके भक्षगा करें, ''धियो यो नः प्रचो-दयात् मधुमान्नोवनस्पतिर्मधुमां श्रम्तु सूर्यः माध्वीर्गावो भवन्तु नः स्वः स्वाहा'' चौथे प्रास को इस नीचे लिखे हुये मन्त्र को पढ़ कर भक्षरा करें ''तत्सवितुर्वरेगयं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् मधु-मान्नो वनस्पतिर्मधुमां अस्तु र्सूयः माध्वीर्गावो भवन्तु नः मधुवाता ऋता-यते मधुक्षरन्ति सिन्धवः माध्वीर्नः सन्त्वोषधीर्माध्वीर्गावो भवन्तु नः द्याहमेथेदं सर्व भूयासं भूर्मुवः स्वः स्वाहा[?] इसके पश्चात् द्याचमन कर दोनों हाथ घोकर अधिन के पीछे पूर्वकी तरफ सिरहाना करके सो जाय ऋोर दूसरे दिन प्रातःकाल उठ कर सर्वव्यापी परमात्मा सूर्य की प्रार्थना करे जिसका यह मन्त्र है '' दिशाम् एकपुएडरीकम् असि '' हे सूर्य, भगवन् ! तू पूर्व पश्चिम आदि समस्त दिशाओं का श्रेष्ठ और अखगड अधिपति और कमजवत् सबको अतिप्रिय है इस लिये में चाहता हूं कि मनुष्यों में श्रेष्ठ होजाऊं झौर कमलवत् सबको प्रिय लगूं. इसके **उपरान्त जिस मार्ग करके वह गया था उसी मार्ग करके य**झमराडप में लीट स्थाकर स्थरिन के पास घुटनों के बल बैठकर वक्ष्यमागा वंश ब्राह्मग्रा का जप करे यानी ऋषि झौर ऋषियों के शिष्य का उचारग्रा करे॥ ६ ॥

मन्त्रः ७

तक्ष हैतपुद्दालक आरुणिर्वाजसनेयाय याज्ञवल्क्यायान्तेवासिन उक्त्वोवाचापि य एनक्ष शुष्के स्थाणौ निषिश्चेज्ञायेरघ्शास्ताः प्ररोहेगुः पलाशानीति ।।

पदच्छेदः ।

तम्, ६, एतम्, उद्दालकः, आरुणिः, वाजसनेयाय, याझवल्क्याय, आन्तेवासिने, उक्त्वा, उवाच, श्रपि, यः, एनम्, ग्रुष्के, स्थाणौ, निषि-श्वेत्, जायेरन्, शाखाः, प्ररोहेयुः, पलाशानि, इति ॥

ज्रात्सयः

पदाथ ह=इसके परचात्

श्चारुणिः≔मस्य के पुत्र उद्दालकः=उदातक ऋषि ने

तम्≃उस

एतम्=इस होमविधि को

बाजसनेयाय) अपने शिष्य +स्वस्य (=वाजसनेयी

याश्चवत्क्याय=याज्ञवत्क्य के प्रति

उक्त्वा=उपदेश देकर उचाच=कहा कि

पदार्थाः | ऋन्वयः

य≔जो

पनम्≔इस मन्य को

पदार्थाः

शुष्के=स्खे स्थागो=दृक्ष के जपर निषिञ्चेत्=डाब देवे तो

शाखाः≔डावियां जायेरन्=निकत ग्रावें

च=ग्रीर

4-91

पताशानि=पत्ते प्ररोहेयुः इति=जगजाय

भावार्थ।

हे सौम्य ! इसके परचात् अरुगा के पुत्र उदाक्षक ऋषि ने इसी होमविधि को अपने शिष्य वाजसनेयी याज्ञवरूक्य के प्रति उपदेश करके उससे कहा कि जो कोई इस मन्य को सूखे वृक्ष पर डाज देवे तो उस सूखे वृक्ष में से नूतन डालियां निकल आवें और पत्तियां भी झगजायें ॥ ७ ॥

मन्त्रः ८

एतम् हैव वाजसनेयो याज्ञवल्क्यो मधुकाय पैक्क्याबान्तेवासिक

जन्त्वोवाचापि य एन**छ शुष्के स्थागौ निविश्वे**ज्ञायेर्दशास्ताः मरोहेयुः पलाशानीति ॥

पवच्छेदः ।

एतम् , उ. ह. एव, वाजसनेयः, याज्ञवल्क्यः, मधुकाय, पैङ्गयाय, अन्तेवासिने, उक्त्वा, उवाच, अपि, यः, एनम्, शुष्के, स्थार्यो, निष-**भ्वे**त्, जायेरन्, शाखाः, प्ररोहेयुः, पलाशानि, इति ॥

श्चन्ययः

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

ह उ=इसके बाद बाजसनेयः=वाजसनेयी याञ्चवल्क्यः=याञ्चवल्क्य ने एतम् एव=इस होमविधि को श्रन्तेवासिने=मपने शिष्य पेङ्गश्चाय=पिङ्ग के पत्र मधुकाय रे =मधुक को वपदेश करके

उवाच=कहा कि यः=जो कोई

एनम्=इस मन्थ को शुदके≂सुखे स्थागी=वक्ष पर श्चपि=भी निषिञ्चत्=डाल देवे तो शाखाः=उस में से दाकियां जायेरन्=निकस मार्वे + च=घौर

पलाशानि=पत्ते प्रराहेयुः इति=बगजार्य

भावार्थ ।

हे सौम्य ! वाजसनेयी याह्मवल्क्य ने इस होमविधि को अपने शिष्य पिङ्क के पुत्र मधुक के प्रति उपदेश दे कर कहा कि जो इस मन्थ को सखे बक्क पर डाज देवे तो उस में से डाजियां निकल आवें और पत्ते लग जायेँ ।! ⊂ ।।

मन्त्रः ६

एतमु हैव मधुकः पेङ्कर्यश्चलाय भागवित्तयेऽन्तेवासिन उक्त्वो-वाचापि य एनछ शुष्के स्थागौ निषिश्चेजायेरव्शाखाः प्ररोहेयुः पलाशानीति ॥

पदच्छेदः ।

एतम्, उ, इ, एव, मधुकः, पैक्क्षयः, चूलाय, भागवित्तये, अन्तेवा-

सिने, उक्त्वा, डवाच, झिप, यः, एनम्, शुब्के, स्थाग्गी, निषिश्वेत्, जायेरन्, शाखाः, प्र: [:, पकाशानि, इति ॥ पदार्थाः स्नान्वयः श्रन्वयः पदार्थाः

ह=िकर पेंड्रबः=पिङ्ग का पुत्र मधुकः=मधुक एतम् एव=इस होमविधि को उक्त्वा=उपदेश करके श्चन्तेवासिने=घपने शिष्य भागवित्तय=भगवित्ति के पुत्र च्यूलाय=चूत्रके प्रति

उवाच=कहता भया कि यः≕जो यज्ञकर्ता

एनम्=इस मन्थ को शुष्के=सुखे स्थाणौ=पेड पर निषिञ्जेत्=डाज देवे तो उसमें से शाखाः=राजियां

जायेरन्=निकल श्रावें + च=श्रौर **पत्ताशानि**=पत्तियां

प्रराहेयुः इति=लगजाय भावार्थ ।

फिर पिङ्क का पुत्र मधुक इसी होमविधि को उपदेश करके आपने शिष्य भगवित्ति के पुत्र चूलके प्रति कहता भया कि जो कोई इस मन्थ को सुखे वृक्षपर डालदेवे तो उसमें से डालियां निकल आवें श्रीर पत्तियां लगजायँ ॥ १ ॥

मन्त्रः १०

एतमु हैव चूलो भागवित्तिर्जानकय श्रायस्थूणायान्तेवासिन उक्त्वोवाचापि य एनछं शुष्के स्थाणौ निषिश्चेज्जायेर्ञ्शाखाः परोहेयुः पलाशानीति ॥

पदच्छेदः ।

एतम्, उ, इ, एव, चूलः, भागवित्तिः, जानकये, श्रायस्थूगाय, श्चन्तेवासिने, उक्त्वा, उवाच, श्चिप, यः, एनम्, शुष्के, स्थागाँ, नि-षिश्वेत्, जायेरन्, शाखाः, प्ररोहेयः, पलाशानि, इति ॥ पदार्थाः म्नन्वयः पदार्थाः अन्वयः भागवित्तिः=भगवित्ति का पुत्र ह=स्पष्ट

एतम् एव=इसी होमविधि को

चूलः=चृब

उक्त्वा=उपदेश करके अन्तेवासिने=अपने शिष्य जानकथे=जनक के पुत्र आयस्थूणाय=आयस्थूण को उक्त्वा=डपदेश कर उवाच=कहता भया कि यः=जो केई यज्ञकर्ता पनम=इस मन्थ को

शुष्के≃स्से स्थासी=पेदपर निषिञ्चेत्=डाबदेवे तो शासाः=डसमें से दावियाँ जायेरन्=निकस झावें + च=भौर पत्ताशानि=पत्तियां प्ररोहेयुः इति=सगजायँ

भावार्थ ।

भगवित्ति का पुत्र चूल इसी हो मविधि को अपने शिष्य जनक के पुत्र आयस्थूम् के प्रति उपदेश देकर कहता भया कि जो कोई इस मन्थ को सूखे वृक्ष पर डालदेवे तो उसमें से नई डालियां निकल आवें और पत्तियां लगजायें ।। १०॥

मन्त्रः ११

पतमु हैव जानिकरायस्थूणः सत्यकामाय जाबालायान्तेवासिन उत्तरवोवाचापि य एनछे शुष्के स्थार्णो निषिष्टचेज्जायेरञ्झालाः प्ररोहेयुः पलाशानीति ॥

पदच्छेदः ।

एतम्, उ, ह, एव, जानिकः, झायस्थूगाः, सत्यकामाय, जाबा-जाय, झन्तेवासिने, उक्त्वा, उवाच, झिष, यः, एनम्, शुक्के, स्थागौ, निषिश्वेत्, जायेरन्, शाखाः, प्ररोहेयुः, पजाशानि, इति ॥ झन्वयः पदार्थाः | झन्वयः पदार्थाः

ह उ=िफर
जानिकः=जनक के पुत्र
आयस्थूणः=धावस्थूण
पतम् पव=इसी होमविधि को
उक्त्वा=उपदेश देकर
अन्तेवासिने=धपने शिष्य
जावासाय=जनक के पुत्र

प्रनयः पदार्थाः सत्यकामाय=सत्यकाम के प्रति उदाच=कहता मया कि यः=जो कोई यज्ञकतां एनम्=इस सन्य को शुष्के=सृखे स्थायों=इस पर निषिश्चेत्=डाकदेवे तो शाखाः=डसमें से डाखियां जायेरन्=निकक्ष वावें + ख=भीर पलाशानि=पत्तियां प्ररोहेयुः इति=सगजार्य

भावार्थ ।

इसके परचात् जनक के पुत्र झायस्थूगा इसी होमविधि को झपने शिष्य जबल के पुत्र सत्यकाम को उपदेश देकर कहता भया कि जो कोई इस मन्थ को सूखे दृक्ष पर डालदेवे तो उसमें से डालियां निकल झावें झौर पत्तियां लगजायें ॥ ११ ॥

मन्त्रः १२

एतपु हैव सत्यकामो जावालोऽन्तेवासिभ्य डक्त्वोवाचापि य एनछ शुष्के स्थार्गो निषिञ्चेज्ञायेरञ्ज्ञालाः परोहेयुः पलाशा-नीति तमेतं नापुत्राय वाऽनन्तेवासिने वा ब्रुयात् ॥

पदच्छेदः ।

एतम्, उ, ह, एव, सत्यकामः, जावातः, आन्तेवासिभ्यः, उक्त्वा, उवाच, आपि, यः, एनम्, शुष्के, स्थाग्गौ, निषिश्वेत्, जायेरन्, शाखाः, प्ररोहेयुः, पक्षाशानि, इति, तम्, एतम्, न, अपुत्राय, वा, आनन्तेवासिने, वा, श्रूयात् ॥

श्रन्वयः

पदार्थाः श्रन्वयः

पदार्थाः

ह उ=फिर
जावालः=जवल का पुत्र
सत्यकामः=सत्यकाम
पतम् पय=इसी होमविधि को
झन्तेवासिभ्यः=अपने शिष्यों से
डक्त्या≔कह कर
डवाच=कहता सवा कि
यः=जो कोई
पनम्=इस सन्ध को
हुष्के=सुके

स्थायी≔हक्ष पर श्रिप=भी निषिञ्चेत्≔हाबदेवे तो शाखाः=उसमें से हाजियां जायेरज्≕निकस झार्वे + ख=मौर पक्ताशामि=पत्तियां प्रदोहेगुःइति=बगजायँ बा=परन्तु तम्=इस एतम्=इस मन्थ को श्रपुत्राय=अपुत्र बा=और झनन्तेवासिने=बशिष्यके प्रति न=व नृयात्=डपदेश करे

भावार्थ ।

इसी प्रकार है सौन्य! जनक का पुत्र सत्यकाम इसी होमिविधि को अपने शिष्यों के प्रति उपदेश करके उनसे कहता भया कि जो कोई इस मन्थको सूखे दृक्ष पर डाल देवे तो उसमें से डाकियां निकक आवें और पत्तियां लगजायँ परन्तु इस मन्थ यानी इस होमिविधि का उपदेश अपुत्र और अशिष्य को न देवे ॥ १२ ॥

मन्त्रः १३

चतुरौदुम्बरो भवत्यौदुम्बरः स्त्रुव शौदुम्बरश्चमस श्रीदुम्बर इध्म श्रीदुम्बर्या उपमन्थन्यौ दश ब्राम्यािण धान्यानि भवन्ति श्री-हियवास्तिलमाषा श्रगुभियङ्गवो गोधूमाश्च मसूराश्च खल्वाश्च खल-कुलाश्च तान्यिष्टान्दधनि मधुनि घृत उपसिश्चत्याज्यस्य जुद्दोति ॥ इति तृतीयं ब्राह्मणम् ॥ ३ ॥

ग्रन्वयः

चतुरोदुम्बरः, भवति, झोदुम्बरः, स्नुवः, झोदुम्बरः, चमसः, झो-दुम्बरः, इध्मः, झोदुम्बर्थो, उपमन्थन्यो, दश, माम्याखा, धान्यानि, भवन्ति, ब्रीहियवाः, तिलमावाः, झालुप्रियङ्गवः, गोघूमाः, च, मसूराः, च, खक्बाः, च, खलकुलाः, च, तान्, पिष्टान्, द्धनि, मधुनि, घृते, उपसिश्वति, झाज्यस्य, जुहोति ॥

श्चन्वयः

पदार्थाः

पदार्थाः

चतुरीदु- } गूबर के चार प्रकार स्वरः भवति } के पात्र होते हैं इध्मः=बकरी श्रोदुस्वयीं=गुवर की

भौदुस्बरः=गूबर का

+ ख=धौर दश=दश प्रकार के

झौतुम्बरः } =गृबर का प्याखा चमसः } =गृबर का प्याखा झौतुम्बरः=गृबर की

द्वीने वर्षि

श्वान्यानि=धान्य
भवन्ति=धञ्च विषे होते हैं
ते=वे
ब्रीहियवाः=धान, जव,
तिस्तमाषाः=तिख, उदद,
अणुप्रियक्रयः=धगुवा, कद्गुनी
गोधूमाः=गेह्र
मस्राः=मस्र
च=धार खलवाः=मटर खलकुलाः=हलवा है

तान् पिष्टान्=तिन पिसे हुये
धान्यां को
दधनि=दद्दी में
मञ्जूनि=शद्द में
+ च=भीर
घृते=वी में
उपसिञ्ज्ञति=मिलावे
+ च पुनः=भीर फिर
झाज्यस्य=वृत का
जहोति=होम करे

भावार्थ ।

हे सौन्य ! होमकर्म करने में जो पात्र श्रौर श्रजादिकों की श्रा-वरयकता है उसके विधान को लिखते हैं—गूजर की जकड़ी के चार प्रकार के पात्र होते हैं. एक तो गूजर का खुवा होता है, दूसरा गूजर का प्याला होता है, तीसरी समिधा होती है, चौथे गूजर के उपमन्थनी पात्र होते हैं श्रौर जो दश प्रकार के श्रज प्राम में पैदा होते हैं वह यह हैं:—त्रीहि, जब, तिज, माप, कछुनी श्रौर श्रणुवा, गेहूं, मसूर, मटर, कुलथी इन सबको श्रच्छी तरह से पीस कर एक में मिलावे श्रौर उसमें दही, मधु श्रौर घृत डाले श्रौर फिर इसके पीछे घृत की श्राहुति देवे ॥ १३ ॥

इति तृतीयं ब्राह्मशाम् ॥ ३ ॥

श्रथ चतुर्थं बाह्मण्म्।

मन्त्रः १

प्पां वै भूतानां पृथिवी रसः पृथिव्या आपोऽपामोषशय श्रोष-धीनां पुष्पाणि पुष्पाणां फलानि फलानां पुरुषः पुरुषस्य रेतः ॥ पदच्छेदः।

एषाम्, वै, भृतानाम्, पृथिबी, रसः, पृथिन्याः, आपः, अपाम्,

श्रोषधयः, त्रोषधीनाम्, पुष्पाण्णि, पुष्पाण्णाम्, फलानि, फलानाम्, पुरुषः, पुरुषस्य, रेतः ॥

श्चरवयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

षषाम्≔इन + रसः≕सार भूतानाम्=पांच महाभृतीं का पुष्पाणि=मृत हैं वै=निरचय करके पुष्पाणाम्=पूजां का रसः≔सार + रसः=सार पृथिवी=पृथिवी है फलानि=फन हैं पृथिव्याः=पृथिवी का फलानाम्=फर्जो का . + रसः=सार + रसः=सार श्रापः=जब हैं पुरुषः=पुरुष है श्रपाम्=जब का पुरुषस्य=पुरुष का + रसः≔सार रसः≔सार श्लोषधयः=श्लोषधियां हैं रेतः≔वीर्य है श्रोषधीनाम्=श्रोषधियों का

भावार्थ ।

हे सौम्य ! इस चतुर्थ ब्राह्मगा में श्रीमन्थास्त्रकर्म के उपदेश के पश्चात् उत्तम सुयोग्य संतान के चाहने वाले मनुष्य के लिये रजोवीर्य की प्रशंसा की जाती है—हे सौम्य ! पांच जो महाभूत हैं उनका सार पृथिवी है, पृथिवी का सार जल है, जलका सार गेहूं, धान आदि ओपधियां हैं, ओपधियों का सार पुष्प हैं, पुष्पों का सार फल हैं, फलों का सार पुष्प हैं, पुष्पों का सार फल हैं, फलों का सार पुष्प हैं। १ ॥

मन्त्रः २

स ६ प्रजापतिरीक्षांचके हन्तास्मै प्रतिष्ठां कल्पयानीति स स्त्रियध्ं सस्रजे ताथ्ं स्टष्ट्वाऽघ उपास्त तस्मात्स्त्रियमघ उपासीत स एतं पात्रं प्रावाणमात्मन एव समुद्रपारयचेनेनामभ्यसृजत ।।

पद्च्छेदः ।

सः, इ, प्रजापतिः, ईक्षांचके, इन्त, अस्मै, प्रतिष्ठाम्, कल्पयानि,

इति, सः, स्नियम्, सस्जे, ताम्, स्ट्ट्या, अधः, खपास्ते, तस्मात्, स्नियम्, अधः, खपासीत, सः, एतम्, प्राश्वम्, प्रावासाम्, आत्मनः, एव, समुद्रपारयत्, तेन, एनाम्, अभ्यस्चत्ततः।।

श्चरयः

पदार्थाः अन्वयः

पदार्थाः

सः=वह प्रजापतिः=प्रजापति

> ह=ग्रवस्य ह=त-कप के माथ

हन्त=कृपा के साथ ईक्षांचके=देखता भया यानी विचार करता भया वि

श्रास्मै=इस पुरुष के उत्पक्ष करनेवासे वीर्य को

प्रतिष्ठाम्=प्रतिष्ठा को कल्पयानि=देऊं वानी शुभस्थान

देकं इति≔ऐसा सोच कर सः≔वह प्रजापति स्त्रियम्⊐ग्री को

सस्ते=डरपत्न करता भवा + पुनः≕फिर ताम्=डस की को

भावार्थ।

सुष्ट्वा≔उत्पन्न करके उसके साथ

द्यधः उपास्ते=मैथुन करता भवा तस्मात्=इसी कारण

=देखता भया यानी स्थियम्=ची के साथ विचार करता भया कि ग्रधःउपासीत=मैथुन कोग करें

> हि=क्योंकि सः=वइ प्रजापति

सात्मनः=अपने

एतम्=इस प्राञ्चम्=योनिविषे जानेवासे

+ प्रजनने- } =प्रजननेन्द्रिय को

समुद्गारयत्=फषप्रदसामर्थं से पूर्व करता भया

+च पुनः=धौर फिर तेन=तिस ऐसी इन्द्रियकरके

पनाम्=उस सी से श्रम्यस्जत=संसर्ग करता भया

हे सौम्य ! वह प्रजापित सृष्टि के पहिले बड़ी झानुप्रह के साथ विचार करता भया कि इस पुरुष के उत्पन्न करनेवाले वीर्य को कोई द्युसस्थान में दूं ताकि वह विशेष फलादायक हो, ऐसा सोचने पर उसने की जाति को उत्पन्न किया और उत्पन्न करके उसके साथ मेशुनकर्म करता भया फिर वह प्रजापित झपने प्रकृष्टगामी प्रजनन इन्द्रिय को उस कीके उपस्थ में स्थापित करता भया (जैसे वाजपेय यहामें सोम- कता से रस निकालने के निमित्त सिल पर कोड़ा स्थापित करते हैं) ड्योर फिर उसी ड्यपनी इन्द्रिय करके उस इतीसे पुत्रोत्पत्ति निमित्त इंसर्ग करता भया इसलिये स्वभार्या झीकेँ साथ पुत्रोत्पत्ति निमित्त सबको संसर्ग करना चाहिये ॥ २ ॥

मन्त्रः ३

तस्या वेदिरूपस्थो लोमानि बर्हिश्चर्माधिषवणे समिद्धो मध्य-सस्तौ मुक्कौ स यावान्ह वै वाजपेयेन यजमानस्य लोको भवति तावा-नस्य लोको भवति य एवं विद्वानधोपहासं चरत्यासार्थः स्त्रीणाश्च सु-कृतं दृङ्केऽथ य इदमविद्वानधोपहासं चरत्यऽस्य स्त्रियः सुकृतं दृक्कते।।

पदच्छेदः ।

तस्याः, वेदिः, उपस्थः, कोमानि, बर्हिः, चर्म, अधिषवग्रो, समिद्धः, मध्यतः, तो, मुख्को, सः, यावान्, ह, वे, वाजपेयेन, यजमानस्य, कोकः, भवति, तावान्, अस्य, लोकः, भवति, यः, एवम्, विद्वान्, अधोपहासम्, चरति, आसाम्, कीग्राम्, मुक्कतम्, वृक्ते, अथ, यः, इद्म्, अविद्वान्, अधोपहासम्, चरति, अस्य, क्षियः, मुक्कतम्, वृक्ते ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः अन्वयः

तस्याः=डस खीकी
अपस्थाः=डपस्थ इन्द्रिय
इवै=निरषय करके
वेदिः=वेदी है
लोमानि=जोम
बर्दिः=कुरा हैं
तो=वे दोनों
मुष्की=पोनिसमीप मांसखयर
झाधिपवरों=सोमबता के फब हैं

+ग्रानडुहम् रे वेब का वर्म है जो यह-+ग्रम रे विवे स्वका जाता है भ्यतः=बीचका कुवह
समिद्धः=विषका कुवह
समिद्धः=विषका कुवह
सामिद्धः=वाजपेय करके
यावान्=जितना
यजमानस्य=यजमान को
लोकः=खोक की प्राप्ति
भवति=होती है
तावान्=वतनाही
लोकः=खोक
अस्य=इस पुरुष के मैथुनकर्मी को
भवति=होता है

यः=जो उपासक श्रथ=ग्रीर प्वम्≔इस प्रकार यः≕जो विद्वान्=जानता हुआ 🐙 इतम=इस बात को अधोपहासम्=मैथुन को अधिद्वान्=नहीं जानता हवा चरति=करता है अधोपहासम्=मैथुन को + सः≔वह खरति=करता है ग्रस्य≔उसके श्रासाम्=इन स्त्रीग्राम्=िखयों के सुकृतम्=पुग्य को सुकृतम्=पुषय को स्त्रियः≕स्त्रियां बुङ्क्रो=प्राप्त होता है चुआते=हरवेती हैं

भावार्थ ।

हे सौम्य ! इस स्त्रीका सारा शरीर यह का साधन है, झौर उस की उपस्थ इन्द्रिय पिनत्र नेदी है, जोम कुशा हैं, झौर जो उपस्थ समीपस्थ दो मांस खगड हैं नहीं सोमलता के फल हैं झौर जो चर्म हैं नह बैंक के चर्म के सदर है जो नाजपेय यह में रक्खा जाता है उपस्थ इन्द्रिय के बीच का कुगड प्रदीप्त झिंगन है जो इस झिंगन में जब वीर्यरूपी होम द्रव्य का हवन किया जाता है तो जितना फल यानी लोकादि वाजपेय यह करके होता है उतनाही फल लोकादि की प्राप्तिरूप इस यह करके होता है जो उपासक इस प्रकार जानता हुआ मेंशुनकर्म करता है वह इन कियों के पुराय को प्राप्त होता है आर्थात् जो उपासक इस प्रकार जानता हुआ ते वाजपेय यह करके होता है आर्थात् जो उपासक इस प्रकार जानता हुआ स्त्रभार्या से मेंशुनकर्म करता है वह उस स्त्रीके पुरायकर्म के फल को प्राप्त होता है झौर जो ऐसा नहीं जानता हुआ मेंशुनकर्म करता है वह उस स्त्रीके पुरायकर्म के फल को प्राप्त होता है झौर जो ऐसा नहीं जानता हुआ मेंशुनकर्म करता है उसके पुरायकर्म को कियां हरकेती हैं ॥ ३ ॥

मन्त्रः ४

एतद्ध स्म वै तदिद्दानुदालक आरुणिराहैतद्ध स्म वै तदिद्दान्नाको मौहस्य आहेतद्ध स्म वै तदिद्दान्कुमारहारित आह बहुनो मर्या ब्राह्मणायना निरिन्द्रियाविसुकृतोऽस्माङ्कोकात्मयन्ति य इदमवि- ह्रां ७सो ऽघोपहासं चरन्तीति बहु वा इदछ सुप्तस्य वा जाप्रतो षा रेतः स्कन्दति ॥

पदच्छेदः ।

एतत्, इ, स्म, वे, तत्, विद्वान्, उदालकः, आरुशिः, आह, एतत्, इ, स्म, वै, तत्, विद्वान्, नाकः, मोहल्यः, आह, एतत्, ह, स्म, वै, तत्, विद्वान्, कुभारहारितः, झाह, वहवः, मर्याः, ब्राह्मगाः-यनाः, निरिन्द्रियाः, विसुक्ततः, अस्मात्, लोकात्, प्रयन्ति, ये, इदम्, श्रविद्वांसः, श्रधोपहासं, चरन्ति, इति, बहु, वा, इदम्, सुप्तस्य, वा, जाप्रतः, वा, रेतः, स्कन्दति ॥

श्चन्वयः

श्चम्बयः

पदार्थाः

पदार्थाः ;≔घरण का पुत्र विद्वान्=विद्वान् छद्दालकः=उदासक ने तत्=तिस पतत्=इस मैथुनकर्म को + इति≕ऐसा आह स्म=क्हा है + च=धौर तत्=तिसी पतत्=इस मैथुनकर्म को मौद्रल्यः=मुद्रत का पुत्र विद्वान्=विद्वान् नाकः=नाक ने ह बै≔स्पष्ट + इति=ऐसा ब्राह स्म=क्हा + च≔भौर तत्=तिसी एतत्र≔इस मैथुनकर्म को

विद्वान्=विद्वान् कुमारहारितः=कुमारहारित ने ह वै≃स्पष्ट इति=ऐसा श्राह स्म≔कहा है कि + ते=वे बह्वः≔बहुत से मर्याः=मरग्धर्मी निरिन्द्रियाः=इन्द्रियों के विषयों में श्रासक्ष हुये विसुकृतः=पुण्यरहित ब्राह्मणायनाः=जातिमात्र के ब्राह्मण

ग्रस्मात् । इस कोक से यानी स्रोकात् । ग्रहीर से प्रयन्ति=दूसरी योनि को प्राप्त होते हैं ये≃जो

इदम्=इस डक्र मैध्न को श्रविद्वांसः=न जानते हुवे

श्राचोपहास्त्रम् / विधित्वित सेमुन को वा≔वा
चरन्ति इति ऽ करते हैं + अल्पम्≔क्रम
+ च=भीर इत्म्=यह
यदि=चगर
यदि=चगर
सुप्तस्य=सोये हुये पुरुष का
वा=भथवा + सः≔वह
आग्रतः=जागते हुये पुरुष का
वड्=वहुत + प्रायश्चिल्सम्≕भायश्चित

भावार्थ ।

हे सौम्य ! इस मैथुनकर्म की प्रशंसा अक्या के पुत्र विद्वान उदा-क्षक अनुषिने की है, अरोर वैसेही सुद्रल के पुत्र विद्वान नाकने की है, तिसी कर्म की प्रशंसा कुमारहारित ने की है, इन लोगों का यह कहना है कि बहुत से मरणाधर्मी इन्द्रियों के विषयों में आसक्त हुये पुरायरहित नाममात्र के ब्राह्मण इस योनिसे दूसरी योनि को प्राप्त होते हैं जो मैथुनकर्म की विधि को नहीं जानते हुये और उसके तार्ल्य को न समस्तते हुये मैथुनकर्म करते हैं, हे सौम्य ! इन अनुषियों की आज्ञा है कि अगर सोये हुये पुरुष का अथवा जागते हुये पुरुष का वीर्य बहुत या कम गिर जाय तो वह प्रायश्चित्त अवश्य करे।। ४॥

मन्त्रः ५

तदभिष्ठरोदतु वा मन्त्रयेत यन्मेऽच रेतः पृथिवीमस्कान्त्सीच-दोषधीरप्यसरचदपः इदमहं तद्रेत श्राददे पुनर्मामेत्विन्द्रियं पुनस्तेजः पुनर्भगः पुनरग्निर्धिष्ण्या यथास्थानं कल्पन्तामित्यनामिकाङ्गुष्ठा- * भ्यामादायान्तरेण स्तनौ वा सुवौ वा निष्ठुच्यात् ॥

पद्च्छेदः।

तत्, अभिमृशेत्, अनु, वा, मन्त्रयेत, यत्, मे, अव, रेतः, पृथि-वीम्, अस्कान्त्सीत्, यत्, ओषधीः, अपि, असरत्, यत्, अपः, इदम्, अहम्, तत्, रेतः, आददे, पुनः, माम्, एतु, इन्द्रियम्, पुनः, तेजः, पुतः, भर्गः, पुतः, अनिर्धिष्ययाः, यथास्थानम्, कल्पन्ताम्, इति, अनामिकाङ्गुष्टाभ्याम्, आदाय, अन्तरेगा, स्तनौ, वा, भ्रुवौ, वा, निमृज्यात् ॥

डास्वयः

पदार्थाः भ्रन्वयः

पदार्थाः

तत्ःचिकते हुवे उस
वीर्यं की

झिसिस्रोत्=स्पर्धं करें

सा=भीर

मन्त्रयेत=उसके कपर हाथ रक्ष

कर मन्त्र पढ़े कि

यत्ःची

झ्रद्य=भाग

मे=भेरा
रेतः=बीर्थं
पृथिवीम्=प्रथिबी पर
प्रक्रान्सोत्=निरता भया

यत्=जो वीर्थ

पृथिवीम्=प्रथिवी पर अस्कान्स्सीत्=िगरता भया यत्⇒जो वीर्य जोषधीः=भोषषी पर अपसरत्=िगरा है यत्⇒जो वीर्य अपः=जन में अपसरत्=िगरा है तत्=बसी इदम्=इस

> श्रहम्=में श्राद्दे=प्रहण करता हूं

रेतः≔वीर्य को

तत्≔वही इन्द्रियम्=इन्द्रिय शक्ति माम्च्युक्को पतु=माप्त होवे पुनः≔फिर + तत्=वदी तेजः≔कान्ति + पतु=मुक्तको प्राप्त होवे पुनः≕फिर तत्=वदी

भर्गः=ज्ञान एतु=मुक्तको मिक्रे

+ च=भौर

झिग्निर्धिष्ण्याः≔क्षिन में रहनेवाके देवता तत्च्डसी बीर्य को यथास्थानम्≔ययोचित स्थान पर कहपन्ताम्≕रक्लें इति≕पेसा

+ उक्त्वा=कद कर झनामिका- } = अंगुड और जना-कुष्ठाभ्याम् } मिका करके आदाय=बीय को उठाकर स्तनौ=दोनों स्तनों के

बीच में वा≕ग्रीर

सुबी=दोनों भी हों के सन्तरेत्त=बीच में

निम्हज्यात्=मार्जन करे

भावार्थ ।

है सीन्य! जिस पुरुष का वीर्य स्वलित होगया है, उसकी वाहिये कि उस गिरे हुये वीर्य को स्पर्श करे, झौर उसके ऊपर हाथ
रख कर मन्त्र पढ़े कि जो झाज मेरा वीर्य पृथिवी पर गिर पड़ा है,
और जो वीर्य झोषधी पर गिरपड़ा है, जो वीर्य जल में गिरपड़ा
है, उस वीर्य को में प्रह्मा करता हूं, और फिर उसके द्वारा वही
इन्द्रियशिक मुम्कको प्राप्त होने, बही कान्ति मुम्क को प्राप्त होने, वही
ज्ञान मुम्कको प्राप्त होने, और अग्नि आदि देनता उस मेरे वीर्य को यथोचित स्थान पर स्थापित करें, ऐसा कह कर उसको चाहिये कि उस
गिरे हुये वीर्य को झंगुष्ठ और अनामिका से उठा कर दोनों स्तनों के
बीच में अथवा दोनों भोहों के बीच में लगाने ॥ ४ ॥

मन्त्रः ६

अथ यद्युदक भात्मानं पश्येत्तदभिमन्त्रयेत मयि तेज इन्द्रियं यशो द्रविर्णां सुकृतमिति श्रीई वा एषा स्त्रीणां यन्मलोद्दासास्त-स्मान्मलोद्दाससं यशस्विनीमभिक्रम्योपमन्त्रयेत ॥

पदच्छेदः ।

डाथ, यदि, उदके, आत्मानम्, पश्येत्, तत्, आभिमन्त्रयेत, मयि, तेजः, इन्द्रियम्, यशः, द्रविताम्, सुकृतम्, इति, श्रीः, ह, वा, एषा, कीताम्, यत्, मलोद्वासाः, तस्मात्, मलोद्वाससम्, यशस्विनीम्, आभिकृत्य, उपमन्त्रयेत ॥

श्चासक्रम्य, उपमन्त्रयत ।।

श्वास्यः पदार्थाः श्चन्यः पदार्थाः
श्चार्थः तत्=उस जब को

यदि=जो श्वासमन्त्रयेत=श्चसमन्त्रय करे यह

अद्के=जब में कहता हुशा कि

श्वासमानम्=श्चपने गिरते हुये मयि=मेरे विषे जो

वीर्ष को तेजः=शरीर की कान्ति है

+ परिपश्येत्=देखे तो इन्द्रियम्=इन्द्रियसिक है

यशः≔यश है

द्रविष्यम्=द्रवय है

सुकुतम्=पुर्वय है

+ तानि=चनको

+ देवाः=देवता

◆ कल्पयन्तु=स्थित रक्खें

ह वै=और

यत्=जो

मलोद्धासाः=स्वच्छवक धारय

किये हुये है

पषा इति≕वह ऐसी मेरी की

स्त्रीशाम्=स्वियां में श्रीः=बस्मी है तस्मात्=तिसी कारव + इति=ऐसी मलोद्वाससम्=स्वच्छवस्वारवी यशस्विनीम्=यशवाबी स्त्री को स्मिनस्य=प्राप्त हो कर (प्कान्त में बैठ क डपमन्त्रयेत= { सन्तान की डला

भावार्थ।

हे सौन्य ! ऐसा कभी कभी देखने में आया है कि अधम नर स्वी के साथ जल में कीड़ा करके या अकेलाही स्नान करते समय अपने वीर्य को जल में तिरा देते हैं, ऐसे दुष्टकर्म के रोकने के लिये कहते हैं कि यदि जल में अपने वीर्य को गिरते हुये देखे तो उस जल को अभिमन्त्रणा करे यह कहता हुआ कि हे भगवन ! इस अष्टकर्म से जो मेरे शरीर की कान्ति, यश, वित्त और पुर्यय नष्ट हुये हैं उनको देवता मेरे लिये देवें, और मैं पुनः ऐसे नीचकर्म को न करूंगा अब स्वी की पवित्रता को दिखलाते हैं, यह कहते हुये कि जो स्वच्छ बल्ल धारणा किये विवाहिता मेरी स्वी है वह सब लियों में अष्ट है मेरे घर की शोभा है, संपत्ति है, सक्सी है, इस लिये ऐसी स्वच्छवल्ल धारणी और यशस्विनी स्त्री को प्राप्त होकर एकान्त विवे सन्तान उत्पत्ति के लिये संसर्ग करे, और अपनी विवाहिता स्त्री का निरादर न करे, और न अपने इन्द्रिय को कहीं दृषित करे।। है।।

यन्त्रः ७

सा चेदस्मे न दचात्काममेनामवक्रीणीयात्सा चेदस्मे नैव दचा-

त्काममेनां यष्ट्रपा वा पास्थिना वोपहैत्यातिक्रामेदिन्द्रियेख ते यशसा यश आददे इत्ययशा एव भवति ॥

पदच्छेदः ।

सा, चेत्, अस्मै, न, दद्यात्, कामम्, एनाम्, अवकीर्गीयात्, सा, चेत्, अस्मै, न, एव, दद्यात्, कामम्, एनाम्, यष्ट्या, वा, पाग्गिना, वा, उपहत्य, अविकामेत्, इन्द्रियेग्, ते, यशसा, यशः, आददे, इति, अयशाः, एव, भवति ॥

शन्वयः

पदार्थाः

चेत्=मगर सा=वह सी ग्रस्मै=पुरुष के कामम्=कामना को

न=न

द्द्यात्=देवे यानी पूर्य न करे तो यनाम्=इस खी को

्र उसकी इच्छा अनु-सार द्रव्य अथवा आभूवर्णो करके रा-जी करे

> + च=मोर चेत्=मगर सा=वह ची झस्मे=इस पुरुव के किये + झरा=घव भी कामम्=घभीष्ट काम को म द्यात्≕त देवे याची पूर्व न करे तो पनाम्≕इस ची को

ग्रन्वयः

पदार्थाः

यष्टवा=दरांड का भव दिसा करके

च(=घथवा

पाखिना=हाथ से

उपहत्य=सममा करके कहे कि

श्रहम्≕में

यशसा=यश के हेतु

इन्द्रियेण=अपनी इन्द्रिय करके

ते=वेरे

यशः=यश को

आद्दे=बेबूंगा

इति=ऐसा कहने से

श्रयशाः=चयशी के

+ भयात्=भय से

+ सा=वह

. एख़≕सवस्य

भवति=राजी होजाय

तदा≕तव

श्रतिकामेत्≔उस के साथ गमन करे

भावार्थ ।

हे सीम्म ! बाक यह दिख्यकाते हैं कि कागर स्त्री खक्तीरूप नहीं

है, बानी पतिमनोद्यानुसारिस्ती नहीं है तो फिर उसके साथ कैसा वर्ताव करना चाहिये. यदि किसी कार्गा सन्तान उत्पत्ति के लिये पति के साथ भीग करने की वह उचत नहीं होती है तो पुरुष को चाहिये कि उसको उसकी इच्छानुसार द्रव्य श्रथवा श्राभूषणा दे कर प्रसन्न करे इधगर वह स्त्री तब भी उसकी कामना को पूरान करे तो उस स्त्री को दगड का भव दिखाकर अथवा हाथ से पकड़ कर समकावे कि हे सुन्दरि ! अगर तू मेरी कामना को पूर्ण न करेगी तो सन्तान करके जो यश स्त्री को होता है उस तेरे यश को अपने यश के साथ नष्ट कर हंगा यानी में जनमभर ब्रह्मचारी रहूंगा और इसी कारण तेरे सन्तान न होगी और इसी कारण तू जन्म भर अथशी बनी रहेगी, और सन्तान के अभाव के कारणा तुमाको अनेक प्रकार का क्षेश डोता रहेगा ऐसा कहने से जब वह स्त्री राज़ी होजाय तब उससे समा-गम करे।। ७॥

मन्त्रः ८

सा चेटसी दचादिन्द्रियेण ते यशसा यश आदधामीति यश-विवनावेव भवतः ॥

पदच्छेदः ।

सा, चेत्, आसी, दचात्, इन्द्रियेगा, ते, यशसा, यशः, आद-धामि, इति, यक्षस्विनी, एव, भवतः ॥

श्चन्ययः

षदार्थाः | अन्वयः

पदार्थाः

चेत=भगर सा=वह सी अस्मै≔पुरुष के विने + कामम्=मभीष्ट को दद्यात्=देवे यानी राजी होवे तो

इति≔ऐसा कह कर

+ न्यात्=कहे कि

यशसा=यस के हेत

इन्द्रियेख⇒अपनी इन्द्रिय करके ने=नेरे किये

आवधामि=वेता इं

+ स:=वह

+ ती=वे दोनों एव=अवस्य यशस्विनौ=यशवाबे भवतः=होवेंयानीसमागमकरें

भावार्थ ।

हे सौन्य ! ध्रगर वह स्त्री सन्तानार्थ ध्रपने को समर्पण करे तो पुरुष को चाहिये कि वह इसकी प्रशंसा इस प्रकार करे हे सुन्दरि ! मैं. यश के हेतु ध्रपनी इन्द्रिय करके तेरे यश को देता हूं. इस प्रकार वे दोनों दम्पती स्नोक में यश को प्राप्त होते हैं ॥ ८ ॥

मन्त्रः ६

स यामिच्छेत्कामयेत मेति तस्यामर्थं निष्ठाय मुखेन मुख्छ संघायोपस्थमस्या अभिग्रस्य जपेदङ्गादङ्गात्सभवसि हृदयाद्धिजा-यसे स त्वमङ्गकपायोऽसि दिग्धविद्धिमित्र मादयेमामम् मयीति ॥

पदच्छेदः ।

सः, याम्, इच्छेत्, कामयेत, मा, इति, तस्याम्, अर्थम्, निष्ठाय, सुलेन, सुलम्, संधाय, उपस्थम्, अस्याः, अभिमृश्य, जपेत्, अङ्गात्, अङ्गात्, संभवसिं, हृदयात्, अधिजायसे, सः, त्वम्, अङ्गकषायः, असि, दिग्धविद्धम्, इव, मादय, इमाम्, अमूम्, मयि, इति ॥

धान्वयः

पदार्थाः | स्रन्वयः

पदार्थाः

यः पद्ार याम्=जिस की के प्रति + यदा=जब सः=वह पुरुष इति=ऐसा इडक्केन्=चाहे कि + सा=वह की मा=मेहे साथ कामयेत=जेम करे तो तस्याम्=वस की में कार्यम्=चपने प्रजन

निष्ठाय≔रस्य कर
मुखेन=मुख से
मुखेम=मुख को
संघाय=मिजा कर
झस्याः=उस को के
उपस्थम्=उपस्थ इन्द्रिय को
झभिमृद्य=स्पर्य करके
जपेन्=नीचे बिखे हुये मन्त्र

बङ्गात् }=शङ्ग शङ्ग से बङ्गात् } संभवसि=हे सेवें ! तू उत्पन्न होता है + च=न्नीर + विशेषतः=ज्ञास कर हृद्यात्=हृदय से श्राधिजायसे=उत्पन्न होता है सः=वही त्वम्=त् + मम=मेरे श्रद्धकषायः=धङ्गकः स्स श्रसि=है + वीर्य=हे शैर्ष ! दिग्धविद्धम् } विपक्षिसशर विद्धा-ह्य }=स्ता के समान श्रम्भ्य=डस हमाम्=इस मेरी की को मयि=मेरे विषे मादय=मदान्वित कर

भावार्थ ।

जब पित अपनी स्त्री के प्रति इच्छा करे कि वह स्त्री मेरे वश में रहे तो उसको चाहिये कि उस स्त्री में अपनी प्रजनन इन्द्रिय को रख कर मुख से मुख मिला कर उस स्त्री की उपस्थ इन्द्रिय को स्पर्श करके नीचे जिल्ले हुये मन्त्र का जप करे "अक्षादक्षादित्यादि" जिसका अर्थ यह है कि हे वीर्य! तू मेरे अक्ष अक्ष से उत्पन्न हुआ है, और खास करके हृद्य से, तू मेरे हर एक अक्ष का रस है, हे वीर्य! तू इस मेरी स्त्री को मेरे विषे ऐसी मदान्वित कर दे यानी वश में कर दे जैसे विषक्तिशरास्विद्ध मृगी ज्यान के वश में होजाती है।। ह ।।

मन्त्रः १०

श्रय यामिच्छेच गर्भे दधीतेति तस्यामर्थे निष्ठाय मुखेन मुख्छं संघायाभित्राष्ट्यापान्यादिन्द्रियेण ते रेतसा रेत श्रादद इत्यरेता एव भवति ॥

पदच्छेदः ।

श्रथ, याम्, इच्छेत्, न, गर्भम्, दघील, इति, तस्याम्, अर्थम्, निष्ठाय, मुखेन, मुखम्, तंधाय, अभिप्रायय, अपान्यात्, इन्द्रियेगा, ते, रेतसा, रेतः, आददे, इति, अरेताः, एव, भवति ॥

पदार्थाः | झन्दयः पदार्थ + इयम्=यद मेरी की | गर्मम्=गर्भ को

+ अहम्≕र्तें दधीत=धारण करे इन्द्रियेण=अपनी इन्द्रिय करके अथ=बगर + च=ग्रीर इति≕ऐसी रेतसा=वीर्य करके थाम=जिस स्त्री के प्रति ते≕तेरे इच्छेत्=पुरुष इच्हा करे तो रेतः ≔वीर्थ को तस्याम्=इस स्री में आद्दे=खींचता हुं श्चर्थम्=प्रजननेन्द्रिय को इति≕ऐसा करने से निष्ठाय=रख कर मुखेन=मुख से + स्ना=वह मुखम्=मुख को श्चरेताः=वीर्वरहित संधाय=भिकाकर श्चभित्राम्य=उरीपन कर ऋपान्यात्=मैथुन करे + एवम्ब्वनू≔यह कहता हुमा कि भाषार्थ ।

हे सौन्य ! यदि स्त्री विवाह के पश्चात् चाहे कि मैं गर्भधारणा न करूं, और परोपकार में अपने समय को मैं व्यतीत करूं तो पति को चाहिये कि उस स्त्री में अपनी प्रजनन इन्द्रिय को रखकर और मुख को मिला कर स्त्री के काम को उदीपन करके मैथुन करे यह कहवा हुआ कि मैं अपनी इन्द्रिय करके और वीर्य करके तेरे वीर्य को आकर्षणा करता हूं ऐसा करने से वह स्त्री वीर्यरहित होजाती है, यानी गर्भधारणा योग्य नहीं रहती है।। १०॥

सन्द्रः ११

भय यामिच्छेदधीतेति तस्यामर्थे निष्ठाय मुखेन मुखछ संघाया-पान्याभिमाएयादिन्द्रियेण ते रेतसा रेत आद्धामीति गर्भिएयेव भवति॥

पदच्छेदः ।

अथ, याम्, इच्छेत्, दधीत, इति, तस्याम्, अर्थम्, निष्ठाय, मुखेन,

मुखम्, संबाय, अपान्य, अभिप्राययात्, इन्द्रियेगा, ते, रेतसा, रेत:, झाद्धामि, इति, गर्भिग्ती, एव, भवति ॥

पदार्थाः पदार्थाः । सन्वयः अस्वयः झभिप्र।एय।त्=उद्दीपन करे यानी अध=इसके बाद भोग करे +सः≔वह पुरुष + च=धौर

याम्=जिस सी के इति=ऐसा +प्रति≔प्रति ब्राह=कहे कि इच्छेत्=चाहे कि रेतसा=वीर्यदान देनेवासी +सा=वह इन्द्रियेगा=बपनी इन्द्रिय के साथ +गर्भम्=गर्भ को ते= तेरे वधीत इति=धारण करे तो रेतः=बीर्यं को तस्याम्=डस स्री में आदधामि=स्थापित करता हं

अर्थम्=अपनी प्रजनन इन्द्रिय को + तदा=तब निष्ठाय=रस कर + सा=वह की

मुखेन=मुख से एव≕सवस्य मुखम्=मुख को हार्भिणी=गर्भवती संधाय=भिन्ना कर भवति=होती है श्चपान्य=प्रवेश कर

भावार्थ ।

द्यगर पुरुष चाहे कि मेरी स्त्री गर्भ को घारण करे तो वह द्रापनी स्त्रीकी योनि में प्रजननेन्द्रिय को रखकर मुख से मुख मिला क और प्रवेश करके और उदीपन करके भोग करे, और उसी स्त्री कहें कि वीर्यदान देनेवाजी अपनी प्रजनन इन्द्रिय के साथ तेरे रजन स्थापित करता हूं तब वह स्त्री अवश्य गर्भवती होजाती है।। ११

मन्त्रः १२

श्रथ यस्य जायाये जारः स्यात्तं चेद् द्विष्यादामपात्रेऽग्नि माघाय प्रतिलोपछ शरवर्धिः स्तीत्वी तस्मिन्नेताः शरसृष्टीः प्रतित सर्विषाऽक्का जुहुयान्मम समिद्धेऽहीषीः प्राणापानी त श्राददेऽ विति मम समिद्धेऽहोषीः पुत्रपश्ध्यत आददेऽसाविति मम सिम-द्धेऽहोषीरिष्टासुकृते त आददेऽसाविति मम सिमद्धेऽहोषीराशापरा-काशो त आददेऽसाविति स वा एव निरिन्द्रियो विसुकृतोऽस्मा-छोकात्प्रैति यमवंविद्वाह्मणः शपति तस्मादेवंविच्छ्रोत्रियस्य दारेण नोपहासमिच्छेदुत क्षेत्रंवित्परोभवति ॥

पद्च्छेदः ।

डाथ, यस्य, जायाँथ, जारः, रयात्, तम्, चेत्, द्विष्यात्, डाम-पात्रे, ड्यान्म्, उपसमाधाय, प्रतिलोमम्, शरविहः, स्तीत्वां, तिस्मन्, एताः, शरमृष्टीः, प्रतिलोमाः, सिर्पेषा, डालाः, जुहुयात्, मम, सिमेद्धे, डाहाषीः, प्राणापानो, ते, ड्याददे, ड्यसी, इति, मम, सिमेद्धे, डाहाषीः, पुत्रपश्न, ते, ड्याददे, डासी, इति, मम, सिमेद्धे, डाहोषीः, इष्टासुकृते, ते, ड्याददे, डासी, इति, मम, सिमेद्धे, डाहोषीः, ड्याशापराकाशो, ते, ड्याददे, डासी, इति, सः, वा, एषः, निरिन्द्रयः, विसुकृतः, डास्मात्, लोकात्, प्रति, यम्, एवंवित्, हाह्यणः, शपित, तस्मात्, एवंवित्, ह्योत्रियस्य, दारेण्, न, उपहासम्, इच्छेत्, उत, हि, एवंवित्, परः, भवति ॥

म्नन्वयः चेत् उत=यदि यस्य=जिस

जायायै=बी के जिये जारः=कोई जार

स्यात्=होवे श्रथ=घौर

तम्=उसके साथ

+ पतिः≔डसका पति द्विष्यात्≕द्वेष करना चाहे तो खामपात्रे≕मिटी के कच्चे वर्तन में

आग्निम्=अग्निको

पदार्थाः अन्वयः

प्रन्वयः पदार्थाः उपसमाधाय=रस करके

+ सर्वम्≕सब कर्म "परिस्त-

रयादि"

प्रतिलोमम्=उलटा + कुर्यात्=करे

+ च=श्रीर

शरबर्द्धिः=सिरकी को

स्तीत्वी=उन्नरी विद्या कर तस्मिन्=उस प्रान्ति में

सर्पिषा=षी करके

श्रक्ताः=तर की हुई

प्रतिलोमाः=डलटी एताः=इन शरभृष्टीः=सिरकियों को जुहुयात्=हवन करे + इदंत्रुवन्=यह कहता हुआ कि + ऋरे=भरे दुष्ट ! + त्वम्=तृने मम=मेरी समिद्धे=प्रदीस योषानि में श्रहीषीः≔होम किया है + श्रतः≔इस लिये ते=तेरे प्रागापानी≔प्राग श्रपान को आददे=में हरे खेता हं श्रसी=उस शत्रु का नाम इति=ऐसा + ब्यात्=कहे कि + त्वम्=तृने मम≔मेरी समिद्ध=प्रदीप्त योपाग्नि में अहोषीः=बाहुति दी है + अतः≔इस विवे ते=तेरे पुत्रपशून्=सन्तान चौर पशुओं को श्चाद्दे=न(श करता हूं श्चस्ते;≓डस शतुका नाम इति=ऐसा + मृयात्=कहे कि + त्वम=त् ने

मम=मेरा समिके=प्रदीसयोगानि में अहीषी:=भाइति दी है + अतः=इस किये ते=तेरे इष्टासुकृते≔इष्ट और सुकृत के कर्मी को आद्दे=में इरता हूं श्रसी=उस शत्रु का नाम इति=ऐसा ब्र्यात्≔कहे कि + त्वम्=तृने मम=मेरी समिद्ध=प्रदीस योषारिन में झहौषीः≔होम किया है + अतः=इस विये ते=तेरी श्राशापरा- } =श्राशास्रों को काशी } आददे≔इर बेता हूं श्रसी=उस शत्रु का नाम ले कर इति=ऐसा + त्यात्≔क्हे कि एवंवित्=ऐसा जानने वासा ब्राह्मगुः=ब्राह्मग् यम्≕जिसको श्रपति=शाप देता है सः=वह एवः=पह निरिन्द्रियः=विषयासक

ावसुकृतः=पापा शतु
वै=घवरयं

श्रस्मात्=इस
लोकात्=लोक से
श्रेति=मर कर चला
जाता है
तस्मात्=इस लिये
एवंचित्=ऐसा जानने वाला
पुरुष

द्रिया=बी के
+ सह=साय
उपहासम्=उपहास की
न=न
इञ्जेत्=इच्डा के
हि=क्योंकि
एवंवित्=ऐसा ओन्निय नाइस्स परः=उसका शनु

भावार्थ ।

यदि स्त्री का को जार हो, स्त्रीर उस जार के साथ उसका पति द्वेष करना चाहे, तो एक मिट्टी के कचे वर्तन में अगिन को रख करके श्रीर परिस्तरगादि कर्म को उलटा करे, श्रीर सिरकी को उलटी वि-छाकर उस वर्त्तन में रक्ली हुई अगिन में घी करके तर की हुई इन **उलटी सिरिक्यों को हवन करे यह कहता हुआ। कि अरे दुष्ट** ! तुने मेरी प्रदीत योषाग्नि में होम किया है, इस लिये में तेरे प्राण, अपान को हर जेताहूं, फिर उस शत्रु का नाम जेकर ऐसा कहे कि अरे दुष्ट ! तूने मेरी प्रदीप्त योषानि में आहुति दी है, इस लिये मैं तेरे सन्तान श्रीर पशुश्रों को नाश किये देताहुं, फिर उस शत्रु का नाम केकर ऐसा कहे कि हे दुष्ट ! तूने मेरी प्रदीप्त योषाग्नि में आहुति दी है, इस जिये में तेरे इष्ट और सकत कमें के फलको हर लेता हूं, फिर उस शत्रु का नाम जेकर ऐसा कहे कि अरे दुष्ट ! तूने मेरी प्रदीप्त योषानिन में होम किया है, इस क्षिये में तेरी सब आशाओं को हर जेता हूं, किर उस शत्रु का नाम जे कर ऐसा कहे कि इस प्रकार का जानने वाला ब्राह्मण् जिसको शाप देता है वह विषयासक पापी शत्रु इस क्रोक से मरकर चला जाता है, इस लिये ऐसा जानने वाला पुरुष बेद

पहनेवाले की की के साथ उपहास की इच्छा न करे, क्योंकि ऐसा श्रोत्रिय ब्राह्मग् इसका शत्रु बन जाता है ॥ १२ ॥

मन्त्रः १३

भ्रय यस्य जायामार्त्तवं विन्देत्त्र्यद्दं कश्रसेन पिवेदहत-वासा नैनां द्रवलो न द्रवल्युपहन्यात्रिरात्रान्त आप्लुत्य ब्रीही-नवघातयेत् ॥

पद्च्छेदः ।

डाथ, यस्य, जायाम्, झार्त्तवम्, विन्देत्, त्र्यहम्, कंसन, पिवत्, **अ**हतवासाः, न, एनाम् , वृषलः, न, वृषली, **खपहन्यात्** , त्रिरात्रान्ते, आप्सुत्य, त्रीहीन्, अवघातयेत् ॥

म्रन्वयः

ग्रन्वयः वदार्थाः

पदार्थाः

श्रथ=इसके उपरान्त यस्य⇒जिसकी जायाम्=श्री

झार्त्तवम् } =कपड़ों से हो विन्देत्

+ सा≔वह की कंसेन=कांसे के वर्त्तन के

इयहम् । न पिबेत्=तीन दिन तक पानी न पीवे

+ च=श्रीर

झहतवासाः है =कपदे न भोवे + स्यात् }

+ ख≕षोर

एनाम्≃ःसके बृषलः=शृद

उपहन्यात्=चूवे वृषती=श्द्रकी स्री भी

+ धनाम्=इसको

+ उपहन्यात्=षृवे त्रिरात्रान्ते=तीन दिन के पीछे

+ सा⊐वह सी

माप्लुत्य=नहा कर व्यहिन्=चरु बनाने के विषे

अवघातयेत्=कृट कर तैयार करे

भावार्थ ।

आपार स्त्री रजस्वला भर्मसे होय तो उसको चाहिये कि वह तीन दिन तक कांसे के वर्त्तन में न खावे, न पीवे झौर न कपड़ा घोवे, झौर उसको शृद या शृदी न दूवे और न वह शृद्र या शृदी को द्वूवे, तीन

665 ष्टदारययकीपनिषद् स० दिन क पीछे स्मान करके चह बनाने के क्रिये धान को कूट कर तैयार करे।। १३॥

सन्द्रः १४

स य इच्छेर्ुत्रो मे शुक्लो जायेत वेदमनुष्ठुवीत सर्वमायु-रियादिति क्षीरोदनं पाचिथत्वा सर्विष्मन्तमरनीयातामीश्वरी जनयितवै ॥

पदच्छेदः ।

सः, यः, इच्छोत्, पुत्रः, मे, शुक्तः, जायेत, वेदम्, श्रानुबुवीत, सर्वम्, आयुः, इयात्, इति, श्रीरौदनम्, पाचयित्वा, सर्पिष्मन्तम्, श्चरनीयाताम्, ईश्वरी, जनयितवे ॥

द्याश्वयः

पदार्थाः

पदार्थाः । अन्वयः मे=मेरे शुक्कः≕गीरवर्ण का पुत्रः≔पुत्र जायेत≔डत्पन्न होचे वेदम् रेविद्का पढ़ने वासा अनुमुवीत रेवि सर्वम्=पूर्ण द्यायुः≔षायुक<u>ो</u> इयात्≔आस होवे इति≕ऐसा यः≕जोः सः≔वद पुरुष इस्क्रेत्≔इच्छा करे तो

श्रीरौद्नम्=सीर पाचियत्वा=पका कर + ख=धौर सर्पिष्मन्तम्=धृतवुक्र + कृत्वा=करके अश्नीयाताम्=दोनों स्नी पुरुष खावें + तदा≔तव जनयितवै≕वैसे पुत्र उत्पन्न करने में + तौ=वे दोनों ईश्वरौ≕समधं स्याताम्=होवें

भावार्थ ।

जो पहल ऐसी इच्छा करे कि मेरे गौरवर्ण का लडका होय. और वेद का पढ़नेवाला होय, और पूर्ण आयु को प्राप्त होवे, तो उसकी चाहिये कि खीर पकाकर, और उसमें थी डाजकर वह और उसकी सी दोनों खावें, ऐसा करने से वे दोनों ऐसे सड़के के सरपन करने में समर्थ होते हैं ॥ १४ ॥

मन्त्रः १५

ं अयं य इच्छेत्युत्रों में कपिलः पिङ्गलो जायेत ही वेदावतु-अधीत- सर्वेषायुरियादिति द्य्योदनं पाचियत्वा सर्पिष्यन्तमश्नी-यातामीश्वरी जनयितवै ॥

पद्चलेदः।

अथ, थः, इच्छेत्, पुत्रः,मे, कपिकः, पिङ्गकः, जायेत, द्वौ, वेदौ, अनुकुवीतः, सर्वेम्, श्रायुः, इयात्, इति, द्य्योदनम्, पाचयित्वा, सर्पिष्मन्तम्, अश्नीयाताम्, ईश्वरौ, जनवित्तवे ॥

भ्रन्वयः	पदार्थाः	श्रम्ब यः	पदार्थाः	
श्रथ≕धौर	-	सर्वम्=पृर्थं		
ं यः≕जो पुरुष		श्चायुः=श्चायुको		
इच्छेत्≔इच्छाकरे कि		इथात्≕प्राप्त हो तो		
म≕मेरा		+ तौ≔बी पुरुष		
ণুসঃ=ণুস		द्रध्योदमम्=दही-चावज		
कपिलः=गौरवर्ष	वासा	पाचियत्बा=पक्ष		
जायत=हो		सर्पिष्मन्तम्=षृत		
+ प्रथयः=प्रथवा		+े कृत्वा≔करके		
पिङ्गलः =पि ङ्गल व	र्यं वास्रा	श्रश्नीयाताम्≔सर्वे		
+ जायेत=हो		इति=ऐसा		
+ च≃भौर		जनयितवै=सभीष्ट पुत्र उत्प त्र क -		
ह्रौ=रो			के विषे	
वेदी⇒वेदां का		ईश्वरी=समध		
भ्रतुनुवीत=नक्रा हो		+ स्याताम्=हों	ì	

जावार्थ ।

की पुरुष इंटिंडा करे कि मेरा पुत्र गीरवर्शी वालाही अथवा पिंगल वर्णीयाली हो और दी वेंदों का बक्ता ही और पूर्वा आयु को प्राप्त हो तो स्त्री-पुरुष दही-चावल पका कर झौर उसमें घृत डाल कर खावें ऐसा करने से वे दोनों अभीष्ट पुत्र के उत्पन्न करने में समर्थ होंगे ॥ १४ ॥

मन्त्रः १६

अथ य इच्छेत्पुत्रो मे श्यामो लोहिताक्षो जायेत त्रीन्वेदाननु-ब्रुवीत सर्वमायुरियादित्युदौदनं पाचियत्वा सर्पिष्मन्तमश्रीयाता-मीश्वरी जनयितवै ॥

पदच्छेदः ।

श्रथ, यः,इच्छेत्, पुत्रः, मे, श्यामः, लेहिताक्षः, जायेत, त्रीन्, वेदान्, अनुष्ठुवीत, सर्वम्, आयुः, इयात्, इति, उदौदनम्, पाचयित्वा, सर्पिष्मन्तम्, अश्रीयाताम्, ईश्वरौ, जनयितवै ॥

ग्रन्वयः झथ≕श्रीर

यः≕जो पुरुष

इच्छ्रेत्=इच्छाकरे कि

मे≕मेरा

पुत्रः≔पुत्र

श्यामः=स्यामवर्णवासा जायेत=उत्पन्न होवे

लोहिताक्षः=जाजनेत्रवाजा

+ जायेत≕होवे

+ च≕धौर

त्रीन्=तीन

वेदान्=वेदों को श्रनुबुवीत=वक्रा होवे

+ च=घीर

सर्वम=पूर्ण

पदार्थाः श्चन्तयः

पवार्थाः आयुः=श्रायु को

इयात्≔मास होवे तो

+ दम्पती=स्नी पुरुष

उदौदनम्≔जब में भाव

पाचयित्वा=पकवा**क**र

सार्पेध्मन्तम्=वृतयुक्त

+ कृत्वा=करके

श्रश्नीयाताम्⇒लावें

इति=ऐसा करने से

जनयितवै=श्रमीष्ट पुत्र पदा करने

के विषे

+ तौ≕वे

ईश्वरौ≕समर्थ

+ स्याताम्=होंगे

भावार्थ ।

जो पुरुष इच्छा करे कि मेरा पुत्र श्यामवर्ण बाजा हो, झौर उसके नेत्र लाल हों, तीन वेदों का बक्ता हो, और पूर्ण आयु का ही तो उस को झौर उसकी की को चाहिये कि जक्ष में चावल को पकाकर झौर घृत मिलाकर खोंबे, ऐसा करने से वे दोनों झमीष्ट पुत्र के पैदा करने में समर्थ होते हैं ॥ १६ ॥

मन्त्रः १७

अथ य इच्छेद् दुहिता मे पिएडता जायेत सर्वमायुरियादिति तिलौदनं पाचियत्वा सर्पिष्मन्तमश्रीयातामीश्वरी जनयितवै ॥

पदच्छेदः ।

अथ, यः, इच्छेत्, दुहिता, मे, पिएडता, जायेत, सर्वम्, आयुः, इयात्, इति, तिस्तीदनम्, पाचियत्वा, सिप्टमन्तम्, अभीयाताम्, ईरवरी, जनियतेव ॥

पदार्थाः श्रन्वयः पदार्थाः द्मध=चौर पाचियत्वा=पकवा कर यः=जो पुरुष सर्पिष्मन्तम्=वृतयुक्र इच्छेत्=इच्छाकरे कि + कृत्वा≔करके मे≕मेरी + दम्पती=की-पुरुष दुहित अश्रीयाताम्=कार्वे परिडता=गृहकर्म में निप्ख इति=ऐसा करने से जायेत=होवे जन्यितवै=मभीष्ट पुत्री पैदाकरने + ख≕मीर के जिये सर्वम्=पूर्ण + ती=वे आयुः≔षायु को ईश्वरौ=समर्थ इयात्=शास होवे ती तिलोदनम्=तिब-चावब + स्याताम्=होंगे

भाषार्थ ।

अगर पुरुष इच्छा करे कि मेरे को ऐसी कन्या उत्पन्न हो जो गृह के कार्य में निपुता हो, पूर्वाधायु वाली हो तो स्त्री पुरुष को चाहिये कि तिल-बावल पकाकर स्वीर उसमें घृत मिला कर खाँवे, ऐसा करने से वे अभीष्ट पुत्री के उत्पन्न करने में समर्थ होते हैं।। १७॥

सम्बः १८

अय य इन्द्रेत्पुत्रो मे पिएडतो विगीतः समितित्रयः शुक्षितां बाचं भाषिता जायेत सर्वीन्वेदाननुष्ठ्वीत सर्वमायुरियादिति साधः-सीदनं पाचियत्वा सर्विष्मन्तमक्ष्मियातामीरवरी जनयितवा श्रीक्षेण बाइडर्षभेण वा ॥

पद्च्छेदः ।

अथ, यः, इञ्छेत्, पुत्रः, में, पर्यिडतः, विगीतः, समितिङ्गमः, शुश्रूषिताम्, वाचुम्, भाषिता, जायेत, सर्वान्, वेदान्, श्रनुश्रुवीत, सर्वम्, आयुः, इयात्, इति, मांसौदनम्, पाचयित्वा, सर्पिव्मन्तम्, अश्रोयाताम्, ईरवरौ, जनयितवै, श्रीक्षेण, वा, श्रार्वभेण, वा ॥ पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः श्चन्ययः

श्रथ=भीर यः≕जो पुरुष इच्छेत्≔इच्छाकरे कि मे=भेरा पुत्रः=पुत्र

परिडतः=विद्वान विगीतः=प्रसिद समितिङ्कमः=सभा जीतनेवाक्षा श्रुश्विताम्=प्रिय

वाचम्=बात का

भाषिता=बक्रा जायेत≔होवे सर्वान्=सब

घेदान्=वेदों का **श**नुत्रुवीत≔जाननेवादा

+ च=मौर

सर्वम्=सब

आयुः=आयु को इचात्=मास दाव तो मांसीदनम्=मांस श्रीर शास्त्र

पार्चायत्वा=पकवाकर सर्पियान्तम्=वृत्तयुक्त करके

+ दम्पती≔सी पुरुष श्रश्नं।याताम्=सावें

इति=ऐसा करने से

+ त्हो=वं स्त्री पुरूष जनयितवै=मर्भाष्टपुत्रपैदा करने

के खिये

ईश्वरी=समर्थ +स्याताम्=होंगे

+ परम्=परन्तु

+ तत्≔वह भोदन भौक्षेण=सांद के मांस के साथ

खा≔अथवा आर्पभेग=किसी वरे वैवके शांस

के साध

+ प्रव्यात्≓पकात्रे

भाषार्थ ।

जो पुरुष चाहे कि मेरा पुत्र विद्वान और महतीसमा का जीतने वाला हो, मशुरभाषी हो, सब वेदों का ज्ञाता हो, पूर्या आयुवाला हो तो मांस और चावल पकाकर उसमें घृत डाखकर दोनों खावें, ऐसा करने से वे आमीष्ट पुत्र के पैदा करने में समर्थ होते हैं, परन्तु चावल सांड़ के मांस के साथ आथवा किसी वहे बैल के मांस के साथ पकाये जावें ॥ १८ ॥

मन्त्रः १६

श्रथाभिपातरेव स्थालीपाकाद्यताऽऽज्यं चेष्टित्वा स्थालीपाक-स्योपपातं जुहोत्वग्नये स्वाहाऽनुपतये स्वाहा देवाय सवित्रे सत्य-प्रस्तवाय स्त्राहेति हुत्वोद्धृत्य प्राश्नाति प्राश्येतरस्याः प्रयच्छति प्रक्षाल्य पाणी उदपात्रं पूर्णित्वा तेनैनां त्रिरभ्युक्षत्युतिष्ठातो निश्वावसोऽन्यामिच्छ प्रपृच्या संजायां पत्या सहेति ॥

पद्द्यद्वेदः ।

अथ, अभिप्रातः, एव, स्थालीपाकावृताऽऽज्यम्, चेष्टित्वा, स्थाली-पाकस्य, खपश्चतम्, जुद्दोति, अग्नये, स्वादा, अतुस्वये, स्वादा, देवाय, सिवत्रे, सत्यप्रसवाय, स्वादा, इति, हुत्वा, चढ्ढृत्य, प्राभाति, प्रारय, इतरस्याः, प्रयच्छति, प्रक्षाल्य, पागी, खद्पात्रम्, पूर्यित्वा, तेन, एनाम्, त्रिः, अभ्युक्षति, उत्तिष्ठ, अतः, विश्वावसो, अन्याम्, इच्छ, प्रपूर्व्याम्, संजाबाम्, पत्या, सद्द, इति ॥

श्चन्वयः पदार्थाः | श्चन्वयः पदार्थाः श्चध≔तत्परचात उपघातम्≕स्पर्धं करके श्वभिप्रातःएव≔को प्रातःकाक्ष जुहोति≔इवन को

प्रभिप्रातःपव=वर्षे प्रातःकाल जुङ्गाता=वर्षे कर स्थालीपाः हातृताऽऽः उयम् च विधिके प्रनुसार ची प्रान्तये स्वाहा=प्रान्ति के विषे प्रा-हति देताहं में प्रमुमतये } _ च्युनकि देवताके विशे

स्थासीपाकस्य=स्थासीपाकको स्वाहा रे माहति देता हु मैं

सत्य है प्रसव जि-दंवाय सका यानी बुद्धिका सचित्रे सत्यप्र-सवाय हे वित्ये था-स्वाहा इति=इस प्रकार दुत्वा≔होम करके सदृत्य=बचे हुवे चह की प्राप्तनाति=पुरुष खाय + च=भौर प्राश्य=साकर फिर इतरस्याः≔को को प्रयच्छति=देवे + च=घौर पाशी=हाथ को प्रक्षाल्य≔धो कर

पुरियत्वा=भर कर तेत=उस जब से पनाम्≕उस की को त्रिः=तीन वारै + मन्त्रेश=सन्त्र पद कर श्चान्युक्षति=मार्जन करे + एवम्बुवन्=यह कहता हुमा कि विश्वावसो=हे गन्धर्व ! झतः≔इस मेरी स्त्री से उत्तिष्ठ=बद्धग हो ग्रन्याम्=गौर प्रपृष्यीम्=किसी दूसरी युवाको माप्त हुई पत्या=पति के सह=साथ +संक्रीडमानाम्=वेवनेवादी संजायाम्≔की को क्छ इति≔इव्हीं कर

भावार्थ ।

तत् परचात् बढ़े प्रातःकाल स्थालीपाक की विधिक अनुसार चरु को पकाकर, और उसको घी से संस्कार करके, और फिर स्पर्श करके हवन करे, यह मन्त्र पढ़ता हुआ ''अग्नये स्वाहा, अनुमतये स्वाहा, देवाय सवित्रे सत्यप्रसवाय स्वाहा '' जिस का अर्थ यह है कि अन्ति के जिये आहुतिको देता हूं में, अनुमति देवताके जिये आहुति देताहूं में, सत्य है प्रसव जिसका यानी जो बुद्धिका देनेवाजा है, उस प्रकाश-मान सूर्य के जिये आहुति देता हूं में, इस प्रकार होम करके अवशिष्ट चरु को निकाल कर पुरुष प्रथम खाय, और फिर की को देवे, और हाथ बोकर जलपात्र को भरे, और उस जला से की को तीनवार मीचे लिखे मन्त्रको पढ़ कर मार्जन करे, "उत्तिष्ठातः विश्वावसोऽन्यामि-च्छाप्रपूर्वी संज्ञायां पर्या सहेति " जिसका अर्थ यह है कि हे गन्धर्व ! तू इस मेरी की से अजग हो, और किसी दूसरी युवाको प्राप्त हुई स्त्री जो पति के साथ खेजने वाली हो, उसके निकट जाने की इच्छा कर, मेरी स्त्री की स्रोड़ दे ॥ १६ ॥

मन्त्रः २०

श्रयैनामभिषद्यतेऽमोहमस्मि सा त्वंश सा त्वमस्यमोऽहं सामाह-मस्मि ऋक्तं धौरहं पृथिवी त्वं तावेहि सश्ररभावहे सह रेतो इषावहे पुछसे पुत्राय विचय इति ॥

पवच्छेदः ।

अथ, एनाम्, अभिपचते, अमः, अहम्, अस्मि, सां, त्वम्, साः, स्वम्, असि, अमः, अहम्, साम्, अहम्, अस्मि, ऋक्, त्वम्, द्योः, अहम्, पुथिवी, त्वम्, तौ, एहि, संरभावहै, सहं, रेतः, द्यावहै, पुंसे, पुत्राय, वित्तये, इति ॥

श्चन्यः पत्राधीः स्रम्ययः श्चां च्हसं के परवात् पत्नाम् च्हसं की को बानी श्व-पत्नी की के साथ श्रीभिपदाते=प्राप्त होने यानी उसकी स्रातिङ्गन करे + प्याश्चित्=पह कहता हुसा कि श्राहम्चीं श्रामः=प्रायस्थानीय श्रीसम=हुं सा=बृह त्वम्=त्

सा=बह

ः प्रार्थाः त्यम्=त् वाणीः श्रास्त-दे श्रास्त्र-में श्राम:=प्राण हैं साम=सामवेद के समान श्राहम्=में श्राहम=हैं त्यम्=त् श्राहम=वर्षक्य वीर्यका देने-वाला आकाश श्राहम्=में हैं त्यम=त् uè o

वृत्विवी=बीर्ववात्री प्रविका है

शौ≔वे दोनों इस संरमावहै=मिबं + च=मोर पुँसे=पुक्तार्थ करते होते वित्तये=ज्ञाती पुत्राय=पुत्र होते के क्षिये रेतः=वीर्य की सहद्यधायडे=पुरु साथ धारण करें

भावार्थ ।

इसके परचात् अपनी स्त्री से आलिङ्गन करें यह कहता हुआ कि में प्रायास्थानी हूं तू बागा है, में प्राया हूं यानी जैसे प्राया के आश्रय वागा है, वेसे तू मेरे आश्रय है, में सामवेद के समान हूं, तू अपृथेद के समान है, में वर्षाहप वीर्य का देनेवाला आकाश हूं, तू वीर्यधात्री पृथिवी है, आवो हम दोनों एकान्त विषे एकत्र होकर पुरुषार्थ करने हारे ज्ञानी पुत्र के लिये एक साथही वीर्य को धारगा करें।। २०॥

मन्त्रः २१

श्रथास्या ऊरू विद्यापयति विजिद्दीयां चावापृथिवी इति तस्या-पर्ये निष्ठाय पुरेवन पुरवक्ष संघाय त्रिरेनामनुलोमामनुमार्ष्टि विष्णु-र्योनि करुपयतु त्वष्ठा रूपाणि पिक्ष्शतु श्रासिश्चतु प्रजापतिर्वाता गर्भे द्वातु ते गर्भे थेहि सिनीवालि गर्भे थेहि पृथुषुके गर्भे ते श्र-रिवनी देवावाषतां पुष्करस्रजी ॥

पदच्छेदः ।

ध्यथ, अस्याः, उद्गं, विद्वापयित, विजिहीधाम्, द्यानापुथिवी, हित, तस्याम्, अर्थम्, निष्ठाय, मुखेन, मुखम्, संखाय, तिः, एनाम्, अनु-क्रोमाम्, अनुमार्धि, विष्णुः, योनिम्, करूपयतु, त्वष्ठा, रूपाणा, पि-शतु, आसिञ्चतु, प्रजापितः, धाता, गर्भम्, देधातु, ते, गर्भम्, धेहि, सिनीवाक्ति, गर्भम्, धेहि, पृथुष्टुके, गर्भम्, ते, अश्विनौ, देवौ, आ-धत्ताम्, पुष्करस्रजौ ॥ धाःवयः

पदार्थाः सम्बयः

पदार्थाः

+ स्त्रीम्≕को से + झाह≕कहे कि द्यावापृथिवी≕हे थी और पृथिवी-

रूप स्ती !

विजिहीयाम्=हम दोनों जसग सत्तग होजायँ

> इति≔पैसा कह कर श्रथ=किर पति

अस्याः≔इस की के

ऊक्≡डरूसे

चिहापयति =पृथक् होजावे + पुनः=फिर

तस्याम्=उस श्री में द्यर्थम्=प्रजनन इन्द्रियको

निष्ठाय=रख **कर** मुखेन=मुख से

मुखम्=मुख को संधाय=मिका कर

सधाय=मना कर श्रनुत्तोमाम्=डस धनुकृत एनाम्=इस की को

प्ताम्=श्त का का न्निः≕तीन बार

श्चनुमार्ष्ट्=मार्जन करे ् + ख=भीर

+ इमम्=इस द्यागे वासे

+ मन्त्रम्≔मन्त्र को —े——ो

+ पठेत=परे विष्णुः=विष्णुदेव

थोनिम्=तेरी योनि को कल्पयतु=पुत्रोत्पत्ति के विथे

समर्थ करे

त्वष्टा=सूर्यदेव

क्याणि=तेरे पुत्र के प्रत्येक

धङ्ग के रूप को पिंशतु≔देवे

प्रजापतिः=प्रजापति

+ त्वयि≕तेरे में

मासिश्चतु=गर्भको स्थापन करे बानी गर्भगिरने न देवे

धाता=सूत्रास्मा

ते≕तेरे ऽ...

गर्भम्=गर्भ को द्धातु=धारण करे थानी

शिरने न देवे

सिनीवालि=हे दर्शदेवता !

गर्भम्≔इस स्त्री के गर्भ को घेडि≔रख बानी गिरने

न दे

पृथुषुके=स्तुति की गई है

जिसकी ऐसी

+ सिनीवालि=हे सिनीवाली देवी! गर्भम्=डस मेरी जी के

गर्भ को धेहि≕रख यानी रक्षा कर

धारण किये <u>ह</u>ये

धारखाकन छ देखी=प्रकाशमान

श्चरिवनौ⇒सूर्य-चन्द्र ने⇒तेरे

त=तर गर्भम्= गर्भ को

आधत्ताम्=स्थापन करं वानी

शिश्ने न देवें

भावार्थ ।

दे सौन्य ! तत् परचात् की से कहे कि, दे शो और पृथिवी के गुर्गों को भारण करनेवाली की ! इम तुम आलग अलग हों, ऐसा कहकर पति की से अलग हो नाय, फिर ली में प्रजनन इन्द्रिय को रख कर मुख से खुल मिला कर उस अनुकूल लीका तीन वार मार्जन करे, और आगेवाला मन्त्र पढ़े, ''विष्णुयोंनि कल्पयतु त्वष्टा रूपाणि पिंशतु आसि खुप्र जापतिर्धाता गर्भ दधातु ते गर्भ थेहि सिनीवालि गर्भ थेहि पृशुद्धते गर्भ ते अश्विनौ देवावाधत्तां पुष्करस्रजो ?' जिसका अर्थ यह है कि विष्णुदेव तेरी योनि को पुत्रोत्पत्ति के लिये समर्थ करें, स्पृदेव तेरे पुत्र के इर एक अझ में रूप देवे और प्रनापति तेरे वीर्य की रक्षा करे, स्त्रात्मा तेरे गर्भ की रक्षा करे, हे दश्वेवता ! इस मेरी खी के गर्भ की रक्षा कर, स्तुति की गई है जो ऐसी हे सिनीवाली देवी ! इस मेरी खी के गर्भ की रक्षा कर, कमल की माला को धारण करने वाले प्रकाशमान सूर्य-चन्द्र मेरी खी के गर्भ की रक्षा करें गर्श को रक्षा करें ॥ र १ ॥

मन्त्रः २२

हिरएमयी घारणी याभ्यां निर्मन्थतामश्विनौ । तं ते गर्भे इवा-महे दशमे मासि सूत्ये । यथाऽग्निगर्भा पृथिवी यथा चौरिन्द्रेण गर्भिणी । बायुर्दिशां यथा गर्भ एवं गर्भे दथामि तेऽसाविति ॥

पदच्छेदः ।

हिरामयी, अरगी, वाभ्याम्, निर्मन्थताम्, अश्विनी, तम्, ते, गर्भम्, हवामहे, दशमे, मासि, सृत्ये, यथा, अन्निगर्भा, पृथिवी, यथा, शौः, इन्द्रेग्ग्, गर्भिग्ती, वायुः, दिशाम्, यथा, गर्भः, एवम्, गर्भम्, द्यामि, ते, असी, इति ॥

अन्वयः पदार्थाः अन्वयः द्यावापृथिवी⇒षौ कौर पृथिवी या हिरसमयी=प्रकाशकप अ अरुती=करणि हैं +

वयः पदार्थाः याभ्याम्=जिन करके द्राश्यिनी=जैसे सूर्य भीर बन्द्रमा +गर्भम्=गर्ने को तिर्मेश्यताम्⇒मन्यन करते मधे

+ तद्धत्=उसी तरह

ते=वे

दशमे=दशवे

मासि=मास में

स्तये=पुत्र उस्पत्त

होवे के बिसे

ते=तेरे

गर्भम्=गर्भ को

द्यावदे=स्थापित करें

यथा=जैसे

हाजना-ठा श्राविनगर्भा=श्रविन करके गर्भ वाकी है यथा=जैसे द्यौः=यौ
दन्द्रेष=इन्द्र करके
गर्भिणी=गर्भवती है
यथा=जैसे
वायुः=वाषु
दिशाम्=दिशामां का
गर्भः=गर्भ है
एवम्=इसी प्रकार
ते=वेरे
गर्भम्=वर्भ को
झसी=व्यामिक करता हूं
हलि=पेसा कहे

भावार्थ ।

हे सौम्य ! चौ और पृथिवी दोनों प्रकाशरूष आरिया हैं जिन करके जैसे सूर्य और चन्द्रमा पूर्वकाल में गर्भ को मन्यन करते अये बैसेही दशवें सास में पुत्र उत्पन्न होने के लिये तेरे उस गर्भ को इम दोनों स्थापित करें और जैसे पृथिवी अनिन करके गर्भवती हैं, जैसे चौ इन्द्र करके गर्भवती हैं, जैसे दिशा वायु करक गर्भवती हैं, उसी प्रकार वह मैं तेरे गर्भ को स्थापित करता हूं।। २२ ॥

मन्त्रः २३

सोध्यन्तीमद्भिरभ्युक्षति । यथा वायुः पुष्करणीध्धः समिक्र्यति सर्वतः एवा ते गर्भ एजतु सहावतु जरायुणा । इन्द्रस्यायं व्रजः कृतः सार्गलः सपरिश्रयः । तमिन्द्र निर्जीह गर्भेण सा-वरार्धः सहेति ॥

्र परापः । प्रदुष्ट्वेदः । स्रोत्वन्त्रीम्, स्र्म्युः, झभ्युस्र्वि, यथा, वायुः, पुल्करस्तीम्, समि- ङ्गयति, सर्वतः, एवा, ते, गर्भः, एजतु, सह, झवैतु, जरायुगा, इन्द्रस्य, झयम्, त्रजः, कृतः, सार्गकः, सपरिश्रयः, तम्, इन्द्र, निर्जहि, गर्भेगा, सावराम्, सह, इति ॥

पदार्थाः पदार्थाः -श्चन्ययः अन्वयः सोध्यन्तीम्=प्रसवोन्मुखी बी को भ्रयम्=पह + सन्त्रम्=नीचे का सन्त्र इन्द्रस्य=प्राय के नीचे + पठन्=पदता हुआ श्रद्धिः=जब करके व्रजः=मार्ग अम्युक्षति=सिञ्चन करे सार्गलः) (गर्भका प्रतिबन्धक यथा≔जैसे सपरिश्रयः }= { है यानी गर्भ गिरने कृतः । विद्या देता वायुः≔वायु पुष्करणीम्=ताल के जल को + तत्ज्≕सो सर्वतः=सब बारसे इन्द्र≔हे प्राण ! समिक्यति=चवायमान करता है तम्=इस मार्ग को प्वा≔इसी तरह + प्राप्य=पा कर ते=तेरा गर्भेण=गर्भ के गर्भः=गर्भ सह=साथ एजतु=चन्नायमान होवे निर्जिहि≕निकल था + च=भीर + च≔ग्रीर जरायुगाः=गर्भवेष्टन चर्म के सावराम्=गर्भ की येखी को सह=साथ + निर्गमय=निकास सा श्रवेतु=बाहर निकले

भावार्थ ।

हे सोम्य ! प्रसत्रोन्मुली की को नीचे जिले मन्त्र को पढ़ता हुआ जल से सिश्वन करे "यथा वायुः पुष्करणीं सिमङ्गयति सर्वतः एवातगर्भ एउनु सहावेतु जरायुगा इन्द्रस्यायं व्रजः कृतः सार्गलः सपरिश्रयः तमिन्द्र निर्जिह गर्मेगा सावरां सहेति " जिसका आर्थ यह है कि जैसे तालके जल को वायु सब ओर चलायमान करता है इसी तरह से हे सी ! तेरा गर्भ भी चलायमान होवे, और वह गर्भवेष्टन चर्म के साथ

बाहर निकल आये और जो प्राया के नीचे जाने का मार्ग है, वह गर्भ का प्रतिबन्धक होवे यानी गर्भ को गिरने न देवे, हे प्राया ! तू उस मार्ग को पाकर उस गर्भ के साथ निकल आ, और अपने साथ गर्भ की यैजी को निकास ला !! २३ !!

मन्त्रः २४

जातेऽग्निमुपसमाघायाः आधाय कछसे पृषदाच्यर्छ संनीय । पृषदाच्यस्योपघातं जुहोत्यस्मिन्सहस्तं पुष्यासमेधमानः स्वे गृहे अ-स्योपसन्धां माच्छैत्सीत्मजया च पशुभिश्च स्वाहा । मयि मागाधः स्त्विय मनसा जुहोपि स्वाहा । यत्कर्मणाऽत्यरीरिचं यद्दा न्यून-मिहाकरं । अग्निष्ठत्त्विष्ठकुद्विद्दान्स्विष्ठ्छं सुहुतं करोतु नः स्वाहेति ॥ पवच्छेवः ।

जाते, अग्निम्, उपसमाधाय, अङ्के, आधाय, कंसे, पृषदाज्यम्, संनीय, पृषदाज्यस्य, उपवातम्, जुहोति, श्रस्मिन्, सहस्रम्, पुष्यासम्, प्रधमानः, स्वे, गृहे, अस्य, उपसन्याम्, माच्छेत्सीत्, प्रजया, च, पश्चिमः, च, स्वाहा, मयि, प्रायान्, त्वयि, मनसा, जुहोमि, स्वाहा, यत्, कर्मग्रा, अत्यरीरिचम्, यत्, वा, न्यूनम्, इह, अकरम्, अग्निः, तत्, स्वष्टकृत्, विद्वान्, स्वष्टम्, सुद्वतम् करोतु, नः, स्वाहा, इति ॥ अन्वयः पदार्थाः अन्वयः पदार्थाः

श्रान्यः प्राथीः

श्राते=बद्दा होने पर

श्रातिम्=धीन को

उपसमाधाय=स्थापन कर

श्राङ्ग=गोद में

श्राधाय=बाबक को से कर
कंस=कांसे के बस्तन में
पृषदाज्यम्=धि मिश्रित बी को
संनीय=मिला कर
पृषदाज्यस्य=उस दिधिमिश्रितचीका

+ श्राट्यम्=धीदा थोदा

अन्तयः पदार्थाः
+ भागम्=भाग
+ आदाय=के कर
उपघातम्=वार वार
जुहोति=होम करे
+ एवअमुयन्=यह कहता हुचा कि
अस्मिन्=इस
स्वे=चपने
गुहे=पर में
प्रधमानः=पुत्रादि करके वहता

सद्काम्=पक सहज मनुष्यों
पुष्यास्तम्=पालन पापया करने
वाला होऊं

+ स्व=चार
स्व=इस मेरे पुत्र के
उपस=द्याम्=वंश में

+श्रीः\ स्वस्मी साथ सप्रजया।
स्व पत्रुष्यों के कभी
विनाश को न प्रास
रोवे यानी तीनों
वन रहें इतना पठ
कर झाडुर्ति देवे

च=भौर मिय=मेरे विवे + यः=जो + प्राव्याः=प्राव्य हैं + तान्=उन प्राव्यान्=प्रायों को स्वीय=तेरे में

सनसा=मनद्वारा जुहोमि स्वाहा=घर्षण करता ह + इति=पेसा कह कर दितीय बार बाहुति देवे यत्=जो

बाह्यम्≕में कर्मखा } श्रीथक कर्म करता

भ्रत्यरीरि-स्यम् सम् स्याः स्याः स्याः

इह } न्यून कर्म करता न्यूनम् }=भया द्व अकरम् तत्=उसको

विद्वान्≖जानता हुमा भग्निः≔र्माग्न स्विष्टकृत्=उस किये हुये होमको

सुद्दोम करने वाबा + भूतख≔दोकर नः≔दमारे

स्वष्टम् करोतुजिक्षे हुवे कर्मको सुहुत यानी सुकर्म करे

स्थाहा इति=यह कह कर किर भाहति देवे

भावार्थ ।

जब जड़का पैदा होजाय तब जड़के को गोद में जे कर कीर काफ़्न को स्थापन कर करों के बर्तन में दिश्वमिश्चित ची को मिला कर उस दिश्वमिश्चित घी का थोड़ा थोड़ा हबन नीचे जिल्ले मन्त्रों को पढ़ कर करे, "अस्मिन्सहस्रं पुष्यासमेश्रमानः स्वे गृहे । अस्योपसन्चां मा-क्यून्सीटमजया च पशुभिश्च स्वाहा" जिसका अर्थ यह है कि, मैं अपने घर में पुत्र कजत्र आदिके साथ एक सहस्र मनुष्यों का पालन पोषशा करने हारा होऊं, और इस मेरे पुत्र के वंश में लहनी संतान, द्रव्य और पशुकी सूरत में सदा बनी रहे, मन्त्र पढ़ने के पश्चात् आ- हुति देवे फिर नीचे लिखे मन्त्र को पढ़े "मयि प्राणाँ स्विय मनसा जुहोमि स्वाहा" जिसका अर्थ यह है, जो मेरे विषे प्राणा है, उन प्राणों को में अपने पुत्र में मन द्वारा अर्पणा करता हूं. ऐसा कह कर द्वितीय बार आहुति देवे, और फिर नीचे लिखे मन्त्र को पढ़े, "यत्क- भंगात्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम्। अगिनष्टित्वष्टक द्विद्वान् स्विष्टं सुहुतं करोतु नः स्वाहेति " जिस का अर्थ यह है, जो में इस कर्म करके अ- चिक कर्म करता भया हूं, अथवा इस कर्म में जो न्यूनकर्म करता भया हूं, उसको जानता हुआ अगिन इस मेरे किये हुये होम को सुहोम करने वाला हो कर हमारे किय हुये कर्म को सुकर्म करे, फिर मन्त्र पढ़ने के पश्चात् आहुति देवे ॥ २४ ॥

मन्त्रः २५

श्रथास्य दक्षिणं कर्णमिभिनिधाय नाग्नागिति त्रिरय दिधे मधु ष्टृतथ्धं सनीयानन्तर्हितेन जातरूपेण प्राशयति । भूस्ते दधापि भुनस्ते दधापि स्वस्ते दधापि भूभुवः स्वः सर्वे त्विय दधापीति ॥

पदच्छेदः ।

आथ, आस्य, दक्षिणम्, कण्म्, आभिनिधाय, वाक्, वाक्, इति, त्रिः, आथ, दिध, मधु, घृतम्, संनीय, अनन्तर्हितेन, जातरूपेया, प्रा-शयति, भूः, ते, दधामि, सुवः, ते, दधामि, स्वः, ते, दधामि, भूः, सुवः, स्वः, सर्वम्, त्वयि, दधामि, इति ॥

^र भ्रास्वयः

पदार्थाः ग्रम्बयः

पदार्थाः

क्रथ-इवन कर्म के पीके ग्रस्य=वासक के दक्षियम्=दिन कर्यम्=कान को ग्रमिनिधाय=स्पर्ध करके + तस्मिन्≖उस में बाक्=बाक् बाक्=बाक् इति≔ऐसा जिः=तीन बार

+ पिता=पिता भुवः=हे भुवः ! + जपति=उचारण करे ते⇒तेरे विवे श्रथ=भौर व्धामि=द्रश्यादिक वस्तु की द्धि=दही रखता हं घृतम्=धी स्वः=हे स्वः! मधु≕शहद संनीय=मिला कर ते⇒तेरे बिये इधामि=द्रश्यादिक बस्तु की रखता हुं भूः≔दे मृः ! प्राशयति=चरावे भूवः≔हे भुवः ! + एवम्बुवन्=ऐसा कहता हुमा कि स्यः=हे स्वः ! भृः≔हे भृः ! ते≔तेरे जिये त्वयि=तेरे विषे द्धामि=दश्यादिक वस्तु को सर्वम्=सव वचे हुये को दधामि इति≕खता हूं रखता ह

भाषार्थ ।

हे सीम्य ! इवनकर्म के पीछे, बालक के दिहने कान में बाक षाक् ऐसा तीन बार उच्चारणा करे, श्रीर दही, घी, शहद मिला कर सोने के शलाके से लड़के के मुँह में चटावे, ऐसा कहता हुआ कि, हे भूः ! तेरे स्त्रिये दृष्यादि वस्तु को इसके मुख में रखता हूं, हे भुवः ! तेरे जिये इसके मुख में दध्यादि वस्तु रखता हं, हे स्वः! तेरे जिये ' इसके मुखमें दध्यादि वस्तु रखता हूं, हे भूः ! हे भुवः ! हे स्वः ! तेरे निमित्त सब बचे हुये होमद्रव्य को इसके मुख में रखता हूं ॥ २४ ॥

मन्त्रः २६

श्रथास्य नाम करोति वेदोऽसीति तदस्य तद्गुह्यमेव नाम मवति ॥

अथ, अस्य, नाम, करोति, वेद:, असि, इति, तत्, अस्य, तद्, गुह्मम्, एव, नाम, भवति ॥

द्यान्वयः

श्चन्ययः पदार्थाः

पदार्थाः

अथ=इस के पीड़े

+ विता≕पिता

श्चस्य≖इस बातक का

नाम=नामकरण करोति=करे

त्वम्=त्

वेदः=वेदस्वरूप यानी

ब्रह्मरूप

श्रसि इति=है ऐसा कहे

+ च=ग्रीर

+ यत्=जः तत्=वह नाम है

तत्=वह

श्रस्य=इस बालक का

गुह्यम्≕ा़्र नाम=नाम

एव=निश्चय करके

भवति=होता है

भावार्थ ।

हेसीम्य ! इसके पीछे पिता अपने लड़के का नामकरशा करे झौर ऐसा कहे कि तू वेदस्वरूप यानी ब्राह्मस्वरूप है छीर जो यह वेद नाम उसका रक्स्ला गया है वह उस बालक का गुप्त नाम होता है ॥ २६ ॥

मन्त्रः २७

अर्थैन मात्रे पदाय स्तनं पयच्छिति यस्ते स्तनः सशयो यो मयोभूर्यो रत्नथा वसुविद्यः सुदत्रः । येन विश्वा पुष्यति वार्याणि सरस्वति तमिइ धातवे कारिति ॥

पद्च्छेदः ।

द्राथ, एनम्, मात्रे, प्रदाय, स्तनम्, प्रयच्छ्रति, यः, ते, स्तनः, सशयः, यः, मयोभूः, यः, रह्नघाः, वसुवित्, यः, सुदत्रः, येन, विश्वा, पुष्यसि, वार्याणि, सरस्वति, तम्, इह, घातत्रे, कः, इति ॥ पदार्थाः पदार्थाः । स्रन्वयः

श्चन्वयः

अथ=तरपश्चात + स्वाङ्कस्थम्=ग्रपनी गोद् में रक्खे

हुये एनम्=उस बाबक की मात्रे⊐माता के प्रति

प्रदाय=देकर

स्तनभ्=उसको स्तन प्रयच्छति=प्रदान करे

एसम्बद्धन=यह कहता हुद्या कि सरस्वति=हे सरस्वति !

-

यः=जो ते=तेरा सश्यः=सफ्ड स्तनः=स्तन है यः=जो मयोभूः=प्राणियों के पाबनार्थ हुवा है यः=जो स्तन रक्कधाः=दुःवनारक है यः=जो बसुचित्=कर्मफब का ज्ञाता है + च=कोर

सुद्वः=परम करवाय का देने वाला है येन=जिस करके त् विश्वा=संपूर्य वार्याणि=भेद्यायियों को पुष्पसि=पुष्ट करती है तम्=बस स्तन को इह=मेरी भाषा के स्तन में धातवे⇒वालक के पीने के जिये कः इति⇒पविष्ट कर

भाषार्थ ।

हे सौन्य ! फिर पिता अपनी गोद में रक्खे हुये वाजक को माता की गोद में देकर माता के स्तन के तरफ़ अभिमुख करावे और सरस्वती देवी की प्रार्थना करता हुआ कहे कि हे देवि ! जो तेरा स्तन सफल है और जो प्रार्थायों का पाजन करने हारा है और जो दुग्ध- धारक है और जो कर्मफल का ज्ञाता है और कल्याया फल का देने वाजा है जिस करके तू सम्पूर्ण प्रार्थायों को पुष्ट करती है उस अपने स्तन को मेरी भार्या के स्तन में वाजक के पीने के ज्ञिये प्र- विष्ट कर !! २७ !!

मन्त्रः २८

श्रथास्य मातरमभिमन्त्रयते । इलासि मैत्रावरुणी बीरे वीरमजी-जनत् । सा त्वं वीरवती भव याऽस्मान्वीरवतोऽकरदिति । तं वा एतमाहुरतिपिता बताभूरतिपितामहो बताभूः परमां बत काष्टां प्राप-च्छिया यशसा ब्रह्मवर्चसेन य प्वंविदो ब्राह्मणस्य पुत्रो जायत इति ।।

> इति चतुर्थे ब्राह्मणम् ॥ ४ ॥ इति श्रीबृहदारएयकोपनिषदि षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

पद्च्छेदः ।

अथ, अस्य, मातरम्, अभिमन्त्रयते, इका, असि, मैत्रावक्याी, बीरे, वीरम्, अजीजनत्, सा, त्वम्, वीरवती, भव, या, अस्मान्, बीरवतः, अकरत्, इति, तम्, वा, एतम्, आहुः, अतिपिता, वत, अमूः, अतिपितामहः, वत, अभूः, परमाम्, वत, काष्टाम्, प्रापत्, श्रिया, यशसा, ब्रह्मवर्षसेन, यः, एवंविदः, ब्राह्मग्रस्य, पुत्रः, जा-यते, इति ॥

वदार्थाः ग्रम्बयः अथ=इसकें डपरान्त ग्रस्य≃उस दावक की मातरम्≔माता को श्राभिमन्त्रयते=प्रभिमन्त्रव करे यानी उसकी प्रशंसा करे कि + त्वम्=त् मित्रावरुणी=मस्त्रवती तुल्य ् बू पृथिवी तुक्य है) यानी सब प्रकार के इला=) भोगसामग्री की देने वासी श्रसि=है + झसि=है + त्वम्⊐त् + मिय) झजीजनत्≕पैदा दृश्ती मई है या=जो

+ भवती=त

पदार्थाः ग्रस्मान्≔इमको वीरवतः=शरपुत्र पुक्र श्रकरत्≔करती भई है + झतः≔इस विये सा=वह त्वम्=पू वीरवतः=वीरपुत्रवासी भव=हो + प्राध=सब + पुत्रम्) पुत्रको सन्दोचन + सम्बोध्य } =करके + पिता आह=पिता कहता है कि + पुत्र=दे पुत्र १ + जनाः≔कोग + इति=ऐसा + स्वाम्=तुमको बाहु:=कहें कि + त्वम्=त् झतिपिता=अपने विता से श्रम्≔दुषा दे बत=यह बदा सारवर्ष है + त्यम्=प्

श्वितिपितामहः≔दादा से वदकर

श्वम्यः=हुका है

बत=यह बदा झारवर्ष है

+ च=भौर

यः=जो

+ त्यम्=त्

यशसा=यश करके

श्विया=संपत्ति करके

श्वास्चेसा=महातेज करके

परमाम्=उत्तम

काष्टाम्=बद्गी को

प्रापत्≔पात हुमा है
बत=यह बदा भारवर्ग है
प्रवंविदः=इस मकार पुत्रीस्पत्ति
विभिक्ने जानने वाले
+ यस्य≕जिस
प्राह्मण्स्य=आक्षण को
पुत्रः=ऐसा लक्का
जायते=उस्पत्न होता है
+ सः=वह
+ स्तुत्यः=स्तुति के योग्य
+ भवति=होता है

भावार्थ ।

ह सौम्य ! इसके पीछे उसकी माता को अभिमन्त्रण करके उसकी प्रशंसा, पित करे यह कहता हुआ कि, हे श्री ! तू अरुम्धतीतुल्य है, तू पृथिवीतुल्य है, यानी सवप्रकार की भोग्यसामग्री की देने बाजी है, तू ही मुक्त वीरपुरुष के निमित्तकारण होने पर वीरपुर को पैदा करती भई है, चूं कि तू हमको वीरपुत्र करती भई है, इसिंजिये तू वीरपुत्रवती हो. इसके बाद पुत्र को सम्बोधन करके पिता कहता है कि मैं चाहता हूं कि जोग तुक्तको ऐसा कहें कि तू अपने पितासे बढ़कर है, तू अपने दादा से बढ़ कर है, तू यश, संपत्ति, ब्रह्मते करके उत्तम बढ़ती को प्राप्त हुआ है, यह बढ़ा आश्चर्य है, आगो अपने कहती है कि इस प्रकार पुत्रोत्पत्तिविधि के जानने वाले जिस ब्राह्मण को ऐसा कड़का उत्पन्न होता है वह स्तुति के रो असर बहाता है। रूप ॥

इति चतुर्थे ब्राह्मग्राम् ॥ ४ ॥ इति श्रीवृहदारगयकोपनिषदि भाषातुवादे षष्ठोऽध्यायः संमानः ॥

लाल बहर्र ुँ शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासन अकादमी, पुस्तकालय Lal Bahadur Shastri National Academy of Administration Library

चच्चरी MUSSOORIE

अवाष्ति सं**∘** Acc. No.....

कृपया इस पुस्तक को निम्न लिखित दिनांक या उससे पहले वापस कर हैं।

Please return this book on or before the date last stamped below.

दिनांक Date	उधारकर्ता की संख् या Borrower's No.	दिनांक Date	उधारकर्ता की सख्या Borrower's No.
	-	And an an annual	

GL H 294.59218 ARA

121560

स्ति सं ति प्रति सं विद्या प्रथा की प्रति सं विद्या स्था कि ।

294.59218 FIRST BRARTI

National Academy of Administration MUSSOORIE

Accession No. 121560

- Books are issued for 15 days only but may have to be recalled earlier if urgently required.
- 2. An over-due charge of 25 Paise per day per volume will be charged.
- Books may be renewed on request, at the discretion of the Librarian.
- 4. Periodicals, Rare and Reference books may not be issued and may be consulted only in the Library.
- Books lost, defaced or injured in any way shall have to be replaced or its double price shall be paid by the borrower.

Help to keep this book fresh, clean & moving